जीवन गाथा

परम योगीराज सद्गुरुदेव श्री मंगत राम जी महाराज
द्वितीय भाग

लेखक
अमोलक राम मेहता

संगत समतावाद (पंजी०)
समता योग आश्रम, छछरौली रोड
जगाधरी (हरियाणा)

प्रकाशक :
संगत समतावाद (रजि०)
समता योग आश्रम
जगाधरी
© संगत समतावाद (रजि०)

प्रथम सस्करण, 1993 – 2200
द्वितीय संस्करण, 2008 – 1100

प्राप्ति स्थान :
(1) समता योग आश्रम
छछरौली रोड
जगाधरी–135003
(2) समता योग आश्रम
अंसल पालम विहार फार्म नं०45
गाँव–सलाहपुर
हुड्डा गुड़गाँव सेक्टर–21 के सामने
नई दिल्ली–110061

मुद्रक :
राजेश प्रिंटिंग प्रैस
7321–22, आराम नगर,
पहाड़ गंज, कुतुब रोड,
नई दिल्ली–110055

सर्वाधिकार सुरक्षित
संगत समतावाद

सत्पुरुष श्री मंगतराम जी महाराज

जन्म	:	24 नवम्बर, सन् 1903
महासमाधि	:	4 फरवरी, सन 1954 (अमृतसर)
जन्म स्थान	:	गंगोठियां ब्राह्मणां, तहसील कहूटा ज़िला – रावलपिण्डी, (पाकिस्तान)

जीवन गाथा

(द्वितीय भाग)

विषय सूची

		पृष्ठ सं०
1.	श्रीनगर में एकांत निवास	1
2.	बनारसी दास जी की ओर से लिखा पत्र	3
3.	भक्त बनारसी दास के उत्थान का यत्न	3
4.	सत् उपदेश अमृत	9
5.	एक नवयुवक को शिक्षा	16
6.	मुद्रा साधन	18
7.	आश्रमों में महिलाओं को ठहरने पर पाबन्दी	19
8.	सत् साधन पर विचार	23
9.	शारीरिक स्वास्थ्य	25
10.	सत् उपदेश अमृत	27
11.	योग वशिष्ठ पर विचार	28
12.	काष्ट–मौन पर विचार	30
13.	सत् शिक्षा	32
14.	आश्रम के बारे में हिदायत	34
15.	सत् उपदेश अमृत	38
16.	आपातकाल के नियम में परिवर्तन	41
17.	झंडे की मनाही पत्र द्वारा	44
18.	पत्र द्वारा सम्मेलन के बारे में हिदायत	46
19.	सन्तों की बुझारतें	48
20.	आश्रम की बनवाई वग़ैरा के बारे में विचार	49
21.	सालाना सम्मेलन की तारीखें मुकर्रर की गई	50
22.	सत् उपदेश अमृत	51
23.	श्रीनगर से रवानगी का प्रोग्राम	52
24.	अमृत वचन	54

पृष्ठ सं०

25. सत् उपदेश अमृत 57
26. श्रीनगर से वापसी 59
27. सत् उपदेश अमृत 62
28. जगाधरी में आगमन व सम्मेलन 64
29. दृढ़ आचरण के लिए प्रेरणा 66
30. अहाता आश्रम को जंगल की सूरत देने पर विचार 68
31. काहनूवान में एकांत निवास 68
32. सत् उपदेश 69
33. एक वार्ता 70
34. सत् उपदेश अमृत 74
35. गुरदासपुर में अमृत वर्षा 77
36. सत् उपदेश अमृत 80
37. फूल भेंट स्वीकार न करने पर विचार 82
38. सत् उपदेश अमृत 84
39. तरनतारन में एकांत निवास और सत् उपदेश अमृत 88
40. सत् उपदेश अमृत 92
41. सत् उपदेश अमृत 96
42. सत् उपदेश 102
43. सत् उपदेश अमृत 106
44. सत् उपदेश अमृत 110
45. अबोहर में एकांत निवास 113
46. सत् उपदेश अमृत 115
47. सत् उपदेश अमृत 125
48. सत् शिक्षा 138
49. मलोट मंडी का प्रोग्राम 141
50. रुपए गुम होने पर शांति का उपदेश 141
51. सत् उपदेश अमृत 142
52. श्री मुख वाक् अमृत 145
53. मलोट में चन्द रोज़ निवास 146
54. सत् उपदेश अमृत 146

		पृष्ठ सं॰
55.	सत् उपदेश अमृत	154
56.	अम्बाला में अमृत वर्षा	158
57.	सत् उपदेश अमृत	160
58.	सत् उपदेश अमृत	162
59.	सत् उपदेश अमृत	170
60.	देहरादून के लिए रवानगी	172
61.	सत् उपदेश अमृत	174
62.	भक्त बनारसी दास को ख़ास शिक्षा	179
63.	सत् उपदेश अमृत	183
64.	विश्वास की दृढ़ता	186
.65.	मसूरी में एकांत निवास	188
66.	प्रेमी शेषराज के शरीर त्याग पर विचार	191
67.	चंदा मांगने की मनाही	195
68.	आश्रम में स्वार्थ कार्य पर पाबंदी	195
69.	तीक्ष्ण आहार से परहेज़ की हिदायत	195
70.	सत् शिक्षा	200
71.	आश्रम संबंधी विचार	203
72.	दौरान एकांत निवास किसी दूसरी जगह न जाना	205
73.	प्रसंग 'समवाद विज्ञान'	205
74.	पंडित रामजी दास को सत् शिक्षा	206
75.	साबनु तेल के प्रयोग पर विचार	208
76.	भक्त बनारसी दास को शिक्षा	238
77.	आश्रम के मुतालिक एहतयात और अखंड पाठ की बंदिश	242
78.	देहरादून में अमृत वर्षा	248
79.	देहरादून में अमृत वर्षा – पहला सत् उपदेश	251
80.	दूसरा सत् उपदेश	256
81.	विचित्र आदर्श	262
82.	जगाधरी में आगमन	262
83.	भगत बनारसी दास का फिर छुट्टी मांगना	263
84.	विचित्र आदर्श	264

पृष्ठ सं०

85. एक पीड़ित को पत्र द्वारा सत् उपदेश 264
86. सत् उपदेश अमृत 268
87. सत् उपदेश अमृत 274
88. दिल्ली के लिए रवानगी 275
89. दिल्ली में अमृत वर्षा 277
90. होडल में अमृत वर्षा 285
91. श्री मुख वाक्य अमृत 286
92. प्रेमी इब्राहीम के प्रश्न 288
93. हल्द्वानी में चन्द दिन निवास 293
94. पत्र के द्वारा सत् उपदेश 293
95. श्री मुख वाक्य अमृत 294
96. श्री मुख वाक्य अमृत 295
97. पत्र द्वारा सत् उपदेश 295
98. बरेली में चन्द दिन निवास 296
99. एक प्रेमी को पत्र द्वारा सत् उपदेश 296
100. अम्बाला में निवास 296
101. ख़ास शिक्षा जो आपने 25 मार्च, 1952 को देने की कृपा फरमाई 297
102. श्री मुख वाक्य अमृत 297
103. श्री मुख वाक्य अमृत 300
104. श्री मुख वाक्य अमृत 300
105. मलोट मन्डी में चन्द दिन अमृत वर्षा 300
106. श्रीनगर में एकान्त निवास और कठिन तप 301
107. आश्रम में मच्छरदानी लगाने की मनाही 301
108. आश्रम की स्वतंत्रता 301
109. सत् उपदेश अमृत (3 अगस्त, 1952) 302
110. पत्रिका द्वारा प्रश्नों के उत्तर 306
111. पत्रिका द्वारा सत् उपदेश 306
112. सत् उपदेश अमृत 307
113. समता योग आश्रम की प्रबन्धक नीति 314
114. सत् उपदेश अमृत 314

पृष्ठ सं०

115.	पत्रिका द्वारा प्रेमी इब्राहीम को सत् उपदेश	319
116.	एक और प्रेमी के प्रश्न और उनके उत्तर	320
117.	पत्रिका द्वारा सत् उपदेश	320
118.	सत् उपदेश, जीलानी मंजिल, श्रीनगर	321
119.	सम्मेलन की तारीख मुकर्रर	326
120.	सत्संग अमृत वर्षा	327
121.	जम्मू में चंद रोज निवास	333
122.	पठानकोट और गुरदासपुर में निवास और अमृत वर्षा	333
123.	जगाधरी में एकांत निवास	333
124.	विचित्र आदर्श	336
125.	पत्र द्वारा उपदेश	336
126.	पत्र द्वारा सत् उपदेश	337
127.	समतावादियों के वास्ते सत् उपदेश	339
128.	दान के ऐलान की मनाही	340
129.	एक प्रेमी का मान निवारण करना	342
130.	सम्मेलन में आदेश	342
131.	भक्त बनारसी दास का फिर छुट्टी मांगना	343
132.	कुछ सट्टेबाजों को झाड़	343
133.	विचित्र आकर्षण शक्ति व दया दृष्टि का भंडार	343
134.	लंगर बांटने में परिवर्तन	344
135.	सत्पुरुष का दिल्ली में निवास	345
136.	संक्षिप्त नोट सत् उपदेश अमृत (23 नवम्बर, 1952)	345
137.	सत् उपदेश अमृत 20 दिसम्बर, 1952	348
138.	सत्गुरु आदेश, 20 दिसम्बर, 1952	351
139.	रिसाला समता दर्पण के प्रकाशन की आज्ञा	352
140.	आगरा में अमृत वर्षा	352
141.	श्री मुख वाक अमृत	353
142.	श्री मुख वाक अमृत	353
143.	पत्र द्वारा सत् शिक्षा	353
144.	बरेली में एकांत निवास और सत् उपदेश अमृत	354

पृष्ठ सं०

145. एक प्रेमी को पत्र द्वारा सत् उपदेश 355
146. हल्द्वानी में एकांत निवास और अमृत वर्षा 355
147. पत्र द्वारा सत् उपदेश 355
148. देहरादून में चंद दिन निवास 356
149. सूचना 357
150. सूचना 357
151. केलाघाट में एकांत निवास 357
152. बनारसी दास को चेतावनी 359
153. चेतावनी 359
154. श्री मुख वाक अमृत 360
155. निर्मल उपदेश 361
156. विचित्र दृश्य 361
157. श्री मुख वाक अमृत 362
158. तपोभूमि की जमीन की खरीद के बारे में 362
159. तपोभूमि स्थान की जमीन की खरीद 362
160. पत्र द्वारा सत् उपदेश 363
161. देहरादून में एकांत निवास व अमृत वर्षा 363
162. 3 सितम्बर 1953 का वार्तालाप 365
163. सत् उपदेश अमृत 4 सितम्बर 1953 366
164. सत् उपदेश अमृत, 6 सितम्बर 1953 368
165. सम्मेलन सूचना और प्रोग्राम 373
166. एक अंग्रेज़ पादरी से वार्तालाप 373
167. सत् उपदेश अमृत 12 सितम्बर 1953 373
168. जगाधरी के लिए प्रस्थान 379
169. जगाधरी में निवास, सम्मेलन और अमृत वर्षा 379
170. सूचना 379
171. एक चेतावनी 380
172. श्री मुख-वाक्-अमृत 381
173. ट्रस्ट की कायमी 381
174. कार्यकर्ता प्रेमियों के स्थान 382

पृष्ठ सं०

175. प्रबंधक मंडल, संगत समतावाद के नियम 383
176. पत्रिका द्वारा सत् उपदेश अमृत 383
177. श्री मुख-वाक्-अमृत 384
178. अमृत उपदेश, 15 नवम्बर 1953 (नौ बजे सुबह) 384
179. उपदेश अमृत दिनांक 15 नवम्बर 1953, (4 बजे सांय) 385
180. तीसरा सत् उपदेश अमृत 386
181. समता योग आश्रम जगाधरी के सार नियम 387
182. आश्रम में अभ्यासी सज्जनों की स्थिति 388
183. आश्रम से सम्बन्धित फरमान 388
184. सत् उपदेश अमृत 389
185. नोट पांचवें सत् उपदेश अमृत के 391
186. नोट छटा सत् उपदेश अमृत 393
187. अम्बाला में अमृत वर्षा, एकांत निवास 394
188. गुरुदेव की आख़िरी चेतावनी 395
189. सत् उपदेश, 23 नवम्बर 1953 396
190. अबोहर में एकांत निवास 396
191. मोगा में एकांत निवास 397
192. पत्र द्वारा सत् उपदेश 398
193. तरनतारन में एकांत निवास 398
194. अमृतसर में चंद दिन निवास, अंतिम संदेश और शरीर त्याग 398

समता अपार शक्ति

ॐ ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार

जीवन गाथा

भाग–2

श्री सद्गुरुदेव महाराज मंगत राम जी

1. श्रीनगर में एकांत निवास

14 मई 1950, हवाई जहाज के द्वारा श्रीनगर के लिए रवानगी थी। जज साहब मूलराज जी मंहगी ने कहा कि ग्यारह बजे हवाई अड्डे पर पहुंच जावें क्योंकि वहां चैकिंग होती है और जो फालतू सामान है छोड़ दिया जाये। दूसरे दिन दस बजे जज साहेब कार लेकर आ गये, आप उसमें सवार होकर हवाई अड्डे पर पहुंचे। आप मुसाफिरखाना में बैठ गए। बारह बजे सामान तोला गया। बाकी मुसाफ़िरों का भी सामान बारी–बारी तोला गया। ठीक एक बजे जहाज टिकट घर के पास आ खड़ा हुआ। एक बजे जहाज में बैठने की आवाज़ हुई। जज साहेब और अन्य प्रेमी श्री महाराज जी को प्रणाम करके लौटने लगे। जज साहेब ने अर्ज की:– श्रीनगर तार दे दी गई है, प्रेमी वहां हवाई अड्डे पर मौज़ूद होंगे। सवा एक बजे हवाई जहाज उड़ा। जब यह उड़ने लगा उस वक्त हिचकोले लगे। ऊपर चढ़ने पर जम्मू वग़ैरा सब नीचे नज़र आ रहे थे। थोड़ी देर में ही जहाज श्रीनगर पहुंच गया, पता ही नहीं लगा। प्रेमी आगे हवाई अड्डे पर आये हुए थे। श्री महाराज जी को प्रणाम किया। बाहर कार खड़ी थी। सामान मिलने पर उसे कार में रख लिया गया और सब कार में बैठकर अमीरा कदल पहुंचे। प्रेमी मोहन लाल व उसके परिवार ने बाहर आकर प्रणाम किया। पंडित माया राम किश्तवारी ने भी, जो उनके घर मुलाज़िम थे, प्रणाम किया। फिर कार द्वारा वहां से रवाना होकर निशात बाग से एक मील पीछे एक कोठी में ठहरे। यह जगह शहर से सात मील पर थी। चौकीदार को बुलाया गया, वह सामान उठाकर ले गया। वहां प्रेमियों ने सब सामान ख़ुराक वग़ैरह पहुंचाया हुआ था। एक कमरे में आसन लगाया हुआ था। मगर श्री महाराज जी ने अपनी मोटी लोई आसन के तौर पर बिछवाई। प्रेमियों ने वहां गाय के दूध का भी प्रबन्ध किया हुआ था। जो प्रेमी वहां श्री महाराज जी को छोड़ने आये थे उन्होंने शाम को सत्संग किया। सत्संग के बाद उनको वापिस जाने की आज्ञा हुई, प्रेमी कह गये कि आठवें रोज़ हाज़िर होंगे।

चार रोज़ गुज़रे थे कि बाहर बाबू अमोलक राम जी का पत्र जगाधरी से आ गया कि संक्रांत जेठ के रोज़ प्रेमियों ने एकत्र होकर जगाधरी आश्रम में सत्संग करके आश्रम का काम शुरू करवा दिया है। पठानकोट से प्रेमी साईंदास जी, अम्बाला से प्रेमी जगन्नाथ जी और सहारनपुर से के०सी० तलवाड़ जी व जगाधरी के प्रेमी सत्संग में शामिल हुए थे। ज़मीन खाली हो चुकी थी और कब्जा ले लिया गया था। प्रेमियों ने वह जगह नियुक्त कर दी जिस जगह चारदीवारी खुदवायी जानी थी। उसके बाद ईंट वग़ैरह का प्रबन्ध किया गया। प्रेमी साईंदास जी ने कहा– कि वह देखभाल के लिए मुंशी राम जी को पठानकोट से भेज देंगे। इस पर श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''यह भी प्रेमियों का चाव पूरा हो गया।''

जम्मू से जो आज्ञा पत्र बाबू अमोलक राम जी को आश्रम के अहाते में कुंए के बारे में लिखवाया गया वह निम्नलिखित है–

श्री महाराज जी आशीर्वाद फरमाते हैं। आपके प्रेम पत्र द्वारा हालात से आगाही हुई। श्री महाराज जी का आशीर्वाद अंग–संग जानें जो हम सब प्रेमियों की बुद्धि को स्वतंत्रता बख़्शने वाला है। कुंए के बारे में आप जैसा भी विचार करें, दूसरे प्रेमियों की राय द्वारा भी मदद लेकर, ठीक ही होगा। परमार्थ के काम में हर एक प्रेमी अच्छी ही अपनी तरफ से राय देता है। ईश्वर की सहायता भी हमारे अंग–संग श्री महाराज जी की कृपालता से है। जिस बात में सहूलियत होवे और संगत के खर्च में कमी होवे वैसा ही विचार करें। जो कुंआ जिस जगह लगाने का सबने मिलकर विचार किया है सो ठीक ही होगा और चौकीदार के बारे में आप मुनासिब विचार कर लेवें। खर्च और प्रेमियों की सेवा का आपको पता ही है। मजबूरी में थोड़ी तनख़्वाह पर अगर कोई आदमी मिल सके तो मुनासिब विचार करके जैसा होवे अमल करें। अगर शेषराज कोई मदद दे सके और उसकी मदद आपको दरकार हो तो उसको अपने साथ रखने की कोशिश करें। यह काम भी एक बड़े कल्याण का है। आगे उसकी मर्ज़ी। सब कारोबार की जिम्मेवारी आप पर है। आप जिस तरीके से करेंगे उसमें गुंजाईश और सहूलियत होवेगी।

ईंटें आदि सब कुछ जमा हो गया पहली जून 1950 को इस जगह चारदीवारी का काम शुरू कर दिया गया और कुंए की खुदवाई भी शुरू करवा दी गई। ईंटे खड़ी करके एक अस्थाई कमरा खड़ा किया गया। मगर आंधी ने उसे गिरा दिया, फिर टैंट लेकर बाबू जी ने उसमें निवास किया। पास नलका लगवा लिया गया और मौके पर रह कर काम शुरू करवा दिया गया।

उस दौरान प्रेमी बख्शी राम जी ने श्री महाराज जी से आज्ञा मांगी कि एक कमरा उन्हें बनवाने की आज्ञा दी जाये। श्री महाराज जी ने बाबू अमोलक राम जी को लिखा कि एस्टीमेट बनवाकर उन्हें रवाना कर दिया जावे। बाबू जी ने एस्टीमेट बनवाकर लाला बख्शी राम जी को भेज दिया। उन्होंने बाबू जी को पत्र लिखा कि वह इतना खर्च बर्दाश्त नहीं कर सकते और लिखा कि एक छोटा सा कमरा जिस पर आठ नौ सौ रूपया खर्च हो, बनवा देवें और साथ एक छोटी रसोई बनवा दें। यह

भी लिखें कि बाकी प्रेमियों को भी अपने–अपने कमरे बनवाने की इजाज़त दी जावे। श्री महाराज जी की सेवा में प्रेमी बख्शी राम जी की तजवीज़ आज्ञा हेतु भेज दी गई। श्री महाराज जी ने इस पर आज्ञा फरमाई:– कोई भी प्रेमी अपना कमरा आश्रम में नहीं बनवा सकता और प्रेमी बख्शी राम को भी कमरा वग़ैरा बनवाने की आज्ञा नहीं है। पत्र द्वारा जो जवाब दिया गया यह इस तरह है–

2. बनारसी दास जी की ओर से लिखा पत्र

प्रेम पूर्वक चरण–बंदना स्वीकार करें जी। श्री सत्गुरुदेव जी महाराज आशीर्वाद फ़रमाते हैं आप स्वीकार करें और श्रीमान भाई साहिबान वग़ैरह सबको आशीर्वाद फ़रमाना जी। श्री महाराज जी फ़रमाते हैं कि आपके प्रेम पत्र द्वारा सब हालात से पूरी–पूरी आगाही हो रही है। श्री महाराज जी की दया दृष्टि से प्रभु नित सहायक होवें, शुभ कार्य निर्विघ्न समाप्त होवे। सेवा में अर्ज़ है कि श्री महाराज जी फ़रमाते हैं कि बख्शी राम जी के बारे में तुम्हारा विचार ठीक है, किसी प्रेमी की अपनी मलकियत समता योग आश्रम में नहीं होनी चाहिये। कुटिया इस कदर ज़रूर होवे जिसमें चार या पांच प्रेमी ठहर सकें। ज़्यादा कुटिया बनवाने की भी इजाज़त न होवेगी क्योंकि जगह घेरी जाती है। सिर्फ दो चार कुटियाएँ एक नमूने की फिलहाल प्रेमियों के वास्ते काफ़ी हैं। प्रेम सम्बन्ध से ही गुज़ारा करना है। बख्शी राम जी को किसने कुटिया के वास्ते मजबूर किया है। जो कुटिया बनेगी उसमें वह भी गुज़ारा कर सकते हैं। उनको कोई खर्च करने की जरूरत नहीं।

इस जगह निवास के दौरान एक दिन श्री महाराज जी ने **''सत् शिक्षा''** अपने कर–कमलों से लिख करके भक्त जी को दिया ताकि वह उसे साफ़ लिख करके प्रेमियों को भेजते जावें। यह प्रसंग अब ''समता विलास'' में छप चुका है, इसलिए यहां दर्ज नहीं किया जा रहा। भक्त जी इसे नकल करके प्रेमियों को भेजने लगे। सत्पुरुष एक वृक्ष के नीचे अपनी आनन्दित अवस्था में लीन रहकर दिन व्यतीत करते और रात को एक बजे उठकर जंगल में तशरीफ़ ले जाते और वहां जाकर समाधिस्त हो जाते। दिन निकलने पर वहां से वापिस तशरीफ़ लाते।

3. भक्त बनारसी दास के उत्थान का यत्न

इस जगह निवास के दौरान भक्त जी के लिए ख़ास काम नहीं था। प्रेमी दीनानाथ जी महंगी रोज़ाना शाम को डाक लेकर आ जाते और अगर सुबह कोई पत्र होता तो डाक में डालने के लिए ले जाते। भक्त जी को श्री महाराज जी के लिये दूध गर्म करने के अलावा सिर्फ़ अपना भोजन बनाना पड़ता, इसलिए जल्दी फ़ारिग होकर दिन को भी सो जाते। एक दिन सो रहे थे कि एक दम नींद खुल गई। श्री महाराज जी ध्यान मग्न बैठे थे। थोड़ी देर में आंख खोली तो भक्त जी से पूछने लगे:– ''प्रेमी! बताओ संसार क्या है?''

भक्त जी – महाराज जी! अपना शरीर ही संसार का रूप है।

महाराज जी – इस संसार की कितनी उम्र होगी?

भक्त जी – करीबन 32 साल की होगी।

महाराज जी – 32 वर्ष से पहले तुम कहां थे?

भक्त जी – महाराज जी! कुछ पता नहीं।

महाराज जी – पचास साल के बाद कहां होगे?

भक्त जी – पता नहीं, कुछ नहीं कह सकता।

महाराज जी – जिस दरम्यानी अवस्था में तुम चल रहे हो, खा-पी, पहन रहे हो, जो कुछ भी कर रहे हो, इससे तुमको क्या हासिल हो रहा है?

भक्त जी – महाराज जी! इन शारीरिक कर्मों को करते-करते सिर्फ़ समय ही निकल रहा है। मानसिक शान्ति इनके द्वारा मिलती नहीं। एक तृखा (प्यास) रसों के ग्रहण करने के वास्ते पदार्थों की तरफ ले जाती है, किसी से सुख, किसी से दु:ख मिल जाता है।

महाराज जी – तुमने संसार में असली मायनों में कोई सुखी देखा है?

भक्त जी – असली मायनों में तो शान्तमयी जीवन आपका ही नज़र आ रहा है। जो कोई ईश्वर परायण होकर सज्जन चल रहे हैं उनके अन्दर कुछ ठंडक प्रतीत होती है।

महाराज जी – तुम अपने चित्त की हालत बताओ?

भक्त जी – महाराज जी! चित्त की हालत कभी-कभी बिगड़ जाती है। जो पदार्थ सामने न हो उसकी अत्याधिक कल्पना करने लग जाता है। न मिलने पर आख़िर अक्सर अशांत होना पड़ता है।

महाराज जी – प्रेमी! इस पांच तत्त्व के पिंजर से अनेक तरह की कल्पनायें पैदा हो जाती हैं। हिरस, तृष्णा इस जीव को नाच नचाती रहती है।

'नानक दुखिया सब संसार, सुखिया सो जिस नाम आधार'

अंतरविखे जो मालिके कुल की मौज का पता लगे। दायमी खुशी तेरे अन्दर है, मन को बाहर भटकाने से कुछ हासिल नहीं। प्रभु आज्ञा में मन, बुद्धि को बार-बार दृढ़ करना चाहिए। सब दृश्य झूठ हैं, असत् हैं, यानि तेरा यह हाज़िर संसार भी असत् है और सपने वाला संसार भी असत् है, आगे होने वाला संसार भी असत् होगा। वशिष्ठ जी ने कहा है:- ''संसार तीन काल असत् है।'' इतना उच्च दृढ़ निश्चय उनका था। हज़ारों वर्षों की आयु सारी झोपड़ियों में गुज़ार दी। आजकल संत भी कोठियों के बग़ैर नहीं रह सकते। इन फक़ीरों को ऐसी जगह शोभा नहीं देती। ऐसी जगह रहना चाहिए जहां संसार तुच्छ भासे। तुम्हारे जैसे कमज़ोर दिल वाले ही इस शान-बान को देखकर भ्रम में फंस जाते हैं। संसार देखो, लेकिन चित्त किसी चीज़ को मत दो। ग़ौर से किसी चीज़ को मत

देखो। सबके साथ बराबर प्रेम रखो। खाना सिर्फ़ पेट पूर्ति के वास्ते ग्रहण करो। पहनना सिर्फ़ शरीर ढकने के लिए, गुज़रान के वास्ते। जो प्रभु आज्ञा से प्राप्त हो जाये उसमें संतोष रखना, अति संग्रह नहीं करना, वक्त देखकर विचार कर लेना चाहिए। धन आवेगा, मगर तक्सीम की तरफ ज़्यादा ध्यान रखना। वैसे मनु नीति यह कहती है कि संसारियों को दसवां भाग धर्म खाते, दसवां हिस्सा जमा करके वक्त बेवक्त के वास्ते रखना चाहिए। दसवां हिस्सा अपने आप राजा या सरकार को पहुंचा देना चाहिये। छोटे से लेकर बड़े तक जब सबको ऐसा विचार हो तो फिर कौन दु:खी रह सकता है? सरकार को अगर इस तरह न दोगे तो राजा दंड द्वारा ज़बरदस्ती, जिस कदर मरज़ी होवे, लेंगे। अव्वल तो हर चीज़ सरकार या राजा की है, मगर राजा भी न्यायकारी हो तब ऐसा सिलसिला ठीक चल सकता है।

विचार हो रहा था, एक मस्त महात्मा को प्रेमी राधा कृष्ण जी लेकर आये। चरणों में प्रणाम किया। श्री महाराज जी ने झट आसन की लोई निकाल कर अपने पास बाईं तरफ़ बिछा दी। भक्त जी को कहने लगे:– ''तुझे यह होश होनी चाहिए, उनका मुंह देख रहा है।''

पंडित राधा कृष्ण जी कहने लगे:– ''महाराज जी! यह बड़े सिद्ध महात्मा हैं। रास्ते में इनके दर्शन हो गए साथ ले आए हैं।'' भक्त जी ने पांच छः दफ़ा कुछ ग्रहण करने के लिए पूछा। पहले तो एक टक देखते रहे, फिर फरमाया:– ''टट्टी खानी है, टट्टी पीनी है, टट्टी बना दो।'' दो तीन दफ़ा यह ही कहते रहे। फिर राधा कृष्ण ने कश्मीरी ज़बान में कुछ कहा। फिर कहने लगे:– ''टट्टी अच्छी हो। दो रोटी, प्याज की काली मिर्च डालकर चटनी लाओ।'' भक्त जी ने जल्दी-जल्दी जाकर आटा गूँधकर दो रोटियां पकाई और ले आए। महात्मा जी ने हाथ पर रखवा लीं। चार ग्रास करके चारों तरफ़ 'टट्टी नमः' करके फैंक दिये। फिर फ़रमाया:– ''टट्टी खाऊं।'' इस तरह कहते हुए चार, छः ग्रास खाकर बाकी रोटी पेड़ के तने के साथ रख दी। फिर कहा:– ''टट्टी लाओ, पियूं।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– ''इस अवस्था का लाभ किसी को कुछ नहीं है। इनको ही अवधूत कहते हैं, जिसको अपने तन की भी सुध नहीं। वर-श्राप भी कुछ नहीं दे सकते।''

पंडित राधा कृष्ण जी कहने लगे:– ''लोग इनको बहुत तंग करते हैं। हिन्दू मुसलमान पास बैठे रहते हैं। एक लफ्ज़ जो निकलता है निकलता चला जाता है, वैसे इनके लफ्ज़ों के ही हरुफ़ बनाकर लोग कई प्रकार के अंदाज़े लगा लेते हैं।''

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''प्रेमी! कश्मीर की धरती ऋषि भूमि है। कश्यप ऋषि ने इस इलाके में बहुत तप किया है। उस समय इस धरती पर तीन हिस्से जल था, एक हिस्सा धरती थी। अब संसारियों ने सारी धरती घेर रखी है। किसी समय हर आदमी इस जगह ऋषि था।''

पंडित जी कहने लगे:– ''महाराज जी! यहां किसी ज़माने में इन्हीं मुसलमानों के राज्य में लाल देवी हुई है। बड़ी सिद्ध और त्यागी थी। उसकी बड़ी-बड़ी बातें मशहूर हैं। उनके मुख वाक्य

कश्मीरी ज़बान में बड़े प्रेम से सत्संगी पढ़ते हैं।'' और उस समय बड़े प्रेम से पंडित राधा कृष्ण जी ने कुछ वाक्य सुनाये।

नीम कुरत गर बाज, तिस गर्बा पेई।
मरहना महरू पद्दी मर्या, करत करत तह अबतत्र बरी॥

मतलब यह कि जब तुम अपने माता-पिता के पेट में थे तुमने एक वायदा किया था, यह वायदा तुम्हें कब याद आयेगा? तुम्हें मरने से पहले ही मर जाना चाहिए। तुम्हारी मौत का दिन आयेगा, तब तुम्हारा रुतबा बहुत बुलन्द होगा। फिर दूसरा वाक्य पढ़ा, जिसका मतलब यह था– ''मैंने न किसी बच्चे को जन्म दिया, न ही मैं खुद पैदा हुई। मैंने कासनी और सौंठ नहीं खाई। मैं छः के पीछे हुई और सात के आगे हूँ।''

फिर पंडित जी ने पूछा:– ''महाराज जी! यह कैसी बुझारत उसने डाली है''?

महाराज जी ने फ़रमाया:– ''बुझारतें सन्तों की ख़ास निशानी हैं। जिस तरह गीता का मतलब कृष्ण ही जानता है। बहुत ऊंची स्थिति की देवी हुई है। संत-साधु का तब ही पता लगता है जब वह कुछ बोलें।''

पंडित जी कहने लगे:– ''अगर आप भी गुम-सुम होते तो किसी को क्या फ़ायदा पहुंच सकता था''?

जब शाम के चार बज गए मस्त महात्मा जी उठकर चल दिए, साथ पंडित जी को भी जाना पड़ा। कहने लगे:– ''यह शंकराचार्य मंदिर के नीचे दूसरी तरफ़ दुर्गा मंदिर है, वहां एक कमरे में ज़्यादातर लेटे रहते हैं।'' प्रणाम करके भक्त जी को एक योग वशिष्ठ पुस्तक का छोटा प्रकरण दे गए।

श्री महाराज जी भक्त जी से कहने लगे:– ''बिल्कुल किसी समय मूढ़ न बन जाया करो। कोई संसारी अच्छा वाकिफ़ आ जाता है तुम उसकी कितनी इज़्ज़त करते हो? इस दरबार में कोई संत-महात्मा आ जाये तो देखते ही आदर-सत्कार करके आसन देना चाहिए। फिर अन्न-जल पूछना चाहिये। अभी संसारी व्यवहार में सब कुछ कर रहे हो, जिस तरह हो उठो-बैठो मगर प्रभु मार्ग पर चलने वालों के वास्ते आसन ज़रूर देना चाहिए। कोई नुमायश बनाने की ज़रूरत नहीं, साधारण कुशा का आसन, मृग चर्म, ऊन का कपड़ा या और कुछ सामने हो श्रद्धा, प्रेम से सेवा में पेश करना चाहिए। यह तो ख़ैर मस्त मौला हैं, जिस समय आसन दिया गया उस पर बैठ गए। बाज़ दफ़ा संत भी देखते हैं कितनी बुद्धि वाले बैठे हैं। अव्वल तो कोई अतिथि सेवादार स्थान या डेरे पर आता ही नहीं, अगर आये तो यथा शक्ति प्रेम से यथा अनुकूल बच्चे, बूढ़े सबको मान देना चाहिए।''

भक्त जी ने अर्ज़ की:– ''महाराज जी! ज़्यादा सत्संगी हो जाने पर या समाजी वग़ैरा होने से कई तरह की त्रुटियां आ जाती हैं। अब हम ही हैं, साधु, संतों, फ़कीरों को मान देने के बजाय उनके

नुक्स ही निकालते रहते हैं। और जमायतें तो पुस्तकों, ग्रन्थों की कितनी इ़ज़्ज़त करती हैं, इधर इस बात का भी ख़्याल नहीं, जिस तरह आये पढ़ लिया। समतावादी होने का क्या मतलब है?''

श्री महाराज जी ने फरमायाः- ''प्रेमी! मान देने से ही प्रेम, श्रद्धा, विश्वास बढ़ते हैं। जब भी जहां प्रेमी मिलें, ''ब्रह्म सत्य'' करके भेंट करें। पुस्तक को मत्था टेकना मना ही सही, चाहे कोई भी ग्रन्थ हो थोड़ा ऊंचा रखकर, निग़ाह से फुट, डेढ़ फुट दूरी पर रखकर विचार करें। साफ़ सुथरा कपड़ा ग्रन्थ के नीचे होना चाहिए। बैठने की जगह नुमायश नहीं होनी चाहिए ताकि उस पर बैठकर पढ़ने वाला अभिमान में न आ जाये। पाठ करने वाले के वास्ते आसन ज़रूरी समझो तो कुशा या ऊन का होना चाहिए। सरलता और सादगी से अन्तःकरण की शुद्धि होती है। ऐसा न होने से ईर्ष्या, द्वेष, अंहकार प्रगट हो जाता है। सत्संग में भेदभाव न रखना चाहिए। हर एक सेवा का कार्य बड़ी नम्रता से पूरा करना चाहिये। हर प्रेमी अपने को अदना से अदना सेवादार समझे तब धर्म की वृद्धि हो सकती है। वह नीचा या ऊंचा वाला भाव ख़त्म करके हर जीव मात्र की सेवा में शरीर को लगाये रखना समतावादी का धर्म है। अपनी बुद्धि से साधु, संत, असंत का विचार कर लेना चाहिये। किसी की भी अपने से इ़ज़्ज़त हो गई कमी कोई नहीं पड़ती।''

भक्त जी ने अर्ज़ कीः- ''महाराज जी! आप जैसी हालत न सही मगर आत्म-साक्षात्कार की अवस्था कितने अर्से में पैदा हो सकती है?''

श्री महाराज जी ने फ़रमायाः- ''सही माइनों में साधन करने वाला सात रोज़ से लेकर चौदह रोज़ में ठीक अपने आपको जान सकता है। मगर बड़ी भारी सेवा, सिमरण की ज़रूरत है। मिट्टी के साथ मिट्टी होना पड़ता है। तेरी तरफ़ देखते रहते हैं, किसी समय भी तेरा विचार लेने के लिए ज़रा सी उल्टी बात कह देते हैं, तू भी नाक चढ़ा लेता है। इस तरफ से उल्ट-पुल्ट जिस समय वचन कहा जाये सतवचन कहकर पालन किया कर। यह मत समझ पानी भरना, बर्तन साफ़ करना, झाड़ू देना वग़ैरह यह निकम्मी सेवा है, जिस किसी ने अपनी आन्तरिक सफाई की है छोटा काम करके निर्मानता से रहकर अंहकार से बचा है। जो भी गुरु घर का काम हो बड़ी श्रद्धा, विश्वास, प्रेम से उसमें तन्मय हो जाना चाहिए।

जीते जी मरना है। मर के फिर जीना है। संत-साधु की कमाई बहुत कठिन है। वैरागियों वाले खीर-पूड़े नहीं। सिमरण अभ्यास में एक चित्त होकर लगे रहना ज़रूरी है। जब सुध-बुध भूल जाये तब मालिक की मेहर होते कोई देर नहीं लगती। बग़ैर भक्ति चाहे हज़ार साल बैठे रहो कुछ समझ जिज्ञासु को नहीं आ सकती। सिद्धि प्राप्ति भी इस लोक में हज़ारों पुरुषों ने की है। महापुरुष वही है जो सारे संसार की सुध-बुध भूल जाये और अपना गुरु आप बने।''

प्रश्न- महाराज जी! जिस-जिस प्रेमी पर आपकी कृपा हो चुकी है उनका क्या बनेगा?

उत्तर- जिस-जिस के अंदर विचार चले गए हैं और शिक्षा ग्रहण कर चुके हैं उनका उद्धार इस जन्म में न सही तो अगले जन्म में ज़रूर होगा। दो चार जन्मों में किसी न किसी समय ज़रूर अपनी

कल्याण का यत्न करेंगे। गुरु ने तो महावाक्य रूपी बीज हज़ारों के अन्दर डाल दिया है, कभी न कभी उगेगा। बेहतर यही है कि हाज़िर जन्म में आत्म-साक्षात्कार कर ले। जिसके अन्दर जिज्ञासा है उसे कोई न कोई रास्ते में डालने वाला मिल ही जाता है। फ़कीरों की सेवा भी ख़ाली नहीं जाती। हर एक के वास्ते इनका आशीर्वाद है। बाद के यह कोई ठेकेदार नहीं। वक्त के गुरु शिष्यों के वास्ते हर समय भलाई चाहते हैं। गृहस्थी, विरक्ति जो कोई होवे, श्रद्धा विश्वास से एकान्त में बैठकर प्रभु भक्ति करेगा वह ही तर सकता है। बिना यत्न के दोनों ही हैरान परेशान होते हैं। जो बात पक्के इरादे से करोगे वह ही सफलता दिया करती है।

एक रोज़ भक्त बनारसी दास से कहने लगे- कि कल शिमला से जिस प्रेमी ने तुमको लिखा है कि उसके लिए एक नमदों का जोड़ा जब आये ले आना, उस लाड़ले प्रेमी को अच्छी तरह लिख दो कि क्या संतों के पास खज़ाने हैं जो उनके वास्ते व्यापार करते फिरें? ऐसे बेहोश बुद्धि हैं इतना ख़्याल भी नहीं करते किसको लिख रहे हैं? अब उनके वास्ते ढोर बनते फिरो। पत्र लिखते वक्त साथ ही तुमको पैसे भेज देते तो और बात थी। बोझ तुम उठा लेते। तुमने लिखा होगा, कुछ ज़रूरत हो तो लिखें। किसी से ऐसा सौदागरी वाला काम मत किया करो, न ही यह तुमको शोभा देता है। इस चौधरपने से कुछ नहीं निकलता। फ़र्ज करो तुम ले भी जाओ उनको पसन्द न आये, फिर क्या करोगे? बिल्कुल आईंदा प्रेमियों से कोई व्यापार वाला काम न करें। कोई लिखे भी, जवाब ही न दो। खूब झाड़ दे दो ताकि आईंदा के वास्ते उसे कान हो जायें। एक दफ़ा किसी का काम करोगे फिर हमेशा के वास्ते गुलाम हो जाओगे। जब काम न किया नाराज़गी होगी। इस वास्ते ही इंकार कर दो। जितना संसारियों में घुसने वाली बात करोगे उतने ही ख़राब होगे। पहले पत्र उनको लिखना ताकि डाक में पड़ जाये। क्यों, क्या समझे? मग्ज़ में कोई बात बैठी है कि नहीं?

भक्त जी ने अर्ज़ की:- ''जिस तरह आज्ञा होगी लिख देगा। दास ने उनको कुछ मंगवाने के लिए नहीं लिखा।''

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:- ''प्रेमी! जब ज़्यादा नज़दीकी हो जाती है तब इसी तरह होने लगता है। मगर यह उनकी पुरोहिताई करने वाले नहीं हैं। सिवाये ज्ञान उपदेश के और किसी मामले में दख़ल नहीं देना चाहिये।''

जिस वक्त यह बात हो रही थी उस वक्त श्री महाराज जी जंगल से वापिस तशरीफ ला रहे थे। जब निशात बाग आ गया तो आपने फ़ौरन गुफ़्तगू करके फ़रमाया:- ''मुगल सम्राटों की सैरगाहें बनी हुई हैं। जिस समय यह बाग बनना शुरू हुआ होगा इसमें कैसे-कैसे रंग उन्होंने किये होंगे। बड़े-बड़े शाही बाग कई जगह बने हुए हैं, एक ही जैसा नमूना तैयार करवाते रहे हैं। लाहौर में भी शालीमार बाग है। पंजा साहिब के पास उस नामी जगह में भी ऐसा ही बाग था, वहां भी नहरें चलती थीं। मुगलों को किले, बाग, मकबरे, महल बनवाने का बहुत शौक था। अच्छा समय अपना गुज़ार गए हैं। जहांगीर बादशाह नहीं रहे मगर बाग मौज़ूद हैं। चिनार के दरख़्त भी उसी

जमाने में लगे मगर आप गायब हो गए। कितना ज़ोर था, मगर वक्त आया सब बदल गया। भावी ने किसी के मान, तेज़ को नहीं रहने दिया। जिसने सिर उठाया उसे हमेशा के वास्ते दबा दिया। इन जगहों को देखकर सबक लेना चाहिये। कोई राजा हो, राणा हो या बादशाह, चाहे कितने मुल्कों का वाली हो आख़िर ख़ाके ग़ोर (शमशान) उनकी जगह है। दुनियावी ज्ञान व शौकत कोई साथ जाने वाली नहीं। चार रोज़ा ज़िन्दगी में कितनी शान से हकूमत करते रहे। हकूमत के नशे में कितने मस्त थे, मगर अब कहां हैं? उन बादशाहों को अब कौन याद करता है? पता ही नहीं कहां से आये और किधर गए? याद सिर्फ़ उनके बंदों की हमेशा रहती है। ज्यूं-ज्यूं समय गुज़रता है त्यूं-त्यूं उनकी महिमा बढ़ती जाती है। ऐसा जीवन होना चाहिये, चलते समय हम नहीं जग रोए।''

रात को भक्त जी देर से सोये थे। जब बाहर से वापिस आये, आते ही रसोई के अन्दर कुर्सी पर बैठकर अभ्यास करने लगे, मगर नींद आ गई। वक्त पर नींद नहीं खुली। श्री महाराज जी खुद जगाने के लिये आ गए। कुर्सी पर बैठे सोया देखकर आवाज़ दी। जब भक्त जी जागे तो आप नाराज़ होने लगे और फ़रमाया:– क्या कुर्सी पर बैठकर अभ्यास होता है? यह अक्ल तुझे किसने दी? खबरदार! आइन्दा कुर्सी या चारपाई पर बैठकर या नर्म गद्दे पर यह सिरहाने लगा कर अभ्यास के लिये मत बैठा करो। ऐसे आसन लगाने पर आलस, निद्रा एकदम आ जाते हैं। धरती एक कुदरती आसन है, उस पर कोई आसन बिछा कर बिना टेक के बैठना चाहिये या तख़्तपोश हो तो और बात है। बाबे वाली कुर्सी पर बैठकर अभ्यास करना अभी सीखा है। रसोई में कुर्सी का क्या काम?

भक्त जी ने अर्ज की:– ''महाराज जी! यह रसोई ऐसी है मेज पर बैठकर रोटी बनानी पड़ती है। चूल्हा बहुत ऊंचा होने के कारण मेज पर रख दिया है। साथ कुर्सी भी लाज़मी है।''

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''संसारी नये-नये स्वांग बनाते रहते हैं।'' और फिर फ़रमाया:– ''चाय दूध जाकर ले आओ, फिर स्नान करेंगे। आज इतवार है इसलिए जल्दी फ़ारिग हो जाओ।'' इतवार के दिन शालीमार और निशात बाग के लिए शहर से बसें भी आती थीं। आने-जाने की काफ़ी सहूलियत थी।

इन दिनों में चौधरी हरजी राम व पंडित सीता राम जी मलोट मंडी से और मास्टर मनी राम जी और एक सेठ मनी राम जी के साथ अहमदाबाद से दर्शनों के लिए पधारे। आज के सत्संग में जो अमृत वर्षा आपने फ़रमाई वह संक्षिप्त रूप में निम्नलिखित है।

4. सत् उपदेश अमृत

संसार एक अज़ाब का समुन्द्र है। इसमें सब जीव अपनी प्यास बुझाने की ख़ातिर दिन रात बढ़ रहे हैं। इस प्यास को बुझाने की ख़ातिर कई पुरुषों ने सोचा और तहकीकात (खोज) की तो उनको पता लगा कि जीव तृष्णा रूपी रोग में ऐसा मुबतला (लीन) हो चुका है कि उसे सही विचार करने का मौका ही नहीं मिलता। ऐसा माया का घना अन्धकार छाया हुआ है कि बड़े-बड़े धनी,

गुणी, ज्ञानी तक धीरता को प्राप्त नहीं हो रहे। इस प्रभु की माया का वारापार बग़ैर सत् ज्ञान के नहीं मिल सकता। संसार में वह ही जीव सुखी है जिन्होंने प्रभु के संग नेह (प्रेम) लगा लिया है। माया के मोह में जीवन की हैरानगी व परेशानी ख़त्म नहीं होती। सत्पुरुषों ने बतलाया कि संसार की चहल–पहल चार रोज़ा है। हमेशा एक जैसी हालत किसी की नहीं रही। उन्होंने बतलाया कि जिसने सत् की तहकीकात की उसी ने मानुष जन्म की सार को जाना। फिर फरमायाः–

जां घर कथा कीरत नहीं, संत नही मेहमान।
ताँ घर जम डेरा कियो, जीवित भयो मसान॥
जननी जने तो भक्त जन, या दाता या सूर।
नहीं तो जननी बांझ रहे, काहे गवांवे नूर॥

संतों, महात्माओं ने अपनी तरफ़ से ज़ोर लगाया और जीवों के संस्कार बदलने के लिए पैदल मशरिक से मग़रिब यानि पूर्व से पश्चिम तक भ्रमण किया। उनकी मौज़ूदगी में लोगों ने उनकी बातों को कम सुना, मगर उनके चले जाने के बाद उनकी किताबें टटोलने लगे। उनकी समाधियों पर फूल चढ़ाने और मत्था टेकने लगे। उनकी ज़िन्दगी में इम्तिहान ही लेते रहे। संतों ने तो पहरा देना है। घर–घर जाकर ढिंढोरा देते हैं मगर कोई विरला ही उनकी सुनता है। इस देश में सतों ने समय–समय पर आकर जागृति पैदा करने का यत्न किया। बुद्ध राजा था। राज त्याग कर जंगलों में जाकर तहकीकात करके सत् का पैग़ाम दिया और मंज़िले–मकसूद निर्वाण अवस्था बतलाई। जब बुद्ध मत में गिरावट आई, शंकराचार्य ने नये सिरे से सत् का पैग़ाम दिया और बुद्ध धर्म, जो नाम मात्र रह गया था, उसकी त्रुटियों को दूर किया और लोगों के विचारों को बदल दिया। जनता में, राजाओं, महाराजाओं में नई रुह फूंक दी। उसने बड़ा काम किया। उसने चार मठ कायम किये। जिस समय जो महापुरुष होता है, समय के अनुसार जागृति पैदा करता है। भारत की आबो–हवा और ख़ुराक सादा होने की वज़ह से बड़े–बड़े बुद्धिमान इस देश में होते आये हैं। जब–तक आहार–व्यवहार और संगत दुरुस्त न हो तब–तक देश की उन्नति नहीं होगी। अब तो इस देश में आहार ही खराब हो गया है। मांस के बग़ैर उनको कुछ अच्छा ही नहीं लगता। प्याज–लहसुन से तो परहेज़ करते हैं मगर मांस को अच्छा समझते हैं। परमार्थ मार्ग पर चलने वालों के लिए आहार की पवित्रता लाज़मी है। आहार की पवित्रता के साथ व्यवहार की पवित्रता भी बहुत ज़रूरी है। अगर व्यवहार पवित्र नहीं तो आहार भी पवित्र नहीं हो सकता। गो (यद्यपि) दूसरे देशों में आहार पवित्र नहीं मगर उनका व्यवहार बहुत अच्छा है। उनका रहन–सहन शुद्ध है और यक–जहती (एकता) है। अगर उनका आहार ठीक हो जाये तो वह देवता हैं। वे भोगों की सामग्री की एकत्रता में सुख मानते हैं और इस मकसद के लिए भोग सामग्री को बढ़ाने के वास्ते दिन रात यत्न–प्रयत्न करते रहते हैं। ऐसी तरक्की को दरअसल तरक्की नहीं कहा जा सकता। भोगवाद की वृद्धि आपस में लड़ने– मरने पर मजबूर कर देती है। सत् धर्म की तरफ कदम बढ़ाने से लोक–परलोक दोनों सुधरते हैं। गो इन्हें

धर्म के मार्ग का पता न हो मगर आहार, व्यवहार और संगत की पवित्रता से ही किसी समय उत्तम आनन्द की तरफ चल सकते हैं।

तृष्णा माहीं जग आये, तृष्णा माहीं उठ जायें।
अनंक भोग प्रापत पाये, तो भी धीर न पायें॥
नित–नित मन भटकत फिरे, धार के अद्‌भुत माया ताप।
पलक न पायें शांति, कोट यतन कर मर जात॥

नाना प्रकार की सामग्री इकट्‌ठी कर–कर के भी जीव को आख़िर इस संसार को छोड़ना ही है। गो पिंजर बन–बन कर ख़त्म हो जाते हैं मगर जीव के संकल्प पूरे नहीं होते, बल्कि यह नित नये से नये खेल को रच देता है। बुद्धि शरीर की कैद में सत् विचारों को धारण नहीं करती। इन्द्रियों के भोगों में दौड़ रही है। जो बुद्धि हर समय इन्द्रियों के सुख की ख़ातिर अनुकूल–प्रतिकूल कर्म करती है वह ही चंडाल बुद्धि है। अपने सुखों की ख़ातिर दूसरों को दुःख देने वाला अहंकारी जीव किसी का मित्र नहीं होता। अपने दांव में रहता है। जब–तक भेद बुद्धि बनी है तब–तक अविनाशी सुख शान्ति को अनुभव नहीं कर सकता।

महापुरुषों ने जीव के कल्याण के वास्ते और धर्म की रक्षा के वास्ते सत् उपदेश दिये हैं और फ़रमाया है कि जो भी जीव आहार, व्यवहार व संगत की पवित्रता का ख़्याल रखेगा वह ही भजन अभ्यास कर सकता है। इस देश में अनेक तरह के मतांतर होने की वज़ह से हज़ारों तरह की विचारधारा चलती रहती हैं। मगर ऋषियों ने जीवन को चार हिस्सों में बांट दिया है, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। मगर आज जिसने गेरुए वस्त्र पहन लिए वह सन्यासी हो गया। मानुष की आयु 120 वर्ष करार दी गई थी मगर प्रारब्ध अनुसार कोई पहले, कोई पीछे चले जा रहे हैं। जो जीवन नियम अनुसार चलते हैं उनके वास्ते हमेशा ही सुख है। इतिहास कथा प्रसंग इसी वास्ते हैं कि अपने पुरातन बुज़ुर्गों के जीवन आदर्श को सामने रखकर उनके नक्शे–कदम पर चला जाये।

ब्राह्मण सो जो, ब्रह्म पिछाने, छज छाननी गंडा जाने।
टुट्टे छित्तर लाये टाकी, सो ब्राह्मण बैकुंठ का बासी॥

कबीर ने बड़ी अच्छी तरह जगाने की कोशिश की है ताकि पाखंडवाद दूर हो जावे, मगर उसके जाने के बाद अब कबीर के सब गद्‌दी, मठों पर खड़ाव और मूर्तियों की पूजा हो रही है। संत जितना अंधेरा दूर करने की कोशिश करते हैं उनके बाद उससे दुगना यह बढ़ जाता है। संसारियों का धर्म हमेशा अलग ही रहा है। सत्वादी पुरुष त्यागमई जीवन पेश करते आये हैं। जिसने उनकी शिक्षा को हृदय के अंदर धारण करके कमाई की, आप भी तरे और हज़ारों को अन्धकार से निकाला। जीव की बेकरारी सत् परायण होने से दूर हो सकती है। ईश्वर सब को निर्मल बुद्धि बख्शें। इस भोगवाद के समय शांति और सुख मर्यादा धारण करने में है। विकारों से निर्विकार तब

ही हो सकता है जब धर्म को धारण करेगा। गुरु पीर का आधार इसी वास्ते लिया जाता है कि उनके त्याग, वैराग्य, उदासीनता, परोपकार वग़ैरा को देखकर जीव के अंदर उत्साह व निर्मल पुरुषार्थ पैदा होता है। भाग्य से सत्पुरुष मिल जायें तो काया पलट जाती है। सत् बुद्धि द्वारा नित यत्न करो। प्रभु की माया बड़ी बलवान है। बड़े से बड़ा यत्न करने पर फिर मान-मद में जीव ग्रस्त हो जाता है।

मोटी माया सब तजें, झीनी तजी न जाये।
झीनी माया जो तजे, सो ही नारायण कहलाये॥
काम क्रोध तजना सहज है, और नारी का नेह।
मान मद और मसखरी, दुर्लभ तजना एह॥

घर बार भी छोड़ा, सिर में छाई भी पाई, जब पूछो, कहते हैं- 'मैं सन्यासी, मैं त्यागी।' ज्ञान का विषय ऐसा सूक्ष्म है कि इसे समझना बड़ा पवित्र बुद्धि का काम है। बार-बार 'जो तेरी आज्ञा' में इन मन को डालता है, वह ही भक्ति, ज्ञान, योग को धारण करने वाला है। ईश्वर सबको सुमति देवें।

इसके बाद आरती व समता मंगल उच्चारण किया गया और फिर प्रशाद बांटा गया। फिर श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमियों! कुछ विचार करो।'' इस पर एक प्रेमी ने अर्ज़ की:- महाराज जी! आपने कबीर का शब्द सुनाया कि 'ब्राह्मण सो जो ब्रह्म पिछाने, छज छाननी गंडा जाने। टुट्टे छित्तर लाये टाकी, सो ब्राह्मण बैकुंठ का वासी।' इसका क्या मतलब है?

श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''कबीर के ज़माने में ब्राह्मणों का बड़ा ज़ोर था। छूत-छात, जनेऊ, तिलक, धोती बांधना ही ब्राह्मणों ने धर्म बना रखा था। छोटी ज़ात वाले लोगों से बड़ी नफ़रत करते थे। कबीर बड़ा फक्कड़ फ़कीर था। उसे किसका डर था, इस तरह बोल दिया। पहले तो ब्राह्मणों को बड़ी जलन हुई, चमार और मोची बना दिया है। मगर जब इसका मतलब समझाया गया तब सबको शांति हुई। इस शब्द का मतलब यह है कि असली ज्ञानवान ब्राह्मण वह ही है जो अमीर-गरीब, छोटे-बड़े को यानि छोटी-बड़ी ज़ात वाले ऊंच-नीच के साथ एक जैसा सलूक करे और एक जैसा प्रेम भाव रखे। किसी को नफ़रत की निग़ाह से न देखे। जैसा कृष्ण ने गीता में फरमाया है- सुअर, चंडाल, कुत्ता, हाथी सब जीवों के अन्दर एक आत्मा को देखने वाला हो, अन्दर से सबका हित चाहने वाला हो, वह ही असली ब्राह्मण है। सब इन्सानों को एक सी तालीम देने वाला हो, किसी से द्वेष न रखता हो, ऐसे व्यक्ति ने ही सबके अन्दर एक आत्मा को जाना है। ''टुट्टे छित्तर लाये टाकी'' का मतलब है, जिनको गिरा हुआ या नीच समझा जाता है उनको भी सत् विचार देकर उनका सुधार करने वाला हो। वह ही बैकुंठ में जाता है। महंत बने हुए हैं, जिसने धोती तिलक लगा लिया बस ब्राह्मण हो गया। जिसके अन्दर जीवों के वास्ते दर्द है, दूसरों के दु:खों को अपना दु:ख जानकर उनकी तन, मन, धन से सेवा करने वाला हो वह ही असली ब्राह्मण है। असली ब्राह्मण की बड़ी व्याख्या पुस्तकों में हो चुकी है। असली ब्राह्मण तो सारे संसार का गुरु है।

फिर एक प्रेमी ने अर्ज की:– ''महाराज जी! काम क्रोध से भी मान–मद छोड़ना बहुत मुश्किल है।''

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''प्रेमी! छोड़ना क्या, जीते जी मरना है। माया, मोह और अभिमान ही तो छोड़ना है। मरने से पहले मरना है। सब तप, जप, ध्यान, योग इसी के वास्ते हैं ताकि दीनता, निर्मानता, ग़रीबी आ जाये। सब कुछ प्राप्त हो, फिर कहे मेरा कुछ नहीं। सब कुछ प्रभु का है, यह शरीर भी मेरा नहीं। हर किस्म की ताकत प्राप्त हो फिर निर्मान रहे। नानक जैसे परम फ़कीर हर तरह की शक्ति रखने वाले जब बोलते हैं, कहते हैं– ''नानक नीच कहे विचार, तेरा भाना मीठा लागे, नानक नाम पदारथ मांगे।'' कमाई करके जज़्ब करना किसी विरले का ही काम है। जिस तरह मारवाड़ी सज्जन धन की कमाई कैसे संभाल के रखते हैं कि बयान से बाहर है। बाहर से ग़रीब बने रहते हैं, मैली सी धोती बांधी होती है, जितना भी धन आये ज़रा नहीं उभरते। इसी तरह ज्ञानी, विचारवान भी निर्मानता को धारण करके संसार में विचरते हैं। मोटी माया, धन पदार्थ, परिवार, घर बार त्याग भी दिया लेकिन मन के अंदर अगर अहंकार खड़ा है, तो कुछ नहीं त्यागा। बल भी, बुद्धि भी हो धन–माल, इकबाल भी हो, तो कोई विरला ही माई का लाल इस अहंकार से रहित हो सकता है।

सत्संग समाप्त हो चुका था, विचार भी करीबन ख़त्म हो चुके थे, प्रेमी शहर वापिस जाने लगे। जाने से पहले आपकी सेहत के बारे में प्रेमियों ने पूछा। आपने फरमाया:– ''अभी भी दाईं तरफ़ कुछ भारीपन है। पैदल चलने से कुछ अफ़ाका मालूम होता है।''

लाला मूलराज साहेब ने अर्ज़ की:– इस जगह श्रीनगर में डाक्टर शिंगलू साहेब काबिल डाक्टर हैं, उन्हें दिखाया जाए। उनसे वक्त मुकर्रर कर लिया जावे। प्रेमी दीनानाथ मंहगी व प्रेमी गिरधारी लाल जी ने भी कहा कि ज़रूर बन्दोबस्त किया जाये क्योंकि वह बहुत समझदार हैं। महाराजा कश्मीर के ख़ास डाक्टर हैं। अनुभव भी बहुत है। हाथ में शफ़ा भी है।

इस पर श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''अपने अनुभव से हिकमत जानने वाले संसार में बहुत थोड़े हैं। कुदरती सूझ कोई–कोई ही रखता है। असली हकीम लोग जब घर से चलने लगते हैं उसी समय जान जाते हैं कि मरीज़ राज़ी हो जायेगा या नहीं, फिर पहुंचते ही नजरों से देखकर, हाथों से टोह कर सारी मर्ज़ को समझ लेते हैं। आजकल की क्या हिकमत है, सौ–सौ बार टूटियां लगाते हैं फिर भी कुछ समझ नहीं आता। बीमारी कुछ होती है, नुस्ख़ा कुछ लिख देते हैं। चल गया तो तीर नहीं तो तुक्का ही सही। हकीम, जौहरी, पारखी यानि सर्राफ़ और खोजी पैरों के निशान देखकर चोरों को पकड़ने वाले, इन लोगों के अन्दर कुदरती ताकत होती है। जवाहरात को परखने वाले भी विरले होते हैं। जिसके ऊपर प्रभु कृपा कर दें। एक किस्सा रियासत कश्मीर का ही सुना हुआ है। महाराजा रणबीर सिंह को किसी तरफ चढ़ाई करने के वास्ते जाना पड़ा। साथ सूखी मिठाई के झोले भर लिए। उनमें सूखी लूचियां भी थीं। लड़ाई के लड़ते–लड़ते कई दिन गुज़र गए। जिस

समय भूख लगती घोड़े पर बैठे–बैठे मिठाई वग़ैरा खाकर पानी पी लेते थे। सूखी लूची का टुकड़ा अन्तर–विखे किसी आंत में रुक गया। जब लड़ाई खत्म करके राजधानी पहुंचे पेट में दर्द दिन व दिन बढ़ने लगा। जब बड़े–बड़े शाही हकीम ज़ोर लगा चुके, आराम न आया। आख़िर एक गूजर हकीम था। उसने आकर नब्ज़ देखी मगर कुछ न कहा। खामोश होकर खड़ा हो गया। सब हैरान थे, चुप क्यों हो गया है। थोड़ी देर बाद कहने लगा:– ''महाराज! गलती माफ़ हो तो कुछ पूछ सकता हूँ। कुछ शक पड़ गया कि ऐसा कैसे हो सकता है? आपने किसी–समय सूखे मैदे की तली कोई पूड़ी या लूची तो नहीं खाई। आपको ऐसी चीजें खाने का मौका कब मिलता है? किसी सूखी चीज़ का टुकड़ा आंत में अटका हुआ है। वह निकल नहीं रहा। उसने आपको तकलीफ़ दे रखी है।'' महाराज ने सोच–सोच कर कहा:– ''फ़लां लड़ाई में सूखी लूची का टुकड़ा खाकर पानी पिया था।'' जब जांच ठीक हो गई तब उसने इलाज किया। दो चार जुलाब ऐसे आये वह लूची का टुकड़ा उसने निकालकर दिखा दिया। उसके बाद दिन व दिन आराम होने लगा।''

इसके बाद प्रेमी वापिस चले गए। आसन अन्दर ले जाया गया। गर्मी और मच्छर दिन व दिन बढ़ रहे थे। चौधरी हरजी राम जी बड़े तंग होने लगे और कहने लगे:– ''इस कश्मीर से मलोट ही अच्छा था। रात ठंडी होती है और मच्छरों का नाम व निशान नहीं है। आइंदा कभी कश्मीर नहीं आवेंगे। पैसे देकर मुसीबत मोल ले ली है। पता नहीं फ़िरदौस ने कैसे कह दिया है कश्मीर की धरती बहिश्त का नमूना है? 'अगर फ़िरदौस बरूए जमीं अस्त, हमीं अस्तों, हमीं अस्तों, हमीं अस्त' यानि अगर बहिश्त जमीन पर है तो यहीं है, यहीं है, यहीं है।'' प्रेमी पंडित सीता राम जी ताईद (समर्थन) करने लगे।

महाराज जी फ़रमाने लगे:– ''चौधरी जी! सफ़र में किसी को आराम थोड़े मिलता है। ''जो सुख छज्जू दे चौबारे, न बलख न बुखारे।'' बाहर निकल कर देखें तब घर की कदर आती है। वैसे दूर से पहाड़ सुहावने लगते हैं, चढ़ने से पता लग जाता है। जो सुख अपनी झोपड़ी में है वह महलों में भी प्राप्त नहीं होता। घूम–फिर कर संसार ज़रूर देखना चाहिये। घबराने से काम नहीं चलता। बड़ी सोहल जिंदगी बना रखी है। सफ़र–सफ़र है। मुगल बादशाह गर्मियों में सैर करने आते थे। उनके वास्ते कई प्रकार के हिफ़ाजती सामान होते थे। आजकल तो पहले से भी ज़्यादा सुख के सामान बने हुए हैं। अब भी जो वज़ीर आते हैं और बाहर से दूसरे मुल्कों से बड़े–बड़े लोग आते हैं, उनको अच्छी–अच्छी जगहें दिखाकर वापिस करते हैं। सर्दियों में आकर देखें तब पता लगे, बहिश्त है या दोज़ख। किस कदर गन्दा दोज़ख का नमूना है।''

प्रेमी दीनानाथ जी ने अर्ज़ की:– ''अब सफ़ाई होना शुरू हो गई है। तंग बाज़ार खुले किये जा रहे हैं। सफ़ाई का ज़्यादा से ज़्यादा ध्यान रखा जा रहा है।''

फिर जगाधरी के मुतालिक विचार चलने लगे। चौधरी हरजी राम भी कहने लगे:– ''महाराज जी! आश्रम के अहाता में फलदार वृक्ष एक ही किस्म के लगवाने चाहिए ताकि किसी समय अगर फल किसी ठेकेदार को दिया भी जावे तो उसे तकलीफ़ न हो।'' श्री महाराज जी ने

फ़रमायाः– ''चौधरी जी! बाबू जी से विचार कर लेवें। सारा सिलसिला उसके हाथ में है। जो कुछ करेगा, सोचकर करेगा। इनको तो कुछ इल्म नहीं, क्या–क्या प्रोग्राम वह बना रहा है। बहुत सारे पौधों के नाम तो उसने लिख रखे हैं। प्रेमियों का भी फ़र्ज़ है सलाह–मशविरा पत्रिका द्वारा करते रहें।''

एक रोज़ चौधरी हरजी राम जी, पंडित सीता राम जी व मास्टर मनी राम जी आज्ञा लेकर, चाय दूध पीकर, श्रीनगर शहर देखने के लिए गए। उस दिन प्रेमियों का लंगर भी प्रेमी दीनानाथ जी महंगी के गृह पर था। भक्त बनारसी दास जी भी जल्दी फ़ारिग होकर अपने सम्बन्धी को मिलने गए।

भक्त जी वापिस आकर जब दूध पिलाने लगे तो श्री महाराज जी फ़रमाने लगेः– ''प्रेमी! अपने रिश्तेदारों की हाज़री दे आए? सतपाल और कमला राज़ी–खुशी थे? प्रेमी, उनका फर्ज़ था तुम्हें मिलने आते। रिश्तेदारों से ज़्यादा मेल–जोल न रखना चाहिए। बेशक, तुमसे बहुत प्रेम रखते हैं लेकिन कुड़माचारी फूलों की आब की तरह है। उम्र में तुम बड़े हो, उनका आना बनता है।''

भक्त जी ने अर्ज़ कीः– वे ज़रूर आयेंगे। कह रहे थे कि महाराज जी के दर्शन करने हैं। इस समय आपने फ़रमायाः– ''हां! वह तो आवेंगे मगर यह तेरे लिए कहते हैं। ऐसी जगह अव्वल तो जाना ही नहीं चाहिये, जावे भी तो कम। अमीर, फ़कीर का क्या मेल? उनका स्वभाव तो अच्छा है मगर सत्संग में कोई रुचि नहीं। तुम्हारे करके ही आते हैं। किसी समय उनका मोह तुझे दुःख देगा, तेरी बुद्धि में यह बात नहीं बैठती।''

''साध वचन पलटे नहीं, पलट जाए ब्रह्मण्ड''

''बच्चू आंवलियां दा स्वाद पीछे अच्छा लगता है। इनके वचन याद रखना।''

उस समय काली घटा उठी और छा गई। अंधेरी आने का रूप नज़र आने लगा। आसन अन्दर ले चलने की आज्ञा हुई। बड़ा तूफान आया। श्री महाराज जी फ़रमाने लगेः– ''प्रेमी शहर गए हुए हैं, किश्ती पर सवार होकर न चल पड़ें। डल में किश्ती उलटने का ख़तरा होता है।'' थोड़ी देर के वास्ते ध्यानमग्न हो गए। उसके बाद फ़रमाया– ''जो तेरी आज्ञा।'' अन्धेरा शुरू हो रहा था। प्रेमी घबराये हुए पहुंचे। आकर प्रणाम करके चरणों में बैठ गए। पंडित सीता राम जी कहने लगेः– ''महाराज जी! आपके दर्शन होने थे। आज नया जन्म हुआ है। किश्ती डल में थी। काफ़ी आदमी सवार थे। हमारा बोझ भी प्रभु कृपा से थोड़ा सा ही था। जिधर ज़रा सा पासा बदल कर बैठते किश्ती डोलने लगती थी। बड़े पछता रहे थे, क्यों किश्ती में बैठे थे? सब देख–देख कर हँस रहे थे। किश्ती चलाने वाला काफ़ी होशियार था। जल्दी–जल्दी करके दीवार के साथ किश्ती ले गया और किनारे लगा दी। बड़ी मुश्किल से सड़क पर चढ़ सके।'' चौधरी जी कहने लगेः– ''आप ना मोयों ब्राह्मणां, जजमान भी नाले' आज पूरा दृश्य ऐसा ही था। आपने ही कृपा करके पार लगाया है। हम तो उम्मीद छोड़ चुके थे। किश्ती में सब सवारियां घबरा रही थीं और विचार उठ रहे थे, ज़िन्दगी रही तो अब कश्मीर में कभी सैर के वास्ते नहीं आयेंगे।''

श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''शुक्र करो, किसी वक्त कोई अच्छा कर्म किया हुआ आगे आ गया है, सहायता हो गई है। हर समय तूफ़ान थोड़े आते हैं। यह भी समागम हो जाता है। किसी चीज़ की बहुत निन्दा नहीं करनी चाहिए। सब अपने भागों (भाग्यों) की बात है। अन्धेरी झक्खड़ किस जगह नहीं आते। जीव को हर चीज़ सबक दे रही है। सब उस प्रभु की माया है। सब कुछ देखते हुए भूल जाते हैं।''

5. एक नवयुवक को शिक्षा

एक दिन प्रेमी मास्टर मनी राम जी एक लड़के को साथ ले आए। आकर प्रणाम करके बैठकर कहने लगेः– ''यह गोपी तीर्थ में ठहरे हुए हैं। एकांतवास में समां गुज़ार रहे हैं। लड़का अच्छा तेजवान है।'' श्री महाराज जी ने पूछाः– ''प्रेमी! किस आधार पर खड़े हो या खाली शौक पूरा कर रहे हो?'' लड़का कहने लगाः– ''आधार तो एक नारायण का ही है। बचपन से ही ऐसा शौक रहता था कि वनों मे जाकर तप करूं। सन्तों का संग करूं। एक महात्मा मिल गए थे, उन्होंने एक साधन बतलाया था कि पहले सूरज भगवान को प्रसन्न करो, फिर आगे के लोकों का तुम्हें पता लग जायेगा। इस तरह एक समय खिचड़ी बनाकर सेवन कर लेता हूं, एक समय दूध ले लेता हूं। जिस जगह आप किसी समय निवास कर चुके हैं वहां ही ठहरा हुआ हूं। महात्मा लक्ष्मण जी साहेब ने दूध चावलों का इंतजाम कर दिया। आप भी कृपा करके कुछ शिक्षा देवें।''

श्री महाराज जी फ़रमाने लगेः– ''प्रेमी! ठीक है, जो कुछ प्रेम से कर रहे हो, सत् विश्वास से लगे रहो। रोज़ नई –नई शिक्षा नहीं लेनी चाहिये। कभी मौका मिले तो सत्संग के समय इतवार को आया–जाया करो। अच्छा है जैसे भी लगे हुए हो, मगर मान और माया से बचना मुश्किल है।''

गृही हो तो भक्ति कर, न तो कर बैराग ।
बैरागी हो बंधन पड़े, ताको बड़ा अभाग ॥
तब लग जोगी जगत गुरु, जब लग रहे निराश ।
जब जोगी आशा करे तो, जग गुरु जोगी दास ॥
मोये को प्रभु देत हैं, लकड़ी, कपड़ा, आग ।
जीवत तो चिंता करे, तिस का बड़ा अभाग ॥

''प्रेमी, यह उम्र बाल अवस्था है। बग़ैर सोचे–समझे घर से निकल पड़े हो। डटकर साधन करो। जिज्ञासु को पहले गुरु भक्ति, सेवा में लगना चाहिए, फिर जिस योग क्रिया में गुरु लगा देवें उसमें प्रभु परायण होकर जब यत्न–प्रयत्न करेगा तब जाकर किसी समय अन्दर रोशनी होगी। तुम्हारी बातें समझदारी वाली नहीं। किसी कामिल गुरु की पहले तलाश करो। सूरज, चन्द्रमा, राहू, केतू, ब्रह्मा, विष्णु सब तेरे अन्दर ही हैं। शौक ज़रूर है मगर तुम अभी बच्चे ही हो। प्रेम से लगे

रहो। लग्न पूरी लगी रही तो आप ही नारायण किसी भेष में समझाने आ जावेंगे। तप करते–करते यह नया खून जल जायेगा फिर असली सूरज के दर्शन होंगे।''

मास्टर मनी राम अर्ज़ करने लगे:– ''महाराज जी! इस पर कृपा करो। पूरा जिज्ञासु है।''

श्री महाराज जी फ़रमाने लगे:– ''अभी तो यह गुरु खुद बन रहा है। जिज्ञासु इस तरह की बातें नहीं किया करते। जब–तक यह ख़ुद कमी को न समझे और जो कर रहा है उसे ग़लत न समझे तब–तक दूसरा रास्ता पकड़ना फ़िज़ूल है। हठ से कुछ नहीं हासिल होना। कश्मीरी ब्राह्मण बातों में बड़े चतुर होते हैं। किसी समय शायद इसे होश आ जाए कि जो कर रहा हूं यह ठीक नहीं। फिर श्रद्धा करके पूछेगा तो फिर असर होगा। जिसने कुछ सीखना होता है वे और ही जीव होते हैं। अच्छा है जो कर रहा है। जब–तक पहले श्रद्धा न धारण करे तब–तक कुछ हासिल नहीं हो सकता।''

श्री महाराज जी तरीके से कुछ समझाने का यत्न कर रहे थे, मगर वह अपने विचारों पर खड़ा था। एक दफ़ा भी निर्मान भाव से कुछ और पूछने की कोशिश नहीं की और मास्टर जी से कहा– यह बच्चों का खेल नहीं। ऐसे लोगों के वास्ते पहले बड़ा सख़्त इम्तिहान होता है, फिर शिक्षा दी जाती है। हर किसी की सिफ़ारिश न किया करो। पता दे दिया है, आगे वह ख़ुद विचार करे। जो जिज्ञासु होगा वह ख़ुद चला आवेगा। इसके दिमाग़ में सिर्फ़ सूरज की पूजा बैठी हुई है। ''अच्छा प्रेमी, जाओ। सूरज का तेज प्रकट करो। पहले यह शरीर की लाली ख़त्म होगी, फिर वह दूसरा भानु प्रगट होगा। लगे रहना चाहिये।'' प्रेमी नमस्कार करके विदा हुआ।

जब वह चला गया, श्री महाराज जी फ़रमाने लगे:– ''जैसा किसी ने दिमाग़ में बिठाया उस तरह चल दिये। यह ही बचपना होता है। इस मार्ग के वास्ते बड़ी खोज की ज़रूरत है। रास्ता चलना कोई आसान थोड़ा है। बड़े भाग (भाग्य) हों तो गुरु मिले।''

जब खाना बग़ैरा खाकर भक्त जी पत्र लिखने लगे, श्री महाराज जी समाधिस्त बैठे थे। कलम–दवात लेकर पत्र लिखने लगे। श्री महाराज जी ने पूछा:– ''फलां काम किया है?'' भक्त जी ने अर्ज की:– ''महाराज जी, आप सोये थे। दास ने जगाना मुनासिब नहीं समझा। ख़्याल आया जब उठेंगे तब पूछकर कर लूंगा।'' फरमाने लगे:– ''बच्चू! साधु, सर्प, शेर और कुत्ता कभी नहीं सोते। अन्तर से हर समय जागते रहते हैं। असली साधु को तो तीन काल निन्द्रा नहीं आती। योग निन्द्रा में लवलीन रहते हैं। इनको सोया हुआ कभी न समझो। उठते, बैठते, लेटते, चलते, फिरते हर समय अपनी मस्ती में मग्न रहते हैं और जीवों की नज़र में बेशक चलते–फिरते बैठते दिखाई दें। हर बात उनकी तेल देने के तुल (समान) होती है। इच्छा करके कोई काम नहीं करते, न सोचते हैं। सर्प, शेर, कुत्ते के अंदर भी अपनी–अपनी मस्ती होती है। खेचरी मुद्रा उनकी खुद–ब–खुद बन जाती है। कर्म दंड भोगने की वज़ह से कुछ कह नहीं सकते। अपनी ख़ुराक की ख़ुमारी में जिस जगह पड़े हों पड़े रहते हैं। ज़रा सी आहट आने पर झट होशियार हो जाते हैं।''

6. मुद्रा साधन

प्रश्न – महाराज जी, मुद्रा क्या होती हैं?

सद्गुरुदेव जी:- प्रेमी, यह हठ योग के चार, पांच प्रकार के साधन हैं। गोरख, मच्छन्द्र जैसे योगी इन साधनों को ज़्यादा इस्तेमाल में लाते रहे हैं। खेचरी, भोचरी, उनमनी, चाचरी, शन्मुखी मुद्रा वग़ैरा इनको कहते हैं। खेचरी जीभा को ज़्यादा से ज़्यादा लम्बा करके तालू में उल्टा करके रखना। शन्मुखी कान, नाक को बन्द करके अन्तर-विखे नाद सुनना, इसी तरह गुदा, लिंग वग़ैरा के कई स्थानों को दबाना फिर ध्यान करना। कई प्रकार के यह सब साधन असल में शारीरिक क्रियायें हैं, किसी तरह अन्तर-मुखी वृत्ति हो जाये। वैसे यह सब साधन विकारमयी बुद्धि कर देने वाले हैं। बुद्धि, सुरति एकाग्र करते-करते शरीर को भी रोगी कर लेते हैं। घोर बियाबान जंगलों में रहकर इन साधनों द्वारा वृत्ति खड़ी हो जाती है। मगर जब दृष्टि संसार पर पड़ती है वासनायुक्त बुद्धि हो जाती है। संसारियों को ज़्यादातर इन साधनों से प्रभावित किया जाता है ताकि मान, मर्यादा, पूजा बनी रहे। कई इन साधनों द्वारा कई-कई दिन फ़ाका में पड़े रहते हैं। जब खाने का मौका लगा बीस-बीस आदमियों की ख़ुराक एक ही खा जाता है। पानी पर चलना, हवा में उड़ना, बड़े से छोटा, छोटे से बड़ा आकार धारण कर लेना, दृष्टि का दूर तक जाना, पहले की बात पूछ लेना कई प्रकार के चमत्कार दिखाने में माहिर होते हैं। सब कुछ करके भी सुरति एक-चित्त नहीं होती। इन सब साधनों का सरताज यह राजयोग है, जिसमें आख़िरकार आकर फिर मरते हैं। कभी किसी ध्यान में, कभी किसी विचार में लगाना सत्गुरु का यह धर्म नहीं। शिष्य को पहले से ही ऐसी साधना में डाले। शिष्य आप ही किसी समय मंज़िल पूरी कर लेवेगा। कभी मस्तक का ध्यान, कभी नाभि, गुदा, लिंग, हृदय, कंठ, वग़ैरा के बारी-बारी ध्यान करवाने का मकसद यह ही होता है कि सुरति, मन, चित्त ठहर जाए। वैसे इस तरह करने से बुद्धि भ्रम में फंस जाती है। आम जीवों को क्या पता योग क्या होता है जिस तरह किसी ने जिस साधन में लगाया उसको परम श्रेष्ठ मान लिया?

प्रेमी जी, जब-तक शिक्षा पूरी तरह से गुरु से नहीं मिलती तब-तक साधन किस तरह बन सकता है। सिद्धता के बग़ैर साधना कहां से आई? अव्वल तो इस साधना को करने वाले ही मर गए, जिसको पता भी है उसे विश्वास की ज़रूरत है। और पूर्व कर्म अच्छे हों, ठीक राह पर लगाने वाला संत मिल जाए, तब उसकी कृपा से श्रद्धा-विश्वास पाकर साधना में जुट सकता है। जगह-जगह पर जाने की भटकना सत्पुरुष ख़त्म कर देते हैं। कम अक्ल लोग जो होते हैं, हीरे को पाकर फिर भी जिनको दर-दर भटकने की आदत बनी रहती है वह आख़िर तक अपने मकसद में कामयाब नहीं हो सकते। बुद्धि का भ्रम अज्ञानता से परे होकर शक्की बुद्धि से निज़ात पा जाना भी बड़ी प्रभु की कृपा जाननी चाहिए। साधक बनना कोई आसान नहीं। मगर शक्की से मुक्ति पाना भी बड़ी बात है। दौड़ खत्म करके साधन में लगना भी उच्च भाग्यशाली जीवों का पुरुषार्थ होता है। बादशाहों के

दरवाजे पर मांगने जाये, वहां से आकर दूसरी जगह मांगना दुर्भाग्यता है। तेली ख़सम भी कीता ते पट्टियां वास्ते तेल न मिले', यह भी अभाग्यता है। साधन के वास्ते बार-बार सत्गुरु से तसल्ली करे, जिज्ञासु का फर्ज़ है। वैसे तो सत्गुरु अपनी तरफ़ से कमी नहीं छोड़ते, जिस शिष्य के अन्दर अपनी कम समझ होती है वह ही भटककर फिर जगह-जगह दौड़ता है।

प्रश्न– महाराज जी, शिक्षा देने में और नुक्ते समझाने में आपकी तरफ से कोई कमी नहीं है, कमी सिर्फ अपने पुरुषार्थ में है। हम चाहते हैं आप किसी समय हमारे सिर पर हाथ रखकर अन्तर-विखे रोशनी कर देवें। बस यही ख़्वाहिश है। कोई साधना न करनी पड़े।

उत्तर– बच्चू! गुरु तुम सबको सस्ते मिल गए हैं। जंगलों की ख़ाक नहीं छाननी पड़ी। आदिकाल से जो नुक्ता चला आया है वह तुम्हारे आगे ठीक रूप से रख दिया है। पहले गुरु बारह-बारह वर्ष तक सिर पर पानी भरवाने के बाद बताया करते थे, शरीर क्या है और आत्मा क्या है, मन बुद्धि किस तरह चंचल हो रहे हैं? और किसी समय सोच में आकर देखा कि यह जिज्ञासु कुछ करने वाला है तब उसे कुछ बतलाया करते थे। इन बारह वर्षों में मनुष्य का कुछ पता लग जाता था कि असली प्रेम रखने वाला है या बनावटी है। आते ही तुम लोगों को दो दफ़ा प्रार्थना करने पर इन्होंने सेवा में ले लिया है। असली राज़ आगे रख दिया है। यह सब समय का फेर है। झटपट रोशनी करवानी है तो जाओ बनावटी गुरुओं के पास। प्रेमी, चाहे आज ही शिक्षा में मरो या दस, बीस, पचास वर्ष के बाद यत्न करो। श्रद्धा, विश्वास को लेकर यत्न करोगे तब ही अन्तर-विखे रंग लगेगा। सिर पर हाथ रखने वाला ख़्याल तर्क (छोड़ना) कर दो। हां, यह इनकी सेवा ज़रूर रंग लावेगी। अब तुम दृढ़ता से इसमें समां दो। अभी तुम्हारी बुद्धि भी संसार की तरफ दौड़ रही है, न मालूम किस समय किस गेड़ में फंसकर चंचल वृत्ति इख़्तियार करे। माया बड़ी प्रबल है। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि इस माया चक्कर से खौफ़ खाते हैं। अभी तो सेवा में लगे हो, बाहर की सेवा से बचे हो। बाहर विचर कर देखो, तब पता चले। ख़ैर, इनकी सेवा अकार्थ नहीं जायेगी। किसी समय याद करोगे।

7. आश्रमों में महिलाओं के ठहरने पर पाबन्दी

जब अंधेरा होने लगा तो भक्त जी की भांजी कमला और उनके पति सतपाल आ गए। श्री महाराज जी के चरणों में हाज़िर होकर प्रणाम किया। इतनी देर में प्रेमी दीनानाथ जी महंगी भी डाक, अखबार लेकर आ गए। दोनों को भोजन खिलाया गया। उसके बाद भक्त जी वाणी वग़ैरा उच्चारण करके रात को सोने लगे तो सतपाल वग़ैरा के लिए रसोई के साथ वाले दूसरे कमरे में सोने का प्रबन्ध भक्त जी ने कर दिया। इस पर उन्होंने कहा:- किश्ती वापसी की करके लाये हैं। सुबह वापिस चले जायेंगे। आधी रात के वक्त जब श्री महाराज जी बाहर जंगल तशरीफ़ ले गए और भक्त जी साथ थे तो श्री महाराज जी ने पूछा:- सतपाल, कमला रात को वापिस कैसे गए? भक्त

जी ने जवाब दिया:- वापिस नहीं गए बल्कि रसोई के साथ वाले कमरे में उन्होंने आराम पाया है। ग्यारह बजे रात किधर जाना था।

इस पर श्री महाराज जी नाराज़ होने लगे कि क्यों तुमने इन्हें इधर ठहराया? स्त्री को आश्रम में ठहराने को किसने कहा था? रिश्तेदारियां पालने लगे हो। भक्त जी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! आधी रात के वक्त उनको धक्का थोड़ा देना था। यहां से 8-9 मील शहर था, किस तरह ठहरने की जगह जा सकते थे''?

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:- ''ज़्यादा करते, दूध वाले कमरे में किसी जगह खोखे में जगह बना देते। असूल को समझते नहीं हो।''

भक्त जी ने अर्ज़ की:- महाराज जी! एक अतिथि है बेवक्त आ जाए, वाकिफ़ भी हो, उसे जवाब देना कहां तक ठीक है? भक्त जी ने गंगोठियां में मर्द-औरतों के इकट्ठे रहने के हवाले दिए और अर्ज़ की:- आपने इसके बारे में कोई ख़ास हिदायत भी नहीं दे रखी थी। दूसरे कमला अपने पति के साथ आई थीं। आप इनके हालात अच्छी तरह जानते हैं।

श्री महाराज जी ने भक्त जी की कोई दलील नहीं मानी और नाराज़ होते रहे। प्रेमी दीनानाथ महंगी ने भक्त जी को समझाया कि माफ़ी मांग लो, 'आइंदा इस तरह किसी को नहीं ठहराया जावेगा।''

भक्त जी ने गंगोठियां की एक मिसाल दी कि किस तरह एक ख़ास प्रेमी एक औरत को साथ लाया था और वह वहाँ इकट्ठे रहे थे और श्री महाराज जी ने उन्हें कभी मना नहीं किया। ख़्वाम-ख़्वाह मुझे डांट-डपट रहे हैं। न ही कोई ऐसा विचार सामने आया। मजबूरी में रात को उनका आना हो गया, जा नहीं सकते थे। इसमें दास की ग़ल्ती हो तो माफ़ कर देवें। उनको कह दिया जावेगा, आइंदा बेवक्त न आवें।

नोट : उस प्रेमी के बारे में उस वक्त एतराज हुआ था। सत्पुरुष ने उसे उस वक्त कुछ कहना ठीक नहीं समझा और उस समय नियम नहीं बने हुए थे।

फिर भी महाराज जी ने फ़रमाया:- ''आइंदा ख्याल रखना। स्त्री सहित कोई प्रेमी न ठहरने पाये।''

दो चार पत्र लिखने के बाद भक्त जी खामोश बैठे थे। श्री महाराज जी ने फ़रमाया:- ''अभी तेरा गुस्सा ठंडा हुआ है या नहीं?''

भक्त जी ने अर्ज़ की:- ''गुस्सा क्या करना है। आपने जैसा अच्छा समझा है फ़रमाया है। कोई नावाकिफ़ तो थे नहीं, अपने संबंधी थे। आप अच्छी तरह उनको जानते हैं। हम उनके घरों में जाकर ठहरते हैं। अगर यह लोग किसी वक्त आकर ठहर जायें तो क्या हर्ज़ है''?

श्री महाराज जी ने फ़रमाया, ''प्रेमी, यह गंगोठियां नहीं। इस समय एकांत में ठहरे हुए हैं। आज तुम्हारे रिश्तेदार आए हैं फिर यहां के प्रेमी परिवारों को लाकर ठहराना शुरू कर देंगे। यह

मेला नहीं है। इस वास्ते तुमको चेतावनी दी गई है ताकि यह भी सुन लें और आइंदा के वास्ते ध्यान रखें। देखा-देखी सिलसिला शुरू हो जाता है। तुम आगे से बहस शुरू कर देते हो। जो कहा जाए सत् वचन कह कर सुन लिया करो। बाकी अब यह पिछला सिलसिला नहीं रहेगा। जो स्थान बन रहा है उसके वास्ते ख़ास कानून होगा। स्त्रियों के वास्ते अलग जगह और पुरुषों के ठहरने का अलग प्रबन्ध होगा। ख़ैर जैसे हालात होंगे विचार हो जावेगा। एकांत जगह में परिवार वालों से रिश्तेदारों से ज़्यादा मोह अच्छा नहीं होता। आख़िर में यह लोग बेइज़्ज़ती का बायस होते हैं। कुड़माचारी को दूर से ही सलाम अच्छा रहता है। बल्कि हर एक से प्रेम ऐसा रखना चाहिए जिससे समां अच्छी तरह निकलता रहे। जितना संसारियों में खिंचत होने (मिलने) की कोशिश करोगे उतना ही मान कम होगा। अभी संसारियों के हाथ तुम्हें लगे नहीं। संसारी लोग बड़े बेवफ़ा और खुदगर्ज़ होते हैं। कोई भी परमार्थी जीव प्रेम को निभाते हैं। तुमको मना नहीं करते। बेशक प्रेम भाव रखो लेकिन कुछ मर्यादा ज़रूर होनी चाहिए। सबसे ज़रा किनारे रहना बेहतर रहता है। जो कुछ किसी समय कहा जाता है तुम्हारी बेहतरी के वास्ते कहा जाता है।'' इस तरह प्रेम से समझा कर सारा गुस्सा भक्त जी का ठंडा कर दिया।

भक्त जी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! गुस्सा सेवक क्या कर सकता है? वैसे ही नासमझी से मुंह से अयोग्य बात कह दी है, उसे माफ़ करें। आप तो हर समय दास की बेहतरी ही चाहते हैं, ऐसा विश्वास है। किसी समय न मालूम कहां से मूर्खताई आगे बोलने की आ जाती है।''

श्री महाराज जी फ़रमाने लगे:- ''प्रेमी! तुम्हारा कहना भी ठीक है। मगर इन्होंने सबके वास्ते एक जैसी नीति ही सोचनी है। बाकी जिस प्रेमी के मुतालिक तुमने कहा है ईश्वर ही उसे सत सोझी बख़्शें। (नोट: यह एक ख़ास प्रेमी है जिसका यहां जिक्र करना ठीक नहीं है। उसके मुतालिक भी आपने कदम उठाया।) किसी के अवगुण देखने वाली बुद्धि मत बनाओ। वरना दूसरों के अवगुण विचार करते-करते अपने अन्दर भी वैसे अवगुण प्रगट हो जायेंगे। इशारे से उसको कई दफ़ा समझाया गया है। आप ही किसी समय पश्चाताप करेगा। जिसके अन्दर सत् विचारों की धारा जारी हो चुकी है और सत् का मुतलाशी है, किसी के दोष के कारण किसी विकार ने अगर ग़लबा पा लिया है तो भी जब विकार का समय खत्म होगा, शर्मसारी में आकर सत् विचार द्वारा अपनी सफ़ाई आप करेगा। इधर से सिर्फ़ इशारा करना ही काफी है। इन्होंने अपना फ़र्ज़ अदा कर दिया है। अब अगर ग़लती करेगा तो अपने किए हुए कर्म का आप जिम्मेदार होगा। अगर इधर से चेतावनी न दी जावे तब उसके कर्म का इनको भी एवज़ाना देना पड़ेगा। तुम्हारी बुद्धि में गंदगी कहां से आ गई है, दूसरों के खोटे मलीन कर्मों के विचार करने लगे हो? दूसरों के मलीन कर्मों के विचार करने से यह मन आज़ादी पकड़ लेता है और आप भी उन कर्मों को करने लग जाता है। भूल कर भी किसी के ऐब को देखकर वर्णन न करो। दूसरों के ऐबों को देखकर बार-बार इधर-इधर कहने वाली बुद्धि को काग बुद्धि कहते हैं यानि विष्ठा वाली बुद्धि। वैसे निन्दा करने वाला प्राणी दूसरों के पाप बाँट लेता

है, उसे खुली छुट्टी देनी चाहिए। अगर कोई अपने बारे में किसी को अनाप-शनाप कह रहा हो तो उसे मूर्ख आदमी समझो। वह जिज्ञासु प्रेमी कहलाने का हकदार नहीं। परम मित्र, सम्बन्धी, भाई असल में वह ही है जो दूसरों की ग़लती को देखते हुए भी फिर उनके साथ बड़े प्रेम से सलूक रखता है और तरीके से किसी समय उसे विचार से समझाता है, उसे बुरा भी महसूस न हो और वह अपने ग़लत स्वभाव को छोड़ देवे। गुरु शिष्य का रिश्ता और किस्म का है। विचार से मारे, प्यार से, भय देकर जिस तरह हो सके गुरु शिष्य का उद्धार करे। जैसे कुम्हार अन्दर से घड़े को प्यार का हाथ रखता है, बाहर से थापी द्वारा दुरुस्त करते-करते सुन्दर बना देता है। हमेशा तेरे साथ इन्होंने थोड़े रहना है। बातों को अच्छी तरह समझा करो।'' भक्त जी ने हाथ जोड़ कर माफ़ी मांगी।

रात के सत्संग के बाद एक प्रेमी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! जीव मरने से बड़ा डरता है। वह चाहता है कि हमेशा जीता रहूं, दु:ख न आए। सुख के वास्ते ही नित यत्न करता रहता है।''

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:-

ज्ञान समान कोई धन नहीं, समता समान नहीं सुख।
जीवत सम आशा नहीं, लोभ समान नहीं दु:ख॥

कोई भी जीव मानुष, पशु-पंछी, कीड़े-मकोड़े जितने भी शरीरधारी हैं सब के सब जिन्दा रहना चाहते हैं। कोई भी शरीर छोड़ने के वास्ते तैयार नहीं। किसी से भी विचार किया जाए तो पता लगेगा कि जीते जी कौन मरना चाहता है? कोई आत्मज्ञानी पुरुष ही जिसने शरीर को तुच्छ समझ रखा है वो जाने के लिए तैयार होगा। वरना अपनी मर्ज़ी से कोई नहीं जाना चाहता। मगर काल चक्कर के आगे किसी की चाल कारगर नहीं होती। अगर शरीर ख़त्म न हो तो भी गन्दगी पड़ जाए। प्रभु आज्ञा से जो शारीरिक तबदीली का नियम बना हुआ है उससे मर्यादा कायम रहती है। जब वृद्ध अवस्था आती है तो बाज़ हाथ जोड़ते हैं, ''हे प्रभु जान छुड़ा।'' असल में जीव पुराना शरीर चाहता भी नहीं। एक हिरस (तृष्णा) ही उसको मजबूर करती रहती है। शरीर के बहुत देर रहने में क्या सुख है? हां, वह शरीरधारी जीव सुखी रह सकता है जिसके अन्तर-विखे कुछ रोशनी हो चुकी है। उस मस्ती में चाहे हज़ारों वर्ष गुज़र जाएं गुज़ारकर सुखी रह सकता है। इन्द्रियों की लालसा में पड़ा हुआ जीव शारीरिक अवस्था कमज़ोर हो जाने पर हर तरफ़ से लाचार हो जाता है। मजबूरी से मौत को आवाज़ें लगाता है। अति लोभी, मोहवादी जीवों को चोला छोड़ना अच्छा नहीं लगता। तहसील कहूटा ज़िला रावलपिंडी में एक साहूकार था। पुत्र-पुत्रियों वाला था और पौंडों के सन्दूक भरे पड़े थे। पुत्र-पोतों को हाथ नहीं लगाने देता था। जब उसके मरने का वक्त आया उसकी जान न निकले। पुत्र कुछ दान-पुण्य करवाने के लिए चावल वग़ैरा ले आए। आकर कहने लगे- ''लाला जी, कुछ इसमें नकद रखकर हाथ लगाओ।'' एकदम उठकर लाला जी कहने लगे:- ''मैं मरने वाला थोड़ा हूं जो दान कर दूँ, तुम तो घर को उजाड़ने में लगे हो। मेरे सामने ही इसे ले जाओ। चीज़ों को अन्दर रखो। मैंने जिस तरीके से कमाया मुझे पता है, तुमको क्या कदर है''?

कहते–कहते लाला जी सरहाने पर गिर पड़े। स्वांस निकल गए। पुत्रों ने सरहाने से चाबियां निकाल कर उसी घड़ी पहले अन्दर पड़ी दौलत बांटकर, फिर लाला के मरने की ख़बर शहर में दी। एक और प्रेमी ज़िक्र करते हैं, उस समय उसके पास कम से कम लाख रुपये से ऊपर जमा होंगे। मगर किस्मत में ताज़ी रोटी दो वक्त खानी नहीं लिखी थी। सुबह पकाते रात के वास्ते भी रख छोड़ते ताकि दोबारा न पकानी पड़े। शाम को आग न जलानी पड़े। शाम को बाज़ार से सब्जी वग़ैरा जो चीज पकाने के वास्ते खरीद कर लाते, वह सस्ती लाते। चाहे दूसरी सुबह तक वह बिलकुल ही गल–सड़ जाए। किसी को देने के लिए दिल बिलकुल नहीं करता था। भांजे, भतीजे किसी तरीके से सिर मूंड कर ले जाते थे। अपना लड़का–लड़की उनका कोई नहीं था। हर समय अन्दर से जलते रहते थे। न खाने का सुख न पहनने का। लोक–लाज के वास्ते कुछ मजबूरी करना पड़ जाए अलग बात थी। भय की वज़ह से कुछ पुण्य–दान करके फ़िर पछताते रहते थे।

सब जीव सुख चाहते हैं। कोई जीव दु:खी नहीं रहना चाहता। कौन संसार में ऐसा जीव है जिसने हमेशा सुख पाया हो, दु:ख न देखा हो। उसके इख्तियार (वश) में कुछ नहीं। कर्म की इच्छाओं को लेकर नतीजे में जीव फंसा हुआ है। राजा–राना, अमीर–गरीब सब कर्म के नतीजे में फंसकर जन्म–जन्मांतर तक भटकते रहते हैं। जो प्रभु के परायण हो जाते हैं उनकी सुख–दु:ख, लाभ–हानि में समान बुद्धि हो जाती है। वह सदा सुखी रह सकते हैं, चाहे शरीर रहे या न रहे। ऐसी बुद्धि किसी विरले जीव को सत्संग द्वारा मिला करती है। संसार में जीने जैसी आशा से बड़ी आशा ही कोई नहीं। विष्ठे के कीड़े को गंदगी से अलग करके रखो वह भी तड़पने लगेगा। ईश्वर कृपा से ज्ञान मिले तब सन्तोष रूपी धन द्वारा तृप्त हो सकता है। संसार की कोई चीज़ इस मन को तृप्त करने वाली नहीं। प्रभु, लोभ–मोह के चक्कर में किसी को न फंसाएं। वैतरणी नदी से कोई विरला ही पार होता है।

8. सत् साधन पर विचार

दूसरे दिन दूध वग़ैरा पिलाकर और खाने से फ़ारिग होकर भक्त बनारसी दास भागवत पढ़ने लगे। थोड़ी देर बाद श्री महाराज जी, जो लेटे हुए थे, उठकर बैठ गए और आंखें बंद कर लीं। कुछ देर बाद आंख खुली और पूछा:– "प्रेमी! क्या पढ़ रहा है?" भक्त जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! भगवान कपिल देव जी अपनी माता को उपदेश दे रहे हैं, किस तरह से चित्त की शुद्धि हो सकती है? आपने तो यह बातें थोड़े शब्दों में ही भर दी हैं।" श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– "प्रेमी! सुनाओ कपिल देव क्या कह रहे हैं"? अर्ज़ की:– उनकी माता देवहुती प्रार्थना कर रही है कि किस तरह इस दु:ख भरे संसार से छूट सकते हैं? भगवान कपिल देव जी ने फ़रमाया:– "अब मैं तुम्हें अष्टांग योग का उपदेश करता हूँ जिससे चित्त शुद्ध होकर सत्मार्ग पर चलने के लायक हो सकता है। यथा शक्ति महापुरुषों के कथन अनुसार कर्तव्य कर्मों का पालन करना, शास्त्र के

खिलाफ़ कर्मों का त्याग कर देना, प्रारब्ध के मुताबिक जो कुछ मिल जाए उस पर सन्तोष करना और खुश रहना, आत्म-ज्ञानी पुरुषों की सेवा तन, मन, धन, द्वारा करते रहना, विषय वासनाओं को बढ़ाने वाले कर्मों से पूरी तरह परहेज़ करना। संसारी बन्धन में डालने वाले कर्मों से बचने के लिए सत् धर्म में दृढ़ होने वाले कर्मों से प्रीत करनी, पवित्र और थोड़ा भोजन समय अनुसार ग्रहण करना, सदा एकांत ''बेख़ौफ़'' जगह रहने की कोशिश करना, मन, वाणी, शरीर द्वारा किसी जीव को कष्ट न पहुंचाना यानि न सताना, सत्य बोलना, चोरी न करना, ज़रूरत से ज़्यादा चीज़ों का जमा यानि संग्रह न करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना, ध्यान, तप करना या धर्म धारणा को अपनाने में कष्ट सहने के लिए भी तैयार रहना, अन्तर-बाहर से पवित्र रहना, शास्त्रों का स्वाध्याय करते रहना, प्रभु की याद करनी, मन को काबू में रखना, आत्म-चिन्तन करना, उत्तम आसनों का यानि पद्म आसन, सिद्ध आसन, सहज आसन वग़ैरा का अभ्यास करके निश्चल होकर बैठना। आहिस्ता-आहिस्ता प्राणायाम के ज़रिये स्वासों को जीतना, इन्द्रियों को पवित्र रखना, मन वश करना और विषयों से हटाकर अपने हृदय में इसे ले जाना। अन्तरमुख होना, मूलाधार, नाभि, हृदय, कंठ, मस्तक, कपाल वग़ैरा किसी मरकज़ पर मन समेत प्राणों को कायम करना, हमेशा भगवान संबंधी चरित्रों का स्वाध्याय चिन्तन करना और चित्त को एकाग्र करना, आत्म-साक्षात्कार करना। इनके अलावा व्रत, सेवा, दान पुण्य आदि साधनों द्वारा बड़ी सावधानी से प्राणों को जीतकर निर्मल बुद्धि के ज़रिये सत्मार्ग पर चलकर एकाग्रता को प्राप्त करें। प्राणों के अभ्यास के वास्ते पवित्र भूमि पर कुशा, मृग चर्म वग़ैरा का आसन बिछाकर शरीर को सीधा अडोल रखते हुए आराम से बैठ कर अभ्यास में मशगूल हो जावें। शुरू में पूरक, कुम्भक, रेचक करके प्राणों के मार्ग को शोधन करें। इस तरह सत् धारणा, सत् नियम अनुसार करने से चित्त शांत और अडोल हो सकता है। ऐसा अभ्यास करते-करते चित्त शुद्ध एकाग्र हो जावे तब नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि जमा कर इस तरह प्रभु सिमरण करता रहे।

जब इतना पढ़ा जा चुका तब श्री महाराज जी फ़रमाने लगेः– ''प्रेमी! क्या पढ़ा?'' भक्त जी ने अर्ज़ कीः– ''महाराज जी! किसी बात की कमी नहीं रखी गई है। हम लोग शास्त्रों को अच्छी तरह पढ़ते ही नहीं। सिर्फ घास काटने वाली बात करते हैं, पाठ कर लिया।''

श्री महाराज जी फ़रमाने लगेः– ''प्रेमी! जिसने कुछ अपने मन की सफाई, एकाग्रता प्राप्त करनी है उसे हर युग के अन्दर ऐसे ही सत् साधनों पर ज़ोर देकर साधन करना पड़ेगा तब जाकर जन्म-मरण के चक्कर से छूटकर ठिकाने पहुंच सकेगा। सत् की धारणा ही परम पद की तरफ ले जाती है। सत्कर्म कोई एक कर्म नहीं हैं। उठना, बैठना, देखना, सुनना, चखना, जब सब ही पवित्र रूप से होंगे और खोटे, अशुभ कर्मों को छोड़ने की कोशिश करेगा तभी शांति आनन्द प्राप्त होगा। सत्, असत् कर्मों का भली प्रकार से कपिल देव जी ने निर्णय कर दिया है।''

''सत् पुरुषार्थ में ही परम लाभ है। झूठा पुरुषार्थ हानि दिया करता है। सत् की स्थापना के वास्ते सत्पुरुष हर युग में संसार में आए और पाखंडवाद का खंडन करते रहे। बड़े-बड़े दुःख,

मुसीबतें, फ़ाके उठाकर सुधार की कोशिश करते रहे, मगर मायावादी अपने रंग-ढंग में ही चलते रहते हैं। कोई विरला ही तलवार की धार पर चलकर पार होता है। हज़ारों ही ऋषि, मुनि, अवतार हो चुके हैं। लाखों वर्ष गुज़र जाने पर भी आज-तक उनका नाम लेकर ज्ञान-ध्यान द्वारा गुरमुख जीव अपने आपका सुधार कर रहे हैं। अपना भाव ठीक रखना चाहिये। मोटी बात यह है सबसे प्रेम भाव रखना, किसी से द्वेष न करना, जहां तक हो सके तन, मन, से दुखियों की सेवा करनी, अच्छे महापुरुषों को देखकर खुश होना और सेवा करना, पापी जीवों को देखकर नफ़रत, विरोध न करना बल्कि उदास होना/उनके लिए चित्त से प्रार्थना करनी– ''ईश्वर इनको सुमति देवें''। निन्दा किसी की नहीं करनी, सत्संग सत् सिमरण में लगे रहना। यह ही सत् धारणा किसी समय पर परमगति की तरफ़ ले जायेगी। इसी तरह विचार करते रहा करो। एकांत का बड़ा लाभ यह ही है कि सत् सुनना और मनन-निध्यासन करना। जब-तक शुभ गुणों की धारणा में न लगोगे तब-तक कोई लाभ नहीं। सत्संग यह ही है, बार-बार सत् का निर्णय करना। सत्कर्म कोई एक ही कर्म नहीं होता। जितना दिन-रात में मन इन्द्रियों द्वारा व्यवहार करना है मर्यादा पूर्वक हो, जीवन निर्वाह मात्र। बाकी समां आत्म उन्नति में देना ही सत्-तत् धारणा है, यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये। 'सत करतार, झूठ संसार'। सब ग्रन्थ, वेद, ऋषि-मुनि इस बात की दृढ़ता करवा देते हैं। जितनी इस सत् भावना की दृढ़ता हो सके उतनी ही थोड़ी है। फिर फ़रमाया:- ''आज इस बड़ी नाड़ी में कुछ भारीपन महसूस हो रहा है। पता नहीं गिरधारी लाल ने उस डाक्टर से समा मुकर्रर किया है या नहीं।'' इसके बाद एक प्रेमी ने आपसे पूछा:

9. शारीरिक स्वास्थ्य

प्रश्न– महाराज जी, आलस निन्द्रा वग़ैरा भी अजीब विकार शरीर में मौज़ूद हैं। रोटी खाते ही शरीर में आलस्य आने लगता है।

उत्तर– प्रेमी, जब-तक शरीर है तब-तक यह दोष मौज़ूद रहते हैं। ज्यों-ज्यों शारीरिक अवस्था बदलती है त्यूं-त्यूं यह दोष भी अनेक तरह से जीव को हैरान-परेशान करते रहते हैं। विचारवान ही उनकी निगरानी करता हुआ बचकर चल सकता है। जब-तक सत्-तत्त बोध नहीं होता तब-तक चैन कहाँ। संसार की जितनी रचना व बनावट तुम देखते रहे हो मन की अनेक प्रकार की तरंगों ने आकर खड़े कर रखें हैं। इसे देख-देख कर मोहित हो रहा है। बार-बार सत्, असत् के निर्णय में दृढ़ होने से ही किसी समय बुद्धि केवल सत् में ही दृढ़ हो जाती है और नि:कर्म हो जाती है। फिर इसी चित्त के अन्दर कोई दोष प्रगट नहीं होता। नाम-मात्र शरीर की रक्षा के लिए तेल देने की ज़रूरत रह जाती है जो इसके वास्ते तुच्छ की भांति है। भूख, प्यास, निन्द्रा, आलस को जीतने वाला सर्वाजीत पुरुष कहलाता है। दु:ख-सुख जो इस पर आते हैं ईश्वर आज्ञा जानकर वह समान भाव से इन्हें

व्यतीत करता है। प्रारब्ध कर्म के अन्त तक यह हर जीव को भोगने पड़ते हैं। तुम ही विचार करो, इन्होंने इस शारीरिक यात्रा में कौन से ऐसे कर्म किये हैं जिनकी वज़ह से हैरानगी, परेशानी सबको उठानी पड़ी? आइंदा का लेखा चाहे साफ़ हो चुका है मगर लेना-देना चुकाए वग़ैर कैसे ख़ुलासी हो? इसलिए तुम भी सिमरण में लगे रहा करो।

प्रेमी दीनानाथ जी मंहगी के आने पर श्री महाराज जी की नाड़ी में भारीपन का ज़िक्र किया गया और पूछा गया कि डाक्टर शंगलू साहेब कब आ सकते हैं? मंहगी जी ने अर्ज़ की:- कल जाकर फ़ोन पर प्रेमी गिरधारी लाल से पता कर लिया जावेगा। वैसे भी कल इतवार है, घर पर मिल जावेगा। फिर श्री महाराज जी ने चाय के नुकसान का ज़िक्र शुरू कर दिया और फरमाया:- ''इस नामुराद ने ऐसा शरीर को खुश्क कर दिया है, किस कदर बादाम-रोग़न दूध में लिया जा रहा है। अंतड़ियों की खुश्की दूर ही नहीं होती। पहले इनकी ख़ुराक छाछ की कढ़ी ज़्यादातर थी। उस समय यह शरीर लाठी की तरह था। जब से इस चाय ने आकर डेरा लगाया है तब से कोई न कोई विकार लगा ही रहता है। करीबन पूरे बारह वर्ष हो गए हैं। अब दो माह से दूध हज़म हो रहा है। बादाम रोगन की मेहरबानी है।'' श्री मंहगी जी कहने लगे:- ''महाराज जी! दिल्ली से अब बहुत फ़र्क नज़र आ रहा है।'' इस पर श्री महाराज जी ने फ़रमाया:- दिल्ली में तो इस तकलीफ़ ने कमाल की परेशानी दी थी। ताजेवाले न आते तो किसने बादाम-रोग़न चिकनी चीज़ लेने देनी थी। ज़रूरत सब आप ही प्रेरणा करती जाती है, और चार साल सेवा लेनी होगी।'' इसके बाद प्रेमी मंहगी जी शहर चले गए।

मंहगी जी के चले जाने के बाद प्रेमी माया राम आ गया। प्रणाम करके चरणों में बैठ गया। थोड़ी देर बाद श्री महाराज जी ने पूछा:- ''प्रेमी! क्या सोच रहे हो?'' प्रेमी माया राम ने कहा- कि मेरे पर भी कृपा करें। चरणों में जगह देवें। श्री महाराज जी ने फ़रमाया:- ''घर वालों को तिलांजली दे आओ फिर भिक्षु बनना। ब्राह्मण के बच्चे हो, तुम्हारा कर्तव्य है संगत की सेवा करना और ईश्वर की याद करना। तुम मांस वग़ैरा खाते हो?'' माया राम ने अर्ज़ की:- ''बहुत कम खाया है। अन्दर से अच्छा नहीं लगता। किसी समय संगत की वजह से खाना पड़ जाता है। आज से बिलकुल नहीं खाऊँगा।''

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:- ''सेवादार बनना बहुत मुश्किल है। इधर कोई तनख़्वाह वग़ैरा नहीं मिलेगी। जो गुरु दरबार से साग-भाजी मिले उसे खाकर समां गुज़ारना होगा। पहले सोच लो। पहले संत जब दीक्षा देते थे कान काट कर उसकी परीक्षा की जाती थी, फिर बारह वर्ष तक सेवा करवाकर दीक्षा दी जाती थी। भिक्षु बनना कोई आसान नहीं। भिक्षु को चाहिये घर से कम से कम पांच मील दूर जाकर निवास करे। घरवालों को बिलकुल याद न करे। जो कुछ अपने पास सरमाया है सब गुरु अर्पण कर दे या ग़रीबों में तक्सीम कर दे। निर्दोष होकर उस धर्म मार्ग में कदम रखे। आजकल की तरह नहीं कि जो सरमाया हुआ उसे सब घर वालों के नाम करके आप दूसरों की रोटियों पर पड़ जाए। अगर घर वालों का कोई ख़्याल हो तो पहले उनकी सेवा कर लो। तुम से यह

सरमाया नहीं मांगते, न ही तुम्हारे पास कुछ होगा। अगर फिर भी घरवालों का जाकर चाकर बनना है, तो पहले सोच लो, इनको तेरी ज़रूरत नहीं। तुझे अपने कल्याण की ज़रूरत है, विचार कर लो। तुमको किसी भेष में भी नहीं डालना। सेवा और सिमरण करके समां व्यतीत करो। अच्छी तरह विचार करके फिर पता देना, जल्दी की कोई बात नहीं। अभी काफ़ी समय इधर ही हैं।''

25 जून 1950 इतवार के रोज़ शाम को चार बजे सत्संग में जो अमृत वर्षा फरमाई वह निम्नलिखित है।

10. सत् उपदेश अमृत

शरीर रूपी संसार में जीव ने जब से प्रवेश किया है तब से सुख का उसको ज्ञान है। उसे खाने-पीने की होश होती है। ज्यों-ज्यों शरीर बढ़ता जाता है त्यों-त्यों उसको हर तरह के सुख-दु:ख का पता लगता जाता है। बच्चे को ज़रा प्यार से बुलाया गया तो वह खुशी से हँसने लग जाता है। ज़रा गुस्से से कुछ कहो तो रोने लगेगा। भूख लगने पर रोना शुरू कर देता है। दु:ख हो तो चिल्लाता है। बाहर-मुखी वृत्ति दिन-ब-दिन ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है, माता-पिता, भाई और सब प्यार करने वालों को अच्छी तरह समझने लगता है। अनेक पदार्थों को देखती हुई बुद्धि किसी एक चीज़ में नहीं ठहरती। जीव जिस चीज़ को ग्रहण कर लेता है चंद दिनों के बाद उसका लगाव ख़त्म हो जाता है, फिर दूसरी चीज़ की तपश (तलाश) में लग जाता है। इस तरह किसी को ग्रहण करता और किसी को छोड़ता हुआ संसार में भटकता रहता है और खुशी और ग़मी को प्राप्त होता रहता है। किसी चीज़ द्वारा तृप्ति प्राप्त नहीं होती। हर एक जीव का यही हाल है। बग़ैर तत्त्व ज्ञान के यह बुद्धि जुग-जुग तक भरमती रहती है, सार को नहीं समझती। अमीर-ग़रीब, राजे-राने सब ही भटक रहे हैं। पशु-पक्षी और योनियों का भी यही हाल है। मानुष जन्म की महानता यही है कि आत्म तत्त्व को जानने का यत्न-प्रयत्न कर सकता है। जो मनुष्य आत्म तत्त्व के भेद को जान लेता है वह किसी न किसी समय मोह माया के जाल से ख़ुलासी प्राप्त कर लेता है। बार-बार ऐसी सत् सोच और ऐसा सत् यत्न धारण करना चाहिये। ऐसा विचार करना चाहिये कि यह जीव आया कहां से है और जाना कहां है? इसने आख़िकार इस हरे-भरे संसार को छोड़ना है। पैदा होने पर शरीर छोड़ने का दु:ख इसे बार-बार देखना पड़ता है और भी कई तरह के क्लेश इसे उठाने पड़ते हैं। मगर यह जीव बावज़ूद दु:ख पाने के संसार के मोह में अधिक से अधिक फंसता जाता है। ''बाप न मारी कूकड़ी पुत्र तीर अंदाज़।'' एक से एक बढ़कर जीव संसार में आकर अकड़ रहा है। अजीब प्रभु की माया का खेल हो रहा है। जब-तक यह जीव इस झूठे संसार के मोह को नहीं छोड़ता तब-तक आत्म सुख को प्राप्त नहीं हो सकता। मगर आत्म सुख को कोई भाग्यशाली जीव ही प्राप्त हो सकता है। इसके लिए पहले सही मानुष बनना है। इस मकसद के लिए आहार-व्यवहार की पवित्रता सबसे पहले ज़रूरी है। इस समय जो दौड़ लगी हुई है सबकी बुद्धि भ्रष्ट हो रही है। यह

भूल गए हैं कि शरीर की ममता जन्म-जन्मांतर तक नहीं छोड़ती। किसी समय बड़े भाग्य से सत्पुरुषों की संगत द्वारा भाग (भाग्य) लग जावे और तन, मन, लगाकर सत् यत्न में रहने लग जावे तो किसी न किसी समय जीव मंज़िले मकसूद तक पहुंच सकता है।

'दिल दा महरम कोई न मिलया, जो मिलया सो गर्ज़ी'। कलेजा निकाल कर रख दिया जावे तब भी प्रतीति नहीं आती। प्रेमी, जीव को हर समय सत् विश्वास, सत् श्रद्धा की ज़रूरत है। श्रद्धावान को ज्ञान-विचार सफलता देते हैं।

''ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होए''

जीव को तृष्णा रूपी रोग चिरकाल से लगा हुआ है। इस रोग की दवाई प्रभु का सतनाम ही है। सतनाम ही मन, बुद्धि को नेहचल करने वाला है। ईश्वर सबको अनुराग देवें ताकि सतनाम परायण जीवन बिताकर संसार में आना सफल कर सकें। जब सत्संग हो चुका प्रेमी गिरधारी लाल जी ने बतलाया कि डाक्टर साहेब आयेंगे।

11. योग वशिष्ठ पर विचार

भक्त बनारसी दास जी योग वशिष्ठ छटा प्रकरण इक्कीसवां सर्ग से प्राण-अपान संवाद पढ़ रहे थे। भक्त जी ने इसे पढ़कर सुनाया। जब पढ़ चुके तो आपने पूछाः- ''प्रेमी! क्या समझा है?''

भक्त जी ने अर्ज़ कीः- महाराज जी, सामान्य भाव में जो शुभ गुण प्रकट हुए हैं वह तो मोटे-मोटे समझ आ गए हैं। मगर संतों की बोली में जो भेद वर्णन हुआ है वह बिना अन्तर-विखे स्थिति के कैसे बयान किया जा सकता है?

श्री महाराज जी फ़रमाने लगेः- ''प्रेमी! इस गुह्य भेद को समझते-समझते फ़कीरों के खून खुश्क हो जाते हैं। केवल हड्डियों का ढांचा रह जाता है, तब जाकर तत्त्व बोध हो सकता है। वशिष्ठ ने वह ऊंची स्थिति बयान की है जिसको राम, कृष्ण, बुद्ध, नानक, कबीर जानने वाले हुए हैं। प्रेमी, मामूली बात नहीं। अभी तक किसी पंडित, शास्त्री, ज्ञानी ने इसका अर्थ उलट-सुलट नहीं किया। ज्यों का त्यों ही श्लोकों का अर्थ कर दिया है। यह पढ़े-लिखे आचार्य लोग ऐसा उच्च भाव बयान नहीं कर सकते। वाकई यह वशिष्ठ जी का ही राम को दिया हुआ उपदेश है। पंडित लोग क्यों नहीं इसको खोलकर मंदिरों में लोगों को समझाते? असली तालीम, उपदेश यह ही है। कोई भेद छुपाकर नहीं रखा। बिलकुल खोलकर वर्णन कर दिया है। सिर्फ़ सामने बैठकर समझने वाली बात है, फिर भी छुपाकर रख ली है। ऐसे प्रसंग चित्त के अन्दर उत्साह पैदा करने वाले होते हैं। योग विद्या की कोई थाह नहीं। जिस तरह सागर यानि समुन्द्र की तह का पता नहीं लगता उसी तरह यह आत्म-बोध की स्थिति है। कौन-जाने किस स्थिति के ऋषि मालिक थे। हज़ारों वर्ष तक ध्यान-मग्न होकर घास की झोपड़ियों में गुज़ार देते थे। यह ही प्राण विद्या लाखों वर्ष पहले की चली आ रही है। आइंदा भी इस भेद को जानने वाले ही मोक्ष पावेंगे। नेहकर्म अवस्था, बग़ैर इस

साधन के कभी प्राप्त नहीं हो सकती। राम कृष्ण के इतिहास तो सुना देते हैं मगर इस कथा को तो कभी किसी ने नहीं सुनाया। वैसे इस योग वशिष्ठ को पढ़कर बहुत ज़बानी प्रेमवादी बन रहे हैं। इस मरने वाले भेद को कोई नहीं समझता। साधन का तरीका पता हो, ऐसे ग्रन्थों का स्वाध्याय किया जाए तब ही यत्न–प्रयत्न में सहायता हुआ करती है। जब समय मिले पढ़ते रहा करो। काक–भुसुंडी को भी लम्बी आयु करने वाला यह ही योग है। योग मार्ग में कई साधन देर तक शारीरिक कायमी के वास्ते भी थे। भोगों के वास्ते शारीरिक आयु नहीं बढ़ाया करते थे। बल्कि चिरकाल तक आत्म आनन्द में लीन रहने के वास्ते शरीर रखने का ख़्याल हुआ करता था। भाग्य से आत्म अनुभव अवस्था हो भी जाये, स्थिति और फिर लीनताई के वास्ते योगी को बहुत यत्न करना पड़ता था। लीनताई के बाद जब मर्ज़ी हो शरीर को छोड़ दे या छूट जाए, निर्द्वन्द्व रूप हो चुके होते हैं। राम कृष्ण कोई मामूली हस्तियां नहीं थीं। जिन्होंने दोनों तरफ़ समय दिया उनकी नकल करके बहुत लोग अपने आपको ग़र्क कर देते हैं। योग–भोग दोनों चलते रहें ऐसे कई संसारी चाहते हैं। तीव्र त्याग को धारण करने से ही योग में कामयाबी हुआ करती है। संसारी प्रेमियों की तरफ़ देख कर किसी समय हँसी आती है कि कब चलेंगे और कब उनकी मंज़िल पूरी होगी? इधर जो आकर हाथ जोड़ता है उसे कुछ समझाना पड़ता है। किसी से इन्होंने भेद भाव नहीं रखा हुआ है। किस कदर मेहनत करके ऐसी अवस्था आई, तुम क्या जानो? पकी–पकाई पर आ बैठे हो। जब मेहनत करोगे तब कुछ समझोगे। देखो वशिष्ठ जी ने राम जी को बार–बार कई तरह से समझाने की कोशिश की है। उनका वनों की तरफ़ जाने का और क्या मतलब था? तीर्थ यात्रा के बाद झट ही गुरु ने उपदेश दे दिया, फिर जल्दी ऐसा कारण बन गया, बहाना बनने पर राज गृह छोड़ दिया और चल दिए। चित्रकूट के जंगलों में काफ़ी देर तक रहकर ध्यान को पक्का करते रहे हैं। उनके कठिन तप, त्याग को किसने देखा है? अवतार कोई आसानी से नहीं कहलाया। मिट्टी के साथ मिट्टी होना पड़ता है।''

प्रेमी मंहगी जी और गिरधारी लाल जी डाक्टर शंगलू को ले आए। उन्होंने प्रणाम किया और डाक्टर जी ने भी नमस्कार किया। कुछ देर बाद डाक्टर साहेब ने हालात पूछे। श्री महाराज जी ने शुरू से लेकर आख़िर तक बयान किए। फिर डाक्टर साहब ने नब्ज देखी, टूटियां लगाईं। पेट को दबाकर देखा। सब देखकर कहा:– ''महाराज जी! आपका शरीर आम इंसानों जैसा शरीर नहीं, बहुत नाज़ुक है। बहुत देर तक चाय के इस्तेमाल का सब कसूर है। आंतड़ियों में हर दर्ज़े की ख़ुश्की आ चुकी है। मल ख़ारिज करने की शक्ति बहुत कम हो गई है। मुसव्वर के इस्तेमाल ने अंदर और भी ख़ुश्की कर दी। जुलाब–आवर चीज़ कभी इस्तेमाल नहीं करनी चाहिये। गिज़ा ही ऐसी लेनी चाहिए जिससे पाखाना आ जाए। तब इस शरीर का निज़ाम ठीक रह सकता है। आलीव–आयल भी आपके लिए मुफ़ीद है। बादाम रोग़न सुबह सैर पर जाने से पहले एक दो चम्मच आप ले लिया करें। बाहर से आकर फिर दूध ले लिया करें। दो वक्त दूध का प्रोग्राम फ़िलहाल ठीक है। जो नुक्सान बाकी है, आहिस्ता–आहिस्ता ठीक हो जावेगा। वैसे हम तो ऐसे लोगों का इलाज करते चले जा रहे हैं जो सब भक्ष–अभक्ष सेवन करने वाले हैं। आप जैसे तपस्वी शरीर के कभी दर्शन भी नहीं

हुए। गांधी जी का बहुत सूक्ष्म शरीर हो चुका था। मगर उन्होंने दूध, फलों के रस और ख़जूर वग़ैरा का इस्तेमाल जारी रखा हुआ था। जब कभी ज़्यादा व्रतों को धारण कर लेते थे, बहुत सूक्ष्म अवस्था हो जाती थी। महापुरुष तो संसारी जीवों के वास्ते हर समय लगे रहते हैं। आप इस ख़ुराक में कमी न करें, जब-तक अच्छी तरह आंतड़ियाँ ताकत नहीं पकड़ लेती हैं। बाहर की सर्दी से बचाव भी ज़रूरी है क्योंकि कमज़ोर शरीर को गर्मी-सर्दी दोनों दबा सकते हैं। आपके वास्ते कोई दवाई भी नहीं बनी हुई है। यह बादाम रोग़न दवा, ग़िजा दोनों का काम देता है, खाली पेट लेना अच्छा रहता है। दूसरा हाथ से बना हुआ हो और ज़्यादा दिनों का न हो जाए, ऐसा बादाम रोग़न बहुत अच्छा रहता है। मशीन से निकले हुए की ताकत कम हो जाती है। मीठे बादाम देख लेने चाहिये। कड़वा बादाम खून को ख़राब करता है। इन दो चीज़ों के अलावा कोई और चीज़ इस्तेमाल न करें। हां, फल में संतरा, माल्टा, चीकू या पपीता बहुत अच्छा रहेगा। सेब, अच्छे ताकतवर मेदे के वास्ते हैं। बहुत दिमाग़ी काम करने वालों की ख़ुराक भी सूक्ष्म हो जाती है। फल, दूध, मक्खन, आलीव-आयल लेते रहते हैं। लगातार एक चीज का सेवन नहीं करना चाहिए। बदल-बदल कर ऐसी चीजों का इस्तेमाल बहुत अच्छा रहता है। चाय तो बहुत नामुराद चीज है। बहुत मांस, घी, मक्खन खाने वाले जो लोग हैं उनके वास्ते बहुत ठीक रहती है। वैसे दूसरे मुल्कों में अब गाय का दूध इस्तेमाल करने पर बहुत ज़ोर दे रहे हैं, भैंस का दूध सेवन नहीं करते। दूध, मक्खन, पनीर सब गाय के दूध का इन मुल्कों में आला से आला मिल जाता है। असल मायनों में वे लोग गाय की सेवा कर रहे हैं। इतनी इंसान की ख़िदमत नहीं होती जितनी गाय की रक्षा करते हैं। असल में स्वर्ग वे ही मुल्क हैं। ज़्यादातर यह देश कृष्ण के ज़माने तक ही इन चीजों से मालामाल रहा है। महाराज जी, आपकी कृपा से वैसा समय फिर आएगा?''

इस तरह मीठी-मीठी बातें करके डाक्टर साहब ने काफ़ी वक्त ले लिया और तसल्ली दी कि आप जल्दी ठीक हो जावेंगे। ''इधर काली गाय का दूध बहुत अच्छा मिल जाता है। अगर सामने निकलवाकर लिया जाए तो। जिस वक्त सेवा की ज़रूरत समझें आप बुला सकते हैं।'' नमस्कार करके जब उठने लगा तब महाराज जी ने दोनों हाथों से गिलासों यानि चेरी का प्रसाद भरकर डाक्टर साहेब को दिया और प्रेमियों को आज्ञा दी कि साथ जाकर इन्हें शहर पहुंचा आवें। डाक्टर साहब व प्रेमी मोटर पर सवार होकर शहर चले गए।

12. काष्ठ-मौन पर विचार

एक दिन करीबन नौ बजे का समय था। एक प्रेमी एक सज्जन को पीठ पर उठाये हुए कोठी में पधारे और वहां आ गए जहां श्री महाराज जी लेटे हुए थे। पास आकर 'नमो नारायण' कहकर बैठ गए और सज्जन को उतारकर चटाई पर बिठा दिया। इस पर श्री महाराज जी भी उठ बैठे और

पूछा:– ''प्रेमी जी! किधर से आए हो?'' उस प्रेमी ने नमस्कार करके कहा:– महाराज जी ने काष्ठ मौन धारण कर रखा है। सेवक को आपके दर्शनों की चाहना कई दिनों से हो रही थी। सेवक इनकी सेवा में गुप्त गंगा के पास एक प्रेमी के घर ठहरा हुआ है। यह महाराज जी अपने आप कुछ भी ग्रहण नहीं करते, न कुछ कहते हैं। खाने, पीने, पहनने की बात के वास्ते प्रेरणा नहीं करते। खिलाते समय खिला दिया तो मुश्किल से खाते हैं। मुंह ही नहीं खोलते। कपड़ा पहना दिया तो न हां करते हैं न ही इंकार करते हैं। चलते समय किसी जगह ले गए तो उठाकर ले गए। कहते सुनते कुछ नहीं, इसी तरह खामोश बैठे रहते हैं। लिटा दिया तो लेटे रहते हैं।

सत्पुरुष खामोशी से सुनते रहे। बाद में फरमाया:– ''प्रेमी! दूध, चाय सेवन करनी हो तो बताओ।'' प्रेमी कहने लगा:– ''महाराज! अभी तक तो कुछ सेवन नहीं किया।'' भक्त जी फ़ौरन जाकर दूध ले आए और कटोरी भी। प्रेमी ने बहुत कोशिश की दूध पिलाने की, मगर उन्होंने न पिया। फिर चमचे से दूध देने लगे, वह भी नीचे गिरने लगा। यह हालात देखकर भक्त जी को हँसी आ गई। श्री महाराज जी ने इशारा करके ख़बरदार कर दिया और फिर फ़रमाने लगे:– ''प्रेमी! अगर यह कोई बात करते हों तो इनसे कुछ पूछा जाए। तुम इनको इधर किस वास्ते उठा लाए हो? अगर इनका विचार कुछ हरकत वग़ैरा करने का नहीं है तो फ़िज़ूल तुम समय ज़ाया कर रहे हो।''

सन्त मिले कुछ कहिए सुनिए, असन्त मिले मुष्ट हो रहिये।

''जड़ भरत यह बनना चाहते हैं। वह बड़ी दूर की बात है। काष्ठ–मौन ही धारण किया हुआ है तो फिर इधर–उधर ले जाने का क्या मतलब है? न इनको लाभ न दूसरे को। एक जगह इनको दस दिन इसी तरह बैठे रहने दो, मत हिलाओ, जुलाओ, खिलाओ, पिलाओ, फिर आप ही पता लग जावेगा। तुम सब क्रिया इनकी कर देते हो। इनको कुछ कहने वग़ैरा की क्या ज़रूरत है? इस तरह संकल्प रहित नेहकर्म अवस्था भी कभी हासिल हुई है? यह दृढ़ योग केवल प्रभावित करने के वास्ते है। तुम अपना उल्लू सीधा कर रहे हो या इनका कुछ भला कर रहे हो? बोल से साधु, महात्मा की स्थिति पता लगती है। इस पाखंड से क्या निकलता है? साधारण आदमी देखकर आपको पांच दस रुपये दे देंगे। इधर इनको क्यों लाए हो?'' जब श्री महाराज जी ने ऐसा फ़रमाया तब प्रेमी हाथ जोड़कर माफ़ी मांगने लगा और कहा:– महाराज जी! केवल दर्शनों के वास्ते आए हैं। इनका तो मुझे कोई पता नहीं लग रहा। आपका विचार ठीक है। कुछ बोलें तब ही दूसरे के ख़्याल का पता लग सकता है, फिर कुछ आदमी कर भी सकता है।

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''प्रेमी! जब–तक शरीर है तब–तक शरीर के धर्म साथ रहते हैं। कर्म की इच्छा इस तरह न हिलने–जुलने से थोड़ी दूर होती है। निर्वास, अखंड स्वरूप में बुद्धि का लीन होना कोई आसान बात नहीं। काष्ठ–मौन धारण करता है तो किसी कन्द्रा या ग़ार में जाकर पड़ जाए, फिर पता लगे, जब पड़ा–पड़ा पिंजर ख़ुश्क हो जावे। काष्ठ–मौन कहकर थोड़ा रखा जाता है व्यर्थ में खराब न हो। इसे कहो किसी गुरु को पकड़ कर सीधा होकर चले। जाओ, इसे

उठाकर ले जाओ। फ़कीर अभी देखे नहीं। फ़कीरों का जीवन तो पहले ही लकड़ी के तुल अन्तर से होता है, न कि पाखंड धारण करने से बेख़्वाहिश होता है। फिर सुन लो। अपना वक्त ज़ाया न करो। इसे भी जाकर समझाओ, तुम भी ठीक होकर चलो। परमात्मा को धोखा न दो। मेहनत करके समय गुज़ारो। मरना याद रखो।''

प्रेमी नमस्कार करके साथी को पीठ पर उठा कर चल दिया। भक्त जी ने पूछाः- ''महाराज जी! काष्ठ-मौन का क्या मतलब है?'' श्री महाराज जी ने फरमायाः- ''अभी तक तुझे पता नहीं लगा काष्ठ-मौन किसे कहते हैं? जैसे लकड़ी का स्वभाव है, वैसे बन जाओ, ज्ञान इन्द्री और किसी कर्म इन्द्री द्वारा कोई कर्म न हो। असल में चित्त के अन्दर कोई संकल्प या चेष्ठा पैदा न हो, लकड़ी की तरह हो जाना। यह लोग शरीर को साध लेते हैं, अन्दर से मन मौन धारण नहीं करता चाहे ज़ाहरी मौन धारण कर भी लें। जब चेष्टा पैदा होती है फिर किसी को लिखकर समझाना, लेना-देना चल पड़ता है। हाथ के इशारे से समझावेंगे, आंख द्वारा भी, सिर हिलाकर कई तरह से अपना विचार दे देंगे। यह सब संसारी लोगों को पीछे लगाने वाला ढोंग है। अपने आपको समर्पण करना बहुत मुश्किल है। मन के संकल्प से रहित हो जाना सरल नहीं है। संसारियों को पीछे लगाने के कई साधन हैं। साधारण मौन रख कर थोड़ा कहना, सुनना, खाना, पीना, चलना वग़ैरा जिस तरह कम से कम हो सके कर्म करता हुआ मालिक की याद में समय दे। किसी ऐसे कर्म व भेष को धारण न करें जिसमें अपना मन भ्रष्टाचारी हो जाए। ज़्यादा से ज़्यादा एकांत में रहकर सब कर्म इन्द्रियों की चेष्टा से अचेष्ट होने में ही इस जीव का कल्याण है। इस तरह करना जैसा यह कह रहे हैं, अपने मन को धोखा देना है। ऐसे भेष दम्भ ज़्यादा देर तक नहीं चलते। निर्भेख स्वरूप को अनुभव करने के लिए किसी ज़ाहरी भेख की ज़रूरत नहीं है। हर समय निर्मान भाव में विचर कर मानसिक ठंडक हासिल करना ही परम पुरुषार्थ है। भाग्य से जिज्ञासु को संसार में रास्ता व रहबर मिलता है। दुनिया बहुत अंधेरे में फंसी हुई है। बच्चू किसी के फंदे में फंसे नहीं हो। जाओ पेट में कुछ डाल आओ। यात्रा में ऐसे समागम होते रहते हैं। संसारी लोग अपनी जगह बहुत चालाक होते हैं। विचार और होश से विचरा करो। यह यहां क्या लेने के वास्ते आए थे?''

13. सत् शिक्षा

इसके बाद लंगर वग़ैरा से फ़ारिग होकर जब बैठे तो श्री महाराज जी ने फ़रमायाः- ''शब्द पढ़कर सुनाओ।'' भक्त जी ने 'समता सार योग' के शब्द पढ़े जिसका आख़िरी दोहा थाः-

तेरे चरन प्रीती मन रसे, मिट जायें संशे सूल।
''मंगत'' सुरति मगन होये, इक पलक न पावे भूल॥

इस पर श्री महाराज जी फ़रमाने लगेः- ''सुना प्रेमी! क्या समझा?'' भक्त जी ने अर्ज़ कीः- ''आखिरी दोहे में फ़रमाया है, जब सुरति प्रभु प्रेम में मगन यानि लीन होती है, सब शौक, मोह

ख़त्म हो जाते हैं। फिर सुरति एक पलक के वास्ते भी भुलेखे में नहीं पड़ती। क्या इस तरह प्रार्थना करते–करते बुद्धि अंहकार से रहित होकर अपने आपको जान लेती है?''

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''सिवाय बारम्बार प्रार्थना के बुद्धि शुद्ध नहीं होती। जन्म–जन्मांतर से बुद्धि ''मैं'' में फंसी हुई है। मैं खाती हूँ, मैं पीती हूँ वग़ैरा और जो भी कर्म करती है इसकी कर्ता बनी हुई है। ज्यों–ज्यों अंहकार बढ़ता जाता है त्यों–त्यों अंधकार भी साथ बढ़ता जाता है। जिस समय तप, योग से समता बुद्धि प्रगट होती है। यानि नाद स्वरूप परमेश्वर को जान लेती है, जन्म–जन्म के संशय ख़त्म हो जाते हैं। जब मक्खन निकल आवे फिर छाछ में जितना इसे दबाओ वह ऊपर ही आता है, उसमें नहीं मिलता। कितना यत्न–प्रयत्न करने पर मक्खन निकलता है, इसी तरह जिस समय प्राण–अपान की डोरी द्वारा नाम रूपी मथनी से ध्यान लगाकर मथना की जावेगी आहिस्ता–आहिस्ता बाहर–मुखी वृत्ति भूलते–भूलते आख़िर उस नेहकर्म अवस्था में लीन होगी। तब–तक अनेक प्रकार की वासनाएँ सूक्ष्म–स्थूल रूप में बहकाती रहती हैं। जीव भी बेचारा मजबूर है। भाग्य से मानुष जामा मिला है। फिर और उत्तम भाग्य से आत्मदर्शी गुरु मिल जावें, फिर पुरुषार्थ में लग जावे, तब ज़रूर किसी समय मंज़िल पर पहुंच जावेगा। संतों के वचन सत्मार्ग पर चलने वालों को बहुत सहायता देते हैं। जैसे कोई जीव जैसे भी कर्म करना चाहता है जब व्यवहारिक तक किसी गुरु का आधार लेकर शिक्षा न लेगा तब–तक तरक्की नहीं कर सकता। प्रेमी, स्वार्थ हो या परमार्थ जब–तक विरह का बाण नहीं लगता, ठिकाने पर नहीं पहुंचा जा सकता। राजाओं ने राजगृह छोड़कर इस निर्वास आनन्द को पाया। बड़े–बड़े मुनि सत् स्वरूप का बोध करके ही आनन्द को प्राप्त हुए। सब सिद्ध, नाथ, जोगी, जती नाद स्वरुप परमेश्वर को अनुभव करके ही परम पद को प्राप्त हुए हैं। प्रेमी, मंज़िल दूर है, वैराग्य और विरह से नज़दीकी हो सकती है।

भक्त जी ने पूछा:– ''महाराज जी! वैराग्य और विरह कैसे पैदा होता है?'' आपने फ़रमाया:– ''यह कोई जमीन की पैदावार थोड़े है जिसमें बीज डालकर पैदा कर लोगे। संसार की असारता को बार–बार दृढ़ करो। इस न रहने वाले संसार के साथ क्यों ज़्यादा लगाव बनाया हुआ है? पहले खोज करो सत् क्या वस्तु है? जिस्म और जान का निर्णय करो। जिस समय जान को जानने की लगन लग जावेगी अपने आप ही वैराग्य प्रगट होगा। वैराग्य से विरह आप पैदा होती है। इस प्राणी के सब स्वार्थ के भाव ख़त्म होने लगते हैं। यानि चित्त के अन्दर यह दृढ़ विश्वास बनाये रखो कि अपने असल रूप को इस जन्म में ही जानकर छोड़ना है। ऐसी अवस्था प्राप्त करनी है जैसी शिव, सनकादिक, नारद, शारद, राम, कृष्ण, बुद्ध, नानक इत्यादि ने प्राप्त की। अपना इरादा बड़ा मज़बूत रखें, फिर किसी न किसी समय ज़रूर फ़तह पाओगे। फिर असली सत्गुरु की मांग अन्तर विखे होगी। बग़ैर नाम–रूप अनात्म वस्तु को छोड़ने के प्रभु प्रेम पैदा करना कोई आसान नहीं। प्रभु की अश्चर्ज रूपों में फैली हुई माया को देखकर अनुमान से उसकी महिमा में मुस्तग़र्क (लीन) होना है। संसार की सब चीज़ें सबक दे रही हैं। सूरज, चांद, सितारे, ज़मीन, आसमान किस कदर घड़ रखे हैं। कुदरत को बार–बार विचार करने पर ऐन–उल–यकीन (पूर्ण विश्वास) होने लगता है।

सर्वआधार शक्ति को बुद्धि विवेक-ज्ञान द्वारा जब जानने लगती है, उस परम तत्त्व की महिमा को अन्तर-विखे जानकर खामोश हो जाती है। सारे संसार को इसका रूप जानकर, मग्न होकर रूप रेख बिन इस देव शक्ति के अद्‌भुत रूप में समा जाती है। कोई भाग्यशाली जीव ही शरीर के होते हुए इस विस्माद अवस्था को प्राप्त हुआ करता है। ईश्वर सबको प्रतीत प्रीत बख़्शें।''

14. आश्रम के बारे में हिदायत

श्री महाराज जी की तरफ़ से जो हिदायत आश्रम के बारे में होती रही उनमें से दो नीचे लिखी जा रही हैं। यह श्रीनगर में निवास के दौरान लिखवाई गई थीं। उनमें से जो ज़रूरी हिस्सा है वह ही दिया जा रहा है।

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि हदबंदी आश्रम की पुख़्ता होनी चाहिये। इस वास्ते छोटी दीवार बनवाकर अन्दर पौधों की बाड़ लगाई जाए तो क्या ठीक न होगा? यह आप विचार कर लेवें। एक गज तक दीवार की ऊंचाई इस वक्त की रकम में बन सकेगी या इससे कम। कुआं जल्दी खुदवाने की कोशिश करें क्योंकि बारिश का मौसम आ रहा है। अगला गेट बड़ा और दीवार मिकदार की ऊंची होनी चाहिए। बाकी तीन तरफ़ एक गज की ही काफी है। आप अच्छी तरह विचार कर लेवें। अगर बिलकुल दीवार न बनवानी चाहें तो फिर पौधों की बाड़ ठीक है। मगर किसी वक्त ज़रूर दीवार बनवानी पड़ेगी। कुटिया के वास्ते अब ही कुछ बन जाए तो क्या बेहतर न होगा? खर्च के हालात और जमा शुदा रकम का अंदाज़ा लगा लेवें। इस खर्च में एक या दो कुटिया और एक रसोई होनी चाहिये। इसके अलावा सत्संग का थड़ा और बरामदा जो इंजीनियर ने बताया है वह बाद में हालात के मुताबिक ही होवेगा। कुंए की जगह जो इंजीनियर ने बताई है और आपने लिखा है कि जो बाहर जगह रहेगी उसमें कुआं खुदवाना चाहिए, इसका क्या मतलब है? कुआं अच्छी जगह तजवीज़ करके खुदवा देवें, जिसकी ख़ास हिफ़ाज़त हो सके। यह विचार कर लेवें और काम शुरू कर देवें। इस वक्त जो रकम है वह इस इंतज़ाम में आप खर्च कर सकते हैं। बाद में अगर संगत का प्रेम हुआ तो खुद-ब-खुद ही और बंदोबस्त होता जावेगा। चारदीवारी, कुआं, कुटिया, रसोई के अलावा और इस जगह कुछ बनवाना होगा वह हालात के मुताबिक और संगत की राय के मुताबिक इंजीनियर की भी तजबीज़ को साथ रखकर आहिस्ता-आहिस्ता ही हो सकेगा। सिर्फ़ पौधे, जो सावन के महीने में लग सकते हों, वह अनुकूल जगह में बेशक लगवा देवें और जैसा आप मुनासिब समझें, करें। दोबारा ताकीद है कुंए की जगह अनुकूल हो। हदूद के बाहर की जगह कुछ मायने नहीं रखती। इसमें आप भी विचार कर लेवें। श्री महाराज जी फ़रमाते हैं:- अगर शरीर बना रहा तो जगह देखकर जो प्रोग्राम भविष्य के वास्ते होना चाहिये उसके मुताबिक फ़िर कार्यवाही करनी होगी। फ़िलहाल मौज़ूदा काम को ही सर-अंजाम देने की कोशिश करें। ईश्वर सहायक हो। यह पत्र 21 मई, 1950 को श्रीनगर से लिखा गया था। दूसरा पत्र एक जुलाई, 1950

को श्रीनगर से लिखा गया उसका ज़रूरी हिस्सा निम्नलिखित है:–

आप जी के प्रेम पत्र द्वारा सब हालात से आगाही हुई। प्रार्थना यह है कि आपने जो दीवार के साथ–साथ फलदार वृक्ष लगाने की तजवीज़ की है सो ठीक नहीं, 'हिफ़ाजत की बड़ी ज़रूरत रहती है। जो तजवीज़ इंजीनियर साहेब ने की थी वह शायद बेहतर रहेगी। बाकी दरम्यान में जहां–जहां मुनासिब ख़्याल फ़रमायें आम के और एक दो पीपल जो छाया दे सकें ऐसी चीज होवे। पीपल का दरख़्त (पेड़) सावन में भी शायद लग सकता हो, अगर गाची के समेत पौधा निकाला जावे तो। बाकी आपने कुएं में से पानी निकालने का क्या बंदोबस्त किया है, जिससे काफ़ी मिकदार में पानी निकालकर दरख़्तों वग़ैरा को दे सकेंगे? तहरीर फ़रमाना।

अगर दीवार एक फुट और ऊंचाई वाली हो जाती तो फिर बैरूनी किसी किस्म का ख़तरा न था। अच्छा अब जो बन गई सो ठीक है। श्रीमान भाई साहेब मुकन्द लाल जी, उत्तम चंद जी, मलिक भवानी दास जी का पत्रिका द्वारा मुतालया करें और ज़रूरी ताकीद करें ताकि उनका रुपया आ जावे और काम तमाम सर–अंजाम हो जावे।

बारिशों के बाद ही नालियों का काम ठीक रहेगा, आगे आप जैसा मुनासिब समझें करें जी। इधर श्री महाराज जी तो कुछ ज़्यादा राय नहीं देते हैं। आप सिर्फ़ पांच असूलों की कायमी की हिदायत करते हैं। दास अपने तुच्छ ख़्याल द्वारा जो राय होती है दे देता है। आप उस जगह मौज़ूद होने के कारण ज़्यादा सब हालात को समझ सकते हैं और उसके मुताबिक अमल कर सकते हैं। दीवार के साथ और कौन से पौधे लगाने की तजवीज़ करेंगे या बाड़ के पौधे ही लगवाने अनुकूल होंगे। शायद किसी वक्त दीवार को एक फुट और ऊँचा कर लेवें तो फिर बाड़ के पौधों की ज़रूरत तो ख़ास नहीं रहेगी। आप प्रेमियों से मश्वरा कर लेवें। कौन से दरख़्त या पौधे अच्छे रहेंगे? टाली के दरख़्त के बारे में क्या विचार होगा? यह तमाम दरख़्त ही तकरीबन माघ, फागुन में लगते हैं। अब इस मौसम में जो–जो वृक्ष लगते हों अनुकूल जगह उनको लगवा देना चाहिये, आगे जैसी आपकी मर्ज़ी। ईश्वर नित सहायक होवें जी। आश्रम की सादगी के स्वरूप में स्थिति होनी चाहिये। छाया के वास्ते अच्छे–अच्छे दरख़्त तजवीज़ करके लगवाने चाहिये। यह ही हालात ख़ास काबिले ग़ौर हैं। श्री महाराज जी दोबारा आशीर्वाद फ़रमाते हैं, स्वीकार करें जी। दोबारा अर्ज़ यह है कि अन्दरूनी नक्शा सादा और काबलेदीद हो। दरख़्त, रास्ता, नालियां तरतीब से होनी चाहियें।

एक और पत्र जो श्रीनगर से लिखा गया वह भी नीचे दिया जा रहा है:–

आप जी के प्रेम पत्र द्वारा दर्शन हुए। सब हालात से आगाही हुई। श्री महाराज जी फ़रमाते हैं कि आपके दो पत्रों द्वारा हाल पाया। अन्य प्रेमियों के भी पत्र मिले। सो वाजया होवे कि जो विचार प्रेमियों ने लिखे हैं व्यापारी लाईन में ऐसा होना ज़रूरी है, बाकी सेवा का मार्ग कुछ और है। अब प्रेमी जी, उनके दिल की तसल्ली करने की ख़ातिर ज़रूरी है कि जो सामान लंगर का बचा हुआ है उसकी अन्दाज़न कीमत लगा लेवें। जब वह रकम तलब करें तब रवाना कर देवें। जितनी जिसकी

श्रद्धा होती है उतनी ही वह सेवा करता है। किसी के दिल को रंज़ नहीं करना चाहिए। यह ही समता का असूल है। आज प्रेमी जी को लिखा गया है कि क्या आप इस सामान की कीमत वसूल करना चाहते हैं, तो वापसी पता देवें और बोरिंग की सेवा के मुतालिक उसको कह दिया है कि अभी कोई ज़रूरत नहीं, और ही सेवादारों के अन्दर सेवाभाव में इतनी दृढ़ता हो सकती है। ईश्वर आज्ञा से जो कुछ हो गया काफ़ी है।

आश्रम की कायमी का पता लगने पर प्रेमी के मुतालिक लिखने लगे। प्रेमी राम स्वरूप ने भी सेवा में पत्र लिखा। आपने जो उत्तर दिया वह इस तरह है–

पत्र मिला, हालात मालूम हुए। प्रेमी जी, जगाधरी के प्रोग्राम के मुतालिक और सत्संग सम्मेलन के मुताबिक जो विचार है प्रभु आज्ञा से अभी कोई फैसला नहीं हो सकता। मालूम होता है गो तुमने अपनी सत् श्रद्धा अधिक ज़ाहिर की है। मगर सम्मेलन के मुतालिक तुमको बिलकुल नावाकफ़ी है कि ऐसे महाकारज में कितनी कुर्बानी दरकार हो सकती है और प्रभु तुम पर कितनी कृपा दृष्टि करते हैं। साधारण हालात में जगाधरी आना तो किसी को भी कोई ख़ास तकलीफ़ का बायस नहीं हो सकता है। आगे भी तो अक्सर कुछ समय तुम्हारे बाग में ठहरे ही रहे हैं। अब हालात जो आश्रम व सम्मेलन वग़ैरा के बन रहे हैं उसमें ठोस कुर्बानी वाला कोई प्रेमी नज़र नहीं आता है और न ही जगाधरी में हाज़िर होकर आम सत्संग सम्मेलन का प्रबन्ध कर सकते हैं। अब चूँकि आश्रम स्थित हो चुका है इस वास्ते हमारी हाज़री ख़ास प्रभु प्रेरणा से ही हो सकती है। प्रेमी लोग ख़ुद ही एक महदूद सा सत्संग कायम कर लेवें। इसमें किसी को कोई ख़ास बोझ भी न होवेगा और आहिस्ता–आहिस्ता सब हालात आइंदा ठीक हो जावेंगे। तुम्हारी कुर्बानी से ही यह जगह कायम हुई है। प्रभु जी अधिक श्रद्धा देवें और संगत के साथ प्रेम संयुक्त होकर आइंदा ऐसे स्थान की उन्नति करें। यह एक ख़ास कर्तव्य तुमको और तुम्हारे खानदान को रोशन करने वाला होगा, यह निश्चय कर लेवें । विशाल भाग्य से ऐसा कर्तव्य करने का तुमको प्रभु इच्छा से मौका मिल गया है और घर में भी तुमको संगत सेवा का अवसर प्राप्त हुआ है। यह तुम्हारा अपना तीर्थ स्थान हमेशा के वास्ते बन गया है। प्रभु जी सत् श्रद्धा देवें। प्रेमी, किसी वक्त आज़ाद रूप में आकर प्रभु आज्ञा हुई तो शायद जगाधरी में कुछ दिनों के वास्ते आना हो जावे। मगर सम्मेलन और आम सत्संग की पाबंदी में उधर आना प्रभु आज्ञा से कठिन ही मालूम होता है। तुमको निराश नहीं होना चाहिये। सत्पुरुषों के दर्शन जिस जगह वह स्थित हों वहां कर सकते हैं। प्रेमी जी, जो संगत का काम है वह संगत ने खुद ही करना है। सत्पुरुष उसकी जिम्मेवारी नहीं उठा सकते हैं और सत्पुरुषों को जो आज्ञा हुई वह विचार प्रेमियों के आगे पेश कर दिये हैं। आगे उस पर कोई अमल करे या न करे इनको कोई मजबूरी नहीं है। अब जीवन यात्रा का केवल समय ही व्यतीत करना है। अभी तो शारीरिक अवस्था ही ठीक नहीं है इस वास्ते किसी एकांत जगह ही आइंदा शुरू सर्दियों में जाना होवेगा। आगे जो प्रभु आज्ञा। ईश्वर सत् श्रद्धा देवें।

दूसरा पत्र जो इस सिलसिले में लिखवाया, आगे दर्ज़ है। सो प्रेमी जी, सब हालात को देखकर यह प्रभु आज्ञा से कुछ मालूम हो रहा है कि ऐसे समय में हमारी हाज़िरी ही मौजू रहेगी और अभी सेहत भी ख़ास अनुकूल नहीं है। आप प्रेमी अपने फर्ज़ की अदायगी में छोटे से सत्संग का सिलसिला जारी कर लेवें। ईश्वर ही सहायता करने वाले हैं। तुमने दूसरे खत में कुछ ऐसी तहरीर की है जिससे मालूम होता है आप अपने ख़्यालात की पस्ती ज़ाहिर कर रहे हैं। ऐसी तहरीर नहीं होनी चाहिये। ईश्वर सुमति देवें।

प्रेमी को संतों की वाणी पढ़ते देखकर आपने पूछा:– तुम इनका स्वाध्याय करते थकते नहीं? प्रेमी ने अर्ज़ की:– महाराज जी! थकावट तो नहीं होती। इनमें तो नया विचार मिलता है। मगर बुद्धि दृश्यमान संसार में ऐसी ग्रसी हुई है कि इस तरफ से हटती ही नहीं। बल्कि इसको देखते हुए ऐसी इसमें मोहित है कि बावज़ूद दु:ख होने के भी वस्तुओं में सुख महसूस करती है।

इस पर सत्पुरुष ने फ़रमाया:– ''प्रेमी! बुद्धि के अन्दर हर समय गुणों का चक्कर चलता रहता है और इसमें फंसी हुई सत् की तरफ लगती ही नहीं। अगर किसी भाग्यशाली जीव की रुचि इस तरफ़ से हटकर निर्गुण होने के यत्न में लग जाती है और यत्न करते–करते प्रीतम के प्रेम में मग्न होकर अन्तर विखे इस प्रकाश स्वरूप में लय होने लगती है तब उसे इस खेल का पता लगता है। उस समय उसे पता लग जाता है कि हर जीव इस मालिक का रूप है और जीव अज्ञानता के कारण अनेक शरीरों को धारण करता हुआ भटक रहा है। अज्ञानता कहां से आई इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता।''

इस पर पूछा गया:– महाराज जी! क्या आत्मस्वरूप को प्रत्यक्ष भी देखा जा सकता है? उत्तर में श्री महाराज जी ने फरमाया:–

है कहूं तो है नहीं, ना कहूं तो ग़ार।
है नाहीं के बीच में, देखा सरजनहार॥

जब बुद्धि अपने स्वरूप को अनुभव करती है, सारे विराट को अपने अन्दर पाती है, वहां दुई रहती ही नहीं। किसको कहे तू और है, मैं और हूं। उस समय दूसरा भेदभाव रहता ही नहीं। दूसरा कोई हो तो प्रत्यक्ष देखें। यह ऐसा अश्चर्ज खेल है कि इसे बयान नहीं किया जा सकता और न ही समझाया जा सकता है इसका ताल्लुक निजि अनुभवता से है। इस वास्ते जितना यत्न–प्रयत्न हो सके करते रहना चाहिये। प्रेम और वैराग्य की कोई थाह नहीं। जितनी संसार की असारता दृढ़ होगी और जितना श्रद्धा से अभ्यास में समय दिया जावेगा उतना ही लाभ होगा।

अन्तर सिमरे नाम को, बाहर सेवा धार।
दिन रैन करे अभ्यास जो, पावे अबगत सार॥
सो वडभागी जीवड़ा, बिना शरीर पुरख घट देखे।
कोई गुरमुख साजन विरला, घट माहीं अमृत पेखे॥

सदा प्रापत घाट न पावे, सतपुरुष की वडयाई।
नित परगास जोत निर्वानी, घट-घट अन्तर पाई॥
निर्मल प्रीत प्रभ चरन की, बारमबार चित ध्यायो।
दुविधा नास शांत परगासे, परम पुरख घर पायो॥
तीन भवन में सुरती बासा पाया, नित आनन्द लखोई।
अखंड परगास लखा निरन्तर, प्रीतम प्रेम में उनमत होई॥
जंगल बस्ती भयो एक समाना, समता भाव परगासी।
''मंगत'' जल थल परगट पाया, आद पुरख अबनासी॥

दिन व्यतीत हो रहा था, रात आ रही थी। श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''आसन अन्दर ले चलो और शाम को रोशनी जल्दी कर दिया करो। आज प्रेमी दीनानाथ मंहगी ने देर कर दी है। दिन को इधर भी गर्मी बहुत हो जाती है। किश्ती का साधन न होता तो इतनी दूर पैदल चलकर आना बहुत मुश्किल होता।''

उसके बाद आप टहलने लगे। आसन अन्दर लगाया गया। भक्त जी नाश्ता बनाने लगे। थोड़ी देर बाद प्रेमी महंगी जी आ गए।

24 जुलाई, 1950 रविवार का दिन था। प्रेमी सत्संग का लाभ उठाने के लिए आने लगे। चार बजने में पांच मिनट थे। आपने महामंत्र उच्चारण करने की आज्ञा फ़रमाई। महामंत्र, मंगलाचरण उच्चारण करने के बाद निम्नलिखित दोहा और उसके शब्द पढ़े गए।

जगत सराय में आया, तूं मुसाफ़िर मीत।
'मंगत' निर्मल ध्यान से, साची पा लो प्रीत॥
कौन तेरा तूं किसका होई।
'मंगत' आज्ञा प्रभ में चक्कर चलोई॥

शब्द समाप्त हो चुकने के बाद आपने अमृत वर्षा फरमाई।

15. सत् उपदेश अमृत

जीव शरीर रूपी संसार को धारण करके जब से इस दृश्यमान संसार में आया है तब से अनेक तरह के कौतुक देख रहा है। जो भी जीव आता है संसार को सब कुछ समझकर उसमें लिप्त हो जाता है। यह संसार अद्भुत मेला है। जो आता है इसको देखकर मोहित हो जाता है। कोई विचारवान विवेकी जीव इस चक्कर को देखकर विचार करता है कि यह क्या बना हुआ है? किसने इस हरे भरे फले-फूले बाग की रचना रची है? इसमें सैर करने वाले तो हजारों आते हैं मगर कोई विरला ही एक-आध इस बाग के लगाने वाले माली के मुतालिक विचार करता है। आम जीव तो

उसमें आकर मेला देखकर वाह-वाह करते चले जाते हैं। दूसरे लफ्ज़ों में संसार रूपी बाग को देखते तो सब हैं मगर बनाने वाले का विचार कोई विरला ही करता है।

अद्‌भुत मेला देख के, मोहे सुखदेव मुनि ज्ञानी।
और जीव की गत क्या, जो नित भरम लपटानी॥

किसी समय किसी से यह विचार करके देख तो सही कि तेरा असली साथी कौन है? किसके आधार पर तू संसार में विचर रहा है? पूछो कि तेरा साढ़े तीन हाथ का पिंजर बनाने वाला भी कोई है? यह आंख, नाक, कान, त्वचा, जीभ और कर्म इन्द्रियां किस शक्ति के आसरे काम कर रही हैं? कभी किसी ने सोचा कि अनेक तरह के पदार्थ इस ग़ार में डाले जाते हैं, यह कैसे खून के रूप में बदले जाते हैं? हड्डी, मांस, मज्जा, थूक वग़ैरा किस तरह बन रहे हैं? जब पूछोगे तो वह यह ही जवाब देगा कि उसे पता नहीं, उसने कभी ख़्याल नहीं किया। इसलिए पहले इस शरीर रूपी संसार का विचार करना चाहिये। जब ऐसा करोगे तब बुद्धि जाग्रत होगी।

सत्संग में शरीर, आत्मा, परमात्मा का ही निर्णय हुआ करता है। पहले ऋषियों के ज़माने में जब मिलकर बैठा करते थे तो ज़्यादातर आत्म सम्बन्धी विचार ही हुआ करते थे। सत्संग को मेला समझकर नहीं आना चाहिये। इस जगह आकर ज़िन्दगी और मौत का विचार सुनना है। जीवन शक्ति का विचार ही असली ज़िन्दगी देने वाला है। इधर कोई बड़े-बड़े संस्कृत के श्लोक नहीं सुनाये जाते। यह लम्बा-चौड़ा पढ़े हुए नहीं हैं। मोटी-मोटी बातें ज़िन्दगी और मौत के मुतालिक समझाने वाली की जा रही हैं।

शरीर की सेवा, पूजा में हर शरीरधारी लगा हुआ है। जन्म से मरने तक इस शरीर की जीवों के अन्दर सोच बनी रहती है। सिर्फ़ मानुष ही नहीं, बल्कि पशु और जड़ योनियों के जीव भी बढ़ने और फैलने की कोशिश करते रहते हैं। किसी वृक्ष को ही देखो, इसे भी आसमान की तरह ऊंचा यत्न करते और फैलते हुए पाओगे। उस पर भी बहार और ख़िज़ां का असर होता देखोगे। किसी और पशु और जड़ योनी को देखो, उनका भी ऐसा ही हाल पाओगे। गो इन्हें कोई सोझी नहीं, केवल इस मानुष जामे में ही जीव अपने आपका विचार कर सकता है। हज़ारों जीवों ने इस मानुष जामे में ही उच्च से उच्च अवस्था प्राप्त की है, उनको ही गुरु, पीर, अवतार, पैग़म्बर कहा गया है। हर समय यह याद रखो कि यह शरीर बदलने वाली चीज़ है। जीव संसार में अकेला ही आता है और अकेला ही जाता है। यह भी निश्चय ही जानो कि तेरा रूप-रंग एक रोज़ ज़रूर बदल जावेगा। जितने तूने साथी-संगी बना रखे हैं तुझे सबको छोड़ना पड़ेगा। तेरे सम्बन्धी तुझे त्याग देंगे।

गुर नमानी सद करे, नेह घर या घर आ।

ज़िन्दगी में ही अपने ठौर-ठिकाने पर पहुंचना तेरा असली काम है। जीव ने जिस कदर पांव फैला रखे हैं प्राण कला के टूटते ही सब दुःख रूप हो जाया करते हैं। जीवन काल में जब-तक होश है यह जीव किसी दुःखी, दीन, अनाथ की तो परवाह नहीं करता और न ही किसी का

दु:ख–दर्द बांटता है और अपना सुख तक्सीम करता है, मगर चाहता यह है कि परलोक में भी सुखी रहूं। कैसे उसकी मनोकामना पूरी हो सकती है? सेवा करने वाले और मालिक को याद करने वाले ही लोक–परलोक में सुखी हुआ करते हैं। जीव जब शरीर को छोड़कर चल देते हैं उसके बाद उनके सम्बन्धी रोते हुए कहते हैं।

बागां दिये रानिये, भूखी प्यासी गई एं।
मुल्खां देया बादशाह, सब कुछ छोड़ गयों॥

सारे जाने वाले जीव आख़िरकार भूखे–प्यासे ही जाया करते हैं। कोई राजा है या राणा, कोई भी साथ बांध कर नहीं ले जा सकता। मेले ने शुरू होकर आख़िर ख़त्म होना है। भरे मेले को छोड़कर सब घर लौट जाते हैं। वह ही सुखी होते हैं जो सब कुछ प्राप्त करके भी सारे माल–इकबाल को प्रभु की दात समझते हैं। वही बुद्धिमान हैं। रास्ता ज़रूर मुश्किल है, इसमें दृढ़ता के बग़ैर चित्त के अन्दर धीरज, सन्तोष नहीं आ सकता। संसार की कोई चीज धीरज देने वाली नहीं। सब को छोड़ने से पहले जीव ऐसे सत् यत्न इख़्तियार करे जिससे जीवनकाल में ही सुखी रहे और इस पिंजर को छोड़ने के बाद भी सुखी हो। ईश्वर सत् बुद्धि देवें ताकि संसार से सफलता प्राप्त करके चले। इसके बाद दोहे व शब्द पढ़े गए –

नाम जपत से भरमन नासे, सूझे पद निर्वाना।
'मंगत' जीवन सार जग माहीं, इक नाम ध्यान भगवाना॥

फिर आरती व समता मंगल उच्चारण करने के बाद प्रशाद बांटा गया और सत्संग समाप्त हुआ।

इसके बाद सत्पुरुष ने फ़रमाया:– ''प्रेमियों! कोई विचार करो।'' इस पर एक प्रेमी ने पूछा:

प्रश्न :– **महाराज जी, दृश्यमान संसार को देखकर हम सब नित ही मोहित होते रहते हैं। मन की ममता का किस तरह नाश किया जावे? ज्यों–ज्यों मोह बढ़ता है संसार सुख रूप दिखाई देता है। एक पलक के वास्ते संसार के सुखों को भूलने की कोशिश नहीं करते।**

उत्तर :– प्रेमी सुनो! जिन्होंने सिर पर छाई डाल रखी है, सिर मुंडा रखे हैं, कोई नंगा है या जल में खड़ा है, कोई धूनी ताप रहा है या लम्बी–लम्बी जटा बढ़ा रखी है या अनेक तरह के सांगोपांग व भेष इस वास्ते धारण कर रखे हैं कि ममता नाश हो मगर उनकी ममता संसारियों से भी अधिक बढ़ी हुई पाई जावेगी। जिनको गुरु, गोसाई, सन्यासी समझ कर पूजते हैं वह भी माया के फेर में पड़े हुए हैं। जो भी संसार में आया है, संसार को देखकर मोहित हो रहा है। जिन्होंने संसार को देखा और उसे समझने का यत्न किया, उन्होंने जान लिया कि संसार क्या है? और जब उसे बदलने वाला जानकर संसार को बनाने वाले की खोज की, ऐसे विवेकी जीव ही ममता के जाल को समझ कर

इससे पीछा छुड़ाने की कोशिश करते हैं। मन की ममता का नाश करना कोई आसान काम नहीं है। बुद्धि रोम-रोम में फैली हुई है। ममता करके संसार के सब जीव हर समय फैलाव कर रहे हैं। ममता रूपी रोग से हर जीव ग्रस्त है।

ममता माई जनमत खाई, काम क्रोध दो मामा।
मोह नगर का राजा खायो, तब पहुंचयो उस धामा॥

मोह करके सब विकार प्रगट होते हैं। बड़ा खुशनसीब वह जीव है जो रोग को समझकर उसका इलाज करता है। माया चक्कर से मुख़्लसी हासिल करनी है। किसी से इस चक्कर से छूटने का रास्ता पूछकर, चल कर देख। सारी उम्र यह पूछने में ही नहीं गुज़ार देनी चाहिये कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार विकारों से किस तरह छुटकारा हासिल किया जावे। ममता को नाश करने वालों से पूछ कि इस रोग से किस तरह मुख्लसी मिलती है और फिर जो इलाज वह बतलाये उसे शुरू कर दे तब-

रंग लागत लागत लागत है। भरम भागत भागत भागत है॥

संसार सुखों को जब लात मारेगा, उसे दुःख रूप समझेगा, शरीर की तबदीली दृढ़ निश्चय से जानेगा, शरीर को दूसरी शक्ति के आधार पर खड़ा रहने वाला जानेगा, तब कई प्रकार के विचारों द्वारा बुद्धि-मन के अन्दर उदासीनता आवेगी। जब-तक मन फीका नहीं होता तब-तक उसका रास्ता नहीं बदलता। स्कूल में एक दिन जाने से सारा सबक नहीं मिल जाता। सत्संग में आया करो और सत्-असत् का निर्णय समझो। अब रात शुरू होने वाली है फिर किसी समय आओ। बुद्धि को खोलकर चलना चाहिए। संतों की परख करते रहा करो।

16. आपातकाल के नियम में परिवर्तन

इसके बाद प्रेमी नमस्कार कर विदा होने लगे। कई प्रेमी बैठे रहे। जब सूरज अस्त होने लगा, श्री महाराज जी ने फ़रमाया:- ''प्रेमियों! आराम करो।'' आसन अन्दर कमरे में ले जाया गया। श्री महंगी जी अपने मित्र प्रेमी मदन गोपाल जी को विदा करने के वास्ते साथ गए। श्री महाराज जी टहलने लगे।

जब रात के दो घंटे गुज़र गए तो प्रेमी दीनानाथ जी महंगी वापिस आए और भक्त जी को रसोई में ले जाकर कहने लगे कि भाई मदन गोपाल जी की कार खराब हो गई है। कार ठीक करने की बहुत कोशिश की गई मगर ठीक नहीं हो सकी है। ब्रेन गांव के पास डल के किनारे सब खड़े हैं। इधर गांव में किसी पंडित का घर भी नहीं है। श्रीनगर यहां से आठ मील है। आप श्री महाराज जी से आज्ञा लें ताकि यहीं ठहरने की इजाज़त दें। बाहर बरामदे में रात काट लेंगे। मगर भक्त जी ने जाकर पूछने की हिम्मत न की और न ही महंगी साहब हिम्मत कर रहे थे। रात अन्धेरी थी। काफी अंधेरा था। श्री महाराज जी ने खुद ही आवाज़ दी और पूछा:- ''बनारसी! क्या कर रहे

हो?'' भक्त जी ने जाकर प्रणाम किया और सारा माजरा सुनाया। फ़रमाने लगे:– ''तुमने क्यों नही आकर कहा?'' भक्त जी ने अर्ज़ की:– ''महाराज जी! सतपाल वाला मामला याद था, जब भांजी को इधर रख लिया था और ख़्याल था कि शायद आप न मानें। यह विचार हो रहा था इसलिए अर्ज़ नहीं की गई थी।''

यह सुनकर सत्पुरुष ने मुस्करा कर फ़रमाया:– ''प्रेमी! जान-बूझकर यह प्रेमी इस जगह ठहरने की कोशिश नहीं कर रहे। इसे आपातकाल का समय समझो और साधन भी उनके रहने के वास्ते नहीं हैं, न ही इस समय शहर जाने का कोई साधन है। इन्हें इस समय में धक्का भी नहीं दिया जा सकता। उनके लिए साथ वाले कमरे को खोल दो, वहां आराम करें! इन्होंने दो घड़ी यहां ठहरना है। दरम्यान का दरवाज़ा बंद कर दो। उनको खाना तैयार करके खिलाओ।''

भक्त जी ने फौरन मंहगी जी को जाकर कहा। वहां जाकर मदन गोपाल वग़ैरा को भी बुला लाये। लंगर तैयार किया गया और सबको खिलाया गया। जब साथ वाले कमरे में ठहरने का प्रबन्ध करने लगे तब श्री महाराज जी ने एक लोई अपने नीचे से निकाल कर इस्तेमाल के लिए दी। उस वक्त रात के बारह बज चुके थे। रात को एक बजे श्री महाराज जी बाहर तशरीफ़ ले गए। दिन निकलने पर जब आप वापिस आए तो उसके बाद प्रेमी प्रणाम करके श्रीनगर शहर चले गए।

जब सत्पुरुष स्नान कर चुके और दूध पिलाया जा रहा था तो आपने भक्त जी से पूछा:– क्या प्रेमी चले गए हैं? भक्त जी ने अर्ज़ की:– सब चले गए हैं, मगर पता नहीं मोटर ठीक हुई या नहीं।

आपने तब फ़रमाया:– 'प्रेमी! रात को तुम्हारा पूछना ज़रूरी था। मजबूरी, मजबूरी हुआ करती है। अगर वह इरादा करके आते या आने की कोशिश करते इधर से कब आज्ञा मिलने वाली थी। मगर मौका ऐसा बन गया था जिस करके नियम भी बदलना पड़ा। सरकारी जज भी इरादे पर फैसला करते हैं। तुम्हारे सम्बन्धी तो रहने का इरादा करके आए थे। मना न किया जाता तो इधर रोज़ाना मेला लगा रहता। संसारियों को थोड़ा रास्ता मिलना चाहिये। इस पाबन्दी में आज़ादी है। संसारियों से ज़्यादा प्रेम नहीं करना चाहिए। उनका स्वान जैसा प्रेम होता है। बच्चे और कुत्ते से ज़्यादा प्रेम नहीं करना चाहिए। कुत्ते का स्वभाव है ''खीझे काटे टांगरी, रीझे चाटे मुख''। संसारियों से अधिक लगाव दु:ख का कारण होता है। अगर सम्बन्धियों को तुम ज़रा टेढ़ी नज़र से देखो और स्वार्थ पूरा न करो, बस नाराज़गी होगी, गिले-गुज़ारियां होंगी। हर एक का आदर मान करना फर्ज़ समझो। रिश्तेदार आपके लिए सारे संसार के जीव हैं। धर्म सबसे बड़ा परिवार है। नावाकिफ़ से नावाकिफ़ के साथ पल में प्रेम बना देता है। मत समझना वह प्रेमी नहीं थे इसी वास्ते महाराज जी नाराज़ हुए थे। यह प्रेमी हैं, इनके रहने की आज्ञा मिल गई है। इनके लिए सारे संसार के जीव प्रेमी हैं। समय विचार करने पर मजबूर कर देता है। रात के समय अगर इंकार कर दिया जाता, इधर जगह नहीं है या नहीं ठहर सकते, तो यह लोग कहते यह अच्छा सेवा का तरीका है। इस समय प्रेमी अतिथि के रूप में थे। तुम अपने चित्त से प्रेमी ग़ैर प्रेमी का भाव निकाल दो। उनको भी अच्छी तरह

जानते हो। एक दफ़ा इजाज़त मिल जाती तो श्रीनगर के प्रेमी भी आने शुरू हो जाते। उस दिन की झाड़ से बाकी प्रेमियों पर जो असर पड़ा है तुम नहीं जानते। अच्छी सास, बहू को समझाने के वास्ते अपनी लड़की को इशारतन सुना–सुना कर समझा दिया करती है। अच्छे प्रेमी सुनकर समझ जाया करते हैं। यह भी एक सबक है। मजबूरी में फ़कीरों को समय, काल के मुताबिक बदलना पड़ता है। समय पर किसी के वास्ते आसरा, आधार और सहारा बनना बहुत बड़ी सहायता हुआ करती है। उनके पास किसी बात की कमी है? मगर जंगल में रात के समय क्या कर सकते थे? तुम नज़दीक थे, अपना हक समझ कर आ गए थे। ऐसे समय वाकिफ़–नावाकिफ़ सबकी सेवा करना फर्ज़ जानो। तकलीफ़ तुमको उठानी पड़ी, उन्होंने क्या करना था? अगर किसी समय तुमको कहा जाता है, तुम्हारी बेहतरी के वास्ते कहते हैं। बाज़–औकात जब समय आता है तो पाबन्दी वाले नियम, इसमें शक नहीं, किसी फैसले पर नहीं पहुंचने देते, फिर लकीर को ही पीटा जाता है।'' उसके बाद आपने फिर पूछाः– ''रात को उनको कोई तकलीफ़ तो नहीं हुई?''

भक्त जी ने अर्ज़ कीः– ''सुबह जब पूछा था सब खुश थे। मोटर की ख़राबी की वज़ह से उन्हें ठहरना पड़ गया था। बहुत देर तक उन्होंने ठीक करने की कोशिश की थी और यह भी अर्ज़ कीः– महाराज जी! जैसी आपकी आज्ञा हुई बहुत ठीक हुई। दास ने सब समझ लिया है। उस समय दास को ख़्याल हुआ था कि अगर आप न कर देंगे तो प्रेमी किधर जायेंगे?''

इस पर आपने फ़रमायाः– ''हर एक जीव के प्रभु आप रक्षक हैं। गांव के पास ही इन्हें मोटर की खराबी का पता लग गया। अगर दो तीन मील आगे चले जाते तो उनको बहुत तकलीफ़ होती। ईश्वर जो करता है अच्छा ही करता है।''

एक वाक्या शुभ स्थान गंगोठियां ब्राह्मणां में भी ऐसा हुआ था। सम्मेलन का मौका था। रावलपिंडी ज़िला की ब्राह्मणां सभा ने बमौका सम्मेलन मीटिंग रख ली थी। ज़िला के कई शहरों के कस्बों से सभा के मेम्बर वहाँ जमा हुए थे और मीटिंग भी की थी। जब लंगर तक्सीम हो रहा था तो सभा का एक मेम्बर लंगर तक्सीम करने लगा और लंगर तक्सीम करने में भेद–भाव करने लगा। सभा के मैम्बरान को तो कड़ाह व दीगर सब्जियां दाल वग़ैरा खूब देता, मगर बाकी जनता, जो आसपास से आई थी और लंगर पा रही थी, उन्हें कम देता। बाबू अमोलक राम ऐसा देखकर बर्दाश्त न कर सके और उसे कह दिया कि वह ऐसा क्यों कर रहा था? मामला श्री महाराज तक पहुंच गया। श्री महाराज जी ने झाड़ बाबू जी को डाली लेकिन बाद में बाबू जी को बुलाकर कह दिया कि प्रेमी, बुरा न मानना। यह झाड़ तुमको नहीं दी गई थी, यह उसको दी गई थी। मगर फ़कीर उसे तो कुछ नहीं कह सकते थे। गो ज़ाहिरा झाड़ तो तुम्हें दी जा रही थी मगर यह दरअसल उसके लिए थी।

बाज दफ़ा सत्पुरुष आम संसारियों की तरह सेवकों के सामने इस तरह के विचार रखते जैसे कि वह किसी बात के नतीजे के बारे में कुछ जानते ही नहीं। राय लेने लग जाते कि यह कैसे करना चाहिये? कैसे यह हो सकेगा? अगर उस प्रेमी से कोई जवाब न बन सके तो खुद ही ऐसे तरीके बतलाते और समझाते कि ऐसे तरीके से काम सरअंजाम हो सकता है।

17. झंडे की मनाही पत्र द्वारा

श्री महाराज जी फ़रमाते हैं कि झंडे की अब ज़रूरत नहीं है। इसकी हिफ़ाजत कठिन है, और हालात सब मालूम हुए।

1. क्या ख़र्च का अन्दाज़ा प्रेमियों की सेवा से सम्पूर्ण हो जायेगा?

2. क्या तमाम सामान एकत्र हो जावेगा जो सम्मेलन के वास्ते ज़रूरी होगा?

3. क्या संगत के स्नान वग़ैरा के वास्ते दूसरी जगह में नलका गुसलखाने के अन्दर लगवाना चाहिये। नलके का बाहर होना हिफ़ाजत की बड़ी दुस्वारी है, इसके मुतालिक भी विचार लिखना या और किसी तरह से फ़िलहाल इंतज़ाम हो सके कर लेना।

4. क्या कार्तिक तक आश्रम की मुलहका ज़मीनों से फसल कटाई शुरू हो जावेगी?

5. क्या सम्मेलन के दिन अन्दाजन दस या पन्द्रह हज़ार की तहदाद (संख्या) में संगत हाज़िरी का निश्चय है या उससे कमोबेश? तमाम हालात से पूरा-पूरा जवाब दें ताकि फिर प्रभु आज्ञा से विचार किया जावे और सम्मेलन के मुतालिक जो फैसला होना होवे हो जाये। आगे जो आज्ञा ईश्वर की। श्री महाराज जी दोबारा आशीर्वाद फ़रमाते हैं स्वीकार करें जी। सेवा में प्रार्थना यह है कि आगे भी आश्रम की सेवा में आपने काफ़ी तकलीफ़ उठाई है।

नोटः आपके इस पत्र का मुकम्मल जवाब आने पर और संगत की ख़ास कोशिश हुई तो शायद श्री महाराज जी आम सम्मेलन की आज्ञा दे देवें और खुद भी संगत सेवा की ख़ातिर जगाधरी हाज़िर हो जावें। इस जगह के प्रेमी भी गो मजबूर कर रहे हैं मगर श्री महाराज जी अभी सम्मेलन के बारे में कुछ नहीं फ़रमाते हैं। सिर्फ यह ही कहते हैं कि प्रेमी कमज़ोर हैं इसलिए सम्मेलन का सरअंजाम होना अभी कठिन है। आगे जो ईश्वर आज्ञा।

ईश्वर इससे अधिक श्रद्धा और सेवा भाव बख़्शें। अब भी अगर सम्मेलन हुआ तो सामान वग़ैरा एकत्र करने के वास्ते हर किस्म की तकलीफ़ तो ज़रूर होवेगी, क्योंकि हर एक काम नया है। किस तरह से यह काम सरअंजाम हो सकता है? सो अच्छी तरह विचार कर लेना जी।

समय गुज़र रहा था। एक रोज़ वृक्ष के नीचे आप दोपहर के समय विराजमान थे। प्रेमी दिन को अक्सर सो जाया करते थे। एक प्रेमी सोकर उठा ही था कि सत्पुरुष ने पूछाः- ''कहां गए हुए थे?''

प्रेमी ने अर्ज़ कीः- ''शरीर तो इधर ही आपके नज़दीक पड़ा था, मगर मन कई जगह चक्कर लगाकर जाग्रत हुआ है।'' इस पर आप फ़रमाने लगेः- ''वह स्वप्न का संसार सत् था या यह संसार सत् है?'' प्रेमी ने अर्ज़ कीः- महाराज जी! ज़रा विचार किया जावे तो न वह सत् था न यह सत् है, दोनों हालतें बदलती रहती हैं।''

श्री महाराज जी फ़रमाने लगे, ''यह अवस्था जो लगातार चल रही है यह भी एक रोज़ बिलकुल बदल जावेगी। तबदीली ही खेदयुक्त अवस्था है। खेदयुक्त अवस्था को जीवों ने सुख रूप मान रखा है। समता साधन का प्रवाह जुगा–जुग से चल रहा है। इसकी पुष्टि के वास्ते ही नारायण ने यह धारा फिर प्रगट फ़रमाई है ताकि थोड़ी बुद्धि रखने वाले जीव भी जीवन को प्रभु आज्ञा में रहते हुए सफल बना सकें। जब–तक भागवत कथा प्रसंग सुनने और सिमरण, ध्यान का शौक चित्त के अन्दर नहीं पैदा होता तब–तक चित्त संसार से मुन्तफिर (मुनकर) नहीं होता। जिस समय सत्कर्मों में चित्त अच्छी तरह लग जाता है तब संसार से मुन्तफिर होते–होते आख़िर समता आनन्द का पान करने लगता है। सत्संग से ही विचारवान का चित्त बदलता है। मन, वाणी करके संसारी इन्द्रियों द्वारा जीवन बेअर्थ गुज़ारते रहते हैं।''

यह विचार चल ही रहे थे कि एक प्रेमी दिल्ली से दर्शनों के लिए आया। प्रशाद रखकर चरणों में प्रणाम किया। श्री महाराज जी ने आहिस्ता से हाल–चाल पूछा। फिर फ़रमाने लगे:– ''प्रेमी! बग़ैर आज्ञा के यहां क्यों आए हो?'' फिर ज़ोरदार झाड़ डाली। प्रेमी खामोश हो गया, कोई जवाब न दे सका। आपने फ़रमाया:– ''जब कभी फिर दिल्ली की तरफ आते तब हाज़िर हो जाते।'' और फिर फ़रमाया:– ''यहां सिर्फ़ एक दिन ठहरने की इजाज़त है। कल सुबह ही वापिस चले जाओ और जाकर अपना काम–धंधा करो।''

दूसरे दिन जब वह प्रेमी चला गया तो प्रेमी गिरधारी लाल जी एक प्रेमी को साथ ले आए। प्रणाम करके दोनों जब बैठ गए तो श्री महाराज जी ने पूछा:– ''यह प्रेमी कहां से आए हैं?'' प्रेमी गिरधारी लाल जी ने अर्ज़ की:– यह मेरे मित्र हैं।

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''प्रेमी, मित्र तो 'हम प्याला व हम निवाला' होते हैं। कश्मीरी पंडित तो कोई भाग्यशाली ही होगा जो मांस से बचा हुआ हो। कैसे समझा जाए यह तुम्हारा मित्र है? इन चीजों से पाक व साफ होना मुश्किल है।'' इतने में कहवा तैयार होकर आ गया और पिलाया गया। पंडित जी ने विचार सुनकर चरणों में सीस रख दिया और प्रार्थना की:– ''सत् मार्ग पर डालने की कृपा करें।''

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''प्रेमी! इधर आकर कुर्बानी करनी पड़ेगी। मत समझो कि श्री महाराज जी थोड़ा दूध लेने वाले हैं। इनके नज़दीक आकर संगत की सेवा दिल व जान से करनी पड़ेगी। सस्ता सौदा नहीं।''

प्रेमी ने श्रद्धा, विश्वास दिखाते हुए चरणों में हाज़िर होने का समय मांगा।

श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– 'प्रेमी! पहले मांस, शराब और नशे वाली चीजें इन्हें भेंट करो।''

प्रेमी ने अर्ज़ की:– महाराज जी! जैसा आपका हुक्म होगा उस पर अमल किया जावेगा और जो सेवा की आज्ञा होगी उसे किया जावेगा।

प्रेमी चौथे रोज़ हाज़िर हुआ और दीक्षा ग्रहण की। उसका नाम विश्वनाथ चीरू था और अनन्तनाग का निवासी था। उसने सेवा के लिए प्रार्थना की। श्री महाराज जी ने फ़रमाया:– ''फिर किसी समय बताया जावेगा।'' मगर उसने बहुत ज़ोर दिया तो आपने उसे बाबू अमोलक राम को सम्मेलन के लिए बर्तनों व अन्य सामान के लिए मुनासिब रकम भेजने की आज्ञा फ़रमाई। पंडित जी ने साढ़े तीन हज़ार रुपये का ड्राफ्ट दिया जिससे बाबू जी ने बर्तन व अन्य सामान खरीद लिया।

18. पत्र द्वारा सम्मेलन के बारे में हिदायत

आज्ञाकारी सती सेवक अमोलक राम जी, आशीर्वाद पहुंचे। पत्र मिले, ईश्वर सत् बुद्धि देवें। तमाम प्रेमियों को आशीर्वाद कहनी। प्रेमी जी, हालात प्रेमियों की सेवा का पाया। 1500 रुपए से कैसे सम्मेलन हो सकता है? और आप प्रेमी कहते है कि श्री महाराज जी आज्ञा देवें। इसका मतलब यह है कि श्री महाराज जी खर्च भी कहीं से मुयस्सर करें और सम्मेलन की आज्ञा देवें। वाह कलयुगी श्रद्धालुओं और प्रेमियों की श्रद्धा और फ़र्ज़ शनासी। प्रभु ही सत् बुद्धि देवें। ख़ैर अबके साल जैसी आप लोगों की भावना है उसके मुताबिक तुमको खर्च भी मुहिया कर दिया जावेगा और सम्मेलन की तारीख भी मुकर्रर कर दी जाती है। यह याद रखें कि अगर आइंदा को ऐसी भावना धारण की तो बिलकुल ही फ़कीरों के पास से अलहैदा हो जावेंगे। यह अच्छी गुरु की ख़िदमत आप प्रेमी कर रहे हैं कि संगत के अपने फ़र्ज़ की अदायगी भी श्री महाराज जी करें यानि कहीं गिरवी रहें या नौकरी इख़्तियार करें या कहीं से ग़ैबी–दफ़ीना शिष्यों को मयुस्सर करें और शिष्य लोग एकत्र होकर अपनी खुदी को बुलन्द करें और नरक के गामी बनें। आइंदा ऐसा नहीं हो सकेगा, बल्कि बड़ी से बड़ी कुर्बानी फ़कीर लोग प्रेमियों की देखना चाहते हैं। अगर प्रेमी कुर्बानी नहीं दे सकते तो फ़कीरों के साथ प्रेम नामुमकिन है, निश्चय कर लेवें।

प्रभु आज्ञा से सम्मेलन को कार्तिक का दूसरा इतवार जो कि 3 कार्तिक को है उस दिन मुकर्रर समझें यानि 29 अक्तूबर को। आइंदा को भी अगर यह समय अनुकूल रहा तो दूसरा इतवार कार्तिक मुकर्रर तारीख समझें।

डेढ़ हज़ार रुपयों के करीब प्रेमियों ने जो सेवा की है उसको शामिल खर्च कर लेवें और आइंदा किसी की भी सेवा इजाज़त के बग़ैर नहीं लेनी। इस जगह के एक नए प्रेमी ने खर्च सम्मेलन के वास्ते तीन हज़ार की रकम पेश की है, जो आजकल में आपको पहुंच जावेगी। और छः सौ रुपयों के करीब प्रेमी गिरधारी लाल व दीनानाथ जी महंगी भी अपनी सेवा सम्मेलन के करीबन ही रवाना कर देवेंगे। यह कुल रकम पांच हज़ार रुपयों से कुछ ज़्यादा हो जावेगी। इसको संभल कर खर्च करना। जितनी भी बचत होवे करें। यह फ़कीरों का तप नाश करके रकम मयुस्सर की हुई समझें और सम्मेलन का हिसाब अलैहदा रखना।

2. जिन्स की फहरिस्त साथ रवाना की जाती है और बर्तनों की फहरिस्त रवाना की जाती है। जो आप खरीद लेवें और ज़्यादा ज़रूरत हुई तो शहर से इमदाद हासिल कर लेनी।

3. माताओं की रिहायश का इंतजाम जो तुमने विचार ज़ाहिर किया है दूसरे खेत की बजाए आश्रम के साथ ही बाहर नलका और गुसलखाना बनाया जावे तो अच्छा है और हिफ़ाज़त भी हो सकेगी। गुसलखाने में तो नलका हर जगह महफूज़ रह सकता है सिर्फ़ विचार यह है कि आश्रम की हदूद आज़ाद रहनी चाहिए। किसी किस्म की अन्दर या बाहर गड़बड़ न होवे। इस हालत का विचार कर लेवें और नलका व छोटा गुसलखाना, जिसमें सिर्फ पांच सौ रुपये के करीब खर्च होवे, दूसरे खेत के कोने में तैयार करवा लेवें और माताओं के वास्ते वहां ही तम्बू लगवा देवें। इसके मुतालिक राम स्वरूप व गोपी चन्द से भी मशविरा कर लेवें। फिर पता देना कि क्या तजवीज़ इख़्तियार की है? सिर्फ़ तम्बू और चांदनी किराये पर लानी होगी। इसकी तहदाद लिख दी गई है। तकरीबन यह सभी काम इस रकम में अच्छी तरह सर–अंजाम हो जावेगा। प्रभु सहायक हों।

4. प्रेमियों के स्नान के बारे में बरतपाल का कुआँ ठीक है। दो दिन उसको चला लेना। राम स्वरूप को वाजया कर देवें और कोई साथ कुआँ रहट होवे तो उसको भी इस तारीख़ के वास्ते अर्ज़ कर देवें कि घंटा दो घंटे पानी की सेवा कर देवे। आगे जो ईश्वर आज्ञा। आइंदा अपना मुकम्मल इंतज़ाम कर लेना।

5. लंगर के इंतज़ाम का विचार यह है कि यह नई जगह है। इस जगह के रस्म व रिवाज़ का कुछ पता नहीं। ख़ैर 13 कार्तिक को सत्संग के बाद कड़ाह–प्रशाद हाजिर संगत को तक्सीम कर दिया जावे और उसके बाद में भोजन खाना चाहे तो बैठे वरना सबको जाने की आज्ञा हो जावेगी। ख़ास जगाधरी के प्रेमी मय–परिवारों के और बाहर की संगत उस जगह भोजन पायें और कोई ग़रीब–अनाथ होवे तो वह भी भोजन पाये। इस विचार के मुताबिक जिन्स का प्रोग्राम लिखा गया है और तुम भी राम स्वरूप से विचार कर लेना, अगर कोई तबदीली करनी हुई तो पहले विचार कर लेवें।

ख़ास नोट : शहर में ज़्यादा प्रोपेगंडा (प्रचार) सत्संग सम्मेलन का नहीं करना। अगर कोई पूछे तो यह कह सकते हो कि फ़लां तारीख को सत्संग होगा। यज्ञ वग़ैरा का नाम तक न लेना। उसमें ब्राह्मण लोग हवन वग़ैरा की अड़चन पैदा कर देंगे। सिर्फ़ सत्संग सम्मेलन ही ज़ाहिर करना। तकरीबन 25 तारीख (27 आसौज) तक दीनानाथ जी व एक प्रेमी और सेवा के वास्ते जगाधरी पहुंच जावेंगे। नलके को पहले बनवा लेना और सेवादार तकरीबन चार दिन पहले आवें और बाहर की संगत एक दिन पहले आवे। ईश्वर आज्ञा हुई और शारीरिक अवस्था ठीक रही तो पहले हफ़्ते शायद जगाधरी पहुंच जावेंगे। इसके अलावा आम ब्राह्मण बिरादरी को मुतला करने की ज़रूरत नहीं है। सिर्फ़ प्रेमियों को ही इतलाह दी जावेगी।

6. फ़हरिस्त में मिर्च, मसाला, सब्जी, तरकारी जो दर्ज़ हैं, बनारसी दास के कहने पर खरीद लेनी और इंतज़ाम के मुतालिक उस जगह पहुंचने पर विचार कर लेना।

7. ख़ास काम यह है कि जिन्स की खरीद करनी व बर्तनों की खरीद करनी। बर्तनों की खरीद के लिए गोकुल चंद को साथ रखें। उसको वाकफ़ियत होवेगी। नलका व छोटा गुसलखाना तैयार करवाना। तम्बू, चांदनी चार पांच दिन पहले लगवानी होवेगी। सिर्फ़ आगे इन्तज़ाम कर रखना।

सिर्फ़ जो-जो सेवादार निग़ाह में होवें उनको पहले हाज़िरी के लिए लिख देना और पत्रिकायें तमाम जगह इधर से लिख दी जावेंगी। सम्मेलन का सब इन्तज़ाम तुम्हारे हाथ में है। जिसको साथ इमदादी रखना हो उसको पहले बुलवा लेना। जब सम्मेलन का सब काम अपने हाथ से करोगे तो जिन्स वग़ैरा का भी पता लग जावेगा। आइंदा को इधर बोझ डालने की ज़रूरत न रहेगी। प्रभु, संगत को सही समता अनुयाई भावना देवें। (अज श्रीनगर।)

19. सन्तों की बुझारतें

एक दिन आप अपनी आनन्दित अवस्था में विराजमान थे। आपके अन्दर से वाणी का प्रवाह उमड़ रहा था। उनमें से कुछ दोहे नीचे दर्ज़ किये जा रहे हैं।

अन्तर नाम अराधया, सतगुर सिख्या धार।
'मंगत' गुर उपकार से, घर पायो दरस मुरार॥
निमख-निमख अराधिये, एको नाम भगवन्त।
'मंगत' भरमन सब मिटे, घर परसें शक्त अनन्त॥

पास बैठे प्रेमी ने पूछा, ''आपने कई शब्दों में 'चार, अठारह, सात, नौ पढ़ थाके, नेति-नेति कर जापे'। कई जगह ग्रन्थों में बावन अक्षर, चार, पांच, आठ, सोलह और बहत्तर आए हुए हैं। इनका असल मतलब क्या है?

श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी! यह बुझारतें ही संतों का खज़ाना हैं। समझने वाले इशारों-इशारों में सारा हिसाब समझ जाते हैं। चार वेद, अठारह पुराण, नौ स्मृति, किसी ने आठ तत्त्व की प्रकृति बताई है। किसी ने पच्चीस, किसी ने तीस की, किसी ने बावन तत्त्व की। किसी ने बहत्तर तत्त्व माने हैं। बावन तो अक्षर कहे गये हैं। कई अक्षरों के फेर में पड़े हैं। कई तत्त्वों के फेर में हैं। आत्मा को कुछ न करने वाला बनाकर प्रकृति में सब कुछ हो रहा है। कई पाप-पुण्य इन्हें कह कर विकारों से निर्विकार होना नहीं चाहते। वैसे ही ब्रह्म बने फिरते हैं। ''सर्व खल्विदं ब्रह्म'' कहना कुछ मायने नहीं रखता। इसमें कोई शक नहीं, सारा संसार ब्रह्म का ही स्वरूप है। मगर बग़ैर सत् तत्त्व के जाने इस आवागवन के चक्कर से ख़ुलासी होनी मुश्किल है। सूली पर कौन चढ़े? यह भक्ति मार्ग ही आशिकों का रास्ता है। जीते जी सब विषयों से उपरस हो जाना किसी विरले सूरमे का काम है। इस तरह अपनी कल्याण के लिए जो पूछना हो पूछ लिया करो। प्रेमी ने फिर पूछा:-

प्रश्न :- महाराज जी! आपने फरमाया हुआ है शरीर के अन्दर दस तरह की प्राण वायु है। प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान, नाग, कूरम, देवदत्त और धनंजय पवनों के नाम हैं। इनको किस तरह अलग-अलग समझा जाए?

उत्तर :- श्री महाराज जी ने फरमाया:- इन झमेलों में पड़कर तुमको क्या लेना है? मोटी बात याद रखो, 'सत् करतार, झूठ संसार'। जो साधना बताई गई है प्राण-अपान द्वारा उसमें सुरति को लगाकर नाम सिमरण करते जाओ। समय पर जाकर सारा रास्ता खुल जावेगा।

इस दौरान पंडित माया राम आ गया। प्रणाम करके बैठने पर श्री महाराज जी ने पूछा:- ''प्रेमी! तुम इस वक्त कैसे आए?'' प्रेमी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! आज समय मिल गया और आ गया हूं। अर्ज़ यह है कि सेवक को भी चरणों में रहकर सेवा का मौका बख्शें। मैं संसारियों की नौकरी नहीं करना चाहता।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी! डाक्टर से पूछ लो। मंहगी जी यह न कहें कि हमारा काम करने वाला आदमी ले गए हैं। उधर से फ़रागत पा लो, फिर इधर से चलेंगे, साथ चले चलना। जम्मू या पठानकोट से जगाधरी चले जाना। अभी कुछ दिन इधर ही हैं। उधर ठहर कर जितनी हो सेवा करना।''

प्रेमी ऐसी आज्ञा सुनकर बहुत खुश हुआ और शहर वापिस चला गया।

20. आश्रम की बनवाई वग़ैरा के बारे में विचार

उसके जाने के बाद श्री महाराज जी ने पूछा:- ''कच्चे इरादे का तो प्रेमी नहीं?'' भक्त जी ने अर्ज़ की:- अभी तो पक्के इरादे का मालूम हो रहा है, बाद की ईश्वर जानें। आश्रम में भी एक दो प्रेमियों की ज़रूरत है। जब शाम हो गई आसन अन्दर ले जाया गया। थोड़ी देर बाद प्रेमी दीनानाथ जी मंहगी अपने प्रोग्राम के मुताबिक डाक अख़बार लेकर पधारे। डाक में बाबू अमोलक राम का पत्र था, उसमें नक्शा भी था। आश्रम की ज़मीन किस तरह की है, कहां-कहां कमरे बनवाये हैं, कहां कुआं लगवाया है और पम्प किस जगह लगवाया गया है, चार दीवारी का निशान व पौधों वग़ैरा के निशान दे रखे थे। श्री महाराज जी ने देखकर फरमाया:- ''बड़ा पसारा पसार लिया है। बेचारे बाबू को बड़ी जानफ़शानी (जान देकर मेहनत) करनी पड़ रही है। संगत का बड़ा सरमाया खर्च हुआ है। अच्छा, प्रेमी बैठेंगे, सुख पावेंगे। नक्शे में चार दीवारी से बाहर एक कोने में दो बीघे का टुकड़ा खाली दिखाया गया है। फिलहाल लंगर रसोई वग़ैरा का बाग के अन्दर एक कमरे के पीछे इन्तज़ाम रखा जावेगा।'' बातें करते काफी रात गुज़र गई। आपने सोने की आज्ञा फरमाई।

सत्पुरुष रात को एक बजे बाहर चले गए। वापसी पर आपने भक्त जी को फरमाया:- ''प्रेमी! तेरी क्या मर्ज़ी है? लंगर का इंतज़ाम कहां पर रखा जाए? अभी तो दो कमरे ही बने हैं।

एक में आसन ज़रूरी है, दूसरे में आए गए प्रेमियों के वास्ते जगह होनी चाहिये। तम्बू इतने दिन पहले तो नहीं आ जावेंगे। तुम्हारी क्या राय है?''

भक्त जी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! नक्शे में चार दीवारी से बाहर जो खाली टुकड़े का निशान बनाया हुआ है वहां पर अलग भंडार घर बनना चाहिये। बाग के अन्दर लंगर का कमरा नहीं होना चाहिये। खाना बनाने और खाने का शोर एक तरफ होना चाहिए।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''अब और नया स्वांग खड़ा करवाने लगे हो।'' भक्त जी के मुंह से निकल गया, ''सानूं की, जिस तरह मर्ज़ी हो कराओ।''

श्री महाराज जी नाराज़ होने लगे, ''तुमको क्यों नहीं, और किसको है? बेईमान, यह स्वांग खड़ा करवाकर अब भागना चाहता है। अच्छी-बुरी हर तरह की बात के तुम जिम्मेवार हो। तुम प्रेमियों के वास्ते यह जगह बनी है। तुम लोगों ने सोचना है कि किस तरह बेहतरी हो। हर घड़ी, हर समय, जब-तक शरीर है, तुम जिम्मेवार हो। तुम जो चाहो वह ही हो सकता है। बला छुड़ाने वाली बात मत करो। अब घानी में पेड़े जाओगे। सब आने वाली संगत का तुमने ख़्याल रखना है।''

भक्त जी साथ चलते हुए खामोशी से सुनते रहे। जब कुटिया के पास पहुंचे फरमाया:- ''कुछ बात मगज़ में बैठी है या नहीं। अब क्या हो सकता है? वहां चलकर बाबू से विचार कर लेना।'' फिर प्रेम से फरमाया:- ''जिस तरह से कहोगे वैसा ही बन जावेगा। तजवीज़ तो ठीक ही नज़र आती है। बेलाग मत बनो।'' भक्त जी ने माफ़ी मांगी। इस पर आपने फरमाया:- ''इधर से नाराज थोड़े हैं। तुम्हारी बुद्धि देखी जाती है। आइंदा ऐसा वचन मुंह से मत निकाला करो। ज़रा सोच कर आगे से वचन बोला करो होश होनी चाहिये।''

21. सालाना सम्मेलन की तारीखें निश्चित की गईं

जब स्नान करने के बाद दूध ले चुके तो आपने पूछा:- ''अब सत्संग सम्मेलन के बारे में तुम्हारा क्या विचार है? जगह-ब-जगह से प्रेमी पूछ रहे हैं। सबकी निग़ाह नये आश्रम की तरफ लगी हुई है।'' डायरी निकाल कर तारीख देखी गई। 28-29 अक्तूबर, 1950 कार्तिक का दूसरा इतवार निश्चित करके महाराज जी ने फरमाया:- ''सब प्रेमियों को आहिस्ता-आहिस्ता पत्र डाल दो। ईश्वर ही करन-करावनहार हैं। बाबू को भी अच्छी तरह पता लिख दो। सामान एकत्र करने के लिए जगाधरी के प्रेमियों को साथ ले लेवे। इधर से 18 सितम्बर को चल देना चाहिए। कुछ दिन रास्ते में लग जावेंगे। एक दो अक्तूबर तक जगाधरी पहुंच जाना चाहिए। इस इतवार को प्रेमी जब आवें तो उनको भी प्रोग्राम सुना देना।''

27 अगस्त को इतवार था। प्रेमी सत्संग अमृत वर्षा का लाभ उठाने के लिए जल्दी ही आने शुरू हो गए। अब इस जगह भी मौसम तबदील हो गया था। काफी गर्मी महसूस दिन को होती। आज्ञा अनुसार पूरे चार बजे सत्संग महामंत्र, मंगलाचरण उच्चारण करके आरम्भ किया गया। 'समता सार योग' से शब्द पढ़े गए। उसके बाद श्री महाराज जी ने निम्नलिखित अमृत वर्षा फरमाई:

22. सत् उपदेश अमृत

शरीर रूपी संसार को धारण करके जीव नाम, रूप, गुण, कर्म के जाल में गिरफ़्तार हो गया है और छिनकारक सुखों को ही सब कुछ समझ बैठा है। मगर कोट जन्म धारण करके भी जीव की लालसा ख़त्म नहीं होती। अगर कोई ऐसा समझता है कि भोगों को भोगते-भोगते तृप्ति या शांति आ जावेगी तो यह नामुमकिन है। दृष्टि में जिस कदर साज़ व सामान नज़र आ रहे हैं, हर घड़ी, हर पलक यह बदल रहे हैं। इनको देखकर जीव ऐसा मोहित हो जाता है कि किसी समय भी उनकी याद चित्त से नहीं भूलता। स्त्री, पुत्र, कलत्र हो भी जावें, हर किस्म के पदार्थ भी मिल जावें, फिर भी उसे चैन नहीं मिलता और अगर न मिलें तो और ज़्यादा दु:खी होता है। जीव अपनी वासना में आप ही बंधा हुआ चला जा रहा है, सुख-शांति का कोई रास्ता उसे नज़र नहीं आता। ऐसे विचार में कि कल ऐसा हो जायेगा या फिर ऐसा कर लूंगा और जब ऐसा कर लूंगा तो पौ-बारह है। जन्म से लेकर आख़िरी घड़ी तक आस-आस में सब समय गुज़ार देता है। यह ही भरम अज्ञानता जन्म-जन्म तक ख़्वार करती रहती है।

संसार में आने वाले सत्पुरुष, गुरु, पीर, अवतार, पैग़म्बर, ऋषि, मुनि पुकार-पुकार के कह रहे हैं कि संसार में कोई सुख नहीं बल्कि प्रभु का नाम सर्व सुखों की खान है। मगर जीव को किसी की बात अच्छी नहीं लगती। बालक अवस्था खेल कूद में गुज़ारी, जवानी भोगों में और बाकी अवस्था कल्पते-कल्पते गुज़ार कर निराशा और प्यासा ही जीव सब कुछ छोड़कर चल देता है। जब-तक अंहकार मौज़ूद है, भोगों की तरफ दौड़ रहा है। जब-तक मन वासना के आधीन है तब-तक इसे न शुद्ध आहार व व्यौहार का पता है, न सत्संग की चाहना बनती है, न किसी गुरु, पीर, अवतार को अच्छा समझता है, न ही मरना उसे सूझता है। धन, धाम, परिवार को बढ़ाने की सोच पड़ी रहती है। यह ऐसी मीठी दलदल है कि जीव को सत् सोझी रहती ही नहीं। किसी विरले गुरमुख के अन्दर बुद्धि प्रकाश करे तो संसार को झूठ, असत् और दु:ख रूप समझकर इससे छूटने का रास्ता ढूढंता है।

उस सुख के माथे सिल पड़े, जो नाम ह्रदय से जाए।
बलहारी वा दु:ख की, जो पल-पल नाम जपाए॥
कबीर नाव है जरजरी, कूड़ा खोवन हार।
हर्वे-हर्वे तर गए, डूबे जिन सर भार॥
कबीरा नौबत अपनी, दस दिन लिया बजाए।
यह पुर पटन यह गली, बौहड़ न देखन आए॥
पांचो नौबत बाजती, होत छत्तीसों राग।
सो मन्दिर खाली पड़े, बैठन लागे काग॥
नित सत् साहब से प्रीत कर, दूजा भाव त्याग।
'मंगत' समां न पायेंगा, हर कीरत लाग॥

साचा भेद पहचान के, पावें शबद ध्यान।
'मंगत' महिमा पद निर्वान की, नित-नित करे बख़ान॥
सुन्दर जग को देख के, मत होईयो ग़लतान।
जो आया सो अन्त को, जावे छोड़ जहान॥
चार दिन है जीवना, ओढ़क जाये पांव पसार।
'मंगत' नित ही पावें जीत को, जो सिमरन करे करतार॥

ज़िन्दगी में ज़िन्दगी की पहचान करो। संसार में जितने भी सम्बन्धी सुख पहुंचाने वाले समझते हो वे सबके सब स्वार्थी हैं और जीव को अंधकार में डालने वाले हैं। केवल एक ईश्वर और सत्गुरु ही जीव के परम रक्षक हैं। भूलकर शारीरिक सुखों को जीव ने आनन्ददायक समझा हुआ है। ख़्वाहम-ख़्वाह "मैं-मेरी" में फंसा हुआ वासना को पूर्ण करने में लगा हुआ है, जिससे बन्धन-दर-बन्धन में फंस रहा है। इस अंधकार से छूटने के वास्ते इख़लाकी सुधार की ज़रूरत है, यानि सदाचारी जीवन बनावे। सदाचारी जीवन बनाने के लिए गुज़रान वाला जीवन बनावे। सत्संग, सेवा, सत् सिमरण, अभ्यास में दृढ़ता धारण करे। बार-बार बुद्धि को शारीरिक सुखों से हटाकर आत्म-सुख की तरफ ले जाए। नाम-सिमरण में दृढ़ता से लग जाने से और शारीरिक सुखों के त्याग से ही ईश्वरीय प्रेम बढ़ता है। सांसारिक वासना मन में न पैदा होने दे। मन, वचन, कर्म द्वारा दूसरों का भला चाहने से अन्तर आत्मा में प्रेम पैदा होता है। सब सुख ईश्वर आज्ञा में जानें। सत् सेवा और सत् सिमरण धारण करोगे तब कल्याण होगा। सत् साधन से ज्यों-ज्यों तृष्णा घटती जावेगी, त्यों-त्यों कदम सत्मार्ग में बढ़ता जावेगा। निष्काम सेवा और सत् सिमरण ही निर्भय अवस्था की तरफ ले जाने वाले हैं। गर्ज़ वाली सेवा ईश्वर परायण नहीं होने देती बल्कि उल्टा बंधन में डाल देती है। ईश्वर सबको सुमति देवें। गुरमुख प्रेमी नित ही अपने आपको दुःख में रखते हुए अपने सुख आराम दूसरों में तक्सीम करते हैं और अन्तर विखे प्रभु सिमरण में लीन रहते हैं। धन्य ऐसे जीव हैं। प्रभु कृपा करें।

इसके बाद 'आनन्द सार प्रसंग' से दोहे पढ़े गए। उसके बाद आरती और समता-मंगल उच्चारण किया गया, फिर प्रशाद बांटा गया और सत्संग समाप्त हुआ।

23. श्रीनगर से रवानगी का प्रोग्राम

इसके बाद प्रेमियों को वहां से जाने का प्रोग्राम सुनाया गया कि 14 सितम्बर, 1950 को चलने का प्रोग्राम है। प्रेमियों ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! आपने संगत पर बड़ी कृपा की है। 1947 अक्तूबर के बाद फिर दया दृष्टि फरमाई है। कई प्रेमी तो आपके दर्शन कर लेते होंगे। सन्त-जन भी तीर्थ होते हैं। जगह-जगह दीन, अनाथों पर कृपा करते रहते हैं।"

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''प्रेमियों! फ़कीर भी मजबूर हैं। उस मलिक का हुक्म बजाना है। **''नथ ख़सम हथ'', ''ज्यों–ज्यों आज्ञा, त्यों–त्यों कार''**। जिसको कोई अच्छी बात लगी होवे उसे दिल में जगह देना। इस तरह संतों के वचनों को सुनने के लिए समय देते रहा करो। ऐसा समय ही दुर्लभ जानना चाहिये। प्रेमियों, अब बहुत देर हो गई है। जाओ, आराम करो।''

प्रेमी माया राम से श्री महाराज जी ने पूछाः– ''प्रेमी! क्या सोचा है? फिर सुन लो, इनको तेरी सेवा की ज़रूरत नहीं। जिसमें अपनी बेहतरी समझो, प्रोग्राम बना लो। दूसरे इधर बग़ैर लालच के समय देना पड़ेगा। गुरु लंगर से जो मिलेगा उसमें समय पास करना होगा।''

इस पर माया राम ने अर्ज़ कीः– महाराज जी! ऐसा ही होगा, और तसल्ली दी। फिर अर्ज़ कीः– महाराज जी! कल्याण तो अपनी करनी है। असली मेरे रक्षक तो आप ही हैं। डाक्टर जी ने कह दिया है। वह भी इस में खुश हैं, सब राजी हैं।

श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''अभी दिन काफी हैं, फिर सोच लो। जब इधर से चलना होगा साथ चले चलना। बच्चू, भाग्य से सेवा का मौका मिलता है। सेवा करो भी कराओ भी।''

''कबीर गृही का टुकड़ा, दो–दो अंगल दांत।
भजन करे ते उभरे, न तो काढ़े आंत॥''

''सत् सिमरण और सत् सेवा द्वारा संगत का बोझ उतरता है। आलसी न बनना। ब्राह्मणों का काम है सेवा करनी और करानी। अब जाओ, देर हो गई है। पंडित माया राम ने अर्ज़ कीः– ''महाराज जी! रात इधर ही ठहरना है, सुबह जाऊंगा।''

प्रश्नः– योग वशिष्ठ में आया हुआ है कि वशिष्ठ जी ने राम जी से भविष्यवाणी की फलां समय में एक देह से तो विष्णु भगवान वासुदेव के गृह में पुत्र रूप कृष्ण नाम से होंगे और दूसरी देह से पांडव के गृह में अर्जुन नाम से युधिष्ठिर नामक धर्म पुत्र के भाई होंगे। कृष्ण, अर्जुन को युद्ध भूमि में गीता का उपदेश करेंगे, जैसे वहां दिया हुआ है। क्या महापुरुष ऐसे भविष्यवाणियां करते हैं?

इस पर आपने फरमायाः– इस विचार पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि यह रोचक विचार हैं और बाद में दर्ज़ किए गए हैं। क्योंकि आत्मदर्शी पुरुष हर एक देश में होते आए हैं, मसलन– ईसा, मूसा, इब्राहीम, बुद्ध, महाबीर वग़ैरा और भी कई हुए हैं और होवेंगे, उनके मुतालिक कोई पेशगोई नहीं की गई। उन्होंने क्या थोड़ी कुर्बानी पेश की है? क्या आत्मदर्शी की सत्ता केवल भारत देश में ही अनुभव की गई है और देशों में जो आत्मदर्शी हुए हैं उनके मुतालिक कोई विचार नहीं है। यह सिर्फ़ बाद के आचार्यों ने राम, कृष्ण के ताईं श्रद्धा बढ़ाने के वास्ते तहरीर किए हैं। आत्म–ज्ञान में न कोई देश है न कोई काल है, न कोई और स्थूल प्रकृति का लिबास है। वह सत्ता निराकार स्वरूप सर्वज्ञ है। उसमें न कुछ हुआ है, न कुछ होगा। यह स्थूल प्रकृति महज़ तीन गुणों का

अचम्भा है। आत्मदर्शी पुरुष इसके मुतालिक कुछ नहीं कहते हैं। गुणों में गुण बरतते हुए अनन्त प्रकार की सृष्टि का स्वरूप उत्पत–परलय होता रहता है। इसके मुतालिक यथार्थ और मुकम्मल कोई कुछ नहीं कह सकता है। सिर्फ गुणों के चक्कर का अंदाजा ही लगाकर कोई कुछ कहे तो कह सकता है। वह बात मुकम्मल दुरुस्त हो या अधूरी हो, अच्छी तरह से विचार कर लेवें। आइंदा ऐसे विचार अपनी डायरी में नोट कर लिया करें। जब हाज़िर होने का मौका मिले उत्तर पूछ लिया करें।

कुछ अमृत वचन जो श्रीनगर में एकांत निवास के दौरान आपने उच्चारण फरमाने की कृपा की, वह नीचे दर्ज़ किये जा रहे हैं।

24. अमृत वचन

1. संसार की गर्दिश को सही विचार करके हर वक्त अपने आपको निर्मल शांति के मार्ग पर दृढ़ करना चाहिये और इस नाशवान शरीर की यात्रा में निहायत उच्च कर्तव्य का पालन करके अपने जीवन को प्रकाशमई बनाना चाहिए। यह ही मानुष जन्म का परम लाभ है। ईश्वर नित ही सत्–परायणता में दृढ़ विश्वास देवें। जीवन की निर्मल सार यह है कि समता के सही अनुयाई बनकर अपने आपकी पहले रहनुमाई करनी, फिर दूसरों की कामयाबी में यत्न करना। यह ही परम कर्तव्य है। ईश्वर ऐसा ही दृढ़ पुरुषार्थ देवें।

2. सत् परायणता को छोड़कर केवल असत् परायण होना यानि पूर्ण निश्चय से भोगमई जीवन की ही स्थिति धारण करनी, उसका नतीजा यह ही होता है कि अधिक वासना के जाल को फैलाकर नाना प्रकार के सुख भोग प्राप्त करके भी मानसिक शांति प्रतीत नहीं होती है। जैसा कि आजकल समय का चक्कर चल रहा है। न राजा को शांति न प्रजा को, बल्कि दिन–ब–दिन अपने अधिक लालच के फैलाव में आकर तकरीबन हर एक मानुष एक दूसरे का बाधक हो रहा है। ऐसे भयानक समय का विचार करके गुणी पुरुषों का फ़र्ज़ है कि अपने मानसिक भाव को सत् परायणता में पूर्ण दृढ़ करने का यत्न करें। यानि अपने बढ़ते हुए लालच को त्याग करके जीवन धारा की मुनासबत को धारण करें। मन, वचन, कर्म द्वारा सब जीवों की कल्याण का निश्चय दृढ़ करें। तब ही सत् भावना की दृढ़ता से मानसिक शांति प्राप्त हो सकती है, जो कि हर एक जीव की अन्दरुनी चाहना है और ऐसा यत्न ही मानुष जीवन का परम कर्तव्य है।

अति भय से ही मन सत्–परायण होता है। इस वास्ते मौत का भय, गुरु का भय या ईश्वर का भय मानुष के वास्ते होना लाज़मी है। ऐसे भय की दृढ़ता से भाव पैदा होता है, यानि अपनी जीवन उन्नति का विचार प्रगट होता है और भाव से भक्ति, भक्ति से निर्मल प्रेम प्राप्त होता है। यह ही दृढ़ता मानसिक शांति के देने वाली है, ऐसा निश्चय होना चाहिये। इसके उलट जिसका मन अति मद को धारण किए हुए रहता है और विकारों से डरता बिल्कुल नहीं है उतना ही वह मानुष दुराचारी और पतित कर्मों में अपने आपको नित ही जलाता रहता है और परम दुःखी रहता है। ऐसा

विचार हर वक्त हृदय में धारण करना चाहिए और एक प्रभु का भय चित्त में रखकर नित ही सत्-धर्म आप परायण होना चाहिये। यह ही पुरुषार्थ सत् शांति के देने वाला है। ईश्वर सत्बुद्धि देवें।

रात को एक बजे बाहर तशरीफ़ ले गए। जब शालीमार बाग से होकर गुज़र रहे थे पश्चिम की तरफ इशारा करते हुए फरमाने लगे:- "उस पार डल के किनारे हज़रत बल जगह है। बहुत सुन्दर स्थान है। उस जगह हज़रत मोहम्मद साहब के दो-चार बाल रखे हुए हैं।"

भक्त जी ने पूछा:- "महाराज जी! इन मुसलमानों में तो बुत-परस्ती मना है। बालों को रखकर क्या करते हैं?"

फरमाने लगे:- "जो बीमारियां तोहमात परस्ती वग़ैरा हिन्दुओं में हैं वह मुसलमानों में भी हैं। हिन्दू समाधियों की प्रदक्षिणा करते हैं। यह कबरों पर जाकर दुआएं करते हैं, दीवे जलाते हैं। हिन्दू मढ़ी-मसानों को पूजते हैं। फ़र्क क्या है? नानक ने कहा है- "हिन्दू अन्धा, तुरको काना"। सारी बात कोई आरिफ़ ही जानते हैं। मोहम्मद की तालीम ख़ुदा-परस्ती केवल एक ईश्वर की याद और ख़लकत की ख़िदमत बतलाती है। आप पूरा आरिफ़ हुआ है। पूर्व-पश्चिम तक जिधर चले जाओ एक ही असूल उठने-बैठने का पाओगे। बाद में स्वार्थी लोग कई मनमाने तरीके कायम कर लेते हैं। तालीम हमेशा सिद्क दिली से फैलती है। विश्वास, यकीन वाले लोगों के नक्शे-कदम पर चलने से दूसरे लोग सबक हासिल करते हैं। समय-समय पर कोई न कोई महापुरुष धरती पर आते रहते हैं। नए रूप में कुदरती तालीम प्रगट कर जाते हैं। ख़लकत फ़कीरों को नहीं बनाती, फ़कीर ही जनता को सुधार का रास्ता बतलाते आए हैं। समता अभी तो नई तालीम के रूप में मालूम होती है। जिस समय अच्छी तरह सोटा चलेगा, कत्ल व ग़ारत के बाद जब दुनिया ठंडी हो जाती है, तब फ़कीरों को ढूँढ़ते हैं, ग्रन्थों को फरोलते हैं। महात्मा लोग लिख गए हैं- उस समय संतों के वचन चित्त को ठंडा करते हैं। तब गाते हैं:-

"धन बाबा नानक, जिस जग तारया"

जब मौज़ूद थे कुराहया करके पुकारते थे। कश्मीर की धरती ऐसी मोहनी रूप है, हज़ारों दफा कुशतो खून करवा चुकी है। दुनिया वाले अपने रंग पर चलते रहेंगे। फ़कीर, महात्मा अपना-अपना काम करके चले जाते हैं। उनके नाम लेवा उनको बहुत याद करते हैं। डंडे मार राजाओं को कौन याद करता है। जिस जगह जाओ, वहां देखभाल करके पिछली तारीख से सबक हासिल करना चाहिए।

स्नान करवाने के बाद जब दूध पिलाया गया आसमान पर काले बादल जमा होने शुरू हो गए और ठंडी हवा चलने लगी। श्री महाराज जी ने फरमाया:- "आसन अन्दर ले चलो। आज बाहर बैठने का समय नहीं।" दिन के दो बजे के करीब प्रेमी गिरधारी लाल और डाक्टर मोहन लाल श्री महाराज जी की सेवा में पधारे। नमस्कार करके बैठे ही थे कि तूफान शुरू हो गया। साथ ही बारिश इस कदर तेज बरसी कि आनन-फानन जल-थल हो गया। डाक्टर मोहन लाल ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! आपने बड़ी कृपा की है कि रास्ते में तूफान नहीं आया और बारिश शुरू नहीं हुई।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– प्रेमियों! ''तुम्हारी इन्तज़ारी कर रही थी। धरती भी बड़ी प्यासी है। यह रब्ब की मेहर समझो।'' थोड़ी देर बाद तूफान व बारिश थम गए। खिड़की खोलकर बाहर देखा तो बाहर खेतों में पानी नज़र आया। सांप पानी में तैरते हुए नज़र आ रहे थे। श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''सब जीवों को पानी की ज़रूरत थी। कुदरती हवा, पानी हासिल करके सबको खुशी होती है।'' चूंकि सर्दी हो गई थी आपने भक्त जी को फरमाया:– प्रेमियों को चाय पिलाओ।

जब चाय तैयार करके लाई गई तो प्रेमियों ने अर्ज़ की:– ''महाराज जी! थोड़ी आप भी लेने की कृपा करें।'' आपने फरमाया:– ''प्रेमियों! इस नामुराद को आप इनके सामने न लावें। इसने थोड़ा दु:ख दिखाया है। किस कदर सब प्रेमियों को भी इसने परेशान किया है। पहले इन्होंने भी समझा था माफिक बैठ रही है। इसलिए आप ही पियो, इन्होंने ऐसा समझ लिया है कि चाय पीने का नतीजा आख़िकार ग़लत निकला है। उस वक्त लोग क्या करते होंगे जब यह नहीं थी? सौंफ, इलायची, सौंठ उबालकर वक्त निकाल लेते थे। उस वक्त उन लोगों की सेहतें बहुत अच्छी थीं। बहुत चाय पीने वाला पाव दूध हज़म नहीं कर सकता, जुलाब लग जाते हैं।''

डाक्टर मोहन लाल ने झट कहा:– महाराज जी! मैं एक तोला दूध नहीं ले सकता।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– ''भक्ष–अभक्ष, ठंडी–गर्म चीजें ग्रहण करने वालों के वास्ते अच्छी हैं। मगर सिर्फ़ चाय लेना बहुत नुकसानदेय है। इस शरीर के साथ बीत चुकी है। चर्बी को कमज़ोर कर देती है।''

बातें करते हुए काफी वक्त गुज़र गया। प्रेमी मोहन लाल ने अर्ज़ की:– सेवक पर भी कृपा करें।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी! इधर किस वास्ते आये हुए हैं। इन्होंने समझा था शायद पूर्ण हो चुके हो। तुम लोगों के भले के लिए इधर आना हुआ है। डरो मत।'' प्रेमी समय लेकर विदा हुए।

12 सितम्बर, 1950 के बाद काली–काली घटायें जमा होने लगीं। बारिश शुरू हो गई। दिन–रात बारिश बरसती रहती, इसलिए रात को बाहर जाने का प्रोग्राम खत्म हो गया। प्रेमियों का आना–जाना भी बन्द हो गया। छ: सात रोज़ प्रेमी दीनानाथ जी मंहगी भी नहीं आ सके। डल झील में पानी दिन–ब–दिन बढ़ता जा रहा था। इन दिनों में गांव से जो भी मुसलमान प्रेमी आता अर्ज़ करता:– ''पीर जी! दुआ करो। खुदाई, कहर–नाज़ल हो रहा है। हज़रत–नूह का तूफान आ रहा है। ख़ुदा मेहर करे। सब धान की फसल तबाह हो जायेगी। ग़रीब मार हो रही है।'' करीबन सारे भारत वर्ष में खूब बारिश हो रही थी। सात–आठ दिन के बाद प्रेमी दीनानाथ जी मंहगी दिन के समय पधारे। प्रणाम करके बैठे और अर्ज़ की:– ''महाराज जी! बड़ी कोशिश की गई आने की, कोई साधन नहीं मिला। ख़्याल इधर ही लगा रहा। इस दौरान जो भी तकलीफ़ हुई सो माफ करें। बहुत

मजबूरी थी। मिलिट्री वालों का बहुत नुकसान हुआ है। ग़रीबों के बहुत मकान गिर गए हैं। बहुत तबाही हुई है। जाने वाली काफी दुनिया रुकी हुई है। न बस मिलती है, न हवाई जहाज। अब कुछ दिन इन्तज़ार करना पड़ेगा। रास्ता खुलने पर ही रवानगी हो सकेगी।''

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''इधर तो सब सामान खाने का पड़ा हुआ था। तुम्हारी तरफ से कोई कमी नहीं रखी गई थी। इन बेचारे गांव वाले गरीबों का बहुत बुरा हाल हुआ है। ईश्वर ही कृपा करें तो इनका कुछ वक्त गुज़र सकता है।''

इन दिनों में श्री महाराज जी बाहर तो तशरीफ़ नहीं ले जा सकते थे, बरामदे में ही टहल लिया करते थे। सर्दी बहुत हो जाने की वज़ह से श्री महाराज जी से कुर्ते के नीचे स्वेटर पहनने की प्रार्थना की। बड़ी मिन्नतें करने के बाद आपने पहन तो लिया मगर रात को तीन बजे भक्त जी को आवाज़ दी– ''बनारसी–बनारसी उठो।'' और फरमायाः– ''पहले इसे उतारो, जिस तरह डाला है। निकम्मी ज़हमत है। इतने तंग कपड़े किस तरह पहनते हो। कितना वक्त ज़ाया किया है, जो कुछ किसी ने कहा गले में डाल लिया। बेचारे कश्मीरियों ने कब स्वेटर पहन रखे हैं। खुला कुर्ता ऊपर लोई, आराम देह लिबास है। तंग कपड़े कभी भी प्रयोग नहीं करने चाहिए। एक तो फटते जल्दी हैं, दूसरे उठते–बैठते, लेटते और सांस लेने में तकलीफ़ होती है। ऐसा कपड़ा पहनो जो कुदरती हवा जिस्म से गुज़रती रहे। इसे ले जाओ, तुम्हारी खुशी पूरी हो गई।''

बाबू अमोलक राम जी के पत्र के जवाब में, चौकीदार रखने की इजाज़त दी जावे, जो पत्र लिखवाया गया वह नीचे दिया जा रहा है।

चौकीदार के बारे में आप मुनासिब विचार कर लेवें। खर्च और प्रेमियों की सेवा का आपको पता ही है। मजबूरी में थोड़ी तनख़्वाह पर अगर मिल सके तो मुनासिब विचार करके जैसा होवे अमल करें। अगर शेषराज कुछ इमदाद दे सके और उसकी इमदाद आपको दरकार हो तो उसको अपने साथ रखने की कोशिश करें। यह भी बड़े कल्याण का काम है। आगे उसकी मर्ज़ी। सब कारोबार की जिम्मेवारी आप पर है। जिस तरीके से करेंगे उसमें ज़रूरी गुंजाइश और सहूलियते होवेगी।

पहली अक्तूबर, 1950 को इतवार था। दो रोज़ से मौसम खुल गया था। मगर उस दिन सत्संग में शामिल होने के लिए थोड़े ही प्रेमी आए। महामंत्र व मंगलाचरण के बाद वाणी का पाठ करने के बाद जो सत् उपदेश श्री महाराज जी ने देने की कृपा फरमाई, वह निम्नलिखित हैः

25. सत् उपदेश अमृत

यह संसार एक इम्तिहान की जगह है। जो भी जीव शरीर रूपी संसार को धारण करके आया है कुदरत की तरफ से उन सबका इम्तिहान हो रहा है। ऋषि, मुनि, गुरु, पीर, पैग़म्बर, अवतारों को भी इस जगह आकर अच्छी तरह इम्तिहान देना पड़ा। दुनियादार लोग फ़कीरों का अच्छी तरह इम्तिहान लेते हैं। बर्दाश्त का मादा फ़कीरों के अन्दर इस कदर हुआ करता है कि लाख दुनियादार

तंग करें वली–अल्लाह फ़कीर उभरते नहीं, सहन करते हैं। एक दफ़ा दाता जी लाहौर वाले दरियाए रावी में किश्ती में सफर कर रहे थे। किसी मसख़रे ने मख़ौल से दाता जी के सिर पर जूते लगा दिये। वह ख़ामोश बैठे रहे। एकदम किश्ती भंवर में फंसकर डूबने लगी। दाता जी ने समाधि यानि मराकबा की हालत में बारगाहे इलाही में फरियाद की, ''इन्हें खत्म करने से बचाइये। नेक अमल यानि सत्‌बुद्धि का दान बख़्शें ताकि यह आपकी और आपके प्रेमियों की पहचान कर सकें। उस किश्ती में कुछ नेक और समझदार लोग भी थे। वह झट समझ गए कि फ़कीर के साथ जो मख़ौल किया गया है यह सब उसका नतीजा है कि ग़र्क होने लगे हैं। वे एकदम दाता जी के चरणों में गिर गए और अर्ज़ की:– ''बचाओ।'' दाता जी ने ऊपर इशारा करते हुए फरमाया:– ''उसकी दरगाह में फरयादी होवो।'' इतना कहना था कि झट किश्ती भंवर से निकल गई। गुरु अर्जुन देव लोहे के तवों पर बिठाए गए। ऊपर से गर्म रेत डाली जा रही थी। मियां मीर फ़कीर आज्ञा मांगता है, ''सच्चे बादशाह अगर आज्ञा हो तो दिल्ली और लाहौर की ईंट से ईंट बजा दी जावे।'' उन्होंने ऊपर इशारा करते हुए फरमाया:– ''तेरा भाना मीठा लागे।''

ईसा को सूली पर चढ़ाया गया तो उन्होंने भी फरमाया:– ''ऐ खुदा इनको बख़्श दें। यह नहीं जानते कि यह क्या कर रहे हैं?'' राजा हरीशचन्द्र ने इम्तिहान दिया। राजा मोरध्वज का इम्तिहान हुआ। अर्जुन का इम्तिहान कृष्ण जी ने लिया। राम, कृष्ण, अवतारों को भी बड़े–बड़े इम्तिहान देने पड़े। संसारियों के वास्ते भी छोटे–मोटे इम्तिहान आते हैं। बारिश सिर्फ छः सात दिन हुई। किसी प्रेमी का मुंह देखने में न आया। सब चढ़ा हुआ चांद देखने वाले हैं। ख़ैर इस जगह के प्रेमियों ने खाने का प्रबन्ध काफी कर रखा था। ख़ास जिम्मेदारी किसी पर न थी, मगर एक इन्सानी फ़र्ज़ के नाते तो देखना चाहिये। जंगल में पड़े हुए हैं, जाकर पूछ आवें कैसी गुजर रही है? हर एक प्रेमी का फ़र्ज़ है। सारा बोझ दो प्रेमियों पर ही डालकर सब सरदार बने हुए हैं। यह गुरु सेवा करवाने वाले नहीं हैं। संगत की ड्यूटी देने के वास्ते आए हैं। सुबह से रात के दस बजे तक प्रेमियों की इन्तज़ार में किल्ली की तरह बैठे रहते हैं। सब बाग की सैर करने वाले हैं। पकी–पकाई मिल जाए। ज़्यादा इस वास्ते कुछ नहीं कहते कि भाग ही न जाओ। यह ही बड़ा अच्छा किया जो पन्द्रह दिन के बाद आ गए हो।

द्वारका में जब कृष्ण और रुकमणि को रथ के आगे जोड़कर दुर्वासा ऋषि ने फिराया और जब आख़िरकार रथ से उतरे तो कृष्ण ने फिर हाथ जोड़ कर अर्ज़ की:– ''महाराज जी! कुछ और आज्ञा है?'' भगवान सेवा करके बने थे।

''उन्हां मंज़िल कब तय करनी, जिन्हां दा दिल धड़के''

गुरु शिष्यों का अच्छी तरह इम्तिहान लेकर पास बैठने देते थे आगे शिष्य गुरुओं को ढूंढ़ते–ढूंढ़ते जंगलों, पहाड़ों की ख़ाक छानकर सच्चाई पाते थे। आज गुरमुखों को फ़कीर ढूंढ़ रहे हैं। बड़ी श्रद्धा प्रेम है जो इतनी दूर से चलकर आए हो। प्रेमियों, अब और दो चार दिन इस जगह हैं, समय मिले तो आते रहना। अब जाओ, बहुत देर हो रही है।''

दो तीन प्रेमी बैठे रहे, बाकी सब प्रणाम करके विदा हुए। महाराज जी फरमाने लगेः– ''जल्दी से जल्दी इधर से जाने का प्रबन्ध करो। सालाना सम्मेलन में बहुत थोड़े दिन रह गए हैं। प्रेमी दीनानाथ जी अर्ज़ करने लगेः– ''महाराज जी! जहाज का बन्दोबस्त कर रहे हैं। सीट मिल गई तो जल्दी हो जायेगा, जैसा भी बन्दोबस्त हो सका, कल करके आवेंगे।'' प्रेमी गिरधारी लाल जी अर्ज़ करने लगेः– ''आपकी दृष्टि से बड़ा अच्छा समय निकल गया है। दासों पर इसी तरह मेहरबानी फरमाते रहें।'' फिर चरण दबाने लगे।

श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''प्रेमियों देर हो रही है। तुमने बहुत दूर जाना है। प्रणाम करके प्रेमी गिरधारी लाल जी, मोहन लाल जी और दीनानाथ जी सराफ़ विदा हुए। मंहगी जी से काफी देर तक विचार चलते रहे।

खाना वग़ैरा खाने के बाद मंहगी जी जब चरणों में बैठे तो अर्ज़ करने लगेः– ''महाराज जी! प्रभु की माया कैसी विचित्र है? आठ रोज़ लगातार बारिश होने से हाहाकार मच गई। अब ऐसा हो गया है जैसे बारिश हुई ही नहीं। किस कदर आसमान साफ है। रुके हुए मुसाफिरों के ख़र्चे ख़त्म हो गए हैं। बड़ी तंगी से वक्त गुज़ार रहे हैं।''

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''प्रेमी! साहब नूं कौन कहे यूं नहीं यूं कर''। बेशक उसकी रहमत–ज़हमत दिखाई देती है, उसमें भलाई कितनी भरी पड़ी है, उसको कौन जाने? प्रभु का हर काम निराला है, समझ से परे है। बग़ैर ज़रूरत के पत्ता भी नहीं हिलता। बहुती सोच में नहीं जाना चाहिये। 'झूठ संसार सत् करतार'। अब आराम करो। कल ज़रूर बन्दोबस्त पक्का करके आना। जहाज की ज़रूरत नहीं, बस आहिस्ता–आहिस्ता पहुंचा देगी।''

प्रणाम करके आराम किया गया। पूरे एक बजे उठकर श्री महाराज जी शालीमार की तरफ चल दिये। रास्ते में फरमाने लगे, ''चार रोज़ और तकलीफ़ कर लो। बारिश के दिनों में तुमने काफी आराम कर लिया है।'' सर्दी काफी थी। महाराज जी ने काली लोई अन्दर चादर लगाकर लपेट रखी थी। पूरी रफ़्तार से जा रहे थे। भक्त जी कभी तेज चलते, कभी दौड़ कर मिलते।

26. श्रीनगर से वापसी

सुबह बाहर से वापिस आकर जब स्नान करके धूप में बैठे, प्रेमी दीनानाथ जी मंहगी प्रणाम करके विदा हुए। श्री महाराज जी ने फिर कहाः– ज़रूर बस का इंतज़ाम करके आना। दूध पिलाकर जब बैठे तो श्री महाराज जी भक्त जी से पूछने लगेः– ''प्रेमी! तुमने कभी हिसाब किया है, कितना सफ़र रोज़ाना करते हो?'' भक्त जी ने अर्ज़ कीः– ''करीबन पौने आठ मील रोज़ाना चलते हैं। दो–चार रोज़ पहले और मौज़ूदा आठ नौ रोज़ बारिशों को छोड़कर एक हज़ार मील से कुछ ऊपर सफ़र हो चुका है।'' इस पर आपने फरमायाः– ''प्रेमी! इस तरह पहले लोग सफ़र करते थे। थोड़ा–थोड़ा सिमरण भजन करने से मन चित्त की सफाई होती रहती थी, जीवन यात्रा का सफ़र

सफल हो जाता था। अब चलने की तैयारी करो। बहुत ज़्यादा वक्त इनको दिया जा चुका है। प्रेमी खुले दिल से सेवा कर रहे हैं। गिरधारी लाल को दीना नाथ ही सबक पढ़ाते रहते हैं, और प्रेमियों ने भी हिस्सा लिया होगा।'' भक्त जी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! पता नहीं लग रहा।'' बातें हो ही रही थीं कि गिरधारी लाल और मोहन लाल जी ने आकर चरणों में प्रणाम किया और अर्ज़ की:- ''महाराज जी! बस का ही इंतज़ाम हो गया है। 5 अक्तूबर को इधर से चलने का प्रोग्राम है। रास्ता दो दिन में खुलेगा। बारिशों की वजह से रास्ता बहुत खराब हो गया है। जहाज का बन्दोबस्त जल्दी नहीं हो सकता, बहुत दिनों के बाद जगह मिलेगी। साथ भाईया जी, उनकी लड़की और माया राम भी होंगे। दो रोज़ शहर में कृपा करें तो आपकी बड़ी दयालुता होगी।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी! इतना समय तुम्हारे पास ठहरे हुआ है। चलने वाले रोज़ ही आसन इधर से छोड़ा जावेगा। तुम्हारे पास ही हैं, दूर नहीं।'' फिर आपने भक्त जी को आज्ञा फरमाई कि प्रेमियों को प्रशाद बनाकर खिलाओ।

भक्त जी ने खाना तैयार करके खिलाया। जब खाना खाकर रवाना होने लगे तो गिरधारी लाल जी ने भक्त जी को गर्म बास्केट, जो साथ लाये थे, दी और कहा:- ज़रा पहनकर देखो, ठीक है। अगर ठीक न हो तो इसे ठीक करवा दिया जाये। पहनकर देखी गई, ठीक पाई। श्री महाराज जी फरमाने लगे:- तुमने प्रेमियों को बहुत तकलीफ़ दी है। गिरधारी लाल जी अर्ज़ करने लगे:- ''महाराज जी! शर्मिन्दा न करें। सत्पुरुषों की सेवा संसार वाले कैसे कर सकते हैं? आप ही हमारी ग़लतियों को क्षमा करने वाले हैं।'' फिर प्रणाम करके विदा हुए। भक्त जी कुछ दूर तक छोड़ने के लिए साथ गए तो प्रेमियों ने कहा:- अगर किसी चीज़ की ज़रूरत हो, आपके लिए या श्री महाराज जी के लिए विचार करके शाम को भाईया जी को, जब वह आवेंगे, बता देना। वापिस आने पर जब श्री महाराज जी के पास हाज़िर होकर भक्त जी ने अर्ज़ की तो श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी! अगर कुछ ज़रूरत समझते हो, कह देना। यह कह दो, तुम्हारी सेवा यह ही है कि स्थान आश्रम, जो बनवाया है, सेवा के वास्ते वहां ज़रूर पहुंचे।'' और फिर फरमाया:- प्रेमियों को प्रोग्राम की इतलाह देनी शुरू कर दो। पहले बाबू को जगाधरी पत्र लिख दो और तहरीर कर देना कि बारिश की वज़ह से देरी हो गई है। अब प्रभु की कृपा से मौसम ठीक है। अगर ईश्वर आज्ञा हुई तो जल्दी दो-दो रोज़ रास्ते में देते हुए पहुंचा जावेगा। अच्छी तरह सब सामान का बन्दोबस्त कर रखें, बाकी सबको सिर्फ़ पहुंचने का पता देते जाओ।

दो रोज़ गुज़रने पर पता ही न लगा। 5 अक्तूबर के दिन जल्दी-जल्दी सुबह का कार्य सम्पूर्ण करके बिस्तरा वग़ैरा भक्त जी ने बांध लिया। करीबन दस बजे होंगे प्रेमी गिरधारी लाल जी, प्रेमी दीनानाथ जी सराफ़ के साथ कार में आ गए। प्रणाम करके बैठ गए और अर्ज़ की-कि दो बजे बस जावेगी। श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमियों! चलना चाहिये। दो घड़ी वहां शहर में बैठकर इंतजार कर लिया जावेगा।'' सब सामान बन्द करके सिर्फ़ अपना बिस्तरा लोई वग़ैरा लेकर साथ रख लिए। श्री महाराज जी की आज्ञा से मेहता कृपा राम रिटायर्ड एसिस्टेंट रेवेन्यू सेक्रेट्री की कोठी

और ब्रेन नामक गांव को छोड़ दिया। डल के किनारे-किनारे सीधे लाल चौक में प्रेमी डाक्टर मोहन लाल जी मंहगी की दुकान पर पहुंचे। दुकान के अन्दर ही आसन की जगह बनाई गई। श्री महाराज जी को वहां बिठाया गया। प्रेमी दर्शन के लिए आने शुरू हो गए। प्रेमी दीनानाथ जी मंहगी भी तैयार होकर आ गए। प्रेमी माया राम और मंहगी जी की लड़की भी आ गए। शाम के चार बजे के करीब का वक्त था। जब पता लगा कि बस तैयार है, प्रेमियों ने चरणों में प्रणाम किया और बस अड्डे पर पहुँच कर श्री महाराज जी का आसन फ्रंट सीट पर लगाया गया। बाकी सब पीछे बैठे। प्रेमियों ने प्रणाम किया और बस रवाना हो पड़ी। करीबन साढ़े छः बजे काज़ी कुंड पहुंची। ड्राइवर कहने लगा:– ''रात इसी जगह ठहरा जावेगा, सुबह इधर से चलेंगे।'' महंगी जी ने रिहाईश का इंतज़ाम कर दिया। दो कमरे किराये पर ले लिए, एक में श्री महाराज जी का आसन लगाया गया और दूसरे में मंहगी जी और बाकी प्रेमी ठहरे। एक दुकान पर सबने प्रशाद पाया और श्री महाराज जी पास ही बैठे रहे। श्री महाराज जी ने कुछ न लिया। दूध श्रीनगर से ही लेकर चले थे। काफी देर तक विचार होते रहे, फिर आराम किया गया। सुबह जल्दी ही बाहर से आ गए, बस में सवार हो गए, बस रवाना हो पड़ी। विचार था कि बानहाल पहुंचकर दूध-चाय ली जायेगी। करीबन दस बजे बानहाल पहुंचे। बस ड्राइवर कहने लगा:– जल्दी इधर से चला जावेगा क्योंकि कनवाई बहुत आ रही है। रास्ता बंद हो गया तो फिर निकलने में देर लगेगी। राम बन पहुंचकर दूध, चाय, रोटी लेंगे। जब राम बन पहुंचे तो देखा बेहिसाब मिलिट्री नीचे से ऊपर जा रही है। सब ट्रक, बसें रुकी पड़ी हैं। बस से उतरकर महंगी जी डाक बंगले पहुंचे। श्री महाराज जी को साथ ले गए। उनका बड़ा साहबज़ादा, गिरधारी लाल एस०डी०ओ०, पी०डब्ल्यू०डी०, वहां लगे हुए थे। दरियाए चनाब में स्नान किया गया, फिर भोजन प्रशाद प्रेमियों ने पाया और श्री महाराज जी को दूध पिलाया गया। बसें वग़ैरा दो ढाई घंटे वहां रुकी रहीं। प्रेमी गिरधारी लाल को कुछ सेवा मिलने की बड़ी प्रसन्नता हुई। जब रवाना होने लगे तो उन्होंने आकर प्रणाम किया।

जब बटोत पहुंचे बस एक जगह खड़ी हुई। श्री महाराज जी ने लघुशंका की तो भक्त जी ने माया राम से हाथ धुलवाने के लिए कहा। इस पर श्री महाराज जी नाराज़ हुए और फरमाने लगे:– ''तू अभी से जान छुड़वाने की कोशिश कर रहा है। तुझे हाथ पर पानी डालते तकलीफ़ होती है। ख़बरदार सेवा किसी दूसरे के सुपुर्द की। अभी से हुक्म करने लगा है। यह ख़ुद भी पानी ले सकते हैं।'' इतनी देर में बस ड्राइवर ने कहा– बैठो।

बस रवाना होकर रात को साढ़े दस बजे जम्मू पहुंची। श्री महाराज जी ने फरमाया:– नाश्ता वग़ैरा खुद ले लिया था, अब किसी को तकलीफ़ मत देना। श्री मूलराज जी मंहगी अड्डे पर मौज़ूद थे। सीधे घर पर ले गए। आसन का इंतज़ाम नीचे वाली मंज़िल में कर रखा था। दूध व चाय तैयार कर रखे थे। श्री महाराज जी की सेवा में प्रार्थना की गई कि दूध स्वीकार करें, मगर आपने इंकार किया। बड़ी मुश्किल से ज़ोर देने पर सिर्फ़ एक प्याली दूध लिया। फिर फरमाया:– ''अब वक्त बहुत हो गया है, आराम करो।''

प्रेमी मूल राज जी रिटायर्ड सेशन जज थे। हाथ बांधकर अर्ज़ करने लगे:- ''महाराज जी! जगह का इंतज़ाम किया हुआ है, अगर इधर ही शहर में कृपा करें तो सुबह और खुली जगह पर प्रबन्ध कर दिया जावे।'' श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी! बहुत सस्ता सौदा न करें। चार कदम चलकर जाने में ही लाभ होगा। जिन्होंने पहुंचना है वहां भी पहुंचेंगे। जिन्होंने नहीं आना वे वहां भी नहीं आयेंगे। सुबह इधर से बाहर चले जावेंगे, सामान पीछे ले आना।'' जज साहब ने अर्ज़ की:- ''सब बन्दोबस्त कर रखा है। सुबह ही इधर से साथ पैदल चले चलेंगे।'' रात को वहां ही आराम किया गया।

सुबह चार बजे वहां से उठकर रवाना हो पड़े और नहर से पार दीवानों की कोठी में पहुंचे। श्री महाराज जी बाहर चले गए और साढ़े सात बजे वापिस आए। इतने में जम्मू निवासी प्रेमी आने शुरू हो गए। श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमियों! सिर्फ़ चार रोज़ इधर ठहरना है। सत्संग का समय सबको बतला दें। समय ज़्यादा श्रीनगर में लग गया है।'' सत्संग का समय शाम को चार बजे रखा गया। काफी तादाद में माताएं और प्रेमी सत्संग में शामिल हुए। सत्संग महामंत्र व मंगलाचरण से शुरू हुआ, फिर ग्रन्थ से कुछ शब्द पढ़े गए। उसके बाद श्री महाराज जी ने जो अमृत वर्षा फरमाई, वह निम्नलिखित है-

27. सत् उपदेश अमृत

शरीर रूपी संसार को धारण करके जब से जीव कालचक्र में आया है इस अद्‌भुत संसार को देखकर मोहित हो रहा है। शरीर और संसार को सत् मानकर इससे मिलने वाले सुखों को हासिल करने के लिए रात-दिन जीव यत्न-प्रयत्न कर रहे हैं। जैसी दौड़ पहले आए हुए लोग कर रहे होते हैं, देखा-देखी नये शरीरधारी भी वैसा ही करने लग जाते हैं। जीव शारीरिक आराम को अधिक समझते हुए उसको हासिल करने के वास्ते कूड़ कपट करते हुए यत्न-प्रयत्न करते चले जा रहे हैं। बूढ़ा हो या जवान, स्त्री हो या पुरुष, सब भोग सामग्री को एकत्र करने में लगे हुए हैं, और भोग रहे हैं। मगर भोगों को भोग कर भी तृखा और इन्द्रियों की प्यास नहीं बुझती। इस झूठे भरोसे को लिए हुए जीव भोग रहा है और रोग-सोग को प्राप्त हो रहा है। इस चक्की में रोज़ाना पिस रहा है। शारीरिक सुख आराम के वास्ते दिन-रात लगा हुआ है। यह विचार नहीं करता कि जो चीज़ दृष्टि में आ रही है सबकी सब काल के मुख में जाने वाली है। बदलने वाली वस्तुएं कभी अविनाशी खुशी नहीं दे सकतीं। जो चीज़ खुद मजबूरी में खड़ी है, वह क्या आराम दे सकती है?

सतपुरुषों ने असली आत्म सुख को समझा है। संसार में आकर उन्होंने विचार किया, सत् क्या है? असत् क्या है? जब यह जाना कि जिस शक्ति करके शरीर खड़ा है, जिस करके यह संसार दिखाई दे रहा है, उसको जानना ज़रूरी है और जिसे जानकर फिर और कुछ जानने की ज़रूरत नहीं रहती, तब उन्होंने उसे जाना। जब नित प्राप्त अंग-संग वासी तीन काल सहायक को

जान लिया जाता है तब सब रोग–सोग से ख़ुलासी मिलती है। संसार के सब सुख एक दिन छूट जावेंगे। यह साक, संग, मित्र, शत्रु, राग–रंग देखते–देखते छूट जावेंगे। कोई भी साथ देने वाला न होगा। इस वास्ते संसार छोड़ने से पहले तत्त्व को जान लो। यह पांच तात्विक शरीर नाश को प्राप्त होकर रहेगा। यह हमेशा कायम रहने वाली चीज़ नहीं। अमानत मिली हुई है, इससे सही लाभ प्राप्त करो। बड़ा पुरुषार्थ यही है कि संसार में आने का यथार्थ लाभ हासिल कर लो। सारा संसार तमाशा, भूल–भुलैयां है और ऐसा झमेला है जिसमें जीव फंसकर लाचार हो जाता है। दु:ख में भी आशा रखता है कि सुख मिल जावेगा। मन की चलायमानता हमेशा भ्रम, अज्ञानता में डाले रखती है। भाग्य से सत्संग और संत मिल जावें तो संत संसारी जीवों की गति देखकर रहम करते हैं। घर–घर फिरकर समझाते हैं और जगाते हैं। मोह–माया की विकराल निन्द्रा में डूबा हुआ कोई भाग्यशाली जीव ही उनके वचनों को सुनकर अपना अगला राह संवारता है। वे बतलाते हैं कि निष्काम लोक सेवा और प्रभु का चिन्तन ही कल्याण के देने वाला मार्ग है। जो कोई इन्हें धारण करेगा उसका संसार में आना सफल होगा।

चौथा लोक जो जन आई। मोह माया में नित भरमाई॥
ऐसा जन कोई भयो सयाना। मान त्याग पाए पद निर्वाना॥

झूठ जाना संसार को, सत् जाना करतार।
पाया राज देह दीप का, भरम से पाई छुटकार॥
उपजे बिनसे नाश नित होई, यह भरम का रूप।
जो–जो दृष्टि में आवे साजन, सोई काल सरूप॥
झूठ का निश्चय त्यागया, सत् में पाई परतीत।
'मंगत' सो ही गुरमुख भया, पाई दशा पुनीत॥

इस काया गढ़ को जीतना ही महा कारज है। आत्म–तत् का प्रकाश ही सत् पुरुषार्थ है। ईश्वर सबको सुमति देवें, इस न रहने वाले संसार में सच्ची प्रीत द्वारा जीवन सफल कर सकें। सिर्फ़ चार रोज़ ही इधर ठहरना है। समय मिले आप भी आवें और गुरमुखों को भी आगाह करें। मानसिक रोग की दवाई मिलती है। इन्हें भी छूत की बीमारी लग रही है, जो नज़दीक आयेगा उसे भी लग जाया करती है। विचार करके इस मार्ग में कदम उठाना चाहिए।

इशारा हुआ, 'निखेत्र पर्वत गोष्ठ' से वैराग्य के दोहे पढ़े गए, फिर आरती हुई और प्रसाद बांटा गया। कई प्रेमी अर्ज़ करने लगे:– ''महाराज जी! आपने बड़ी कृपा की है। भूखे, प्यासों को अमृत वचनों द्वारा निहाल करते हैं। आपके दर्शन–मात्र से चित्त प्रसन्न हो जाता है आपकी तत्त्व ज्ञान से भरी हुई बातों को हम संसारी जीव क्या समझ सकते हैं? संत वाकई संसारियों पर कृपालुता करते हैं। इस बार बहुत थोड़ा समय बख़्शा रहे हैं।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– ''यह भी तुम्हारे प्रेम के बंधे ठहर गए हैं। यह सब प्रेमी जानते हैं कि उधर संगत ने जगाधरी में नई रचना की है। वहां पर विशाल रूप में सत्संग होगा। काफ़ी जनता के आने का विचार है। बिख़रे हुए प्रेमी एकत्र होंगे। समय थोड़ा रह गया है, फिर कभी प्रभु आज्ञा से इधर आना हुआ तो वक्त मिल जावेगा।''

28. जगाधरी में आगमन व सम्मेलन

संगत प्रणाम करके विदा हुई। दो तीन दिन गुज़र गए। पठानकोट से प्रेमी कुन्दन लाल जी ऋषि आ गए। 11 अक्तूबर को 11 बजे की बस में सवार होने के लिए आसन छोड़ दिया गया और बस अड्डे पर पहुंच गए। संगत अड्डे पर जमा थी। जब बस में सवार हुए सबने प्रणाम किया और बस रवाना हो पड़ी। करीबन पांच बजे शाम को श्री मेहर चन्द महाजन के बाग में डलहौजी रोड पर पहुंचे। पठानकोट की संगत के सब प्रेमी इंतज़ार में थे। प्रेमी गुरदासपुर से भी आए हुए थे। पहले की तरह रौनक लग गई। सबने बारी–बारी प्रणाम करके सेहत के बारे में पूछा। महाराज जी फरमाने लगे:– ''प्रेमियों, कमज़ोरी अभी गई नहीं, मगर पहले से बहुत फ़र्क है।'' दो दिन संगत पठानकोट की सेवा के लिए दिए और प्रेमियों को कह दिया कि जिस–जिस प्रेमी को सूचित करना हो तो पता दे देना।

14 अक्तूबर, 1950 को गुरदासपुर निवासी प्रेमियों की प्रार्थना पर गुरदासपुर तशरीफ़ ले गए। उन्होंने श्री महाराज जी को राय साहब करम चन्द जी के बाग में ठहराया। प्रेमी माया राम को 12 अक्तूबर को ही पठानकोट से जगाधरी भेज दिया ताकि आश्रम में सेवा करे और बाबू अमोलक राम जी को सूचित कर दिया गया। दो रोज़ गुरदासपुर निवासियों को सत् उपदेश देकर निहाल किया। प्रेमी काहनूवान, दौरांगला, धारीवाल से भी दर्शनों के लिए हाज़िर होते रहे। सबको सत्संग सम्मेलन में शामिल होने की प्रार्थना की गई और फरमाया कि सत्संग में शामिल होकर सेवा का लाभ उठावें। तीन दिन वहां संगत को निहाल करके 17 अक्तूबर, 1950 को गुरदासपुर से चलकर 18 अक्तूबर को जगाधरी पहुंचे। प्रेमी स्टेशन पर लेने के लिए पहुंचे हुए थे, साथ लेकर आश्रम पहुंच गए। उस कमरे में, जहां आपके निवास के लिए आसन लगाना था, ले जाया गया और वहां आसन लगाया गया। थोड़ी देर ही वहां बैठकर गड़वी लेकर और बाबू जी को साथ लेकर बाहर तशरीफ़ ले गए। सारे आश्रम की सीमा में घूम–फिर कर आपने देखा। प्रेमी माया राम छोटी सी ईंटों की रसोई में सेवा कर रहे थे। जब श्री महाराज जी बाहर से वापिस पधारे सब प्रेमियों ने प्रणाम किया और चरणों में बैठ गए। प्रेमी राम सरूप, गोपीचन्द, दीनानाथ, शेषराज, तोला राम वग़ैरा बैठे थे। श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमियों! सारी जिम्मेवारी तुम पर है। बाहर से आने वाले जो प्रेमी होंगे उन्हें इधर के रिवाज़ का पता नहीं। बाकी बाबू ने पुरुषार्थ करके इसको खड़ा कर दिया है।'' जगाधरी निवासी प्रेमियों के जिम्मे भी यह सेवा श्री महाराज जी ने पत्र द्वारा ही लगाई थी और फरमाया था– ''जगाधरी निवासियों के वास्ते सेवा सिर्फ़ इंतज़ाम की ही काफ़ी है, जो

शारीरिक सम्बन्ध से ही हो सकती है। बाकी और सेवा तो जैसे जिसके भाग्य। कोई ख़ास किसी को मजबूरी नहीं है, क्योंकि हालते ज़माना बड़ा नाज़ुक है। सिर्फ़ जगाधरी निवासियों की शुभ–भावना ही काफ़ी है। ईश्वर उनको ऐसा पवित्र भाव बख़्शें।''

फिर बाबूजी से पूछा, ''लंगर के बनाने का किधर विचार है?'' और बनारसी से पूछा, ''तेरा क्या विचार है? कमरा तो सिर्फ़ एक ही है। उधर तो दूर–दराज़ से आने वाले प्रेमी ठहरेंगे।'' इसके बाद आप उठ खड़े हुए, और चार दीवारी के बाहर जो जगह थी उसे जाकर देखा। वहां पर कोने में एक कच्चा कमरा बनाने का विचार किया गया। श्री महाराज जी फरमाने लगे:– ''दो तीन रोज़ में कैसे तैयार हो सकता है?'' मगर प्रेमी शेषराज, माया राम एकदम लग गए। थोड़ी बुनियाद खोदकर काम शुरू कर दिया। ईंटें काफ़ी पड़ी थीं। प्रेमियों ने ईंटें वहां पहुंचा दीं। डंडे ठोक कर बाड़ लगा दी गई। तीन रोज़ में प्रेमियों ने कमरा खड़ा कर दिया और श्रद्धा प्रेम का सबूत दिया। टैंट– शामियाने लगने शुरू हो गए जिनका प्रबन्ध बाबू जी ने किया हुआ था। स्त्रियों को ठहरने का प्रबन्ध आश्रम से कुछ दूरी पर एक बाग में टैंट लगाकर किया गया।

बाहर से प्रेमी आने शुरू हो गए। हल्द्वानी, दिल्ली, आगरा, अहमदाबाद, पंजाब, पठानकोट, गुरदासपुर, धारीवाल, जम्मू व कश्मीर, कांगड़ा, अम्बाला, जालन्धर, तरनतारन, अबोहर, मलोट और कई जगह से प्रेमी आने लगे। जिन–जिन प्रेमियों को पता लग चुका था वह कई प्रेमियों को साथ लेकर पहुंचे। इलाका गंगोठियां और रावलपिंडी ज़िले के ब्राह्मण बिरादरी के लोग ज़िला अम्बाला में ही आबाद किए गए थे, पता लगने पर जमा हो गए। इंतज़ाम के लिए विभिन्न प्रेमियों की ड्यूटी लगा दी गई। डाक्टर भक्त राम, बाबू अमोलक राम, भक्त बनारसी दास, प्रेमी गोपी चंद, बाबू रामस्वरूप व मलिक भवानी दास के जिम्मे अलहेदा–अलहेदा सेवा लगा दी गई। भक्त जी के सुपुर्द हमेशा की तरह लंगर का इंतज़ाम ही किया गया।

एक प्रेमी ने सम्मेलन कमेटी के बनाने की तजवीज़ की थी। पत्र द्वारा सत्पुरुष जी ने आज्ञा फरमाई थी वह भी दर्ज की जाती है।

'श्री महाराज जी फरमाते हैं कि सम्मेलन कमेटी बनाने में ऊंच–नीच का सवाल पैदा हो जाता है, इस वास्ते सेवादार आज़ादी के रूप में हर एक सेवा करने के वास्ते अपने आपको दृढ़ करें तब ही समता प्रेम का स्वरूप जाग्रत हो सकता है। मौके पर हर एक सेवादार को अपनी–अपनी सेवा का काम संभाल लेना चाहिये, आज़ादी के रूप में। मलिक भवानी दास को बाबू अमोलक राम से हम–मश्वरा होकर काफ़ी दिन पहले आ जाना चाहिये। बाकी सेवादार प्रेमी तीन चार दिन पहले आ जावें।'

जगाधरी निवासी प्रेमियों ने बर्तन काफ़ी इकट्ठे कर रखे थे। ख़ुराक का सामान भी बाबू जी ने एकत्र किया हुआ था।

29. दृढ़ आचरण के लिए प्रेरणा

इन्हीं दिनों में भक्त बनारसी दास ने श्री महाराज जी की सेवा में प्रार्थना की:- महाराज जी! मेरा कुछ नहीं बना, मुझे छुट्टी दी जावे। श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी! अगर फ़कीरों के पास रहकर तेरा कुछ नहीं बना तो बाहर जाकर क्या बनेगा, बल्कि तू और ख़राब होगा? मार्ग पर दृढ़ता से चलकर देख कामयाब होता है कि नहीं।'' सबसे पहले बाबू अमोलक राम जी को फरमाया:- उसे समझा दे। बाबू जी ने जाकर भक्त जी से कहा:- प्रेमी! यह हस्ती शरीर से परे है। शरीर तेरे सहारे चल रहा है। जब कोई नुक्स शरीर में मालूम होता है तो फरमाते हैं, बनारसी, देना काली मिर्च, देना सौंठ। अगर तुम चले गए तो यह शरीर विचरना छोड़ देगा और संगत को जो लाभ हो रहा है उससे संगत महरूम हो जावेगी। फिर और प्रेमियों ने भी भक्त जी को पहले की तरह सेवा में रहने के लिए समझाया।

27 अक्तूबर, 1950 को चार साल के बाद फिर संगत को गंगोठियां की तरह एकत्र होने का मौका मिला। अहाता आश्रम में, जो उस वक्त इतना ही था, जिसके आसपास उस वक्त चारदीवारी बनी हुई थी और एक कमरा पूज्य सत्पुरुष के निवास के लिए बना हुआ था और दूसरा जिसमें बाबू जी रहा करते थे। जब टैंट वग़ैरा लग गए तो सत्पुरुष बाबू अमोलक राम को साथ लेकर उन्हें देखने गए। जब माजरी के गेट की तरफ जा रहे थे तो आगे देखा कि एक टैंट हकीम राजा राम दत्त जी ने लगवाया हुआ है और उसमें दवाईयां खूब सजा कर रखी हुई हैं। जब आप वहां पहुंचे तो पूछा:- ''यह क्या है?'' प्रेमी हकीम राजा राम जी ने अर्ज़ की:- दवाईयां लगाई गई हैं। अगर आई हुई संगत में से किसी की तबीयत खराब हो जाए तो उसको दवाई दे दी जायेगी। इस पर आपने उसे फरमाया:- तुम भी बीमार हो, इसे बन्द करो। पहले अपना इलाज करो फिर दूसरों का इलाज। जब सेहतयाब हो जाओ तो कर लेना। और सब दवाईयों को उठवा दिया और इस सिलसिले को ख़त्म कर दिया।

प्रेमी आने शुरू हो गए। गंगोठियां व इलाका मजकूर के प्रेमी पुष्पनाथ, अनन्त राम, बख्शी परस राम, तौला राम, जगन्नाथ वग़ैरा आ गए। और भी कई प्रेमी आ गए। कड़ाह प्रशाद की तैयारी का प्रबन्ध उनके सुपुर्द किया गया। दालें बनाने के लिए प्रेमी सेवा राम कहूटा निवासी और अमीर चंद ड्यूटी पर लग गए और माताएँ और कुछ भाई रोटियां पकाने लगे। संगत 28 अक्तूबर को जमा होकर सत्संग और सेवा का लाभ उठाने लगी। श्री महाराज जी रात के बारह बजे एकांत में चले जाते और सुबह सूरज निकलने पर वापिस तशरीफ़ लाते और स्नान अहाते से बाहर करते। पंडाल अहाता के अन्दर ही लगाया गया और सत्संग का समय दस बजे से साढ़े बारह बजे तक रखा गया। जब श्री महाराज जी को पीने के लिए दूध दिया गया तो आपने पूछा:- ''लंगर तैयार है?'' भक्त जी ने अर्ज़ की:- तैयार है। आप फ़ौरन उठकर लंगर की तरफ पधारे और तैयार शुदा लंगर पर दृष्टि डाली। महामंत्र का आज्ञा अनुसार उच्चारण किया गया और श्री महाराज जी ने जल लेकर छींटा दिया और वापस आसन पर तशरीफ़ ले गए।

पूरे दस बजे सत्संग शुरू हुआ। हस्तलिखित ग्रन्थ पंडाल में ले जाया गया। महामंत्र व मंगलाचरण के बाद प्रेमी राम लाल जी परमार्थी ने अपने विचार संगत के सामने रखे। उसके बाद प्रेमी नन्द लाल जी बिन्द्रा ने वाणी का पाठ किया। उसके बाद कुछ और प्रेमियों ने अपने विचार रखे। फिर श्री महाराज जी ने सत् उपदेश अमृत द्वारा संगत को निहाल किया। चूँकि उसको नोट नहीं किया गया इसलिए संक्षेप में आपने जो शिक्षा दी उसे ही दिया जा रहा है। आपने फरमायाः– जीव आवागवन के चक्कर से तब छूट सकता है जब आत्म–ज्ञान प्राप्त करे और आत्म–ज्ञान प्राप्त करने के लिए शुद्ध आचरण धारण करना ज़रूरी है। शुद्ध आचरण खान–पान यानी आहार और व्यवहार की मर्यादा और नाम सिमरण से बनता है। इसके बाद आरती और समता मंगल के बाद पूरे साढ़े बारह बजे सत्संग समाप्त हुआ, फिर प्रसाद बांटा गया।

चूंकि आश्रम शहर के नज़दीक था और आम शहर निवासियों को भंडारे का भी पता लग गया था। इसलिए शहर से बहुत सारे स्त्री–पुरुष सत्संग में शामिल हुए। छः, सात हज़ार के करीब जनता जमा हुई। सत्संग के बाद श्री महाराज जी ने लंगर खिलाने की आज्ञा फरमाई। आई हुई जनता को लाइनों में बैठने के लिए कहा गया। जनता पहले लाइनों में बैठ गई। मगर जब लंगर बांटना शुरू किया गया तो सब उठकर उस जगह आने लगे जहां सामान लंगर कड़ाह व प्रसाद वग़ैरा बांटा जा रहा था। बड़ा यत्न किया गया और समझाया गया कि प्रेमी, औरतें, बच्चे वग़ैरा सब लाइनों में बैठें, सबको लंगर खिलाया जायेगा, मगर किसी ने नहीं माना। आख़िर तंग आकर सिलसिला बंद कर दिया गया और सामान लंगर अहाते के उस तरफ, जिस तरफ माजरी गांव था और शहर से रास्ता आता था, भेज दिया गया। प्रेमियों को कह दिया गया कि सबको प्रशाद वहां देते जावें ताकि उस तरफ से शहर वाले प्रेमी प्रसाद लेकर शहर चले जावें। प्रेमी प्रसाद वहां ले गए और वहां पर प्रसाद बांटा जाता रहा और शहर वाले प्रेमी प्रशाद लेकर शहर जाते रहे। लंगर पाने के लिए लोग आते रहे। अंधेरा होने तक यह सिलसिला जारी रहा। इस पर सत्पुरुष ने खुला लंगर करने पर पाबंदी लगा दी कि आईंदा खुला लंगर तक्सीम न किया जाए।

भेंट लेने के लिए बाबू अमोलक राम की ड्यूटी लगाई गई और भक्त बनारसी दास को भी प्रेमी भेंट देते रहे।

रात को विचार हुआ कि इस तरह इंतजाम ठीक नहीं चलेगा। शहर के नज़दीक होने के कारण लोग आते रहेंगे। इसलिए पाबंदी आईंदा लगानी पड़ेगी।

प्रेमी जो जल्दी जाने वाले थे, वह लंगर पाकर जाने लगे। प्रेमियों के लिए बूंदी का प्रसाद तैयार करवाया हुआ था, जो लिफाफ़ों में बन्द था। जाने वाले प्रेमियों को प्रसाद के लिफाफ़े दे दिये गये। कुछ प्रेमी उसी दिन चले गए, कुछ श्री महाराज जी से आज्ञा लेकर दूसरे दिन चले गए, कुछ तीसरे दिन चले गए। जल्दी जाने वाले प्रेमी तो चले गए, मगर बहुत से प्रेमी सत्संग का लाभ उठाने और दर्शनों के लिए पीछे रहे। दूर से आये हुए कुछ प्रेमी आहिस्ता–आहिस्ता आज्ञा लेकर, तीसरे या

चौथे रोज, चले गए। प्रेमी आश्रम के सारे सिलसिले को देखकर बहुत खुश हुए। मगर देखा गया कि जगह तंग है तो विचार होने लगा कि और ज़मीन भी साथ शामिल होनी चाहिये।

प्रेमियों ने जाने से पहले श्री महाराज जी की सेवा में प्रार्थना शुरू की:- कृपा करके उनके यहां आने का प्रोग्राम बना देवें। हकीम जसवंत राय, डाक्टर रोशन लाल जी वग़ैरा गुरदासपुर निवासियों ने श्री महाराज जी से प्रार्थना की:- महाराज जी! काहनूवान का प्रोग्राम बनाएं। श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''इधर से फ़रागत पाकर विचार किया जावेगा और फिर पता दिया जावेगा।''

30. अहाता आश्रम को जंगल की सूरत देने पर विचार

श्री महाराज जी ने जो प्रेमी पास बैठे हुए थे उनसे फरमाया:- ''प्रेमियों! इस जगह दरख़्त लगा दिये जावें ताकि यह जगह जंगल की सूरत बन जावे और प्रेमी उसमें बैठकर अभ्यास करें।''

प्रेमियों ने भी अर्ज़ की:- महाराज जी! अहाता आश्रम में फलदार पौधे लगवाये जावें और गुरदासपुर निवासियों ने मालटे के पौधे वहां से भेजने की आज्ञा ले ली।

जब आम प्रेमी चले गए और चंद एक रह गए, शाम को सत्संग समाप्त कर दिया गया। रात को प्रेमी एकत्र होते थे और सत् उपदेशों का लाभ उठाते थे। वैसे प्रेमी सारा दिन चरणों में हाज़िर होते रहते और अपनी शंकायें निवारण करके तसल्ली पाकर वापिस जाते।

31. कहानूवान में एकांत निवास

प्रेमी तरनतारन वग़ैरा यानि अबोहर निवासी भी इस तरफ तशरीफ लाने की प्रार्थना कर गए थे। जब फ़रागत हुई तो सत्पुरुष ने मौज़ूदा प्रेमियों से भी प्रोग्राम के मुतालिक विचार लिए। अभी कमज़ोरी शरीर में कुछ बाकी थी। 5 नवम्बर को जब आप सुबह एकांत से वापिस तशरीफ़ लाये तो फरमाया:- शारीरिक अवस्था को मददेनज़र रखते हुए काहनूवान में ही रुकना ठीक रहेगा और भक्त जी को आज्ञा दी कि हकीम जसवंत राय जी को इतलाह दे दी जाए कि 13 नवम्बर को गुरदासपुर पहुंच जावेंगे। जब स्नान करके आसन पर बैठे तो सब प्रेमियों को भी प्रोग्राम की सूचना दी गई और बाहर के सब प्रेमियों को पत्र द्वारा सूचना देने की आज्ञा फरमाई ताकि प्रेमी आइंदा कहानूवान के पते पर पत्र लिखें। यह भी फरमाया कि यह जगह नई होने के कारण ठीक है, मगर इनका हक इतना ही रहेगा कि जब सम्मेलन हुआ, चन्द रोज़ पहले आ गए। बाकी संगत के प्रेमी भी इस जगह रहें, मगर आश्रम की सारी सेवा बाबू अमोलक राम के हवाले है और प्रेमी माया राम भी इस जगह सेवा करने ठहरेगा, प्रेमी शेषराज भी आता रहेगा। ख़ारवां के प्रेमी भी पास ही हैं। तुम प्रेमियों ने मिलकर इसका ख़्याल रखना है। इन्होंने हमेशा इस जगह नहीं ठहरना। अभी बाबू के जिम्मे बहुत सारी जिम्मेदारियाँ हैं। बाबू ने बोझ उठाया हुआ है। जगाधरी के प्रेमियों को फरमाया:-

''तुम पर भी बड़ी जिम्मेदारी है। बड़े प्रेम से मिलकर काम करोगे तब ही इसकी और बढ़ोतरी कर सकोगे।''

11 नवम्बर को पौने छः बजे वाली गाड़ी में चलने का प्रोग्राम बनाया गया। जगाधरी निवासी सब स्टेशन पर हाज़िर हुए और श्री महाराज जी के सवार होने पर चरणों में प्रणाम करके वापिस हुए। गाड़ी सुबह साढ़े पांच बजे अमृतसर पहुंची। वहां दूसरी गाड़ी तबदील करके गुरदासपुर पहुंचे। जब पुरानी जगह पेट्रोल पम्प के पास पहुंचे तो उधर कहानूवान से प्रेमी जसवन्त राय और किशोरी लाल और कई प्रेमी पहुंच गए। दूध वग़ैरा वहां पर ही लेकर तांगों में सवार होकर नहर की पटरी के रास्ते कहानूवान पहुंचे। करीबन शाम को चार बज चुके थे, श्री महाराज जी फ़रमाने लगे:- ''सीधे राय साहब के बाग में चलें।'' हकीम जसवंत राय ने सब इंतजाम कर रखा था। कोठी के बाहर एक तरफ टैंट लगवा रखा था। प्रेमी वहाँ मौजूद थे। आसन लगाया जा रहा था। श्री महाराज जी जब पहुंचे और आसन पर बैठे, सबने प्रणाम किया।

इस जगह भी सत्पुरुष रात को तीन बजे बाहर चले जाते और दिन निकलने पर वापिस आते। इस जगह निवास के दौरान प्रेमी गुरदासपुर, दौरांगला, कादियां, धारीवाल, तरनतारन वग़ैरा के दर्शनों के लिए आते रहे। सत्संग का समय रात को साढ़े सात बजे से साढ़े आठ बजे तक रखा गया। सत्संग में शहर के प्रेमी भी शामिल होकर लाभ उठाते रहे।

इस जगह निवास के दौरान आपने नीचे दिया गया सत् उपदेश लिख करके भक्त जी को दिया और आज्ञा फरमाई कि सबसे पहले एक नकल करके बाबू अमोलक राम को रवाना कर दो फिर बाकी प्रेमियों को भेजते जाना।

32. सत् उपदेश

इस द्वंद्व रूपी खेद युक्त संसार में सत् परायण होना ही परम कल्याण के देने वाला है और सत् परायण होने से क्षमा, दया, धीरज, त्याग और प्रेम आदि महागुण प्राप्त होते हैं जो इस जीवन यात्रा में शांति रूपी परम पदार्थ के देने वाले हैं। इस वास्ते गुणी पुरुषों का अधिक श्रेष्ठ कर्तव्य यह ही होना चाहिये कि मिथ्या मान-मद, ईर्ष्या-द्वेष से अपने आपको हर वक्त सत् आधार के बल से निर्मल करते रहें। ऐसा यत्न ही निर्मल भक्ति और निर्भय पद के देने वाला है। इस वास्ते हर वक्त स्वतंत्र होकर केवल प्रभु आज्ञा में अपने आपको निश्चित करना और जीवन कल्याण की ख़ातिर पवित्र उद्यम को धारण करके सत् आचरण में अपने आपको दृढ़ करना ही यथार्थ जीवन है। इस धारणा से ही इस संसार की भयानक अग्नि से कुशलता प्राप्त हो सकती है। अधिक से अधिक निर्मल यत्न यह ही है कि देह मद की गिरफ़्तारी से निर्मल होकर सत् परायणता में जीवन को दृढ़ किया जावे, तब ही अंतःकरण के तमाम विकारों से निर्मल होकर कर्तव्य का पालन करने वाला हो सकता है। वह ही पुरुष अधिक इस पवित्र अनुराग के बल से निर्मल भक्ति यानि सत्नाम निद्धियासन को प्राप्त करके ज्ञान स्वरूप आत्मा में सावधान होकर परम पद अखंड शांति को प्राप्त

होता है। उसका जीवन इस संसार में दुर्लभ है। ईश्वर सब प्रेमियों को सत् अनुराग देवें। मघर 20 संवत, 2007 मुताबिक 13 दिसम्बर 1950 ।

प्रेमी माया राम वापिस कश्मीर जाने के लिए तैयार होने लगा। श्री महाराज जी को जब सूचना पहुंची तो आपने आज्ञा फरमाई कि माया राम जाना चाहता है तो प्रेम पूर्वक उसे जाने देना चाहिए। दूसरा ऐसा कोई माली तलाश करें जो कि बागवानी का सब काम संभाल सके और अपना खर्च भी निकाल सके।

इस जगह यह भी ज़िक्र करना ठीक मालूम होता है कि सत्पुरुष के आश्रम में नौकर, चौकीदार वग़ैरा रखने के बारे में क्या विचार थे? उस हिदायत के आधार पर भोला नाथ को, जो साथ ही माजरी में रहता था और माली के काम से वाकिफ़ था, मुलाज़िम रख लिया गया था।

पत्र जो श्री महाराज जी की आज्ञा से लिखा गया वह भी दिया जा रहा है। ''आपके प्रेम पत्र द्वारा दर्शन हुए। अर्ज़ यह है कि बाहर दूसरी जगह से भी माली या गोरखा आप नौकर रखेंगे तो उसके वास्ते अलग जगह पहले होनी जरूरी है। इस वास्ते फिलहाल जगाधरी से ही किसी आदमी का बन्दोबस्त करें जो दिन को काम करके रात को घर चला जाया करे। वहां साथ वाले जो हैं उनसे किसी पूर्वी माली का बन्दोबस्त करें।''

काहनूवान में ठहरे हुए थोड़े रोज़ ही गुजरे थे। भक्त जी शहर दूध लेने गए। आप उस वक्त धूप में बैठे थे। जब भक्त जी वापिस आए तो आपने सत् मार्ग की स्थिति का निर्णय लिख कर रखा हुआ था और भक्त जी को पढ़ने के लिए दिया।

रात के सत्संग में एक प्रेमी ने प्रश्न किया था– ''महाराज जी! यह सत्मार्ग खांडे की धार है। इस पर दृढ़ कैसे हुआ जावे?''

इसका उत्तर उस समय भी दिया था, फिर विशाल रूप में लिखकर रख दिया और फरमाया:– ''प्रेमी! यह मामूली विचार न था। बड़े-बड़े कमाई करने वाले माया के चक्कर में आकर भरमा जाते हैं। शारीरिक दु:खों में घिर कर जिज्ञासु डोल जाते हैं। मन को रास्ते पर लगाने के वास्ते स्वतंत्र होकर चलना पड़ता है, तब जाकर किसी समय ठिकाने लग सकता है।'' प्रसंग ''ग्रन्थ श्री समता विलास'' में छप चुका है, इसलिए यहां दर्ज नहीं किया जा रहा है। भक्त जी ने इसे पढ़कर ख़त्म किया था कि सरदार साहब जो आगे भी श्री महाराज जी के चरणों में हाजिर होकर विचार करते रहते थे, पधारे और प्रणाम करके बैठ गए।

33. एक वार्ता

श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी! कोई विचार करो।'' सरदार साहब ने अर्ज़ की:– गुरुओं, अवतारों ने कई तरह के विचार देकर समझाया हुआ है, मगर मन की चंचलता ख़त्म नहीं होती। किस तरह संसार में चलना चाहिए?''

श्री महाराज जी ने वचन उच्चारण करने शुरू कर दिये।

कीचै नेकनामी जो देवै खुदाए, जो दीसै ज़मी पर सो होसी फ़नाए।
द़ायम बादौलत कसे बेशुमार, न रहेंगे करोड़ी न रहेंगे हज़ार॥
दमड़ा तिसी का जो खरचे और खाए, देवै दिलावे रजावै खुदाएं।
होता न राखै अकेला न खाए, तहकीक दिल दानी वही भिश्त जाए॥
कीजे तवाजेह न कीचै गुमान, न रहिसी एह दुनिया न रहिसी दीवान।
हाथी वा घोड़े व लशकर हज़ार, होवेंगे ग़रक कुछ लागै न बार॥
दुनिया का दीवाना कहे मुल्क मेरा, आई मौत सिर पर न तेरा न मेरा।
केती गई देख बाजे बजाए, वही एक रहसी जो साचा ख़ुदाए॥
आया अकेला अकेला चलाएया, चलते वक्त कोई काम न आया।
लेखा मंगीजै किआ दीजै जवाब, तोबा पुकारे तो पावै अज़ाब॥
दुनिया पै कर ज़ोर दमड़ा कमाएआ, खाएआ, हंडाएआ अजाई गंवाएआ।
आख़िर पछुताना करे हाय–हाय, दरगाह गयेआ ते तूं पावे सज़ाए॥
लानत है तें कूं व तैडी कमाई, दग़ोबाज़ी कर दुनिया लूट खाई।
पिये पिआले और खाए कबाब, देखो रे लोको जो होते खराब॥
जिसका तूं बंदा तिसी का सवारिआ, दुनिया के लालच तूं साहेब विसारिया।
न कीती इबादत न रखिओं ईमान, न कीती हकूमत पुकारे जहान॥

''प्रेमी, यह क्या कहा हुआ है? पता है किन के वचन हैं?''

सरदार साहब कहने लगे:– महाराज जी! यह नसीयत नामा गुरु नानक देव जी का फरमाया हुआ है। यह तो और भी बहुत सारा है।

श्री महाराज जी फ़रमाने लगे:– ''प्रेमी! दुनिया वाले तो शिकार पर चढ़े रहते हैं। कौन उनके वचनों को सुनता है और मानता है? मन की चंचलता सत् विचार से ख़त्म हुआ करती है। मन ऐसा जानवर नहीं जो बांध लोगे। धीरे–धीरे अभ्यास और वैराग्य द्वारा ठीक होता रहता है। जब नसीहत पर अमल करोगे, आप ही मन ठहरना शुरू जो जावेगा। किसने नानक की बात मान रखी है? वे मांस, शराब–खाने बन्द कर रहे हैं, इधर सरदार लोगों ने झड़ी लगा रखी है। कोई गुरु का लाल न सेवन करता हो। जब ख़ुराक, लिबास ही ठीक नहीं, एक तुम सादे हुए तो क्या हो जायेगा। आम नफ़री ही बिगड़ी हुई है। सत्मार्ग वाले चला करते हैं, और की छोड़, तू अपनी राह संवार। बहुत बातें करनी छोड़ दे, अमल कर। यह भी एक बीमारी है, विचार बहुत करना, अमल से बे–बहरा रहना। सरदार न बनो, सेवादार बनो। आज–तक पूछते चले आये हो, किस बात पर यकीन बैठा है? प्रेमी! सुनो थोड़ा, अमल करो ज़्यादा। जब गुरुओं ने इतनी मेहनत करके पद पाया है तुम खाली बातों से किस तरह पार हो जाओगे? पागलों वाली बातें न किया करो। बहुत जल्दी सत् लोक में जाना चाहते हो तो तुम बाबा सावन सिंह के पास चले जाओ।

सरदार जी कहने लगेः– वहां तो मैं दो–तीन दफ़ा हो आया हूं। बातें, वचन उनके बहुत मीठे हैं, मगर वे जो गुरु की महिमा बताते हैं, मेरे मग़ज में नहीं बैठ रही। गुरु किस तरह आखिरी समय में शिष्य की रक्षा करेगा?

श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''प्रेमी! किसी के होकर चलोगे तब ठिकाने लग सकोगे। प्रेमी, दर्शन देते रहा करो।'' प्रेमी प्रणाम करके चला गया। फरमाने लगेः– ''इस प्रेमी का दिमाग़ भी अश्चर्ज बना हुआ है, थकता नहीं।''

सम्मेलन के मौके पर आश्रम में जगह की तंगी को जो महसूस किया गया था उसे ध्यान में रखते हुए आपने साथ वाली ज़मीन को खरीदने के बारे में जो दूसरे पत्र में लिखा वह निम्नलिखितः हैः–

अहाते के बाहर अपनी ज़मीन किसी तरफ न होने के कारण पेशाब वग़ैरा की सब प्रेमियों को तकलीफ़ महसूस हुई। आश्रम की पवित्रता उस सूरत में पूरी हो सकती है कि बाहर किसी तरफ अपनी ज़मीन हो और प्रेमियों का आना–जाना उधर गेट निकाल कर बेवक्त ज़रूरत आसान हो सके। आप अच्छी तरह से इस ज़मीन के मामले पर ग़ौर करें। प्रेमी प्यारे लाल को वैसे श्री महाराज जी ने कहा था। उसने कहा था शायद वह मुफ़्त ही सेवा कर देवे या वह ही रकम वसूल करे जो पहले दी गई है। आश्रम की सही स्थिति की ख़ातिर कुछ ज़मीन बाहर ज़रूर होनी चाहिये।

बमौका सम्मेलन प्रेमी चन्दा लिखवा गए थे, मगर उन्होंने भेजा नहीं। उसके बारे में बाबू अमोलक राम ने सेवा पत्र लिखा। उसके मुतालिक जो आपने आज्ञा दी वह भी नीचे दर्ज की जा रही है। पहले भी आ चुका है कि सत्पुरुष ने किसी संगत से जो दूसरी जगह हो या अपनी संगत से किसी किस्म की रकम मांगना मना किया हुआ है और सेवा का प्रेमियों के अन्दर ऐसा जज़्बा पैदा करना चाहते थे कि एक हाथ दे और दूसरे हाथ को पता न लगे यानि निष्काम सेवा का नमूना बनने का जज़्बा प्रेमियों के अन्दर पैदा करना चाहते थे।

''आपके प्रेम पत्र द्वारा दर्शन हुए। सब हालात से आगाही हुई। श्रीमान भाई साहब पंडित बिहारी लाल जी श्री गुरु महाराज के चरणों में आज पधारे थे। सो उन्होंने कुछ विचार सुनाये थे। उसके मुतालिक अर्ज़ है कि श्री महाराज जी फरमाते हैं कि प्रेमियों ने सम्मेलन के अवसर पर खुद–ब–खुद वायदे किए थे, चन्दा अदायगी के मुतालिक। सो वाजह होवे कि श्री गुरु महाराज जी फरमाते हैं कि सब प्रेमियों को चेतावनी देने की कोई ज़रूरत नहीं और जिन प्रेमियों के बारे में आपको कुछ ज़्यादा विश्वास है उनको बेशक मुतलाह कर देवें। आम इतलाह की कोई ज़रूरत नहीं है। जब–तक खुद प्रेमी अपने फ़र्ज़ को नहीं समझते उनको आगाह करने से भी कुछ फायदा न होगा। आगे आप मुनासिब विचार कर लेवें।'' आपने कुछ हिदायत जारी फरमाई, जो नीचे दर्ज की जा रही है।

''जगाधरी में सेक्रेट्री वग़ैरा बनवाने की कोई अभी ख़ास ज़रूरत नहीं है। तुम खुद ही सब काम सर अंजाम दे दिया करो। सत्संग साधारण रीति से, जो मर्यादा चल रही है, उसके मुताबिक ही होना चाहिए। पहले अभ्यास वग़ैरा की कोई ज़रूरत नहीं है।''

बाग के कुछ फासले पर नहर के किनारे एक तकिया था। काहनूवान निवासी प्रेमियों का विचार हुआ कि वहां कुटिया बनवाई जावे। प्रेमी रामजी दास व हकीम ख़िदमत राय श्री महाराज जी को वह जगह दिखाने ले गए। वहां एक कुआं भी था। जब वहां पहुंचे तो श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''रामजी! जगह बहुत सुन्दर है। तप करो, इलाके को चिताओ। घर भी पास है, रोटी जाकर खा आए या माता इधर ही पहुंचा देवेगी। मन को बांधकर सेवा करो। बाबू जगाधरी में सेवा कर रहा है। प्रेमी, फ़क़ीर ऐसी जगह पर ही डेरा लगाया करते हैं। जब-तक तुम्हारी माता जिन्दा है, यह बंधन ज़रूर रहेगा। पास रहने से सबको तसल्ली रहेगी।''

जब वहां से वापस आए तो प्रेमी रोशन लाल, गोसाई संत राम, प्रेमी किशोरी लाल जी बुज़ुर्ग पिता सेवा में हाज़िर हो गए। इस जगह निवास के दौरान दौरांगला के प्रेमी भी सत्संग में शामिल होकर लाभ उठाते रहते। रात के सत्संग के बाद श्री महाराज जी ने चलने के प्रोग्राम के बारे में प्रेमियों को कहा। प्रेमी ख़िदमत राय ने प्रार्थना कीः– कुछ दिन गुरदासपुर पर भी कृपा करें। श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''प्रेमी! तुम काहनूवान के वास्ते कह सकते हो।'' पास ही प्रेमी छज्जू राम जी बैठे थे। उन्होंने अर्ज़ कीः– महाराज जी! आज बहुत देर हो गई है। प्रोग्राम के बारे में रात को नहीं सोचना चाहिये, फिर देख लेंगे। अभी तो हमारी प्यास ही नहीं बुझी।

एक प्रेमी ने विचार किया कि महाराज जी, क्या कर्म हम ख़ुद करते हैं या पिछले संस्कार ही हमको शुभ-अशुभ मार्ग पर ले जाते हैं?

श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''प्रेमी! बेशक पिछले संस्कारों करके जीव का स्वभाव बनता है। मगर अपने संस्कार आप बदल भी सकता है। ईश्वर ने बुद्धि दे रखी है, मगर इस्तेमाल नहीं करता। बुराई को छोड़ कर अच्छाई को ग्रहण कर सकता है। अच्छा काम करते-करते बुरे कर्म भी करने लग जाता है। इस वास्ते हर घड़ी, हर समय दिल को मजबूत करके सत्मार्ग में दृढ़ता धारण करनी चाहिये। ज्यों-ज्यों पक्के इरादे से शुभ मार्ग पर चलता है, उच्चता को प्राप्त कर लेता है। अच्छी संगत अच्छी तरफ ले जाती है। मलीन स्वभाव वालों की संगत करके बुद्धि मलीनता को प्राप्त होती है। संगत का असर लाज़मी है। इस वास्ते बारम्बार संगत पर ज़ोर दिया जाता है। सारा संसार असत् रूप है। अज्ञानता से शरीर और संसार को सत् मान कर चला जा रहा है। सत्संग में आकर चुप करके नहीं बैठा रहना चाहिए। विचार करना चाहिए। इस तरह बुद्धि से भ्रम दूर होता है। प्रेमियों, काफी समय हो गया है, अब जाओ आराम करो।''

सुबह के समय जब बाहर से आकर स्नान करके बैठे तो प्रेमी हकीम जसवन्त राय भी बैठे थे। श्री महाराज जी ने प्रोग्राम के मुतालिक ज़िक्र छेड़ा और फरमायाः– ''आज 10 दिसम्बर हो चुकी है। महीना पूरा हो गया है। हकीम जी अपने स्वभाव अनुसार न माने।'' श्री महाराज जी ने 15 दिसम्बर जाने को कहा। मगर हकीम जी ने ज़ोर देकर 18 दिसम्बर मुकर्रर करवा लिया। श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''कौन जाने फिर इस तरफ आना होता है या नहीं? शरीर की कुछ ऐसी ही स्थिति है। आपस में अधिक प्रेम-भाव से रहकर इलाके के वास्ते रतन बनो। इधर-उधर ज़्यादा न दौड़ा करो। प्रभु आज्ञा में अपने आपको दृढ़ करो। समय ऐसा चल रहा है कि अमीर भी तंग हैं

ग़रीब भी लाचार हैं, केवल सत्मार्ग में चलने वाले ही धीरज, सन्तोष से खुशी-खुशी समय काट सकते हैं। बाग वालों की हालत देख लो। चंद सालों में यह भी खोले खंडहर हो जावेंगे। जिस जगह द्वेषभाव है वहां आराम और शांति कहां? बड़ों की तरफ मत देखो। अपने आप ही मस्त रह कर देखो। दो घड़ी मालिक का सिमरण करो और सेवा बन सके तो करते रहो। सेवा और सिमरण ही परम शांति की तरफ ले जाने वाले साधन हैं। धन आता और चला जाता है। समय, जीवन चलता ही रहता है। प्रभु प्रेमी ही संसार में परम धनी है।'' प्रेमी हकीम जसवन्त राय जी उठे, जाकर बहुत से मालटे ले आए और लाकर श्री महाराज जी के चरणों में रख कर अर्ज़ की:- ''महाराज जी! हम सबको प्रसाद दें।'' एक मालटा काट कर आगे रखा। श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी, सर्द चीज़ है, तकलीफ न दे।'' एक डली लेकर बाकी बांट दिया। फरमाने लगे:- ''जाओ कारोबार करो।''

17 दिसम्बर की रात को बहुत से प्रेमी सत्संग में हाजिर हुए। कई प्रेमियों को बाहर ही सर्दी में बैठना पड़ा। सत्संग समय पर शुरू हुआ और जो उपदेश आपने देने की कृपा फरमाई, उसका सार दिया जा रहा है।

34. सत् उपदेश अमृत

इस भयानक काल में नास्तिकवाद अधिक बढ़ रहा है क्योंकि आम मानुष ने जीवन भोगमयी समझ रखा है। ज्यों-ज्यों भोगों को सब कुछ समझकर जीव इनको भोगने में लगे हुए हैं त्यों-त्यों परेशानियाँ बढ़ रही हैं। सब तरह के सुख भोग मौज़ूद होते हुए भी फिर लोग बेचैन हैं। वज़ह यह ही है कि नमुायशी ज़िन्दगी लाचार कर रही है और आगे चलकर यह कितना दुःखी करेगी, यह तुम देखोगे। जब-तक भोगवाद को दुःख रूप न माना जावेगा और हर समय मौत की याद न होगी तब-तक असली शांति सुख प्राप्त नहीं हो सकता। भोगों की लालसा जीवों को भिड़ा देती है। इसलिए जीव ज़िन्दगी में सत् कर्तव्य से महरूम (वंचित) रह जाता है और पशुओं वाला जीवन धारण कर लेता है, ऐसा जीवन कहां तक सुखदाई हो सकता है? वह जीव भाग्यशाली है जिसे इस मादावाद के ज़माने में प्रभु परायणता में दृढ़ता प्राप्त हुई है। मानुष जीवन इस वास्ते है कि भोगों की वासना से निवृत्त होकर असली जीवन की तहकीकात करके परम सुखी हो। आत्म-आनन्द की खोज या तहकीकात ही असली महान कर्म है। आग, मिट्टी, हवा, पानी, आकाश की खोज तात्विक खोज है। इस तहकीकात से वासना बढ़ती जाती है। सार जीवन का पता नहीं लग सकता। सत् विश्वास, सत् अनुराग और सत् निद्धियास में दृढ़ होकर सत् यत्न में कारबन्द होने से ही वैराग्यमयी बुद्धि प्राप्त होती है। ऐसी स्थिति ही सुखों का भंडार है। जिस समय ऐसी स्थिति प्राप्त होती है तब जाकर देह परायणता को परम दुःख जानकर निमित्त मात्र संसारी कर्मो में फिरता हुआ जीव शारीरिक यात्रा को व्यतीत करने लगता है। निर्मोह होना कोई आसान नहीं। धीरे-धीरे प्रभु परायण होता जावे। अनेक नाम, रूप, गुण, कर्म में सुरति विचर रही है। रात दिन इनका सिमरण करती हुई कर्म जन्तर में लगी

रहती है। कर्म के नतीजे सुख-दुःख, लाभ-हानि, संयोग-वियोग द्वन्द्व भाव में नित ही अशांत व परेशान रहती है। घड़ी दो घड़ी के वास्ते जो उसे सुख मिलता है उसका मोह, लोभ इस जीव को अज्ञानता में डाले रखता है। प्रेमियों, सत्संग बड़ी चीज़ है, इसके साथ ज़रूर प्रेम बनाये रखें। कभी तो दाता दयाल होगा। हर समय सत्भावों में अपने आपको लगाये रखें। नेक अमल ज़रूर लाभ देता है। जीवन के सही मकसद को समझते हुए यानि संसार में किस वास्ते आए हैं? क्या कर रहे हैं? आख़िर किधर जाना है? इसका विचार करके गुरु वचनों में बारम्बार दृढ़ होवें। समय एक सा नहीं रहता, न ही सत्संग हमेशा मिलता है। प्रभु प्यारे ढिंढोरा देकर चल देते हैं। उनके वचनों पर मर मिटने से ही रंग लग सकता है। ईश्वर सुमति देवें।

आज्ञा पाकर दोहे पढ़े गये फिर आरती व समता मंगल उच्चारण करने के बाद प्रसाद बांटा गया और सत्संग समाप्त हुआ। इसके बाद श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''इस उजाड़ ने कुछ सबक दिया था मगर लोग पहले से भी ज़्यादा शिकार में लग गए हैं। आप लोग फिर कुछ बचे हुए हो, शहरों में तो आग लग रही है। ईश्वर इच्छा में समय व्यतीत करना चाहिए। उस मालिक की कृपा हर जगह हो रही है। शायद हालात बेहतर हो जावें। प्रभु सब जीवों को रास्ते पर लगावें।'' फिर पूछा:- ''प्रेमियों! कोई विचार करो।''

प्रश्न :-एक प्रेमी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! मन चंचल तो पवन से भी अधिक है। बड़ी कोशिश की जाती है, एक धारा पर आता ही नहीं। कृपा करके आसान युक्ति फरमायें।

उत्तर :-श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी! जिन्होंने सिर पर छाई डाल रखी है बड़ी-बड़ी जटा बढ़ा रखी हैं, धूनियां तापते हैं, उल्टे लटकते हैं, पानी में खड़े रहते हैं तब भी मन ऐसा विकराल है, रास्ते पर नहीं आता। जीते जी मर जाओ, साहेब से प्रेम बनाओ। संसार की प्रीति बिल्कुल ख़त्म कर दो, पिंजर सुखा दो, तब जाकर तार अन्तर विखे खड़केगी। मालिक की कृपा तो रग-रग में हो रही है। इन आंखों से देखा नहीं जाता, यह कान श्रवण नहीं कर सकते, रसना चख नहीं सकती, नहीं तो कर्म इन्द्रियों द्वारा पकड़ कर दिखा दिया जावे। यह अपने अनुभव का विषय है।

नाम प्रभु का हृदय बसे, मन पवन कीजे इक ठौर।
अन्तर माहीं शबद परगासे, सुरत भई मख़मूर॥
रोम-रोम में नित गुंजारे, शबद पुरख निर्वाण।
प्राण अपान को सम कर राखे, निरखे अनहद की तान॥
पिंड ब्रह्मण्ड की सोझी पावे, मन वचन कर्म कीजे इक ठौर।
गगन गुफा बहती अमृत धारा, पीवे कोई गुरमुख सूर॥
आशा, तृष्णा जेवड़ी, बांधे चराचर भूत।
माया प्रभु की अश्चर्ज है, साध के पायें वस्त अनूप॥

जन्म–जन्म का टूटा गांडे, पाये चित परतीत।
निर्मल कर्म को धार के, चलियो भवजल जीत॥
काची काया में अमृत भरया, नित बोले अमृतवाणी।
नित–नित ध्यान धरो प्रभाती, कटे कर्म की खानी॥
भाग हुए अन्तर चानन होया, पाई गत निर्वास।
'मंगत' सर्व का ठाकर पाइयो, आद निरंजन अबगत अबनास॥

प्रेमी, उसके वग़ैर कोई दूसरा हो तो समझाया जावे। सब जीव–जन्त उस मालिक का रूप हैं। जो भी चित्त से उस मालिक के परायण हो जाता है वह एक दिन पहुंच ही जाता है। रास्ता तुमको पता है, जिस प्रेम से संसार की तरफ दौड़ते हो उससे दुगने प्रेम से दो घड़ी मालिक के चरणों में चित्त दे दो तो काम बन जावे। निर्मोह होकर चलना बड़ा कठिन काम है।

घर फूंका जिन अपना, लिया चोहाता हाथ।
अब फूंकेंगे उसका, जो चले हमारे साथ॥

सब प्रेमी प्रणाम करके विदा हुए। कुछ वहां ठहरने वाले प्रेमी वहां ठहर गए और महाराज जी के पांव दबाने लगे। तब आपने फरमाया:–

''मुक गया लेना देना, खू विच पै गइयां वहियां''

''यह धरती भी कब की इंतज़ार कर रही थी। कितनी दफ़ा इधर आना हुआ। एक दो दफ़ा कोठी में भी ठहरे होंगे। इस तम्बू ने काफ़ी सेवा दी है। कोठी वालों की बुद्धि पर कोई असर नहीं हुआ। अच्छा, सब भागों (भाग्यों) की बात होती है। धन, इकबाल का मान जीव को अंधा कर देता है। यह लोग इसमें खुश हैं, महाराज जी हमारी कोठी पर ठहरते हैं। अब गुरदासपुर में इनके बाग में ही ठहरा जावेगा। इनको भी और कोई प्रेमी नहीं मिलता। अच्छा, जो प्रभु की आज्ञा।''

ना किसी की बनी रही, गए सिंघासन छोड़।
मन नहीं धीरज पाया, जो सम्पत लाख करोड़॥
बाल जवानी जरा परापत, जीवन नित नहीं पाये।
टूटी माला प्रान की, देही राख समाये॥
उठ गफलत मनों त्याग, सत संगत पधार।
नाम सिमर भगवान का, यह लाभ जीवन विचार॥
चलन की नौबत बाजती, नित साची रास संभाल।
समां गंवाये फिर रोवना, जब सिर आवे काल॥
न किसी का कोई होए, न बनेगा मीत।
जो बनया सो बिगड़सी, मन राखो परतीत॥

चार दिनां का जीवना, अन्त देह माटी हो जाए।
'मंगत' सफल तिन जीवना, जो महिमा प्रभ की गाए॥
साचा नाम प्रभ सिमरिये, मिल संगत प्रेम कमाइये।
'मंगत' सफल जीवना, जो रहनी साची पाइये॥

''अच्छा प्रेमियों, लकड़ियों को अब ज़्यादा न दबाओ। अब आराम करो।'' रात को जब बाहर तशरीफ़ ले गए भक्त जी को आज्ञा फरमाई:– ''रवानगी की तैयारी कर लेना।'' जब आप 7.30 बजे दिन निकलने पर वापिस पधारे तो स्नान करके धूप में बैठे ही थे, जसवन्त राय जी नहर की तरफ से हो कर आए। प्रणाम करके बैठे और हाथ जोड़कर प्रार्थना की:– महाराज जी! आज आप गृह पर ही प्रसाद पाने की कृपा करें, बड़ी दया होगी। आराम से सब प्रेमी प्रसाद पाकर चलेंगे, गुरदासपुर पास है।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– ''तम्बू वग़ैरा उखाड़ लो। तुम चलो, यह भी आहिस्ता-आहिस्ता पहुंच जाएँगे।'' तम्बू एकदम उखाड़ दिया गया। बिस्तरा आसन वग़ैरा बांध लिए गए। सब सामान को प्रेमियों ने पहले ही घर पहुंचा दिया, फिर राय साहब की कोठी को छोड़ दिया गया।

हकीम जी ने अपने ऊपर वाले चौबारे में आसन बिछा रखा था। सब परिवार लंगर की तैयारी में लगा हुआ था। जब महाराज जी आसन पर पधारे हकीम जी ने पानी लाकर चरण अमृत लिया, फिर सब परिवार ने प्रणाम किया। महामंत्र उच्चारण करके वाणी का पाठ हुआ, फिर महाराज जी के वास्ते दूध लाया गया और हकीम जी ने खुद दूध पिलाने की सेवा की। श्री महाराज जी ने फरमाया:– 'प्रेमी! तुम्हारी सेवा बहुत हो चुकी है। प्रेमियों को प्रसाद खिलाओ।''

35. गुरदासपुर में अमृत वर्षा

18 दिसम्बर, 1950 को प्रेमियों के प्रसाद पाकर फ़ारिग होने तक करीबन 12 बज गए। श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमियों! देरी न करें। जिस जगह जाना हो, कुछ वक्त पहले पहुंचना चाहिए।'' तब घर वालों ने प्रणाम किया और श्री महाराज जी उठ खड़े हुए। जल्दी-जल्दी गृह छोड़कर कस्बे की पिछली तरफ से होकर तांगे के अड्डे पर पहुंचे। सब प्रेमी साथ थे। तांगे में जब बैठे, सब प्रेमियों ने प्रणाम किया। कुछ प्रेमी साथ बैठ गए और तांगे रवाना हुए। करीबन चार बजे गुरदासपुर पहुंचे। प्रेमियों ने राय साहेब कर्मचन्द जी के बाग में आसन लगा रखा था। प्रेमी गुरदासपुर, दौरांगला और पठानकोट से वहां पहुंचे हुए थे। सबने श्री महाराज जी के वहां पहुंचने पर प्रणाम किया। काहनूवान से आए हुए प्रेमियों को आज्ञा फरमाई:– जिस प्रेमी ने जाना हो जा सकता है। आपने ठिकाने पर पहुंचा दिया है। एक हफ्ता तक इधर से किसी दूसरी जगह का विचार होगा और सबको पता दिया जायेगा। गुरदासपुर निवासी प्रेमियों को फरमाया:– ''सत्संग का समय जैसा

मनुासिब समझो निश्चित कर लो। वक्त ऐसा मुकर्रर करो जिसमें जनता आराम से आ सके। शाम को चार बजे से पांच बजे तक का समय ठीक रहेगा।''

गोसाईं जी और प्रेमी आराम करके वापिस हुए। हकीम जसवन्त राय और प्रेमी किशोरी लाल जी वहां ठहर गए। प्रेमियों ने लंगर का इंतजाम वहां ही कर रखा था।

शाम को नाश्ता वग़ैरा करने के बाद वाणी का पाठ किया गया, फिर आराम करने की आज्ञा हुई।

सुबह को जब आप बाहर से तशरीफ लाए और स्नान करने के बाद दूध ले चुके तो आज्ञा फरमाई:- ''डाक लाओ, देखें कहां से आई हुई है और किस-किस को उत्तर देना है।'' आपने अपने कर-कमलों से निम्नलिखित शब्द लिखे:

करनी ऐसी नित करो, जो सरब देवे कल्याण।
करनी से ही देवता, मानुष भूत समान॥
मानुष जन्म की सफलता, जो मन के दोष निवारी।
नित ही मार्ग कल्याण में, दृढ़ निश्चय को धारी॥
कर्म धर्म पूरण हुए, निर्भय धाम लखाई।
'मंगत' मानुष जन्म की, अत निर्मल वडयाई॥

भक्त जी को पढ़ने के लिए शब्द दिए। पढ़कर भक्त जी ने अर्ज़ की:- इतने उपदेश विचार सुनकर फिर भी मन अपनी खरमस्तियों में लगा रहता है। सत्मार्ग में दृढ़ता से नहीं चल पाता, न ही इसके साथ प्रेम के समुन्द्र में गोता लगाया जा सकता है। कैसे यार को पाया जा सकता है?

श्री महाराज जी ने गहरा लम्बा सांस लिया और फरमाया:- ''बनारसी! इनकी तरफ से समझाने में कोई कसर रखी जा रही हो तो बताओ। गुप्त से गुप्त राज़ बताकर सही रास्ते पर चलाने की कोशिश की जाती है, फिर भी कोई न चले तो यह क्या कर सकते हैं? जीव को आप ही चलना पड़ेगा। ज्ञान, विचार भाग्य से किसी वक्त मिला करता है। रोज़-रोज़ ऐसा समय नहीं मिलता। संतों की कृपा को कोई नहीं समझ रहा। अच्छा, किसी समय रोना पड़ेगा। ऋषि, मुनि कब बार-बार उपदेश व विचार दिया करते थे। एक दफ़ा कह दिया जाओ, ऐसे करो, फिर तुम कौन हम कौन? यह ज़्यादा नज़दीक बिठाने का नतीजा हो रहा है। इन्होंने कोई अपने लिए जायदाद खड़ी करनी थी? अगर किसी समय किसी से कहा जाता है यह सेवा कर सकते हो तो कर दो, इसमें उसका अपना कल्याण है। जन्म-जन्मांतर से जीवों की बुद्धियां मोह माया के पर्दे में फंस रही हैं। खुश-किस्मती से सत्संग मिल भी गया फिर भी सोने की पड़ी हुई है। यह ख़रमस्ती भुलेखे में डाले रखती है। सत्मार्ग में बिना प्रीत-प्रतीत के नहीं चल सकता। ईश्वर भक्ति से पहले गुरु भक्ति है, मुर्शिद के वचनों पर मर मिटना। ठीक या ग़लत, जो गुरु कहे उसे सत् वचन करके पालन करें। हील व हुज्जत कुछ न करे। मनमानी करके जिस कर्म को किया जाता है, वह गुरु आज्ञा में दाखिल नहीं है। ईश्वर भक्ति से गुरु भक्ति मुश्किल है। इम्तिहान लिया जाये तो सब भाग जायें। ऊपर से मीठी-मीठी

बातें इस वास्ते की जाती हैं कि चित्त में कोई वचन बैठ जाए। अन्तर से बहुत कड़वे रहे हैं। समय भी तमोगुण की तरफ जा रहा है। इन्होंने अपना फ़र्ज़ पूरा करना है।'' फिर फरमाया:– ''तूने पत्रिकाओं में कुछ लिखना हो तो लिख दे।''

शाम के सत्संग में प्रेमी काफ़ी शामिल हुए। सत्संग में जो अमृत वर्षा फरमाई उसको नोट तो नहीं किया गया लेकिन इसमें संसार की असारता पर रोशनी डाली गई और यह भी बतलाया कि कैसे जीव इस चक्कर में फंसकर अपने चारों ओर जाल खड़ा करता चला जाता है। फिर फरमाया:– कैसे इस जाल से छूटा जा सकता है? सत्संग के बाद आपने फरमाया:– ''प्रेमियों, इनके विचार व उपदेश तुमको निराले ही लग रहे होंगे, क्योंकि यहां न बाजा है न तबला। आप ख़्याल करते होंगे, यह कैसा सत्संग है? असली मायनों में सत्संग उसको कहते हैं जिसमें ईश्वर महिमा का विचार हो। संसार क्या है? किस तरह जीव शरीर को धारण करके सुख–दु:ख पाता रहता है और आख़िर इस हरे–भरे संसार को छोड़ कर चल देता है? यह क्या अजीब खेल बना हुआ है? जीवन की असलियत का जिस जगह पता लगे, ऐसे विचार जहां हों, उसे सत्संग कहते हैं। इधर पोथी, ग्रन्थ सजाने की आज्ञा नहीं, न चढ़ावा चढ़ाने की। इस जगह प्रेम से सुनकर मन में उसका विचार करने को कहा जाता है। धारण कर सको तो अच्छी बात है, न कर सको तो अपने भाग्य। फ़कीर तो ज़िन्दगी में मरना सिखाते हैं, जिस मरने में परम सुख है। इन्द्रियों के सुखों में तो जीव दिन–रात भटक रहा है। शांति का कोई रास्ता उसे दिखाई नहीं देता। माया की गिरफ़्तारी में हर एक जीव आया हुआ है। जो भी दृश्यमान संसार देखने में आ रहा है, हर चीज़ प्राप्त करने के वास्ते लाखों उपाय जीव करता है मगर तृप्ति किसी भोग पदार्थ द्वारा नहीं मिलती। इस हड्डी मांस के पिंजरे को प्रकाश करने वाली शक्ति क्या है? कभी जीव ने इसका विचार किया है? घड़ी–घड़ी यह काया विनाश की तरफ जा रही है। इस अन्ध विश्वास में जीव हर समय लगा रहता है कि अभी बड़ा समय है, खा–पी लो। भक्ति के वास्ते पीछे देखा जावेगा। तृष्णा रूपी अग्नि में हर जीव तपायमान हो रहा है। एक पलक के वास्ते भी सच्ची शांति को अनुभव नहीं कर सकता। एक पल खुश होता है तो दूसरे क्षण उससे अधिक अशांति को पाता है। इसको पल–क्षण का भी सुख नहीं। उम्मीद में रहता है सुखी हो जाऊंगा। जिस कदर संसार के सुख भोग इक्ट्ठे करेगा उतना ही ज़्यादा अज़ाब में फंस जायेगा। ज़्यादा से ज़्यादा सुखों की लालसा रखनी यह ही सबसे बड़ी बीमारी है। इस रोग से मुख़्लसी पाना ही मानुष जन्म का लाभ है। पांच तत्त का पिंजरा छिन–छिन नाश की ओर जा रहा है। इस झूठे संसार को सत् समझा जा रहा है और ऐसा समझता है कि हमेशा बना रहेगा। यह ही भ्रम और महान अज्ञानता है। बिना उस मालिक की मेहर के यह जीवड़ा तीन काल संशय युक्त रहता है। आख़िर जब इस शरीर का अन्त होने लगता है उस समय रंज व ग़म लेकर ही इस संसार से जाता है।

पांच तत का पिंजरा, पल–पल रूप बटाये।
मूढ़मति जीव सूझे नहीं, नित ही रहिया भरमाये॥

झूठ असत को सत कर जाना, यह ही दुर्मत रोग।
नित ही जले यह जीवड़ा, बिन पाये प्रभ नाम संजोग॥
बालू की यह भीत है, और धुएँ का अंबार।
मूरख जीव नहीं सूझता, पल-पल करे विकार॥
चारखानी के जीव सब, नित ही भरम भरमायें।
तृखा में जीवें तृखा में मरें, तृखा में आवें जायें॥
सत् परमेश्वर सिमर सुख दाता, जो समरूप रहिया रमनाई।
'मंगत' पावें नित सन्तोष को, लाभ जनम का पाई॥

संसार के बड़े इकबाल वाला भी हो जाये, अधिक परिवार भी प्राप्त हो, धन भी बेशुमार हो, अगर चित्त में शांति, धीरज, सन्तोष नहीं आया तो संसार से आख़िर निराश, अशांत ही जाना है। इस वास्ते नित यह विचार करो, यह मानुष देह किस वास्ते मिली है? परमात्मा क्या है? अगर इन बातों का सत्संग में विचार नहीं मिलता तो क्या लाभ हुआ? समय ही बर्बाद हो गया। चन्द दिन इस जगह हैं, हो सके तो वक्त निकाल कर दो घड़ी कुछ सुन जाओ। शायद किसी का भला हो जाये। ईश्वर सबको सुमति देवें।

सत्संग में कुछ दोहे, आरती व समता मंगल उच्चारण करने के बाद सत्संग समाप्त हुआ और प्रसाद बांटा गया। इस जगह निवास के दौरान तरनतारन और अबोहर के प्रेमियों के पत्र आने शुरू हो गए कि सत्पुरुष उनकी तरफ भी ध्यान रखें और अर्ज़ कर रहे थे कि जब आज्ञा हो हाज़िर होकर साथ ले जावेंगे। सब प्रेमियों को यह जवाब दिया गया कि चन्द दिनों तक विचार करके पता दिया जावेगा।

26 दिसम्बर को सत्संग में जब महामन्त्र व मंगलाचरण के बाद वाणी का पाठ हो चुका और श्री महाराज जी सत् उपदेश अमृत वर्षा करने लगे थे कि एक प्रेमी ने फूल लाकर भेंट किया और नमस्कार करके मुड़ने ही वाला था कि आपने झट ही दोहा उच्चारण फ़रमाया।

मूल ब्रह्मा डाल विष्णु, फूल शंकर देव रे।
तीनों देव तू प्रत्यक्ष तोड़े, करें किसकी सेव रे॥

''प्रेमी, जिस जगह यह लगा हुआ था उस जगह अच्छा लगता था। क्यों तुमने तोड़कर इसे रख दिया है? आइंदा ऐसा न करना। यह एक कायदा बना हुआ चला आ रहा है कि संतों के पास जावें तो कुछ सेवा में भेंट ज़रूर लेकर जावें। मगर यहां अपने पापों की भेंट करें और अच्छे विचार ले जावें।'' इसके बाद सत् उपदेश वर्षा फरमाई।

36. सत् उपदेश अमृत

जीव ज़िन्दगी में हर समय कुछ न कुछ करता ही रहता है। इसके अन्दर हर वक्त ख़्याल उठते रहते हैं और उसको निवृत्त करने के लिए जीव कर्म करता है। दरअसल मन में सोचना भी कर्म

है, ब्यान करना भी कर्म है। स्थूल रूप में करना भी कर्म है। जीव एक पलक भी कर्म से खाली नहीं रह सकता है। जीव जैसा उसका स्वभाव होता है उसके अनुसार कर्म करता है। जैसा मन में निश्चय हो गया उसके अनुसार मन में उम्मीद खड़ी करके अपने आपको उस कर्म में जीव लगाये रखता है। आशा–मंशा को पूर्ण करने के वास्ते हर तरह के यत्न करता रहता है। बड़े चाव से कर्म करता है, मगर कर्म के नतीजे का पता नहीं होता। इस शरीर में तीन तरह के भाव उदय होते रहते हैं। जब सतोगुणी भाव उठते हैं तब शांत होकर बुद्धि अच्छे से अच्छे सत्कर्मों का विचार करके कार्य करती है। जब रजोगुण अवस्था अन्दर होती है तब बुद्धि, मन चंचल हो जाते हैं। बुद्धि, मन सांसारिक सुखों, भोगों के वास्ते चेष्टा लिए हुए कर्म करते हैं। जब तमोगुण अन्दर प्रवेश करते हैं तब मन, बुद्धि डावांडोल होकर कुलक्षण कर्म करते हैं। अद्‌भुत इस माया का खेल है।''

इस जीव को कोई न कोई सुधार का प्रोग्राम बना कर चलना चाहिए। जब–तक कोई अपना गोल नहीं बनाता तब–तक चंचल और बेचैन रहता है। सुख–भोग के मकसद को लेकर कई किस्म के प्रोग्राम अन्दर बनाता रहता है जिनकी सार या अंज़ाम कुछ नहीं होता। सारे संसार में जितने भी सामान भोगों के लिए बने हुए नज़र आ रहे हैं उनमें से एक भी मन को शांति देने वाला नहीं है। जिन विचारों से मन को ठंडक चैन या राहत मिल सकती है उनकी तरफ जाने की कोशिश ही नहीं करता। नास्तिकवाद अधिक प्रचण्ड हो रहा है, इस वजह से दिन–ब–दिन सारे संसार में अधिक अशांति के असबाब पैदा हो रहे हैं। अभी क्या? और आगे चलकर देखना आम संसारी जीव कैसे तमोगुण के ज़ेरे असर खोटे से खोटे कर्म करके अपने घातक आप ही बन जाते हैं। जब–तक अन्तःकरण को पवित्र करने वाले कर्म नहीं किए जावेंगे तब–तक जीव सुखी नहीं हो सकते। अपवित्र कर्म कभी शांति नहीं दे सकते। वह दुःख के सागर में डालने वाले होंगे। इस वास्ते इस भयानक काल में ईश्वर विश्वास ख़त्म हो रहा है। ईर्ष्या, द्वेष, छल, कपट, झूठ, पाखंडवाद में जीव दृढ़ हो रहे हैं। जब–तक जीव सतवादी नहीं होते तब–तक समता भाव की प्राप्ति नहीं हो सकती। जीवन के दर्शन करने वाले सत् नियम सादगी, सत्य, सेवा, सत्संग और सत् सिमरण को अपनाकर ही अपने आपके सही रक्षा करने वाले हो सकते हैं। यह नियम ही तमाम दोषों से निर्दोष करने वाले हैं। निर्भय शांति की प्राप्ति ही इस जीवन की सार है। प्रेमियों, असली जीवन बनाने में यत्न–प्रयत्न जारी रखना ही सत् पुरुषार्थ है। एक पुरुषार्थ तो बन्धन में डालने वाला है, सत्‌पुरुषार्थ निर्बन्धन करने वाला है। जब–तक जीव शरीर को धारण करके विचरता है तब–तक प्रारब्ध कर्म अनुसार सुख–दुःख, अशांति मोल ले लेता है। सतवादी होकर ही नास्तिकपन से छुटकारा हासिल कर सकता है और समता आनन्द परम शांति को प्राप्त कर सकता है। ईश्वर सत यत्न में दृढ़ता बख्शें ताकि सफल जीवन करके संसार में चल पायें।

इसके बाद दोहे पढ़े गए फिर आरती और समता मंगल उच्चारण करके सत्संग समाप्त किया गया।

37. फूल भेंट स्वीकार न करने पर विचार

इसके बाद आपने फरमाया:- ''प्रेमी! कोई विचार करो।'' एक प्रेमी ने झट अर्ज़ की:- ''महाराज जी! आपने फूल की भेंट को स्वीकार क्यों नहीं किया, हालांकि सब महात्मा जन अच्छी तरह गले में हार डलवाते हैं?''

श्री महाराज जी ने बड़े प्रेम से फरमाया:- ''लाल जी! तुम हिन्दू लोग फूल-पत्र संतों के आगे रखकर, जल में स्नान से और गऊ माता को आटे का पेड़ा देने से ही छुटकारा चाहते हो, और चाहते हो कि और कुछ न करना-धरना पड़े। प्रेमी, छुटकारा शरीर भेंट से भी नहीं होता। इनमें कोई कल्याण नहीं, न कोई असलियत है। मड़ियां, कब्रें, पूज लीं, दरख्तों के आगे मत्थे रगड़ लिए, साल के बाद या कभी-कभी गंगा स्नान कर लिया और इसी में कल्याण समझ लिया या गाय-बच्छी वैतरणी पार करने के लिए दान कर दी, यह सब वहम, तोहमात कहां तक तुम्हारी बुद्धि को निर्मल कर सकते हैं? आंखें खोलो, अब वह ज़माना नहीं रहा। आइंदा बाल की खाल निकालने वाली नस्लें आ रही हैं। सनातन धर्म यह नहीं है। पुराना सनातन धर्म क्या था, इसका विचार करें? ऋषियों, मुनियों का धर्म था - उपकार, निष्काम कर्म, दुखियों की सेवा, हर जीव मात्र में अपनी आत्मा का विचार करना। किसी को मन, वचन, कर्म करके दु:ख न देना। सदा एक प्रभु की आराधना करनी। जो कुछ धन, सम्पत्ति, परिवार प्राप्त हैं, बल्कि अपना शरीर भी, सब प्रभु की दात समझनी। भिन्न भेद से रहित होना, हर पदार्थ, जीव मात्र में उस समस्वरूप परमात्मा को देखना। आज क्या हालत है? 'चूल्हे दी तेरी, तवे दी मेरी', या दग़ा तेरा आसरा। क्या आहार पवित्र है? व्यवहार में कितनी सफाई, पवित्रता रखी हुई है? प्रेमी यह फक़ीर खाली मत्था टिकाने वालों में से नहीं हैं। यह तुम लोगों को समझाने आए हैं। समां मिले दो घड़ी के लिए आया करो। जाओ अब कुछ दुनिया का कारज करो।''

अच्छे-अच्छे अमीर, पढ़े-लिखे प्रेमी बैठे थे।

एक प्रेमी ने कहा:- ''महाराज जी! सारी पोथी खोल दी है। ऐसा ही हमारा जीवन है। बड़े-बड़े संत आते हैं उनकी कथा श्रवण करने के बाद सब कुछ, भेंट कर देते हैं। कौन इस तरह खोल कर समझाता है? वाक्या ही असली संतों की महिमा अपार है।''

संत मिले कुछ कहिये सुनिये, असंत मिले मुष्ट हो रहिये॥

सांय हो जाने की वज़ह से प्रेमी प्रणाम करके जाने लगे। श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''प्रेमियों! नाराज़ न होना। मानों न मानों इन्होंने तो साफ बात कहनी है।''

सब कहने लगे:- ''महाराज जी! आप बड़ी कृपा कर रहे हैं।''

आसन अन्दर ले जाया गया। आसमान पर बादल छा रहे थे। सर्दी खूब हो रही थी। सब प्रेमी भोजन पाने के बाद चरणों में बैठे मगर सर्दी की वजह से महाराज जी की तबियत भारी हो रही

थी। थोड़ा बादाम रोगन डेढ़ चम्मच दिया गया। प्रेमी आपस में आहिस्ता-आहिस्ता विचार करते रहे।

श्री महाराज जी आंखें बन्द करके समाधिस्त हो गए। काफी देर ध्यानमग्न रहने के बाद आंख खोलकर फरमाया:- ''प्रेमियों! आराम करो।'' शहर जाने वाले प्रेमी चले गए। बाकी प्रेमी अपनी-अपनी जगह लेट गए। रात को बारिश होने लगी। सुबह जब चार बजे बारिश ज़रा धीमी हुई तो श्री महाराज जी गड़वी लेकर बाहर चले गए और सुबह 7.30 बजे वापिस पधारे। तीन-चार रोज़ बारिश ने खूब रंग जमाया। कुछ न कुछ प्रेमी आ ही जाते थे। नियम पूरा उस कमरे में ही हो जाता था। वैसे दिन भर प्रेमी आते-जाते रहते। कई प्रेमियों ने शिक्षा भी ग्रहण की और दौरांगला, धारीवाल, पठानकोट, काहनूवान, कादियां और कई आसपास जगहों के श्रद्धालु आकर सत्संग में लाभान्वित होते रहे। एक बुज़ुर्ग चाचा दयाल जी थे। उनकी साधारण बातें बड़ी वज़नदार होती थीं। महाराज जी ख़ासतौर पर उनसे विचार शुरू कर देते थे।

उसके बाद कुछ प्रेमियों ने प्रश्न पूछे।

प्रश्न :-महाराज जी, क्या जब-तक शब्द नहीं अनुभव होता तब-तक यह विकार जीव को हैरान व परेशान करते रहते हैं?

उत्तर :-प्रेमी जी! त्रैगुणी माया जाल बड़ा ही अपार है। इस माया में सब जीव बंधे हुए ख़्वार हो रहे हैं। जब-तक अपने आपको फ़ायल यानि कर्म का कर्ता मान रहे हो तब-तक उस भ्रम से छूट नहीं सकते। माया का रूप यह कर्तापन ही है। इससे त्रैगुण सत, रज, तम प्रगट होकर अज्ञानता की तरफ ले जाते हैं।

प्रश्न :-महाराज जी, निर्मल प्रीत का क्या मतलब है?

उत्तर :-निष्काम भाव यानि कोई भी गर्ज़ न रखते हुए सत् सेवा में समय देना। जिस प्रीति में कोई गर्ज़ न हो यानि लागर्ज़ हो करके प्रेम सम्बन्ध प्रभु से बनाए रखना है। संतों ने पहले ही सेवा और नाम सिमरण में लगा दिया है, यानि जोड़े साफ करो, झाडू लगाओ, ग़रीब-अनाथ की सेवा, संगत की सेवा, पब्लिक सेवा, जिस कदर निष्काम सेवा बन सके और आन्तरिक साधन सच्ची प्रीति से करने से कर्तापन कमज़ोर होता जाता है।

''तू-तू करता तू भया, मुझ में रही न हूं''

जितने कर्म तुझसे हों नित प्रभु आज्ञा में समर्पण करो। प्रभु की आज्ञा में ऐसा ध्यान परिपक्व हो जाये अन्तर से तेरा अहं ख़त्म हो जाए। 'जो हो रहा है सब प्रभु आज्ञा में हो रहा है'। ऐसा होगा तब उसमें बुद्धि जुड़कर बाहर की सुध-बुध भूल जायेगी। तब अपने आप ही तुझे ऐसा अन्तर-बाहर भासेगा कि उसी दाते की आज्ञा में सारा खेल हो रहा है। तब कर्तापन रूपी अन्धकार लय हो जाता है। मगर यह अवस्था बड़ी ऊंची है। कोटां में कोई ही इस पद को पहुंच सकता है और त्रैगुण माया से पवित्र होता है। हर समय ''तू कर्ता सर्व तेरी आज्ञा'' इस सत् भावना को धीरे-धीरे दृढ़ करते जाओ।

हूं बलहारी तन पंखयां, जंगल जिना दा वास।
कंकर चुगन थल वसन, रब्ब न छोड़न आस॥

हर एक चीज़ से सबक लेना चाहिए। शाम के सत्संग में महामंत्र, मंगलाचरण व वाणी पाठ के बाद जो सत् उपदेश दिया गया वह नीचे दर्ज़ किया जाता है।

38. सत् उपदेश अमृत

जीव ने जब से शरीर रूपी संसार को धारण किया है अनेक ऋतुएं उसने देखी हैं। कई तरह के सुख-दुःख को देखता हुआ पल, मास, साल इसने बिता दिये हैं। जो भी मन से इसने सोचा, वाणी से बोला, आंखों से देखा और इन इन्द्रियों से भोग पदार्थ सेवन किए सबके रस स्वाद किधर गए। कभी इस जीवन में ग़ौर करके विचार नहीं किया। जिस तरह नया साल शुरू होता है और व्यापारी जीव सारा हिसाब देखकर नफ़ा व नुकसान देखते हैं, इसी तरह कई बार और कई जन्मों में जो कमाई इस जीव ने की है, क्या इसने कभी विचार किया है कि किस तरह समय इसने गुज़ारा है और कितना नफ़ा व नुकसान इसने किया है, यानि कितने अच्छे कर्म किए हैं और कितने बुरे? जिस भी शरीर को यह धारण करता है वहां ही अपना परिवार, घर-बार, संग-साथी इकट्ठे कर लेता है। आख़िर चोला जब पुराना हो जाता है, जीव इसे छोड़ देता है। शरीर के टूटने का कोई न कोई बहाना बन जाता है। पांच तत्त्वों का बना हुआ किला समय पाकर बदल जाता है। मानुष जामे में आकर विचार विवेक द्वारा यह जीव सारे प्रपंच को समझ सकता है। मगर इस शरीर को पाकर भी भुलेखे में सारी उम्र भोगों को इक्ट्ठा करने और भोगने में गुज़ार दी तो क्या हासिल किया? सत्-बुद्धि जब किसी गुरमुख के अन्दर पैदा होती है, वह सत्-असत् का विचार करके श्रद्धा-विश्वास से किसी गुरु व पीर की शरण में जाकर शिक्षा लेने की कोशिश करता है। इस वास्ते मानुष जन्म को दुर्लभ कहा गया है। इस जन्म में शरीर और आत्मा का विचार यह जीव कर सकता है। जीव को देखने, सुनने, खाने और स्पर्श का ज्ञान जन्म से हो जाता है और हर शरीरधारी को होता है। चाहे इन्सान है या हैवान या पंछी, सबको अपनी-अपनी प्रकृति के मुताबिक ज्ञान होता है, लेकिन सत् बुद्धि मानुष चोले के अलावा और किसी शरीर में नहीं हो सकती। ईश्वर कृपा इस मानुष चोले पर ही होती है। सारे भेद को जान सकता है। मगर संसार के अश्चर्ज भोग पदार्थ देखकर मोहित हो जाता है। मनमाने भोग पदार्थों द्वारा कई तरह के सुख आराम इकट्ठे करके उनको भोगने में मुस्तग़ार्क हो जाता है। मगर जिस करके सब कुछ प्रतीत हो रहा है उसे जानने की कोशिश नहीं करता, बल्कि सुखों को भोगते-भोगते शारीरिक यात्रा ख़त्म कर देता है। सार का इसे पता ही नहीं लगता। जिस तरह निराशा और प्यासा संसार में आया था उस तृखा को लेकर फिर चल देता है। कोई भी पदार्थ, परिवार, महल, अटारी, किले वग़ैरा सहायक नहीं होते। सत् बुद्धि कैसे पैदा हो सकती है जब सारी आयु झूठ, कपट, छल, फ़रेब में गुज़र रही है? उस कबूतर की तरह मोह जाल में फंसकर आख़िरकार रोना-धोना ही पड़ता है।

एक दफ़ा दत्तात्रेय जंगल में घूम रहे थे। उन्होंने जीवन में चौबीस से भी ऊपर गुरु धारण किए थे। जीव अगर सीख लेना चाहे तो संसार की सब चीजें, संगी–साथी, शिक्षा दे रहे हैं, मगर यह गहरी ग़ौर करके विचार ही नहीं करता। एक दिन घूमते–घूमते जंगल में देखा, एक कबूतर और कबूतरी और बच्चे जाल में फंसकर तड़प रहे हैं। उन्होंने खड़े होकर माजरा के बारे में विचार किया। सारा हाल पल में जान लिया। किस तरह उस कबूतर ने एक दरख्त पर घोंसला बना रखा था। वहां पर एक कबूतरी के साथ उसका स्नेह हो गया। आपस में खूब घुल–मिल कर रहने लगे। एक दूसरे पर बड़ा विश्वास हो गया। दिन के समय जिधर भी अलग–अलग जंगल में जाते शाम को फिर वहां आ जाते। फिर उनके दो चार बच्चे भी हो गए। मोह आ गया। बच्चों का मोह उनको इधर–उधर जाने न देता था। अगर कबूतर बाहर जाता तो कबूतरी पीछे रहती, कबूतरी जाती तो कबूतर पीछे रह जाता। इस कदर मोह बढ़ गया। एक दूसरे से बिछड़ने का नाम न लेते थे। एक दिन कबूतर और कबूतरी दोनों इतफ़ाक से इक्ट्ठे बच्चों के लिए ख़ुराक लेने के वास्ते चले गए। पीछे से एक शिकारी आ गया। उसने जब कबूतर के बच्चों की आवाज़ सुनी, नीचे जाल डाल दिया। बच्चे बार–बारी फुदक कर नीचे आ गिरे और जाल में फंस गए और चीं–चीं करने लगे। ऊपर से कबूतरी आ गई। उसने देखा उसके बच्चे सब जाल में फंसे हुए हैं और चिल्ला रहे हैं। इस पर उसका हाल भी बुरा हो गया। दु:खी होकर उनके पास चली गई ताकि उन्हें छुड़ा ले, मगर वह खुद भी जाल में फंस गई। ऊपर से कबूतर आ गया और आकर देखा कि उसके बच्चे मय कबूतरी जाल में फंसे हुए हैं और कष्ट पा रहे हैं। वह भी मोह वश दु:खी हो गया और चिल्लाने लगा। कभी एक टहनी पर जाता, कभी दूसरी टहनी पर। वह समझ रहा था कि सर्वनाश हो गया। जीना मुहाल होने लगा, फिर मोह वश वह भी न रह सका। फड़कता हुआ नीचे जाल में जाकर फंस गया। तब शिकारी खुश होकर सबको लपेट कर खुशी–खुशी ले चला। यह सब हालात देखकर दत्तात्रेय ने मन ही मन में विचार किया, ''ओह, किस तरह जीव मोह रूपी जाल में फंस कर कुटुम्ब के वास्ते अपनी अक्ल खो बैठता है। इस तरह लोभ में फंसा हुआ जीव उस कबूतर–कबूतरी की तरह वियोग से दु:खों को प्राप्त होते हैं।''

एक राजा पदु हुए हैं, दत्तात्रेय ने उनको यह कथा सुनाकर कहा– कि संसार के सब जीवों की ऐसी ही हालत है। और फरमाया:– ''इससे शिक्षा मिलती है कि किसी से ज़्यादा हित न लगाओ। किसी से स्नेह मोह नहीं रखना चाहिये वरना बुद्धि आज़ादी खोकर पराधीनता इख़्तियार कर लेगी, जिससे दु:ख, क्लेश सहना पड़ेगा।''

इससे शिक्षा मिलती है कि संसारी जीवों की ऐसी हालत ही होती रहती है। कोई ही सत् बुद्धि वाला ऐसे विचारों से शिक्षा ग्रहण कर सकता है। शिक्षा के बग़ैर जीव अंधकार में आया और अंधकार में चला जाता है। इस वास्ते गुरु–पीरों को धारण करने की प्रथा बनाई गई थी। जब–तक जीव सत् शिक्षा को लेकर नहीं चलता उसे ज्ञान नहीं मिलता और सत्–असत् की तमीज़ नहीं रहती। सत्संग से विचार, विवेक मिलते हैं। जीव सोच सकता है कि संसार क्या है? यह जीव किधर से

आया और किधर जाना है और क्या सम्बन्ध बने हुए हैं? वह यह भी विचार करता है कि यह मौज मेला बना नहीं रहेगा बल्कि एक रोज़ सबसे वियोग होना है।

मन मूढ़ा समझाईये, निमख–निमख कर मीत।
'मंगत' बिना दाता दीनदयाल के, सब जग झूठी प्रीत॥
कहां से आया कहां जावना, कहां रहिया पांव पसार।
ऐसो ही यह अस्चर्ज खेल है, बिन विचार पाये न सत्सार॥
जग जीवन दिन चार है, रहना नहीं किसे मीत।
संसे यह संसार है, धार रहियो झूठ परतीत॥
नित सत मति को धार के, सुनयो सतगुर सीख।
बार–बार मन को साचियो, रख प्रभ चरन परीत॥
धन जोवन न थिर रहे, पलक–पलक नाश हो पाई।
'मंगत' प्रभ नाम चित धारिये, संसा जग सब जाई॥

चाहे अमीर है या ग़रीब, राजा है या भिखारी, आख़िकार सबने संसार को छोड़ना है। छोड़ने से पहले संसार की बाजी को जीत लेना शूरवीरता का काम है। ईश्वर सबको सुमति देवें। फिर दोहे पढ़े गए। आरती व समता मंगल उच्चारण करने के बाद सत्संग समाप्त हुआ और प्रसाद बाँटा गया।

इतने में प्रेमी हरि ज्ञान सिंह व जगजीत सिंह तरनतारन से पधारे और चरणों में नमस्कार करके बैठे। श्री महाराज जी ने सबकी कुशलता पूछी और फरमाया:– ''क्यों इतनी तकलीफ़ की है? तरनतारन पास ही तो है, प्रेमी छोड़ आते।'' प्रेमी हरि ज्ञान सिंह ने अर्ज़ की:– ''महाराज जी! इस ज़रिये गुरदासपुर निवासी प्रेमियों के दर्शन हो गए और हम दासों का फ़र्ज़ है इस जगह से लेकर जाना। यह तकलीफ़ नहीं आप जी की कृपा है।''

श्री महाराज जी ने संगत से कहा:– प्रेमियों! अब आख़री समय है कोई विचार हो तो करो। एक प्रेमी ने अर्ज़ की:– ''महाराज जी! जीव की संसार के सुख भोगों में क्यों ज़्यादा रुचि बनी रहती है। सत्संग और अच्छे कर्मों के करने के वास्ते उत्साह नहीं पैदा होता। क्या यह भी प्रारब्ध कर्मों की वज़ह से ऐसा होता है?''

महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी! बड़ा अच्छा विचार तुमने किया है। जन्म–जन्मांतर से जीव का रुख संसार की तरफ बना हुआ है। स्वाभाविक सांसारिक सुख भोगों की तरफ जन्मकाल से उसकी रुचि बनी हुई है। जिस तरफ का लगाव मोह ज़्यादा होता है उसी तरफ यह चित्त दौड़ता है। शुभ–अशुभ कर्म जीव से होते रहते हैं। जब–तक चित्त के अन्दर प्रभु प्रेम और लगाव सत्मार्ग की तरफ न हो तब–तक सत्संग और सत्कर्मों में नहीं लग सकता। उस जीव के पूर्ण भाग्य हैं जिसके अन्दर प्रभु चरणों का प्रेम बना हुआ है। वह ही सत्संग की तरफ जाएगा। सत्संग में जाने वाले के अन्दर सत् विचार पैदा होते हैं, वरना मूढ़मति जीव कुसंग की तरफ तो लगा हुआ ही है। जब सत् विचार पैदा होता है तब उसके अन्दर सत् विश्वास ईश्वर के प्रति बनने लगता है। सत्

विश्वास करके गुरु की शरण में जाता है। सच्चाई को तीर्थ, वन, पहाड़ों की गुफ़ाओं में ढूंढने लगता है ताकि कहीं से कोई सत्पुरुष मिल जाए, जो चित्त की आग बुझाने वाला हो। कोशिश करने और भाग्य से सत्पुरुष मिल जायें तो उनसे ज्ञान लेकर सत्साधन को धारण करके शुद्धता को प्राप्त कर लेता है। बग़ैर साधना के साधु नहीं बन सकता। अनेक तरह के यत्न-प्रयत्न करने में लगा रहता है। प्रेम के बिना कोई कारज सिद्ध नहीं होता। जिस काम में उसकी रुचि लगी होती है, उसको पूरा कर लेता है। प्रेमी बार-बार अपने को प्रभु आज्ञा में दृढ़ करके उस कर्म रोग से ख़ुलासी पा जाता है। जब-तक कर्म की वासना निवृत्त नहीं होती तब-तक संसार के सुख भोगों की तरफ चित्त दौड़ता रहता है। जिस वक्त सुरति सत्नाम में लग जाती है, बाहर की सुध-बुध भूलकर केवल निर्वास हालत में विचरती है। जब ख़्वाहिशें ख़त्म हो गईं फिर चित्त किधर दौड़ेगा। इस वास्ते संसार के सुख भोगों का प्रेम कम करके निष्काम प्रेम भाव से मालिक के चरणों में दो घड़ी मन बुद्धि को लगाया करो। जब-तक सत् युक्ति से प्रभु नाम सिमरण में बुद्धि नहीं लगती तब-तक दौड़ती रहेगी। किसी गुरु-पीर का आसरा लेकर चलने से सफलता मिल जाया करती है। जब संसार के सब कामों को सीखने के वास्ते उस्ताद की ज़रूरत रहती है तो धर्म के मार्ग में भी प्रेमी, बड़े भारी त्यागी सत्गुरु की ज़रूरत है। तुम लोग बड़े व्यापारी हो, सत् का सौदा लेने की ख़्वाहिश होगी तब ही तो खरीदोगे। पहले ख़्वाहिश पक्की बनाओ फिर यत्न भी बन जायेगा।''

महाराज जी, अब हम गुरु कहां ढूंढने जायेंगे? आप ही कृपा करके रास्ते पर डाल जायें। बहुत दयालुता होगी।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''प्रेमी! फिर कभी ईश्वर आज्ञा से इधर से गुजरना हुआ, विचार कर लेना। तुमने शायद इनको समझ लिया हो। अभी तुम्हें भी देखना है। झटपट की बात नहीं, ''कुनां मुनां कुर, तू चेला मैं गुर''। सत् का सौदा करना है तो तुम भी गुरु की परख कर लो और यह भी अच्छी तरह बर्तन देखकर अमृत रूपी दूध डालें। अब तो प्रोग्राम बन चुका है। इधर से कल 9 जनवरी, 1951 को सुबह दस बजे तरनतारन के वास्ते रवाना होंगे।''

आसन अन्दर ले जाया गया। श्री महाराज जी जब अन्दर पधारे, प्रेमी जो रह गए थे सबने प्रणाम किया। जब आप बैठे तो फरमाया:

गफ़लत करोगे तो खाओगे मार, बेटा बेटी कोई लेगा न सार॥
तोबा करो बहुत कीजो न और। दोज़ख की आतिश जलावेगी ग़ोर॥

फरमाने लगे:- ''एक दफ़ा नानक का ईरान में जाना हुआ। जिस जगह कारून का महल था। उधर जा निकले। बाहर महल की टूटी-फूटी ठीकरियां पड़ी हुई थीं। आहिस्ता-आहिस्ता एक-एक करके उठाकर झोले में डाल रहे थे। कारून बादशाह इत्तफ़ाक से पास से गुज़रा। खड़ा हो गया। देखकर कहने लगा:- 'फ़कीर साईं बाबा! इन ठीकरियों का क्या करोगे?' नानक अपनी मस्ती में लगे हुए थे। आवाज़ सुनकर बादशाह की तरफ मुंह करके कहने लगे, 'बहुत नज़दीक दरगाह में

साथ ले जाऊंगा।' बादशाह हँस पड़े और कहने लगे:- 'क्या यह ठीकरियां भी दरगाह में जा सकती हैं?' उस पर नानक ने फरमाया:- 'अगर तुम्हारे चालीस गंज रुपया अशर्फ़ियां बग़ैरा, जो तुमने दरगाह में साथ ले जाने के वास्ते जमा कर रखे हैं, तुम्हारे साथ जा सकते हैं तो ये ठीकरियां भी जा सकती हैं।' यह शब्द सुनते ही बादशाह की आंखें खुल गईं। उसने उनके हुक्म के मुताबिक सारी दौलत ग़रीबों व जनता में बांट दी।''

''यह शब्द नसीहत नामा के हैं जो कि कारून को हिदायत करते समय नानक ने उच्चारण फरमाये थे। क्यों प्रेमी जगजीत सिंह ठीक हैं?'' फिर तरनतारन के प्रेमियों से विचार चलते रहे।

39. तरनतारन में एकांत निवास और सत् उपदेश अमृत

9 जनवरी, 1951 के रोज़ सुबह श्री महाराज जी बाहर से जल्दी पधारे। स्नान करके दूध लिया। प्रेमियों ने प्रसाद पाया। दस बजे बस अड्डे के लिए रवाना हो पड़े। मातायें व प्रेमी भी हाज़िर हो गए थे। सबको जाने की आज्ञा हुई। प्रेमी दौरांगला, काहनूवान, धारीवाल निवासी अड्डे तक साथ आए। पठानकोट से जब बस आई उसमें प्रेमियों ने सीटें संभाल लीं और एक सीट पर आसन लगाया गया। धारीवाल के प्रेमी भी साथ सवार हुए। धारीवाल जब बस पहुंची, प्रणाम करके उतर गए। गुरदासपुर के कुछ प्रेमी अमृतसर तक साथ आए और तरनतारन वाली बस में सवार कराकर प्रणाम करके वापिस हुए। बस चार बजे तरनतारन पहुंची, उसमें से उतरकर साबना बाग में ही डेरा डाल दिया। संत आत्मा सिंह जी आगे ही टहल रहे थे। प्रेमी जगजीत सिंह टैंट लेने चले गए और जाकर प्रेमियों को भी सूचना दे आए। सब दमादम बाग में पहुंच गए और टैंट फौरन लगवा दिया गया।

टैंट लग जाने पर पराली अन्दर बिछाकर आसन लगाया गया। श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''अच्छा चलता-फिरता घर है, जहां मर्ज़ी हो ठोक लिया।'' संत आत्मा सिंह जी प्रणाम करके बैठे। बगल में से कपड़ा निकालकर उससे कुछ सूखी अंजीरें निकाल कर भेंट कीं। श्री महाराज जी ने एक उठाकर सेवन की और बाकी संत जी ने उठाकर भक्त जी को दे दीं और कहा:- एक-एक करके रोज़ सेवा में रखते रहना। इतने में श्री अनन्त राम, श्री कुन्द्रा, श्री दीवान चंद जी, प्रेमी अमीचंद जी वुकला साहिबान और सरदार गोपाल सिंह जी और कई प्रेमी और सज्जन दर्शनों के लिए पहुंच गए। कुछ राजनैतिक विचार चले। अब अन्धेरा होने लगा। श्री महाराज जी ने सब प्रेमियों को फरमाया:- ''शाम को सत्संग निश्चित कर लो, अब तो रोज़ाना आने की तकलीफ़ होगी।'' भक्त जी को प्रेमी साथ ले गए ताकि नाश्ता कर लें। सब प्रणाम करके विदा हुए। प्रेमी जगजीत सिंह जी भी अपना बिस्तरा वहां ले आए। रात अंधेरी थी। कुछ विचार चलते रहे। आख़िर श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमियों! आराम करो।'' प्रेमी लेट गए। सत्पुरुष भी लेट जाते, मगर जब प्रेमियों की आंख लग जाती तो बैठकर समाधिस्त हो जाते। आपकी ऐसी स्थिति थी कि आंख मूंदते ही आनन्दित अवस्था हो जाती और मस्त हो जाते। रात के समय तो अति आरूढ़ अवस्था होती। रात

के तीन बजे आवाज़ दी, ''बनारसी–बनारसी, उठो।'' एकदम कुंए से भक्त जी ताज़ा पानी लाए और गड़वी भरकर साथ हो लिए। कुछ दूर जाकर गड़वी लेकर फरमाया:– ''तुम आराम करो।'' सुबह सूरज निकलने पर 7.30 बजे के करीब वापिस आए। कुंए से ताज़ा पानी लाया गया।

तब आपने फरमाया:– ''सर्दी की वज़ह से कुछ भारीपन महसूस हो रहा है। चलकर ज़रा बादाम रोगन दे दो।''

तम्बू में आकर बादाम रोगन दिया गया। धूप में आसन लगा दिया गया। दूध देने के बाद भक्त जी शहर जाने लगे तो आपने फरमाया:– ''दूध का बन्दोबस्त इसी जगह करो। रोटी शहर जाकर खा आया करो।'' प्रेमी जगजीत सिंह कहने लगे:– ''कल से इसी जगह इंतज़ाम होगा। इंतज़ाम आज ही हो जावेगा। दूध सुबह आ जाया करेगा। आने वाले प्रेमी चाय भी इसी जगह ले लिया करेंगे, यहीं ठीक रहेगा।'' श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''एक और टैंट प्रेमियों के लिए लग जाना चाहिए।''

उसी दिन प्रेमी जगजीत सिंह लोहे का चूल्हा, कोयले, चीनी के बर्तन बग़ैरा ले आए। गाय के दूध का भी इंतजाम कर दिया गया। गाय का दूध श्री महाराज जी दो वक्त लेते, सुबह 8.30 बजे और शाम को 3.00 बजे। शाम को श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमियों को नई जगह का पता दे दिया जाये। कलम–दवात इधर दे दो, ज़रा प्रेमियों को उत्तर दे दिया जावे। उसका स्वभाव भी बड़ा आश्चर्ज है। अपनी तरफ से समझाना फ़र्ज़ है आगे चले न चले। इस मार्ग का शौक भी बहुत रखता है। मगर प्रारब्ध कर्म कुछ करने–धरने नहीं देते। कुछ कमाई करे तो वह भी बदल सकते हैं। कमाई ही करनी ओखी है।'' पत्र बुज़ुर्ग प्रेमी महन्त रत्न दास की तरफ से था। उसने पूछ रखा था, सुरति शब्द में जब लगी होती है कैसी हालत अनुभव करती है। श्री महाराज जी ने शब्दों में उत्तर दिया।–

नाम साहब हृदय बसा, मन पवन किया इक ठौर।
उपजा शब्द अगम में, सुरत भाई मखमूर॥
ऊंची पवन आकाश में, खेले नित चौगान।
अन्तरमुख में वास कर, देखो शब्द निर्वान॥
रोम–रोम में नाद उपजे, तीन भवन घनघोर।
प्रान उपान को सम किया, मन आया निज ठौर॥
सुरत निरत की चौपट ला के, खेले सुघड़ खिलाड़ी।
मन वच कर्म अमीरस पीवे, अखंड जोत उजयारी॥
पिंड ब्रह्ममंड का निर्णय कीना, आतम तत निराला।
गगन गुफा में अमृत धारा, पीवे गुरमुख बाला॥
पांच पच्चीस का मद हरिया, चढ़या निर्मल घाटी।
निर्गुन सर्गुन इक चित बांधे, गई भरम की टाटी॥

गुरमुख बाला कोई जन साधे, मरके जीवन पाये।
अगम अगोचर पुरख निरंजन, दरसे सहज सुभाये॥
चेतन के संग चेतन होया, सतगुरु भेद बताया।
'मंगत' परख के निर्मल होया, जड़ मल दूर बहाया॥
कर्म-कर्म में जीव बंधाए, छूट सके न कोई।
आवागमन के चक्कर में फिरे, नाना जन्म बगोई॥
आशा तृष्णा जेवड़ी, बांधे रंक भोपाल।
अचरज माया साहब की साधो, काढ़े अधिक जंजाल॥
मानुख जन्म सफल नर जानो, छूटन का करो उपाय।
सत सील सन्तोख चित धारो, मिल गुरु नाम कमाये॥
जन्म-जन्म का मल नर छूटे, पावे चित परतीत।
निर्मल करनी साध की जानो, चलियो भवजल जीत॥
काल ग़रासे चुन-चुन सबको, क्या सती क्या सूर।
सतगुरु शब्द जिन-जन सोधया, काल किया तिस चूर॥
कर्म गया संसा गया, शबद पाया परवेश।
खुली किवाड़ी गगन में, गए अमरपुर देश॥
वस्तु वंजन आया, वंजी वस्त अनूप।
सरब व्यापक सरब न्यारा, ऐसा सतगुरु भूप॥
सब कुछ तिस से होवता, फिर वह सबसे दूर।
'मंगत' गुरमुख भेद को बूझे, सन्से भये काफ़ूर॥
काची काया में अमर लखाया, सत पद निर्मल बानी।
उठ-उठ साधो ध्यान धरो, तिस खुली अमीरस खानी॥
पीर मुरीदी रिश्ता टूटा, सुरत भई लवलीना।
ग़ौस कुतब और नबी ध्यावें, पार किसे जन चीना॥
ज्ञान को खावे ज्ञान को पीवे, प्रेम छतर सिर धारी।
ख़िमा ग़रीबी चोला पहने, निर्गुन भए पुजारी॥
सरगुन सुरति काटी अन्तर, जोत निरालम पाई।
जप तप संजम पहनी माला, सुरती शबद समाई।
आए पवन उधर चित राखे, नित प्रति आपा काढ़े।
सहज भाव मिल आप समावे, काल कर्म सब टारे॥
जत सत कंठी पहने गुरमुख, दृढ़ आसन निध्यास।
परम पुरख संग खेल करे, नित अज अनील अबनास॥

भरम कर्म का धोका मिटे, सार शबद मन लाए।
ब्रह्म अखर की धारा उपजी, रूप वरन न काए॥
धारा माहीं धीरज धरिया, सुरत करे स्नानी।
आवागवन के संसे मिटे, पुरख मिला आसमानी॥
गढ़ फोड़ा गुरु वचन को धारा, शबद लिखा निर्बानी।
जां के सम न दूजा काऊ, देखा अघट दीप नौ खानी॥
भाग हुए गुरमुखता पाई, आद निरंजन जाता।
सकल स्वामी सर्व का ठाकुर, 'मंगत' मन चित भाता॥
तिस बिन और न दूजा सूझे, एक जीवावन हार।
थल मंडल पाताल में देखो, एको सरजनहार॥
जीव जन्त सब तिसकी माया, सबसे रहत अलेपा।
गुरु वचन ऐ तत विचारे, सिमरे नाम अलेखा॥
सिमर-सिमर मन राखो अन्तर, संतन की परतीत।
बानी तज निर्बानी होवे, निर्भय पावे चीत॥
अल्प आहारी सूक्षम निन्द्रा, मन तन रहे बैरागी।
मन पवन को थामे निस दिन, नाम जपे अनुरागी॥
राजस योग ही साचा मारग, सुगम भाव चित लाओ।
आवागवन का बन्धन काटो, सुरति शबद कमाओ॥
घट-घट भीतर चानन होया, सतगुरु वचन सुहाई।
अनहद नाद निरालम जोती, 'मंगत' तां लिवलाई॥

प्रेमी जी, जिस स्थिति को तुमने लिखा है अगर ऐसी ही अवस्था में जा रहे हो तो ठीक है। प्रभु भाग्य लगावें। इधर से हर समय तुम्हारे वास्ते आशीर्वाद ही है। पत्र आने से हर किस्म के हालात का पता चलता रहता है। इस वास्ते पिछले पत्र में ताकीद (हिदायत) की गई थी। दोबारा आशीर्वाद। पास ही बैठे जगजीत सिंह अर्ज़ करने लगे:- ''महाराज जी! हम लोगों का क्या बनेगा? बड़ा मुश्किल रास्ता है। आप किसी तरह थोड़ी सी कृपा कर देवें ताकि इस लालची मन को स्वाद सत्मार्ग में चलने का लग जावे।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''यह खोये का लड्डू नहीं जिसका स्वाद तुम देखना चाहते हो। ज़रा गुरुओं के जीवन पर निग़ाह डालो। भाई लहना (अमर दास) ने कितनी मुश्किल से प्रेम पद पाया है। उनकी तरह ही तुम्हें भी चर्ख़ी पर चढ़ना पड़ेगा, तब अन्तर विखे रोशनी होगी। आसान है, बहुत मुश्किल भी। हाज़िर ज़िन्दगी को अच्छी तरह देखो। ''आखन ओखा साचा नाऊं'' प्रेमी बड़े तप-त्याग की ज़रूरत है। इस विचारे को शौक बहुत है। निकम्मे धंधे बहुत डाल रखे हैं। गद्दी नशीनी तो एक अज़ाब है। ग़हरी ग़ौर से देखा जावे तो इस लकब (उपाधि) से क्या हासिल है?

किनारे होकर तप करे, थोड़ी निग़ाह रखता रहे। मगर आगे नहीं कुछ बढ़ सकता जब–तक इससे एक तरफ होकर दूर जाकर न रहे। इधर से गाह–ब–गाह चेतावनी फ़र्ज़ समझकर दे देते हैं, आगे जैसे उसके भाग्य। माया चक्कर बड़ा अश्चर्ज है, उससे पार होना ही शूरवीरता है।'' भक्त जी से कहा, ''तू दूसरों को छोड़कर अपनी तरफ ध्यान दे, क्या करता रहता है? दिन भर एक दो घंटे कभी बैठ कर देखा है? सबसे ओखी (कठिन) घाटी यह ही है।''

विचार हो रहे थे, संत आत्मा सिंह जी आ गए और प्रेमी आने शुरू हो गए। पूरे चार बजे महामन्त्र, मंगलाचरण उच्चारण करके शब्द पढ़े गए, फिर श्री महाराज जी ने अमृत वर्षा की।

40. सत् उपदेश अमृत

मन का स्वभाव है कुछ न कुछ सिमरण करते रहना। संसारी विषय वासनाओं का सिमरण करते–करते उनका ही रूप हो जाता है। प्रभु का सिमरण करना इसके वास्ते मुश्किल हो जाता है क्योंकि जन्म–जन्मांतर से इसका बाहरमुखी माया से लगाव बना हुआ है। सत् के परायण नहीं हो सकता। अधिक विकारों की अग्नि में हर एक जीव अपने–अपने को हवन कर रहा है। जब–तक संसार को अपना खड़ा किया हुआ नहीं समझता तब–तक इससे छुटकारा पाने का यत्न भी नहीं ढूंढ सकता। जीव समझते हैं कि गंगा या अमृतसर में स्नान करके छुटकारा मिल जाएगा। दो पैसे अरदास करके मुक्ति मिल जायेगी। कबीर कहता है:

राम के कहे जगत तर जाई। खांड कहे मुख मीठा॥
पावक कहे पांव जो जराई। जल कहे तिरखा बुझाई॥
भोजन कहे भूक जो भागे। तब दुनिया तर जाई॥
बिन देखे बिन दरस परस मन। नाम लिए का होई॥
धन के कहे धनी जो होई। निर्धन रहे न कोई॥
साचा हेत विषय माया से। सतगुरु शब्द की हांसी॥
कबीर कहे गुरु के बेमुख। बांधे जमपुर जासी॥

दुनिया वाले ईश्वर से भी सौदेबाजी करना चाहते हैं। करें करायें कुछ न, आंख बंद करें ईश्वर के दर्शन हो जावें। माया–परस्ती जिस समय बढ़ जाती है उस समय ऐसी हालत होती है। ईश्वर चिंतन से बेमुख होकर संतों के वचनों को महज़ एक जीवन निर्वाह के वास्ते इस्तेमाल करने से कैसे कल्याण हो सकती है? धर्म इस समय पेट पूजा बना हुआ है। हर समय अंधकार की पूजा हो रही है। ईश्वर के प्यारे तो त्यागी–अनुरागी दुनिया से अलग रहकर जीवन गुज़ार जाते हैं, बाद में उनकी जूठी पत्तल चाट–चाट कर बड़े–बड़े ज्ञानी ध्यानी कहलाने लग जाते हैं। बड़े–बड़े गद्दियां मठ बन जाते हैं। एक ईश्वर सिमरण है, एक संसार सिमरण है। एक सिमरण बन्धन से मुक्त करता है।

संसारी सिमरण बन्धन-दर-बन्धन में डाले रखता है। बन्धन से छूटने के वास्ते प्रभु परायण होना है। इस वास्ते हर समय क्षमा, दया, धीरज, त्याग आदि महागुणों की ज़रूरत रहती है। जो भी प्राणी, प्रेम श्रद्धा से महागुणों को धारण करता है, वह ही निर्विकार होकर शुद्धता को प्राप्त कर लेता है। मानुष जामे में ही यह जीव शांति रूपी परम पदार्थ प्राप्त कर सकता है। इस वास्ते अपने आपको धर्म परायण करते हुए नित प्रभु आज्ञा में दृढ़ करना चाहिये, तब ही इस भयानक माया जाल से छुटकारा प्राप्त कर सकेगा। कबीर को ब्राह्मणों ने बड़ा सताया था कि यह पूजा बग़ैरा कुछ नहीं करता, खाली पाखंड बना रखा है। कबीर भी गुरु पूरा था, आगे से उसका पूरा जवाब होता था।

न हम पूजें देवी देव, न हम फूल चढ़ाई।
न हम मूरत धरी सिंघासन, न हम घंट बजाई॥
कासी में जो प्रान त्यागे, सो पत्थर भये भाई।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, भरमें जन भुकवाई॥
लख चौरासी जीव जन्तु हैं, तां में रमता हम ही रही।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, सत्नाम तुम काहे न गही॥

पूरा फक्कड़ साधु था। किसी से न डरता था। संत हमेशा सत् ही कहते हैं। केवल एक सत् शक्ति को मानना और मनवाना उनका परम लक्ष्य था। अपनी तरफ से अंधेरा निकालने की संतों ने बहुत कोशिश की, मगर दुनिया वालों का अपना ही रास्ता है। हिन्दू मुर्दे पूज कौम है। ज़िन्दगी में किसी की नहीं मानते। जब संसार से संत चले जाते हैं, फिर उनकी मिट्टी पूजते हैं। जिस-जिस जगह कदम रखते हैं, उसको सिर का साहेब बना लेते हैं क्योंकि कहते हो न, 'तरनतारन साहेब, पंजा साहेब, वाह-वाह उनका ऊंचा जीवन था।' उनके नक्शे कदम पर चलना नहीं, खाली उनके नाम के पीछे क्या-क्या उपद्रव हो रहे हैं? उन्होंने रक्षा का भार उठाया था, यह उनके कातिल बन रहे हैं। सत्पुरुष तो प्रेम से रहने का सिद्धान्त बतलाते हैं ताकि जीवन बड़े शांतिपूर्वक मिलकर गुज़ार सकें। ईश्वर इस भयानक काल में सब जीवों को सुमति बख़्शें ताकि संसार में आने का यथार्थ लाभ समझ सकें।

फिर शब्द पढ़कर आरती और समता मंगल उच्चारण किए गए, सत्संग समाप्त हुआ, और प्रशाद बाँटा गया।

प्रेमी अनन्त राम जी कहने लगे:- ''महाराज जी! अपनी तरफ से आप सार बातें ऐसी कह देते हैं बोलने की गुंजाइश नहीं रहती। एक प्रार्थना यह है कि ईश्वर को ऐसा मंजूर ही होगा तब ही अनेक ख़्याल के जीव पैदा हो जाते हैं। अपना-अपना मज़हब, पन्थ, दायरा बनाकर चलने लग जाते हैं। हर एक पन्थ, मत वाला यही कहता है, 'मेरी तरफ आओ, तब तुम्हें निज़ात मिलेगी। मैं मुक्ति दिलाऊंगा।' ऐसे भरम-भुलेखे में ब्राज-औकात पड़ जाते हैं, ख़ास कर पढ़े-लिखे लोग कि कुछ कह नहीं सकते। आप ही हमारे सामने हैं, इस वास्ते हम कुछ किसी नतीजे को समझ कर चलने वाले बन सकते हैं। वरना चारों तरफ फंसाने का चक्कर ही बना हुआ है।''

श्री महाराज जी फरमाने लगेः- ''प्रेमी! यह आज की बात नहीं। शुरू से दो हालतें चली आ रही हैं। यह मार्ग समझदार, बुद्धिमान लोगों का है। राजे लोग राज को छोड़कर शांति के वास्ते ऋषियों के कहने के अनुसार चलकर परम स्थिति को प्राप्त होते हैं। मामूली, साधारण जीवों को जिधर लगाओ उधर चल पड़ेंगे। विरले ही संत समझाने वाले भाग्य से मिल जाते हैं। ''अंधा ते बन्धा''। चलने वालों को रास्ता मिल ही जाता है। ईश्वर ने सबको बुद्धि दे रखी है। संसार का लोभ, मोह कुछ करने नहीं देता। जितने भी मज़हब, पन्थ हुए हैं, सबने प्रभु-परायण होने की हिदायत की है। प्रभु परायणता का मसला मुश्किल से बुद्धि में बैठता है। इस वास्ते बाज़ संतों ने गुरु परायणता सिखाने की कोशिश की, जिस करके अलग-अलग मार्ग पन्थ बन गए। मुक्ति, भक्ति को कोई नहीं चाहता। एक लकीर पीटने वाली बात बाद में रह जाती है। गीता से बढ़कर किसने फ़िलस्फा बयान करना है? मगर कौन चल रहा है? वैसी ही तालीम मोहम्मद ने दी है। जिस्म और जान दो अलग-अलग चीज़ें हैं। केवल वाहिद एक अल्लाह के सिवा दूसरी उसकी कोई मिसाल नहीं है। ईश्वर भक्ति नहीं तो और क्या है? अब क्या सूरत इख़्तियार कर गए हैं? जो भी गुरु, पीर, अवतार, पैग़म्बर हुआ है, असल में वही सच्चाई को मानने वाले हुए हैं। बाद में धारा बदल जाती है। तुम दूसरों को छोड़ो। इस बहस से मग़ाज यानि बुद्धि चंचल हो जाती है। तुमको रास्ता ठीक समझ में आ गया है न। किस-किस को जाकर रास्ती का मार्ग समझाओगे। जब रोशनी होती है, परवाने आ जाते हैं। जिस-जिस के भाग्य में होगा, आप ही चलकर आयेगा या उनको प्रेरक शक्ति ले आयेगी।''

प्रेमी अमीचंद दूर से हाथ बांधकर बोलेः- ''महाराज जी! गरीबां ते भी निग़ाह बनी रहनी चाहिये। हमारी बुद्धियां हद से भी ज़्यादा कीचड़ में फंसी हैं। आपने ही हिम्मत करके हमको निकालना है। इसी वास्ते परमात्मा ने आपको यहां भेजा है।''

श्री महाराज जी फरमाने लगेः- ''संत तो दयालुता के वास्ते आ ही गए हैं। जो कुछ यह कह रहे हैं श्रवण करके मनन, निद्धियासन करें, इसी में सब कुछ है। यत्न तुमको करना पड़ेगा। फूंक से पार करने वाले यह संत नहीं हैं। सारी उम्र कूड़-कुसत् तुम करते रहो, पल में यह किस तरह उद्धार कर दें। वैसे कोई बड़ी बात नहीं, बुद्धि का रुख ही बदलना है। संसार को तीन काल झूठ, असत् और दुःख रूप समझकर ईश्वर को सत् और परम सुख रूप जानकर बारम्बार उसके परायण होवें। एक दियासलाई की तीली बड़े से बड़े घास, लकड़ी के ढेर को आग की आग में ख़त्म कर देती है। जो भी कर्तव्य मन चित्त से किया जाए, निष्काम भाव से किया जाए, बस फिर कोई देर नहीं लगती। संत तो सही रास्ता दिखला सकते हैं, उस पर अमल तो आपने ही करना है।''

उसके बाद आसन अन्दर ले जाया गया और सत्पुरुष अन्दर जाकर विराजमान हुए। प्रेमी अनन्त राम जी कुन्द्रा ने जगजीत सिंह की ड्यूटी लगाई कि सत्पुरुष का उसने ही ख़्याल रखना है और किसी किस्म की तकलीफ़ नहीं होने देनी। जो भी चीज़ ज़रूरत हो फ़ौरन सूचना दे दिया करें। श्री महाराज जी की सेहत आगे से कुछ नरम मालूम हो रही है। वे शारीरिक स्वास्थ की तरफ

ध्यान नहीं देते और श्री महाराज जी से प्रार्थना की:– महाराज जी! आपने ही जनता पर कृपा करनी है। आप सर्व–समर्थ हैं, आपके लिए कोई बड़ी बात नहीं। शरीर और आत्मा दोनों का भेद योगीजन जानते हैं।

इस पर श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी! शरीर ने भी अपने कर्म भोगने हैं। होनी बड़ी गहन व विचित्र है। आज बेशक रामचन्द्र जी को अवतार कहें, मगर जो–जो तकलीफ़ें उन्होंने उठाईं, वशिष्ठ जैसे गुरु भी न बता सके। इतना भी न बता सके कि सुबह बनवास होगा या शाही सिंघासन। बाकी उसके भाने में ही विचरना ठीक है। इलाज में प्रेमियों ने कोई कसर नहीं रखी। इस समय कोई तकलीफ़ नहीं। मामूली भारीपन किसी समय महसूस होता है तो उसका बन्दोबस्त बादाम रोगन प्रेमी ने रखा हुआ है। जब–तक शरीर खड़ा है अक्सर कोई न कोई रगड़ा लगता रहेगा। अब दिन में दो बार दूध लेना भी बोझ महसूस हो रहा है। दो–चार रोज़ और देखते हैं। एक दफ़ा सुबह का ही समय निश्चित कर दिया जावेगा।''

इसके बाद प्रेमी आज्ञा पाकर विदा हुए और प्रेमी जगजीत सिंह भी खाना खाने गया। जब प्रेमी जगजीत सिंह वापस आया, सत्पुरुष अपनी आनन्दित अवस्था में लीन थे। जब उसने प्रणाम किया और बैठ गया तो आपने फरमाया:– ''प्रेमी! शहर की परिक्रमा कर आये हो?''

इस पर प्रेमी जगजीत सिंह ने अर्ज़ की:– ''महाराज जी! यह भूख भी एक बला चमड़ी हुई है।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी! महाविकार भूख, प्यास, निन्द्रा में हर एक जीव लाचार हो रहा है। इन्द्रियों के और जितने विकार हैं, सब इनके बाद ही शुरू होते हैं। इन पर काबू पाना ही योग्यता है। रसना इन्द्री के वास्ते हज़ारों किस्म के पदार्थ हैं। किसी भी रस पदार्थ द्वारा यह इन्द्री तृप्त नहीं होती। आंखें देखने के वास्ते लगी हुई हैं, नए से नए दृश्य देखती हैं। कान सुनने की चेष्टा कर रहे हैं। नासिका सूंघने का काम कर रही है। त्वचा गर्मी–सर्दी को महसूस कर रही है, नर्म सख़्त का पता दे रही है। ज्ञान इन्द्रियां, कर्म इन्द्रियां अपना–अपना धंधा करती रहती हैं। कैसा अश्चर्ज देह मन्दिर प्रभु ने साजा है? इसे बनाकर आप इसमें रहता हुआ भी इस सारे झगड़े से अलग–थलग है। इसमें जो बुद्धि है, जिस समय वह देह को अपना स्वरूप मान लेती है, अपने असली स्वरूप को भूल कर रंगा–रंग के दु:ख–सुख महसूस करने लग जाती है। जब कोई विवेकी सज्जन समझाये तब समझ कर इस दु:ख भरे संसार से परे होने का भी यत्न शुरू कर देती है। मगर कोई भाग्यवान संस्कारी जीव ही अपना रास्ता बदल सकता है। न सृष्टिओं का अन्त है, न अनन्त जीवों का पता लग सकता है। जुगा–जुगान्तर से यह लीला हो रही है। अनन्त गुरु, पीर, अवतार, ऋषि, मुनि आए और नेति–नेति कह कर अलोप हो गए। अगर यह जीव ग़ौर से अपना हिसाब लगाये तो किस शुमार में यह जीव आता है। ओ मेरे मालिक, बेअन्त तेरी माया है।''

इसके बाद आपने फरमाया:– ''प्रेमियों! अब आराम करो। ज़्यादा न दबाओ।'' लोई के साथ चादर जोड़कर बाईं करवट होकर आप लेट गए। प्रेमियों ने भी लैम्प बुझा दिया और अपने–अपने

बिस्तरों पर लेट गए। सुबह तीन बजे उठकर आप बाहर चले गए। जब सूरज निकलने वाला था तब पधारे। प्रेमी जगजीत सिंह दूध ले आए। गर्म करके पूरे नौ बजे सेवन करवाया गया। प्रेमियों ने चाय-दूध का नाश्ता किया और सत्पुरुष का आसन धूप में लगाकर और आज्ञा लेकर शहर खाना खाने चले गए।

17 जनवरी, 1951 शाम को सत्संग में संगत इकट्ठी हुई। पूरे चार बजे सत्पुरुष के इशारे पर महामन्त्र व मंगलाचरण पढ़ा गया। इसके बाद निम्नलिखित दोहा और सारे शब्द मय आख़िरी दोहा पढ़े गए।

जीवन में जो कुछ किया, सो ही जीव की रास।
'मंगत' पाछे के यत्न से, नहीं कटे जीव की फांस॥

आखिरी दोहा निम्नलिखित था:

समां गया जो औध का, सो ही काल गयो खाये।
'मंगत' भरम त्याग के, नित सिमर लीजो प्रभ राये॥

इसके बाद सत्पुरुष ने निम्नलिखित अमृत वर्षा फरमाई।

41. सत् उपदेश अमृत

जन्म से लेकर मरने तक जीव कुछ न कुछ करता रहता है। सब शरीरधारी जिया-जन्त कर्म चक्कर में रात दिन लगे रहकर शारीरिक यात्रा का समय व्यतीत कर जाते हैं। और जीवों को छोड़ो, सिर्फ़ इंसानी जामे का ही विचार करो। किस कदर यह कर्म यन्त्र में ग्रसा हुआ है। इसे कोई होश नहीं कि यह शरीर क्या है? इसमें बोल क्या चीज़ रही है? पैदा होकर आख़िर ख़त्म हो जाता है। मगर इसे पता नहीं लगता कि आना किधर से हुआ है? और किधर जा रहा है? खाने, पीने, देखने, सुनने, चखने और अनेक तरह के काम करने की इसे जन्म से ही सोझी है। इसे यह भी पता है कि यह कर्म नेक है, यह कर्म बद है नेकी-बदी सबका इसे इल्म है।

मनुष्य का जन्म बड़ा श्रेष्ठ है। इस जामे के ज़रिये इस परम तत् अबनाशी परमात्मा की प्राप्ति कर सकता है। मगर नित ही शरीर के परायण होकर ऐसा अज्ञानता में ग़र्क हो गया है कि इसे अपने पराये का भेद पता नहीं लगता। लोभ, मोह वश होकर अनेक तरह के कुकर्म भी कर जाता है। जीव कई तरह के शरीर को धारण क्यों न करे, हर जगह हर समय हर शरीर में इसे सुख भी और दु:ख भी मिलते रहते हैं। अपना-अपना प्रारब्ध कर्म हर शरीरधारी को ऊंचा-नीचा ले जाता है। ईश्वर ने विचार के वास्ते बुद्धि दे रखी है। जीव सांसारिक भोग पदार्थों के सुखों को हासिल करने के वास्ते ही सब कुछ अपना न्योछावर कर देते हैं। उनको ही प्राप्त करना बड़ा काम समझ रखा है। यह ही उनकी परम अज्ञानता है। जीवन यात्रा का आधा हिस्सा तो सोने में ख़त्म कर देता है। जब शरीर को बुढ़ापा आकर घेरता है तब कुछ करने-धरने की शक्ति नहीं रहती। रातें सोचने में गुज़र जाती हैं। उस कर्म चक्कर में जकड़ा हुआ जीव दु:ख पर दु:ख सहता हुआ हर समय बेज़ारी में

गुज़ारने लगता है। पिछले सुखों को याद करके कल्पने लग जाता है और आगे इससे कुछ बनता नहीं। म़ौत सामने नज़र आने लगती है। जो जीवन में माल–धन इकट्ठा किया था उसे पुत्र-कलत्र बर्बाद करने लग जाते हैं। आप तो ज़िन्दगी में न स्वाद से कुछ खाया न पहना, न पुण्य–दान किया, न सेवा में खर्च कर सका। उस समय दूसरों को इस तरह करते देखकर मन ही मन कुढ़ता जाता है। मगर कुछ कहने पर भी उसकी कोई नहीं सुनता। मोह ममता के फेर में पड़कर सारी उम्र कोई अच्छा काम न कर सका बल्कि केवल धन इकट्ठा करना, परिवार का फैलाव कर लेना, जायदाद वग़ैरा खड़ी करता रहा। यह समझ ही न आई कि यह असली रास नहीं है। यदि झूठ, कपट, छल, फरेब द्वारा कूड़, कुसत करके इकट्टा कर भी लिया, तो क्या हुआ? यह समझ में नहीं आया कि यह सब सम्पदा इसी जगह रह जाने वाली है। उसे यह पता ही नहीं लगा कि जीव की असली रास नेक-एमाली है। ज़िन्दगी में ही कोई अच्छा कर्म न बन सका, किस तरह अगले आने वाले समय में सुख को अनुभव कर सकेगा। कहते हैं–

''बीजे पेड़ बबूल का, आम कहां से खाये''

आमतौर पर हिन्दुस्तान में, ख़ासतौर पर हिन्दू जाति के अन्दर, यह विश्वास सा बना हुआ है कि मरने के बाद बेटे, पोते हमारी कल्याण कर देंगे, जबकि जीवन में ही तेरा बिस्तरा, चारपाई बाहर के बरामदे में कर देते हैं। कहते हैं कि बूढ़े की मत मारी गई है, इसे अभी भी खाने का लालच बना हुआ है। जिनके वास्ते बड़े चाव–चौंप से बड़े–बड़े आराम व सुख के सामान इकट्ठे करता था, वह दाल–रोटी देने में भी लाचारी समझ रहे हैं। यह संसार है, कोई बेटा, पोता, धेवता सहारा नहीं बन सकता। जब मरता है पीछे घोड़ों पर चढ़कर चौरियां झुलाते हैं। बड़े–बड़े आला कपड़े मुर्दे पर डालकर बाजार से गुज़ारते हैं ताकि दुनिया वाले वाह–वाह करें। ज़िन्दगी में तो उसे पूछा तक नहीं, मर गया बाजे–गाजे शुरू कर दिये। यह बातें आम रोज़ाना देखने में आ रही हैं। जीवन में ही जो कुछ किया, जप, तप, सेवा, सिमरण, पुण्य, दान अच्छे से अच्छा कर्म ही सहायता करने वाले हैं। जो यह समझते हैं चार रोज़ा यह शारीरिक यात्रा है, इसमें कुछ भला कर्म करने से ही कल्याण हो सकती है, वह ही बाहोश बुद्धि है। जो ठीक समझकर ठीक ही चलते हैं। ऐसे ही बाहोश बुद्धि वाले जीव संसार में बहुत हैं जो बग़ैर सोचे–समझे ही चलते हैं। कई जीव ऐसे भी संसार में होते हैं जो समझते ठीक हैं, मगर करते वक्त लोभ–मोह के वश होकर ग़लत कर्म कर जाते हैं। स्वतंत्र बुद्धि वाला पुरुष वह ही है जिसने ठोक बजाकर सत् को समझा है और चलते समय इससे भी ज़्यादा होशमंदी से सत् में दृढ़ होने का यत्न करता है। वह ही बड़ी अक्ल वाला मनुष्य है। जब–तक अविनाशी तत्त्व में पूर्ण निश्चय नहीं बैठ जाता, तब–तक कैसे आगे कदम चल सकता है? दीनदयाल ही सब जीवों को निर्मल बुद्धि बख़्शें ताकि अपने भले बुरे का अच्छी तरह विचार कर सकें। जितना समय शरीर ने अब तक भोगों को भोगा है वह तो समझो काल के मुख में चला ही गया है, आगे का क्या भरोसा है? इस वास्ते इस जीवन में ही मालिक की याद करके सफलता प्राप्त करें। मानुष जन्म का परम लाभ इसी में है।

इसके बाद वैराग्य के दोहे पढ़े गए। आरती हुई और प्रशाद बांटा गया। श्री संत आत्मा सिंह जी ने कहा:- ''वाह-वाह, महाराज ख़री-ख़री कह डालते हैं। संत को किसी का लिहाज़ नहीं करना चाहिये। बड़ी कृपा करते हैं।''

श्री महाराज जी ने इस पर फरमाया:- ''किसी को कोई विचार हो तो कर लेवे।'' इस पर श्री अनन्त राम जी कुन्द्रा ने पूछा:

प्रश्न:- महाराज जी, संसार का मोह कब ख़त्म होगा? एक चीज़ में फंसा हुआ चित्त हो तो उसे हटाकर प्रभु के नाम में लगायें, अनेक तरह के संकल्प-विकल्प समुन्द्र की लहरों की तरह पैदा होते रहते हैं। हालांकि बड़ा सोच समझकर कदम उठाते हैं, फिर भी परेशानियां उसी तरह खड़ी रहती हैं। बड़े-बड़े सुख के सामान मौजूद हैं, मगर फिर भी दूसरों का माल हड़प करने के वास्ते दौड़ रहे हैं। सारा दिन अदालत में गुज़रता है। रंगा-रंग के हालात देखने में आते हैं। विचार आता है, प्रभु की कैसी अश्चर्ज रची हुई यह सांसारिक लीला है?

उत्तर:- श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''प्रेमी! इस मन की कल्पना का बेअन्त विस्तार है। मन में ऐसी द्वैत सृष्टि भरी हुई है जिस करके भरम अंधकार बढ़ता जाता है। एक जीव की ही ऐसी हालत नहीं बल्कि सब संसारी जीवों के अन्दर इच्छा का चक्कर चल रहा है। मन करके ही अपना-पराया नज़र आता है। मन करके पकड़ना और छोड़ना यानि ग्रहण और त्याग है। दु:ख-सुख जिस कदर महसूस हो रहा है, मन करके ही है। मन करके पुण्य-दान में प्रवृत्त होता है। मन में अनेक तरह के मनन होते रहते हैं। मन का भटकना ही संसार है। अज्ञानता की फांसी मन की ममता ही है। ज्यों-ज्यों संसार को देखता है नए से नया रंग नज़र आता है। जिसने मन को अपने हाथ में कर लिया है, यानि प्रेम, श्रद्धा, विश्वास से प्रभु सिमरण में लगा दिया है, वह मन एकाग्र होकर डोलने से रहित हो जाता है। बार-बार बाहर नहीं दौड़ता। बग़ैर प्रभु नाम सिमरण के मन की तपिश चंचलता दूर नहीं हो सकती। सारी सृष्टि मनो-मात्र है। जब-तक मन में ममता संसारी पदार्थों, सुखों की छाई हुई है, मैं-मेरी, मेरा-तेरा अन्दर खड़ा है, तब-तक यह जकड़ा हुआ है। इस बन्धन से छुटकारा पाने के वास्ते ही ईश्वर भक्ति है। जिस वक्त मौन रूप को समझ जायेगा, निर्मल चित्त से अपने आपको प्रभु-परायण कर देगा उस समय सारे संसार का मोह लोप हो जायेगा। संसार की अश्चर्ज लीला को कौन तोल सकता है? दीन-दयाल के परायण होने से ही छुटकारा है। अपने छुटकारे का विचार करें, अनन्त जीवों के अनेक तरह के झगड़े कौन निपटा सकता है? बारम्बार अपना भ्रम निवारण करने की कोशिश करें। संसार की हालत को देखकर विचार ज़रूर करें। मगर किसी को तुम ज़रा समझाकर तो देखें कि संसार झूठ है, असत् है। आम दुनिया संसार को सत् मानकर तपायेमान हो रही है। ईश्वर को सत् जानने वाले विरले ही होंगे। मन की असल सत् शांति पाने वाले कोई गुरमुख होंगे। असल में तो सच्ची खुशी मन की लीनताई अवस्था में ही है, जिस अवस्था को पाकर सब द्वंद्व विकारों से मन निर्विकार हो जाता है। जिस समय शरीर की ममता को

आप तप-ध्यान द्वारा ख़त्म करेंगे, तब जाकर समता शांति अनुभव होगी। चित्त ठंडा हो जायेगा।''

एको एक सब माई दरसावे, सर्व माई देखे एक प्रभताई।
एक प्रभ चरनी पायो विश्वासा, जाये निर्भय धाम समाई॥
कर्म बन्ध सकल भयो पूरा, धुर मुकाम जाये बासा पायो।
'मंगत' पूर्ण प्रभ के मेल से, नित ही नित आनन्द समायो॥
ममता अंधकार विनासया, पाये दिव्य दृष्ट अन्तर माहीं।
'मंगत' सम तत्व प्रकाश से, भय भरम सब जाहीं॥

सब ऋषियों-मुनियों ने समभाव की महिमा गाई है। समता बुद्धि जिस समय प्राप्त हो जाती है, जीव निर्भय हो जाता है। निर्भयता ही असली जीवन है। ज़रा ग़ौर करके देखो तो पता लगे सब जिया-जंत को तृष्णा ने तपायेमान कर रखा है। शरीर ख़त्म हो जाते हैं तृष्णा नहीं मरती। असली ममता का रूप तृष्णा ही है।''

संत आत्मा सिंह जी ने अर्ज़ की:- ''बड़ा अच्छा सवाल वकील जी करते हैं जो कि सबके वास्ते लाभदायक होता है। सारी दुनिया को इस ममता ने ही घेर रखा है। मोह-विकार से छूटना ही चाहिये। जितनी कोशिश कर सकते हो इससे छूटने की, करो। संतों की कृपा से ही गुरमुखता प्राप्त होती है, तालाब में डुबकी लगाने से नहीं होती। गंगा में गोता मारने से ही शांति मिलेगी। संतों के सत्संग से ऐसा नुस्खा मिलता है जिससे मोह, लोभ, विकार से जीव बच सकता है। अच्छी तरह कान धर कर संतों के वचन सुना करो।'' शाम हो जाने की वजह से प्रेमी आज्ञा पाकर विदा होने लगे।

संत आत्मा सिंह जी एक रोज़ दिन के समय जल्दी आ गए। श्री महाराज जी ने उनसे दरयाफ़्त किया:- ''संत जी! विचरते-विचरते किसी महात्मा के भी दर्शन किए हैं? और क्यों जगह-जगह भ्रमण करते रहे हो?''

संत जी ने नमस्कार कर अर्ज़ की:- ''महाराज जी! तीस साल तक सारे हिन्दुस्तान का भ्रमण किया है, रामेश्वरम से लेकर अमरनाथ तक, जगन्नाथ से लेकर बद्रीनाथ आश्रम तक। उधर द्वारका तक चारों धाम पैदल चलकर व कुछ गाड़ी मोटर पर सफ़र किया। जगह-ब-जगह जाने का यह मतलब था, जोगी-महात्मा कोई मिल जावें। बड़े-बड़े मंदिर, गद्दियां देखी हैं। सब जगह कोई न कोई चालाकी, चतुराई बनी हुई पाई। हां, एक दफ़ा बाहर फिर रहे थे, गर्मी के दिन थे। करीबन 12 बजे दिन का वक्त होगा। एक कब्रिस्तान के पास अच्छी छाया देखकर वहां ठहर गए। छाया में बैठे हुए थे, एक मुर्दा शहर की तरफ से लोग ले आए, जिसे 'जनाजा' मुसलमान लोग कहते हैं। नौजवान की लाश को बाहर निकाल कर रखा गया। जिस जगह कबर खुदी हुई थी, पास ही रखकर अपने कायदे के मुताबिक नमाज़ बग़ैरा पढ़कर उसे दफ़नाया गया। सब देख रहा था। मिट्टी

डालकर सब वापिस हुए। धूप, गर्मी काफी थी। मैं वहां ही बैठा रहा। अच्छी छाया थी। करीबन शाम चार बजे का वक्त होगा, एक लम्बे कद का साधु महात्मा डंडा कमंडल लिए उस कब्र के पास पहुंचे और खड़े हो गए। डंडे से कब्र के चारों तरफ लकीर देकर जल छिड़का। मिट्टी इधर-उधर हो गई। डंडे से इशारा किया, लाश बाहर आ गई। उसके ऊपर जो लट्ठा लिपटा हुआ था, उतार दिया। नंगा करके आप भी नंग धड़ंग होकर उसके ऊपर लेट गए नासिका से नासिका, मुंह से मुंह, पांव से पांव मिलाकर दो तीन मिनट बाद महात्मा की लाश एक तरफ गिर गई। नीचे वाला शरीर उठ खड़ा हुआ। पल में लंगोटी कसकर डंडा कमंडल लेकर चल दिया। मैंने उसके पीछे जाना चाहा, ताकि उसके चरणों में पड़कर कुछ प्राप्त कर लूं। मगर उसकी चाल बड़ी तेज़ थी। कब्रिस्तान का कोना मुड़ते ही वह ग़ायब हो गया। चारों तरफ तलाश की गई, मगर न मिला। वह इच्छाचारी योगी था। मिल जाते तो शायद कुछ कृपा कर जाते। छायें-मायें हो गए। कुछ अर्से से आप संतों के दर्शन कर रहा हूँ। मैं तो समझता हूं गुरुनानक जी आप इस चोले में पधारे हुए हैं। आपका हर वचन, ज्ञान, विचार, विरह से भरा हुआ है। जगह-जगह जाकर गुरु सिखों को निहाल कर रहे हैं। आपकी कृपा से जो समझ आई है, यह ही तत्व ज्ञान है। महाराज जी, बड़ा भटका हूं। किसी जगह सच्चाई नहीं देखी। पाखंड ही पाखंड छाया हुआ पाया।''

''झूठ भया प्रधान वे लालो, झूठ भया प्रधान''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''वह कोई बड़ी करनी वाला योगी हुआ है। पुराना शरीर छोड़कर नया धारण कर लिया। असली चीज़ तो नित नई है। उन्होंने सोचा कौन फिर जन्म के झगड़े में पड़े। रिष्ट-पुष्ट नौजवान कुंवारा होगा। कोई बड़ी बात नहीं, जैसा चाहें कर सकते हैं। मगर यह भी बन्धन रूप हालत है। तल्लीन होकर स्वरूप में मौज लेना बहुत ऊंची अवस्था है। ख़ैर यह भी एक अश्चर्ज दृश्य आपके देखने में आया। बड़े भाग्य की बात है। मगर भ्रमण से क्या प्राप्त हुआ?''

संत जी कहने लगे:- ''महाराज जी! इस भ्रमण से चित्त शांत हो गया है। कहीं न आ जाकर अब अपने आप में मस्त रहते हैं। भटकन दूर हो गई है। वहां जाकर तप करें, वहां अच्छे महात्मा होंगे, यह होगा, वह होगा, जो कुछ है अन्तर में ही है। ऐसी परपक्वता एक जगह बैठकर ही हो सकती है। आप संतों ने तो जीवों का उद्धार करना ठहरा। आपका विचरना बहुत लाभदायक है। हमारा विचरना एक किस्म का बोझ रूप ही है। विचरने से एक लाभ ज़रूर हुआ कि किसी जगह इस मनी राम की इज़्ज़त होती है, किसी जगह कोई चार सुना देते हैं। अनेक तरह के जीवों के स्वभावों को देख-देख कर अश्चर्ज होता है। इस परम पिता ने कैसी रचना रच रखी है। धरती का कोई शुमार नहीं, न जीवों का शुमार है। यह सिर्फ़ हिन्दुस्तान में विचरे हैं। दूसरे देशों का क्या कहना, कई तरह की सृष्टि साज रखी है? तू धन्य है प्रभु, तू धन्य है महाराज जी, बाबे की वाणी कहती है।

एको जप एको सलाहे, एक सिमर एको मन आए॥
एकस के गुन गाओ अनन्त, मन तन जाप एक भगवन्त॥
एको एक, एक हर आप, पूरन पूर रहियो प्रभ बिआप॥
अनिक बिस्थार एक ते भये, एक अराध पराछत गए॥
मन तन अन्तर एक प्रभ राता। गुर प्रसाद 'नानक' इक जाता॥

''बाबे की वाणी ने एक का उपदेश किया और भी जितने गुरु, पीर, ऋषि, मुनि हो गए हैं, सब उसी एक मालिक की महिमा का उच्चारण कर रहे हैं। अनेक तरह के सांग–वांग कैसे बन गए? कोई समाधियों को पूज रहे हैं, कोई मूर्ति, कोई जल, कोई कब्रों के आस–पास चक्कर लगा रहे हैं, कोई दीये जलाते हैं। महाराज जी, एक जगह सी०पी० में पचमरी के पास गए। वहां पर भैरों का मन्दिर था। इसमें पूजा–आरती करके शराब की बोतलें मूर्ति के मुंह में डाल रहे थे। सैंकड़ों बोतलें खाली हो गईं। समझ न आया इतनी शराब किधर चली गई। वहां पर मेरा एक महीना उनकी चालाकी देखते लग गया। पुजारी लोग मूर्ति के पीछे बीच में रबड़ की नाली लगाकर बड़ी दूर तक एक कमरे में ले गए थे। वहां पर ड्रम रखे हुए थे। सब शराब उनमें जाती थी। महाराज जी, वह दृश्य देखकर दिल बहुत खराब हुआ। कैसी–कैसी लोगों ने मनमानी पूजा, खाने–पीने के ढकोसले बना रखे हैं। मैं सोचता रहता था यह हर वक्त मस्ताने बने रहते हैं, क्या वजह है? बहुत हँसी आई। सोचा इनका कौन उद्धार करेगा? मैं सबको नमस्कार करके भागा। बड़े–बड़े मन्दिर दक्षिण में देखे। लाखों का चढ़ावा चढ़ता है। पांडे यह सब हज़म कर जाते हैं। अब इधर गुरुद्वारों के अन्दर क्या हो रहा है, वह ही जानता है? महाराज जी, बड़ा अंधकार फैल रहा है। ईश्वर का किसी को पता ही नहीं, सब जगह पेटू बैठे हैं। किसी जगह प्रभु के प्यारे देखने में आते हैं। वह किनारे होकर एक तरफ रह रहे हैं।'' बड़ी–बड़ी बातें संत आत्मा सिंह ने सुनाई।

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''गुरमुखो! 'रजक पल्ले न बांधते, पंछी ते दरवेश,' 'ख़सम तेली कीता, फिर भी पटियां वास्ते तेल न मिले'। आज धर्म की धारणा की क्या हालत हो रही है? कलयुगी पहरा है। किसी के इख़्तियार की बात नहीं। रजोगुण, तमोगुण का ज़ोर है। करोड़ों तारे हों, मगर एक चांद निकलेगा रोशनी ही रोशनी हो जावेगी। संसारियों का अपना रास्ता है, फ़कीरों का अपना। कोई माने न माने, अपनी तरफ से सच कह दिया करो। हमेशा झूठ की पूजा ज़्यादा होती रहती है। सच्चे भी छुपते नहीं, सच्चाई–सच्चाई है। जिस ख़्याल का जीव हो, उसको वैसे ही मिल जाते हैं। प्रभु आज्ञा से उसका भाना जैसा चल रहा है ठीक है। अपना–अपना पहरा देना है, देकर सब उस जगह पहुंच जावेंगे। काफी संसार का नक्शा देखा है। अब बाकी आयु मालिक की मौज में गुज़ारो।''

सत्संग का वक्त हो गया। संगत आने लगी। बारिश की वज़ह से कई रोज़ खुला सत्संग न हो सका था। आसमान साफ होने के कारण सारा दिन धूप रही। जनवरी महीने का आख़िर हो रहा

था, 30 तारीख थी। दिन गुज़रते पता ही न लगा। 21 दिन ठहरे हुए हो गए थे। श्री महाराज जी ने सत्संग का इशारा फरमाया। महामन्त्र व मंगलाचरण उच्चारण किए गए। मंगलाचरण के बाद शब्द पढ़े गए। श्री महाराज जी ने संगत को ज़रा आगे सरकने को फरमाया और कहा:- बहुत प्रभु की कृपा हो रही है, जगह ही ऐसी है। बारिश में तो इंतज़ाम कोई न हो सका। प्रेमी एक दम कहने लगे:- ''महाराज जी! आइंदा बड़ा तम्बू लगाया करेंगे ताकि बारिश में कुछ आदमी बैठ सकें।''

42. सत् उपदेश

श्री महाराज जी ने फरमाया:-प्रेमियों! इस दफ़ा का समय तो गुज़र गया है, फिर की राम जाने। क्या नहीं हो सकता? 'गुज़र गई गुज़रान, क्या झोंपड़ी क्या मैदान।' काफी समय चला गया है। दो घड़ी धरती पर भी बैठकर देखना चाहिए, हज़ारों वर्ष ऋषि झोपड़ियों में गुज़ार दिया करते थे। अब दो सौ वर्ष से ज़रा अमन का ज़माना रहा है। बड़ी-बड़ी जगह बन गई हैं। पहले वक्तों में सिर्फ़ राजे लोगों के बड़े-बड़े किले हुआ करते थे। सब तरह के हालात को देखना चाहिये। बिना प्रेम के सत्मार्ग पर चलना कठिन है। प्रेम रूप ईश्वर का है। प्रेम भाव से बुद्धि चेतन होकर सत्-असत् का निर्णय करते हुए सत् भावों को दृढ़ करती हुई ज्ञान को प्राप्त कर लेती है, और जान लेती है कि सारे संसार का मूल सत्-तत् ही है। सत् की प्राप्ति सत्संग और सत्नाम के निद्धियास से होती है। चित्त में सत् का भरोसा रखते हुए हर समय मन की कोशिश सत् की खोज में लगी रहनी चाहिए। सत् के बग़ैर और कोई बन्धु-रिश्तेदार नहीं है। सत् की प्रीति दु:खों को नाश करने वाली है। जन्म से जीवों को कर्म रोग चमड़ा (चिपटा) हुआ है। जन्म-जन्मांतर से इस कर्म यन्त्र में जीव फंसे हुए हैं।

इस रोग से ख़ुलासी पाने के वास्ते ही हर समय तन, मन इन्द्रियों को और सारे संसार को मिथ्या और बदलने वाला समझे। ऐसी सत् सोझी ही प्रभु सिमरण की तरफ ले जाती है और जीव उपकारी जीवन वाला हो सकता है। लाखों वर्ष तक इन्द्रियों के नाना प्रकार के रस भोगते रहो, मगर एक पल के वास्ते भी यह मन तृप्त नहीं होता। हर समय यह भूखा और प्यासा ही रहता है। कहा है-

खाये-खाये नित भूख समाई। पहने-पहने अन्त नांगा जाई॥
जीये-जीये ओढ़क मरना। उठ अवगुनियां आख़िर चलना॥

संसार में बड़े-बड़े विरले, बनिये, राजे, राणे, गुनी, स्याने इस माया चक्कर को देखकर लाचार हो रहे हैं। जिस तृखा को लेकर संसार में आए थे उसी तरह तृष्णा में इस संसार को छोड़ देते हैं। जो भी आता है वह ही इस संसार को अपना बनाने का यत्न करता है। मगर यह धरती किसी की न बनी। सब इसमें आख़िरकार समा गए। बड़े-बड़े गुणी हैरान और परेशान हैं। केवल एक प्रभु का प्यारा ही सन्तोषी हो सकता है, जो प्रभु परायण होकर जीवन गुज़ार रहा है।

देखते–देखते बड़े–बड़े मुल्कों के वाली ख़ाक–स्याह हो जाते हैं। दलिद्री राज (राज्य) को प्राप्त कर लेते हैं। कोई भरोसा इस क्षण–भंगुर शरीर का नही। पल में स्वांस ऊपर नीचे होकर इसे छोड़ जाते हैं। उसी घड़ी, समय को भाग्यवान समझो जिस पर मन, बुद्धि सत् का विचार व सिमरण ध्यान सत्संग कर लें या किसी का भला हो जावे। जिसका सिमरण करके ऋषि, मुनि, गुरु, पीर, पैग़म्बर, अवतार, आचार्य बन जाते हैं, सब इस मालिक के सिमरण की वडियाई है। वह पुरुष धन्य है जो संसार में आकर सार को प्राप्त होता है। देखने में सारा संसार मनोहर सुखदाई मालूम होता है, मगर इसका सम्बन्ध आख़िरकार वियोग के समय अति दुःख रूप हो जाता है। कर्म की वासना में जीव कई जन्मों से पड़ा हुआ है। न कर्म पूरे होते हैं न छुटकारा मिलता है, केवल राग–द्वेष में तपायेमान होते रहते हैं। आम दुनियादार ज़िस्म के बनाव–श्रृंगार में ही असली खुशी समझते हैं। ज़िस्म एक बदलने वाला आला है। आज खड़ा है, कल नहीं दिखाई देगा। इसके अन्दर बोलने वाली शक्ति सदा से जीवित है। इसका विचार ही सच्ची खुशी की तरफ ले जाने वाला है। शरीर से प्रगट होने वाले काम, क्रोध, लोभ, मोह विकराल कर्मों की तरफ ले जाते हैं जिनसे जीव अति दुःख को प्राप्त होता है। निर्विकार होने में सुख और शांति है।

तन मन की रसना त्याग के, सतगुरु शबद में जाग।
कर्म का सन्शे दोष विनासे, सत् शबद पावें अनुराग॥
मान कर्म को छोड़ के, प्रभ आज्ञा माहीं समाओ।
सहज भाये सिमरो गोपाल, भव दुस्तर तर जाओ॥
तन–मन पावें शांति, पूरे गुरु के परताप।
छिन–छिन तन नश्वर जान के, प्रभ नाम से रहो समात॥
जां का निस दिन सिमरन करते, ब्रह्मा बिषन महेश।
सो ही सिमरन सार है, नित–नित करो आदेश॥
लोक लाज को छाड़ के, सिमरन करो दीनदयाल।
नित सहायक आप प्रभ दाता, पल–पल करो संभाल॥
सत साहेब परकाश करें, देह देवल में मीत।
'मंगत' नित अंतर माहीं समाया, पद पाया परम पुनीत॥

उस साहेब की महिमा वर्णन करते–करते जुगा–जुग बीत जावें तो भी नहीं बन सकती। सत्पुरुषों ने जितना भी ग्रन्थों में उच्चारण कर रखा है। सब उस मन को समझाने के लिए है। शायद कोई वचन किसी समय मन में बैठ जावे। ख़ैर, इस गुरु की नगरी में अभी सत्संग का प्रभाव अच्छा ही है। सत्संग द्वारा ही हृदय की तपिश दूर होती है। सिमरण, सेवा ही इस मन का इलाज है। ईश्वर सबको सुमति बख़्शें। इसी तरह लगे रहना चाहिए।

आज्ञा पाकर शब्द पढ़कर आरती की गई। सत्संग समाप्त होने के बाद श्री महाराज जी ने पूछाः– ''कोई विचार करो।'' सब संगत की निगाह श्री अनन्त राम जी पर रहती थी। वह कहने लगेः– ''महाराज जी! रोज़ाना हम सुनते हैं संसार झूठा है, मिथ्या है, बदलने वाला है, दुःख रूप है, ईश्वर सत्–चित्त–आनन्द स्वरूप है, मन क्यों नहीं मानता?''

उत्तर :– श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''प्रेमी जी! जो तुम कह रहे हो ऐसा ही है। मगर यह बताओ, जन्म से लेकर इस उम्र तक तुमने क्या अनुभव किया है? आया (क्या) संसार और उसके लवाजमात उसी तरह बने हुए हैं, हमेशा उनसे एक जैसा सुख मिलता रहता है? बाल अवस्था का शरीर किधर है? जवानी का शरीर कहां है? अब इसकी क्या हालत है, कभी विचार किया है? इससे तुमको क्या सुख मिला है, अगर मिला है तो अब सुख कहां है? प्रेमी, यह सब कुछ देखने मात्र में सुखदाई मालूम हो रहा है। अगर ग़हरी ग़ौर करके देखो कौन सा सुख हमेशा कायम रहा है। यह मसला आम संसारियों के वास्ते नहीं है, विचारवान ही इस भेद को समझ सकते हैं। संसार बनाने वाली कोई हस्ती है। बनी हुई चीज़ और है बनाने वाला और है। बनाने वाले की खोज करनी है। बनाने वाला हमेशा सत् नित अविनाशी है। जितना भी दृष्टि में आकारमई सिलसिला तुमको भास रहा है सबका सब तबदीली युक्त है। जिन चीज़ों का नाम, रूप, गुण, कर्म बदलता दिखाई दे वह स्थाई खुशी नहीं दे सकतीं। मन के अन्दर दृढ़ता सांसारिक सुखों की बनी हुई है। संसार की स्मृति को पल मात्र के वास्ते भी नहीं भूलता, सत्–चित्–आनन्द कैसे महसूस हो? बुद्धि एक लम्ह के वास्ते भी उस परम सुख को अनुभव कर ले उसका सारा सिलसिला ही बदल जाता है। हर क्षण बुद्धि, मन संसार के सुखों को सिमरण कर रहे हैं। दीर्घ विचार द्वारा बुद्धि इसके सुखों को दुःख रूप समझ कर सत् के परायण हो जाये तो वाह क्या रंग लग जाये? देखो, फिर मन मानता है कि नहीं। घर वालों की तरफ से कई तरह के दुःख मिलते हैं मगर फिर भी उनकी ओर झुका रहता है। सारी उम्र घरवालों की सेवा करते गुज़र जाती है, मगर कोई एहसान नहीं मानता। अगर थोड़ी सी किसी ग़रीब मोहताज की सेवा कर दो सारी उम्र गुण गाता रहेगा। प्रेमी जी, सुन तो बहुत कुछ लेता है मगर मनन करते वक्त भी वैसा मन रहे तो कुछ बन जाए। इसी तरह विचार करते रहा करो। खूब प्रेम से कुछ समय प्रभु सिमरण अभ्यास में देते जाओ। आप ही ईश्वर किसी समय कृपा कर देंगे। एक दफ़ा सच्चे हृदय से उस दीनदयाल के परायण होकर तो देखो। बहुत बहस–मुबाहशे भी मन को कठोर कर देते हैं। नास्तिकपन पैदा हो जाता है। दो, चार रोज़ और इस जगह ठहरे हैं फिर मिलना ईश्वर आज्ञा पर है। प्रेमियों, अब आराम करो।'' प्रेमी प्रणाम करके विदा हुए। आसन तम्बू में ले जाया गया। प्रेमी अनन्त राम जी वकील और संत आत्मा सिंह जी भी अन्दर आ गए। प्रेमी अमीचंद और दीवान चंद जी वकील भी आ बैठे।

श्री अमीचंद जी ने अर्ज़ कीः– ''महाराज जी! कोई ऐसा उपाय बतलाइये जिससे यह मन हरि चरणों में लगा रहे? इसने बहुत दुःख दे रखा है। बड़ा समझाते हैं, मुड़ फिर कर संसार की तरफ

दौड़ता है। अभ्यास के समय बहुत तंग करता है। महाराज जी, वैसे काम–काज करते समय इसकी चंचलता पता नहीं लगती। आप करनी वाले हो, दृष्टि कर जाओ। आपका कुछ खर्च नहीं होता। मेहरां दे दाते हो।''

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''प्रेमी! उतावले न बनो। अभ्यास और वैराग्य ही मन के सुधार के लिए हैं। जन्म–जन्मांतर से यह सुर्त संसार को सत् मान रही है। वैसी ही वासनायें उठ रही हैं और वैसे ही कर्म करके किसी समय तंग भी आ जाता है। सोचता है, संसार को छोड़कर चले जायें। बड़ा दुःखदाई है। मगर लोभ, मोह का बड़ा पर्दा पड़ जाता है और जीव सब कुछ भूल जाता है। इसलिए विवेक का आसरा बार–बार लो। चित्त से संसार को दुःख रूप जानकर इससे आहिस्ता–आहिस्ता मन को मोड़ो। ज़बरदस्ती की बात नहीं। प्रेम और विश्वास से अन्तरमुख हो सकता है। रोज़ी का भी तुमको सदा ख़्याल हो रहा है। इसको छोड़कर भी कहीं नहीं जा सकते। घबराओ नहीं, कुछ पिछले प्रारब्ध कर्म संस्कार भी बाधक हो जाया करते हैं। कभी मन सत्संग को चाहता है, कभी भोगों की तरफ दौड़ लगाता है, कभी किसी तरफ दौड़ता है, कभी किसी तरफ। बड़ी भारी अभ्यास में दृढ़ता की ज़रूरत है। कहते हैं 'हिम्मते मर्दा, मर्दे ख़ुदा' तुम उसकी तरफ एक कदम चलो वह सौ कदम तुम्हारी तरफ आयेगा। ऐसा विश्वास रखो।''

''अच्छा, अब काफी देर हो गई, जाओ।'' सब प्रेमी प्रणाम करके विदा हुए। भक्त बनारसी दास व जगजीत सिंह भी शहर भोजन पाने गए। जल्दी–जल्दी फ़ारिग होकर जब वापिस पहुंचे, तो देखा सत्पुरुष समाधिस्त होकर मौज में बैठे हैं। प्रणाम करके बैठ गये। प्रेमी जगजीत सिंह जी ने अर्ज़ कीः– ''महाराज जी! संत कृपा भी तो कर देते हैं। अमीचंद जी का विश्वास है, संता दी मेहर बग़ैर जीव चल नहीं सकदा।''

श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''प्रेमी! इनकी तरफ से जितनी मेहर होनी थी, हो चुकी है। अब मेहर तुमने अपने–आप पर करनी है। दिल निकालो। महीने के वास्ते सारे जंजाल छोड़कर किसी अंजान जगह में अकेले चले जाओ। थोड़ा कुछ अन्न–पान का बन्दोबस्त कर लो। अगर ज़्यादा बर्दाश्त नहीं हो सकता तो तन–मन से अभ्यास में दिन–रात जुड़े रहो। पिछलों की याद भूल जाओ। देखो, रंग लगता है कि नहीं। तुम कहते हो कि संसार की मौजें भी बनी रहें और परमात्मा के दर्शन भी हो जायें। तुम भी स्याने हो। वह ईश्वर तुमसे कई हज़ार गुना समझदार है। संत–महात्मा कह–कह कर थक जाते हैं, इन संसारियों पर मांह (दाल) के दाने के ऊपर की सफेदी के बराबर भी असर नहीं होता। सब स्वार्थी लोग हैं। थोड़ी बहुत श्रद्धा, प्रेम, विश्वास है जिस करके चलते रहते हैं। दीर्घ वैरागी, अनुरागी कोई देखने में ही नहीं आ रहा। वैराग्य रूपी वाण जिसके कलेजे में लग जाए वह फिर मुड़–मुड़ के क्यों संसारियों की तरफ देखे। बस, आहिस्ता–आहिस्ता प्रभु प्रेम बनाते चलो। किसी समय आप ही मेहरबानी हो जावेगी। सत्संग से संसारियों के प्रेम भाव का पता लगता रहता है। किसी समय संसारियों की भावना से उनके रंग का पता लग जाता है। प्रेम से सत्संग, सेवा, सिमरण में वक्त देते रहो। हर एक प्रेमी की तरफ इनकी निग़ाह रहती है। यह

देखते रहते हैं कौन कितने पानी में है? मेहर भी दूर नहीं। कोई ऐसा प्रेमी भी निग़ाह में नहीं आ रहा है जिस पर मेहर हो जाए। यह इतने कच्चे फ़क़ीर नहीं कि झट–पट एक पर दयालु हो जावें। जायज़ मेहर हर आने वाले प्रेमी पर होती रहती है। यह वकील लोग बाल की खाल निकालने वाले हैं। बातों–बातों से मसला हल करना चाहते हैं। गलां नाल शुद्ध बनना चाहते हैं। इस मार्ग में बिलकुल मौन रहना पड़ता है। चलो, किसी वक्त प्रेमी याद करेंगे। हैं तो बड़े श्रद्धावान, मगर माया–जाल किसी को नहीं निकलने देता। ईश्वर ही कृपा करें। तू भी बातें कम किया कर। जिसने मेहनत की है वह ही उस अमर पद को प्राप्त हो सकता है। इन्होंने सही रास्ता बताना था, वह बता दिया। प्रेमी जी, इस समय अव्वल तो रास्ता बताने वाला ही कोई नज़र नहीं आता। आम संसारियों को पता भी क्या है? जो किसी ने बताया, विचारे चल पड़ते हैं। उस मार्ग को समझाने वाला भी परम तपस्वी हो और पूरी तरह सारा भेद समझावे, फिर पूरी कोशिश हो, तब जाकर रंग लग ही जाता है। कई बातें हो जाती हैं, जिज्ञासु पूरी तरह नहीं चल सकता। भाग्य से ही सब मेल मिलते हैं। अच्छा प्रेमी, अब रात बहुत चली गई है। जाओ, आराम करो।''

दूसरे रोज़ जब सत्पुरुष सुबह बाहर से पधारे पहली फरवरी, 1951 का दिन था। स्नान करने के बाद दूध लेने लगे तो आपने प्रेमियों के वास्ते सत्–उपदेश अमृत लिख करके रख दिया। जब प्रेमी बनारसी दास शहर जाने लगे तो आपने फरमाया:– ''यह कागज लेकर पढ़ लो और इसे लिख करके प्रेमियों को भेजना शुरू कर दो और साथ ही अबोहर का पता भी दे दो।'' आसन धूप में लगा दिया गया और सत्पुरुष धूप में विराजमान हो गए। प्रेमी जगजीत सिंह और भक्त बनारसी दास शहर चले गए। वापिस आकर ''सत् उपदेश अमृत'' नकल करके प्रेमियों को भेजना शुरू कर दिया, जो निम्नलिखित है।

43. सत् उपदेश अमृत

''नास्तिकवाद के अति प्रचंड होने से तमाम संसार में अधिक अशांति के असबाब पैदा हो रहे हैं। आम मानुष तमोगुण के ज़ेरे–असर होकर नित ही विकराल कर्म करके अपने–आपके घातक बन रहे हैं। यानि जीवन रूप जो अन्तःकरण की पवित्रता है उसको नाश करके हर वक्त अपवित्र भाव को ग्रहण करके अपने–आपको अधिक ग़हरे सागर की तरफ ले जा रहे हैं। इस भयानक समय में, जबकि पूर्ण निश्चय ही छल–कपट, ईर्ष्या–द्वेष से अन्धकार में दृढ़ हो रहा है, तो सत्वाद की दृढ़ता होनी अधिक दुर्लभ है। इस वास्ते पूर्ण विश्वास से समता के सत् नियमों को यानि सादगी, सत्य, सेवा, सत्संग और सत् सिमरण को अपनाते हुए अपने–आपके सच्चे रक्षक बनें और तमाम दोषों से पवित्र होकर निर्भय शांति प्राप्त करें, जो इस मानुष जीवन का सार है। हर एक प्रेमी अपने आपको अमली जीवन बनाने में यत्न करे ताकि नास्तिकवाद का अभाव होकर समता आनन्द परम शांति प्राप्त होवे। ईश्वर सत् पुरुषार्थ देवें।

इसी दौरान श्री किशोरी लाल जी अबोहर निवासी ने पहुंच कर महाराज जी के चरणों में प्रणाम किया। कुशलता पूछने के बाद श्री महाराज जी ने फरमाया:- प्रेमी! बड़ी जल्दी आ गए हो। श्री किशोरी लाल जी ने अर्ज़ की:- महाराज जी! दो दिन इस जगह चरणों में ठहर कर सत्संग का लाभ हासिल कर लिया जायेगा।

शाम को चार बजे सत्संग हुआ। महामन्त्र व मंगलाचरण से सत्संग शुरु किया गया। फिर ग्रन्थ श्री समता प्रकाश से कुछ वाणी पढ़ी गई। उसके बाद श्री महाराज जी ने अमृत वर्षा फरमाई। फिर आरती व समता मंगल के बाद सत्संग समाप्त हुआ। सत्संग में जो उपदेश अमृत दिया गया उसके नोट नहीं लिए गए।

सत्संग की समाप्ति पर एक प्रेमी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! सुनने में आया है कि आपकी तालीम तो आठवीं जमात तक ही है। विचार करते समय आप बड़े-बड़े मुश्किल लफ्ज़ (अक्षर) भी बोल जाते हैं। जो बातें हमने बड़ी-बड़ी पुस्तकों में नहीं पढ़ीं आप उनके बारे में भी बयान कर जाते हैं।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''प्रेमी! जब हृदय की तख्ती शुद्ध और पवित्र हो जाती है, तब इल्म यानि ज्ञान की सार का भंडार खुल जाता है। अभी तो इनको पेचीदा विचार करने की आज्ञा ही नहीं है। साधारण विचार इस वास्ते रखे जाते हैं कि आम जीव, जो थोड़े ही पढ़े हुए हैं, सब समझ सकें। अगर फ़ारसी में कुछ बोल जायें तो शायद कोई प्रेमी भी न समझ सके। अंग्रेजी, संस्कृत सबको फ़ायदा नहीं पहुंचा सकती। साधारण वचन, जिनसे सबके पल्ले कुछ पड़ सके, कहे जाते हैं। बाकी तत्त्व-ज्ञान के मुतालिक विचार ख़्वाहे (चाहे) कितने ही सरल भाषा में क्यों न बयान किए जाएं, उनका मतलब बहुत ऊंचा होता है। सत्-पद को प्राप्त तो कोई विरला ही होगा। ऐसे विचार जिनसे सत्संग, सिमरण, अभ्यास और अच्छे कर्मों में रुचि पैदा हो, ठीक रहते हैं। अज्ञानता के जाल में तो जीव आगे ही फंसा हुआ है। जो भी कर्म करता है उसका हर लम्ह अहंकार बना रहता है। वासना की गिरफ्तारी अनेक तरह के जाल में जकड़ रही है। कर्म करके जीव खुशी, ग़मी, राग, द्वेष में ग्रसित हो रहा है। छुटकारे के वास्ते नाना प्रकार के कर्म करता हुआ भी अंहकार के चंगुल से नहीं बच सकता। निर-अंहकार होना ही बड़ी शूरवीरता है। ज़िन्दगी में मरना पड़ता है। गुरु लोगों ने मिट्टी के साथ मिट्टी होने की हिदायत दी है। सब बुज़ुर्गों ने संगत सेवा और ईश्वर सिमरण को मुख्य साधन रखा है। इनमें निष्काम भाव से लगा रहकर किसी समय निर्मानता को प्राप्त हो जाता है। एक समय का ज़िक्र है, बलख बुखारे के बादशाह के चित्त के अन्दर चाहना पैदा हुई कि सच्चाई को प्राप्त करना चाहिये। उसे पता चला कि हिन्दुस्तान में इस समय कबीर नामी फ़कीर बड़ी करनी वाला है, उसके पास पहुंचा जाए। कुछ समय बाद उसने हाज़िर होकर बड़े अदब से अपना दिली हाल कबीर साहेब के सामने रखा। कबीर साहेब ने उसे समझाकर ख़िदमत यानि सेवा में लगा दिया। कुछ अर्सा गुज़रने के बाद कबीर साहेब से लोई कहने लगी:- ''महाराज! अब यह पूरा हो गया है।'' कबीर साहेब कहने लगे:- ''अभी यह कच्चा है।'' कुछ अर्से के बाद एक रोज़ जब वह एक गली से गुज़र रहा था, उसके ऊपर किसी से कीचड़, कूड़ा-करकट गिरवा दिया। इस

माजरे को देखने के लिए एक प्रेमी को भी खड़ा कर रखा था। उस समय बादशाह के मुंह से जो लफ्ज़ निकले उसने उनको सुना।'' होंदा बलख ते बुखारा कौन सुटदा कीचड़ ते गारा।'' गुस्से में और कुछ लफ्ज़ कहता हुआ चल दिया। देखने वाले ने सब माजरा कबीर साहब को कह सुनाया। कबीर ने लोई को कहा:– ''सुना, इन वचनों में क्या भरा हुआ है? कुछ अर्सा उसे और लगा लेने दो।'' कुछ अर्से बाद जब फिर उस पर कूड़ा-करकट फिकवाया गया उस समय वह नीचे गिरे कूड़े को फिर अपने ऊपर उठा-उठा कर रखने लगा। साथ ही कह रहा था: ''तुम मुझसे बहुत बेहतर हो, मेरे पास ही रहो।'' फिर जब उसका कबीर जी को पता लगा कि अब ऐसे नम्र विचार उसके हो गए हैं तब लोई को कहने लगे:– ''अब रंग लग गया है। उसे अलविदा कर देना चाहिये।'' कबीर ने उसे बुलाकर कुछ उपदेश देकर कहा:– जाओ, अपने देश में जाकर इस तालीम को फैलाओ और वहां ही फ़कीराना ज़िन्दगी बसर करो। ईश्वर कृपा को संभालकर रखना। प्रणाम करके बादशाह वहां से रवाना हो पड़ा और अपने देश में पहुंच कर दजला-दरिया के किनारे डेरा लगा दिया। जब उसके वज़ीरों, अहलकारों को पता लगा, वह सब उसके पास आ गए और आजज़ी से अर्ज़ की:– चलकर अपना तख्त संभालें। उस समय वह अपनी गुदड़ी की सिलाई कर रहे थे। फ़ौरन सुई को दरिया में फैंक दिया। फिर उन्हें कहने लगे इसे दरिया से निकाल लाओ। जब किसी से ऐसा न हो सका तब उन्होंने दरिया के तरफ हाथ किया। मछली ने मुंह में सुई लेकर उसे बाहर निकाला। उन्होंने पकड़ कर ले ली। कहने लगे:– ''इस तरह हुक्म तुम मान सकते हो? जिनके हुक्म को धरती, पवन, पानी के जीव भी मान रहे हैं, उनको क्या ज़रूरत है इस छोटी सी बादशाहत की? जाओ, तुम आप ही जिस तरह हो सके काम चलाओ। सच्चे दिल से ख़ुदा की बंदगी करो और लोगों की ख़िदमत करो। इसमें तुम सबका भला होगा।''

''मतलब यह कि अंहकार को ख़त्म करना कोई आसान नहीं । मर कर एक दफ़ा फिर उस अबदी ज़िन्दगी को हासिल कर लेता है। उस मार्ग में बहुत बातें काम नहीं करतीं। हद दर्ज़े की निर्मानता में रहकर अंजाना होकर संसार में विचरे। गुरु तेग बहादुर की तरह पता ही न लगने दे। पूरे होने पर अपने आप ही कोई न कोई बात बन जाती है, ज़ाहिर होना पड़ता है। अब उनके वचनों को बाजे-ढोलक के साथ गा-गाकर कुछ विचार ले रहे हैं। चाहे पूर्व में, चाहे पश्चिम में, रब्ब का प्यारा हो उसे अच्छी तरह आजज़ी, विनम्रता में रहकर ही समय गुज़ारना चाहिए। समय आने पर दुनिया उन्हें मानने लग जाती है और वह मुर्शिद, गुरु कहलाते हैं। आप परम सुखी होते हैं और जो उनके नज़दीक आते हैं वह भी प्रेमी बन जाते हैं। आज बहुत समय हो गया है। इनके पास और धन-माल नहीं है, सिर्फ़ सत् विचार हैं। कोई वचन हृदय में लगा लोगे तो आप भी सुखी होवोगे और नज़दीक आने वाले भी सुखी होंगे।''

इसके बाद, सब माई, भाई प्रणाम करके जाने लगे, तब अपने फरमाया:– ''प्रेमियों! अब जाओ, आराम करो, बहुत वक्त हो गया है।'' आपका आसन अन्दर ले जाया गया। प्रेमी किशोरी लाल के रहने व आराम करने का प्रबन्ध दूसरे तम्बू में किया गया। दूसरा दिन भी इसी तरह गुज़र गया।

तीसरे दिन तीन फरवरी को दिन खूब साफ था। धूप अच्छी निकली हुई थी। दोपहर को प्रेमी जल्दी ही आने शुरू हो गए। एक अच्छे रागी सरदार पूर्ण सिंह जी को तरनतारन वापिस आने पर श्री महाराज जी का पता लगा और वह भी आ गए। आप सूरदास थे। साथियों को साथ लेकर बाग में पधारे। जब श्री महाराज जी के करीब पहुंचे तो हाथ जोड़कर प्रणाम किया और बड़े प्रेम से दोहा पढ़ा।

चार मिले चौसठ खेलें, बीस करें सतकार।
कोटन कोट हर्षित भये, सज्जनों के दीदार॥

बैठकर खूब हँसे। कहने लगे:– ''महाराज जी! इस दफा साडे भाग (भाग्य) कुछ सस्ते ही रहे हन। संगत के बुलावे पर बाहर जाना पड़ गया। मुझे पहले आप जी का प्रोग्राम पता होंदा ते कदी ना जांदा। यह थोड़ी–बोहती खुशकिस्मती है कि आख़री दिन आप जी दे चरणां विच जगह मिल गई ऐ।''

श्री महाराज जी ने पूछा:– ''प्रेमी! खूब प्रसन्न हो।'' रागी जी कहने लगे:– ''महाराज जी! आप जी दी दया मेहरां जिस ते होवन वह कदी भी उदास नहीं हो सकदा। बाबे दी मेहर, कृपा दृष्टि हर घड़ी बनी होई ऐ। महाराज जी, बड़ा आला ते सच्चा–सुच्चा उपदेश पब्लिक नूं सुनाया जांदा है। पर एह मन अपना कदी–कदी बड़ी मस्ती करन लग जांदा ऐ। उस वेले बड़ा ही क्रोध अपने आप ते आवंदा ऐ। ओह भोलया पंछिया किधर उड़या जांदा ऐ। पता लगदा ऐ सतपुरुषां ने बड़ी ऊंची कमाई कीती होंदी ऐ। बग़ैर किसी आधार तो जंगल विच मस्त बैठे सितार बज रही ऐ। मर्दाने नूं वी कोई होश नहीं, अपने आप ही हथ चल रहया ऐ।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी! उन्हां दी निष्काम ईश्वर भक्ति, उन्हां दी कमाई ही अज कई जीवों दा उद्धार बनी हुई है और जीवों दा रोजगार भी। नाराज न होना, आप गुरमुख प्रेमी हो। कुछ अन्तरमुख होकर आनन्द लिया करो। बाकी अपनी तरफ से ख़री और साफ विचारधारा जनता के आगे रख दिया करो ताकि यह कमाई सफलता देती चली जाए। नाम का सिमरण और सेवा दोनों हो गईं, बस फिर काम बन जायेगा। विचारवान तो आप हो ही। कोई चित्त में तास्सुब न रखना। बाबे की तालीम कोई नई नहीं। सारे ग्रन्थ में राम–नाम की महिमा भरी पड़ी है। इस समय मिलाप वाला विचार कहना ही अच्छे प्रेमी गुरमुखों का काम है। आपको बहुत–बहुत दूर जगह पर जाना पड़ता है। प्रेम बनाने वाले विचार सबको सुख देने वाले हुआ करते हैं।''

रागी जी कहने लगे:– ''महाराज जी। कुछ कहने वाली गल नहीं। बाज़ उपदेशकां नूं ख़ासकर कहया जान्दा ऐ, अजेही तकरीर करो जिस दे नाल पन्थ अलग मालूम होवे। मगर साडा चित्त इस तरह करने नूं नहीं मनदा। जित्थे वी जांदे हां महाभारत, गीता, रामायण दे हवाले दे–दे के ग्रन्थ साहब दे वचनां नाल मिलाकर सुनांदे हां। बाज़ सिख अच्छा नहीं समझ दे। मगर ऐ लोक (लोग) नहीं जानदे कि असां वी किसे दी औलाद हां। मलेच्छ खालसा भाई अधिक हो रहे हन।

आप जी संतां दी कृपा ते मुल्क दे अन्दर एकता वाला उपदेश ज़रूर फैलेगा। साडा विश्वास है। आप जी दे बहुत सारे वचन हृदय विच ठोकर लगांदे रहंदे हन। शरीरां दे मेल कदी–कदी होंदे हन। शब्दां दा मिलाप होंदा ही रहंदा ऐ और होंदा रहेगा।

कहेंदे हन ''शबद मिलावा होत है, देह मिलावा न''

श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी जी! उस ईश्वर का लाख शुक्र करो, बड़ी अच्छी तरह सुन्दर विचारों में लगा रखा है। इस सत्संग से ऊपर क्या चीज़ है? कोई किसी किस्म का ऐसा कर्म आगे आ गया है जिस करके तकलीफ़ उठानी पड़ रही है। भजन करो ताकि अशुभ कर्म दग्ध हो जायें।''

संगत के प्रेमी ज़्यादा आ जाने के कारण प्रेमी साथ–साथ होकर बैठने लगे। चार बजने वाले थे। श्री महाराज जी ने सत्संग शुरू करने की आज्ञा फरमाई। महामंत्र, मंगलाचरण के बाद ''समता विज्ञान योग'' प्रसंग से नौवां शब्द पढ़ा गया जिसका आख़री दोहा निम्नलिखित है।

माया भरम असगाह से, सो जन निस्तर पाए।
'मंगत' निर्मल प्रीत से, जो प्रभ का नाम ध्याये॥

इसके बाद सत्पुरुष ने निम्नलिखित उपदेश अमृत वर्षा फरमाई।

44. सत् उपदेश–अमृत

शरीर यात्रा में जन्म से लेकर आख़री समय तक भोग वासना को पूर्ण करने में सब जीव–जन्त दौड़ रहे हैं। हर एक जीव इस वासना में बंधा हुआ चक्कर काट रहा है। यह एक ऐसी भोगों को पूरा करने की बीमारी लगी हुई है जो कई शरीर धार कर भी भोग वासना की निवृत्ति नहीं हो रही है। यह ऐसी यात्रा भोग वासना की है कि ख़त्म होने में नहीं आती। यह ही वासना बारम्बार जीव को शरीर की कैद में लाती रहती है। वासना ही एक जगह से दूसरी जगह शरीर को ले जाती है। शरीर खुद जड़ वस्तु है। उसको चलाने वाली दूसरी ताकत है! उसे भटकाने वाली वासना है। चाहे कोई राजा है या रंक, अमीर है या ग़रीब, समझदार है या मूर्ख, और सब जीवों में चाहे आसमान पर उड़ने वाले हैं या ज़मीन पर चलने वाले या पानी में रहने वाले, सब चारखानी के जीव इस भोग वासना को पूर्ण करने की ख़ातिर ही विचरते नज़र आते हैं। केवल मनुष्य योनि में उस प्रभु ने बुद्धि दे रखी है जिसके ज़रिये तत्त्व ज्ञान प्राप्त करके उस वासना रूपी सफ़र को जीव पूरा कर सकता है। और किसी शारीरिक यात्रा में उसकी उन्नति होनी अति कठिन है, यह हो ही नहीं सकती। शारीरिक यात्रा भी थोड़े काल के लिए ही है, और जितने भी भोग इसके वास्ते हैं वह भी क्षणभंगुर हैं। सब से बड़ी मूर्खताई यह ही है जो कि इन अपूर्ण चीज़ों में सत् शांति हासिल करना चाहते हैं। इस मूढ़पने में खोटे से खोटे कर्म करके अपने–आपको आप ही बंधन–दर–बंधन में जीव डाल रहा है। इस बंधन की हालत में ही शारीरिक यात्रा ख़त्म हो जाती है मगर शांति बिलकुल ही नहीं मिल

पाती। इस क्षणभंगुर शरीर और पदार्थों में तृप्ति हासिल करनी सबसे बड़ी ज़हालत है। भाग्य से सत्बुद्धि जाग्रत हो जाए जिस करके आत्म सम्बन्धी विचार पैदा हो जावें और संसार की असारता और शरीर की क्षण–भंगुरता का पता लग जाए, जिससे तमाम खेद नाश हो सकता है। ऐसा सत् यत्न हासिल हो जाए जिससे बुद्धि प्रकाश को प्राप्त होकर अच्छी तरह जितने भी शारीरिक भोग हैं इनको दु:ख रूप समझने लग जाए और जो भी कर्म दिन–रात में हो रहे हैं, सबको बन्धन स्वरूप जानती हुई केवल आत्म–तत्त्व को ही खेद से रहित नित आनन्द स्वरूप नेह–कर्म पवित्र शांत स्वरूप जानने लगे, ऐसी स्वतंत्र होकर बुद्धि यथार्थ मार्ग पर चलकर निर्भय सुख को प्राप्त कर लेती है।

जब–तक शारीरिक भोगों से उपरस होकर बुद्धि आत्म–आनन्द को अनुभव नहीं करती तब–तक कर्म की वासना दग्ध नहीं होती है। जिस समय आत्म–परायण होकर बुद्धि अन्तर–विखे दृढ़ होती है उस समय परम पवित्रता को प्राप्त होकर सत्पुरुषों के मार्ग पर चलने वाली बनती है। जितने भी शारीरिक भोग हैं उनकी वासना बुद्धि को मलीन करने वाली है। इस वास्ते बुद्धि को बारम्बार पवित्र निर्मल करने के वास्ते सबसे पहले आहार की पवित्रता की ज़रूरत है, फिर व्यौहार निर्मल और सत्संग से मेल–मिलाप रखना। जितनी भी कोशिश दिन–रात कर्म करने की हो, सबको मर्यादा में करते हुए कल्याण की तरफ जाता है। भोगों की वासना में जला हुआ जीव इस कदर हैरान–परेशान होता है कि वह अपनी परेशान हालत को आप ही जानता है। बग़ैर अग्नि के जलता रहता है। ऐसे संताप से बचने के लिए सिवाए सत्मार्ग के और कोई रास्ता नहीं।

वासना रूपी अगन में, जीव जले दिन रात।
'मंगत' मारग धर्म में, जीव शीतल हो जात॥

आत्म–शांति ही परम प्रसन्नता देने वाली है। आत्म तत्त्व निर्मल, शांत, परम सुख रूप है। समझने के वास्ते केवल एक प्रभु महिमा है। जब–तक अहं विकार से ख़ुलासी नहीं होती तब–तक अच्छी तरह सिमरण भी नहीं बन सकता। हर घड़ी, हर लम्ह अपनी बेहतरी का विचार करना चाहिए। कौन चीज़ त्यागने योग्य है और कौन ग्रहण करने योग्य है? हर समय सत् सिख्या सत्संग द्वारा हासिल करते रहनी चाहिए। कुछ समय महापुरुषों की संगत में जाना चाहिए, जिस जगह आत्म ज्ञान की चर्चा हो रही हो, जिनके संग से अच्छी–अच्छी युक्तियां प्राप्त होती रहें। आलसी नहीं बनना चाहिये। जिस तरह संसार के कामों को होशियारी से करते हो, जिनका नतीजा सिवाय राग–द्वेष के और कुछ नहीं होता, अगर इसी तरह सत्–पुरुषार्थ में समय दिया जाए तो सफलता पास ही है।

लाल दास गोबिन्द भज, आलस मनों विसार।
रछ पराया कारज अपना, बरत लयो दिन चार॥

इस चार रोज की शारीरिक यात्रा में परम लाभ आत्म तत्त्व की अनुभवता है। नित संगवासी जीवन शक्ति सहायक हो रही है। अज्ञानता से समझता है मैं शरीर रूप हूं। शरीर न रहने वाली

वस्तु है। आत्मा नित्य, अद्वैत, निराकार, अजन्मा है। ईश्वर सब को सत्‌बुद्धि बख्शें। शारीरिक यात्रा को सफल करके संसार से चलें। इधर आज तरनतारन का सफ़र भी इनका पूरा हो चुका है। आगे की ईश्वर जाने और हाथ जोड़ दिये। फिर वैराग्य के शब्द पढ़े गए।

क्या भरोसा देह का, पल में होए वंजोग।
घड़ी सुलखनी जानिए, जो सत् शबद संजोग॥

फिर आरती व समता मंगल उच्चारण किए गए और प्रशाद बांटा गया। जब संगत के प्रेमी चले गए तो प्रेमी अनन्त राम ने प्रार्थना की:– महाराज जी! सुबह दास के गृह पर भी चरण डालें और वहां ही दूध सेवन करें। प्रेमी प्रशाद भी वहां पायें।

आसन तम्बू में ले जाया गया। संत जी और कुछ प्रेमी श्री महाराज जी की सेवा में आकर बैठ गए। संत जी कहने लगे:– ''महाराज जी! आपकी बड़ी कृपा संगत तरनतारन पर हो रही है। इस तरह सेवकों पर दया दृष्टि बनाए रखें। 'संत दर्शन बड़भागी पाए'।'' फिर दोहे पढ़ने लगे।

साध कै संग मुख ऊजल होत, साध संग मल सगली खोत॥
साध कै संग मिटै अभिमान, साध कै संग प्रगटै सुज्ञान॥
साध कै संग बुझै प्रभ नेरा, साध संग सब होत निबेरा॥
साध कै संग पाए नाम रतन, साध कै संग एक ऊपर जतन॥
साध की महिमा बरनै कौन प्राणी, 'नानक' साध की शोभा प्रभ माहें समानी॥

और भी बहुत सी महिमा गायन की। कहने लगे, ''संत, सत्पुरुष की महिमा इस कदर बाबे की बानी में बखानी हुई है कि बयान से बाहर है। बड़ी भाग्यशाली धरती है जिस जगह संतां ने डेरा कीता होया ऐ।'' प्रणाम करके उठ खड़े हुए और कहा:– महाराज जी! आज्ञा देओ।'' श्री महाराज जी ने, जो प्रेमी भी बैठे थे, सबको फरमाया:– ''प्रेमियों, जाओ। फ़कीरों के पास ज़्यादा नहीं बैठना चाहिए।'' नमस्कार करके प्रेमी विदा हुए।

जब प्रेमी जगजीत सिंह और भक्त बनारसी दास वग़ैरा शहर से भोजन पाकर आए तो श्री महाराज जी फरमाने लगे:– ''कितनी दफा इस बाग में आ चुके हैं। टैंट में ही समय गुज़रता है। बड़े प्रेम से प्रेमी अनन्त राम ने कुटिया बनवाई थी। उसमें एक रोज़ भी नहीं ठहरा गया। तुम्हारे चिरंजी लाल और कई प्रेमी आकर ठहर गए हैं। झोंपड़ी में ऋषि रहना ज़्यादा पसन्द करते थे। तम्बू भी राजसी चीज़ है। सिखों या मुसलमानों में यह फ़कीर होते तो यहां क्या का क्या बन गया होता? हर समय मेला लगा रहता। कुछ ज़िन्दगी वाली कौमें हैं। संसार में चहल–पहल को ज़्यादा समझते हैं। इतने वर्ष आते हुए हो गए हैं, क्या बना, किसने इनकी बात को समझा? वही आठ दस प्रेमी ही नज़दीक आ सके हैं। चले गए तो बाद में इनका भी मेल मुश्किल से होता होगा। बातें करने में प्रेमी बड़े होशियार हैं मगर हम ख़्याल दूसरे को नहीं बना सकते। देखो, अम्बाला में बाहर से आया हुआ

प्रेमी जगन्नाथ कोहाला का है, अनपढ़ है। दो–चार बातें करके दूसरे को मोह लेता है। बहुत प्रेमी इसके हम ख़्याल बन गए हैं। अब अम्बाला के वास्ते बड़ी कोशिश कर रहा है। अल्ले–पल्ले भी कुछ नहीं, बेचारा ग़रीब आदमी है। मगर कुछ न कुछ दूसरे को समझा लेता है। अभी प्रोग्राम नही दे रहे। अबोहर जाकर विचार किया जाएगा। कोई और भी उसके बोझ को संभालने वाला है या नहीं। वैसे ज़िला रावलपिंडी की जनता अम्बाला में ही टिकाई गई है। प्रेमी भी कुछ हैं। जगजीत तुम किसी को कुछ समझा सकते हो या नहीं?''

जगजीत सिंह ने अर्ज़ की:– ''महाराज जी! जिस तरह बाबू अनन्त राम जी समझा सकते हैं उस तरह कोई नहीं समझा सकता। वैसे जो संगत आ रही है उन सबको एक–एक बारी कहा गया है। गुरु की नगरी होने करके सत्संग का चाव भी लोगों में है। कोई न कोई गुरु हर एक ने धारण कर रखा है। ज़्यादातर यह लोग खोजी नहीं हैं, प्रेमी जरूर हैं। साधु की सेवा में भी अच्छे हैं। आप जी की कृपा हम ग़रीबों पर किस तरह होती, अगर आप न पधारते तो? अबोहर में भी आपके दर्शन करूंगा।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– ''प्रेमी! तुम्हारी बड़ी सेवा हो चुकी है। किस वास्ते तकलीफ़ करोगे।'' आख़िर में आपने फरमाया:– ''प्रेमियों! आराम करो।''

सुबह उठने पर जब फ़ारिग हुए, श्री महाराज जी का आसन धूप में लगाकर सामान संभाला गया। टैंट उखाड़े गए। इतनी देर में श्री अनन्त राम जी तांगा लेकर आ पहुंचे। प्रणाम करके अर्ज़ की:– महाराज जी! कृपा करें। यह सामान प्रेमी ले जायेंगे। तांगे में सवार होकर प्रेमी अनन्त राम जी के गृह पर पहुंचे। हाल में आसन लगा रखा था, उस पर श्री महाराज जी बैठे। सब घर वालों ने आकर प्रणाम किया और फूलों के हार पहनाये। दूध सेवन करवाया गया। प्रेमी भी वहां आने शुरू हो गए।

4 फरवरी, 1951 को शाम के तीन बजे गाड़ी पर सब संगत ने सवार करवाया और प्रणाम करके वापिस हुए। प्रेमी जगजीत सिंह अमृतसर तक साथ आए। वहां भटिंडा वाले डिब्बे में सवार करवाके वापिस हुए। श्री किशोरी लाल ने अबोहर तार दे दी कि श्री महाराज जी आ रहे हैं।

45. अबोहर में एकांत निवास

5 फरवरी को सुबह दस बजे के करीब गाड़ी अबोहर पहुंची। अबोहर की सब संगत और अन्य प्रेमी भी फूल मालायें लिए हुए स्टेशन पर मौज़ूद थे। गाड़ी खड़ी हुई। एकदम डिब्बे के पास पहुंच गए। 'ओ३म् ब्रह्म सत्यम्' के नारे लगाते हुए सत्पुरुष के गले में हार डालते हुए प्रणाम करते रहे और तांगे में सवार हो करके जोहड़ी तालाब वाले मंदिर के अहाते में पहुंचाया गया। प्रेमी करोड़ी मल ने वहां कमरा बनवा रखा था। इसमें हमेशा आसन लगाया जाता था। इस दफ़ा भी वहां ही श्री महाराज जी को ठहराया गया। इतने में सब प्रेमी पहुंच गए और सबने दंडवत प्रणाम किया। श्री मुरलीधर जी चाय की गड़वी भरवा कर ले आए। रात के सफ़र की वजह से थकावट

हो चुकी थी इस वास्ते सत्पुरुष काफी देर तक मौन धारण किए रहे। जब आसन पर आकर बैठे तो प्रेमी मुरलीधर ने गड़वी सामने ला रखी। जब देखा तो चाय थी। श्री महाराज जी ने इस पर फरमायाः– ''प्रेमी! इस चाय को अब तिलांजलि दे दी है। प्रशाद बांट दो। प्रेमी जाकर दूध गर्म करके ले आएगा। उसमें कुछ न डालना, सिर्फ़ एक वक्त दूध लिया जायेगा।'' तरनतारन से चलते समय आपने फरमाया था कि वहां जाकर दो दफ़ा दूध का झगड़ा न रखना। अब कमज़ोरी नहीं रही। दूध प्रेमी मुरलीधर के घर से गर्म करवाके लाया गया। सब प्रेमी सेवा के वास्ते कहने लगे। श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''प्रेमियों! तुम पर काफी सेवा का बोझ है। अभी इधर ही हैं। बारी–बारी दूध की सेवा का प्रबन्ध कर लेना। किसी से मांगने भी नहीं जाना।'' सत्संग का समय प्रेमियों की राय से रात के आठ बजे से नौ बजे तक निश्चित किया गया।

पिछले वर्ष सत्संग सम्मेलन के समय आश्रम अहाता में जगह की कमी को देखकर, जिसकी वजह प्रेमियों की काफी तादाद थी, सत्पुरुष ने अहाता आश्रम से बाहर जमीन की खरीद के लिए बाबू अमोलक राम जी को आज्ञा फरमाई। यह ज़मीन शहर के एक जैनी बनिये की थी। बाबू जी ने उसके पास जाना शुरू कर दिया कि वह इसका सौदा करे। वह साहेब रोज़ाना बाबू जी को टालते रहे। कभी एक बहाना करके, कभी दूसरा। कह दिया फलां से पूछ लूं, कभी कह दिया बतला दूंगा, वग़ैरा। अन्त में अपने भतीजे से, जिसकी दुकान भी उनके सामने थी, कह दिया हम तो इस ज़मीन की दस हजार रुपया कीमत लेंगे। हालांकि ज़मीन उस तरफ बारह बीघा थी, करीबन दो किले से कुछ ज़्यादा। जब बाबू जी ने कहा कि बीघे की क्या कीमत लोगे, तो उस साहेब ने जवाब दियाः– हम बीघा वग़ैरा तो जानते नहीं, हम दस हजार कीमत लेंगे। बाबू जी ने सब हालात श्री महाराज जी की सेवा में लिख दिए।

श्री महाराज जी को अबोहर ठहरे हुए दो चार दिन ही हुए थे कि प्रेमियों में से श्री चिरंजी लाल व करोड़ी मल ने प्रार्थना कीः– ''महाराज जी! आपने सेवा के वास्ते फरमाया था कि तुम पर बहुत बोझ है। कृपा करके फरमावें, सेवक हाज़िर हैं।''

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''प्रेमियों तुमको पता ही है आश्रम खड़ा हो चुका है। चारदीवारी के अन्दर वाली ज़मीन, जिसमें बाग लग गया है, संगत व सत्संग के वास्ते थोड़ी है। प्रेमी, साथ वाली ज़मीन की खरीद का विचार कर रहे हैं ताकि साथ वाले टुकड़े शामिल किए जायें। उस ज़मीन पर दस बारह हज़ार रुपये से कम खर्च नहीं बैठेगा। तुम प्रेमी दिल खोलकर सेवा में हिस्सा ले सको तब यह काम सर–अंजाम पा सकता है। फ़कीर अव्वल तो सेवा के वास्ते किसी को तकलीफ़ देना नहीं चाहते, क्योंकि यह मामूली काम नहीं है। आप ख़ास–ख़ास प्रेमी अगर इस बोझ को संभाल सकें तब सेवा का कार्य पूर्ण हो वरना 'कोझे रोने कोलों चुप' ही ठीक है। अच्छी तरह विचार करके दो चार दिन में पता दो।''

13 फरवरी के सत्संग में आपने निम्नलिखित अमृत वर्षा फरमाई–

46. सत् उपदेश–अमृत

अनादि काल से जीव शरीर की कैद में आकर फंसा हुआ है। जन्म के बाद मौत और मौत के बाद फिर जन्म लेते हुए लगातार शरीरों को धारण कर रहा है। महाप्रलय के समय जाकर जीवों को मूल कारण की तरफ खुद–ब–खुद जाना पड़ता है। न मालूम कब इस सृष्टि का अंत होता है। मगर शारीरिक कैद में आकर यह जीव बारम्बार आ जा रहे हैं। बड़े लाचार बेबस होकर सुखों और दुःखों को यह जीव भोगता रहता है। इस अज्ञानता के चक्कर से इसे छुटकारा नहीं मिलता। जब–तक अपने स्वरूप आत्मा को अनुभव नहीं कर लेता। तब–तक इस माया अन्धकार में इसे ठोकरें खानी पड़ती हैं। जिस शरीर में भी होगा, सबके सब कैद रूप ही हैं। पूर्ण भाग्य से मनुष्य चोला सात्विक रूप में मिलता है। हैवानों के शरीर यानि चरिंद, परिंद, हवा में उड़ने वाले, या धरती पर चलने वाले, तमोगुणी शरीर चाहे वे पाताल में निवास करने वाले क्यों न हों, सबके सब पांच महाभूतों के बने हुए शरीर समय–समय पर प्रगट और लय होते रहते हैं। भगवान की माया को पहले समझना है फिर उससे मुक्ति हासिल करनी है। सत्–ज्ञान केवल इस मनुष्य जामा में ही जीव को हो सकता है। जीव इस शरीर में पूर्ण ज्ञान को प्राप्त होकर परम सुख को प्राप्त हो सकता है और कई माया के चक्कर में फंसे हुए जीवों को उद्धार करने वाला बन सकता है। शरीर को ही सब कुछ समझने वाले इसके सुखों को ही एकत्र करने में लगे रहते हैं और शारीरिक सम्बन्धी स्त्री, पुत्र इत्यादि, जो बन्धन रूप हैं, को सुख रूप जानकर उनके सुखों के वास्ते भी यत्न करता है और चाहता है कि दुःखी कभी न हों। सबको नित सुख ही मिले। दिन–रात ऐसी कोशिश में लगा रहता है। इस मकसद के लिए धन ज़्यादा से ज़्यादा इकट्ठा करता है और ऐसा करने के लिए मुसीबतें उठाता है और कूड़, कपट, चालाकी करके इसे इकट्ठा करता है। कुछ लोग इसे इक्ट्ठा करके अपने व अपने परिवार, सगे–सम्बन्धियों के लिए इस्तेमाल करते हैं। दान–पुण्य भी करते हैं, दुःखी–दीन अनाथों को देते हैं, राजा का हक भी अदा करते हैं और ज़रूरत के लिए भी जमा रखते हैं। बाज़ कृपण जीव इसको संभालकर रखते हैं। परिवार को भी अच्छी तरह खाने–पीने नहीं देते, न खुद ही ठीक इसका इस्तेमाल करते हैं, बल्कि टैक्स वग़ैरा भी हज़म कर जाते हैं। यहां तक कि माया का चक्कर इनसे बड़े–बड़े अनर्थ करवाता है। बाज़ इस माया को एकत्र करने में चोरी, झूठ, कपट, छल कत्ल भी करने लग जाते हैं। यह माया आ जाने पर कई अनर्थ करने पर मजबूर कर देती है। माया आ जाने पर अंहकार आ जाता है जिससे अय्याशी, शराब, जुआ और कई तरह के ऐब भी लग जाते हैं। जो इसके इस्तेमाल का सही ढंग नहीं जानता है, इसे पाकर भी अति अशांत रहता है।

इस माया के आ जाने पर कई दुश्मन भी खड़े हो जाते हैं। चोर, डाकू इसे लूटने का यत्न करने लग जाते हैं और इसका बड़ी मेहनत से कमाया हुआ धन नष्ट कर डालते हैं या उसके सगे सम्बन्धी रिश्तेदार ही हाथ फेर जाते हैं। इसके चले जाने पर बेचारा लाचार दुःखी होता है। धन का आना बड़ा सुखदाई मालूम होता है मगर जब यह लक्ष्मी चली जाती है, परम दुःख, चिंता, जलन

देकर जाती है। कोई भाग्यवान ही इसके द्वारा यश कीर्ति प्राप्त करता है, इसे अच्छे कामों में लगाता है। ऐसे जीव के दरवाज़े से कोई खाली हाथ नहीं जाता। ऐसे सेवादार का चित्त सदा संतोष व उदारता वाला होता है।

सांसारिक धन, परिवार, महल, अटारियां वग़ैरा हमेशा रहने वाला सुख नहीं दे सकते। इसलिए जो जीव इनको प्राप्त होने पर इनको प्रभु की दात समझता है उसके लोभ, मोह आप ही कम हो जाते हैं। संसार की सब चीज़ों से निर्मोह होने के लिए सत्पुरुषों का संग करके हर समय चित्त को दयावान बनाये रखे। दीन–दुःखी अनाथों की तन, मन, धन से यथा शक्ति सेवा करे। नम्रता को धारण करे। द्वन्द्व, गर्मी–सर्दी, लाभ–हानि, सुख–दुःख, मित्र–शत्रु, यश–अपयश में समान भाव रखे। स्वतंत्र बुद्धि द्वारा नित सत् विचार धारण करे और सत्–आहार और सत्–संगत धारण करते हुए जीवन कल्याण के मार्ग पर चल पड़े। किसी को हानि या दुःख पहुंचाने की कोशिश न करे। ऊंच–नीच के भाव को निकाल देवे। जो प्रारब्ध–कर्म अनुसार प्राप्त हो जावे उसमें प्रभु आज्ञा को मानते हुए सन्तोष धारण करे। हर समय ऐसा सद्‌भाव बनाये रखे कि ईश्वर तत्–सत् और अंग–संग वासी है। संसार की हर वस्तु उसके प्रकाश से रोशन है। ऐसे सत्कर्मों को धारण करे जो निर्वास स्थिति की तरफ ले जाने वाले हों। ईश्वर चिंतन लाज़मी जानें क्योंकि सत्–सिमरण से अनात्म नाम, रूप, गुण, कर्म रूपी सांसारिक पदार्थों का सिमरण कम होता है। मानसिक शांति को प्राप्त करने के यह ही सत् भाव हैं। संसार में कोई वस्तु नहीं जो मन, चित्त को हमेशा का सुख शांति दे सके। सत् शास्त्र, ग्रन्थ, गुरु, पीर, अवतार इस मन को शांत करने के साधन बतलाते हैं। संसार के पदार्थ अगर नहीं मिलते, उनके वास्ते जीव के अन्दर कितनी कल्पना और जलन होती है और उनको प्राप्त करने के लिए कितनी दौड़–धूप करता है। मगर क्या यह जीव ऐसा विचार भी करता है कि मैंने आज सिमरण नहीं किया, सेवा नहीं कर सका या सत्संग में नहीं जा सका? जिस चीज़ के लिए उनके अन्दर तड़प पैदा होती है उसे ढूंढ लाता है। इसलिए हमेशा सच्ची लगन से प्रभु प्राप्ति को पैदा करें। जब ऐसी लगन होगी अपना सुधार होगा और अपने सुधार से लोक–परलोक सुधरेंगे और बन्धन रूपी संसार से मुक्ति मिलेगी। ईश्वर सबको सत् बुद्धि बख़्शें ताकि संसार में आने का लाभ प्राप्त कर सकें।

इसके बाद कुछ वाणी पढ़ी गई और आरती व समता–मंगल उच्चारण करने के बाद सत्संग समाप्त हुआ। जब सत्पुरुष ने प्रेमियों से कहा कि कोई विचार करो तो प्रेमी करोड़ीमल ने अर्ज़ की:– ऋषि महाराज जी! इस वैतरणी नदी से कैसे पार हो सकते हैं?

उत्तर:–श्री महाराज जी ने मुस्कराते हुए फरमाया:– ''प्रेमी! कई दफ़ा इस पर तुमको समझा चुके हैं। जितना भी तेरे अन्दर फुरना है, संकल्प–विकल्प उठ रहे हैं और फिर इन इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए दौड़ता है, यह सब वैतरणी रूप हैं। जितनी भी इच्छायें हैं, सब चौरासी में भटकाने वाली हैं। तृष्णा रूपी नदी को वैतरणी कहते हैं, जो तरी न जा सके। ख़्वाहिशों से मुक्त हुए बिना गाय, बच्छी दान करने से नहीं हो सकता। ज्ञान रूपी गाय को हासिल करके इसके सहारे मन

ख़्वाहिशात से निर्वास हो सकता है और कोई ऐसी नदी नहीं जिसे पार करना पड़ता है। तृष्णा रूपी नदी से पार होने के वास्ते और कोई ऐसा उपाय सिवाय प्रभु नाम सिमरण के नहीं है। तृष्णा के विस्तार का कोई अन्त नहीं। बेअन्त विस्तार है। नित ही कर्म चक्कर में जीवों को भटकाने वाली तृष्णा ही है। निष्काम कर्म रूपी नौका द्वारा भव-सागर से पार हो सकता है। हर समय मन ही मन में दृढ़ करते रहो 'सत् करतार और झूठ संसार'। संसार का सिमरण तृष्णा रूप है और ईश्वर की याद इस आवागवन के चक्कर से छुड़ाने वाली है। मोटी बात याद रखो। अपने मन की भूल, अज्ञानता को दूर करो। नित प्राप्त स्वामी करतार को याद रखो। होना न होना सब प्रभु आज्ञा में जानो। अपने मन का गुमान त्यागो।

''मन मानिया ते रब जानिया।''

प्रेमी करोड़ीमल जी कहने लगे:- ''महाराज जी! यह पंडित लोग जो हमसे पिण्ड दान वग़ैरा करवाते हैं, यह क्यों करवाते हैं?''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''प्रेमी! यह लोग भी तुम संसारियों के आसरे बैठे हुए हैं। इनको कुछ दे देने से कोई कमी नहीं पड़ती। बाकी कल्याण या अपनी गति तुमने खुद ही करनी है। तप, त्याग, सिमरण, से जब बुद्धि शुद्ध हो जायेगी, गति फिर कोई दूर नहीं। ज़िन्दगी में सेवा, सिमरण करो। गुरु लोग भी रास्ता बतलाते हैं कि ऐसे-ऐसे कर। बहुत जल्दी गति की ज़रूरत है तो काशी चला जा। काशी कलवत्र है सब कुछ भेंट करके पंडों के हवाले कर, सिर पर आरा फिरवा ले, तेरी गति हो जायेगी। अंग्रेजों का भला हो, उन्होंने आकर यह अंधेरा बंद करवा दिया है। कितनी ज़हालत इन ब्राह्मणों ने डाल रखी है। जो काशी गति के लिए जाता उसे मारकर कुएं में फैंक देते, सब उसका माल-धन समेट लेते थे। कितने भारी ज़ालिम लोग थे।''

एक प्रेमी कहने लगा:- ''महाराज जी! लोग भी बड़े मूर्ख थे। किस तरह उनके दाओ में आ जाते थे।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''प्रेमी! पंडितों ने एक बड़ा गहरा कुआं बनवाया हुआ था। जब प्राणी की हज़ामत वग़ैरा करके वहां लाते थे, कहते हैं कि वहां बड़ा अंधेरा होता था। कपूर जलाकर कुएं में फैंक देते थे। कहते वह जोत है दर्शन कर ले। जब वह सिर झुकाता ऊपर से खड्ग मारकर सिर उतार कर बीच में फैंक देते। पीछे पांव पकड़ कर सारा शरीर बीच में फैंक देते, बस मुक्ति हो गई, उनकी मौज बन गई। जो भी साथ लाया होता, उससे पहले ही संकल्प करवा लेते थे। ब्राह्मणों ने लूटने के बड़े रास्ते बना रखे हैं। पैदा होने से शमशान तक यह नहीं छोड़ते। इनकी कृपा से कई धर्म-पन्थ बन गए हैं। उनके पंजे में बहुत साधारण अंध विश्वासी लोग फंस ही जाया करते थे। वर्षों गुज़र गए हवा तक बाहर नहीं निकलने दी। अंग्रेज कौम बड़ी चतुर थी, किसी तरह से सब राज़ निकाल लिया। दुनिया में अंधेरा भी बहुत है। अंधेरा डालने वाले बाहर से नहीं आते, अपने ही यह आचार्य तुम्हारे गुरु, ब्राह्मण चले आ रहे हैं। तारते भी ब्राह्मण हैं, डुबोते भी ब्राह्मण ही

हैं। इनका शरीर भी ब्राह्मण खानदान से है। मत समझो ब्राह्मणों की निन्दा हो रही है। निन्दक कर्मों की असलियत बयान करनी निन्दा नहीं होती। यह विचारने योग्य बातें हैं। इस ज़माने में हरिद्वार में हर की पौड़ी पर जाकर देखो, ढाई-ढाई, पांच-पांच आने में गऊ दान करवा रहे हैं। स्वर्ग के अभिलाषी फंस ही जाते हैं। अच्छी तरह खोज किया करो। सत्संग का मतलब है, जिस जगह सच और झूठ का निर्णय होता हो। हमदर्दी और प्रेम से समझाने वाले ब्राह्मण भी बहुत होते आए हैं। इनकी इस दान ने मति हीन कर दी है। तुम साहूकार लोग भी इनके कहने में खूब आ जाते हो। तुम भी इनको वैसे कुछ देने वाले नहीं हो। किसी को शुक्र, किसी को शनिचर, मंगल बताकर अपना निर्वाह करते चले आ रहे हैं।

''मोक्ष हर व्यक्ति ने अपने आप करनी है। जिस समय जप, तप, साधन करते-करते बुद्धि आत्म-अनुभव करके इसमें लीन हो जावेगी, उस समय मोक्ष की भागी होगी। जब-तक शब्द स्वरूप परमेश्वर को अच्छी तरह अनुभव न करे तब-तक कर्म जंजाल में फंसी रहती है। बेखौफ़ यानि निर्भय होने के लिए अनेक तरह के कर्म करने में लगी रहती है। निर्वास होकर, यानि वासना रहित होकर ही मुक्त पद को हासिल कर सकती है। संसार में पूजा उसकी होती है जिसके अन्दर नेहकर्म स्थिति आ जाती है। यह ही निर्वाण अवस्था मोक्ष-पद को प्राप्त होकर परम आधार सत्स्वरूप परमेश्वर में स्थित होता है। उस समय बुद्धि परम तृप्त हो जाती है, यानि ख़्वाहिश के अज़ाब से हमेशा के लिए छूट जाती है। होना तो निर्वास है, इसमें किसी का जप, पाठ, मंत्र सिद्धि काम न करेगी, न कोई दूसरा मोक्ष दिलवा सकता है। जिसके अन्दर कोई कामना नहीं रहती। वह ही वैतरणी से पार हो जाता है। तृष्णा ही वैतरणी नदी है। वासना, कामना, ख़्वाहिश, सब तृष्णा का ही रूप है। निर्वास होना कोई मामूली बात नहीं। करोड़ीमल अच्छी तरह समझ लो। तुम्हारी बुद्धि में बात बैठी है या नहीं?''

करोड़ीमल जी कहने लगे:- ''महाराज जी! समझ तो लिया है। कई प्रेमी कई तरीके से जब पूछते हैं तब भ्रम में पड़ जाता हूं। जब-तक आत्म-दर्शन नहीं होंगे तब-तक मोक्ष गति कैसे हो सकती है? आपकी कृपा से और कई प्रेमियों का भी भला हो जाता है, इस वास्ते कह देता हूं। आज आपने कितनी कृपा की है।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''अच्छा प्रेमियों! जाओ आराम करो। अपनी बेहतरी सोचते रहा करो।'' सब संगत प्रेमी नमस्कार करके जाने लगे। कुछ पीछे ठहर गए। महाराज जी ने पूछा:- ''संगत को कुछ समझ भी आती है कि नहीं? तुम्हारी बोली ज़रा और तरह की है, थारी-महारी वग़ैरा।''

प्रेमी कहने लगे:- ''महाराज जी! आपका समझाने का ढंग बड़ा अच्छा है। असली भाव सब समझ आ जाता है। अब हम पंडितों के आसरे पर नहीं रहेंगे। अपने आप भी कुछ यत्न करेंगे।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''ऐसा ही दृढ़ निश्चय होना चाहिए। अपने मन का अन्धकार निकालने के लिए खुद ही कोशिश जो करेगा उसको ही अविनाशी खुशी मिलेगी। दूसरे के आसरे

पर रहने वाले हमेशा नुकसान में रहते हैं। सत्–पुरुषार्थ और है क्या? अपनी मोक्ष, गति आप अपनी ज़िन्दगी में करे। बाद में न कोई पंडित कर सकता है और न सगे–सम्बन्धी। जीवन में जो शुभ–अशुभ कर्म कर लिया है वे सुख–दुःख के देने वाले हैं। जिसने कोई कामना न रखते हुए निष्काम प्रभु–परायणता में समय दिया है वह स्वयं मोक्ष का अधिकारी हो जाता है। जिसने निष्काम भाव से ईश्वर सिमरण, भजन, सेवा की है उसके वास्ते आवागमन लाज़मी है, चाहे किसी अच्छे घर में जाकर मनुष्य ही बने। गीता तुम्हारी क्या कह रही है? भ्रष्ट योगी श्रेष्ठ पुरुषों के घर में जन्म लेता है। जन्म–जन्मांतर तप, ध्यान करने के बाद मुक्ति हासिल करेगा। इस तरह लगे रहा करो। जीवन का सफ़र प्रभु–परायण होकर करने में ही सुख शांति है।''

बाबू अमोलक राम का पत्र पहुंचने पर कि जैन बनिया दस हजार रुपया कीमत मांगता है, श्री महाराज जी ने एक पत्र उसकी तरफ लिखा जिसमें तीर्थकरों के जीवन आदर्श व शिक्षा का हवाला देते हुए लिखा कि चूंकि ज़मीन पब्लिक के जमा होने और सत्संग वग़ैरा के लिए लेनी है, इसलिए जायज़ कीमत लेकर इसे बेचें।

जब पत्र मालिक को पढ़ाया गया तो उन्होंने जवाब दिया कि उन्होंने यह ज़मीन अपनी बेवा बहन को दी हुई है। इसकी रकम भी उसी को देनी है। चूंकि वह बेवा है इसलिए उसे भी रुपये की ज़रूरत है। इसलिए कीमत कम नहीं हो सकती।

बाबू जी ने ऐसा ही श्री महाराज जी की सेवा में लिख दिया और यह भी अर्ज़ कर दी कि इस कीमत की वह ज़मीन नहीं है। श्री महाराज जी ने पास मौज़ूद भक्त बनारसी दास से पूछा:– ''प्रेमियों ने कुछ विचार किया है या नहीं?'' भक्त जी ने अर्ज़ की:– अभी तक उन्होंने कुछ नहीं किया। शाम को चिरंजी लाल जी आए थे, कह रहे थे कि हमने तो निश्चय कर लिया है कि जो श्री महाराज जी फरमावेंगे उनकी कृपा से हो जावेगा। श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी! अभी तुम किसी को कुछ न कहना। दो–चार रोज़ तक विचार पूछा जावेगा। अच्छा अब आराम करो।''

सत्पुरुष दूध पीकर जोहड़ी के किनारे परली तरफ रोज़ाना जाकर विराजमान होते और अपनी आनन्दित अवस्था में लीन हो जाते।

एक रोज़ भक्त बनारसी दास जब खाना खाकर दोपहर के करीब वापस आए तो योग वशिष्ठ ले जाकर वहीं पास ही बैठकर पढ़ने लगे। दो घंटे वह पढ़ते रहे। सत्पुरुष लेटे हुए थे। उस वक्त आप उठकर बैठ गए और भक्त जी को पढ़ते देखकर पूछा:– क्या पढ़ रहे हो? भक्त जी ने अर्ज़ की:– महाराज जी! योग वशिष्ठ से भृगु जी के सुपुत्र शुक जी का विचार पढ़ रहा हूं। फरमाने लगे:– ''पढ़कर सुना।'' दो तीन सर्ग चार से सात तक पढ़कर सुनाये। इनका यहां देना विषय को लम्बा करना होगा इसलिए दर्ज नहीं किया जाता।

जब सुन चुके और पढ़ना ख़त्म किया तो महाराज जी ने फरमाया:– ''आंख खोल। वह क्या अच्छा तरीका समझाने का है? वशिष्ठ ही कहने वाले और राम जी सुनने वाले हैं। प्रेमी, तू भी ज्ञान दृष्टि से अंतरमुखी होकर शुरू से अब तक के चक्कर को देख सके तो तुझे भी ऐसा ही पता लगे।

तुझे कितने जन्मों के बाद फ़कीरों के पास बैठने का मौका मिला है। यह सब ही शुक की तरह अनेक शरीरों को धारण करते हुए चले आ रहे हैं। जब सिमरण, ध्यान, तप द्वारा त्याग हासिल करेंगे, मुक्ति को प्राप्त होंगे। चौदह-लोक के सुख को पाकर भी जीव को तृप्ति नहीं हो सकती। अज्ञानता के कारण सबका मन चित्त उड़ता है। दीर्घ-वासना ही कई शरीरों की कैद में फंसाती रहती है। सृष्टियों की कोई शुमार नहीं। वासनाओं का भी कोई शुमार नहीं। जब-तक मन के अन्तर विखे संशे यानि कर्म की धारा उठ रही है तब-तक संसार दृढ़ होता रहता है। मन के अन्दर नेहकर्मता आवे तब इसका अहंकार टूटे।

मन के मते न चालिये, मन के मते अनेक।
जो मन पर सवार है, सो साधु कोई एक॥

''दृश्यमान सारे संसार को प्रभु रूप जानो। इसके सिवा और कुछ है ही नहीं। जब यत्न यानि अभ्यास से मन दृश्य से हटकर अंतरमुख शब्द स्वरूप में जज़्ब होने लगता है, तब मन मरने लगता है। यह तो एक तपस्वी के मन चित्त का हाल होता है। जो नित संसार के रूप में घिरे रहते हैं उनका क्या शुमार? शारीरिक विकारों पर फ़तह पानी आसान नहीं। जिज्ञासु को हर समय सत्संग, सेवा, सिमरण, अभ्यास की ज़रूरत है। मन एक लम्ह भर में कहीं का कहीं ले जाता है। देखो, इतने बड़े तपस्वी भृगु को फिर बनिये का मोह फुर आया और जीवों की गिनती ही क्या है? वे लोग साधारण थे। माया का फेर भी अश्चर्ज है गुणी-मुनी किसी को नहीं छोड़ता। सारा यह मन का पसार ही संसार दिखाई दे रहा है। भृगु जी कोई मामूली ऋषि न थे। मगर काल भी अच्छा गुरु उसे मिला। मन, चित्त और ज़िस्म में बड़ा भेद है। प्रेमी, संत आत्मा सिंह ने जो इच्छाधारी साधु वाली बात सुनाई थी, शरीर बदलकर गया, इससे सिद्ध होता है कोई न कोई सिद्ध पुरुष रहते हैं। इन विचारों को कौन पढ़ता है? किस कदर जिस्म और जान के फ़ल्सफे को खोलकर बयान किया हुआ है। इस सारे प्रसंग से तूने क्या समझा है?''

भक्त जी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! ऐसा महान तपस्वी महात्मा का मन भटक गया तो इस नाचीज़ की क्या हालत हो सकती है?''

श्री महाराज जी ने फरमायाः- ''मैदान में निकलने वालों को बड़े-बड़े थपेड़े लगा करते हैं। शूरवीर घबराते नहीं। कदम पीछे नहीं करते। जब-तक फ़तह न पावे, चले रहते हैं। अपना गोल मकसदे-ज़िन्दगी याद रखो। मुख़ालिफ़ हवा घेर लिया करती है। ऐसे समय को गुज़ारना पड़ता है। ऐसा समय जीव के वास्ते सबक देने वाला होता है। जो भी जीव संसार में आता है, माया उसको अपना खेल ज़रूर दिखाती है। इसलिए हर समय प्रभु कृपा और गुरु दृष्टि अंग-संग जानो। छोटा दिल कभी नहीं करना चाहिए, 'होनी हो सो हो'। ऐसा समझो, सब प्रभु आज्ञा में हो रहा है, फिर कोई विकार बन्धन में नहीं ले जा सकता। प्रभु-परायणता ही सबसे बड़ा इलाज निर्बन्ध होने के वास्ते है। वैराग्य और अभ्यास दृढ़ता देने वाले हैं। हर वक्त मन, बुद्धि को उच्च विचारों में लगाए

रखो। सत् विचार सम्पन्न बुद्धि कभी धोखा नहीं खा सकती। यह तब ही फंसती है जब संसार के भोग पदार्थों को सुख देने वाला समझ कर उन्हें भोगती है। गिरना, उठना लगा रहता है जब–तक आत्म–अनुभवता के बाद लीनताई नहीं हो जाती। प्रेमी, यह मन के सुधार के लिए वचन प्रगट हुए है। 'समता स्थिति योग' पुस्तक ला, तुझे समझाया जावे।''

भक्त जी पुस्तक ले आए। खोलते ही जो पहला दोहा निकला वह निम्नलिखित था।

मन का मान त्याग के, सत ठाकर नित चेत।
'मंगत' करनी सार यह, भरम दुबधा मिटे अनेक॥

और आख़िरी दोहा था।

सत मारग की खोज बिन, जीव भरम नहीं जाये।
'मंगत' मोह विकार में, नहीं पलक शांत चित आए॥

सतपुरुष ने फरमाया:– ''देखो। ''मन अपने का छोड़ अभिमाना, पावें विश्वास रूप कल्याना।''

क्या तुम इन शब्दों को पढ़ते नहीं? तेरे ही हाथ से सब लिखे हुए हैं। प्रेमी, मन का मान ही यानि कर्तापन सब अनर्थों की जड़ है। वासना में फंसकर अनेक जन्म देखने पड़ते हैं। तेरे सामने भृगु स्वरूप में ही तो बैठे हुए हैं। जैसा विचार करना हो कर सकता है। सब शरीरों की उम्र मयादी होती है। समय के प्रभाव से शरीरों के आकार और आयु घटती–बढ़ती रहती है। जिसने सत् स्वरूप विखे लीनताई हासिल करनी है। उनके शरीर थोड़े काल रहें या ज़्यादा, उन्हें कोई फ़र्क नहीं पड़ता। अगर स्वरूप में स्थिति प्राप्त नहीं हुई तो शरीर की उम्र हज़ार साल से ऊपर भी हो जाए तो क्या हासिल हुआ? ज्ञानेश्वर की तरह जल्दी ही जिनको आत्म अनुभव हो जाता है, ख़्वाहे जल्दी ही शरीर छोड़ दें या प्रारब्ध कर्म अनुसार जितना अर्सा विचरें, वहां कोई फ़र्क नहीं पड़ता। अपने सत्–स्वरूप में स्थित होकर तीन साल शरीर रहे या तीस हजार वर्ष गुज़र जावें, योग की महिमा की कोई हद थोड़ी है। क्या समझे?''

अर्ज़ की:– ''महाराज जी! इस स्थिति के बारे में क्या अर्ज़ कर सकता हूँ। कृपा दृष्टि बनाये रखें। कभी तो आपकी मेहर हो जायेगी। यह ही डर है कि वासना किसी कड़े जाल में न डाल दे।'' इतना कहा ही जा रहा था कि दो प्रेमी आ गए। प्रणाम करके बैठ गए। बातचीत का सिलसिला बदल गया।

प्रेमी रामचंद और एक प्रेमी और थे। बैठते ही एक सज्जन ने अर्ज़ की:– ''महाराज जी, महां (मुझे) भी कुछ बताओ, नाम कैसे जपा करें?''

श्री महाराज जी ने पूछा:– ''कौन होते हो?'' उसने अर्ज़ की:– ''बनिया हूं।'' फिर पूछा:– ''क्या काम करते हो?'' उसने अर्ज़ की:– ''दलाल हूं।'' फिर पूछा:– ''कैसे दलाल हो?'' उसने अर्ज़ की:– ''मकानों की दलाली करता हूं।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''जदों तेरी दलाली होवेगी, तां पता लगेगा।'' फिर उसने कहा:– ''महां भी बताओ न कुछ।''

फरमाया, ''बस हेर-फेर जपा करो।'' यह सुनकर वह चुप हो गया और चन्द लम्हे के बाद उठकर चला गया, फिर दोबारा उसे वहां नहीं देखा गया।

श्री महाराज जी किस तरह झट दूसरे की रुचि जानकर वैसा ही उत्तर दे दिया करते थे। जब वह चले गए तो महाराज जी ने पूछा:– ''वह नए दोनों जवान रोज़ाना आते हैं, कौन हैं?'' अर्ज़ की:– ''इतना ही पता है यह बैंक में काम करते हैं।'' फरमाने लगे:– ''इनको कुछ होश है?'' अर्ज़ की गई:– ''आप बेहतर जानते हैं, वैसे अच्छे जिज्ञासु प्रेमी मालूम होते हैं। कुछ विचार करें। तब ही ज़्यादा पता लग सकता है।''

इसके बाद आसन कमरे के अन्दर ले जाया गया।

जब श्री महाराज जी वहां आकर बैठे तो प्रेमी करोड़ीमल, चिरंजीलाल जी आ गए। प्रणाम करके बैठे। सेवा का सब समाचार प्रेमी चिरंजीलाल ने सामने रखा। श्री महाराज जी फरमाने लगे:– इस तरह काम तोड़ नहीं चढ़ेगा।'' विचार हो रहे थे कि श्री कुन्दन लाल जी आ गए। तब चिरंजी लाल जी और कुन्दन लाल जी कहने लगे:– ''आप जैसा फरमायें वैसा ही हो सकता है।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''प्रेमी! यह हुक्म इस तरह नहीं कर सकते, आपके लिए मुश्किल हो जायेगा।''

कुन्दन लाल जी कहने लगे:– ''कोई परवाह नहीं। आप आज्ञा फरमावें।'' इस पर श्री महाराज जी ने प्रेमी कुन्दन लाल और चिरंजी लाल के नाम छः हज़ार की रकम लिख दी और कहा, दोनों आपस में फैसला कर लो।'' दोनों प्रेमियों ने अर्ज़ की:– ''हम आपस में कर लेंगे।'' फिर बाकी सब प्रेमियों के नाम लिखकर दस हज़ार रुपया पूरा कर दिया। उन्होंने फिर पूछा:– ''जब आप फरमावें यह रुपया इकट्ठा करके बाबू अमोलक राम जी के नाम भेज दिया जावेगा।''

श्री महाराज जी कुछ देर अन्तर्ध्यान हो गए। कुछ देर बाद फरमाने लगे:– ''ईश्वर तुम प्रेमियों की सेवा सफल करें। यह बहुत बड़ा बोझ था। आज संगत का काम हो गया।'' प्रेमी कहने लगे:– ''महाराज जी! आप सब कुछ हमारी बेहतरी के लिए ही सोचते हैं। संगत की सहूलियत बनी रहेगी। जगह खुली हो जावेगी। प्रेमी अच्छी तरह हर प्रोग्राम पूरा कर सकेंगे।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– ''नई जगह बनने में बहुत कुर्बानी की ज़रूरत होती है। तुम सेवादारों ने ही कुर्बानी करके सब पूरा करना है। उन्होंने संगत से छुपा कर कुछ नहीं रखा हुआ। जब तुम सेवादार हर समय सेवा करने के वास्ते हाज़िर हो तो फिर कमी क्या रह सकती है? प्रभु नित पर-उपकारी भावना बख्शें। सबसे आला दान धरती का है। धरती होगी सब काम हो सकेंगे। ऐसे काम प्रेमी मिलकर ही कर सकते हैं। इस तरह कमी किसी बात की नहीं आती। सेवा में खर्च करने से कई गुना होकर आता है। चित्त में किसी तरह की ग्लानि न करना। ऐसे कामों में बड़ी श्रद्धा और विश्वास की ज़रूरत है। प्रभु कमाई सफल करें। जाओ, और फ़ारिग होकर आवें, सत्संग का वक्त होने वाला है।'' सब प्रणाम करके चले गए।

श्री महाराज जी ने उनके चले जाने के बाद पूछा:- ''प्रेमियों का क्या भाव देखा है?''

भक्त जी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! दास को तो ऐसी उम्मीद न थी। यह सब आपकी निगाह की कृपा है।''

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- ''बेशक पैसा बनियों की जान होता है, मगर धर्म के मार्ग में भी खुले चित्त से सेवा करना जानते हैं। ईश्वर भाग्य लगाने वाले हैं। बाकी संगत को आज़ादी हो गई है। जब संगत अगले साल बढ़ी हुई जगह देखेगी, बड़ी प्रसन्न होगी और पता लग जावेगा कि अबोहर की संगत ने सेवा की है। इस तरह कुर्बानी से संगत के अंदर उत्साह बढ़ा करता है। रात के सत्संग के बाद प्रेमियों को ज़रा बिठा लेना ताकि जिस-जिस प्रेमी के नाम सेवा लिखी गई है, सुना दी जावे। सबको पता लग जाना चाहिए कि हमारे जिम्मे ऐसी सेवा आ गई है।''

थोड़ी देर में एक नए प्रेमी आ बैठे। श्री महाराज जी ने पूछा:- ''कैसे आना हुआ?'' प्रेमी ने अर्ज़ की:- ''दर्शनों के वास्ते।'' श्री महाराज जी ने पूछा:- ''क्या काम करते हो?'' प्रेमी ने अर्ज़ की:- ''स्टेट बैंक के दफ्तर में काम करता हूं। महाराज जी, आप के वचन अमृत रात को सुने थे। बड़ी प्रसन्नता हुई थी। प्रभु जी की बड़ी कृपा हुई है, आप जी के दर्शन हो गए हैं।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''प्रेमी! कुछ विचार करो। तुम्हें इधर आने की क्या ज़रूरत महसूस हुई?''

प्रेमी कहने लगा:- ''महाराज जी! इस दुनिया के शोर व गुल से अलग रहने का स्वभाव कुदरतन बना हुआ है। जवानी में अगर संगत मिल जाए तो इंसान बना जा सकता है। इस उम्र में संग-दोष का असर ख़ासकर होता है। जज़्बात की लौ पूरे जोवन पर होती है। ईश्वर कृपा से, एक सरदार की कृपा से, मुझे भी ग्रन्थ साहेब की वाणी का पाठ करने का स्वभाव पड़ गया है। सुबह के समय अरदास करते हुए यह वचन आते हैं।''

भई प्रापत मानुख देहुरीआ, गोबिन्द मिलण की एह तेरी बरीआ॥
अवॅर काज तेरै कितै न काम, मिल साध संगत भज केवल नाम॥
सरंजाम लाग भव जल तरन कै, जन्म बीरथा जात रंग माया कै॥

''महाराज जी, जब मैं यह वाक्य पढ़ता हूं मुझे व्याकुल कर देते हैं। सोचता हूं दुनिया में पैदा होना, खा-पी, पहन कर विचरना, फिर मर जाना यह तो कोई बात न हुई।''

कफ़न बांधे हुए चलने को, सब तैयार बैठे हैं।
बहुत आगे गए पीछे भी, सब बेज़ार बैठे हैं॥

''कृपा करके बतायें किस रास्ते को धारण करें ताकि यह मनुष्य जन्म सफल हो जाए? ख़बर मिली थी, जोहड़ी पर संत आए हुए हैं। आकर विचार सुनकर तसल्ली हो गई। विचार हुआ इस जगह से तुमको ख़ैर मिल सकती है। वैसे सुनते आए हैं संतों की मंडलियां हरिद्वार, ऋषिकेश की

तरफ ज़्यादा आती जाती हैं। उधर जाने का विचार न था। ईश्वर को कुछ और ही मंजूर था। आज दिल कह रहा है इस जगह से तुम पर कृपा होगी।''

होता वही है, जो मंजूरे ख़ुदा होता है।
बिगड़ी बन जाती है, जब फ़ज़्ले ख़ुदा होता है॥

''हर बेकरारी का इलाज आपके पास है। दिल की आवाज़ यहां पर खूब ज़ोर से सुनी जायेगी, ऐसा विश्वास है। मेरी रोज़–रोज़ की बेकरारी का इलाज कृपा करके बतायें, आपकी शरण में इसलिए आना हुआ है।''

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''प्रेमी! आप जैसे बीमार रोगियों की तलाश में फिर रहे हैं। कबीर कहता हैः

सपने में बड़ाये के, जो ले हरि का नाम ।
ताके पग की पाहनी, हमरे तन का चाम ॥

''देखो, अभी इस जगह हैं। सत्संग में आया करो। जिसे उस्ताद, गुरु या रहबर धारणा हो उसे पहले खूब ठोक–बजाकर देख लेना चाहिए क्योंकि अपनी ज़िन्दगी की बागडोर हमेशा के वास्ते उसके हाथ में देनी है। यह भी अच्छी तरह जान लो, यह संत सूली के तख़्ते पर बैठे हैं। क्या इनकी बात पर अच्छी तरह कारबंद रह सकेंगे? अच्छी तरह इसके बारे में दिल में सोच लो। सत्मार्ग पर लगाने के वास्ते ही दर–दर फिर रहे हैं। किसी व्यापार के वास्ते नहीं आए। प्रेमी, तेरा नाम क्या है?''

प्रेमी कहने लगा, ''रामचंद इस आज़िज़ का नाम है।''

इतने में एक और सज्जन आ गए और प्रणाम करके बैठ गए। उससे भी श्री महाराज जी ने पूछाः– ''प्रेमी! किस तरह आना हुआ है?'' कहने लगाः– ''श्री महाराज जी! सुना है महात्मा जी आए हुए हैं। बड़े विद्वान हैं।''

श्री महाराज जी ने पूछाः– ''तुम क्या चाहते हो? कोई विचार हो तो करो?''

कहने लगाः– ''महाराज जी! लोग लेख–संजोग की बात कहकर ख़त्म कर देते हैं कि ऐसा ही होना था, यह है, वह है, जबकि मियां–बीबी की आपस में बनती ही नहीं। पिछले प्रारब्ध कर्म ऐसे ही थे। उनका सम्बन्ध महज़ बच्चे पैदा करने के लिए बनना था?''

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– ''प्रेमी! जाओ तुम्हारी सत् मार्ग पर चलने की रुचि ही नहीं है। ऐसी फ़िज़ूल बातें करने का क्या फ़ायदा? अगर सीधे होकर चलना है तो चलो, अगर फ़िज़ूल बातें करनी हैं, घर बैठकर करो। इधर तो मौत को कबूल करना है तो आओ वरना जाओ दुनिया का काम करो।''

प्रेमी उठकर चला गया! फिर प्रेमी रामचंद को कहा:– ''जाओ, जाकर खाना खा आओ। सत्संग के टाइम से पहले आ जाना।'' प्रेमी रामचंद प्रणाम करके चला गया और जल्दी ही खाना खाकर वापिस आकर बैठ गया। श्री महाराज जी ने उससे पूछा:– तुम्हारे साथ जो प्रेमी था वह कौन था? रामचंद ने अर्ज़ की:– ''वह भी हमारे बैंक में काम करता है। हरबंस लाल उसका नाम है। उसको भी कहा था चलो। वह कहने लगा– अभी साधुओं के पास जाकर क्या लेना है? यहां तो धन की ज़रूरत है।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:– ''धन की कमाई करने से नहीं रोकते, मगर सच्ची कमाई करने को कहते हैं। पराये हक से बचने के लिए कहते हैं। उसको यहां ज़रूर ले आया करो। ऐसे नौजवान अगर इधर लग जावें तो देश का भला हो सकता है। ईश्वर ही इनको सुमति देवें। आजकल के नौजवान नुमायशी जीवन ही बना रहे हैं। पढ़ाई भी ऐसी ही है जिससे लोगों का आचार–विचार, खाना–पीना ही रह गया है। कलयुग का समय है। इस मुल्क का क्या बनना है? राज मिला था, कुछ लोग सुधार की तरफ जायेंगे, मगर सब तरट्टी–चौड़ हो रही है। स्त्रियों को बराबर के हकूक देकर बेहयाई खड़ी कर दी है। पुरातन बुज़ुर्गों का इस देश में कुछ असर था, वह अब जा रहा है। देखो, पढ़ाई क्या रंग लाती है। अंग्रेजों से अच्छी बातें सीखी नहीं, जो उनमें खराब बातें नुमाईश व ज़ेबायश (सजना–संवरना) की थीं वह धारण कर ली हैं। ईश्वर ही कृपा करें तो इसका सुधार हो सकता है।''

सत्संग का समय हो गया। पूरे आठ बजे सत्संग शुरू किया गया। महामंत्र व मंगलाचरण के बाद 'समता सार योग' से शब्द पढ़े गए। जब शब्द समाप्त हुए तो प्रेमी अमीर चंद, जो सामने बैठे हुए थे, कहने लगे– आज मुझे खूब आनन्द आया है। रोज़–रोज़ मरने का झगड़ा सुनाते रहे हो। संसार नाशवान है, मिथ्या है, यह ही पढ़ते रहे हो। ऊंची बात भी समझानी चाहिए। श्री महाराज जी मुस्कराये और फरमाया:– ''प्रेमी! जैसी जनता हो वैसी उनके वास्ते ज़रूरत होती है और वैसा ही बयान किया जाता है। शब्द के सार तत्त्व को शायद ही किसी ने समझा हो।''

47. सत् उपदेश–अमृत

प्रेमी जी, शरीर रूपी मन्दिर जिस कारीगर ने बनाया उसे जानने के लिए ईश्वर ने मनुष्य को साथ ही विवेक बुद्धि बख़्श रखी है, जिससे सार को समझ सकता है। अगर गुरु धारण कर भी लिया जावे और अपनी बुद्धि को इस्तेमाल न करे तब भी तत्त्व ज्ञान के मार्ग पर सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। रब्ब यानि ईश्वर को सीढ़ियां न लगाओ। प्रभु के प्यारों की नज़दीकी हासिल करो। गुरुओं, ऋषियों, मुनियों ने ग्रन्थों में बहुत कुछ कह रखा है, मगर वेद किसी गुरु उस्ताद की शरण लेकर ही समझ आ सकता है। उनके पास जाकर नम्रतापूर्वक दंडवत प्रणाम करके अपने मन के संशय रखो। जब वह देखेंगे वाकई जिज्ञासु है और धर्म मार्ग का शौक रखता है, तो वह समझा

देंगे। संसार के मामूली से काम को सीखने के लिए भी किसी गुरु, रहबर को ढूंढना पड़ता है। तत्त्व ज्ञान के लिए, जिससे शरीर, आत्मा व परमात्मा के भेद को समझा जाता है, परम तपस्वी, त्यागी, अनुरागी, महान आत्मा के पास जावेगा, तब ही श्रद्धा, सत् विश्वास से शिक्षा लेकर चला जा सकता है। प्राप्त करना है निर्वाण अवस्था को मगर सांसारिक सुखों की तरफ दौड़ता है, दो काम मुश्किल से हो सकते हैं। संसार और शरीर को अच्छी तरह समझो और फिर आत्मा व परमात्मा को जानने का यत्न करो। सत्–पुरुषार्थ है क्या? अपने आपको जानो, जिस तरह पुरातन काल में कई गुणियों ने गुरमुखता हासिल की। उधर इलाका जेहलम से पार मीरपुर की एक मिसाल मशहूर है। उस इलाके की तरफ जाने वाले पैदल ही जाया करते थे। पीर शाह गाज़ी एक फ़कीर उस तरफ हुए हैं। पीर साहेब और उनका एक चेला एक दिन कहीं जा रहे थे। रास्ते में नदी पड़ती थी। बरसात के दिन थे। नदी खूब चढ़ी हुई थी। मुर्शिद करनी वाले थे, नदी को पानी पर चलकर पार करने लगे। मुरीद ने कहा, 'पीरा, पीरा करता पीछे चला आ। मुरीद पीरा–पीरा करता पीछे चल पड़ा। जब थोड़ी दूर गया था ख़्याल आया पीर तो आख़िर इंसान है, क्यों न अल्लाह का नाम लूँ? जब अल्लाह का नाम लेने लगा तो डूबने लगा। पीर पार पहुंच चुका था। हालत को देखकर आवाज़ दी– ''बेवकूफ कहीं का, पहले पीर तक तो पहुंच ले फिर अल्लाह तक पहुंचना।'' दूसरे लफ्ज़ों में पहले फ़नाफ़िल शेख़ होना होगा तब फ़नाफ़िल अल्लाह हो सकोगे, यानि पहले गुरु को समर्पण अपने आपको करोगे तब ईश्वर समर्पण कर सकोगे।

डोले मन को राखया, दे के नाम आधार।

गुरु की महानता को बड़े विश्वासी होकर ही समझा जा सकता है। धनी जीव के अन्दर इतना विश्वास नहीं हो सकता। मुसलमान कौम के अन्दर यकीन की पुख़्तगी बहुत है। जब–तक किसी के अन्दर अच्छा गुण नहीं होता वह तरक्की नहीं कर सकता। कुछ ज़माने के चक्कर ने बड़ा पाट पैदा कर दिया है। ईश्वर ही कृपा करें। दिल्ली के पास महरौली में काकी–बख़्तियार फ़कीर हुए हैं। उनका मुरीद फ़रीद हुआ है। इसी तरह पीर ने मुरीद को विरद करने के वास्ते कोठरी में बन्द कर दिया और कहा कि विरद करते रहो। फरीद को भूख सताने लगी। दूसरे चौथे रोज़ बहुत तंग होकर खूब तिलमिलाया। उस वक्त सिवाए मिट्टी के वहां खाने के लिए कुछ नहीं था। दो तीन फक्के मिट्टी के लगाए। उस वक्त सबर की हद हो चुकी थी। जब उसने ऐसा किया, पीर साहब बाहर बैठे थे। खूब कहकहा मार कर हँस पड़े। उसे बाहर निकाला और फरमाया:– "आज से तेरा नाम शेख़ फ़रीद शकरगंज हुआ।" जब उसने मिट्टी की मुट्ठी खाई थी तब शक्कर की तरह मीठी लगी थी। यह सुनकर मिट्टी की शक्कर बनी देखकर वह बहुत परेशान हुआ और पीर पर विश्वास बहुत बढ़ गया।

असली गुरु, शिष्य की अच्छी तरह परीक्षा करके छोड़ते हैं। पहले अच्छी तरह पक्का करके फिर मेहर किया करते हैं। शिष्य का फ़र्ज़ हो जाता है जब गुरु धारण कर लिया फिर उसकी हर

किस्म की छोटी–मोटी सेवा करना। सेवा से ही मन निर्मल होकर अंतरविखे एकाग्र हो सकता है। फरीद की रोज़ाना ड्यूटी थी कि हर सुबह उठकर पीर के नहाने के वास्ते पानी गरम करके तैयार रखना। एक रोज़ आग बुझ गई। उस जमाने में दियासलाई की डिबिया नहीं हुआ करती थी। हर कोई घरों में आग दबाकर रख छोड़ा करते थे। उस दिन फरीद को ख़्याल नहीं रहा। आग न रही तो फरीद वहां से कुछ दूर फासले पर एक औरत रहती थी उसके पास आग लेने गया। जाकर अर्ज़ की। वह औरत भी पहुंची हुई थी। उसने सोचा काकी–बख्तियार का मुरीद है, उसको ज़रा देखा जाए। उसने कहा:– आग तो इस शर्त पर ले जा सकता है कि या तो मेरे साथ भोग कर या अपनी एक आंख निकाल कर दे जा और आग ले जा। उसने झट अपनी आंख निकाल कर दे दी। एक तरफ विषय–भोग का सुख और दूसरी तरफ शारीरिक दु:ख। सुख का परित्याग करके मुर्शिद की ख़ातिर प्रेम त्याग दिखाया। आंख निकाल कर दे दी और खूब कसकर पट्टी बांध ली और आग लेकर चल दिया। आकर आग जलाकर पानी गर्म करके समय से पहले ही रख दिया।

मुर्शिद जब नहा चुके तो पूछा:– "आंख क्यों बांध रखी है?" भेद छुपाने के लिए अर्ज़ की:– "आ गई है।" मुर्शिद ने फिर फरमाया:– "खोल पट्टी, जा सवाई आई है।" जब फरीद ने पट्टी खोलकर देखा वाकई आंख को कुछ अच्छी हालत में पाया, बल्कि आंख कुछ बड़ी हो रही थी। गुरु करनी वाला हो, शिष्य करने वाला हो, क्यों न रंग लगे? आज क्या हाल है? गुरु अपने दाओ में चल रहे हैं, शिष्य अपने रंग में चल रहे हैं।

''अन्नी अन्ना ठेलिया, दोए खुए विच।''

न ऊंची कमाई वाले गुरु दिखाई दे रहे हैं न प्रेमी। हां, बीज नाश नहीं हुआ करता। सच्चे दिल से जो गुरु, शिष्य की भलाई चाहने वाले हों, उनको वैसे ही सेवादार भी मिल जाया करते हैं।

बुल्लेशाह के मुर्शिद इनायत–उल्लाह थे। बुल्लेशाह ने जाकर अर्ज़ की:– मुझे भी किसी रास्ते पर लगाया जावे। उस समय वह सब्जी का पौधा लगा रहे थे। उन्होंने फरमाया:– "रब्ब दा की पावना, इधरों पुटना, उधरों लावना।" समय पर उसे रास्ता बतला कर विदा किया। बुल्लेशाह ने जाकर कुछ अर्सा मेहनत की। लोगों को दुआएं, वर देने लगे। किसी को औलाद दे दी और किसी को दौलत। बड़ी शोहरत फैल गई। लोग कहने लगे:– 'बड़ा कमाई वाला फ़कीर है।'

किसी ने मुर्शिद के पास जाकर शिकायत कर दी कि बुल्लेशाह तो बड़ा पीर बन गया है, बड़ी उसकी मान्यता हो रही है। आपको भी सौ बातें सुना रहा है। मुर्शिद सुनकर खामोश हो रहे। इतफ़ाकन एक रोज़ उसके पास जा निकले। बुल्ले ने दूर से मुर्शिद को देखकर कोई परवाह न की, लापरवाह रहा। पीर नज़दीक आ गया, वह उठा तक नहीं। बल्कि वहां बैठे–बैठे मुर्शिद के साथ हाथ मिलाने के लिए बढ़ा दिया। पीर ने हाथ मिलाकर सारी शक्ति खींच ली। फ़कीर में बे–अन्दाज़ शक्ति होती है। कृपा कर सकते हैं, उन्हें वापिस लेने की भी शक्ति होती है। हाथ हटाकर चल दिये। उधर बुल्ले के अन्दर अन्धेरा छा गया। कमी खुद महसूस करने लगा। एकदम दौड़कर मुर्शिद

के कदमों में गिर कर माफ़ी मांगने लगा, मगर पीर वापिस चले गए। बुल्ले ने जान लिया कि पीर नाराज़ हो गए हैं। अब सोचने लगा किस तरह इन्हें राज़ी किया जावे। पीर के पास कंजरियां मुजरा करने जाया करती थीं, उनके पास चला गया। भेष बदल लिया। वहां जाकर गाना बजाना सीखा। उसने बारह साल सीखने में लगाये। जब मुजरा करने का मौका आया तो वह भी कंजरियों के कपड़े पहनकर साथ चला गया और जाकर उसके सामने नाचना-गाना शुरू कर दिया। जब वह नाच और गा रहा था, और कंजरियों के कपड़े पहने हुए थे तो गुरु ने पहचान लिया और पूछा:- "ओ, बुल्ला हैं?" फ़ौरन पांव में गिर गया और अर्ज़ की:- "नहीं, हज़ूर भुल्ला हूँ।" पीर ने उठाकर गले से लगा लिया और कृपा कर दी, शक्ति दे दी। गुरु मेहरबान भी बहुत होते हैं, मगर कहर भी करते देर नहीं लगाते।

कबीर गुरु के रूठे, कोऊ न होत सहाये।
हरि रूठे गुरु शरण है, गुरु रूठे कहां जाये॥

विचार यह है कि अगर परमार्थ-पथ पर चलना है तो जिज्ञासु को अच्छे उस्ताद की शरण में जाना पड़ेगा। शिक्षा ग्रहण करके पूरे विश्वास, पूरे प्रेम और पूरी कोशिश से जब गुरु वचन में आरूढ़ हो जाएगा तब किसी समय आत्म-अनुभवता की अवस्था का बोध कर लेगा। ख़ाली उनके शब्द पढ़ लेने से कुछ पल्ले नहीं पड़ता। जिन्होंने कुछ हासिल किया है, मरकर जीवन में जीवन को पाया है। बलिहारी उन्हाँ कुर्बानी वाले पुरुषां तों जिन्होंने सर्व सांसारिक सुखों को लात मारकर एक आत्म-चिन्तन में लग कर केवल उस परम-तत्त्व के आधारी हो गए। ईश्वर कृपा करें।

सत साहब से प्रीत कर, दूजा नेहों त्याग।
'मंगत' भरमन त्याग के, सत शबद में लाग॥
मिथ्या भरम जब नास्या, भया शबद परगास।
'मंगत' अंतर ध्यान से, पाया पद निर्वास॥

समता विज्ञान योग से दोहे पढ़े गए। समाप्ति पर आरती और समता मंगल सबने मिलकर उच्चारण किए और प्रशाद बांटा गया। सत्संग समाप्त हुआ।

इसके पश्चात् सत्पुरुष ने पूछा:- "कोई विचार हो तो करो।" एक प्रेमी ने पूछा:-

प्रश्न - महाराज जी, समाधि अवस्था में शरीर की क्या अवस्था या हालत होती है?

उत्तर - समाधि अवस्था में शरीर की कोई सुध नहीं होती।

प्रश्न - क्या स्वांस का आना-जाना जारी रहता है?

उत्तर - स्वांस जारी तो रहता है लेकिन निहायत सूक्ष्म गति में।

फिर महाराज जी ने सबको जाने कि आज्ञा दी और फरमाया:- "जाओ, आराम करो।" काफी प्रेमी चले गए, कुछ रह गए। प्रेमी अमीरचंद जी कहने लगे:- "महाराज जी! आज के शब्दों

में आपने असली अवस्था का बयान फरमाया है। मगर उसका खुली तरह मतलब नहीं समझाया गया। सारे विचार को दूसरी तरफ खींच कर ले गए हैं।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी जी! संगत में ऐसे शब्द पढ़ने की आज्ञा ही नहीं है। तुझे खुश करने के वास्ते प्रेमी ने पढ़ दिये थे। बता, इस जगह कौन ऐसा समझदार बैठा हुआ है जिसके आगे अन्तर का हाल रखा जाये। कल्ले दे इशारे कल्ले दी मां ही बुझदी है। सुना, तेरे पल्ले कुछ पया है या नहीं?"

अमीर चंद ने प्रणाम करके अर्ज़ की:– महाराज जी! हम ज़बानी बातें करके ऐसी स्थिति को जानना चाहते हैं। आपने उसे अमली जीवन में उतारा हुआ है।" आख़िर प्रणाम करके विदा हुए।

सब संगत चली गई। कुछ प्रेमी जाकर वापिस आ गए। श्री मुरलीधर जी, प्रेमी करोड़ीमल जी, किशोरी लाल जी, बंसी लाल जी, कुन्दन लाल जी, दयाल चंद जी, मोहर सिंह जी, चेतराम जी वापिस आए और आकर चरणों में बैठ गए। कागज़, जिस पर प्रेमियों के नाम और सेवा जो उनके जिम्मे लगी हुई थी, उनके सामने भक्त जी ने रख दिया और फिर पढ़कर सुना दिया।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– बहुत सा बोझ तो प्रेमी कुन्दन लाल व चिरंजी ने ले लिया है, बाकी प्रेमी जो न दे सकें या जितना दे सकें बतला देवें।

सब प्रेमियों ने अर्ज़ की:– महाराज जी! आप सबके घट-घट की जानने वाले हैं कि कौन कितने पानी में है? कितनी सेवा कर सकता है? इतनी ही नाप कर लिखी हुई है। आपकी दया दृष्टि से सब हो जावेगा, किसी को कोई एतराज नहीं है।

सतपुरुष सेवा के लिए नहीं फरमाया करते थे। हालांकि प्रेमी आपकी सेवा में प्रार्थना किया करते थे। कहते थे– प्रेमियों, अभी कोई सेवा नहीं, जब कोई ज़रूरत हुई तो बतला दिया जावेगा। जब मौका होता तो बतला दिया करते थे। किसी को कोई एतराज नहीं होता था।

सत्पुरुष की आज्ञा से जब सबने मान लिया तो फरमाया:– "प्रभु सफलता देवें।" और सब प्रेमी उठकर चले गए।

दूसरे दिन रामचंद जी एक और प्रेमी को साथ लिए हुए शाम को चरणों में हाज़िर हुए और प्रणाम किया। रात को सत्संग में वह दो तीन दिन से शामिल हो रहे थे। प्रणाम करके बैठे ही थे कि श्री महाराज जी ने दूसरे प्रेमी, जिसे वह साथ लाए थे, से पूछा:– "प्रेमी, तुम्हारा नाम क्या है?" उसने बतलाया: हरबंस लाल नाम है। फिर श्री महाराज जी ने कहा:– "प्रेमियों! कुछ विचार करो।" प्रेमी हरबंस लाल ने पूछा:

प्रश्न – रूहानियत की तरफ चलने के लिए कौन सी आदत का होना लाज़मी है? वह कौन से भाव हैं जिनको ग्रहण करना आवश्यक है और जिनसे इस धर्म के मार्ग में मदद मिलती है?

उत्तर – प्रेमी, सदाचारी जीवन, जिसमें सादगी, सेवा, सत्य, सत्संग और सत् सिमरण शामिल हैं, होना लाज़मी है। सत् सिमरण का साधन किसी कामिल उस्ताद से, जिसे गुरु कहते हैं, मिलता है।

प्रेमी हरबंस लाल ने अर्ज़ की:– महाराज जी! पहले तीन नियमों में दृढ़ता नहीं है। पहले इनको अपना लिया जाए तो फिर गुरु की तलाश का सवाल आएगा। अभी तो इन पर अमल नहीं हो रहा। अगर उन पर चल पाए तो फिर आगे चलने के साधन की ज़रूरत होगी।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! इनकी बुनियाद तो सत् सिमरण है। अगर बुनियाद ही न होगी तो मकान किस पर खड़ा करोगे। इसलिए अभी से किसी गुरु की तलाश करनी पड़ेगी, फिर तुम्हें तो मालूम ही नहीं कि सत्गुरु की पहचान क्या है? जब पहचान का ही पता नहीं तो चाहे वह तुम्हारे नज़दीक ही क्यों न बैठे हों तुम्हें पता ही कैसे लग सकता है कि वह सतगुरु हैं"?

प्रेमी हरबंस लाल ने अर्ज़ की:– महाराज जी! यह तो आप ही कृपा करके बतायें कि सत्गुरु की पहचान क्या है?

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी, इधर सत्संग में आया करो। आहिस्ता–आहिस्ता सब बातों का पता लग जावेगा। अभी क्या पता तुम्हारा मन तुम्हें इस तरफ चलने भी देता है या नहीं? दुनिया इस वक्त रुपये–पैसे की दौड़–धूप में बहुत लगी हुई है। अभी तो इस तरफ से फुर्सत मिलनी मुश्किल है। यह तो एक ख़ुश्क मज़मून है। इसे कोई पसन्द नहीं करता। जाओ, फिर किसी वक्त आना, अब सत्संग का समय होने वाला है।"

रात के सत्संग के बाद प्रेमी अमीर चंद ने सत्पुरुष के फरमाने के बाद कि कोई विचार हो तो करो अर्ज़ की:– "महाराज जी! आख़िरी दोहा पढ़ा गया, उसमें दिया हुआ है 'बाज़ी झूठ बाज़ीगर साचा।' यह कैसे मुमकिन है। सच्चाई में झूठ कैसे पैदा हो गया?"

श्री महाराज जी फरमाने लगे, "प्रेमी अमीरचंद! सवाल–जवाब बहुत हो चुके हैं। कुछ करनी वाली गल कर। पानी बिलोवन नाल मक्खन कोई नहीं निकलया करदा। जे कुछ करेगा तां गल बनेगी। अग्गे वी कई साल गुज़र गए हन। भावें सारी उमर लगया रहे, बग़ैर अमल नबेड़ा कोई नहीं होना।"

इसके बाद कुछ देर बैठकर प्रेमी चले गए।

एक दिन प्रेमी रामचंद व हरबंस लाल ने आकर प्रार्थना की:– "महाराज जी! हम पर कृपा करें।" श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! इनके पास क्या रखा है? यह तो फ़क़ीर हैं! इनमें तुमने क्या देखा है?" दोनों प्रेमी खामोश हो गए। दोनों को खामोश देखकर आपने पूछा:– "प्रेमियों! क्या पाठ सिमरण करते हो?" प्रेमी हरबंस लाल ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! कुछ नहीं करते। आप कृपा करेंगे तो शायद कुछ बन जाए।" प्रेमी रामचंद कहने लगा:– "एक शब्द का सिमरण मुझे मेरे एक रिश्तेदार से मिला है। गुरु रूप में नहीं, वैसे प्रेम करके उसने बता दिया था। करने लग गया, फिर उस तरीका सिमरण से गर्मी–खुश्की हो जाती है, फिर छोड़ देता हूं, फिर कुछ वक्त छोड़कर फिर करने लग जाता हूं। फिर जब वह आरज़ा होने लगता है, फिर छोड़ना पड़ जाता है। इसलिए पूरा यकीन नहीं बैठता कि ठीक कर रहा हूं या ग़लत। मगर कुछ आनन्द और शान्ति ज़रूर महसूस होती है। इस दुबिधा में फंसा हुआ समझ नहीं पाता क्या करूं।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "किसी हठ योग की क्रिया में लगे हुए हो।" "प्रेमियों, अभी इसी जगह हैं, समय आपको बता दिया जावेगा। इन्हें तुम जैसे नौजवानों की ज़रूरत है, कोई इस मार्ग पर चलने वाला निकले। यह ख़्याल रखना, नावल वग़ैरा पढ़ना बंद करना पड़ेगा। ताश-चौपड़, जुआ, शतरंज, मुनश्यात, तम्बाकू वग़ैरा, सिनेमा, थियेटर वग़ैरा से परहेज़ रखना होगा। सत्मार्ग पर चलने वालों के लिए इनसे परहेज़ लाज़मी है।" चार-पांच दिन के बाद प्रेमियों को वक्त दिया गया और सत्मार्ग पर दीक्षित कर दिया गया।

जब इन प्रेमियों को पता लगा कि आश्रम के लिए प्रेमी सेवा कर रहे हैं तो उन्होंने भी श्री महाराज जी के चरणों में नमस्कार करके अर्ज़ की:– "हमें भी सेवा का सौभाग्य बख़्शा जावे।"

श्री महाराज जी ने पूछा:– "तुमको किसने कहा है? यह तुम ही सेवा कर रहे हो। नए प्रेमी होने के नाते तुम्हें सेवा करने को नहीं कहा जा सकता।"

मगर एक रुपया हर प्रेमी ने निकाल कर चरणों में रख दिया और अर्ज़ की:– "इस तुच्छ भेंट को ज़रूर स्वीकार फरमावें, आप जानी जान हैं। ज़्यादा सेवा नहीं कर सकते। कृपा दृष्टि करें।" नमस्कार करके चले गए। भक्त जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! मैंने नहीं बतलाया। जिस दिन, रात को प्रेमी सत्संग के बाद ठहर गए थे दूसरे दिन सुबह इनको भी पता लग गया था।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "विचारे बैंक में मुलाज़िम हैं। गुज़रान के वास्ते माहवार तंख़्वाह मिलती है। जो गुज़रान के वास्ते काफी होती होगी। व्यापारी लोग सरमाया बना रखते हैं।"

दिन के ग्यारह बजे थे कि प्रेमी किशोरी लाल और बंसीलाल की पत्नियां आ गईं। इनके नाम विद्या व रुकमनी थे। उन्होंने अपने पतियों के साथ शब्द ग्रहण किया हुआ था। सत्पुरुष स्त्रियों को नज़दीक नहीं आने दिया करते थे। यह दोनों कुछ फासले पर दरवाज़े के पास प्रणाम करके बैठ गईं। आपने पूछा, "देवियो! किस तरह आना हुआ है? कोई विचार हो तो पूछ सकती हो।" देवी विद्या ने अर्ज़ की:– महाराज जी! सेवा का हक क्या पुरुषों को ही है? उनकी सेवा, सत् सिमरण से क्या हम भी तर जावेंगी या जो भी सेवा या अभ्यास खुद करेगा वह तर सकेगा? बेशक स्त्री का मालिक उसका पति है। वह कमाई करता है और दोनों मिल कर जीवन क्रिया चलाते हैं। मगर जब कोई समय सेवा, दान-पुण्य का आवे, मर्द आगे हो जाता है, उसी को मान्यता दी जाती है। यह नहीं कि हम मर्दों के खिलाफ़ हैं, वे हमारे मालिक हैं। उनकी आज्ञा माननी हमारा फ़र्ज़ है, मगर सेवा में आपने भेद-भाव किया है, ऐसा क्यों? आपके चरणों में जिस-जिस ने जगह पाई है, सब आपके सेवक हैं।

श्री महाराज जी आंखें बंद करके सुनते रहे। जब वह चुप हुई तब आपने फरमाया:– "देवी, तुमने जो कुछ कहा है, किसी हद तक ठीक है। धर्म-नीति के अनुसार स्त्री, पुरुष का बांया अंग है। दोनों मिलकर सेवा करें तब ही ठीक होता है। अलग-अलग आज्ञा लेकर सत्-सेवा, सत्संग वग़ैरा करें तो कर सकते हैं। मगर आजकल सत्संग जो अलग-अलग किये जा रहे हैं। उसका नतीजा यह

निकल रहा है कि स्त्री का मत और है पुरुष का और। इनसे घरों में दुबिधा पड़ रही है। स्त्रियां सिर्फ सिमरण अभ्यास ही अलग-अलग नहीं करतीं, बल्कि घरवालों से चोरी-चोरी गुप्त सेवा भी करने लग गई हैं। इसके यह खिलाफ़ हैं। जब और घरेलू मामलात में आपस में मिलकर विचार होता है और सब काम होते हैं, तो फिर सेवा करते वक्त छुपा कर करना ग़लत है। कमाई तो मर्द की है, मर्द की रज़ामंदी लेकर जैसी उसकी मर्ज़ी हो सेवा कर सकती हो। मर्द को भी स्त्री की रज़ामंदी लेनी उतनी ही लाज़मी है जितनी कि स्त्री को है। स्त्री बहुत बातों में आधीन है। मर्द हर अच्छे काम में खर्च करने के लिए बाइख़्तियार है। वह नाजायज़ भी कर जाए तो स्त्री कुछ नहीं बिगाड़ सकती। मगर उस समय स्त्री का भी हक हो जाता है कि ग़लत कामों से उसे रोके। मर्द घर का मुखी जो हुआ। कोई-कोई स्त्री विचारवान भी होती है जो मर्द को हमेशा अच्छी सलाह ही देती है और दोनों हमख़्याल हो जाते हैं। जिस घर में विचारवान स्त्री हो वह घर स्वर्ग बन जाता है। अब तुम बताओ दोष वाली बात क्या की गई है? इनमें तुमने क्या देखा है?"

बहन विद्या ने हाथ जोड़कर अर्ज़ की:- महाराज जी! आपने आश्रम की ज़मीन के वास्ते उनकी सेवा स्वीकार कर ली है। दासियां भी इन्हीं की आज्ञा से कुछ सेवा, जो कुछ है, भेंट करने के लिए आई हैं। कृपा करके स्वीकार करें। एक ने कागज में लिपटे हुए कुछ नोट आगे लाकर रख दिये। नमस्कार करके वापिस अपनी जगह पर बैठ गई।

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "यह अलग सेवा नहीं ले सकते। तुमने यह रकम कैसे जमाकर रखी है? इसे अपने काम में लाओ।"

बहन विद्या ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! इससे बड़ा काम अभी और कोई सामने नहीं। आपकी कृपा से काम होते रहेंगे।" मगर श्री महाराज जी नहीं माने और रकम उनको वापिस कर दी गई और फरमाया:- "जब मर्द खुद साथ आकर कहेंगे तो देखा जावेगा।"

फिर दोनों प्रणाम करके चली गई। दो रोज़ बाद अपने मर्दों को साथ लेकर आ गईं और भेंट चरणों में रखी। इस पर आपने फरमाया:- "स्त्रियों में बड़ा ही हठ होता है। जिस धारा को पकड़ कर हठ करके चली जायें उसे पूरा करके छोड़ती हैं। मगर इनका डर ही रहता है कि कोई और स्वांग न बना लें। आनन्दपुर की तरह माइयों की नकल न बना लें, उपदेश देने न शुरू कर दें।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "यह आनन्दपुर की तरह स्वांग नहीं चाहते। बेशक प्रेमी, अपनी-अपनी जगह कमाई और सत्संग करें, मगर 'आप तरे औरां नूं तारे' वाला मसला किसी समय अभिमानी बना देता है। फिर वह न संसार के रहते हैं न करतार के। हिन्दुओं में आगे ही अलग-अलग टोलियां बन चुकी हैं जो कि दुबिधा का कारण हो रही हैं। किसी पन्थ मत का दूसरी संगत से प्रेम सम्बन्ध नहीं रहा। अपना-अपना राग सब अलाप रहे हैं। समता की तालीम भी एक अलग टोली बन गई तो सब तरट्टी-चौड़ हो जायेगी। संसार में एकता की बड़ी ज़रूरत है। वह तब ही हो सकती है जब ख़्यालात, विचार की एकता हो जाए। सबकी तरफ से एक जैसा यत्न हो, एक आवाज़ पर सब एकत्र हो जाने वाले हों और वह सब हर एक जीव मात्र के रक्षक हों। आज ईश्वर

भक्ति भी लाखों किस्म की बन चुकी है। ज़रा मोहम्मद की तालीम की तरफ देखो। उसकी नीति मिलने-जुलने, उठने-बैठने की दूर-दूर तक एक जैसी काम कर रही है। ईश्वर विश्वास और ख़िदमत से दूसरी कौमों से न सही, आपस में मुसलमान कौम में कैसी उनकी सहायक हो रही है। हिन्दू-मत में अनेक तरह के ख़्याल के लोग हैं, इनमें एकता होनी मुश्किल है। अनेक ख़्याल करके गुरुडम भी बहुत किस्म का फैल गया है। सौ झगड़े मौज़ूद हैं। यह सांझी तालीम ज़रूर है, इससे किसी के अन्दर नफ़रत पैदा नहीं हो सकती, फिर भी इसके वास्ते बहुत सोचना पड़ेगा। ऐसी नीति बने जिससे प्रेम से मिलकर रहना सीखें, खुदगर्ज़ी ख़त्म हो, एक दूसरे का हित, दर्द पहचाने। देश, कौम पर मर मिटने वाले हों। बड़ी भारी कुर्बानी वालों की ज़रूरत है। कौन जाने कल क्या होने वाला है? देश के भाग्य जब जागते हैं तो ऐसे समझदार लोग भी प्रगट हो जाते हैं। यह जो विदेशी नक्शे-कदम पर चलने की कोशिश हो रही है, शायद सूत्र न बैठे। इनको किसी समय अपना विधान बदलना पड़ेगा। ज़बान का मसला एक जैसा सारे देश में होना चाहिए, गो घरेलू, कस्बाई, इलाकाई ज़बानें अपनी-अपनी जगह बोलते रहें। अच्छा जैसी ईश्वर आज्ञा। होनी बड़ी बलवान है। समय का प्रभाव भी बुद्धियों को कुन्द कर देता है।" इसके बाद आप बाहर चले गए।

इस समय प्रेमी अमीरचंद जी आ गए और पूछा-कि महाराज जी कहां हैं? बताया गया बैठिये, अभी आ जाते हैं। इतने में श्री महाराज जी आ गए और हाथ धोकर बैठ गए। प्रेमी अमीरचंद उठ खड़े हुए और प्रणाम करके फिर बैठ गए। श्री महाराज जी ने पूछा:- "प्रेमी! कुछ विचार करो।"

श्री अमीरचंद जी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! इस दफ़ा जगाधरी जाकर बड़ा आनन्द आया है। मगर इतने प्रोग्राम के लिए जगह खुली होनी चाहिए। दो-चार रोज़ से ऐसा विचार चित्त में चल रहा था। ख़्याल आया अर्ज़ की जावे, मगर फिर ख़्याल आता कि शायद आप फरमायें, तुझे क्या तकलीफ़ हो रही है?"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "प्रेमी सोच रहे हैं, शायद इसी वर्ष जगह बढ़ाने का इंतज़ाम हो जावे। प्रेरणा शक्ति ने तेरे अन्दर भी ऐसा ख़्याल पैदा कर दिया है और ऐसा ही संगत भी विचार कर रही है।"

प्रेमी अमीरचंद जी कहने लगे:- "महाराज जी! दास को संगत के बाहर समझा हुआ है? मैंने तो आपको गुरु समान नहीं बल्कि इससे भी बढ़कर समझा हुआ है। आपके वचनों की तरफ अच्छी तरह ध्यान बना रहता है।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "प्रेमी! इनके अन्दर दुई का भाव आ ही नहीं सकता। जो भी उस मेरे मालिक की आराधना करने वाला है उसके यह ख़ुद सेवादार हैं। बताओ, तुमने जगाधरी आश्रम में क्या देखा है?"

प्रेमी कहने लगा:- "महाराज जी! एक तो लंगर का आला इंतज़ाम था। सबके वास्ते एक जैसा भोजन था। ख़ास प्रेमी या आला प्रेमी का वहां कोई ख़्याल नहीं था। न ही किसी ख़ास के

वास्ते अलैहदा जगह पर इंतज़ाम हुआ, सबने ही ज़मीन पर बैठकर प्रशाद खाया। सत्संग का भी प्रोग्राम अच्छा था और ठहरने का भी खूब था। वह एक प्रेमी चुस्त मूंछों वाले पक्की उम्र के कौन थे जो सेवा में काफी हिस्सा ले रहे थे? आपसे भी सलाह मशवरा करते देखे गए थे। श्री महाराज जी, वैसे तो अच्छे मालूम होते थे, इतबारी प्रेमी होंगे।"

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– "प्रेमी जी! सब ही सेवादार प्रेमी हैं। कोई बड़ा छोटा नहीं। उसकी सेवा बहुत है, इस वास्ते नज़दीकी में रहते हैं। सब आश्रम, बाबू अमोलक राम की जिम्मेवारी पर खड़े हुए हैं। घर से भी अच्छे हैं। काफी अर्सा से इस मार्ग पर चल रहे हैं। जेहलम के पास चार मील के फासले पर काला–गुजरां नामक एक कस्बा था, वहां के रहने वाले हैं, ब्राह्मण हैं। अच्छी तरह इनके इम्तिहान से गुज़रे हुए हैं। पहले भी बहुत सेवा की है और आश्रम बनवाने की भी सेवा इस जगह उसने ही की है और गंगोठियां में भी बड़ी मेहनत करके हाल खड़ा किया था। हिसाब का बड़ा पक्का है। 1947 में जब उजाड़ हुआ था, यह सितम्बर आख़िर में घर से निकले थे। गवर्नमैन्ट ने अच्छी तरह हिफ़ाजत से इनको अमृतसर पहुंचाया। सीधा धर्मशाला चले गए। वहां से होकर काहनूवान आना हुआ था। दर्शनों के वास्ते आया है। कुछ दिन वहां गुज़रने के बाद बाबू से पूछा गया अब तुम्हारा क्या विचार है? किस रास्ते पर चलना है, यानि संसार को फिर से अपनाना है या पहले जैसा ही प्रोग्राम है, क्योंकि उधर से कोई चीज़ लेकर तो आए नहीं हो। झट ही बोलाः– "जिस तरफ कदम उठ चुका है अब यह पीछे नहीं हटेगा। घर वाले जानें उनका काम जाने। अभी उनके पास अपने लिए बहुत कुछ है। अपनी पेंशन भी लगी हुई है। इन हालात में घर वालों का भी इम्तिहान हो गया है। ठोकर लगने पर पता लग जाता है।" कुछ अपने हालात बनारसी से कहता रहता है। पैसे ख़त्म हो चुके थे। पेंशन अभी मिलनी शुरू नहीं हुई थी। पता नहीं कब कागज़ात आते हैं। कई बातों से उसका चित्त भी उदास था। इनसे पूछे बग़ैर ही बनारसी ने उसे एक सौ रुपया दे दिया। बाद में पता लगा वह लेता नहीं था। बनारसी के ज़ोर देने पर उसने समझा शायद महाराज जी ने यह भक्त जी को कह रखा हो, इसलिए यह ज़ोर दे रहा है। इसलिए ले लिया और चला गया। जब उसे छोड़कर बनारसी वापस आया, उसने सारी बात सुनाई, इस तरह करके दिया है। उस पर बहुत नाराज़ हुए। उसे भी धर्मशाला में पत्रिका द्वारा झाड़ डाली गई कि गुरु दरबार में आकर तुमने लेन–देन किया है। जवाब आया कि भक्त जी के ज़ोर देने पर ऐसा किया गया है। ऐसा समझा था कि आपने आज्ञा दे रखी है। बनारसी को फिर झाड़ दी गई। उसने कहा कि आपसे कोई बात छुपाकर नहीं रखी गई, वापिस आकर अर्ज़ कर दी थी। प्रेमी, अभी यह सिर पर बैठे हुए हैं, किसी की जुर्रत नहीं हो सकी कुछ इधर–उधर कर सके। अच्छी तरह ठोक बजाकर प्रेमियों को नज़दीक बैठने की इजाज़त देते हैं। उसने वह सौ रुपया भी वापिस दे दिया था। तुम्हें क्या शक हो गया है? हां ऐसी जगहों पर ऐसे करने वाले भी हो जाते हैं। गुरु दरबार से लंगर में जो प्रशाद बनता है उसे ही ग्रहण करता है। समय पर सेवा धन की भी बराबर उसकी चल रही है। वाणी की छपवाई करीबन सारी पहले उसने करवाई थी। कुर्बानी वाला प्रेमी है। फिलहाल प्रेमी जी बड़ी कुर्बानी वाले

प्रेमियों की ज़रूरत है। घर में सर्व सुख मौजूद हैं। करीबन सबको तिलांजली देकर वाहिद अपने जीवन को समर्पण कर रखा है। नादान नहीं है।"

प्रेमी अमीरचंद ने कहा:– "महाराज जी! आपने तो सारी कहानी सुना दी। मैंने तो स्वाभाविक ही अर्ज़ की थी। ऐसे ही सेवादार हों तो मिलकर खुशी होती है। मेल मिल ही जाते हैं।" फिर उसने अर्ज़ की:– महाराज जी! आप विचार करते समय 'ईश्वर आज्ञा' लफ्ज़ बहुत इस्तेमाल करते हैं। हैं तो हम उस मालिक के जीव ही। आप उसके ज़्यादा नज़दीक होने के कारण ऐसा फरमाते हैं या हर घड़ी आपको ईश्वर की तरफ से आज्ञा मिलती रहती है?"

श्री महाराज जी थोड़ी देर हँसे। प्रेमी अमीरचंद मुष्ट मार कर बैठे रहे। फिर श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! क्या हर वक्त "मैं-मेरा" ही कहते जावें? इस कर्तापन यानि अहंकार से गाफ़िल नहीं रहना चाहिए। ईश्वर आज्ञा रूपी शस्त्र से कर्तापन अहंकार को दूर करते रहते हैं, इससे जीवन बंधन में नहीं बंधता। और जितने भी जीव हैं "मैं और मेरी-तेरी" भावना में ही बंधकर रात-दिन सब कुछ प्राप्त होने पर भी गरम-ठंडी फूंके मारते रहते हैं। हर घड़ी मालिक को याद रखने का यह तरीका है, और जीव इस तरह नेहकर्म अवस्था की तरफ जा सकता है। यह तेरे अन्दर आज्ञा करने वाला कौन है? शायद तू इस कर्तापन में फंसा हुआ है। सब जीवों ने इस शरीर को सब कुछ समझ रखा है इस देह मोह से ख़ुलासी पानी है। जब अन्तर-बाहर हर तरह से उस मालिक को करता-हरता मानोगे तब छूट पा सकोगे। इनके लिए ईश्वर नित ही अंग-संग है। ज़बानी जमा-खर्च करने वाले हर समय अहंकार में ही स्थित रहते हैं। प्रभु प्रेमी को इस स्थिति में रहना चाहिए कि जो हो रहा है, जो होगा सब उसकी आज्ञा से हो रहा है या होगा। प्रेमी जी, अमल में उतरना बड़ा मुश्किल है। ज़बानी बहुत ब्रह्म बने फिरते हैं। जब ममतामयी वासना यानि मैं-मेरा वग़ैरा में दृढ़ता हो जाती है, तब राग-द्वेष में फँस कर जीवन अनेक सुखों-दु:खों को प्राप्त होता है। जब यह वासना दग्ध हो जाती है फिर वह अचेष्ट पुरुष हो जाता है। जब-तक अंतर निर्वास, निर्चाह अवस्था नहीं आती ज़ाहरी बे-ख़्वाहिश का भेष और दंभ बनावट से दूसरों को प्रभावित करने से कोई लाभ नहीं। आत्मज्ञानी की 'मैं' और संसारी की मैं-पन में बहुत अन्तर है। कहने को तुमको जो दृश्यमान संसार भासता है उसी का स्वरूप है, मगर चित्त की हालत लाभ होने पर और तरह की हो जाती है और हानि होने पर और तरह की। यह मानने वाली बात है। ज़बानी तुम्हारी व्याख्या के सामने किसी का ठहरना मुश्किल बात ही है। क्योंकि तुम्हें ज़बानी जमा-खर्च करने वाले ही मिलते हैं। जिस समय अन्तर-बाहर आत्म सत्ता को सर्वव्यापक जानने की असली मायनों में कोशिश करोगे तब पता लगेगा। प्रेमी जी, दो घड़ी के लिए संसार के सुख भोग तो त्यागे नहीं जा सकते, ज़बानी निर्वास भाव की महिमा करना क्या मायने रखता है।"

प्रेमी अमीर चंद जी कहने लगे:– "महाराज जी! आपका त्यागमयी आदर्श जीवन मुझे किसी तरफ निकलने नहीं देता। कथनी और रहनी वाले में वाकई बहुत फ़र्क होता है। रहनी वाला फिसलता नहीं। कथनी वाला बहुत जल्दी माया कि तरफ बह जाता है। बहुत अच्छा है आपकी

कृपा दृष्टि से बहुत कुछ मिल जाता है।" नमस्कार करके प्रेमी विदा हुए और अर्ज़ की– कि महाराज जी रात को फिर सत्संग के समय दर्शन करेंगे। रात के सत्संग के बाद श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमियों! किसी का कोई विचार हो तो कर सकता है।"

एक प्रेमी ने सवाल किया:– महाराज जी! मूर्ति पूजा से क्या सबक मिलता है?

उत्तर में श्री महाराज जी ने फरमाया:– "ईश्वर की याद में जिस समय बैठो तो मूर्ति की तरह बेसुध हो जाओ।"

फिर एक प्रेमी ने सवाल किया कि खाना किस कदर खाना चाहिए?

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "ऐसा सवाल ईसा के आगे भी एक सज्जन ने रखा था। उसने कहा था कि शरीर एक ज़हर का समुन्दर है, जितना इसमें डालोगे ज़हर हो जायेगा। एक दफा मोहम्मद साहेब ने मिस्र के बादशाह को खत भेजा कि इस्लाम कबूल कर लो। उन्होंने इस्लाम कबूल न किया। मगर खत यानि पत्र को बड़ी ताज़ीम से लिया। बड़ी इज़्ज़त से हाथी दाँत की डिबिया में बंद करके रख लिया और बहुत से तोहफे देकर कासिद को वापिस रवाना किया। तोहफे में बहुत से गुलाम, बांदियां, आशियाएं खुरदनी व कपड़े वग़ैरा भी रवाना किए। साथ ही हकीम भी रवाना कर दिया। जब सब आशियाएं मोहम्मद साहेब के आगे पेश की गई तो उन्होंने सब चीज़ें देखकर तक्सीम कर दीं और हकीम को वापिस कर दिया कि उसकी हमें ज़रूरत नहीं क्योंकि हम खूब भूख लगने पर खाते हैं। जब थोड़ी भूख बाकी रहती है खाना, खाना बंद कर देते हैं। उनकी एक बांदी से मोहम्मद साहेब की शादी हो गई। मतलब यह कि किस कदर मोहम्मद साहेब और उस वक्त के लोगों में सादगी और खान–पान की मर्यादा थी।"

एक और प्रेमी ने कहा:– महाराज जी, यह कैसे हो सकता है, जैसा कि प्रहलाद की कथा है कि प्रहलाद को ख़त्म करने के लिए लोहे के थम को तपाया गया था? उस पर चींटी चलती नज़र आए और प्रहलाद उसको पकड़े और कोई नुकसान उसे न पहुंचे और चींटी भी ज़िन्दा रहे। दूसरी मिसाल, द्रौपदी की साड़ी को सरे दरबार खींचा जाता रहा और वह बढ़ती चली गई। यह कैसे मुमकिन हो सकता है? तीसरे, श्री कृष्ण के जन्म के समय सारे चौकीदार सो जायें। सब दरवाज़े स्वयं बंद हो जावें और चौकीदार भी जाग उठें, फिर जमुना जी कृष्ण जी के कहने पर कि उसे कहना कि कृष्ण जी अगर जति–सति हैं तो रास्ता दे दें और वह रास्ता दे देवे या दुर्वासा ऋषि के कहने पर कि अगर उन्होंने कुछ नहीं खाया तो जमुना जी रास्ता दे दें, हालांकि उन्होंने सब कुछ खाया था। यह सब कुछ कानूने–कुदरत के खिलाफ़ है और कैसे मुमकिन हो सकता है?

श्री महाराज जी ने इन सबका दो हरफ़ों में जवाब देने की कृपा फरमाई कि कानून व कुदरत का वही कादर है। सब कुछ उसके इख़्तियार में है। सब कुछ हो सकता है, कुछ भी ग़ैर मुमकिन नहीं।

श्री महाराज जी एक रोज़ जोहड़ी के किनारे एक तरफ विराजमान थे। प्रेमी अमीरचंद एक महात्मा को साथ लिए हुए पधारे। श्री महाराज जी ने झट अपने नीचे से आसन निकाल कर बिछाया। महात्मा जी नमस्कार करके साथ ही उस पर बैठ गए। प्रेमी अमीरचंद ने नमस्कार करके

बैठ कर अर्ज़ की:– आप हमारे पूज्य प्रणामी मत के गुरु जी हैं। मैने इनसे आपके आने का ज़िक्र किया था। दर्शन करने के वास्ते पधारे हैं।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रणामी मत का क्या सिद्धान्त है?" महात्मा जी कहने लगे:– महाराज जी! आप तो सब मतों के सिद्धान्तों का सारा अनुभव स्वरूप स्वयं विराजमान हैं। दर्शन करके चित्त शांत हो गया है। विचार तो बहुत सोच कर आए थे, मगर अब कोई भी प्रश्न चित्त से उठ ही नहीं रहा। न मालूम सब विचार किधर चले गए। आपने एकदम अपने नीचे से आसन निकाल कर बैठने के लिए देकर मोहित कर लिया है। कहां तक आपकी महानता वर्णन की जाये? आज–तक किसी महात्मा के अन्दर अति निर्मानिता नहीं देखी। वास्तव में हमारा सिर झुका दिया है। प्रेमी अमीरचंद से आपके समतावाद का सिद्धान्त सुना था। हम सिर्फ़ ज़बानी बातों से कई मसलों का हल शास्त्रों के हवाले देकर करते हैं। आपने इस परम तत्व को अपने अनुभव द्वारा जानकर बयान फरमाया है। प्रेमी अमीरचंद के कहने पर आपसे बहस–मुबासा नहीं करना चाहते। हमारी आपको बारम्बार नमस्कार है। साथ दृढ़ करके बैठने की डिठाई की है, इस ग़लती के लिए क्षमा करें और दुनिया वालों को हम बातों से लाजवाब कर देते हैं। मगर आपके सामने कुछ संस्कृत के श्लोक कहना भी सूरज को चिराग़ दिखाने के बराबर है। आप हमारी कल्याण के लिए कुछ शिक्षा देने की कृपा करें।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "कल्याण तो अमल में है। साधन में सिद्धता है। आप खुद समझदार हो, सब कुछ समझते हो। आप खुद आमिल होंगे तो आपसे शिक्षा लेने वाले भी अमल करने वाले होंगे। अगर आपने अपनी कल्याण नहीं की तो दूसरों को ज़बानी तसल्ली देना ला हासिल है। खाली मंत्रों के उच्चारण करने पर ज़ोर देने से इस अंधकार परस्ती के ज़माने में कोई भी सुधरेगा नहीं। इसलिए पहले अपना उद्धार करो फिर दूसरों का उद्धार कर सकोगे। न अपने को धोखा दो न दूसरों को धोखे में रखो। सब मत–पन्थों का एक ही सिद्धान्त है, शरीर के मोह को छोड़ कर आत्मा को जानना। बाद–मुबाद करने वालों ने कई रंग बना रखे हैं। सबसे बड़ी अक्लमंदी यह ही है। ज़िन्दगी में रोशन–ज़मीरी हासिल की जाए। प्रभु ने सत् बुद्धि दी हुई है, अब अमल की ज़रूरत है। यत्न करें, अपने आप रंग लग जाया करता है। आप तो खुद इन सब बातों को जानते हैं। यह सब ज़बानी जमा खर्च कर रहे हैं। रास्ता बदलना है। योगी को निद्धियास से जो आनन्द मिलता है वह कहनी–कथनी से बाहर है। बेहतर यही है कि ज़्यादा समय साधन में लगायें। बहस–मुबाहसे से कुछ हासिल नहीं। चतुराई का नाम अक्लमंदी नहीं। बहुत बातें करने और तर्क–वितर्क से बुद्धि में शांति नहीं आ सकती। भले ही बड़ी बातों से ज्ञानी पता लगे, मगर इसका कोई लाभ नहीं। समय फ़िज़ूल ज़ाया होता है। आप जैसे विवेकी को बातूनी ज्ञान में समय फ़िज़ूल नहीं गंवाना चाहिए। ईश्वर आपको सत् भावों में दृढ़ता बख़्शें।"

प्रेमी अमीरचंद जी कहने लगे:– "महाराज जी! सोच के तो कुछ और आए थे मगर यहां बात ही और बन गई है।" महात्मा जी कहने लगे:– "अमीरचंद! इस जगह अपनी हैरानी छोड़कर आया करो। अगर कुछ हासिल करना है तो हर जगह अपना हठ न किया करो। आकर प्रणाम करके

कल्याण के वचन सुना करो। चलो चलें।" नमस्कार करके दोनों चले गए। जाने से पहले महात्मा जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! कोई गुस्ताख़ी के वचन निकल गए हों तो माफ़ करें। अमीरचंद की कृपा से आपके दर्शन हो गए हैं।" नमस्कार करके दोनों चले गए।

शाम हो जाने की वज़ह से आसन अन्दर ले जाया गया। श्री महाराज जी उठकर घूमने के लिए बाहर चले गए। जब आप वापिस पधारे तो इतनी देर में चौधरी हरजी राम जी मलोट मंडी से दो तीन प्रेमियों सहित सेवा में हाज़िर हो गए और प्रणाम करके बैठ गए। कुछ देर बैठकर, चूंकि सत्संग में अभी काफी समय था, आज्ञा लेकर अपने कारखाने की तरफ जो अबोहर मंडी में भी था भोजन पाने चले गए और 8:30 बजे से पहले ही सेवा में फिर हाज़िर हो गए। प्रेमी सत्संग और अमृत वर्षा का लाभ उठाने के लिए हाज़िर होने शुरू हो गए।

श्री महाराज जी की आज्ञा से ठीक समय पर महामंत्र व मंगलाचरण उच्चारण किए गए और "समदर्शन योग" से विज्ञान मात्रा के प्रसंग से शब्द पढ़े गए। पहला और आख़िरी दोहा जिसके निम्न थे।

नित आनन्द पुरखोत्तम, नित मूरत कल्यान।
'मंगत' सिमरण तिस का, जग जीवन सार निधान।।

आख़िरी दोहा:

सब जग रूप ब्रह्म का, भेद भरम नहीं कोए।
'मंगत' सत तत्त खोजिये, फेर जनम नहीं होए।।

48. सत् शिक्षा

अमृत वाणी की समाप्ति पर श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! और कोई शब्द नहीं रहा था। ऐसे शब्द आम संसारियों के वास्ते नहीं हुआ करते। विचार करने के बग़ैर ही 'सर्व ब्रह्म है' ज़रूर मान लेंगे और इससे खुली छुट्टी मिल जायेगी। बेशक सारा संसार ही ब्रह्म का स्वरूप है, गो इस विचार में कोई बनावट नहीं, मगर यह तत्त्व-ज्ञान आपके लिए नहीं है। ऐसी स्थिति वाला कोई विरला ही भाग्यशाली जीव संसार में होता है। ज़बानी अहं ब्रह्म कह लेना या बनना आसान है मगर इस्तेमाल में कोई विरला ही उतरा करता है। जिस्म और जान, प्रकृति और पुरुष, यानि आत्मा का निर्णय करते-करते जीव ख़त्म हो जाते हैं। शारीरिक विकारों पर तो काबू पाया नहीं जा सकता, 'सब ब्रह्म ही है' कहकर भोग-योग को एक कर रहे हैं। ऋषियों और मुनियों को जंगलों में हज़ारों वर्ष तप करने की क्या ज़रूरत थी? प्रभु की माया बड़ी बे-अन्त, अश्चर्ज व बिस्माद है। इसको समझना कोई मामूली बात नहीं। झूठे ब्रह्मज्ञानी जो हैं वे भोले-भाले लोगों को सर्व ब्रह्म का ही ज्ञान देते हैं। विकारों में आप डूबे हुए होते हैं, दूसरों को भी विकारों में डुबोते हैं। कभी भी अनाड़ी जिज्ञासु को ब्रह्मज्ञान का उपदेश नहीं देना चाहिए। सच्चे संत, जिज्ञासुओं को हमेशा विकारों से निर्विकार होने का सबक देते हैं। जो गुरु, उपदेशक पहले से सदाचारी होने की शिक्षा नहीं देते उनका

उपदेश कभी भी कल्याण देने वाला नहीं होता। ब्रह्म ज्ञानी में तीन काल कोई विकार उत्पन्न नहीं हो सकता। सारे संसार के जीव शारीरिक विकारों की अग्नि में तपायमान हो रहे हैं, मगर एक ब्रह्म ज्ञानी का हृदय ही शांत स्वरूप होता है। सर्व आत्म भावना उनकी ही होती है और किसी की नहीं। तत्त्व स्वरूप आत्मा से संयुक्त होना ही महान कर्तव्य है। दूसरे सब कर्तव्य अधूरे और दु:खमयी हैं। आम संसारी जीवों का जब काम, क्रोध, लोभ, मोह का सामना होता है सब ज्ञान-ध्यान एक तरफ रह जाते हैं। और वह इन विकारों की पूर्ति के यत्न में लगे रहना अपना फ़र्ज़ समझते हैं। कृष्ण भगवान की जो मिसाल 'सखियों के संग रास लीला' जो देते हैं, उन्हें एक तरफ तो रास लीला करते दिखाया गया है, दूसरी तरफ उन्हें ही शेष नाग के सीस पर खड़ा दिखाया गया है। उनकी नकल करने वाले महामूर्ख हैं। वह समता तत्त के बोधक नहीं। कृष्ण भगवान ने जो ज्ञान गीता में ब्यान किया है उसे समझने की कोशिश करो तब ही उनकी हस्ती का पता लग सकता है। पता नहीं उन्होंने रास लीला की भी है या नहीं। पाखंडी लोगों ने इन्हें भी अपने जैसा भोगी जानने की कोशिश की है और आम लोगों को भी ग़ल्त रास्ते पर डाला है। जिसका भंग-चरस पीने का दिल चाहता है वह शिव जी का नाम लेकर भंग भी लेता है और दम लगा लेता है। महापुरुषों के ज्ञान विचार की तरफ ध्यान नहीं देता। दुनिया वालों ने यह ही ब्रह्म ज्ञान समझ रखा है कि बुज़ुर्गों के नाम लेकर जो कुलखनी काम हैं करते जाओ।

पहले अच्छी तरह ज़िन्दगी और मौत को समझो। यह खोज करो कि संसार क्या है? ईश्वर क्या है? विचार करो कि जीव कहां से आया है और किधर जाना है? आत्मा क्या है और शरीर क्या है? इसका निर्णय करो। इनको समझने के लिए महापुरुषों का सत्संग करो। बुज़ुर्गों के पास बैठो और उनके तज़ुरबात का फ़ायदा उठाओ। सत्-असत् का निर्णय करो। जिस तरह संसारी कामों में दिल लगाकर इन्हें करते हो, इसी तरह धर्म के मार्ग में बाहोश होकर चलो। जिस देवी-देवता को मानने वाले बनते हो उसका ज्ञान उपदेश चित्त में धारण करो। जिसे धारण करके वह देवी-देवता बने, वे ही असूल धारण करोगे तब छुटकारा होगा। खाली उनका नाम लेवा होने से कल्याण न होगी। संसार के लोभ-मोह में फंसे हुए जीवों को "मैं ब्रह्म हूँ" कहना शोभा नहीं देता। जब-तक संसार से उदास न हो जावे। यानि चित्त संसार से मुताफिर न हो जावे, तब-तक सही रूप में प्रभु परायण नहीं हो सकता। वैराग्य और अभ्यास से जब अहंकार छोड़ देता है, यानि देह अध्यास उसका जाता रहता है, तब अंतर में सत् बुद्धि पैदा होती है जिससे अपने आपको मालिक का अंश रूप जानने लगता है। ऐसा जानते-जानते उसका रूप हो जाता है, जैसे जल में जल मिलकर एक रूप हो जाता है। 'मैं ब्रह्म हूँ' या 'सर्व ब्रह्म ही है' ऐसे शब्द कहने से बुद्धि भोगों में ज़्यादा से ज़्यादा फंस जाती है। ऐसा जीव आख़िरकार नाश को प्राप्त होता है। जिनके अन्दर ब्रह्म अग्नि प्रज्जवलित होती है उसको सर्व ब्रह्म ही दृष्टि में आता है। इन्द्रियों की चेष्टा पैदा ही नहीं होती। इच्छाओं पर पहले काबू पाने की कोशिश करो। यह सादगी, सत्य, सेवा, सत्संग, सतसिमरण आदि गुणों को धारण करने के लिए ज़ोर क्यों दिया जाता है? यह विचार ही मन बुद्धि को निर्मल करने वाले हैं। छलांगे नहीं लगानी चाहिए। पौड़ी पर पौड़ी चढ़कर मंज़िल पर पहुंच सकोगे। बिना सत् तत्त बोध के

इस जन्म-मरण के दु:ख से छुटकारा मिलने वाला नहीं। महापुरुषों ने अनेक तरीकों से समझाने की कोशिश की है। आत्म-सुख और शारीरिक-सुख दोनों जुदा-जुदा हैं। आत्म-आनन्द नित अखंड अविनाशी है। शारीरिक सुख, जो इन्द्रियों द्वारा भोग पदार्थों से प्राप्त किए जाते हैं, नश्वर हैं, यानि न रहने वाले, नाश रूप, हर समय बदलने वाले हैं। सारे संसार के जीव इस माया चक्कर में भ्रम रहे हैं। आत्म सुख को कोई विरला ही अनुभव करने का यत्न करता है। ईश्वर उस पर कृपा करता है जो उसकी तरफ जाने का यत्न करता है। संसार में अगर कोई महाकारज है तो आत्म-ज्ञान की प्राप्ति है।

घट तेरे में, जो नित रहि्या समाई।
खोज करो तिसकी, जो सर्व रहि्या रमनाई।।
जब देह नाश हुई, जीव बहु पछिताया।
मूढ़मति धार के, नहीं सार को पाया।।
मानुष देह में, सार तत् करो विचार।
आतम तत् खोज, पावें निरधार।।
नित आनन्द सरब प्रकाश, घट-घट रहि्या भरपूर।
'मंगत' उस घर जा बसे, जां बाजे अनहद तूर।।

ईश्वर तुम सबको सद्बुद्धि बख्शें। अब थोड़े दिन की तकलीफ़ रह गई है। अब बहुत समय इनका लिया है। कोई बात दिल में रखोगे ज़रूर सुख पाओगे।

एक प्रेमी कहने लगा:- "महाराज जी! ईश्वर का असली नाम क्या है? अगर "मैं ब्रह्म हूँ" न कहें तो और क्या कह सकते हैं?

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "प्रेमी! ईश्वर के नाम सत्पुरुषों ने ग्रन्थों में कई तरह के बयान किए हैं। जैसी-जैसी सिफ्त प्रभु की विचार में आई वैसा-वैसा नाम धरते गए। वास्तव में उसका नाम कोई नहीं। वह अनामी है। हां, जिसको किसी सत्पुरुष से आत्म अनुभव का रास्ता मिला है, वहीं नाम समझो। खाली ब्रह्म-ब्रह्म करने से कल्याण नहीं होती। इस तरह आत्म-पद की प्राप्ति नहीं होती। जब-तक राग, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, अहंकार मौजूद हैं तब-तक आत्म-सिद्धि नहीं हो सकती। नित सत्संग और सत् ग्रन्थों का विचार करो। कोई सत्पुरुष मिल जाए तो उससे ज्ञान मार्ग लेकर सतपुरुषार्थ धारण करो। मन में सन्तोष रखते हुए जीवन यात्रा में जो कुछ निर्वाह मात्र प्राप्त हो, उसको प्रभु आज्ञा समझते हुए अपना उद्धार करो।" संगत प्रशाद लेकर विदा हुई।

चौधरी हरजी राम जी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! मलोट में कब चरण डालोगे। जिस दिन चलना होगा कृपा करके पता दें। हम चरणों में हाज़िर हो जायेंगे।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "एक-दो दिन तक विचार करके पता दिया जावेगा। अब समय बहुत हो चुका है।" प्रेमी नमस्कार करके विदा हुए।

49. मलोट मंडी का प्रोग्राम

रात के करीबन दस बजने वाले थे, प्रेमी जगजीत सिंह तरनतारन वाले ने सेवा में हाज़िर होकर नमस्कार की।

श्री महाराज जी ने पूछाः– "प्रेमी! तू किधर? किस तरह इस जगह का पता लगा? इस वक्त रोटी का प्रबन्ध किस तरह करोगे?"

जगजीत सिंह ने अर्ज़ कीः– "श्री महाराज जी! यह प्रशाद ही अपने कर–कमलों से दे देवें।"

डेढ़ दो दर्जन केले थे। श्री महाराज जी ने सात आठ केले दे दिये। प्रेमी आठ केले खा चुका तो श्री महाराज जी ने चार केले और दे दिये। उसने वे भी खा लिए। श्री महाराज जी ने फरमायाः– "रोटी की जगह पूरी हो जाये।"

दूसरी सुबह जब श्री महाराज जी बाहर से पधारे और स्नान करने के बाद आसन पर विराजमान हुए तो सेठ करोड़ीमल और चिरंजी लाल आ गए। श्री महाराज जी ने फरमायाः– "प्रेमियों! अबोहर आए हुए काफी समय हो गया है। आज 16 मार्च हो गई। मलोट में चौधरी को पता देना है। 20 मार्च को इधर से चलने का विचार है। कहो तो लिख दिया जावे"?

प्रेमी अर्ज़ करने लगेः– "महाराज जी! आपका बोझ कोई नहीं है जो तकलीफ़ होती हो। आपके मुखारबिंद से नित नए उपदेश श्रवण करके हमारी और कई नये प्रेमियों की कल्याण हो रही है।"

विचार हो रहे थे कि प्रेमी कुन्दन लाल जी आ गए। नमस्कार करके बैठे। विचारों के बाद 25 मार्च को चलने का प्रोग्राम निश्चित हो गया। दूध सेवन करवाने के बाद आसन धूप में ले जाया गया। जगह–ब–जगह प्रोग्राम लिखने की आज्ञा हुई। सबसे पहले चौधरी हरजी राम जी को पत्रिका द्वारा प्रोग्राम लिखा गया, फिर जगाधरी बाबू अमोलक राम जी को सूचित किया गया। देहरादून से राय साहब रल्ला राम जी के पत्र आ रहे थे कि इस दफ़ा इधर ही एकांत निवास के वास्ते आने की कृपा करें। श्री महाराज जी फरमाने लगेः– "अम्बाला से ठीक प्रोग्राम का पता दिया जावेगा, ऐसा लिख दो। मलोट में ज़्यादा समां नहीं देना। एक हफ्ता देकर आगे चलो। अम्बाला की संगत बार–बार लिख रही है।" आज्ञा अनुसार पत्र लिखे गए और उसके बाद भोजन पाने चले गए।

50. रुपए गुम होने पर शांति का उपदेश

चार रोज़ रहकर प्रेमी जगजीत सिंह जी वापिस तरनतारन चले गए। रवानगी से तीन दिन पहले भक्त बनारसी दास जब बिस्तर ठीक करने लगे, तो उन्होंने देखा कि आज्ञा अनुसार संगत की जो रकम उन्होंने पास रखी हुई थी और उसे अलहेदा–अलहेदा जगहों पर रखा हुआ था, दो जगह तो ठीक मिल गई, मगर तीसरी जगह वाली रकम ग़ायब थी। तकरीबन तीन सौ रुपया था। उसके ग़ायब होने का बड़ा असर हुआ, पसीना आने लगा, बड़ी बेचैनी हो गई। अपनी लापरवाही पर अफ़सोस हो रहा था। अपनी ग़लती का अहसास करते हुए सत्पुरुष के चरणों में हाज़िर हो गए

और सिर नीचा किए हुए बैठ गए। प्रणाम करके प्रेमी आ–जा रहे थे। जब शाम को आसन अन्दर ले जाया गया तो आपने पूछा, "तेरा चेहरा क्यों उतरा हुआ है?" पहले तो भक्त जी खामोश रहे फिर बतलाया गया। फरमाने लगे:– "फिर अच्छी तरह देख।" अर्ज़ की:– महाराज जी! बटुवा पड़ा है मगर रकम ग़ायब है। अन्दर के हिस्से वाले नोट भी पड़े हैं।

भक्त जी को घबराया हुआ देखकर फरमाने लगे:– "प्रेमी! शांति कर। जो धन किसी अच्छे अर्थ न लगने वाला हो वह संभाल कर भी रखने से नहीं बच सकता। ताला तो हर समय लगाए रखते हो जब बाहर होते हो। जिसके भाग्य थे ले गया। ग़म न कर। तेरी लापरवाही का नतीजा है। संगत की चीज़ संभाल कर रखनी चाहिए। खत्री पुत्र तो धन को बड़ा संभालकर रखते हैं। मगर अब इसका ज़िक्र छोड़। जाकर खाना खा आओ, फिर सत्संग होना है।"

24 मार्च हो चुकी थी। मौसम इधर काफी बदल चुका था। दिन को गर्मी, रात को अच्छी सर्दी रहती थी। कुछ प्रेमियों ने रात का सत्संग कमरे से बाहर रखना चाहा। मगर श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "जिधर इतना समय गुज़र गया है एक रात और भी गुज़र जावेगी। अन्दर–बाहर बैठकर प्रेमी जो सुनना है सुन लेवेंगे। आइंदा किसी खुली जगह का विचार कर लिया करें। इस वक्त गुज़र करने वाली बात करें। ऐसी जगहों पर ठहरना यह पसन्द नहीं करते, तुम्हारी मजबूरी को देखकर इधर ठहर जाते हैं। दूसरी जमीनें बाहर जाने के लिए नज़दीक ही हैं। तुमको कुछ अपनी सोच भी होनी चाहिए।" श्री चिरंजी लाल जी कहने लगे:– "आइंदा आप जब पधारेंगे तो शायद आपकी कृपा से नई जगह मिल जावे।" आठ बजने वाले थे, प्रेमी आने शुरू हो गए। उस रोज का सत् उपदेश नीचे दर्ज है।

51. सत् उपदेश–अमृत

शरीर रूपी यन्त्र ही जीव का संसार है। शरीर कर्मों के समूह से बनता है। यह किसी एक कर्म का नतीजा नहीं है। मानुष, पशु, जड़, जंगम के जिस कद्र अलग–अलग शरीर नज़र आते है, सबका शरीर शुभ–अशुभ कर्म का ही मजमुआ है। जन्म से लेकर अंत समय तक इस जीव की दौड़ राहत के वास्ते ही लगी है। जीव त्रैगुणी माया में ग्रसा हुआ है। यह तीनों गुण सत्, रज, तम ही कर्म करने पर मजबूर करते हैं। बुद्धि इन गुणों से घिरी हुई है। यह तीनों गुण प्रकृति से प्रगट होते हैं। आत्मा इन गुणों से न्यारी वस्तु है, निर्गुण है। जब देह के अन्दर सतोगुण प्रधान होता है, श्रेष्ठ कर्म करता है। श्रेष्ठ कर्म ही सत् स्वरूप की अनुभवता को देने वाले हैं। जिन कर्मों करके सतोगुण बढ़ता है वह ही श्रेष्ठ कर्म हैं। श्रेष्ठ कर्म ही रजोगुण और तमोगुण के प्रभाव को कम कर देते हैं। सत्संग, सेवा, पर उपकार, सिमरण, ध्यान, योग, ग्रन्थों का स्वाध्याय, नित ही दूसरों को सुख देने वाले कर्म करने, पवित्र व्यौहार, सादा रहनी, हर समय निर्मल जीवन बनाने के यत्न में लगे रहना ही सात्विक वृत्ति है। सत्पुरुष, गुरु जिन–जिन कर्मों की निन्दा करते हैं वह ही तमोगुणी कर्म हैं।

शारीरिक भोगों की ख़ातिर जो कर्म किए जाते हैं वे राजस कर्म हैं। तमोगुणी जीव हर समय दूसरों को दुःखी करके राज़ी होता है। छल-कपट करने वाला होता है। खान-पान अशुद्ध, मदिरा-मांस का इस्तेमाल करने वाला होता है। जीव अपने स्वरूप को भूल कर अज्ञानवश होकर अहंकारी बन जाता है। अहंकारी बुद्धि ही रजोगुणी और तमोगुणी बन जाती है। जिस समय मन के अन्दर अहंकार आता है। विषयों का चिंतन करती हुई बुद्धि इस कदर कामना युक्त हो जाती है कि फिर इस माया जाल से छुटकारा हासिल करना मुश्किल हो जाता है। अति कामना वश होकर अनेक तरह के बन्धन-दर-बन्धन में फंसने वाले कर्म करने लगता है। इन्द्रियों की गुलामी खोटे से खोटे कर्म करने पर मजबूर कर देती है। जिसका नतीजा परम दुःख रूप होता है। जीव बेबस हो जाता है। अज्ञानी जीव परम दुःखी रहता है। जानता हुआ भी अंजान की तरह मोह वश होता रहता है। बड़ी होशियारी समझ से चित्त को विषयों से हटाकर सात्विक कर्मों में लगाना चाहिए। सकाम कर्म कर-कर के बुद्धि अन्धी हो जाती है। जन्म-जन्मांतर से इस कर्म रोग में बुद्धि फंसी हुई है। दुनिया अन्धा-धुन्ध चल रही है। जीव जैसा-जैसा कर्म साथियों को करता हुआ देखते हैं उसी तरह वे भी करने लग जाते हैं। कोई ही विवेकी जीव इस संसार को देखकर विचार करता है। विचार करके इसे दुःख रूप जानकर इससे छुटकारा पाने का यत्न करता है। भाग्य से ही सत्संग मिल जाए तो सत् विचार धारण करके ईश्वर माया या प्रकृति का भेद पाकर अपने सुधार का रास्ता धारण कर लेता है। तुम प्रेमियों ने बहुत सत्संग विचार सुने हैं। उनको हृदय में रखना। रोज़-रोज़ ऐसी संगत नहीं मिलती। आहार, व्यौहार, संगत की पवित्रता तब ही बनी रह सकती है जब श्रद्धा, विश्वास से जीव धर्म परायण होगा। इस भयानक काल में ईश्वर ही सुमति देवें ताकि नित ही गुरु, पीरों के उपदेश को विचारते हुए उन पर अमल करते हुए संसार में आना सफल कर सकें। यह मानुष जन्म बड़ा दुर्लभ है। मनुष्य देह पाकर इसमें सत्-असत् का विचार जीव कर सकता है और जितनी भी योनियां हैं, भोगमई योनियां हैं। पशु, पक्षी और दीगर जड़ योनियां सब ही अज्ञान की तरफ ले जाने वाली हैं। अच्छे कर्म करके जो जीव सत्मार्ग पर चलता है, वह ही सत् सोझी प्राप्त करके अविनाशी सुख को प्राप्त कर सकता है। दीनदयाल सबको सत् बुद्धि देवें। प्रभु की दयालुता तो हर एक जीव पर हो रही है। उस मालिक की याद ही परम सफलता के देने वाली है। ईश्वर सबको प्रीत-प्रतीत बख़्शें।

'समता विज्ञान योग' से 'आनन्द सार' के कुछ दोहे पढ़कर आरती की गई और समता-मंगल उच्चारण किया गया और सत्संग समाप्त हुआ। फिर प्रशाद बांटा गया।

सत्पुरुष ने फरमायाः- "प्रेमियों! कोई विचार करो।"

एक प्रेमी ने अर्ज़ कीः- "महाराज जी! 'हंसदियां, खेडदियां, खांदियां, पीदियां होवे जीवन मुक्त' कोई ऐसा तरीका बताएं कि आसानी से छुटकारा हो जावे।"

श्री महाराज जी ने फरमाया-

प्रेम प्याला जो पिये, सीस दक्षना दे।
लोभी सीस न दे सके, और नाम प्रेम का ले।।

"प्रेमी जी, जीभा की रसना को पूरा करने के वास्ते और इन्द्रियों के लवाज़मात इकट्ठे करने के लिए किस कदर यत्न–प्रयत्न रात–दिन करते हो। जो भी रस, स्वाद प्राप्त होते हैं। सब एक पल में ग़ायब हो जाते हैं। दुःखों–सुखों को भोगता हुआ आख़िरकार संसार से खाली हाथ चल देता है। ज़रा किसी ऐसे सत्पुरुष का नाम तो लो जिसने हंसदियां, खेडदियां मुक्ति प्राप्त की हो। मर के जीवन में मुक्ति हासिल हो जाए तो भी सस्ती जानो। अपने आपको भुलेखे में न डाले रखो। जिनका शब्द तुमने पढ़ा है, बारह वर्ष ओड़नी पर बैठ कर तप करते रहे। हर हालत में प्रभु आज्ञा माननी कोई आसान नहीं। जब–तक अच्छे–अच्छे भोग रस मिलते रहें तो ठीक, जिस समय उलटा चक्कर चलने लगे फिर उस वक्त भी भाना मानो, तब रोओ, पीटो, कल्पो नहीं, तब जीवन मुक्ति का पता लगे। किसने तुझे उल्टी मत दी हुई है। सीधे होकर चलो।"

एक और प्रेमी कहने लगा:– "महाराज जी! अगर हर एक कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है तो मेरा क्या बनेगा? पाकिस्तान से उजड़ कर आया हूं। वहां पर मेरी छोटी सी दुकान थी। एक अनाज के ढेर में गधे ने मुंह मारा। मैंने उसे ऐसा पीटा कि उसकी कमर टूट गई और कुछ दिनों के बाद मर गया। उसका भोग कैसे चुकाऊंगा?"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी! बदला तो देना ही पड़ेगा।"

प्रेमी कहने लगा:– "महाराज जी! कोई बचाव का उपाय बताओ।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "छोटी चोरी के लिए प्रायश्चित में बड़ा दान करना पड़ता है। जैसे कतरा ज़हरीले पानी में सेरों मीठा डालोगे तब कहीं कड़वाहट जावेगी। जीवों की सेवा और भजन बंदगी की जावे तो अज़ाब की पीड़ा की तुरशी कम हो सकती है।"

आख़री दिन होने की वज़ह से प्रेमी प्रणाम करके जाने लगे। वक्त भी काफी हो गया था। मलोट से आए हुए प्रेमी चौधरी हरजी राम के साथ ही उनके कारखाने गए। जाने से पहले श्री महाराज जी ने फरमाया:– "कल दो बजे चल देंगे।"

अबोहर निवासी प्रेमियों ने जाने से पहले अर्ज़ की:– महाराज जी! आपने इस दफ़ा अबोहर संगत पर बड़ी कृपा की है। आइंदा भी इसी तरह सिर पर हाथ रखें। संसारी ग़लतियों के पुतले हैं। आप जैसे संतों की दया दृष्टि से इस माया बन्धन से छुटकारा पाया जा सकता है।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमियों! आप लोग क्या तपस्या कर सकते हो? गुरु भक्त होकर सेवा साधन को ही अच्छी तरह अपना लो तब ही कुछ कामयाबी कर सकते हो। धनी लोगों के अन्दर से माया का मोह कम नहीं हो सकता। धन का त्याग ही बड़ा तप है। जितनी प्रीति जीव धन के साथ रखता है उतनी ईश्वर के साथ हो जाए तो बेड़ा पार हो जावे। जिसका चित्त नित नई से नई कामनाएं उठा रहा है, संसार में फैलने वाले विचारों को बढ़ा रहा है वह कब आसक्ति रहित हो सकता है? यह भी प्रभु की कृपा ही जानें कि संतों की संगत में तो समय दे रहे हैं।"

फिर पूछा गया:– "महाराज जी! उस समय चित्त की क्या हालत हो जाती है जब यह जीव सच्चे मायनों में प्रभु परायण हो जाता है?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! प्रभु सिमरण करते–करते जिस समय भेद–भाव हट जाता है तब हर एक पदार्थ जड़ चेतन में सत् सरूप परमात्मा को अनुभव करने लगता है। समभाव वाला कैसी भी दुर्घटना हो, डावांडोल नहीं होता। प्रभु भाने में दृढ़ रहता है। कोई उन्हें आकर राजपाठ भी दे तो वह रब्ब के प्रेम में मग्न रहता है। प्रेमी, प्रभु परायण होना बड़ा मुश्किल है। जीते जी मरना है। तुम्हें ज़रा सा कोई 'महाराज' कह दे तो फूल जाओगे और कोई गाली निकाल दे तब बिगड़ जाओगे, बुरा मानोगे। समभाव आन्तरिक सिमरण से ही हो सकता है। जिसके अन्दर से अहंकार निकल गया वह ही असल में शांत चित्त है। देह अभिमान, कुलजात अभिमान, मज़हब अभिमान, कर्तव्य अभिमान कई तरह के अहंकारों में जीव फंसा हुआ है। जो जीव मालिक की याद में लीन हो जाता है, मान–अपमान, संयोग–वंजोग, दु:ख–सुख में स्थिर बुद्धि रहता है। बाकी संसार परायण जीवों का चित्त राग–द्वेष की अग्नि में जलता रहता है। वह जीव भाग्यवान है जिनके अन्दर धर्म की कोई रत्ती है।

श्री महाराज जी ने 14 मार्च, 1951 को निम्नलिखित मुख–वाक् अमृत प्रगट फरमाया और आज्ञा फरमाई कि इसे नकल करके प्रेमियों को भेजा जावे।

52. श्री मुख वाक् अमृत

"मोह की अधिक अग्नि को सत् विचार और वैराग्य के जल से नित सींचना चाहिए तब ही मनोवृत्ति अंतरमुख होकर सतनाम में दृढ़ हो सकती है। इस संसार की नाशवान यात्रा को दृढ़ निश्चय से अनुभव करके हर वक्त सत् परायणता में निश्चल रहना चाहिए।

"यह ही निश्चय अखंड भक्ति के देने वाला है। ईश्वर आज्ञा में अपने जीवन कर्तव्य को पूर्ण निश्चय से समर्पण करना मानसिक कल्पनाओं के नाश करने का साधन है। इस वास्ते हर वक्त प्रभु नाम और प्रभु आज्ञा में नेहचल होना चाहिए। ऐसे यत्न से सत् अनुराग को प्राप्त करके बुद्धि परम तत्त में नेहचल होती है। ईश्वर निर्मल भावना देवें ताकि अपने सत् यत्न में दृढ़ रहते हुए इस संसार की भयानक अग्नि से ठंडक प्राप्त कर सके। ईश्वर सत् विश्वास देवें।"

अबोहर, 23 मार्च, 1951 का दिन था। बारह बजे चौधरी हरजी राम जी पंडित सीता राम जी के साथ पधारे। श्री महाराज जी आत्म–आनन्द में बैठे थे। थोड़ी देर बाद आंख खोलकर फरमाया:– "प्रेमियों! एक जैसी हालत हमेशा नहीं रहती। जो कुछ आज आंखों द्वारा देखने में आ रहा है, समय पाकर सब बदल जायेगा। इस तबदीली की हालत को जीव ने सत् समझा हुआ है। इस भूल में सब जीया–जन्त भटक रहे हैं। कैसी अश्चर्ज बात है। जीव अपने को भूलकर अनात्म वस्तुओं को अपना स्वरूप मान लेता है। मोहवश होकर शरीर को ही सब कुछ समझने लगता है। शरीर के पालन–पोषण के वास्ते अनेक तरह के सकाम कर्म करने लगता है। शुभ–अशुभ कर्मों के

फल को भोग कर दुःखी–सुखी होता रहता है। किसी समय इस बन्धन स्वरूप हालत का विचार नहीं करता। चिरकाल तक इसी अन्धकार में फंसा रहता है, जन्म–जन्मांतर बीत जाते हैं। प्रभु की माया बे–अन्त है, जिसने जब जीवों को मद–मस्त कर रखा है। प्रभु कृपा से तुम लोगों को फ़कीरों के नज़दीक आकर बैठने का मौका मिला है। इनका जीवन तुम्हारी बेहतरी के लिए है। जगह–ब–जगह देख रहे हैं, कोई व्यापार करने आए, कोई प्रभु का प्यारा दर्द थोड़ा बांट ले। समय मिले आ जाया करो।"

चौधरी जी ने सब प्रेमियों से अर्ज़ की:– "उधर मलोट ज़रूर आने की कृपा करें, जितने रोज़ महाराज जी वहां ठहरें आप भी ठहरें।" श्री महाराज जी थोड़ी देर बाद उठ खड़े हुए। जीप बाहर खड़ी थी। उसमें आगे महाराज जी को आसन दिया गया। सब संगत ने बारी–बारी प्रणाम किया और 'ओ३म् ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार' के नारे लगाए। जीप रवाना हो पड़ी और डेढ़ घंटे में तकरीबन 3.30 बजे मलोट मंडी जा पहुंचे। चौधरी जी ने स्टेशन के पास ही जगह साफ करवा रखी थी। वहां आसन लगाया गया। जिस–जिस प्रेमी को पता लगा आकर नमस्कार करने लगा।

53. मलोट में चन्द रोज़ निवास

सत्संग का समय शाम के आठ बजे से नौ बजे तक निश्चित किया गया। करीबन सात बजे अबोहर निवासी कई प्रेमी पहुंच गए। प्रणाम करके बैठे ही थे कि चौधरी जी आ गए और सबसे भोजन पाने की प्रार्थना की, फिर सत्संग में शामिल हुए। सबने उत्तर दिया, "भोजन पाकर आए हैं। फिर किसी रोज प्रशाद पा लेंगे।"

पूरे आठ बजे सत्संग शुरू हुआ जिसमें "समता सार योग" से कुछ वाणी के शब्द पढ़े गए। श्री महाराज जी का उपदेश इस प्रकार था।

54. सत् उपदेश–अमृत

जब से जीव शरीर की कैद में आया है इसे इन्द्रियों के रस भोगों के ज्ञान का भी साथ पता लगता रहता है। इस पांच तात्विक देह आकार में पांच दोष भी प्रगट हो रहे हैं। जीव मोह वश होकर अनेक विकारों में घिरा रहता है। अति सम्पत्ति को इकट्ठा करके भी इसे चैन नहीं। भोगों को भोगते–भोगते शारीरिक रोगों और मानसिक चिंता को पैदा कर लेता है। जीव के वास्ते कोई बाहर से दुःख नहीं लाता। जीव की अपनी शुभ–अशुभ करनी ही उसके सुख–दुःख का बायस बनती चली जाती है। हर किस्म के सुख हासिल होने पर भी अज्ञानता से तपायमान होता रहता है। नित ही प्यासा और अशांत रहता है, क्योंकि जिस बात को समझना था उसे समझा नहीं। चित्त के अन्दर आत्म सम्बन्धी विचार जब–तक नहीं आते तब–तक मिथ्या भ्रम में जीव भटकता रहता है। वासना

को अच्छी तरह पूर्ण करने के वास्ते लोभ का सहारा लेता है। लोभ करके मोह बढ़ता है। जब हर एक भोग पदार्थ में जीव का अहंकार बन जाता है, यानि ज्यों-ज्यों 'मैं-मेरी' बढ़ती है त्यों-त्यों अपने स्वरूप से दूर होता जाता है। हर एक जीव मात्र इन दोषों में ग्रसा हुआ है। संसार के समस्त जीव हाहाकार कर रहे हैं। क्षणभंगुर सुखों का विस्तार पहले बहुत अच्छा मालूम होता है, मगर जब इन मनमोहनी चीज़ों से वियोग होता है, सुख, सुखदायी पदार्थ दुःख रूप ज़हर समान दिखाई देने लगते हैं। लोभ–मोह का पसारा बड़ा ही भयंकर है। संसार के सुन्दर विस्तार को देखकर जीव पल–पल विखे भूलता रहता है। भाग्य से जीव के अन्दर ज्ञान वायु चल जाए जिससे चित्त ठंडा होकर जलन को ख़त्म कर दे। विचार करना है कि यह कैसे हो सकता है? ऐसा प्रभु परायण होने से ही हो सकता है। प्रभु परायण होने से ही ख़ुलासी हो सकती है, अपना छुटकारा यानि मुक्ति इसने आप ही हासिल करनी है। ईश्वर सिमरण भजन के बग़ैर निर्भय अवस्था प्राप्त नहीं हो सकती। काल कर्म की फांसी से छूटने के लिए केवल प्रभु याद ही है। यह जीव आसरे ढूंढता रहता है। चाहता है कि उसकी जगह कोई मौलवी, पंडित भाई पाठ कर दे। झूठ, कुसत्, जो यह दिन–रात कर रहा है, उससे कोई कैसे छुड़ा सकता है? ज़िन्दगी में जो शुभ–अशुभ कर्म इसने किए हैं। उनका एवज़ाना इसे ज़रूर देना पड़ेगा। जिस तरह खोटे कर्मों को करके बुद्धि को मलीन कर लिया था, उसी तरह जीव सत्कर्म करेगा तो निर्मल होगा। मनुष्य जन्म में ही सत् कर्तव्य कर सकता है। इनके करने से ही अपना सुधार हो सकता है। जीव जन्म–जन्मांतर ही से इसी तरह मोह माया में ग्रसा हुआ चला आ रहा है। कल्याण का आसान रास्ता इसके वास्ते यह ही है कि प्रभु सिमरण और जगत सेवा करे। इस तरह सिमरण, सेवा करते–करते सुरति आख़िर प्रभु प्रेम में मग्न होकर सत् स्वरूप हो जाती है।

''आप गंवाइये तां शौ पाइये, सौदा दस्त बदस्ती ए।''

फ़कीरों ने तो कहना ही है। संसार में हज़ारों गुरु, पीर, अवतार आए जिन्होंने उनके वचनों पर तन–मन कुर्बान किया, परम सुख को प्राप्त हुए। जीव शारीरिक ममता में दिन–रात तपायमान हो रहे हैं। शांति हासिल करने के लिए केवल आत्म–पूजा ही है। शरीर और आत्मा अलग–अलग हैं। यह जीव शरीर को ही सब कुछ मान रहा है और भुलेखे में ऐसा मान कर पड़ा रहता है। यह कोई मामूली पीड़ा नहीं। इस तरह सत्संग सुनते–सुनते श्रद्धा, शौक पैदा हो जाता है और जीव छुटकारा प्राप्त कर लेता है। प्रभु कृपा करें, सत् बुद्धि बख्शें ताकि सत् साधन धारण करके जीव छुटकारा प्राप्त कर लेवे।

फिर 'आनन्द सार प्रसंग' के कुछ दोहे पढ़े गए और आरती व समता–मंगल उच्चारण करने के बाद सत्संग समाप्त हुआ और प्रशाद बांटा गया। गाड़ी दस बजे जाती थी। अबोहर के प्रेमी वहां से रवाना होकर गाड़ी में सवार होकर अबोहर चले गए।

इसके बाद एक प्रेमी ने प्रश्न किया:– "महाराज जी! अगर भाई, मौलवी, पंडित हमारी कल्याण नहीं कर सकते तो फिर कल्याण कैसे हो सकेगी?

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी! पंडित, भाई कल्याण का कुछ रास्ता बता सकते हैं, जितना वह जानते होंगे। कल्याण चाहते हो या भगवान के चरण–अमृत से मुक्ति हासिल करना चाहते हो और साथ ही यह भी चाहते हो कि करना–धरना कुछ न पड़े। प्रेमी, यह ठगी–ठगोली करके भगवान को ठगना चाहते हो। क्या वह भोला है, कुछ नहीं जानता? तुम भी पागल और तुमको रास्ता दिखाने वाले भी अन्धे। जो अपनी कल्याण नहीं कर सकते वह तुम्हारी क्या कल्याण कर सकेंगे? कोई ठीक रास्ता पकड़ो। पहले समझो करना क्या है? किधर से आए हैं? किधर जाना है? कल्याण का रास्ता बताने वाला कैसा होना चाहिए? पुराने वहमों से बुद्धि को निकालो। आहिस्ता–आहिस्ता इस तरह सत्संग सुनते–सुनते आप ही पता लग जावेगा कल्याण कैसे हो सकता है? कल्याण कोई खिलौना नहीं है जो हाथ में पकड़ा दिया जाए। विश्वास ही है। तेरी कल्याण सत्संग, सिमरण, पर–उपकार में है, हर प्राणी मात्र की निष्काम सेवा करने में है। अपने लवाज़मात को कम करके जो धन बचे उसको ग़रीब, यतीम, अनाथों की सेवा में खर्च करो। खाली धूप, दीप दिखाकर भगवान को खुश करना चाहते हो। वह तुम्हारे घट–घट की जानने वाले हैं। हर एक की नीयत को समझते हैं। किस ख़्वाहिश को लेकर उसके नज़दीक जाते हो। प्रेमी, अगर कल्याण करने की ख़्वाहिश है तो निर्मल चित्त से तन, मन, धन सब कुछ सुख–सम्पत्ति जो है उसकी परम दात समझकर उसे दूसरों के सुखों के वास्ते हर वक्त तक्सीम करने वाले बनो। सच्चे दिल से जिस कदर सत् सिमरण बन सके, इसमें शरीर को घालो। मन बुद्धि से लगातार उसका सिमरण करके उसमें जज़्ब हो जाओ। बस फिर कल्याण कोई दूर नहीं। अब बता क्या समझा?"

प्रेमी ने हाथ बांध कर अर्ज़ की:– "महाराज जी! सत् सिमरण करने की युक्ति का जब–तक पता नही, कैसे उसका सिमरण किया जा सकता है?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "जाओ हरिद्वार, ऋषिकेश पहाड़ों में किसी गुरु–संत की तलाश करो। अगर सिमरण भक्ति का शौक है तो संसारी व्यापार के वास्ते कितनी–कितनी दूर जाकर सौदा करके उसे लाते हो फिर इसे बेचकर धन का मुंह देखते हो और उस धन से सब सुख, भोग पदार्थ प्राप्त करके मन की खुशियां पूरी करते हो। प्रेमी, बग़ैर पुरुषार्थ के कोई काम सिद्ध नहीं होता। रोज़ाना सत्संग में आया करो। सत् विचार सुनो और समझो। इस तरह विचार करके जो चीज़ हासिल की जावे वह ही कल्याणकारी होती है। आजकल साधु सन्यासी और गृहस्थी एक ही भाव में बहे जा रहे हैं। तुम संसारियों के अन्दर यकीन कैसे आवे? तुम सूती कपड़े पहनते हो, वह जब–तक रेशमी कपड़े न पहनें तब–तक महन्त कहला ही नहीं सकते। असली रेशम उनको चाहिए और रंगा हुआ हो।"

प्रेमी कहने लगा:– "महाराज जी! महात्मा लोग कहते हैं कि इसको इस वास्ते पहनते हैं कि यह रेशम पवित्र होता है।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "कमाई गृहस्थियों की, वह क्यों न रेशम पहनें?"

चोर ते कुत्तिया मिल गए पहरा किसका दे।

"आजकल साधु भी तुमको उपदेश करने वाले ऐसे मिलते हैं जो कथा–कहानियां सुना–सुना कर तुम्हारा दिल खुश कर देते हैं। तुम जो मर्ज़ी है करते जाओ। चलती दफा उनको दक्षिणा चाहिए। तुम नुमायशी जीवन बनाओ, सिनेमें देखो, आहार–व्यौहार जिस तरह मर्ज़ी हो करो, सनातन धर्म ने खुली छुट्टी दे रखी है। तुम जाकर संतों के मठ देखो तो पता लगे किस कदर वहां नुमाईश होती है। बड़े–बड़े अमीर लोग वहां नमस्कार करके उनसे ज़्यादा नुमाईशी जीवन बसर करना सीख आते हैं। जब गुरु, सन्यासी सोने–चांदी के जड़ाऊ सिंघासनों के बग़ैर बैठ नहीं सकते, तुम किस तरह सादगी धारण कर सकते हो?

साधु ऐसा चाहिए, दिखे दिखावे न
पात फूल को हाथ न लावे, रहे बागीचे मांह ॥

"प्रेमी, सुन।

प्रेम न बाड़ी उपजे, प्रेम न हाट बिकाए।
राजा राना जो चाहे, सीस दे ले जाए।।
वस्तु कहीं ढूंढे कहीं, कै विध आवे हाथ।।
कहें कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजे साथ।।
कोट–कोट तीरथ करे, कोट–कोट करे धाम।।
जब लग सतगुरु न मिले, तब लग काचा चाम।।
हर ने अपना आप छुपाया, गुरु ने प्रगट कर दिखलाया।
हर ने पांच चोर दिए साथा, गुरु ने जान बचाई नाथा।
हर ने जान कठिन विच घेरी, गुरु ने दुबधा काटी मेरी।
ऐसे गुरु पर तन मन वारूं, राम तजूं गुरु नाहीं विसारू।
कपट खोट मन में नहीं, सबसे सरल स्वभाव।
कहें कबीर तां साध की, लगी किनारे नाओ।।

"आज क्या हो रहा है?

गुरु चेला लालची, खेडन दाओ पर दाओ।

"ज्यादा फ़कीरों के नज़दीक न आया करो। संसार के काम करो। दुनिया में अच्छी तरह सुखी जीवन बनाने का यत्न करो, शायद कल्याण हो जाए। फ़कीर फक्कड़ होते हैं जो कुदरत की तरफ से आवाज़ आई कह दी। डरते, झिझकते किसी से नहीं। सच्चाई को उन्होंने खुद जान लिया। जो उनके

पास आकर बैठेगा, सुनकर मानेगा, तो वह अपनी यात्रा को ठीक करेगा। जो सुनकर नहीं मानते उनका फ़कीर क्या कर सकते हैं?

''मन्ने की गत कही न जाए''।

"सुनके मानना और मानकर अमल यानि निद्धियासन करने में ही मुक्ति है और तब ही ख़ुलासी मिलती है। संसारी आज से मनमाने नहीं चल रहे, बल्कि जब से संसार बना है ऐसे ही चल रहे हैं। जैसा किसी ने बताया चलते जाते हैं। जो बाहोश सत् बुद्धि वाले प्रेमी होते हैं, उन्हें रास्ता भी मिल जाता है और उस पर चलने का समय भी मिल जाता है। जैसी-जैसी भावना जीव लेकर चलते हैं सर्व स्वरूप नारायण उनकी भावना पूर्ण करते हैं।"

श्री महाराज जी ने इसके बाद फरमाया:- "अच्छा, प्रेमियों! जाओ, आराम करो।" पर प्रेमी ने हाथ बांधकर प्रार्थना की:- महाराज जी! किसी वक्त दिन के समय कुछ विचार करने का वक्त मिल सकता है?

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "सुबह नौ बजे जिस वक्त मर्जी हो आ जाओ। तुम प्रेमियों के लिए हर समय दरबार खुला है। प्रभु के प्यारों के वास्ते ही फिर रहे हैं। एक हफ्ता इधर ठहरना है। जो शक हो अच्छी तरह निकाल सकते हो।" प्रेमी प्रणाम करके विदा हुए।

चौधरी हरजी राम जी और पंडित सीता राम जी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! आपने प्रोग्राम अभी से सुना दिया है। झटपट आगे न लिख देवें। इधर भी बहुत प्यासे बैठे हुए हैं।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "चौधरी जी! चले जाने में अभी कुछ दिन बाकी हैं। कौन फ़कीरों की अखड़ी बोली समझता है, अभी कौन से चल दिए हैं? काफी समय तुम्हारे इलाके में रहते हो गया है। गिद्ध की नज़र बड़ी दूर तक काम करती है। उसे बू भी आ जाती है जहां मुर्दा हो। मालिक के आशिक भी प्रभु-प्रेरणा से किसी न किसी तरह साधु ढूंढ ही लेते हैं मगर कोटों में कोई विरला ही आशिक होता है जो इस रास्ते पर चलने वाला होता है, वैसे कई ऐसे ही होते हैं। तुम्हारा प्रेम पूरा हो जावेगा, फ़िक्र न करें।" प्रेमी प्रणाम करके विदा हुए।

इस जगह भी सत्पुरुष यथावत सुबह तीन बजे बाहर तशरीफ़ ले गए। रेलवे लाईन के साथ-साथ काफी दूर तक चले गए। भक्त जी को साथ ले गए। काफी दूर जाकर लोटा लेकर आगे चले गए और भक्त बनारसी दास को वापस कर दिया। सुबह जब श्री महाराज जी को लेने गए, थोड़ी देर में श्री महाराज जी आ गए। भक्त जी ने प्रणाम किया और सत्पुरुष कुछ देर यहां ही बैठ गए और फरमाया:- "प्रेमी! अब तेरा क्या प्रोग्राम है?" भक्त जी ने अर्ज़ की:- महाराज जी! क्या फरमाया? तो आपने फरमाया:- "अम्बाला वालों की भी पत्रिकायें आ रही हैं। दूसरा विचार यह है कि सीधे देहरादून चलें और वहां पहुंच कर ख़बर दे दी जावे। जगन्नाथ बेचारा क्या करेगा? प्रेमी राम सिंह और कैम्प के लोग होंगे। तेरी क्या मर्ज़ी है।"

भक्त जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! जाना तो अम्बाला से ही गुज़र कर है। चंद दिन प्रेमियों पर कृपा कर देवें। श्रद्धावान तो बहुत हैं। अच्छा ही इन्तज़ाम करेंगे। आप कृपा करने वाले हैं।"

फरमाने लगे:– "प्रेमी! वह सेंटर जगह है। इधर–उधर से प्रेमी आने शुरू हो गए तो उनके वास्ते सेवा मुश्किल हो जायेगी। बहुत सारी बातें विचार करनी पड़ती हैं। वे लोग अभी आप टिक कर नहीं बैठे, कैसे उनके करोबार हैं? बोझ महसूस न करें। अच्छी तरह विचार करके फिर तारीख़ निश्चित करके लिख दो।" फिर वहां से उठकर चल दिए। वापिस पहुंचकर स्नान किया, फिर दूध लिया, इतनी देर में चौधरी हरजी राम जी व अन्य सब प्रेमी हाज़िर हो गए।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "तुम डाक निकाल कर प्रेमियों को प्रोग्राम से आगाह कर दो। पहली अप्रैल को इधर से चलने का लिख दो।" चौधरी ने अर्ज़ की:– "नहीं महाराज! बहुत थोड़ा समय दे रहे हो। दो–चार रोज़ तक तो प्रेमियों की समझ बैठनी शरू होती है। एक हफ्ता और कृपा करें।" श्री महाराज जी अन्तर्ध्यान हो गए और पांच मिनट के बाद फरमाया:– "अच्छा, दस दिन बहुत हैं। हिसाब करके दिन लिख दो।" 6 अप्रैल को चलने का प्रोग्राम निश्चित हुआ। दोबारा प्रेमी न बोल सके।

पत्र लिखे गए। एक प्रेमी ने कुछ प्रश्न पूछे हुए थे। उनके जो उत्तर श्री महाराज जी ने लिख करके भेजने के लिए दिए थे वे निम्नलिखित हैं–

(1) बुद्धि का स्वभाव ही तहक़ीक़ात करना है। जब–तक मुकम्मल बोध आत्म–स्वरूप का नहीं प्राप्त होता है तब–तक उसकी तहक़ीकात दर तहक़ीकात बनी रहती है। मादा–परस्ती की तहक़ीकात अधिक से अधिक रंज व ग़म और खोज दर खोज के बढ़ाने वाले हैं। यानि ठहराव या सकून प्राप्त नहीं हो सकता। यह ही खेद स्वरूप संसार है। जब बुद्धि सत्–तत्त आत्म–स्वरूप की खोज में लगती है तब पूर्णता को प्राप्त होती है। यानि मुकम्मल बोध (सूझ) को प्राप्त करके शांत हो जाती है। ऐसी हालत को ही निर्वाण कहा गया है। सत् की खोज़ के बग़ैर जितनी भी जुस्तज़ू है, वह रंज–व–ग़म के देने वाली है। जैसा कि आम आलिमों की हालत होती है।

(2) जब–तक सत् परायणता में पूर्ण दृढ़ता न प्राप्त होवे, तब–तक निष्काम कर्म में प्रेम भाव दृढ़ नहीं होता और प्रेम के बग़ैर निष्काम कर्म अक्सर खेद स्वरूप ही प्रतीत होते हैं।

(3) जीव अपने संस्कारों में कमी–बेशी कर सकता है। बुराई हालत से भलाई को हासिल कर सकता है। भलाई से बुराई को प्राप्त हो जाता है। इस वास्ते हर वक्त कुव्वते–इरादी को मज़बूत करके जो सत्मार्ग में दृढ़ होता है वह अपने तुच्छ संस्कारों से उच्चता को प्राप्त हो जाता है।

(4) सत्पुरुषों के करीब बैठने से उनकी पवित्रता को अनुभव करके मलीन बुद्धि ठंडक को प्राप्त होती है। यह संग दोष असरात का नतीजा है।

कागज़ के एक टुकड़े पर सवालों के जवाब लिखकर फरमाने लगे:– "इनकी तरफ से आशीर्वाद लिख दो और यह भी लिख दो कि कभी हाज़िर होकर दिल की तसल्ली कर लेवें। पत्रों द्वारा शायद पूरा मकसद हासिल न कर सके। ईश्वर सत् बुद्धि बख्शें।"

इस दौरान प्रेमी गंगा राम, जो चौधरी हरजी राम जी के गृह पर काम करता था, ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! मैं पढ़ा हुआ तो कुछ नहीं हूं। आप कृपा करें, रास्ते पर लगा दें। आपकी बातें अच्छी लग रही हैं। हमारे चौधरी जी बहुत नेक स्वभाव के हैं। सेवा भाव भी बहुत है और जीवन भी सादा है। कोई अंहकार नहीं। ईश्वर की बड़ी कृपा इन पर है। महात्मा–जन सब पर निग़ाह एक जैसी रखते हैं। इस ग़रीब पर जरूर कृपा करें।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी, दो घड़ी ईश्वर का नाम सिमर लिया करो। निष्काम सेवा कर ही रहे हो और क्या चाहते हो?" प्रेमी गंगा राम कहने लगे:– "महाराज जी! चौधरी जी को जो शिक्षा दी है वह मुझे भी समझावें।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "बनारसी! इसे समझा दे अभी वक्त नहीं। जब इस काबिल होगा देख लेंगे।" प्रेमी कहने लगा:– महाराज जी! संसारी कामों के वास्ते भी उस्ताद की ज़रूरत होती है। गुरु के बग़ैर तो गति नहीं होती, ऐसा सुन रखा है। अभी तक कोई गुरु धारण नहीं किया। आप ही से शिक्षा लेनी है, ऐसा मन कहता है।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे, "अच्छा आराम करो। कुछ दिन देखकर फिर विचार किया जावेगा।" बाद में भक्त जी को फरमाया कि– उसे कह दिया जावे कि शांति रखे फिर विचार किया जावेगा। भक्त जी ने उसे ऐसा कह दिया, मगर गंगा राम ने कहा:– भक्त जी! स्वांसों का क्या भरोसा है? मेरी मर्ज़ी है आश्रम में रह कर संगत की सेवा करूं। विचार करते हुए दोनों श्री महाराज जी के चरणों में पहुंच गए। भक्त जी ने जो कुछ गंगा राम कह रहा था अर्ज़ कर दी। श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी, चौधरी जी से विचार कर लो। अगर वह हां करेंगे तो तुम्हें वक्त दिया जावेगा।"

इसके बाद वह चला गया तो आपने भक्त बनारसी दास को फरमाया:– "उसके अन्दर यह ख़्याल उठ रहा था कि महाराज जी ग़रीब को कम नज़दीक आने देते हैं। प्रेमी, तू खुद उसे मजबूर कर रहा है कि आश्रम सेवा में आ जाए तो मुझे सहूलियत हो जाए। दूसरा इधर अमीर–ग़रीब का सवाल नहीं है। ग़रीब आदमी ज़्यादा श्रद्धावान होता है और शरीर से सेवा करने वाला होता है। यह सोचते हैं कुछ इस सत्मार्ग पर चलने की सूझ वाला होना चाहिए। खाली प्रेमियों की भरती नहीं करनी, संख्या नहीं बढ़ानी। इस योग विद्या को धारण करने के वास्ते कितना–कितना अर्सा पहले आश्रमों में पढ़ा जाता था। आत्मा और शरीर क्या है? इनका सम्बन्ध क्या है? किस तरह आत्मा का बोध किया जाए? अच्छे त्यागी, वैरागी, सूझ वाले को इस विद्या में डाला जाता था। जिसका इस मार्ग में शौक न होता था उसे संसार मार्ग में प्रवृत्त किया जाता था। आज जो आता है कहता है, महाराज जी, नाम दो, योग कैसे किया जाता है?" यह इस वास्ते नज़दीक आने देते हैं, चलो थोड़ा अच्छे रास्ते पर चलकर संसार और अवगुणों से बचे रहेंगे। इनको चेले बनाने का शौक नहीं। मालिक का हुक्म बजाने के वास्ते जगह–ब–जगह जाना पड़ गया है, वरना ऐसी स्थिति वाले कब बात करते हैं। अपनी मौज आनन्द में बैठे रहते है। गंगोठियां का ख़्वाजा जंगल तुमने देखा हुआ है। कभी–कभी कई रात–दिन गुज़र जाते थे, किसी को पता न लगने देते थे। उस मालिक का बड़ा

ज़बरदस्त हुक्म है। जिस झाड़ के नज़दीक बैठकर तुमने पहली दफ़ा शब्द लिखे थे, वह इनका असली ठिकाना था। कितनी खौफ़नाक एकांत जगह थी। आने-जाने वाले, किसी राह गुज़रने वाले को पता न लगता था। प्रभु की अपार कृपा रही है। तुम्हें इस वास्ते सुनाते हैं। अनपढ़ के अन्दर जो बात बैठ जाए वह अच्छी तरह दृढ़ कर लेता है, यह ठीक है। ख़बरदार तुम ज़ोर दो कि गुरु-मंत्र ले लो। इस मार्ग में बड़े-बड़े समझदार और सूझ-बूझ वाले भी रह जाते हैं। साधारण जीव आगे निकल जाते हैं। पढ़े-लिखे, चतुर बुद्धि जीव चातर-फातर होते हैं। खाली बातों-बातों से दूसरों को तसल्ली देने की कोशिश में लगे रहते हैं। इनसे बनता-बनाता कुछ नहीं। दलीलबाज़ी में ही वक्त ज़ाया कर देते हैं। जिसने भी कुछ हासिल किया है, निर्मान होकर ख़ुदा की ज़ात को कर्ता-हर्ता मानकर किया है। नित ही उसकी इबादत में मुस्तग़र्क रहने वाला चाहे अनपढ़ हो ख़ुदी से अबूर पा जाता है। हर समय डरते रहना चाहिए। मन का मान पल में गिरा देता है। बस 'तू' में ख़त्म होता रहे। आप ही किसी समय रोशन-ज़मीर हो जाता है।"

इतना फरमाकर बाहर चले गए। वापिस आकर हाथ धोए, फिर कई प्रेमी भी आ गए और प्रणाम किया। बैठकर विचार करने लगे। कुछ प्रशाद लाए थे, पास रख दिया था। सत्पुरुष ने फरमाया:- "प्रशाद तक्सीम कर दो। प्रेमी कहने लगे:- नहीं-नहीं महाराज जी! यह आपके वास्ते लाए हैं।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "प्रेमी जी! इन्होंने जो लेना था वह सुबह ही ले लिया है। यह फल-आहारी संत नहीं, न अन्दर बैठकर छुपकर खाने वाले हैं। यह सब बाँटने के वास्ते ही होता है। इधर कोई चीज़ संग्रह करने की इजाज़त नहीं है। जब ज़रूरत पड़ी फिर आपको कहा जावेगा। आजकल संतों के डेरों पर रिवाज़ बना हुआ है जो फल, मेवा, वस्तु आई उनको प्रेमी झट उठाकर अन्दर या एक तरफ रख देते हैं। जब लोग चले गए फिर अच्छी तरह खूब उड़ाया। यह न तो खुद खाते हैं न किसी को खाने देते हैं। जो चीज़ आती है तक्सीम कर दी जाती है। प्रेमी जी, जिनकी कहनी और रहनी और होती है और बाहरमुखी वृत्ति होती है, कह तो देते हैं कि संत खाते कुछ नहीं, मगर जब कोई सामने न हुआ तो जो आया हड़प कर लिया। ऐसे स्वान वृत्ति वाले का धर्म ईमान नहीं होता। सबका पता है। सामने ढेर लग जाते हैं। इतना प्रशाद आता है अगर सामने ही खायें इनको कौन मना करने वाला है? मगर प्रोग्राम पर चलना ही ठीक रहता है। प्रेमी, तुम नाराज़ न होना। इधर रखने की इजाज़त नहीं है। कुछ बांट दो, कुछ इनको दे दो, घर बच्चों को दे देंगे। असली प्रशाद यह ही है, जो यह कहते हैं उसे सुनकर मानोगे तो अच्छी बात है। यह अच्छी बात है, जिस जगह जाओ कुछ दर्शन भेंट ज़रूर होनी चाहिए। यह प्रशाद तुम इनकी तरफ से ले जाओ। रात को सत्संग होगा उसमें आकर विचार सुनना।" शाम के सात बज रहे थे। फरमाया:- "प्रेमियो! जाओ इस खलड़ी में कुछ डाल आओ।" प्रेमी जाने ही लगे थे कि अबोहर निवासी प्रेमी चरणों में पहुंच गए। वह रोज़ाना सत्संग के वक्त आ जाते और दस बजे रात की गाड़ी से वापिस चले जाते।

3 अप्रैल की रात को सत्संग में अच्छी रौनक थी। संगत खूब एकत्र हुई थी। आठ बजने वाले थे। श्री महाराज जी ने सत्संग शुरू करने की आज्ञा फरमाई। महामंत्र, मंगलाचरण उच्चारण करने के बाद अमृत वाणी के शब्द पढ़े गए।

55. सत् उपदेश-अमृत

शरीरों को धारण करके जीव को इनके खेल का सब पता है। मगर शरीर के अन्दर जो बोलनहारा है उसको किसी विरले ने ही समझा है। जीव को जन्म से ही खाने-पीने, देखने-सुनने, प्रेम, क्रोध हर बात की अवस्था के मुताबिक समझ है। यह मेरा सम्बन्धी, यह मित्र है, यह दुश्मन, और भी संसारी हालात की तरफ बुद्धि दौड़ती है। पशु, पंछी, जड़ योनियों के जीवों को इतनी तमीज़ नहीं होती जितनी मनुष्य चोले के जीव को। जितनी-जितनी नीच गति को जीव प्राप्त होता है। उतनी-उतनी तमीज़ भी उसे कम होती है। केवल मनुष्य जामे में इसे अच्छी तरह हर बात का ज्ञान होता है। मनुष्य में भी जड़ बुद्धि के जीव होते हैं, जिनकी बुद्धि पशुओं से भी गई गुज़री होती है। जैसा-जैसा जीव कर्म करते हैं उनके अनुसार ही उनकी शक्ल व सूरत भी बनती चली जाती है। एक भजनीक सेवादार जो अच्छा पुण्य-दान करने वाला है उसे देखकर चित्त प्रसन्न होता है। एक बकरे काटने वाले जल्लाद की शक्ल देखकर भय लगता है। नेक व बद-कर्मों का असर जीव के चेहरे से ही ज़ाहिर हो जाता है। अच्छा कर्म जिस जगह भी रहकर किया जावे सुख स्वरूप ही होगा। दूसरे देखने वाले भी धन्य-धन्य करेंगे। खोटा कर्म करने वाले को हर जगह ही लानत मिलेगी। विचार यह है कि संसार में जितने भी शरीरधारी जीव हैं। उन सबमें श्रेष्ठ बुद्धि रखने वाला मनुष्य चोला ही है। इस देह में जीव सत्-असत् का अच्छी तरह विचार कर सकता है। वैसे जीव दिन-रात जो कर्म करता है सबके सब शरीर की रक्षा और पालन-पोषण के लिए करता है। अज्ञानवश होकर यह समझता है कि इन्द्रियों के भोग ही सब कुछ हैं। इनको हासिल करके इनके द्वारा ही चित्त को शांति प्राप्त हो सकती है। इस भूल में कई जन्म-जन्मांतर शरीरों को धारण किए हुए गुज़र जाते हैं, मगर इसको तृप्ति, शांति नहीं मिलती। एक ऐसे जीव हैं जो धन के ज़रिये हासिल किए हुए पदार्थों द्वारा इन्द्रियों के सुख भोग एकत्र करने में शांति समझते हैं। इस धन को हासिल करने के वास्ते सात्विक, राजस कर्म करते हुए जीवन गुज़ारते हैं। कभी-कभी तमोगुणी कर्म भी कर जाते हैं। ऐसे जीव दरमयानी दर्ज़े के जीव होते हैं और यह आम होते हैं। कोई जीव ऐसे जड़ बुद्धि वाले भी होते हैं जो चोरी, ठगी, कत्ल वग़ैरा करके दूसरों के धन-माल को लूट कर अपने सुख प्राप्त करते हैं यह तीसरे दर्ज़े के बेहोश तमोगुणी जीव हैं। इन सबसे श्रेष्ठ वे हैं जो भजन, बंदगी करके जनता की सेवा में समय गुजारते हैं। सेवा और सत् सिमरण ही अपना धर्म समझते हैं। सच्ची शांति को हासिल करने के वास्ते बड़े-बड़े सत्कर्म, यज्ञ, पुण्य, दान करते हैं। जो भी अच्छा कर्म करते हैं। सब प्रभु-परायण होकर करते हैं। प्रभु-परायणता ही असली धर्म, बन्दगी, तपस्या है। सब गुरु, पीर, अवतारों, पैग़म्बरों का यह ही मत रहा है। मनमति लोगों ने कई तरीके इख़्तियार कर

रखे हैं। रब्ब की रज़ा, वाहे गुरु का भाना, ईश्वर आज्ञा का एक ही मतलब है। होना न होना सब उसकी आज्ञा में विचार करना यह गुरमुखों का मत है। कई तरह के तप, पुण्यदान, तीर्थ, स्नान करके उनका मानी बनना यह मनमुखों का मार्ग है। मनमुखी जीव कभी भी सच्ची शांति को प्राप्त नहीं हो सकते। इस समय की यह हालत है:

''शर्म धर्म दोए छप खलोए, कूड़ फिरै प्रधान वे लालो''

यह शब्द नानक ने कहे हैं। यह कथा इस तरह है कि नानक किसी गांव में गए। वहां बहुत से साधु, फ़कीर और लोग भी जमा थे। उन्होंने भी वहां डेरा लगा लिया। वहां पठानों के घर शादी हो रही थी। सब उसी जगह नाच-गानों में मस्त हो रहे थे। किसी ने फ़कीरों से अन्न-पानी तक न पूछा। यह तमाशा देखकर नानक ने महसूस किया और यह शब्द कहे:

जैसी मैं आवे खसम की बाणी, तैसड़ा करी बखान वे लालो॥
पाप की जंज लै काबलो धाया, जोरी मंगै दान वे लालो॥
शर्म धर्म दोए छप खलोए, कूड़ फिरै प्रधान वे लालो॥

ये शब्द और भी हैं। मतलब यह कि जिस घर में नानक ठहरे थे वह ब्राह्मण का घर था। ब्राह्मण कहने लगा:- "इस संत ने बड़े गुस्से, क्रोध विच आकर शब्द बोलया है। सब मिलके माफ़ी मांगो और अर्ज़ करो कि यह शब्द वापिस लौटा लें।" सबने ऐसा ही किया। नानक जी ने फरमाया:- "जो तीर कमान से निकल जाता है वह लौटा नहीं करता। तुम इस जगह को छोड़ दूसरी जगह, तीन-चार कोस पर जो जगह है, वहां चले जाओ।" नानक भी वहां से उठकर दूसरी जगह दूर जा बैठे। काबुल की तरफ से बाबर चढ़ाई करके आ रहा था। उस जगह पहुंचकर उसने हिन्दू, मुसलमानों को मौत के घाट उतारना शुरू कर दिया। जो लोग दूर चले गए थे सब कहने लगे:- "जिस जगह फ़कीरों को दु:ख दिया जाता है वहां ऐसे ही बर्बादी हो जाती है। हम तो संतों की कृपा से बचकर आ गए हैं।" संतों का कहा मानने में सुख होता है। किसी ज़ात-ज़मात का साधु हो सब ही नमस्कार योग्य हैं। नानक ने उस जगह को आकर देखा जहां कत्लेआम हुआ था। देखकर कहने लगे-कि मर गई वह शान व शौकत। इस गांव में दो रोज़ पहले खूब धूम-धाम हो रही थी। अमीर-ग़रीब जो बड़े बेफ़िक्री से रह रहे थे, किधर गए। मुग़ल और पठानों की लड़ाई ने कितनी अन्धेरगर्दी मचा दी है। हिन्दू-मुसलमान तबाह हो गए हैं। करन-करावनहार प्रभु आप हैं। ''जो तुद भावे, साईं भली कार''। दु:ख-सुख सब उसके भाने में हो रहा है। सब जीव प्रारब्ध कर्मों के भोग, भोग रहे हैं। नानक ने देखा सब तरफ मुगलों की दोहाई मच रही है। पठानों का हद से ज़्यादा कत्ल हो चुका है। वह उधर चले गए जहां बाबर का डेरा था। बाबर का असूल था, दिन के वक्त बादशाही करता था और रात के समय पांव में बेड़ी डालकर ख़ुदा को याद करता था। पांच वक्त की नमाज़ पढ़कर, कुरान पढ़कर, रोटी खाता था। नानक ने कैम्प के एक तरफ बैठकर मर्दाने से कहा:- "रबाब बजाओ।" बाबर ने जब आवाज़ सुनी, पता लगा कोई फ़कीर बाहर बैठा है।

सिपाहियों को हुकम हुआ, "उसको हाज़िर करो।" सिपाहियों ने जब नानक को ले जाकर बाबर के सामने पेश किया तो बाबर ने कहा:– "जो तुम गा रहे थे फिर सुनाओ।" शब्द सुनने के बाद कहने लगा:– "संत साहेब! मुझे भांग पीने का बड़ा शौक है।" सोने के प्याले में डालकर आगे करते हुए कहा कि आप भी नोश फरमायें। आगे से नानक ने कहा:– "हमने तो वह भांग पी हुई है जिसका नशा उतरता ही नहीं।" कई सवाल व जवाब हुए। आख़िर बाबर ने जान लिया कि यह तो कोई पहुंचा हुआ फ़कीर है। वली–अल्लाह है। उस वक्त कहा:– "आपको जिस चीज़ की ज़रूरत है ले लीजिए। कहें तो जागीर दे सकता हूं।" आगे से नानक ने जवाब दिया:– "जो ख़ुदा, परमात्मा सबका राज़क रोजी रसां है, जिसका दिया हुआ सब जिया–जन्त खा रहे हैं, उसको छोड़कर और किसी के आगे मांगने के लिए हाथ नहीं फैलाया जावेगा।"

''कहे नानक सुन बाबर मीर
जो तुझ से मांगे सो अहमक फ़कीर॥''

कड़क कर जवाब दिया। जब ऐसा जवाब सुना, बाबर को होश आया और समझा यह कोई सच्चा साधु है। उससे वसाले–हक का रास्ता पूछना चाहिए। तब बाबर ने अर्ज़ की:– ''हज़रत मोहम्मद साहब ख़ुदा के दोस्त हैं, उनकी सिफ़ारिश से स्वर्ग नसीब होगी''। नानक ने जवाब दिया:

एक साहब एको खुदाए। खालिक सच्चा बेपरवाहे।।
कई मोहम्मद खड़े दरबार। पार न पावे बेशुमार।।
रसूल रसाल दुनिया में आया। जब चाहे पकड़ मंगाया।।
पाक खुदा और सब बन्दे॥

यह सुनकर बाबर सोच में पड़ गया। नानक साहब ने कहा:– "यह जितने कैदी तूने बना रखे हैं सबको छोड़, अगर तू खुदा की मेहर चाहता है।" फिर कहा:– "बाबर मांग क्या चाहता है"? तब बाबर ने आजज़ी से कहा:– "मेरी बादशाहत पुश्त–दर–पुश्त चले।" तब नानक ने कहा, "जा सात पुश्त तेरी बादशाहत चलेगी।"

तब बाबर ने खुश होकर सब कैदी छोड़ दिए और बड़े आदर सत्कार से नानक साहेब को विदा किया और वह करतार पुर आ गए। जिसको परमात्मा बरकत देता है, उसके अन्दर अक्ल भी वैसी ही आ जाती है। ताकत इतनी थी कि दो आदमियों को बगल में दोनों तरफ दबाकर दौड़ लेता था। उसे कोई पकड़ न सकता था। फ़कीर के आशीर्वाद से वह रंग लगा कि मुगल कितनी मुद्दत तक राज करते रहे। बादशाहों के अन्दर भी फ़कीरी ताकत होती है, तब ही उनके हुक्म के आगे दुनिया झुकती है।

किसी मज़हब की निन्दा नहीं करनी चाहिए। मुसलमानों के अन्दर ख़ुदा का यकीन, आजज़ी का मादा हद से ज़्यादा होता है। यह अलग बात है उनके अन्दर अनपढ़ हैं, इसलिए मौलवी वग़ैरा उल्टे रास्ते लगा देते हैं। हर मज़हब के अन्दर ऐसे लोग होते आए हैं, सही रास्ते से भटका देते हैं। हिन्दू कौन ईश्वर को मानने वाले हैं। यह भी पत्थर पूज मुर्दों को याद करने वाले हैं। सकून ईश्वर

की याद और निर्मानता, आजज़ी में है। जिन्होंने प्रभु–परायण होकर ज़िन्दगी गुज़ारी है, चाहे वह पूरब में हुए या पश्चिम में, सब नमस्कार योग्य हैं। मूर्ख दुबिधाधारी हर ज़माने में होते आए हैं। हर युग में ज़ालिम–जाबर हो गुजरे हैं। दुर्योधन ने कब कृष्ण की बात मानी थी। द्रौपदी को सरे दरबार नंगा किया गया। शराफ़त किधर चली गई थी। आख़िर कौरवों, पाण्डवों की दुबिधा क्या रंग लाई? मनमुखों का हर समय अपना–अपना रंग रहा है। गुरमुख निर्मानता में वक्त गुज़ार कर खुद भी ठंडक को प्राप्त हुए और दूसरे को भी शांति का मार्ग दिखाया। ईश्वर ही अक्ल बख़्शें, सत्बुद्धि देवें, जिससे अपना भला–बुरा सोच कर सच्चा रास्ता पकड़कर अपनी मुक्ति आप करें।

फिर 'समता स्थिति योग' प्रसंग के शब्द पढ़े गए और आरती, मंगलाचरण उच्चारण करने के बाद सत्संग समाप्त हुआ और प्रशाद बांटा गया। श्री महाराज जी ने पूछा:– "किसी का कोई विचार है?"

एक प्रेमी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! हमें किस तरह सेवा, भक्ति करनी चाहिए? जो कर्म किया जावे उसे किस तरह प्रभु के समर्पण करें?"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी! 'जीव दया और आत्म पूजा, तिस समान धर्म नहीं दूजा'॥ व्यौहार करते समय जायज़ मुनाफ़ा लेना हक है। चाहे छोटा आए चाहे बड़ा, सबसे एक जैसा सलूक करे। जब–तक व्यौहार और संगत की पवित्रता नहीं आती तब–तक बुद्धि शुद्ध नहीं होती। नित का कर्म पवित्र करो। जो भी तुमसे सौदा लेने आए उसे ईश्वर रूप जानो। उससे नेक बर्ताव करो। उसे ठीक चीज़ दो, ठीक रकम लो। वह भी खुश जाए और तुम्हारा काम भी हो जाए। खोटी कमाई आती हुई अच्छी लगती है, मगर जब उसके जाने का समय आता है तब बहुत दुःख देती है। हक की कमाई तीन काल सुखदाई है। फिर हक की कमाई करके पुण्य–दान करो। ग़रीब यतीमों की सेवा करो। बिना किसी ख़्वाहिश के सेवा करते हुए यानि निष्काम भाव से करके ईश्वर अर्पण कर दो। ऐसा मन का शुद्ध भाव बनाओ। फिर आहार भक्ष्य–अभक्ष न हो। पवित्र सादा दाल–रोटी सेवन करें। लाल जी, ऐसा जीवन बनाओ जिससे मन, तन ठंडा रहे। दो घड़ी सुबह व शाम मालिक की याद, जैसी किसी गुरु ने बताई हुई है, प्रेम से करो। किसी का दिल न दुखायें। ज़बान के पक्के रहना चाहिए। किसी से कोई वायदा करो तो उसे पूरा करो और हर कीमत पर निभाओ। घर में बुज़ुर्गों की सेवा का लाज़मी ख़्याल रखो। अपने पुराने ग्रन्थों, शास्त्रों का विचार करें। सत्पुरुषों, संत–महात्माओं की संगत में समय दें। इस तरह सत्कर्म करते–करते आप ही रंग लग जावेगा। अगर सत् का कुछ चाव हो तो मालिक आप ही राह खोल देता है। प्रेमियों, जो कुछ सुना है इसे दिल के कोने में जगह देना। नेक अमल की रत्ती भी भाग्यशाली बना देती है। फ़क़ीरों ने ईश्वर का हुक्म सुनाना है। मानोगे तो सफलता प्राप्त कर लोगे। यह गली–गली मांगने वाले फ़क़ीरों में से नहीं हैं। जिस कदर दिल लगा कर वचन मानोगे उतनी ही बुद्धि रोशन होगी, पर–उपकारी जीवन बनेगा। सुबह इधर से जाने का विचार है। फिर कभी समय मिला, दर्शन मेला हो जावेगा। अब बहुत समय हो गया है। जाओ, अब आराम करो।" अबोहर के प्रेमियों को भी फरमाया:– "गाड़ी का समय होने वाला है, अब जाओ।" अगर किसी प्रेमी को समय मिले बेशक अम्बाला आ

सकता है। इस दफा आप लोगों ने खूब समय लिया है और खूब सेवा की है। ईश्वर कमाई सफल करें।" प्रेमी प्रणाम करके जाने लगे।

प्रेमी गंगा राम भी बैठा था। अर्ज़ की:– महाराज जी! मुझे क्या आज्ञा है?

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! कैसी आज्ञा? काम तुम्हारा हो चुका है और क्या चाहते हो? साथ तो फ़कीर किसी को रखते नहीं। संगत सेवा के वास्ते हफ्ता दो हफ्ता पहले चले आना, फिलहाल इधर ही रहकर समय गुज़ारो। भजन भी करते जाओ। इधर तुम्हें कोई ख़ास पाबंदी नहीं। चौधरी जी यह न कहें कि अच्छे महात्मा आए हमारे आदमी को ले गए हैं।"

56. अम्बाला में अमृत वर्षा

रात के तीन बजे गाड़ी अम्बाला की तरफ जाती थी। 17 अप्रैल, 1951 को उसमें सवार होना था। चौधरी हरजी राम जी डेढ़ बजे आ गए और आकर ब्रह्म सत्यम् की और कहा कि उठो भक्त जी, सुस्ती हटा लो। सत्पुरुष उस वक्त बैठे हुए थे और समाधिस्त थे। सवा दो बजे सब स्टेशन पर पहुंच गए। गाड़ी आ गई। सब उसमें सवार हो गए और सब प्रेमियों ने श्री महाराज जी के चरणों में प्रणाम किया और गाड़ी से उतर गए। गाड़ी भटिंडा के लिए रवाना हो पड़ी। वहां से चलकर अम्बाला पहुंची। आगे अम्बाला निवासी प्रेमी व बाबू अमोलक राम जी व हकीम नत्थू राम जी जगाधरी से पहुंचे थे। सब स्टेशन पर इंतज़ार कर रहे थे। जब गाड़ी स्टेशन पर पहुंची, सबने श्री महाराज जी को देख लिया और गाड़ी के साथ-साथ दौड़ते रहे। जब गाड़ी खड़ी हुई श्री महाराज जी उतरे। सबने प्रणाम किया। और 'ओ३म् ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार' के नारे लगाए। प्रेमियों के अलावा और भी श्रद्धालु सेवा के लिये स्टेशन पर आए हुए थे और एक लारी भी लाए थे। प्रार्थना करके श्री महाराज जी को इसमें बिठाकर शहर के नज़दीक लभ्भू राम के तालाब के पास सनातन धर्म वालों की बगीची के एक कमरे में, जो काफी खुला था और जहां प्रेमियों ने प्रबन्ध करके आसन लगाया हुआ था, वहां ठहराया गया। बलदेव नगर कैम्प से भी प्रेमी आए हुए थे। जब आप आसन पर बैठे, सबने चरणों में प्रणाम किया। कई माताएं भी आई हुई थीं, उन्होंने भी प्रणाम किया। थोड़ी देर ध्यान-मग्न रहकर आँखें खोलकर सबसे कुशलता पूछी।

अबोहर निवासियों ने जो दस हजार रुपये की सेवा की थी वह बाबू अमोलक राम जी को भेज दिया था। मगर बाबू जी ने ज़मीन नहीं खरीदी थी, क्योंकि ज़मीन की कीमत वह बहुत ज़्यादा मांग रहा था। रुपया उन्होंने बैंक में जमा करवा दिया था। जब श्री महाराज जी के अम्बाला आने की सूचना बाबू जी को पहुंची तो वह जब दर्शनों के लिए रवाना हुए तो चौधरी गोवर्धन सिंह भी साथ रवाना हो गए। आश्रम की दीवार के उत्तर की तरफ उस जमीन से, जिसका सौदा हो रहा था और जो दक्षिण की तरफ थी बिलकुल बिलमुकाबिल सामने इतनी ही यानि बारह बीघे जमीन चौधरी गोवर्धन के भाई चौधरी नैन सिंह की थी जो दिल्ली में मुलाज़िम थे।

जब श्री महाराज जी कुछ देर आसन पर अम्बाला बगीची के कमरे में विश्राम कर चुके तो वहां से उठकर बाहर तशरीफ़ ले गए और बाबू जी को साथ ले लिया। बाहर जाकर बाबू जी से ज़मीन के बारे में पूछा। बाबू जी ने अर्ज़ की:– महाराज जी! ज़मीन की कीमत बहुत ज़्यादा मांगी जा रही है, इसलिए सामने चौधरी गोवर्धन के भाई नैन सिंह की ज़मीन है जो उतनी ही है जितनी कि जनेश्वर बनिया की। अगर इन्हें कहा जावे जो यह कुर्बानी कर जायेंगे क्योंकि यह राजपूत हैं और ज़मीन सही कीमत पर मिल जाएगी। महाराज जी ने उनको कहा:– चौधरी जी! जो आश्रम के लिए ज़मीन ली जा चुकी है वह तंग है और साथ वाली ज़मीन उनके भाई की है। वह प्रबन्ध करके आश्रम को दे देवें ताकि तंगी दूर हो जावे। चौधरी गोवर्धन ने वायदा कर लिया और अर्ज़ की:– वह जरूर कोशिश करके सौदा करवा देगा। चौधरी गोवर्धन सिंह तो प्रणाम करके वापिस आ गए और बाबू जी कुछ दिनों के लिए अम्बाला ठहर गए।

दरअसल चौधरियों के घरों वग़ैरा का तमाम इन्तज़ाम उनके भाई सुरजीत सिंह के सुपुर्द था। चौधरी गोवर्धन सिंह ने वापिस आकर उससे बातचीत की और फिर चौधरी नैन सिंह से भी पत्र व्यवहार शुरू हो गया। जब बाबू जी वापिस आए कुछ अर्से के बाद चौधरी नैन सिंह जी भी दिल्ली से आकर आश्रम में बाबू जी के पास गए और वायदा कर दिया गया कि वह ज़मीन दे देंगे और अपने भाई सुरजीत सिंह को कह दिया कि वह ज़मीन देने का प्रबन्ध कर देवें और आश्रम के साथ वाली ज़मीन ले लेवे। बाबू जी ने अर्ज़ की:– जो कीमत वह चाहते हैं उस ज़मीन की ले लेवें और खुद वह ज़मीन खरीद कर लेवें। मगर चौधरी सुरजीत सिंह नहीं माना और ज़ोर दिया कि आश्रम अपने नाम वह ज़मीन खरीदे और फिर ज़मीन का तबादला कर लिया जावेगा।

बाबू जी ने उस जमीन का सौदा कर लिया। वह ज़मीन करीबन छः बीघे आश्रम की ज़मीन से ज़्यादा थी। बाबू जी ने दौड़–धूप करके वह ज़मीन खरीद ली। रजिस्ट्री करवा ली और फिर पटवारी से मिलकर तबादला करवाकर वह जमीन राजपूतों को दे दी और साथ वाली ज़मीन का कब्जा ले लिया गया। यद्यपि ऐसा करने में काफी समय लगा मगर ऐसा करने से दस हज़ार रुपया से काफी रुपया बाबू जी के पास बढ़ गया और फिर श्री महाराज जी की आज्ञानुसार चौधरी इन्द्र सिंह से जो कि चौधरी गोवर्धन सिंह वग़ैरा का रिश्तेदार था और जिसकी वह ज़मीन थी जिसमें ट्यूबवैल लगा है पुख़्ता सड़क की तरफ गैट भी निकाला हुआ है, उसका सौदा कर लिया। लोगों ने और चौधरी इन्द्र सिंह के रिश्तेदारों ने बड़ी कोशिश की, कि वह जमीन आश्रम को ना देवे, मगर वह नही माना और कहा कि उसने वायदा कर दिया है कि वह ज़मीन जरूर आश्रम को देगा। बाबू जी ने वह ज़मीन भी खरीद ली। यह बीस–बाईस बीघा ज़मीन थी। इसके बावज़ूद बाबू जी के पास उन रुपयों में से काफी रुपया बच गया था जो अबोहर से आया था।

इसके बाद श्री महाराज जी ने वापिस आकर स्नान किया और दूध सेवन किया। प्रेमियों ने सत्संग अमृत वर्षा से लाभ उठाने का समय मांगा। कृपा करते हुए सत्पुरुष ने शाम के साढ़े पांच बजे का समय सत्संग के लिए निश्चित किया और एक प्रेमी ने उठकर सब संगत में उसके मुतालिक एलान कर दिया और कह दिया कि वक्त पर प्रेमी सत्संग में शामिल होकर अमृत वर्षा का लाभ

उठायें, और यह भी एलान कर दिया कि सत्पुरुष सुबह बाहर से आकर नौ बजे स्नान वग़ैरा से फ़ारिग़ होकर आसन पर जब विराजमान होंगे, कोई भी प्रेमी अपने संशय निवारण करना चाहे तो हाज़िर होकर निवारण कर सकता है।

प्रेमियों ने कमरे से बाहर एक तरफ खाली जगह को अच्छी तरह साफ करके श्री महाराज जी के लिए एक जगह ज़रा ऊंची आसन के लिए बना दी। मिट्टी का थला कई फुट ऊंचा कर दिया। श्री महाराज जी ने जब उसे देखा तो फरमाया:– "फ़कीर संगत से ऊंचा बैठने के खिलाफ़ हैं। यह ठीक नहीं।" प्रेमियों ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! चूंकि संगत बहुत आएगी पीछे बैठने वालों को अच्छी तरह दर्शन नहीं हो सकेंगे और न ही ठीक अमृत–वचन सुन सकेंगे और उठ–उठ कर देखेंगे और बाधा होगी। इसलिए मिट्टी का थला बनाकर ज़रा ऊंचा कर दिया गया है और तख़्तपोश वग़ैरा रखने से परहेज़ किया है और न ही इतना ऊंचा किया है कि किसी को एतराज़ न हो सके और पीछे बैठे प्रेमियों को आवाज़ ठीक पहुंच सके।"

शाम को साढ़े पांच से पहले ही संगत आनी शुरू हो गई और वक्त से कुछ पहले ही आपने सत्संग शुरू करने की आज्ञा फरमाई। महामंत्र व मंगलाचरण से सत्संग शुरू किया गया। फिर प्रभु महिमा के 'सत् अनुराग सरोवर' से शब्द पढ़े गए। फिर सत्पुरुष ने निम्नलिखित अमृत वर्षा फरमाई:–

57. सत् उपदेश–अमृत

"प्रेमियों, अपना दुःख हम को दे दो, यहां से ठंडक लेकर जाओ। संसार में जीव मानुष चोला इस वास्ते धार कर आया है कि हरि की भक्ति करे। यह नहीं कि सारा जीवन यात्रा का समय भोगों के भोगने में ही सर्फ़ कर दे। मानसिक कष्ट तब ही दूर हो सकते हैं जब सही मायनों में प्रभु परायण होंगे। देह परायणता नित ही दुःख देने वाली है। आज–तक किसी ने भी संसारी भोग पदार्थों को हासिल करके सच्ची शांति प्राप्त नहीं की। रात–दिन धन के एकत्र करने में लगे रहने से क्या बना? ज़रा विचार करके देखें। केवल शरीर की पूजा में यानि खान–पान और इसके बनाव श्रृंगार में सारा वक्त ज़ाया कर दिया और आख़िर मिला क्या? कभी विचार करके नहीं देखा। मन की वासना को पूर्ण करने के लिए ही इसकी दौड़–धूप लगी रहती है। कभी इसने नहीं सोचा कि किधर से आना हुआ है और किधर जा रहा हूं? आख़िर इस शरीर के अन्त पर क्या होगा? जैसे और पशु समय व्यतीत कर रहे है, यह मानुष भी खाने–पीने, पहनने वग़ैरा में समय नष्ट कर देता है। इन्द्रियों द्वारा जितने भी सुख–पदार्थों के भोग प्राप्त किए जाते हैं, इन सुखों का अन्त दुःख रूप हो जाता है। जीव सत् विचार हासिल करने की कोशिश ही नहीं करता। कुदरत की जितनी भी चीज़ें दिखाई दे रही हैं, सबसे सबक हासिल कर सकते हो, कोई चीज़ ऐसी नज़र नहीं आयेगी जो सुख देने वाली न हो। सुख देकर इसके बदले, यह एवज़ाना नहीं लेती। यह मानुष ही है जो बग़ैर ग़र्ज़ के कोई काम नहीं करता। ज़रा ग़ौर करके विचार करें, कौन ऐसे जीव होते हैं जो इस संसार से

तृप्त होकर जाते हैं? यह जीव आशा तृष्णा को लेकर शरीर धारण करता है और इन्हें पूर्ण करने के यत्न करता हुआ समय व्यतीत कर देता है, मगर यह पूर्ण नहीं होतीं, बल्कि और वासनाओं को लिए हुए यह चल देता है और दूसरा शरीर इनकी पूर्ति के लिए धारण करता है। जिन पुरुषों ने संसार में आकर इसे ग़ौर से देखा, उन्होंने देखा कि इस दिखने वाले संसार की सब वस्तुएँ दु:ख रुप हैं। जितने नाम, रूप, गुण, कर्म नज़र आ रहे हैं, सब बदल रहे हैं। इनसे सच्ची शांति, ठंडक नहीं प्राप्त हो सकती। जिस वस्तु के प्राप्त होने पर कुछ पाना बाकी नहीं रहता, उन्होंने उस वस्तु को प्राप्त किया। राम, कृष्ण, ध्रुव, प्रहलाद, कबीर, नानक, ईसा, मूसा, मोहम्मद, गौतम, ऋषियों, मुनियों ने अपनी कल्याण करके आदर्श जीवन पेश करके समझाया कि ''झूठ संसार है, सत् करतार है''। पशुओं इत्यादि को छोड़ो, बड़े-बड़े राजे, महाराजे, दाने-बीने, आलम मोह जाल में ऐसे फंसे हुए हैं कि उन्हें समझ नहीं आ रही है कि करना क्या है? चतुराई, चालाकी, नुमायशी जीवन दिन-दिन बढ़ रहा है। संसारी सुखों की रग़बत कई तरह की ठगी-ठगोली की तरफ जीवों को ले जा रही है गुरु, पीरों ने कहा है कि जब-तक जीव अपना अमली जीवन न बनावे, सब पूजा, पाठ थोथे बनकर रह जावेंगे। स्वार्थ की बढ़ती हुई आग को धर्म-परायण होकर शांत कर सकते हो। ईश्वर ही सबको इस समय सद्बुद्धि देवें। थोड़े दिनों के लिए तुम्हारे शहर में आना हुआ है। समय निकाल कर रोशनी लेने की कृपा करें। यह लेने के लिए कुछ नहीं आए कुछ देकर ही जावेंगे। साधु-प्रणाली इस समय स्वार्थ में डूब रही है, तुमको सबक कौन दे?" फिर हाथ जोड़ दिए। 'समता विज्ञान योग' के 'आनन्द सार' प्रसंग से शब्द पढ़े गए और आरती और समता-मंगल उच्चारण करने के बाद सत्संग समाप्त हुआ और प्रशाद बांटा गया।

एक बुजुर्ग प्रेमी ने अर्ज़ की:- महाराज जी! ऐसे सत्संग कब जनता को मिलते हैं? आपने इस शहर में बड़ी कृपा की है। 'संत समागम हरि कथा, तुलसी दुर्लभ दोए', कृतार्थ कर दिया है।

नोटः सत्पुरुष के अमृत-वचन उन्हीं के शब्दों में लिखना अति कठिन है। सिवाय शुरू के चंद एक लिखकर बाकी सुनकर बाद में लिखे जाते रहे हैं। यह मुकम्मल नहीं कहे जा सकते, उनके अमृत वचनों का सारांश कहा जा सकता है।

श्री प्रभु दयाल जी ने अर्ज़ की:- महाराज जी! संगत के प्रशाद की उन पर कृपा की जावे और आपके लिए जो आज्ञा हो वह भेज दिया जावे। श्री महाराज जी ने फरमाया:- प्रेमी! यह तो दिन में एक दफ़ा सुबह के वक्त दूध लेते हैं। प्रेमियों से पूछो इनका क्या प्रोग्राम है? प्रेमी सरदार राम सिंह जी ने प्रशाद निश्चित कर रखा था। श्री महाराज जी ने फरमाया:- पहले उनका लंगर ग्रहण करो। प्रेमी राम सिंह गोलड़ा-शरीफ़ ज़िला रावलपिंडी में भी इस तरह संगत सेवा किया करते थे। अब फिर वह पुराना दृश्य पेश किया। इसके बाद बारी-बारी सब प्रेमियों को सेवा का मौका मिलता रहा।

श्री महाराज जी इस जगह भी सुबह-सवेरे सवा तीन बजे उठ कर राजपुरा जाने वाली सड़क पर चल पड़े। प्रेमी भी साथ गए। घग्घर नदी पर पहुंच कर नदी के पुल से परली तरफ उतरकर गड़वी लेकर एक तरफ चले गए। प्रेमी जगन्नाथ, बाबू अमोलक राम, एक दो और प्रेमी पुल की

ओट में बैठकर कुछ देर विचार करके इधर–उधर बैठकर अभ्यास करने लगे। सुबह सवा छः बजे महाराज जी वापिस आए। सबने प्रणाम किया। उन्होंने पूछाः– इस जगह का क्या नाम है? बताया गया घग्घर नदी है। श्री महाराज जी आगे–आगे सड़क पर चल रहे थे। उनके साथ बाबू अमोलक राम जी ही चल सकते थे। बाकी प्रेमी पीछे–पीछे चल रहे थे। आसन पर पहुंच कर कुछ देर बैठ कर स्नान किया गया। फिर दूध लाकर पिलाया गया। इस जगह सारा दिन प्रेमी आकर शंका निवारण करते रहते। सिख, समाजी, सनातन धर्मी सब आते और पूरी तसल्ली पाकर जाते।

17 अप्रैल के सत्संग में जो आपने अमृत वर्षा फरमाई वह मुख्यतः निम्नलिखित थी। सत्संग हमेशा की तरह महामंत्र व मंगलाचरण से शुरू किया गया, फिर वाणी पढ़ी गई।

58. सत् उपदेश–अमृत

जो भी जीव संसार में शरीर धारण करके आया है, अपनी कमी को पूरा करने के वास्ते आया है और इसे पूरा करने के यत्न–प्रयत्न में लगा रहता है। यह संसार कर्म–क्षेत्र है। इस क्षेत्र में जैसा–जैसा जीव शुभ–अशुभ या अच्छे–बुरे कर्म करता है, उनके अनुसार सुख–दुःख, लाभ–हानि, मान–अपमान प्राप्त करता हुआ आख़िर संसार को छोड़कर चल देता है। बड़े–बड़े शूरवीर, बलवान संसार में आए। कई गुरु, पीर, अवतार, ऋषि, मुनि भी आए। हज़ारों साल आयु भी पाई, मगर आख़िर संसार से जाना पड़ा। ऐसे ही पीर, वली, ईसा, मोहम्मद भी आकर अपना तेज़ दिखाकर चले गए। आम संसारी लोग इस संसार से रोते हुए गए। मगर ईश्वर के प्यारे, उसकी याद करने वाले खुशी–खुशी इस संसार से गए। जो भी जीव आया कुदरत ने उसका इम्तिहान लिया। हर एक शरीरधारी जीव को इस त्रैगुणी माया ने खूब नाच नचाया। मनमानी करने वाले पछताते हुए ही गए। उनका अहंकार तोड़ा। इसके उल्ट जिन्होंने प्रभु की याद और जनता की सेवा की वह ठंडक प्राप्त करके संसार से गए। जैसे–जैसे जीव शरीर धारण करके कर्म करता है, उसका एवज़ाना उसे भोगना पड़ता है। कर्म रेखा को कोई बदल नहीं सकता, ख़्वाहे अमीर हो या ग़रीब। कृष्ण ने दुर्योधन को कितना समझाने की कोशिश की। पांच गांव पांडवों को देने को कहा और बतलाया कि इसी में सबकी बेहतरी है। मगर उसने कहा, “जा–जा ग्वाला कहीं का, तू राजनीति क्या जाने?” होनी ने आख़िर क्या रंग दिखलाया? दोनों तरफ सफाया हो गया। गिनती के दस बारह आदमी बचे। कल की बात है, गुरुओं की कुर्बानी को देखो। गुरु गोबिन्द सिंह ने कैसे मुसलमान बादशाहों से टक्कर ली। बच्चे जंग में शहीद हुए। कुछ बच्चे सरहिन्द में नवाब ने दीवारों में चुनवा दिए। स्त्री ने छलांग लगाकर अपने–आपको ख़त्म कर लिया। अपने ही आदमियों ने लाताल्लुकी इख़्तयार कर ली और बे–दावा होने की तहरीर कर दी। मुक्तसर में जब वह शहीद हुए, उनमें से एक के कहने पर वह तहरीर फाड़ दी। आप फिर दक्षिण की तरफ चले गए और कैसे वहां मारे गए? रास्ते में बंदा–बैरागी से भेंट हुई। उसे पंजाब भेजा गया। जब पेट में पठान ने छुरा घोंप दिया, जख़्म बांध दिया गया। जख़्म अभी भरा नहीं था कि कमान पर चिल्ला चढ़ाने से टांके फट गए और परलोक

सिधार गए। इस होनी ने बड़ों-बड़ों को नचाया। राम जिन्हें अवतार मानते हैं उनको भी वनों की ख़ाक छाननी पड़ी। स्त्री सीता को रावण उठाकर ले गया, फिर इसके लिए कितना खून-खराबा हुआ। उस मालिक की रचना का कोई पार नहीं पाया जाता। मालिक के प्यारे हर समय उसके भाने के अन्दर रहकर सच्ची शांति हासिल करके सुख-दु:ख में समान रहते हैं। गुरु अर्जुनदेव तत्ते तवों पर बैठे कह रहे हैं-"ईश्वर, तेरा भाना मीठा लागे"। ऐसे लोगों ने ही भावी पर जीत पाई है। जीव जो सोचता है उसकी सारी इच्छायें पूर्ण नहीं हो सकतीं। द्वन्द्व, लाभ-हानि, यश-अपयश, मरना-जीना यानि ज़िन्दगी और मौत सबको ख़्वार कर रहे हैं। किसी की पेश नहीं जाती। जिन्होंने निष्काम भाव से प्रभु की आराधना की है वह ही इस चक्कर से छूट सके हैं और वही देवी, देव गुरु, पैग़म्बर, पीर, अवतार, ऋषि-मुनि कहलाए। मोहवादी जीवों की क्या गिनती हो सकती है? मक्खी, मच्छरों की तरह पैदा होकर नष्ट हो जाते हैं। गुरु नानक ने क्या खूब फरमाया हुआ है:

जित दर लख मुहम्मदा, लख ब्रह्मा महेश।
लख-लख राम वडेरिया, लख-लख राही देस॥
लख-लख ओथे जती सती, अत्ते सन्यास।
लख-लख ओथे गोरखा, लख-लख नाथां नाथ॥
लख गुरु चेले रहरास, लख-लख देवी देवते दानव लख निवास।
लख पीर पैग़म्बर औलिये, लख काजी मुल्ला शेख॥
किसे शांत न आया, रहनी बिन सतगुरु के उपदेश॥

फ़कीर लोग फक्कड़ होते हैं। असली गल कहते नहीं डरते। ईश्वर के प्यारों का कोई अन्त नहीं और उसकी माया का भी कोई अन्त नहीं। जिन्होंने कुछ पाया है निर्मान होकर ही पाया है। सबके ऊपर एक शक्ति काम कर रही है, वह ही मालिक और नाथ हैं। किसी ने उस मालिक का अन्त नहीं पाया। जप-तप करके उसे प्राप्त होकर भी आख़िर नेति-नेति कह दिया। इसलिए हर समय अपने-आपको अच्छे कर्मों में लगाए रखना चाहिए। इस संसार में जो भी शरीर धारण करके आया है आख़िर उसने लाज़मी संसार छोड़ना है। इस वास्ते इस न रहने वाले संसार में जीवन को ऊंचा करने वाले कर्म ही करते रहना चाहिए। आजकल की दुनिया जो नुमायशी जीवन की तरफ दौड़ रही है इससे सिवाय तपश और जलन के और कुछ नहीं मिल सकता। अपने गुरु-पीर का आधार लेकर चलो ताकि जीवन सफल हो। चंद रोज़ जीवन में दूसरों का भला करके चलो। ज़्यादा से ज़्यादा समय प्रभु की याद में रहने की कोशिश करो। इस संसार का प्रवाह लखां करोड़ां वर्षां तो चल रहिया है। जिसने भी इससे जीत पाई है उसने अच्छे पर-उपकारी कर्म करके उच्चता हासिल की है। ईश्वर सुमति देवें। नित अपने गुरु, अवतारों के नक्शे कदम पर चलकर अपना भला करो।

आख़िर 'समदर्शी-योग' से दोहे पढ़े गए और आरती और समता मंगल के बाद सत्संग समाप्त हुआ और प्रशाद बांटा गया। हमेशा की तरह आपने फरमाया:- "प्रेमी! कोई विचार करो।"

प्रशाद बांटते समय कुछ शोरगुल होने लगा। महाराज जी उठकर अन्दर आसन पर आ विराजे और कुछ प्रेमी भी अन्दर आ गए। एक प्रेमी ने अर्ज़ की:– श्री महाराज जी! कुछ शंका है। श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! कहो क्या विचार है?"

प्रेमी:– करनी पहले लाज़मी है। निराकार को जानने के लिए साकार का सिमरण, ध्यान करना मेरे ख़्याल में क्या ठीक नहीं है?

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! कुछ समझने आए हो या समझाने आए हो? एक विचार करो। यह जीव जन्म से ही शरीर की पूजा में लगा हुआ है। समझता है मेरे जैसा आकार वाला ईश्वर भी होगा। पहले शरीर की अवस्था को जानो। यह क्या मनारा खड़ा हुआ है? इसके अन्दर क्या वस्तु बोल रही है? बोलने वाली चीज़ का क्या आकार–विकार है? जब वह शक्ति शरीर को त्याग देती है तब उसकी क्या हालत होती है? ईश्वर को छोड़ो, पहले इस झगड़े को समझो। जीव का स्वभाव क्यों आकार वाली वस्तुओं की तरफ दौड़ता रहता है? मूर्तियों की पूजा और कई तरह की मनमानी पूजा, व्रत और दरख़्तों, पत्थरों, ग्रन्थों, मढ़ी–मसानों का आधार लेकर चलता है। यह सब जैसे बच्चे, गुड़ियां–पटोले लेकर खेलते हैं, उसी तरह हैं। यह सब झगड़ा ही है। ईश्वर के सिमरण को छोड़ करके जो इस तरह पाखंड करके मानसिक शांति चाहते हैं, सारी आयु और शरीर ख़त्म हो जाने पर उनको कुछ हासिल नहीं होता। लाखों मनमाने देवी–देवता हिन्दुओं ने बना रखे हैं। किसी एक का शायद पता होगा, फलां उसके माता–पिता थे। पत्थर को धूप दिखाते रहते हैं। मुर्दों को पूजते हैं। ज़िन्दगी की कोई पूछ ही नहीं। तेरे शरीर के अन्दर ही कल्याण स्वरूप शिव मौज़ूद हैं, उसकी खोज करो। श्रद्धा, सत् विश्वास रूपी जल चढ़ा। नाम रूपी औख़द को जब घोटा देगा तब उससे ऐसा रंग निकलेगा जिसे पीकर कोई ख़्वाहिश नहीं रहती। इसकी जगह संसारियों ने भंग निकाल ली है। शिव को भंग पीने वाला बना दिया है। जैसे भंग–चरस सुल्फा पीने वाले तुम्हारे गुरु वैसे ही तुम्हारे जैसे उनके शिष्य बन जाते हैं। चलो जैसी मर्ज़ी पूजा पाठ करो। जिस तरह गुरु अवतारों ने तप–त्याग करके संसार में बड़े–बड़े काम किए हैं, उनके नक्शे–कदम पर चलें।

कबीर या जग को समझाइयो सौ बार।
पूंछ तो पकड़े भेड़ की उतरे चाहे पार।।

साकार की पूजा यह ही है कि जीती–जागती जो मूर्तियां हैं इन जीवों की तन, मन से सेवा कर। किसी को मन, वचन, कर्म से कष्ट न दो। कोई भूखा है उसकी अन्न–जल से सेवा करो, नंगा है कपड़ा दे दो और कोई दु:खी अनाथ है उसकी जो सेवा बन सके कर दो। जीभ के स्वाद के वास्ते किसी जीव का वध न करो। धर्म–अधर्म को समझने वाली बुद्धि रानी है, जो कि पल में सब जायज़ा ले लेती है। जब ऐसा अमल धारण करोगे तब तो असली मूर्ति का पुजारी जान। प्रेमी, मन की मैल साफ करो। शारीरिक मैल नहाने से जाती है, चाहे जिस जगह जाकर पानी में नहाओ। मन की मैल

सत्संग, सिमरण, सेवा और नुमायशी जीवन को छोड़ने से दूर हो सकती है। छोटे–छोटे आसरे न ढूंढो। पता नहीं क्यों मूर्ति पूजा खड़ी हो गई है? छोटी बुद्धि के जीवों के वास्ते यह सिलसिला खड़ा किया गया होगा। वह शायद इस वास्ते किया गया हो कि बुजुर्गों के उपदेश को भी साथ–साथ अपनाया जाए। इस बात को तो लिया नहीं केवल अपना हलवा–मांडा पूरा करने के वास्ते मूर्ति पूजा खड़ी कर दी। यह आज से नहीं, राम के ज़माने से पहले विष्णु की मूर्ति का आधार ले रखा था। फिर आहिस्ता–आहिस्ता ज्यों–ज्यों ज़माना गुज़रता गया, अनेक तरह के लिंग लोगों ने खड़े कर लिए। बुद्ध ने बड़ी कोशिश की, यह लोग अच्छे कर्मों को इख़्तियार करें। मगर बाद में उनके नाम लेवा जो थे उन्होंने बुद्ध की मूर्तियां खड़ी करके पूजा शुरू करवा दी, फिर शंकराचार्य ने बुद्ध मत को ख़त्म किया। इसके बाद मलेच्छाचार्य, माधवाचार्य ने राम कृष्ण की मूर्तियों को थाप दिया। बुद्ध धर्म को हिन्दुस्तान से तकरीबन ख़त्म कर दिया था, अब फिर बुद्ध के पुजारी शुरू हो रहे हैं। सब संसार के लोग मूर्ति पूजक हैं। हिन्दुस्तान में केवल आत्म–ज्ञान था। लाखों वर्षों से इस जगह आत्मा की खोज वाले चले आ रहे हैं। जितने भी गुरु, अवतार, ऋषि हुए हैं हद दर्जे के आत्म–अनुभवता वाले थे। अब हद दर्जे का नास्तिकपन भी इसी जगह मौज़ूद है। संसार में सब किस्म के लोग हैं, तुम अपनी सफाई की कोशिश करो। सारी धरती के कांटे कभी किसी ने ख़त्म नही किए। जब जूता पहनोगे कांटे तुम्हारे वास्ते नहीं रहेंगे। आत्मा को जानने वाले बनोगे तो तुम्हारी दृष्टि में कोई भी भिन्न भेद नहीं रहेगा। किसी उस्ताद को ढूंढो, जो तुम्हें जिस्म और जान का निर्णय समझाए, किस तरह इस शरीर में परम ज्योति को अनुभव किया जाता है, जिस करके सारा ब्राह्माण्ड नज़र आ रहा है। इस हिन्दू मत के ब्राह्मण गुरु हैं, चाहे डोबें या तारें। होश वाली बुद्धि बनाओ। अपने गुरु आप बनो।"

प्रेमी कहने लगा:– "महाराज जी! आप ही कृपा करें तो इस नाचीज़ को कुछ समझ आ सकती है।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "जाओ, अब आराम करो। सत्संग में आया करो। शौक पूरा हो जाएगा। तब बात करनी चाहिए जब पहले अच्छी तरह सुना, फिर समझ कर अमल की तरफ आओ। तीन तरह के जीव होते हैं:

इकनां नूं मत रब दी, इकनां मंग लई।
इक दितियां मूल न लेवन्दे, एह अचरज रचना भई॥

प्रेमी कहने लगा:– "महाराज जी! किसी समय एकांत में भी समय मिल सकता है?" श्री महाराज जी ने फरमाया:– "हां प्रेमी! तुम्हारे जैसे गुरमुखों के लिए हर समय दरबार खुला है।"

उनके चले जाने के बाद फरमाया:– "देखो, किस तरह लोग बाल की खाल निकालते हैं। पता नहीं उनकी बुद्धि में कुछ बैठा है या नहीं। पढ़े–लिखे लड़के बड़े चातर–फातर होते हैं। लोग

कहते हैं बड़ा होश वाला ज़माना है। लोगों की वृत्ति शारीरिक सजावट–बनावट में जा रही है। इस भारत का क्या बनेगा?"

''जिनां गाजरां खादियां, ढिड पीड़ उन्हाँ दे''

आप ही समय सबक सिखा देगा। इन्हें कुर्बानी वाले प्रेमियों की ज़रूरत है। महापुरुषों ने समय–समय पर अच्छा जोश, चेतना जीवों के अन्दर लाने की कोशिश की है। गोबिन्द सिंह ने कहा है:

सवा लाख से एक लड़ाऊं, तबै गोबिन्द सिंह नाम कहाऊं॥
चिड़ियों से मैं बाज तड़ाऊ, तवै गोबिन्द सिंह नाम कहाऊं॥

इन्हां दी कुर्बानी दा नतीजा है, आज दिल्ली से इस तरफ हिन्दू नज़र आते हैं। बंदा बहादुर को तैयार करके भेजा। उसने इधर आकर हिन्दू कौम की जड़ पक्की कर दी। अटक से पार आहिस्ता–आहिस्ता काबुल की दीवारों तक निशान खड़ा कर दिया। किसी धारा को खड़ा करने के वास्ते बड़ी जद्दो–जहद की ज़रूरत होती है। बाज़–औकात यह मसले प्यार और अच्छे विचार से खड़े होते हैं। प्यार और विचार जब दुनिया नहीं समझती, फिर ऐसे व्यक्ति आ जाते हैं जो तलवार के ज़ोर से दीन–धर्म को पक्का करते हैं। ईश्वर ही सही बुद्धि बख्शें। समझा था इस तबदीली का कुछ असर होगा, पर लोगों के अन्दर आगे से भी ज़्यादा हिर्स बढ़ गई है। अब जाओ प्रेमियों, आराम करो।

सुबह ढाई, तीन बजे जब आप बाहर तशरीफ़ ले जा रहे थे प्रेमी जगन्नाथ को कहने लगे:– "प्रेमी! यह लोग तेरे इतने किस तरह वाकिफ़ बन गए हैं। किस तरह ज़बान पर एतबार कर लेते हैं?"

जगन्नाथ कहने लगा:– "महाराज जी! सब आपकी कृपा कशिश करके गुरमुख जीवों को आपकी प्रेरणा हो रही है। आपकी कृपा से ही दास के साथ लोग प्यार करते हैं। हम क्या चीज़ हैं?"

एक दिन सत्संग के बाद जब प्रशाद बँट चुका तो अम्बाला शहर के मशहूर वैद्य, जो बड़े विद्वान थे, एक नौजवान कालीजियेट को लेकर आ गए। स्कीम बनाकर आए थे कि आज महात्मा जी को लाजवाब करना है। नौजवान को आगे कर दिया। आप उसके पीछे बैठ गए। जब महाराज जी ने फरमाया:– प्रेमियों! कुछ विचार करो, तो झट कालीजियेट नौजवान ने सवाल कर दिया– महाराज जी! बताइये, आपकी यह जमात आस्तिक है या नास्तिक। उस वक्त और भी कई प्रेमी जमा हो गए। श्री महाराज जी ने फ़ौरन उस नवयुवक से सवाल कर दिया:– प्रेमी! आस्तिक का स्वरूप तो बताओ? नवयुवक ख़ामोश हो गया। कोई जवाब न दे सका।

अब वैद्य जी को आगे आना पड़ गया। उन्होंने संस्कृत के श्लोक उच्चारण करने शुरू कर दिए। श्री महाराज जी ने फरमाया:– प्रेमी! देख कितनी जनता खड़ी है। तू संस्कृत के श्लोक सुना रहा है। इन्हें क्या पता कि तू क्या कह रहा है? अपने लफ़्ज़ों में अपनी बात बयान करो ताकि सबको पता लगे कि तू क्या बतला रहा है? इस पर वैद्य जी ने श्लोक का मतलब बयान किया और कहा:– यह फलां ऋषि ने फरमाया है। श्री महाराज जी ने फौरन कहा:– यह तो ऋषियों का अनुभव है, तुम अपना अनुभव बताओ? इस पर वैद्य साहब भी खामोश हो गए।

श्री महाराज जी ने नवयुवक को फरमाया:– "प्रेमी! ले सुन। जो जीव सत् स्वरूप का विश्वासी, अभ्यासी है वह आस्तिक है। शरीर और आत्मा का विचार करना और साधना करनी, आत्म विश्वास होना, यह आस्तिकपन है। जो आत्मा को साक्षी समझकर सतकर्म करता है और सब ईश्वर आज्ञा में देखता है वह आस्तिक है। अब तू आप देख ले यह संगत आस्तिक है या नास्तिक।"

इस पर वैद्य साहेब ने कहा कि फलां समय मुझे चिट्ठी आई थी कि पाकिस्तान में हिन्दुओं का खूब कत्लो–ग़ारत होगा और लूटमार होगी। इस पर एक साहेब और खड़े थे, उन्होंने कहा:– प्रेमियों, हमें इससे पहले, जो समय तुमने बतलाया है, यह चिट्ठी आ गई थी।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– प्रेमी! पहली चिट्ठी आई थी ईसा को। सूली पर चढ़ रहा था, हाथ, पाँव और सिर में कीलें गाढ़ी जा रही थीं, और कहता है, 'ऐ खुदा, इन लोगों को बख़्श दे, यह नहीं जानते कि यह क्या कर रहे हैं'? यह चिट्ठी थी। दूसरी चिट्ठी आई थी गुरु अर्जुन देव को। तत्ते तवों पर बैठे हैं, ऊपर गर्म रेत पड़ रही है, कहते हैं, 'ईश्वर, तेरा भाना मीठा लागे,' यह चिट्ठी थी।

इर्द–गिर्द खड़े लोगों ने तालियां बजा दीं। वैद्य साहेब और नवयुवक शर्मिंदा होकर चले गए। इसके बाद आसन अन्दर ले जाया गया और श्री महाराज जी अन्दर चले गए। बाकी प्रेमी भी विदा हुए। जब प्रेमी रात को खाना खाकर वापस आए और सेवा में बैठे थे तो महाराज जी ने फरमाया:– "शहरों के लोग असली नास्तिक होते हैं। करना कराना कुछ नहीं, सिर्फ़ बातों से ही परमार्थ के मसले हल करते रहते हैं। इस ज़बानी जमा–खर्च ने अमल से इनको बे–बहरा (खाली) कर दिया है। खाली संस्कृत के श्लोक पढ़ कर दूसरों को दिखाते हैं कि हम भी कुछ जानते हैं। ऋषियों–मुनियों के अनुभव सुनकर और उन पर अमल करके परम–तत्त्व का बोध करना है। परम–तत्त्व को बोध करते बरसों लग जाते थे। यह श्लोक उनकी ज़िंदगी का निचोड़ होते थे। निद्धियास करते–करते कई जन्म धारण करने के बाद असलियत को समझा जाता था। ऐसा आज कौन है जो दो घड़ी की भूख को बर्दाश्त कर सके? न उठने–बैठने की तमीज़ है, न आहार–व्यवहार की। बातों से समय नापते हैं। तन्द नहीं तानी ही बिगड़ी हुई है। विवेकानंद ने ठीक कहा है–हिन्दुस्तान के लोग ब्रह्म–ज्ञान की बातें करते हैं मगर अमल नहीं करते। अमल तो विदेशी लोग कर रहे हैं। उनका बोल–तोल ठीक है,

व्यवहार शुद्ध है। जैसा कहते हैं वैसा करते हैं। यहाँ हर चीज़ में मिलावट है, हर बात में चालाकी है। ज्ञान विचार वह ही है जो अमल में उतरे। किस कदर मालामाल मुल्क हैं। यहाँ की तरह नहीं कि देवी–देवताओं के आगे हाथ जोड़कर दौलत माँगते हैं। वे सही पुरुषार्थ करते हैं और कामयाब हैं। कमाई करने वाले यहाँ से चले गए। हिन्दुस्तान से ही बाहर के लोग राज़े–तमद्दुन (धर्म–संस्कृति का राज) ले गए। यहाँ खाली कागज़ फ़िरोलने वाले ही रह गए। खुदग़र्जी हद से ज़्यादा बढ़ी हुई है। यद्यपि बड़े–बड़े शिक्षा देने वाले गुरु, अवतार यहाँ हो गुजरे हैं। परमात्मा ही इनकी अक्ल ठीक करे। इन्होंने तो सत्संग द्वारा उन्हें जाग्रत करना है। सूरज का काम है रोशनी देना। फ़कीरों के साथ टक्कर लगी रहती है।आज की बात नहीं हमेशा से ऐसा चला आ रहा है।" फिर पूछा:– "प्रेमियों, कोई विचार करो।"

एक प्रेमी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! कामयाबी किस तरह हो सकती है? मतलब यह कि संसार में विचरते हुए नित नई फ़िक्र, चिंताएं बनी रहती हैं, और भी कई विकार खड़े हैं।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "पहले अपनी बीमारी की अच्छी तरह जांच कर लो, फिर उसका इलाज भी हो जाता है। जो अपनी बीमारी को समझता ही नहीं वह उसे कैसे ठीक कर सकता है? इस बीमारी में सब शरीरधारी खड़े हैं। तुम सब ईश्वर विश्वासी बनो। बच्चों वाले विचार छोड़, नेक अमल, सत्कर्म धारण करें। जिन कर्मों से मन की अशांति बढ़ती है उनको छोड़ दें। इस मानुष देह का असली मकसद जानें। जब जान लोगे तब कहीं सोच वाले बनोगे। इस मानुष देह को धारकर सिर्फ़ भोग प्राप्ति के वास्ते यत्न करते रहना, यह सही यत्न नहीं हैं। इस जामे की विशेषता यह ही है कि अपने आपकी पहचान करे। यह जाने कि कहां से आया है, किधर जाना है और क्या कर रहा है? ईश्वर क्या है, संसार क्या है, आत्मा क्या है, जिस्म क्या है? आत्मा, शरीर का सम्बन्ध कितनी देर चलेगा? अन्तर विखे जो वासना उमड़ रही है, यह किधर ले जा रही है, इसकी निवृत्ति कैसे होगी? प्रेमी बहुत से विचार सोचते समझते हैं। पहले क, ख पढ़ो। मतलब यह कि सादगी धारण करो। सत्य बोलो, सेवा करो। सत्संग में आया करो, और फिर आहिस्ता–आहिस्ता किसी गुरु, पीर, अवतार का आधार पकड़ो। सिर पर कूंडा चाहिए। आलस छोड़कर सत्–पुरुषार्थ धारण करो। इसकी कल्याण एक दो बातों से नहीं हो जाती। इसके सुधार के वास्ते बड़े दिल की ज़रूरत है। यह मन सांसारिक सुखों की तरफ जल्दी दौड़ता है। जो बात मन में पक्की हो जाती है उधर ही बुद्धि, शरीर भी लग जाते हैं।"

''चोर कुत्तिया मिल गए पहरा किसका दे।''

हर वक्त कल्याण के वास्ते सोचते रहो। अंतर विखे जो चोर बैठे हुए हैं पलक–पलक विखे इनसे बचाव करना है। बार–बार सोचो ज़िन्दगी किस वास्ते मिली हुई है। बग़ैर ईश्वर की खोज के ममता का ग़ुबार ख़त्म नहीं हो सकता। इस संसार की अश्चर्ज रचना से अबूर पाना कोई आसान

नहीं। जिन्होंने अपने आप पर काबू पा लिया है उनकी नज़दीकी हासिल करो, तब ही तृष्णा रूपी नदी को पार कर सकोगे। इतनी बातें समझाने वाला कोई मुश्किल से ही मिलेगा। ईश्वर नित सत् है, संसार नित झूठ और दु:ख रूप है।

''बुलया शाह इनायत मुर्शद मिलया, तब जाना इल्म है''।

इसके बाद आपने फरमाया:– "कल देहरादून राय साहब रल्ला राम जी को प्रोग्राम लिख दो। अब तबीयत बहुत थकी हुई है। खड्ड में पहुंच कर सारी तकलीफ़ दूर होगी। संसारियां अपना राह, फ़कीरां अपना। कुत्ते की पूंछ सौ वर्ष सीधी करके रखो जब छोड़ोगे तब टेढ़ी होगी। यहां की यात्रा हो चुकी। अब अगला रास्ता देखना चाहिए। पन्द्रह रोज़ आए हुए हो गए हैं, बना क्या?"

प्रेमी अर्ज़ करने लगे:– "महाराज जी! अभी से प्रोग्राम तय न करें। कल और भी प्रेमी आ जायें, फिर कृपा करें। दिन-प्रतिदिन संगत बढ़ रही है। प्रेमी शरण में आने के याचक हैं। आप मेहर करने के वास्ते पधारे हैं।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "बहुत सस्ता सौदा न करो। उनको क्या कदर होगी। वाह कलयुग तेरी अपार वडयाई है। पहले ज़माने में इस तत्त्व-ज्ञान के वास्ते कितनी-कितनी कोशिश करते थे, जंगलों, वनों में ऋषि समाज लगी होती थी। राजे-महाराजे जाकर किस नम्रता से ज्ञान विचार सुनते थे। बड़ी मिन्नत समाजत करके यज्ञ वग़ैरह के बहाने लाया करते थे। यह भी ज़माना आया, बुला-बुला कर उपदेश सुनाया जा रहा है। शायद कोई प्रभु का प्यारा निकल आए।

दीन गंवाया दुनी सों, दुनी न चाली साथ।
पांव कुल्हाड़ा मारया, गाफ़िल अपने हाथ॥

संगत में आने वाले का सिलसिला नौ बजे से शुरू होता और रात के दस बजे तक प्रेमी अपनी शंकायें निवारण करते रहते। श्री महाराज जी हर आने वाले की तसल्ली कर देते। कोई भी मायूस होकर न जाता। हर एक को उसकी बुद्धि के मुताबिक खुराक हासिल हो जाती। शहर के अच्छे-अच्छे प्रेमी अमीर, ग़रीब, हकीम, डाक्टर चरणों में हाज़िर होकर मानसिक शांति प्राप्त करते और सत् उपदेश लेकर अपने जीवन को अमली बनाने का यत्न धारण करते। प्रेमियों की प्रार्थना पर चार रोज़ और उन्हें दे दिए।

रवानगी से एक दिन पहले राय साहब दीवान रल्ला राम जी के साहबज़ादे ले जाने के लिए हाज़िर हो गए। 22 अप्रैल, 1951 की शाम को बहुत संगत चरणों में हाज़िर हुई। सत्संग आज दस मिनट पहले ही शुरू कर दिया गया और महामंत्र व मंगलाचरण के बाद 'समदर्शन योग' से अमृत वाणी पढ़ी गई।

59. सत् उपदेश अमृत

अनादि काल यानि जब से सृष्टि बनी है सत्पुरुष संसार में प्रगट होते चले आ रहे हैं। जो भी पीर, वली, अवतार, सिद्ध संसार में आए, सबने अपना-अपना पवित्र अमली जीवन पेश करके खुद प्रभु स्वरूप में लवलीन होकर संसारियों को सत्-विचारों से निहाल किया। बहुतों ने उनके आदर्श जीवन और सत्-शिक्षा से अपना सुधार किया। इनके बाद उनके विचार लेकर कई जीव अपनी आकबत (भविष्य) ठीक करने में लगे रहते हैं। यह नहीं कि जो अवतार, गुरु, पीर, पैग़म्बर हो चुके हैं उनके बाद कोई नहीं आयेगा। जब-तक संसार कायम है सतपुरुष आते ही रहेंगे। भारत की मिट्टी में यह ख़ास सिफ़्त है कि माताएँ लाल पैदा करती रहती हैं। बीज नाश किसी चीज़ का नहीं हो सकता। भारत में अनादि काल से हर किस्म के लोग चोटी का इल्म रखने वाले होते आये हैं। बाहर के देश तो थोड़े अर्से से ही जागे हैं। वे अपने स्वार्थ यानि इन्द्रियों के लवाज़मात एकत्र करने में माहिर हैं। भारत से विवेकानन्द, रामतीर्थ जैसे महापुरुष गए। उन्होंने उन लोगों को कुछ जाग्रत किया और आत्म-विद्या का स्वरूप बतलाया। वैसे वे लोग इस इल्म से बिलकुल बे-बहरा थे। मोहम्मद साहब के ज़माने में कैसी हालत थी? उन्होंने अपनी सूफ़ियाना बा-असूल ज़िन्दगी को पेश करके लोगों को असूल वाली ज़िन्दगी का रास्ता बतलाया। इस ज़माने में जिसे रोशनी का ज़माना कहा जाता है, इसमें बेशक मादी जागृति आ गई है। वह यह जान गए हैं कि रहन-सहन किस तरह अच्छे से अच्छा हो सकता है। वे ऐसा जान गए हैं कि खाओ, पिओ और मौज करो, मगर इसके नतीजे से गाफ़िल हैं। वे नहीं जानते कि नुमायशी जीवन से सिवाए अशांति, बेचैनी के और कुछ हासिल नहीं हो सकता। सतपुरुषों ने इस संसार के सुधार के वास्ते बड़े यत्न किए, मगर इसका सुधार कभी मुकम्मल तौर से नहीं हो सका ख़्वाहे कितना ज़ोर उन्होंने लगाया। राम-राज्य के ख़्वाब लिए जा रहे हैं, मगर इस तरह नही आ सकता। रंगा-रंग बुद्धि वाले जीव तो हैं मगर अहंकार से शायद ही कोई खाली हो जिसने प्रभु आराधना से पवित्रता कर रखी हो। आज राम, कृष्ण, मोहम्मद, ईसा सामने आ जायें तो कोई मानेगा हीं नहीं बल्कि कह देंगे, कोई पाखंडी आ गए हैं। सत् यानि सच्चाई को स्थापित करने के वास्ते बड़ी कुर्बानी की ज़रूरत है। इसके लिए बड़े-बड़े कष्ट उठाने पड़ते हैं। दुनियादारों ने आसानी से किसी के आगे सर ख़म नहीं किया। जब-तक ठोक बजा कर न देख लेंगे, उनके नज़दीक नहीं जायेंगे। महापुरुष किसी स्वार्थ के लिए संसार में नहीं विचरते बल्कि वह जगह-ब-जगह संसार में इस वास्ते विचरते हैं कि कोई उनसे सत्-विचारों को लेकर अपनी ज़िन्दगी रोशन करने वाला हो। संसार के जीव मोह माया में फँसकर बड़े दुःखी होते हैं। ज्यों-ज्यों जीव दुनिया के भोगों को सुख रूप जानकर इनको ज़्यादा से ज़्यादा एकत्र करने के यत्न करते हैं, त्यों-त्यों ही उनका दुःख बढ़ता जाता है और बेचैनी व फिक्र से ख़ुलासी पाने के लिए सत्पुरुषों की तलाश करते हैं। यह बेचैनी ऐसे सत्पुरुषों से दूर हो सकती है जो निर्भय अवस्था को प्राप्त हो चुके हों। सन्तोष और परम तृप्ति में मग्न रहता हो। उनके पास जाकर बैठने और सत् वचन

श्रवण करने से इस मन को हौसला मिलता है। जहां से इन्हें यानि बेचैन और अतृप्त जीवों को ठंडक मिलती रहे, यह उनके नज़दीक बैठने का यत्न करते हैं, और चाहते हैं कि ऐसा महात्मा मिल जाए जिसके उपदेश और कृपा दृष्टि से उनके दु:ख दूर हो जायें। श्रद्धा, सत्–विश्वास से जब अच्छे पुरुषों के पास जाओगे, उनसे अच्छी मत लोगे तो उनकी शिक्षा धारण करने से लोक–परलोक सुधर सकते हैं। संतों के पास कोई खज़ाना तो होता नहीं, जीव इसलिए उनके पास दौड़ते जाते हैं कि उनके मन की तपिश दूर हो जाए। अनेकों महापुरुष इस धरती पर आए और आते रहेंगे। सत्बुद्धि वाले जीव उनसे कुछ हासिल कर सकते हैं। रजोगुणी, तमोगुणी वृत्ति के लोग सोचते ही रहते हैं। अगर अपनी ज़िन्दगी को नमूना बनाना चाहते हो तो सादगी, सेवा, सत्य, सत्संग, सत्सिमरण, जो परम गुण असूल हैं, उनको धारण करो। उनको धारण करने वाला मानुष से देवता बन सकता है बल्कि सत्पुरुष बन सकता है। आहार, व्यौहार और संगत की पवित्रता ज़रूरी है। मन की शुद्धि के वास्ते असूल बनाए गए हैं। हर जगह हर समय जीव इन्हें अपना सकता है। किसी शारीरिक भेषधारी धन्धे में नही डाला जाता। हर मुल्क में रिवाज़, रहन–सहन अलग–अलग तरीके के हैं। संतों, साधुओं के भेष भी हज़ारों तरह के हैं। ज़ाहरी भेष धर्म का स्वरूप नहीं हो सकता, न ही सच्चाई से कोई मुनकर हो सकता है। सच्चाई को बढ़ाने वाले यह असूल हैं जो बयान किए गए हैं। जो भी इनको धारण करेगा अपनी शुद्धि आप ही करेगा। किसी के आधार की ज़रूरत नहीं, केवल ईश्वर को कर्ता–हर्ता जानकर नित उसके भाने में रहना ही पवित्र ज़िन्दगी है। गुरु–पीरों का आधार इसलिए लिया जाता है कि सच्चाई के मार्ग में जीव बढ़ता जाये। जितने भी कुर्बानी वाले सत्पुरुष हो गुज़रे हैं सबको पूज्य जानकर उनके सत्–उपदेशों को मानने वाले बनो। पाखंड से बचो। सत्विचारों को नित धारण करो। जिस जगह से अच्छी शिक्षा मिले इसे ज़रूर लो। अपने मुहाफ़िज़ आप बनो। कल इधर से जाने का विचार है। ईश्वर सबको सुमति देवें। संसार में आने का परम लाभ यह ही है कि अपनी कल्याण की जावे। दूसरों के वास्ते सुखदाई बनो।

इसके बाद अमृत–वाणी पढ़ी गई और आरती, समता–मंगल के बाद सत्संग समाप्त हुआ और प्रशाद बांटा गया।

श्री महाराज जी का आसन अन्दर ले जाया गया। प्रेमी भी अन्दर आ बैठे। थोड़ी देर बाद आपने फरमाया:– "प्रेमियों! जाओ, आराम करो।" प्रेमी बैठे रहे। आप आंखें बंद करके बैठे रहे। फिर थोड़ी देर बाद आंखें खोलकर फरमाया:– "प्रेमियो! यह भी छूत की बीमारी है। घर–घाट का नहीं रहने देती। जो सुना है उस पर अमल कर सको तो करो। दु:ख में यह सिख्या ही सुख देती है।" कई प्रेमी कहने लगे:– महाराज जी! ऐसी बीमारी हमें भी दे जाओ तो बड़ी कृपा होगी। इस पर आपने फरमाया:– "प्रेमी! इसके लिए चाह, तड़फ पैदा करो। भाग्यशाली वह जीव हैं जो मालिक के चरणों में अपने–आपको न्यौछावर करने वाले बन जायें। साधु की चरण–धूली को देवता भी तरसते है।। बलिहारी इन प्रेमियों के जो नित मालिक के दरबार में भिखारी बने हुए हैं। देखो,

इस सच्चाई के मार्ग पर चलने वालों को मुशक्कत नहीं करनी पड़ती केवल ईश्वर में तन–मन से दृढ़ता धारण करनी है। नित पक्के इरादे वाले बनो, अवश्य कल्याण हो जाएगा। मालिक के दरबार में चालाकी, चतुराई नहीं चलती। "भोले भाव मिले रघुराई।" सादा स्वभाव बनाओ। छल–कपट से रहित रहो। सादा रहनी व सरल, सादा स्वभाव वाले जीव का चित्त शांत ठंडा रहता है। इसके उलट नुमायशी जीवन वाले, हर कदम पर बनावट, फ़रेब दम्भ करने वाले की कभी तसल्ली नहीं हो सकती। वह सब कुछ हासिल करके भी नित प्यासा और निराश रहता है। ईश्वर विश्वासी नित तृप्त रहता है चाहे उसके पास निर्वाह के वास्ते असासा (पूंजी) कम क्यों न हो। सत्, शील, सन्तोष वाला जीव ही परम सफलता प्राप्त करके चलता है। आहार, व्यौहार जिसका पवित्र है और संगत जिसकी सच्ची–सुच्ची है, उससे दो घड़ी मालिक का सिमरण बन सकता है। वह ही असली गुरु, पीर, अवतारों को मानने वाला है। जिसका कोई प्रोग्राम ज़िन्दगी का नहीं, न ही दीन–धर्म है, वह ही पशु–वृति रखने वाला आख़िरकार परम दुःखी होता है जब–तक ज्ञान को प्राप्त नहीं कर लेता तब–तक कर्म दंड सहने के लिए अनेक शरीर धारण करने पड़ते हैं। जीव की चालाकी, चतुराई और अभिमान ही आवागवन में डालने वाले हैं। कभी अच्छे कर्म फलदायक हों, अच्छे संतों की शरण मिल जाए तो कहीं अपना रास्ता बदल कर इस भव–दुस्तर मार्ग से ख़ुलासी हासिल करने वाला बने।" इसके बाद आपने फरमाया:– "प्रेमियों! जाओ आराम करो। बहुत वक्त हो गया है। इनको हर समय अंग–संग जानो।"

आप रात के दो बजे ही बाहर तशरीफ़ ले गए और घग्घर नदी के पार चले गए। प्रेमी पहले तो कुछ विचार करते रहे फिर सो गए। जब दिन निकलने पर आप बाहर से वापिस आए तो बनारसी दास को आवाज़ दी और उसने आंख खोली तो आपने फरमाया:– "जिन्हां नींद प्यारी कीती, उन्हां कब मंज़िल तय करनी।" सवेरी नींद दे बड़े प्यारे हो।" गड़वी देकर चल दिए। स्थान पर वापिस पहुंचकर स्नान वग़ैरा से फ़ारिग होकर आप समाधिस्त बैठ गए।

60. देहरादून के लिए रवानगी

3 मई, 1951 को जब जाने का समय करीब आया। प्रेमी भी आने शुरू हो गए। आपने आंख खोलकर फरमाया:– "चलने वाली बात करो।" सब उठ खड़े हुए। बाहर कार खड़ी थी। अगली सीट पर आपके लिए आसन लगाया गया। वहां आप बैठ गए। पीछे बाबू अमोलक राम जी, भक्त बनारसी दास और एक दो प्रेमी बैठ गए। प्रेमियों ने ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार का नारा लगाया और कार चल पड़ी। स्टेशन पर भी प्रेमी पहुंचे हुए थे। एक तरफ दरियां बिछा रखी थीं और आसन लगाया हुआ था। कार से उतरकर प्लेटफ़ार्म पर आकर आसन पर आप विराजमान हो गए। प्रेमी व माताएं सब आकर प्रणाम करने लगे। 10:30 बजे जब सिगनल हुआ प्रेमी फिर आकर प्रणाम करने लगे। जब गाड़ी सामने आई प्रेमी उठ खड़े हुए और श्री महाराज जी को गाड़ी में बिठाया। स्टेशन स्टाफ़ ने, जब–तक श्री महाराज जी और प्रेमी आराम से बैठ नहीं गए, गाड़ी नहीं चलने दी। कुछ प्रेमी

अम्बाला निवासी भी साथ सवार हुए। जब गाड़ी अम्बाला छावनी स्टेशन पर पहुंची, श्री महाराज जी ने प्रेमी जगन्नाथ को फरमाया:– "प्रेमी, तेरा प्रेम पूरा हो गया है। अब खूब प्रेम से सत्संग करो।" फिर सबको फरमाया:– "जाओ, तुम्हारी गाड़ी भी आ गई है," और सब प्रेमियों को विदा किया।

जब गाड़ी जगाधरी स्टेशन पर पहुंची, आगे जगाधरी के प्रेमी भी स्टेशन पर मौज़ूद थे और इंतज़ार कर रहे थे। जब गाड़ी खड़ी हुई, सबने आकर प्रणाम किया। प्रेमी हकीम नत्थू राम जी भी साथ हो लिए।

जगाधरी से सहारनपुर पहुंचने पर गाड़ी से उतरकर सब बस अड्डे पर पहुंचे। बस का जब वक्त हो गया, श्री महाराज जी व भक्त जी को बस में बिठाकर बाबूजी और हकीम जी चरणों में प्रणाम करके वापिस जगाधरी चले गए। राय साहब दीवान रल्ला राम जी के साहबज़ादे भी भक्त जी के पास बस में बैठ गए। जब बस 6:30 बजे शाम देहरादून पहुंची, दीवान रल्ला राम साहेब और प्रेमी इन्तज़ार कर रहे थे। सबने आकर चरणों में प्रणाम किया और तांगे में सवार करके चकरौता रोड पर जैनी लाल चंद के बाग गए। 1948 में भी श्री महाराज जी को इसी बाग में ठहराया गया था। ताला खोलकर श्री महाराज जी को अन्दर आसन पर, जो पहले लगाया हुआ था, बिठाया गया। चाचा दीवान चंद छज्जियां वाले और मेहता अमर नाथ काला गुजरां वाले, चुन्नी लाल और दूसरे प्रेमी भी पहुंच गए और प्रणाम किया। श्री महाराज जी ने सबसे कुशलता पूछी। प्रेमियों ने अर्ज़ की:– महाराज जी! आपने बहुत कष्ट उठाया है। इस पर आपने फरमाया:– "प्रेमियों! सुख–दु:ख शरीरों को ही भोगना पड़ता है। इससे गृहस्थी, विरक्ति कोई नहीं बच सका। जब–तक शरीर खड़ा है, इसे नरमी–गर्मी लगी रहती है। ज़रूरत अनुसार इसकी देखभाल की जाती है। प्रेमी भी काफी ख़्याल रखते हैं। आख़िरकार पिंजर कहां तक साथ दे सकता है? दिन–ब–दिन पुर्ज़े घिस रहे हैं, दो–तीन साल और चल जायेगे। ईश्वर आज्ञा से जिस जगह का दाना–पानी लेना है, कुदरत उधर ले जाती है। फिक्र वाली कोई बात नहीं। अब तो यह चर्खा काफ़ी हद तक ठीक हो चुका है। सेवा करने के काबिल हो चुका है। जो चार–छ: रोज़ यहां हैं जिस–जिस को इतलाह देनी हो, कह देना।"

वक्त काफी हो चुका था। प्रेमियों को जाने की आज्ञा दी और प्रेमी प्रणाम करके वापिस गए।

राय साहब दीवान रल्ला राम जी आ गए। उनसे कुछ विचार शुरू हो गए। श्री महाराज जी ने फरमाया:– "कुदरती तौर पर पहले वक्तों के लोगों के अन्दर अच्छे संस्कार बैठे होते थे। गुरुद्वारे, मंदिर जाना, संतों की सेवा और सत्कर्म में लगे रहते थे, मगर अब जो नयी पौध आ रही है उसके तौर–व–एतवार नुमायशी जीवन की तरफ जा रहे हैं। इस सिनेमा ने त्रट्टि–चौड़ कर रखी है। दिन–ब–दिन नए से नया फ़ैशन स्त्री–पुरुष इख़्तियार कर रहे हैं।

दीवान साहब ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! नुमायशी जीवन की बीमारी रहन–सहन, खान–पान सब पैरिस वग़ैरा शहरों से निकलती है। वहां नित नया फ़ैशन शुरू होता है। हिन्दुस्तान के लोग उनकी रीस ज़रूर कर रहे हैं, यद्यपि यह देश उनके मुकाबले में बहुत पिछड़ा हुआ है। अब

हवा बदल रही है। यह खद्दर–पोश लोग जो हैं उनके घरों में ज़्यादा फैशन की आग लग रही है। शांति का जीवन ख़त्म हो रहा है। आप जैसे संतों की कृपा से कुछ लोगों के अन्दर कुछ ठहराव आ जाए तो आ जाए।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! ईश्वर आज्ञा से जितना हो सकता है यह अच्छी तरह समझाते हैं। तन्द नहीं तानी ही बिगड़ी हुई है। बड़े संत, महात्माओं के डेरों पर जाकर देखो कैसे–कैसे आला साज व सामान लाकर रखे हुए हैं, जो गृहस्थियों को भी प्राप्त नहीं होते। ईश्वर ही सत्–बुद्धि देने वाले हैं। जितनी ज़्यादा तरक्की होती है उतना ही ज़्यादा ज़वाल भी हुआ करता है। यह शान–व–शौकत बहुत मुद्दत तक नहीं चल सकती। सब मुल्क एक दूसरे के नाश का दिन–रात सोच रहे हैं। नए–से–नए हथियार तैयार करने में लगे हुए हैं":–

''कई बार पसरियो पासारा''

"जो पैदा होता है मौत उसके साथ लग जाती है। होना न होना ईश्वर आज्ञा में देखते हुए अपना जीवन ठीक करो। जो ग़लती को समझता है वह उसे ठीक कर लेता है, और जो ग़लती नहीं समझता और सोचता है कि ठीक कर रहा हूं, उसे ईश्वर ही मत दे तो दे।"

सत्संग का समय 5 बजे सांय रखा गया था। समय आने पर प्रेमी आने शुरू हो गए और ठीक 5 बजे सत्संग महामंत्र व मंगलाचरण से शुरू किया गया, फिर ग्रन्थ से कुछ वाणी पढ़ी गई।

61. सत् उपदेश–अमृत

शरीर रूपी संसार को धारण करके जीव दिन–रात कामनाओं को पूरा करने के वास्ते दौड़ रहे हैं। भोग प्राप्त होने पर भी उसे तसल्ली नहीं होती, न ही शांति मिलती है, बल्कि और भोगों की तड़प जीव के अन्दर बढ़ जाती है। जन्म से लेकर मरने तक ख़्वाहिशात को पूरा करने के लिए नेक–बद कर्म करता है और चाहता है कि इसे ठंडक प्राप्त हो मगर ठंडक नहीं मिलती। यह पच्चीस प्रकृति का ढांचा किस कदर इसे नाच–नचा रहा है। जब यत्न–प्रयत्न सारा दिन करते थक जाता है तो फिर यह चारपाई पर जाकर पड़ जाता है और सुध–बुध भूल जाता है। सत्संग में जाकर इसे विचार मिलते हैं। वहां जाकर इसे पता लगता है कि यह शरीर क्या बना है? इसके अन्दर क्या खेल हो रहा है? कैसे यह ढांचा बन बिगड़ रहा है? किस शक्ति के सहारे यह खड़ा है? इसके अन्दर यह बोलने वाली क्या चीज़ है? सुख–दुःख कौन महसूस कर रहा है? वैसे यह जीव कभी ऐसे विचारों की तरफ ध्यान ही नहीं देता, बल्कि इसके पालन–पोषण में वक्त गंवा देता है और शारीरिक भक्ति में लगा रहता है। जितने भी धरती के जीव है, सब ही अपनी–अपनी बुद्धि के मुताबिक शारीरिक सुखों के लिए दौड़ लगा रहे हैं। इस पेट तंदूर को भरने की फिक्र में लगे रहते हैं। मानुष चोले में तो यह कई तरह के लवाज़मात भी एकत्र कर लेता है मगर इसके बावज़ूद इसे तृप्ति नहीं मिलती।

सब जीवों में इंसान की बुद्धि श्रेष्ठ है। इसे अशरफ़ अलमख़लूकात (सर्वश्रेष्ठ) कहते हैं, क्योंकि सब योनियों में मानुष का ही ऐसा चोला है जिसमें यह इस चक्कर से निकल सकता है। वैसे हर जीव अपने स्वार्थ की पूर्ति में लगा है। अगर कोई पूजा पाठ भक्ति करता भी है या देवी, देवताओं, गुरु, पीर को मानता भी है तो अपनी स्वार्थ पूर्ति की ख़ातिर ऐसा करता है ताकि यह पूरा हो जाए। अन्दर से इसे निश्चय ऐसा बना रहता है, इस वास्ते इस जीव को तसल्ली या चैन प्राप्त नहीं होता। सत्संग में जाकर सत्–असत् का निर्णय सुने, फिर दृढ़ विश्वास से उन वचनों पर अमल करे, तब चित्त के अन्दर शांति आ सकती है।

जो चीज़ें संसार में देखने में आ रही हैं यह सब हर लम्ह अपना रंग रूप बदल रही हैं। पल में उनका रूप, गुण ऐसा बदल जाता है कि पता ही नहीं लगता। जो चीज़ पैदा होकर बदल जाती है और नाश हो जाती है उसे असत् रूप जानो। यह शरीर जो देखने में आ रहे हैं हड्डी, मांस, मज्जा और कई जोड़ों के बने हुए हैं, और सफेद, लाल, काली चमड़ी का टेप उन पर फिरा हुआ है, जिसे जीव देख–देख कर मोहित होते रहते हैं। ज़रा विचार करके देखा जाए तो पता लगेगा कि किस कदर गंदगी इसके अन्दर भरी हुई है। जब कोई जीव ऐसा विचार करता है तो उसे इससे घृणा होने लगती है और उसे पता लग जाता है कि कैसे यह बदल रहा है? कैसे इस शरीर के जोड़ ढीले हो रहे हैं और शक्ल बदलती जा रही है? जिस शरीर को कायम रखने के लिए यह दिन–रात यत्न–प्रयत्न करता था, कैसे यह नाश को प्राप्त हो जाता है? हर एक शरीर की यह गति होती है। इस तरह इससे सम्बन्ध रखने वाले पदार्थ भी सब तबदील हो रहे हैं और नाश रूप हैं। इनका मोह अति दु:खदायक है। शरीर के अन्दर जो विकार खड़े हैं, जीव उनको पूर्ण करने के लिए कर्म करता है–कोई चाह पूर्ण हो जाती है। हिर्स ख़त्म नहीं होती बल्कि बढ़ जाती है। ज्यों–ज्यों इसे पूर्ण करने के यत्न–प्रयत्न करता है, यह बढ़ती जाती है और इस वज़ह से यह अशांत और तृखावन्त रहता है। ऐसी अश्चर्ज माया भगवान की फैल रही है कि जो भी संसार में आता है उसे देख–देख कर मोहित हो रहा है। कोई विरला ही इस अपार भेद को जानने की कोशिश करता है और जानता है कि इस संसार के बनाने वाला भी कोई है। गुणी पुरुषों ने कई तरीकों से ईश्वरी माया के भेद को जानने का यत्न किया। उनके वचन पढ़–सुन कर जीवों को ज्ञान विचार मिलता है। कई साधन करके असलियत जानने की कोशिश की और असलियत को जानकर लोगों को बतलाया कि हर एक जीव अज्ञानता के कारण इस संसार में आकर विचर रहा है और अपनी कामना को पूरा करने के लिए दिन–रात लगा हुआ है। अगर कोई कामना पूर्ण हो जाती है तो भी ख़्वाहिश का अज़ाब ख़त्म नहीं होता। इस तरह उन्हें पूरा करते–करते शरीर ख़त्म हो जाता है और इसे ख़्वाहिशात को पूरा करने के लिए दूसरा चोला धारण करना पड़ता है। ज़िन्दगी में यह बड़े–बड़े साथ बनाता है। बड़ा परिवारी भी बन जाता है। राजा बनकर राज भी हासिल कर लिया मगर तृप्ति नहीं हुई। राजा–राना, अमीर–ग़रीब सब ही इस इच्छा को पूरा करने में लगे हुए हैं मगर यह पूर्ण नहीं हो रही।

मानुष चोला इस सार को जानने के वास्ते मिला है। जिन्होंने सत्–सार को जान लिया उन्होंने अन्य जीवों को जगाने के लिए सत्–उपदेश दिए और बतलाया कि सत्स्वरूप आत्मा, निर्वाण अवस्था को प्राप्त होने से ही शांति हासिल होती है। बग़ैर सत् स्वरूप के बोध के इसकी ख़ुलासी नहीं होती क्योंकि कर्म की इच्छा इसे नित नए झगड़े में डाले रखती है। इस गफ़लत से निकलने की जो कोशिश करता है वह ही दरअसल सत्–बुद्धि वाला जीव है। बाकी सब जीव अज्ञानता में भटक रहे हैं। सच्ची खुशी की तरफ नहीं जाते। सत्पुरुषों ने ऐसा रास्ता धारण किया जिससे इस शरीर व कुल–कायेनात को बनाने का पता लगे। उसको प्राप्त होकर उन्होंने बतलाया कि शारीरिक भोगों को तो पशु–पंछी भी हासिल कर लेते हैं। उनको एकत्र करना कोई अक्लमंदी नहीं। गो संसार में जिसके पास संसार के सुख, भोग पदार्थ हैं उसे बुद्धिमान गिनते हैं, मगर फ़कीरों के दायरे में वह अन्धमति ही गिना जाता है। जिसे न तो यह पता है कि वह कहां से आया है, न पता है कि कहां उसने जाना है, न जीवन–मरण का पता है? वह सिर्फ़ अपनी पेट पूर्ति में लगा हुआ है। यह ही सबसे बड़ी अज्ञानता, मूर्खताई है। सतपुरुषों ने बताया कि अपने आपको समझो। इस संसार को देखकर इसके बनाने वाले का विचार करो। धन, पदार्थ, यौवन कायम रहने वाले नहीं। आन की आन में यह टूट जाते हैं बड़े–बड़े राजे, महाराजे, शहनशाह नहीं रहे, जिनके दरवाज़ों पर राग–रंग होते रहते थे। विचार करो वह किधर गए। गर्ज़ को लेकर जीव अनेक साथ बनाता है, मगर वियोग के समय दुःखी होता है। इसलिए संसार को छोड़ने से पहले सत् की पहचान कर लो, जिस सत् को प्राप्त करके गुरु, पीर, अवतार, देवी, देवता बने। ध्रुव, प्रहलाद, राजा भर्तृहरि, गोरख, राम, कृष्ण, कबीर, नानक जैसे संतों, सत्पुरुषों, अवतारों ने जिस सत् की महिमा गाई है, ऐसे सत् को जानकर तू भी बे–ख़्वाहिशी और सरूर को हासिल कर, और भी हज़ारों भक्तों ने प्रभु की महिमा को जाना है। ईश्वर कहीं दूर नहीं हैं, हर जगह मौज़ूद हैं। शाहरग (जीवन रेखा/नाड़ी) से नज़दीक हैं। मगर यह जीव कोशिश नहीं करता, इस वास्ते इसको सातवें आसमान पर समझता है। सत–बुद्धि को हासिल करने के लिए ऐसी जगह जाओ जहां से मन को शांति मिले। अपने–आपको जानने का तरीका मिले। संसार में कैसे चलना है ऐसा सबक मिले। अंधा–धुंध जैसे बाकी जीव चल रहे हैं उस तरह मत चलो। अगर बिना विचार के चले चलोगे तो न तो संसार के सुख मिलेंगे, न ही आत्मिक शांति। इस भयानक काल में ईश्वर सत् बुद्धि देवें। जब तुम्हारे गुरु, अवतार, बड़े–बड़े आला कपड़ों में दिखाये जा रहे हैं तुम क्यों न फ़ैशन करो। जब आजकल के साधु, महात्मा बड़ी–बड़ी कोठियों, बंगलों के बग़ैर बात नहीं करते, तुम झोंपड़ी में क्यों रहो। दुनिया अंधा–धुंध चल रही है। जब–तक बाहोश होकर सही विचार लेकर न चलोगे तब–तक यह चंचल मन ठहरने वाला नहीं। कुछ अपनी बुद्धि से काम लो। कोई ठीक रास्ता पकड़कर मानसिक शांति हासिल करो। ईश्वर कृपा करें, सत् बुद्धि देवें।"

इसके बाद कुछ वाणी पढ़ी गई फिर आरती और समता–मंगल सबने मिलकर उच्चारण किए और सत्संग समाप्त हुआ फिर प्रशाद बांटा गया।

हमेशा की तरह सत्पुरुष ने फरमाया:– "कोई विचार करो।" एक प्रेमी ने अर्ज़ की:

प्रश्न – महाराज जी, अब हमको किस तरह चलना चाहिए?

उत्तर – श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी, यदि सही तौर पर यह जीव चलना चाहे तो रास्ता भी मिल जाता है। अपनी बुद्धि तीक्ष्ण होनी चाहिए। विचार लेकर अच्छी तरह इन्हें समझने लगेगा तो फिर ठीक चल सकता है। तुम्हारा कसूर नहीं। तुमको सबक देने वाले भी ऐसे मिल जाते हैं जो पल में ब्रह्म बना देते हैं। दुनिया का मौज–मेला भी करते रहें और ईश्वर भी मिल जाये, यह कैसे हो सकता है? ऋषियों, मुनियों को जंगलों में जाकर तप करने की क्या ज़रूरत थी? बड़े–बड़े राजे, महाराजे राजपाठ छोड़कर घोर जंगलों में क्यों गए? अगर पानी बिलोने से मक्खन निकल आता तो रूखी कोई भी न खाता। माया–मान भी बना रहे और सत्–पद भी प्राप्त हो जाए, यह कैसे हो सकता है? ऐसा कोई तरीका, साधन नहीं निकला जिससे दुनिया भी बनी रहे और परम–सत्ता को भी जान लिया जावे। यहां तो पहले मरना कबूल करना पड़ता है: पल में ब्रह्म दिखाने वाले महात्मा भी इधर देहरादून में बहुत हैं। मनसूर की तरह सूली पर चढ़ने वाला मुश्किल से मिलेगा। तुम ब्रह्म को न ढूंढो, पहले पूछो कि संसार की प्रीति कैसे कम हो? पवित्र जीवन कैसे बने? जब मन को शुद्ध करने वाले साधन धारण करोगे, आप चलने का भी पता लग जावेगा! फ़रीद कहता है:

फरीदा मन अपना मुंज, निक्का करके कुट।
भरे ख़जाने साहेब दे, जो चाहे सो लुट॥

मोहम्मद साहेब कहते हैं, "मरने से पहले मर।" 'मौतू जितला मौतू'। प्रेमी, जिसने पाया है मर के पाया है। जिस रास्ते पर गुरु पीर चले हैं वह रास्ता धारण करो।

प्रश्न – एक और प्रेमी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! ईश्वर के किस नाम का उच्चारण करना चाहिए?"

उत्तर – श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "जिस ईश्वर के नाम में तेरा मन, चित्त लग जाए, बल्कि रम जाए, उसे उच्चारण करो। ईश्वर के अनेक नाम हैं। सब ज़बानों में उसके नाम मौज़ूद हैं। जिस ज़बान को तू समझता है उस ज़बान में जो ईश्वर का नाम अच्छा लगे वह ही तेरे वास्ते कल्याणकारी है, समझा। सत्संग में आया करो। आप ही इसकी समझ आ जायेगी। गुरमुख बनो। मन के कहने में मत चलो। बाकी जो किसी गुरु पीर ने बता रखा है, उस पर अमल करो। सत्संग में आकर विचार श्रवण करो, यानि सही संतों के पास जाकर सत्संग का लाभ उठाओ। हां, सूटा लगाने वालों के पास न बैठना।"

प्रेमी ने अर्ज़ की:– महाराज जी! गुरु की पहचान कैसे करें? जिस संत के पास जाते हैं उनकी तरफ से प्रेरणा यह होती है कि नाम, उपदेश ले लो।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी! इस बुद्धि को पारखी बनाओ यानि परखने वाली बनाओ, जिससे संत–असंत की पहचान हो जावे। फिर गुरु की अच्छी तरह सार लो। जिस तरह लुहार लोहे की सार लेता है, अच्छी तरह ठकोरना चाहिए। जब दो पैसे की हांडी लेते हो, किस तरह उसे इधर–उधर से देखकर लेते हो। सारी उम्र के वास्ते रहनुमा बनाना है, फिर उसकी जांच न की जाए। सत् वचनी नहीं बनना चाहिए। पहले यह सोचो गुरु की ज़रूरत भी है या नहीं। गुरु संसारी कामों की मदद के वास्ते चाहिए या रुह की तसल्ली के लिए गुरु धारण करना है। जिन्होंने अपनी तसल्ली कर ली है वह कभी ज़बानी किसी को उपदेश लेने के वास्ते नहीं कहेंगे। जिज्ञासु को समझदार देख सिर्फ़ उसे सत्–विचारों से जागृत करेंगे। जिज्ञासु बुद्धिमान हुआ तो आप ही प्रार्थना करेगा, मुझे किसी रास्ते पर कृपा करके डालो। सत्गुरु को कोई ज़रूरत नहीं चेले बनाने की, वह तो नित सत्–विचार सुनाते हैं। जिसकी बुद्धि हुई आप ही परख लेगा। गुरु की पहचान यह ही है, जिसके पास बैठने से चित्त को चैन मिले। चित्त अपनी चंचलता छोड़ दे। विचार करने के बाद जब मन के अन्दर कोई हुज्ज़तबाजी न रहेगी तब समझ लेना यहां कुछ है। फिर वहां सर ख़म (समर्पण) कर दो। जिस जगह या जिस संत के पास जाकर तसल्ली नहीं होती, आप ही का मन कह देगा, यहां कुछ बात नहीं बनी। पांच छः रोज़ इधर ही हैं, सत्संग सुनो।"

आसन अन्दर ले जाया गया। प्रेमी बहुत से चले गए। जब आप अन्दर आसन पर विराजमान हुए तो फरमाया:– "दुनिया भटक रही है, कोई उपदेश करने वाला महात्मा मिले। महात्मा लोग दुनियादारों से ज़्यादा नुमायश और जेबाईश में हों तो भोले–भाले गृहस्थियों का क्या बनेगा?"

प्रेमी भक्त बनारसी दास ने अर्ज़ की:– संसारी कितनी दुविधा धारण किए हुए हैं। किस कदर मोह–माया में जकड़े हुए, ईर्ष्या–द्वेष में अति तपायेमान हो रहे हैं। एक माज़रा इसी घर का सुनाया जिसमें प्रशाद पाने गए थे। पास–पास रहकर भी कितनी नफ़रत रखते हैं।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "दुनियादारों की बातों पर ध्यान न दिया करो। इनको अपने झगड़े में लगे रहने दो। न एक की सुनी न दूसरे की। न किसी से कुछ जाकर कहो। चुप करके प्रशाद पाया और चले आए। घरों में कई तरह के ईर्ष्या–द्वेष चलते रहते हैं। ऐसे लोगों पर कोई उपदेश, शिक्षा असर नहीं करते। सब माथा टेकू लोग हैं।"

फिर फरमाया:– सेवा के लिए रामजी दास को बुलाना हो तो काहनूवान से बुला लो। कम अज़ कम बार्लूगंज से डाक तो ले आया करेगा। तेरा लंगर का झगड़ा ही दो बजे तक ख़त्म नहीं होता। बाबू अमोलक राम तो इस दफ़ा आश्रम सेवा में लगे हुए हैं। अभी उसकी वहां बहुत ज़रूरत है। पता नहीं माया राम का स्वभाव बाबू से मिल गया है या नहीं। दो तीन प्रेमी आश्रम में रहने चाहिए।

श्री महाराज जी रात को बाहर चले गए। सुबह होने पर जब वापिस आए तो पता लगा डाक्टर भक्त राम जी दिल्ली से दर्शनों के लिए आ रहे हैं। दूसरे दिन जब सत्संग के बाद आपने विचार करने को कहा तो एक प्रेमी ने पूछाः

प्रश्न – महाराज जी, अगर कोई सत्‌वेत्ता गुरु न मिले तो?

उत्तर – जिस जिज्ञासु के अन्दर अति श्रद्धा, प्रेम प्रभु प्राप्ति का होता है और लग्न, विरह इस कदर बढ़ी हुई हो कि सिवाए भगवत प्राप्ति के और कोई कामना चित्त के अन्दर न प्रगट हो, उसे स्वयं भगवान ही किसी न किसी रूप में आकर दर्शन दे जाते हैं और नुक्ता समझा जाते हैं। ज़रूरी नहीं कि वह मठों, गद्दियों पर जाकर ख़्वार होता फिरे। अंतरयामी घट-घट के जानने वाले प्रभु किसी न किसी तरह सत्-मार्ग पर उसे डाल देते हैं। अमल करने वाला हो तो सही। पहले ऐसा हृदय बनाओ जहां उपदेश ठहर सके। जब शौक, श्रद्धा, विश्वास पूर्ण होता है, मेहर होने में देर नहीं लगती। सोने के पात्र में शेरनी का दूध ठहर सकता है। जुस्तज़ू जारी रखो। जो चलता है पहुंच जाता है। जो खोजता है वह पा लेता है। हज़ारों की तादाद में प्रभु के प्यारे हो चुके हैं, जिन्होंने सत्-पद प्राप्त किया। वह तुम्हारे जैसे इंसान ही तो थे। ढुलमुल यकीन वाला नहीं होना चाहिए। यहां तो सिदक वालों के बेड़े पार हैं।

प्रश्न – श्री महाराज जी, क्या संतों के आशीर्वाद से सफलता प्राप्त हो सकती है?

उत्तर – प्रेमी, बग़ैर पुरुषार्थ के स्वार्थ को पूरा करना चाहते हो। बिना कोशिश के न संसार की सामग्री मिलती है न करतार ही खुश होता है। दुनिया में जितने भी महात्मा, महापुरुष, गुरु, पीर हुए हैं या दूसरे जिन-जिन की संसार में बड़ी महिमा हो रही है, मसलन नेहरू, गांधी वग़ैरा सब बड़ी मेहनत और तप-त्याग, कुर्बानी से इस अवस्था तक पहुंचे हैं। इस आशीर्वाद लेने वाली बीमारी ने जीवों को पुरुषार्थ-हीन कर रखा है। यहां क्या लेने आये हो? जब दुनिया के सुख बग़ैर कोशिश यानि यत्न के प्राप्त नहीं हो सकते तो परमार्थ मार्ग में बिना कोशिश के कैसे कामयाबी हो सकती है? भगवान कोई ऐसा भोला-भाला नहीं कि झट ही तुम पर मेहरबान हो जायेगा। फ़कीर भी तो किसी पर जल्दी मेहरबान नहीं होते। वह भी हृदयों को टटोलते रहते हैं और देखते हैं कि संसारी किस वास्ते दौड़ रहे हैं?

62. भक्त बनारसी दास को ख़ास शिक्षा

गुरुदेव जी आनन्दमयी हालत में लीन थे। आँखें बन्द थीं। थोड़ी देर के बाद फरमायाः– "इस आनन्द अवस्था में संसार का नाम-ओ-निशान नहीं होता।" प्रेमी ने अर्ज़ कीः– "मेरी वज़ह से आप उस आनन्द अवस्था को छोड़ रहे हैं।

आपने उत्तर दिया:- "बनारसी, छोड़ना क्या पकड़ना क्या? अन्तर-बाहर उसकी महिमा प्रगट हो रही है, क्या बयान किया जावे।" फिर मिनट में अमृत वाणी प्रगट होने लगी।

सुर्त समानी शबद में, गई सुन्न के धाम।
अपने आप में नित गलतानी, सिमर-सिमर सतनाम॥
निर्मल मनुवां सतधाम समाया, सत शबद करी पहचान।
सुर्त मिल जाए सत् रूप में, पायो शबद का थान॥
सतगुरु सेव तीन ताप निवारी, घट अन्दर शबद लखाई।
बिमल शबद सुनी सारंग बानी, जाए सुन्न में दरस कराई॥
रंगा-रंग धुनकार होत है, तीन भवन के ठाऊं।
अपरम मानक घर नज़री आया, पिंगल मनुवां ठौर समाऊं॥
सतसरूप पायो अनूप, अखंड शबद धार परगासी।
घंटा शंख पखावज बाजे, सचखंड का भयो निवासी॥
अमीरस अंतर झर रहिया, कोई विरला गुरमुख पान करी।
काल त्याग निज रूप समाया, आवन जावन बिपत तरी॥
साध की सेवा अमर पद पाया, सत ठाकुर सिमर अखंड।
'मंगत' गुरमुख साजन निज घर आए, पायो रूप आनन्द॥

"प्रेमी, अमृत पड़ा हो, जब-तक इसे पान न करो तब-तक अमर नहीं हो सकते, तृप्त नहीं हो सकते। इसी तरह जब-तक अमल यानि अभ्यास न करोगे तब-तक परम-पद की प्राप्ति नहीं हो सकती। तुमको क्या पता किस तरह समय गुज़रा है? तरेल नदी के किनारे या ख़्वाजा जंगल में जिसे तूने देखा है, कैसे समय गुज़रा? किसी को दिखाना या सुनाना थोड़ा था। लोगों की निग़ाह में उन दिनों यह पागल समझे जाते थे। वे कहते थे, "नौकरी छोड़-छाड़कर घर आ गया है। बैठ-बैठ कर पड़ियाँ घिसा रहा है।" शरीर को गलाने के बाद रंग लगता है।

लकड़ी जल कोयला भई, कोयला जल भई राख।
मैं पापन ऐसी जली, कोयला भई न राख॥
दो नैनां मत खोयो, पिया मिलन की आस।
शरण पड़े की राखियो लाजा, आई तुम्हारे पास॥

"बड़ी भारी कुर्बानी की ज़रूरत है। बग़ैर तन, मन मिट्टी किए अमृत-फल का पान अति कठिन है। बड़ा विशाल हृदय बनाओ। ऐसा मन में पक्का इरादा बनाते रहो कि प्रभु, इस जीवन में तेरे स्वरूप में मिलना है। इस चाह को बढ़ाते जाओ। बड़ी प्रभु कृपा जानो कि फ़कीरों की नज़दीकी और सेवा का मौका मिला हुआ है। बच्चों वाला स्वभाव छोड़ो। सेवा, सिमरण करते-करते ही रंग लगता है।"

भक्त बनारसी दास ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! आपकी बड़ी दयालुता है जो कि चरणों में जगह बख़्शी हुई है। इतनी अक्ल नहीं रखता कि किस तरह सेवा में रहना है। अनजान–पने में ग़लतियाँ हो जाती हैं। बोलने की भी सही तमीज़ नहीं। बुज़ुर्गों को अदब–अदाब करना भी नहीं आता। आपकी ही मेहर की निग़ाह चाहिए।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "जितना समय तुझे नज़दीक बैठने का मिला है और किसी को नहीं मिला। अपने–आपको भाग्यवान समझो। फ़कीर किसी को नज़दीक ठहरने नहीं देते। किसी जन्म की जागृति हुई, फिर सेवा में आ गए हो। दृढ़ता धारण करने से काम बनता है। हर समय तुम्हारे पास हैं। कोई शंका हो तो पूछ सकते हो। यह चाहते हैं भाग्यशाली बनो। ध्रुव, प्रहलाद जैसे उच्च भक्तों के जीवन का विचार करते रहा करो और ऐसा दृढ़ इरादा बनाओ कि जैसे उनकी उच्च ज़िन्दगी हुई है वैसा ही बनूं। निशाना यानि गोल अपना शब्द के शिखर का रखो। सेवा, सत्संग और सत्–सिमरण साहिल पर पहुंचा देते हैं, गो प्रारब्ध कर्म कहीं के कहीं ले जाते है।। अपने खोटे कर्म रुकावटें डालते हैं, गो वे नज़र नहीं आते। बग़ैर तप, त्याग के सत् की संगत नहीं मिलती। सत्, सेवा ज़ाया नहीं जाती। अपनी भावना निष्काम रखो। आइंदा के वास्ते कर्म जंजाल को बढ़ाने की न सोचो। सुख–दु:ख को ईश्वर आज्ञा में समझकर विचरो। सत् सिमरण का साधन जो प्राप्त किया गया है, जब–तक उसमें डटकर न लगोगे, जान की बाज़ी न लगाओगे, तब–तक ख़ुलासी मुश्किल है। चलने वाली बात करो। नतीजा, प्रभु आज्ञा में छोड़ो। बार–बार बुद्धि को सत्–परायण करना, अहंकार छोड़ना, यह सत् भावना 'तू कर्ता सर्व तेरी आज्ञा' इसमें ग़र्क हो जाओ। क्योंकि यह मन हर लम्ह अहंकार में खड़ा है। जब–तक सुरति इस अंधकार में फंसी हुई है तब–तक अपने आपको नहीं जान सकती। अभ्यास करते–करते जब अहंकार नहीं रहता, झट प्रकाश हो जाता है। फिर बुद्धि के अन्दर यह निश्चय खड़ा हो जाता है, मैं आत्मा नित असंग हूं, मैं आत्मा निर्देह हूं। ऐसे शुद्ध भावों को पकड़ कर सुरति शारीरिक मद से ऊंचा होने लगती है। किसी समय पूरे रंग में रंगी जाती है। जैसे भी हो कर्तापन से छुटकारा हासिल करना चाहिए। इसी वास्ते इसे सेवा के मार्ग में लगाया जाता है। छोटी से छोटी सेवा करके मन के मान को ख़त्म करें। गुरु कृपा का यह मतलब है कि शिष्य उसके बताए हुए मार्ग पर दृढ़ता से चलकर अपने आप पर कृपा करके अपनी कल्याण करे। उसके अन्दर यह ख़्याल तक न जाए कि वह सेवा कर रहा है। ऐसा विचार करे कि जो हो रहा है प्रभु आज्ञा से हो रहा है। यह मन को मारने का बड़ा साधन है।"

''मन के जीते जीत है, मन के हारे हार।''

एक प्रेमी ने प्रश्न किया– "महाराज जी! गायत्री मंत्र के क्या मायने हैं? क्या इसके सिमरण करने से ईश्वर के दर्शन हो जाते हैं, इससे कोई सिद्धि मिल जाती है?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! किसी मंत्र के जप करने में कोई दोष नहीं। हर मंत्र में या तो ईश्वर की स्तुति की गई है या प्रार्थना की गई है। इस मंत्र में ख़ासकर यह प्रार्थना की गई है कि हे प्रभु! संसार के मालिक, हम सबको पवित्र बुद्धि प्रदान कर। बुद्धि की पवित्रता के वास्ते संस्कृत में प्रार्थना की गई है। ऋषियों, मुनियों ने तप करके सार को प्राप्त होकर ऐसे शब्द उच्चारण किए हैं। जब बुद्धि पवित्र हो जाती है सब राज़ खुल जाते हैं। आम जनता मंत्रों के अर्थों पर ग़ौर नहीं करती। पढ़ने पर ज़ोर देते चले जाते हैं, इसीलिए नास्तिकपन ज़्यादा हो गया है। जिस मंत्र का मतलब नहीं पता उसका असर क्या होगा? तोते की तरह रट लगा लेने से कुछ हासिल नहीं हो सकता। तोता सारा दिन राम–राम करता रहता है, उसे कोई फ़ायदा नहीं होता। खाली रटने से न संसार के सुख मिलते हैं न परमार्थ सुधरता है। तुम्हारे मंत्रों का मतलब विलायत, जर्मनी, रूस, अमरीका वालों ने समझा है। ग्रन्थ इधर से उठाकर ले गए। अच्छी तरह खोजकर अमल किया। बेशुमार धन प्राप्त करके सब तरह के सुख हासिल कर रहे हैं। तुम देवी–देवताओं के आगे हाथ ही जोड़ते–जोड़ते ख़त्म हो जाओगे। याचक कभी सुख हासिल नहीं कर सकता। पहले समझो कि इन मन्त्रों का जाप क्यों किया जाता है? बुद्धि शुद्ध होकर आत्म–दर्शन कर सकती है। ईश्वर को जिन्होंने समझा है, कई तरह से उन ऋषियों, मुनियों ने परम तत् की व्याख्या की है। कपिल ने अपना सिद्धान्त पुरुष और प्रकृति के रूप में बयान किया है। पातंजली ने अष्टांग योग का भेद बताया है। गौतम ने जगत को बुद्धि की भरमना के रूप में बयान किया है। कणाद ने सारे जगत को परमाणु रूप बताया है। व्यास जी ने फरमाया है– 'ब्रह्म का सब विस्तार है'। जैमिनी जी ने समझाया है कि सत्कर्म क्या हैं? और निष्काम कर्म पर ज़ोर दिया है। इस तरीके से सिद्धान्त को बयान किया है कि अक्ल दंग रह जाती है। मगर जैसा बुल्ले ने कहा है:

'इलमों बस करें ओ यार, एको अलफ़ तेरे दरकार'

अगर असलियत को जानना है तो इस तरफ मरो। गुरु शंकराचार्य ने कहा– "ब्रह्म सत्यम् जगत मिथ्या," 'झूठ संसार सत् करतार'। इसलिए सदाचारी जीवन बनाओ। मेहनत करके गुज़रान करो। किसी गुरु, पीर से रास्ता लेकर दो घड़ी मालिक की याद करो। संसारियों को रिद्धि–सिद्धि के झगड़े में नहीं पड़ना चाहिए। एक प्रभु का नाम सर्व सिद्धि दातार है। सच्ची श्रद्धा, विश्वास से इस मार्ग पर लग जाना चाहिए। जिस तरह चाव से संसार के काम करते हो, उसी तरह मालिक के नाम का उच्चारण करो। देखो, फिर क्या रंग लगता है? यह जीव बड़ा बेईमान है, चाहता है कि संसार के सुख भी बने रहें और रब्ब भी मिल जाए। ईश्वर जिसे कहते हो वह सबका परम गुरु हर एक के अन्तर की जानने वाला है। उसके दरबार में कोई चालाकी फ़रेब चल नहीं सकता। देखो, जिनको तुम मलेच्छ कहते हो, उनमें इब्राहीम पहले पैग़म्बर हुए हैं, जिनसे इस्लाम मत शुरू हुआ है। उन्होंने ख़ुदा यानि परमात्मा को खुश करने के लिए सबसे ज़्यादा अजीज़ चीज़ अपने लड़के की कुर्बानी दी

ताकि मालिक खुश हो जाए। मालिक की रज़ा में तन, मन, धन कुर्बान कर देना ही इबादत या बंदगी है। अर्जुन और कृष्ण भेष बदल कर मोरध्वज के पास जाते हैं और वह अपने लड़के को आरे से काटकर दो टुकड़े कर देते हैं और उन्हें खुश करते हैं। धर्म–धारा पर चलना कोई आसान नहीं है। जब मोरध्वज ने लड़के को काट दिया तब भगवान ने प्रगट होकर दर्शन दिए। मोरध्वज ने उस समय अर्ज़ की:– "महाराज जी! आइंदा ऐसा इम्तिहान किसी का न लेना। मंत्र सिद्धि उन धर्म–पुरुषों ने कर रखी है। आज एक वक्त का फ़ाका आ जाए तो मुसीबत आ जाती है। ईश्वर ही हिन्दू कौम को सुमति देवें। हिन्दू कौम पक्की पैसे की पीर है, खुदग़र्ज़ी कूट–कूट कर भरी है। लोड़ते रब्ब को हैं, मगर चमड़ी जाए न दमड़ी। जब–तक हर किस्म की कुर्बानी का मादा पैदा नहीं होता तब–तक ज़िन्दगी ऊँची नहीं होती। तप–त्याग के वास्ते बड़ी रब्बी विश्वास की जरूरत है।"

शाम को पूरे पांच बजे प्रेमी आने शुरू हो गए और ठीक समय पर सत्पुरुष ने सत्संग शुरू करने की आज्ञा फरमाई। महामंत्र और मंगलाचरण सबने मिलकर उच्चारण किया और फिर "समता स्थिति योग" से वाणी पढ़ी गई। उसके बाद सत्पुरुष ने जो अमृत वर्षा फरमाई उसका सार नीचे दर्ज किया जा रहा है ताकि प्रेमी पाठक भी उसका लाभ उठावें।

63. सत् उपदेश अमृत

जो भी जीव संसार में शरीर धारण करके आया है उसे तीन ताप आधि यानि मानसिक दु:ख, व्याधि यानि शारीरिक दु:ख, उपाधि यानि बैरुनी संकट जो इत्फाकन आ जाते हैं, सता रहे हैं। किसी को आधि रोग सता रहे हैं, किसी को व्याधि रोग लगा हुआ है और किसी को उपाधि रोग लगा हुआ है। चौरासी लाख जिया–जन्त सब इन रोगों के रोगी हैं। और योनियों को छोड़, इस मानुष जामे का विचार करो। इस चोले को धारण करके हर एक जीव आशा, तृष्णा को पूर्ण करने में लगा हुआ है। इसे पूर्ण करने के लिए यह दिन–रात यत्न–प्रयत्न करता रहता है। इस अज्ञानता को लिए हुए सब जीव चल रहे हैं। इसे इस चक्कर का पता ही नहीं, और न ही इसे पता है कि इससे कैसे छुटकारा पाया जा सकता है? अगर कोई जीव संध्या–बंदना करता भी है उसमें उसका स्वार्थ छुपा हुआ है। जीव को पता ही नहीं कि ईश्वर की प्राप्ति किस लिए करनी है? किसी भी व्यक्ति को खड़ा करके पूछो कि क्या इस धाव–धाई से शांति मिली है? तो उसके जवाब से पता लगेगा कि शांति नहीं मिली। अगर किसी के अन्दर शांति आई भी है तो प्रभु प्यारे के अन्दर आई है। इस प्रकृति रूप संसार में आकर जीव ऐसा भूल में पड़ गया है कि उसे कोई पता नहीं कि यह जीव किधर से आया है और किधर इसने जाना है? यह जीव चेतन–शक्ति से बिछुड़ कर कई तरह की मनमानी कर रहा है। अपनी वासना को पूर्ण करने के लिए मढ़ी–मसान वग़ैरा की पूजा में लगा रहता है। जिस परम तत् के जानने से बुद्धि निर्मल और बलवान होती है, जीव उसको समझने की कोशिश

नहीं करता। जन्म–जन्मांतर तक इसी तरह भटकता रहता है, सही सार को नहीं पाता। जब–तक आत्मा का बोध नहीं होता जन्म–मरण के चक्कर से छूट नहीं मिलती।

आवे दया खोतया कचियां ले आवना, पकियां ले जावना।
ईटां नहियूं मुकना, तूं नहियूं छुटना।।

यह पंजाबी में शब्द है, शायद कई प्रेमियों को समझ न आती हो। ईंटों के पकाने के लिए भट्ठा होता है। उस पर जो गधे कच्ची ईंटों को लाते हैं वे पक्की ईटों को ले जाते हैं। न वे ईंटें ख़त्म होती हैं न गधे की जान छूटती है, क्योंकि भट्ठे बंद हो भी जायें तो जो पक्की ईंटें होती हैं उन्हें दूसरी जगह पहुंचाने के वास्ते उससे काम लेना शुरू कर देते हैं। ठीक यही हालत संसारी जीवों की है। सारी उम्र कमाई करते–करते आयु ख़त्म हो जाती है और मर जाते हैं। माल, पुत्र–जंवाई खा जाते हैं। आपको टूटे जूते और धोती–टोपी के सिवा कुछ प्राप्त नहीं होता।

'परमेश्वर दे भुल्लियां, व्यापन सभे रोग'।।

एक ईश्वर को भूलकर जीव अनेक तरह की चिन्ता, फ़िक्र में गिरफ़्तार हो जाता है। ईश्वर पर जब विश्वास ही नहीं मन कैसे ठहरे? मन को चंचल करने के लाखों सामान नित नए से नए बन रहे हैं। मगर संसार की कोई वस्तु भी इसे तसल्ली, तृप्ति नहीं दे सकती। अगर तसल्ली चाहते हो तो पहले अपने अन्दर जो भोग–वासना की अग्नि प्रचंड हो रही है उसको शांत करने का उपाय सोचो। अगर सांसारिक वस्तुओं से उसे बुझाने का प्रयत्न करोगे तो यह आग पर घी का काम करेगी और अग्नि अधिक प्रचंड होगी। नुमायशी जीवन इसे बढ़ाने वाला है, इसलिए अपनी ज़रूरत को कम करो। सादगी धारण करो। सत्संग में जाकर सत् विचार लो और सत् सिमरण में लग जाओ। जब मर्यादा धारण करोगे, खाने–पीने और लिबास को सादा करोगे, चेष्टा कम होगी। सत् सिमरण करने से मन शांत होगा। संसार की चमक–दमक को देखकर जो मोहित हो रहे हैं वे मूढ़ बुद्धि जीव हैं। जीव को चाहिए कि अपने अन्दर जो झगड़ा लगा हुआ है उसको निपटाए। अपना अंत:करण शुद्ध करे और इस देह के अन्दर जो जीवन शक्ति आत्मा है, जिस करके यह शरीर जीवित हो रहा है, उसको जानने का यत्न करे। गांधी के सादा जीवन से शिक्षा लो। उसके वचनों पर ध्यान दो। वे राज्य कर्मचारी कैसे त्यागमयी जीवन वाले चाहते थे, वैसे बनो। मगर इस समय देखा जा रहा है कि जीव किस कदर बढ़–चढ़ कर विलायत वालों की नकल करके उन्हें मात करने पर तुले हुए हैं। उनकी रीस करके अगर नुमायशी जीवन बढ़ता गया तो वासना का बढ़ना भी लाज़मी है। पुराने ऋषियों–मुनियों का मिशन तो लोप हो चुका है और अशांति इसलिए बहुत बढ़ गई है, इसका अंज़ाम खुद देख लेना क्या होता है? मकड़ी अपने मुख से जाला निकाल कर अपने इर्द–गिर्द इसे तान लेती है और इसमें फंसकर नाश को प्राप्त होती है। उसी तरह यह नुमायशी जीवन बढ़कर वासना को भी अति बढ़ा रहा है। ज़रा दूसरे बड़े देशों को देखो, कैसे वे अपनी वासना को बढ़ाकर

दूसरों की नाश की सोच रहे हैं। मगर प्रकृति का नियम है जो दूसरों का नाश करता है उसका अपना भी नाश हो जाता है। इसलिए अपने कर्म शुद्ध करो। अपने प्रारब्ध कर्म आप ही बनाने वाले हो। आज के आपके शुभ–अशुभ किए हुए कर्म आने वाले समय में प्रारब्ध कर्म बन जाते हैं। इसलिए सही सोच और सही कोशिश करो ताकि सही नतीजा निकले। न ही व्यौहार की पवित्रता हो, न आहार पवित्र हो और न ही संगत पवित्र हो तो कैसे जीव को धीरज और सुख प्राप्त हो सकता है? मर्यादा का जीवन बना कर चलोगे तो ईश्वर की याद भी बन जावेगी। अगर रोग का इलाज तो किया मगर बद–परहेजी कायम न रखोगे, तो सेहत कैसे हो सकती है? ईश्वर ने बुद्धि दे रखी है, बुद्धि से सही सोच कर सतकर्म करोगे और सत्–सिमरण में भी लगोगे तो दु:ख, अशांति और चंचलता दूर हो जाएगी। गुरु पीरों की शिक्षा लेकर चलोगे तो शांति ही शांति मिलेगी। देखा–देखी अगर तुम भी गुरु, पीर, अवतारों का सत्कार करके सिर्फ़ धूप–दीप से सेवा करने लग जाओगे, और जो वे कह गए हैं उस पर अमल नहीं करोगे तो न तो यह लोक सुधरेगा न परलोक ही। सुख से भी महरूम रहोगे। ईश्वर सबको सुमति देवें। सुबह इधर से चले जाना है। जो कुछ सुना है उसको दिल में जगह देना। फ़कीरों के पास यह ही धन है जो दे रहे हैं। जो भी इनके वचनों पर अमल करेगा लाभ प्राप्त करेगा। सूरज का काम है रोशनी देना, इससे कोई .फ़ायदा उठाये या न उठाये यह उसके भाग्य। जिधर प्रेरक शक्ति ले जावेगी उधर चले जाना है। जैसा उसकी आज्ञा से विचार निकलता है आगे रख दिया जाता है। इस पर अमल करके सही ज़िन्दगी बनानी है। ईश्वर कृपा करें।

इसके बाद 'नखेत्र पर्वत गोष्ठ' से कुछ दोहे पढ़कर आरती व समता–मंगल सबने मिलकर उच्चारण किए और सत्संग समाप्त हुआ। प्रशाद बांटा गया।

सत्संग समाप्त होने पर श्री महाराज जी ने फरमाया:– "किसी प्रेमी का कोई विचार हो तो करे।"

एक प्रेमी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! आपकी हम जीवों पर कृपा होनी चाहिए। संत आदिकाल से इस भारतवर्ष की रक्षा करते आए हैं। चन्द दिन आपके विचार सुने हैं। इस तरह के सत्संग, सत् विचार हर जगह हों तो प्रेमी आप ही अपना सुधार शुरू कर देंगे। आप जैसे सत्पुरुषों के होते हिन्दुस्तान के भाग्य ख़राब नहीं हो सकते।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी सुन! ऋषि–मुनि, संत, अवतार शुरू से कृपा करते आए हैं। कृष्ण के ज़माने में उसकी चंद ही उंगली पर गिनती वाले सज्जनों ने बात सुनी। हर तरीके से महान हस्ती ने समझाने की कोशिश की। राम के ज़माने में उनके साथ कैसी बीती? सत्युग में देवताओं, असुरों के युद्ध होते रहे। हिन्दुस्तान की क्या हालत थी? नौ सौ हिस्सों में बंटा हुआ था। अब पांच, सात साल से लाखों वर्षों के बाद एक हुआ है। अवतारों की कब किसने सुनी? सुनते तो आज यह हालत न होती। फिर भी दूसरे देशों से अधिक भारत में अभी भी सतोगुणी स्वभाव के जीव मौ.ज़ूद हैं। अध्यात्मवाद का यह मरकज़ था, धर्म को जानने वाले ज़्यादातर भारत में ही हुए हैं।

दूसरे मुल्कों की क्या हालत थी? ज़हालत की ज़िन्दगी गुज़ारते थे। तीन, चार सौ साल से सूझ–बूझ वाले हो रहे हैं। वह भी प्रकृति को असली सुख समझते हैं। ईसा का उपदेश उसके ज़माने में किसी ने नहीं सुना। मोहम्मद साहेब को मक्का से कई दफा निकलना पड़ा। आख़िर मदीना में जाकर रहना पड़ा। दुनियादार कभी भी सत्पुरुषों को उनकी ज़िन्दगी में अच्छी तरह नहीं जानते। बाद में जब वे संसार से चले जाते हैं तब होश आती है, तब उनकी मूर्तियां थाप कर पूजा शुरू कर देते हैं। इस वक्त ईसाई, बौद्ध, मुसलमानों की ही दुनिया में ज़्यादा ज़्यादती है। हिन्दू सिर्फ़ इस कोने में ही टल्ली खड़काते रहते हैं। सैंकड़ों किस्म के मत इस हिन्दू जाति में हैं। सत्पुरुष कितनी–कितनी कुर्बानी जनता के वास्ते कर गए हैं। सबमें एक आत्म–तत् देखने का उपदेश मौज़ूद है, मगर जातिवाद ही ख़त्म नहीं होता। हर एक जीव का स्वभाव अपना–अपना, और चाल–ढाल व मत भी अलग हैं। ईश्वर की माया विचित्र है। सतपुरुषों ने अपनी तरफ से कोशिश करने में कोई कसर नहीं छोड़ी, मगर दुनिया इसी तरह चलती आई है और चलती जायेगी। गुरमुखों को अपना सुधार करके गुरमुखता फैलानी चाहिए। अपनी तरफ से हर जीव मात्र से प्रेम रखो। तन, मन से जितनी सेवा बन सके, करो। दो घड़ी मालिक की याद में समय दिया करो। आहार–व्यौहार की पवित्रता पर ख़ास ध्यान देकर चलोगे तो कभी दुःख नहीं देखोगे। ईश्वर की सत्ता से ही सब जीव मात्र जिन्दगी ले रहे हैं। दीनदयाल ही कृपा करें।

64. विश्वास की दृढ़ता

श्री महाराज जी आनन्दित अवस्था में बैठे थे, पास भक्त जी बैठे थे। थोड़ी देर में आंख खोली और पूछा:– "क्या सोच रहा है?"

भक्त जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! आपके पास बैठने से जो शांति व ठंडक मिलती है वह बाहर जाकर नहीं मिलती।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "क्या ठंडक का रूप बयान कर सकते हो?"

भक्त जी ने कहा:– "महाराज जी! बयान नहीं कर सकता। चित्त के अन्दर प्रसन्नता, धीरज, सन्तोष आ जाता है। यह ही समझता हूं, अब कुछ जरूरत नहीं। आपके पास माहौल ही ऐसा होता है। हां, बाहर जाकर तबीयत मचल जाती है। हो सकता है आपसे किसी समय अलग होने पर मन बिगड़ जाए।"

श्री महाराज जी ने पूछा:– "क्या चाहते हो?"

भक्त जी– "जिस आनन्द व मस्ती में आप विराजमान हैं इस हालत की बख़्शीश हो जाए तो कौन सा घाटा पड़ता है"?

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "अभी तक इनकी बख़्शीशों को नहीं समझा। तुझे नज़दीक बैठने का और फिर सेवा का हक मिला हुआ है। क्या यह कम मेहरबानी है? जितनी भी आसमानी

बांग सुनाई गई है, तेरे हाथों से कलमबंद करवाई गई है। क्या यह मामूली कृपा जानते हो? मुर्शिद के नज़दीक रहकर इतना वक्त ख़िदमत में लगाया, यह ख़ास फ़कीरों की कृपा और ईश्वर की बख़शीशें समझो। जब-तक तेरे नज़दीक बैठे हैं तब-तक तुझे मालूम नहीं हो सकता। जिस समय ओझल हो गए तब कदर आवेगी। फ़कीर कब किसी को इतना समय सेवा का देते हैं? बहुत आज़ादी तुमसे मिलने-जुलने की रखी हुई है। असल में यह श्रद्धा को कमज़ोर करते हैं। फ़कीरों को पाबंदी लगाने से क्या गर्ज़। जब कोई आता है विचार करके चला गया फिर ग़ैबी हालत में चले गए। गर्दन झुका ली, मालिक को देख लिया। तुम्हारे वास्ते सेवा, सिमरण है। जिस कदर सिमरण में लगोगे उतना ही कदम आगे बढ़ेगा। कुछ करो, शक हो तो पूछ सकते हो। कोई राज़ तुमसे छिपाकर नहीं रखा हुआ। अब तो मेहनत तुमने करनी है। साधन, जप, तप, सेवा का मतलब यह है कि सत् विश्वास में दृढ़ता प्राप्त होवे। सेवा और सिमरण के मार्ग में भेष-भेषान्तर की ज़रूरत नहीं। मन के अन्दर छल-कपट, चालाकी आ जाती है और इच्छाओं को पूर्ण करने की रग भड़क उठती है। संसार की प्रीति कायम है, भोगों की लालसा मौज़ूद है, धन के साथ अति प्यार है, और भी कई प्रकार के लोभ, मोह, अहंकार बढ़ाकर वासना पूर्ति के साधन सोच रहा है। ऐसे स्वभाव वाले इस मार्ग में मुश्किल से चल सकते हैं। दीर्घ वासना धर्म के रास्ते में बड़ी रुकावट है। कमाई करके हासिल करोगे तब समझ आयेगी।

''जिन्हां तकवा रब दा, उन्हां रिजक हमेश''।

"फ़कीरों जैसी मौज तेरे जैसी किसने देखनी है? फ़कीरों के मंजूरे-नज़र हो। शक में न रहना। अंतरगत हालत के वास्ते मुशक्कत (मेहनत) खुद करनी पड़ेगी। आज भी यह ही कहते हैं। इनकी हिदायत हर समय यह ही याद रखो। बग़ैर रात-दिन यत्न के आज-तक किसी ने सत्सरूप को अनुभव नहीं किया। ब्रह्मा, विष्णु भी तेरे सामने आ खड़े हों, तुझे यह ही ज्ञान-उपदेश करके अलोप हो जावेंगे। चाहे इसे चंद दिनों में समझ लो, चाहे सालों में जन्म गुज़ार दो। जब यत्न करोगे तब ही पाओगे। प्रेमी, पहले गुरु कृपा समझो फिर अन्तर्गत हालात के मुतालिक पूर्ण रूप से सब हालात का ज्ञान तुम्हें बतला दिया गया है। यह तुझे बाद में समझ आयेगी, अभी बाल बुद्धि है। आसानी से दर्शन हो गए और जल्दी सार को समझा दिया। बच्चू पहाड़ों, जंगलों, गुफ़ाओं में ढूंढ-ढूंढ कर मार्ग मिलता है, तब पता लगता है। अब भी तुम न समझो तो तुम्हारी बद-किस्मती। हर हालत में मेहनत करनी पड़ेगी। यह जितनी भी सेवा है, सब सत सरूप की तरफ ले जाने वाली है। इस मार्ग में दिल बड़ा करके चलना पड़ता है। यह मन गुरु सेवा में लगा हुआ है तब कुछ शांति दिखाई दे रही है। ज़रा खुला छोड़ कर देखो, क्या नाच नचाता है? अभी मन का विस्तार तुमने देखा नहीं। इसने बड़ों-बड़ों को नाक से लकीरें निकलवाई हैं। निर्मान होकर चलते चलो। संसारियों के अड्डे पर चढ़कर क्या हासिल हो सकता है? यह खिलाते थोड़ा हैं काम दुगना लेकर भी जान नहीं छोड़ते। इनके साथ लगकर दीन-दुनिया दोनों बिगाड़ लेता है। इनका साथ हमेशा दुःख स्वरूप है। वैसे चलते-चलते संसारियों की ठोकरें भी सुधार करने वाली हैं।"

फिर अर्ज़ की गईः- महाराज जी! इस वैसे चलते-चलते संसारियों की ठोकरें वाले फ़िकरे का क्या मतलब है?

आपने फरमायाः- यह जो सिलसिला लोगों के घरों में जाकर भिक्षा लेने का है, उसमें कई तरह की बातें हो जाती हैं। कहीं से इज़्ज़त है, कहीं से बेइज़्ज़ती। कोई लानत-मलामत करने लग जाता है। उस समय धीरज रखना ही बहादुरी है। इधर घर-घर मांगकर खाने वाला सिलसिला ही नहीं रखा गया। संसारियों की उसमें गाली-गलौच सुननी पड़ती है। गुरु के बंदे वहां भी उफ नहीं करते। सब्र, संतोष से टुकड़ा लेकर जमा करके बांट कर खाते हैं। जो कुछ मांगकर लाते हैं, लाकर गुरु के आगे रख देते हैं, अगर गुरु, पीर साथ नहीं, चार साधु बैठकर तक्सीम कर लेते हैं। जो खाने से बचा वह कुत्तों, कौओं को डाल दिया। मांगकर खाना और रहना, दो रोटी खाकर पानी हाथ से पीकर भजन के वास्ते कोई एकांत जगह देखकर बैठ गए। कुछ आराम किया और आगे चल दिए। यहां इन सब झगड़ों से आज़ादी है। जिस हालत में हो उसमें रहकर रास्ते पर चले चलो। ईश्वर नित अंग-संग हैं। सर्वव्यापक का मतलब ही यह है कि जिसने शरीर दे रखा है वह ही इसकी चिन्ता भी कर रहा है। तू ख़्वाम-ख़्वाह मालिक बनकर फिक्र में न पड़।

कारन करता जान के, मन की चिंता त्याग।
'मंगत' देह पिंड जिस दिया, रहो चरन तिस लाग॥

65. मसूरी में एकांत निवास

30 अप्रैल, 1951 को तांगा बाग़ के बाहर लाया गया। श्री महाराज जी का आसन अगली सीट पर लगाया गया। प्रेमी भी जमा हो गए थे। श्री महाराज जी तांगे में बैठे। सब प्रेमियों ने बारी-बारी प्रणाम किया और तांगा बस स्टैंड पर ले आए। कई प्रेमी भी चलकर वहां पहुंच गए। दस बजे बस रवाना हो पड़ी। जब बस धोबी-घाट से ऊपर सड़क पर, 14 मील का जहां पत्थर लगा हुआ था पहुंची, वहां कुछ फ़ासले पर ज़रा आगे खड़ी करवा ली। श्री महाराज जी, राय साहब रल्ला राम जी व भक्त जी उतर आए। चौकीदार सड़क पर खड़ा इंतजार कर रहा था। सामान उतारा गया और चौकीदार के हवाले किया गया और श्री महाराज जी, भक्त जी व राय साहब नीचे सिद्ध खड्ड के किनारे पहुंच गए और आसन अख़रोट के दरख़्त के नीचे लगाया गया। श्री महाराज जी फरमाने लगेः- "धरती कहां जा सकती है? इस जगह पर कदम रखने के लिए शरीर को लाना पड़ा है। किस शौक से धोबियों ने यह जगह बनाई थी। बावैला आया, किसी को कहीं फैंक दिया, किसी को कहीं। उनके यहां होते कैसे ठहरा जा सकता था? प्रभु की माया बड़ी अगाध है। आने से पहले ही जगह खाली भी कर दी, बिकवा भी दी।"

राय साहब ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! आपकी कृपा से जगह को भाग्य लग गए हैं। हमने भी आपके कारण इस जगह आना था। इतनी देर देहरादून से मसूरी आते हो गई है, पता ही न था यहां कोई रहता भी है।"

सामान चौकीदार ले आया। सफ़ाई करके सामान अन्दर लगाया गया।

इस जगह भी रात को श्री महाराज जी बाहर तशरीफ़ ले गए। दूध तो आ गया मगर गाय का दूध नहीं मिला। इसके बारे में बातचीत शुरू हुई तो आपने फरमाया:– "गाय का दूध आबे-हयात और इसका गोश्त ज़हरे कातिल है। ऐसा मुसलमान फ़कीरों ने भी कहा है। ऋषियों-मुनियों ने गाय का दूध ही पीकर इतने बड़े वेद-शास्त्र प्रगट फरमाये। पहले ज़माने में बड़ा सरमाया गऊओं का ही होता था। जिसके पास ज़्यादा गऊएँ होती थीं वह मालदार गिना जाता था।"

प्रेमियों को पत्र लिखे गए। एक पत्र में भक्त जी ने लिख दिया कि महाराज जी की दयालुता से ईश्वर आपके कार्य सम्पूर्ण कर देंगे। फ़िक्र न करें। जब श्री महाराज जी ने पत्र पर नज़र डाली और यह लफ्ज़ पढ़े, तो आपने फरमाया:– "यह क्या लिखा है? ऐसी बात कभी मत लिखो। अगर इसका काम न बने तो उसका विश्वास और श्रद्धा कम हो जावेगी। किसने तुमको ऐसा आशीर्वाद देने की आज्ञा दी है? तू कोई त्रिकालदर्शी है। अभी से अंदाज़ा लगा रहा है कि ईश्वर काम पूर्ण कर देंगे। कल नाम काल का है। क्या आगे के तुम जिम्मेदार हो?" खूब झाड़ डाली और फरमाया:– "ऐसा लिखो कि ईश्वर पर विश्वास रखें और यत्न करते जावें। होना न होना उसकी आज्ञा में विचार करें। अपना सही पुरुषार्थ कभी खाली नहीं जाता। ईश्वर नित रक्षक और सहायक हों। सब काम विश्वास की दृढ़ता से पूरे होते हैं। वह आप ही जो समझना है समझ लेगा। हमेशा बात ऐसी लिखनी चाहिए जिससे दूसरे की तसल्ली हो जाए। वर, श्राप फ़कीर नहीं दिया करते। ईश्वर का भरोसा बार-बार पक्का करवाना चाहिए। सब काम प्रभु कृपा से हुआ करते हैं ऐसा यकीन बनायें। बेईमान, तू क्यों गिरफ़्त में आने वाली बात करता है? साथ में फ़कीरों को भी बांध रहा है।"

फिर फरमाया:– "ज़ोर से इस वास्ते कहते हैं कि तेरे दिमाग़ में बैठ जाए। ढीला वचन कभी न लिखो। ईश्वर का विश्वास बड़ी चीज़ है। तूने यह कोई मामूली बात समझी हुई है। सब ज्ञान, ध्यान, तेज़, ईश्वर विश्वास से ही प्राप्त होता है। ईश्वर विश्वास रखने वाला ही हर बात में विजय हासिल कर सकता है। ईश्वर विश्वासी ही असली परम तृप्त है। बाकी सारा संसार ही अतृप्त, अशांत और दुःख में है। जो धीरज ईश्वर विश्वासी के अन्दर आता है उसकी महिमा कौन बयान कर सकता है? सम-तत् जानने वाला ही प्रभु विश्वासी है। उसने ही परम प्रसन्नता को प्राप्त किया हुआ है। जिसके अन्दर ज़ाते-वाहिद का यकीन आ जाए उसे फिर किसी के आधार की ज़रूरत नहीं रहती। सब रिद्धि-सिद्धि ईश्वर विश्वास रखने वाले को हासिल होती है। ईश्वर विश्वासी बड़ी कुर्बानी देने वाला होता है। बग़ैर सत् विश्वास के भूत-प्रेतों वाला जीवन है। विश्वास हीन लोक-परलोक में शांति नहीं पा सकता। शक वाली बात कभी भी नहीं लिखनी चाहिए। कई हालात ऐसे

बन जाते हैं। प्रकृति के कामों का क्या पता होता है? काम मुकम्मल होते हुए भी बिगड़ जाते हैं और बिगड़े हुए संवर जाते हैं। प्रभु की माया का कोई अंत नही। इस तरह लिखने से इनकी कोई शान नहीं बढ़ जाती, बल्कि काम न बने तो उल्टा वह विश्वासहीन हो जावेगा। अगर उसका विश्वास पुख़्ता हुआ तो मालिक आप कृपा करने वाला है। फ़कीर हर समय हां थोड़ी करते रहते हैं। यह भी कोई समय होता है। अगर कोई बात मनवानी हो तो जो हाज़िर होकर प्रार्थना करेगा उसकी वृत्ति देखी जाती है, आया सिर्फ़ गर्ज़ पूरी करने के वास्ते आया है या पूरी श्रद्धा लेकर आया है। तुमने झट वर उसे दे दिया। समझ से काम लिया करो।"

फिर प्रेम से फ़रमाने लगे:– "डांट किसी समय इसलिए देते हैं ताकि भूल न जाओ।"

भक्त जी ने ग़लती को स्वीकार किया और अर्ज़ की:– मैंने इस भाव को मामूली समझा था। इस तरह लिखने में अच्छी बात होगी कि ईश्वर काम सम्पूर्ण कर देंगे।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "लिखने में अक्षर आसान हैं मगर नतीजा ग़लत निकलता है। पहले सोच लिया करो, फिर लिखा करो। तूने आज बड़ी भारी ग़लती की है। प्रेमी, अगर प्रभु कृपा हो भी जाए तो भी उभरना नहीं चाहिए। अभी तो सफ़र ही शुरू नहीं किया। कहां खड़े हो? हमेशा नीचे देखो। उस महान प्रभु को ''कर्ता–हर्ता'' जानो। तू कर्ता, तू हर्ता। अंजान भाव से विचरो। कभी शक वाली बात न करो। हर लम्ह मन की चाल को देखो। बिगड़ने में एक पल नहीं लगता। वर्षों साधना कर–कर के ज़रा अहंकार आया कि मन बिगड़ गया।

मोटी माया सब तजें, झीनी तजी न जाए।
मान बड़ाई ईर्षा, सबको गई है खाए।।

फिर भक्त जी ने पूछा:– "महाराज जी! मोटी माया का मतलब क्या है?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:–"घर छोड़ दिया, औरत, बच्चे, भाई–बंद छोड़ दिए। धन–धाम छोड़कर भेष धारण कर लिया। अन्न छोड़ कर फल खाने शुरू कर दिए, दूध धारी बन गए। त्यागी बनकर भी मान–बड़ाई अंदर रही। यह सब मोटी माया का स्वरूप है। 'मैं' उनकी खड़ी रहती है।

धन तजना सहज है, और नारी का नेह।
मान बड़ाई ईर्खा, दुर्लभ तजना एह।।

"ज़रा किसी को नमस्कार न किया या उनकी आज्ञा मानने में हील व हुज्ज़त की, बस फिर देखो, उनकी क्या हालत होती है? मन का मान ही डुबोता आया है। यह मान ही कई तरह के विकार खड़े कर देता है। एक दफ़ा तेरा वचन भी इस हालत में पूरा हो जाए फिर इस निर्मानिता में रहेगा, बड़ी मुश्किल बात है। जब–तक अंतर विखे रंग न लग चुका हो। मन के मान में सब गृहस्थी, विरक्त, पंडित, काज़ी, ज्ञानी, शेख, त्यागी, वैरागी ग्रसे हुए हैं। मन का मान त्यागने वाले नानक, कबीर, दादू, पलटू, रविदास और मोहम्मद आदि मुसलमान फ़कीर बहुत आजज़ी, दीनता

वाले हुए हैं। ईश्वर की याद और निर्मानता से ही फ़कीरों का जीवन शुरू होता है। न समझो तो पूछ कर लिखा करो। ऐसे मामले बड़े नाज़ुक होते हैं। ''जिन पाया तिन छुपाया''। धन, दूध-पूत की गिनती कभी कोई नहीं करता, मगर यह चीज़ें छुपानी पड़ती हैं। प्रभु सिमरण और सेवा रूपी धन को खूब छुपाना पड़ता है।"

आपने इस जगह एकांत निवास और कठिन तप शुरू कर दिया। आप हमेशा की तरह रात को जंगल में नीचे चले जाते और एक चट्टान पर, जो सिद्ध-खड्ड के किनारे थी और पास ही छोटा सा पानी का आबशार (झरना) था, उस पर जाकर बैठ जाते और समाधिस्त हो जाते। सुबह काफ़ी दिन निकलने के बाद जब आप वापिस तशरीफ़ लाते तो दूध पीकर फिर अख़रोट के दरख़्त के नीचे आनन्दित अवस्था में मग्न हो जाते।

66. प्रेमी शेषराज के शरीर त्याग पर विचार

प्रेमी शेषराज का ज़िक्र पहले आ चुका है। जब वह श्री महाराज जी से दीक्षा ले चुका तो उसके बाद मिलिट्री में भरती हो गया और ई॰एम॰ई॰ की ट्रेनिंग मेरठ लेने लगा। ऐसी इतलाह आती रही कि अच्छी पोज़ीशन उसको मिलती रही। मगर उसके अन्दर साधना करने की बड़ी तड़प थी। उसने सत्पुरुष से आज्ञा मांगी कि उसका साधना करने का विचार है इसलिए वह नौकरी छोड़ना चाहता है।

सत्पुरुष ने जवाब में लिखा- कि प्रेमी, ओट लेकर साधना करो वरना दुनियादार आराम से बैठने भी नहीं देंगे। मगर प्रेमी ने इस्तीफ़ा दे दिया और घर आ गया। घर जगाधरी आश्रम से परे खारवां गांव में था। जब वह घर आ गया तो रात को एक चाह (कुआं) पर जाकर साधना करता। मगर उसकी माता उसके पीछे लग गई कि वह शादी करे। वह इंकार करता रहा, मगर माता ज़ोर देती रही। जनरल शाहनवाज़ ने अपने इलाके के ब्राह्मणों के लिए ऐथल आबाद करना शुरू कर दिया था। शेषराज के भाई ने भी वहां जमीन ली थी। जब मां ने बहुत मज़बूर करना शुरू किया तो वह अपने मवेशी चराने के बहाने वहां ले गया। वह जगह अभी साफ नहीं की गई थी और मलेरियल थी। उसने वहां कुछ दिन निवास किया ही था कि उसे बुखार आने लगा। जब बुखार ने बहुत तंग किया तो उसने भाई को बुलवाया और मवेशी उसके हवाले करके घर आ गया। घर आने पर मां फिर पीछे लग गई कि शादी करे। यहां उसे आराम भी आ गया। कुछ दिन तो ठहरा मगर मां के मजबूर करने पर फिर वह ऐथल चला गया। वहां उसे फिर बुखार आने लग गया और फिर खारवाँ आना पड़ा। यहाँ फिर आराम आ गया। मगर माँ के फिर शादी करने के लिए ज़ोर देने पर वो देहली चला गया और ठाकुर मुक्त राम के बाग़ की उसी कुटिया में जहाँ श्री महाराज जी ठहरा करते थे, निवास किया और साधना करने लगा। जब श्री महाराज जी मसूरी तशरीफ़ ले गए तो उसने चरणों में पत्र लिखा कि अगर आज्ञा हो तो वह एक हफ्ते के लिए सेवा में हाज़िर हो जाए। सत्पुरुष ने जवाब में पत्र लिखा कि वह बीस दिन के लिए आ सकता है। इधर उसकी माता आश्रम

में बाबू अमोलक राम के पास आ गई और पत्र लिखवाया कि उसकी बहन को अफ़सरान ने घर से, जिसमें वह रहती थी, निकाल दिया है और उनको भी निकाल रहे हैं, इसलिए वह आकर उन्हें ठिकाने पर बिठा जावे। यह दोनों पत्र प्रेमी शेषराज को एक ही वक्त पर मिले। प्रेमी शेषराज बजाये मसूरी जाने के सीधा जगाधरी आ गया और बाबू अमोलक राम को मिलकर खारवाँ चला गया। जब खारवाँ पहुंचा तो दूसरे–तीसरे दिन उसे फिर बुख़ार आना शुरू हो गया। चंद दिन बाद बुख़ार जाता रहा। जब शनिवार को उसे बुख़ार फिर चढ़ा तो उसने अपने आपसे कहा कि अगर कल मुझे फिर बुख़ार हुआ तो मैं शरीर त्याग दूंगा। इतवार को फिर उसे बुख़ार हो गया। मां पास बैठी थी। उसे कहा कि मुझे पसीना आ रहा है। मां दरवाजा बंद करके अपनी लड़की के गृह पर चली गई और शेषराज उसके जाने के बाद वहां से उठ कर उसी कुएं पर चला गया जहां रात को जाकर साधना किया करता था। उसने कपड़े उतारकर किनारे पर रख दिये और कुएं में छलांग लगाकर खुदकशी कर ली। रात को बारह बजे बाबू अमोलक राम जी के पास एक आदमी इतलाह लेकर आया। उन्होंने उसे थाने भेजा कि जब–तक पुलिस मौके पर न पहुंचे, लाश तुम नहीं निकाल सकते। इसलिए जाकर रिपोर्ट दर्ज़ करवाओ। पुलिस जाकर लाश कुएं से निकाल लावेगी। रिपोर्ट मिलने पर ए॰एस॰आई॰ पुलिस खारवाँ मौके पर गया और लाश निकलवाकर रिश्तेदारों के हवाले कर दी।

यह सब हालात बाबू अमोलक राम जी ने श्री महाराज जी की सेवा में लिखे और अर्ज़ की–कि लोग प्रेमी शेषराज की ख़ुदकुशी पर एतराज़ कर रहे हैं कि उसने पाप किया है। इस पर जो जवाब सत्पुरुष ने लिखवाया वह निम्नलिखित है:–

आपकी पत्रिका द्वारा हालात से आगाही हुई। आपके विचारों का जवाब तहरीर फरमाया जा रहा है, प्रेमपूर्वक ख़ुद भी विचार करें और दूसरे प्रेमियों को भी इस विचार से कृतार्थ करें।

श्री महाराज जी फ़रमाते हैं कि संसार और शरीर को नाशवान समझते हुए प्रभु परायणता की अधिक दृढ़ता के ज़ेरे–असर कोई इस तरह शरीर त्याग करता है तो एक किस्म की शहीदी ही जाननी चाहिए। उसको दोबारा उच्च जन्म प्राप्त होकर फिर अपने निर्वाण–पद की प्राप्ति का यह यत्न करता है। इसके उल्ट जो किसी मोहवश और भयवश या किसी भी संसारी कामना के ज़ेरे–असर होकर शरीर का विनाश करता है तो उसके मुताबिक ही वह ऊंच और नीच गति को प्राप्त होता है। यानि मानसिक भाव की जैसी उच्चता और मलीनता के ज़ेरे–असर होकर जो शरीर का विनाश करता है, उसके मुताबिक ही वह ऊंच और नीच योनि को प्राप्त होकर कर्म दण्ड भोगता है। यह ही माया का चक्कर अश्चर्ज है। जिस–जिस तरीके से किसी का अंत होता है वैसा ही ज़रूरी हो जाता है। कर्म–चक्र अमिट है। बड़े–बड़े महापुरुषों को भी कर्म चक्कर भोगना पड़ता है, क्योंकि शरीर माया का ही रूप है और उसके मुताबिक विचर कर नाश हो जाता है। आगे प्रेमी शेषराज के अपने भाव पर मुनहसर है। ईश्वर आज्ञा में उसको अपने उच्च जीवन की ज़रूरी सफलता प्राप्त होगी।

प्रेमी ने पूछा:– "महाराज जी! मुसलमान लोग और बड़े–बड़े वली–रसूल कहते हैं कि जब–तक कोई पीर, वली, नबी, पैग़म्बर करिश्में नहीं दिखा सकता, वह वली, पैग़म्बर नहीं हो सकता?"

श्री महाराज जी ने उत्तर दिया:– "प्रेमी! वली, पीर, पैग़म्बर, मोजज़े दिखाने की कोशिश नहीं करते। वक्त आने पर कुदरत उनकी मदद कर देती है। अल्लाह के बंदों का मोजज़ा इबादत बंदगी ही है। जैसे सूरज शुआएं खुद थोड़ी भेजता है, कुदरती तौर पर शुआएं उससे प्रगट होती रहती हैं। फ़कीर जान–बूझ कर करामात नहीं दिखाते। करामात को वह लोग कहर की मानिन्द मानते हैं। फ़कीर स्वत: ही मेहरबान होते हैं। अपनी कमाई कोई भी ज़ाया नहीं करता। जो फ़कीर अपनी करामात दिखाने की कोशिश करता है वह सूली पर भी लटकाया जाता है। हर एक को पूरा हिसाब–किताब देना पड़ता है। फ़कीरों का सूली पर चढ़ जाना, तवों पर बैठना और कई तरह की तकलीफ़ें देखना, आम लोगों के वास्ते यह कुर्बानियाँ सबक देने वाली हो जाती हैं। मगर ग़लती मालिक के दरबार में बख़्शी नहीं जाती। फ़कीर लोग मुसीबतों को खुशी–खुशी झेल जाते हैं, क्योंकि वह हर समय रज़ा के मसले में मुस्तग़र्क (लीन) रहते हैं। तुमने इन बातों से क्या लेना है? गुरु, पीर जो कुछ कहें सत् वचन करके मानने वाले बनो। हील–हुज्जत, दलील–बाजी, बहस–मुबहसा त्याग देना चाहिए। इस मार्ग में ज़िन्दगी और मौत से खेलना है।"

इतने में राय साहब दीवान रल्ला राम जी आ गए और चरणों में प्रणाम किया और अर्ज़ की:– महाराज जी! आपने बड़ी कृपा की है।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! सत्पुरुष हर समय जीवों पर दयालुता करने वाले होते हैं। उनके पास ज़्यादातर संसारी कामनाओं को पूर्ण करने के वास्ते आते हैं। जीवन सुधार और आत्मिक शांति के लिए बहुत थोड़े आया करते हैं। अगर संसारियों के छोटे–मोटे कारज पूरे हो जाते हैं तो वह लोग जल्दी मोहतकिद (प्रभावित) हो जाते हैं।"

राय साहब ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! कई फ़कीरों ने ज्ञान तो समझाया नहीं मगर मुरादें पूरी कर दीं। उनके पीछे दुनिया लग गई।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "इस कदर समझदार होकर क्या कह रहे हो? असली फ़कीर हमेशा नेक कर्म करने–कराने पर ज़ोर देते हैं। क्या फ़कीर सिर्फ़ लोगों के काम पूरा करने के वास्ते तप, बंदगी करते हैं? उन्होंने अपनी ज़िन्दगी का सुधार नहीं करना होता? पाखंडी लोग और लोगों को वर–श्राप देकर अपने पीछे लगा लेते हैं। अकबर ने बीरबल से पूछा:– ''कि पीर बड़ा कि यकीन''। बीरबल बोला:– जहांपनाह! कुछ अर्से की मोहलत दी जावे। आपका सवाल कोई मामूली बात नहीं। बात आई गई हो गई। बीरबल ने शहर से कुछ दूरी पर रातों–रात एक गधा मरवाकर दफ़ना दिया। ग़ोर पर अच्छी तरह क़ब्र बनवाकर सब्ज़ पीले रंग के झण्डे लगवा दिए। एक आदमी को अच्छी तरह समझा–बुझा कर वहां बिठा दिया कि तू सिर्फ़ तेल का दीवा (दीया) और धूप जला दिया कर और जगह की सफ़ाई कर दिया कर। जो कोई पूछे, फ़लाने झण्डे वाले पीर की दरगाह

कह दिया कर। जो चढ़त–चढ़ावा चढ़े तू लेते रहना और तेरा हक दे दिया जावेगा। दुआ वग़ैरा करने वालों की तरफ से करवा दिया कर। इस तरह कह कर बीरबल चला गया। ज्यों–ज्यों लोगों को पता लगता गया लोग आने शुरू हो गए। मुरादें पूरी होने लगीं। जिस–जिस की मुराद पूरी हुई वह दूसरों को ख़बर कर देता। इस तरह चार–पांच माह गुज़र गए। वहां पर मेला लगना शुरू हो गया। गाना–बजाना शुरू हो गया। एक रोज़ बीरबल किसी तरीके से सैर के बहाने अकबर को उधर ले आया। अकबर ने देखा बड़ी ख़लकत जमा हो रही है। पूछा:– "बीरबल यहां क्या हो रहा है?" बीरबल कहने लगा:– "सरकार! फ़लाने पीर की दरगाह है।" अकबर भी सलाम के वास्ते गया। कुछ दिन के बाद अकबर को साथ लेकर बीरबल वहां गए। लोगों का आना–जाना बंद कर दिया। बीरबल ने चार–छः आदमी लगाकर क़ब्र को उखड़वा दिया। खोद कर अन्दर से गधे की गली–सड़ी लाश हड्डियों का पिंजर निकला। अकबर देखकर हैरान हुआ और पूछा:– "यह क्या?" बीरबल ने अर्ज़ की:–"हज़ूर। पीर बड़ा कि यकीन?" अकबर ने माना कि वाकई यकीन बड़ी चीज़ है। अपना यकीन, सत् विश्वास ही सबके काम पूरे कर देता है। जितनी–जितनी सत् विश्वास में दृढ़ता होती जाती है गुरमुख जीवन होता जाता है। फ़कीर भी मेहर करते हैं। जब–तक दूसरे की कुर्बानी न देख लें, कुछ नहीं करते।"

फिर प्रेमी ने पूछा:– "महाराज जी! यह मूर्ति पूजा राम, कृष्ण, दुर्गा वग़ैरा यानि देवी–देवताओं, अवतारों की जो की जाती है, क्या यह सब अन्धा–धुंध ही चला जा रहा है?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "जो लोग ऐसी पूजा में लगे हुए हैं यह अन्ध विश्वास ही है। मगर जो कोई आचार–विचार धारण कर लेते हैं उनका जीवन अच्छा बन जाता है। जो केवल भक्ष–अभक्ष खाने–पीने में देवी–देवताओं के नाम लेकर ग्रहण करते हैं, इस प्रकार की मूर्ति पूजा अन्धकार परस्ती है। दुर्गा के जो कई हाथ दिखाये गये हैं यह सब ताकतें यानि शक्तियाँ अलग–अलग दिखाई गई हैं, जो दैवी–सम्पदा वाले सत्पुरुष के अन्दर कुदरती तौर पर आ जाती हैं। स्त्री हो या पुरुष जिसने मेहनत की, शक्तियां उसे हासिल हो जाती हैं। हर तपस्वी के अंदर तप मुकम्मल होने पर शक्तियों का भंडार खुल जाता है। वह इन्हें इस्तेमाल करे या न करे। आम–तौर पर कोई भी अपनी कमाई तक्सीम नहीं करता। ओछी तबियत वाले झट उभर जाते हैं। निर्गुण अवस्था में कोई विरले ही स्थिति पाकर ख़ामोश हो जाते हैं या सत्–विचार और सतकर्म का रास्ता समझाते हैं। रजोगुणी फ़कीर जज़्ब नहीं कर सकते, अपनी मेहनत ज़ाया कर बैठते हैं। नानक, कबीर, कृष्ण, मोहम्मद आदि सत्पुरुषों के साथ कई लोग मुकाबले करने, इम्तिहान लेने वाले और ईर्ष्या करने वाले हो गए थे। इसलिए गाहे–ब–गाहे उनको प्रभु आज्ञा में रहते हुए कुछ न कुछ करके दिखाना पड़ा। वैसे सत्पुरुषों ने ईश्वरी विश्वास की महिमा सत् विचारों द्वारा ही करवाई है। मोहम्मद को हुए चौदह सौ वर्ष होने लगे हैं। उसकी बनाई हुई नीति से कोई आगे–पीछे नहीं हो सकता है कितना ख़ुदा पर विश्वास को पक्का कर दिया गया है और कैसी हिदायत दी है कि जो भी कर्म करो अल्लाह की रज़ा में करो। भगवान कृष्ण ने शिक्षा दी है कि 'मैं कर्ता को छोड़कर

अगर कत्ल कर दें, तो कोई पाप नहीं। मतलब यह कि प्रभु आज्ञा में पूरी तरह दृढ़ हो जाने के वास्ते समझाया है। गीता में कहां किसी देवी–देवता के आगे हाथ जोड़ने के वास्ते कहा गया है। चोटी के जो सत्पुरुष हुए हैं उन्होंने केवल ईश्वरी विश्वास को पक्का करने की अनेक तरह से कोशिश की है। ढिलमिल यकीन नहीं होना चाहिए।"

67. चंदा मांगने की मनाही

"अगर कोई प्रेमी बग़ैर याचना के अपनी श्रद्धा से चंदा देवे तो उसका भाग ले लेवें। उसकी अपनी कल्याणता है। दूसरे से मांगना बिलकुल नहीं। जिस जगह सच्चाई और प्रेम होगा उस जगह खुद–ब–खुद ही सबके दिल आकर इकट्ठे होंगे।"

"तमाम प्रेमियों को वाज्या हो कि जो चंदा वग़ैरा का सिलसिला शुरू किया है उसमें अपनी श्रद्धा और प्रेम की ज़रूरत है, किसी पर कोई दंड नहीं। यह निश्चय कर लेवें।"

68. आश्रम में स्वार्थ कार्य पर पाबंदी

आश्रम में स्वार्थ कार्य के मुतालिक जो लिखा है सो वाज्या होवे कि आश्रम को सिर्फ़ परमार्थ के कार्य तक महदूद रखना चाहिए और किसी किस्म के पारिवारिक कार्य ऐसे त्यागी आश्रम के वास्ते शोभादायक नहीं हैं। अच्छी तरह विचार कर लेवें। इसका असर ख़ुद तुम्हारी ज़िन्दगी और आश्रम दोनों के वास्ते नामौजूं (अनुचित) है। इस वास्ते स्वार्थ कारज के लिए आश्रम में आज्ञा नहीं हो सकती।

नोटः यह पत्र बाबू अमोलक राम को उनके पत्रों के जवाब में लिखे गए थे।

69. तीक्ष्ण आहार से परहेज़ की हिदायत

भक्त जी ने काशीफल की भाजी बनाई और जब यह तैयार हो गई तो एक प्लेट में थोड़ी सी डाल कर श्री महाराज जी की सेवा में ले गये। श्री महाराज जी उस समय लेटे हुए थे। जब जाकर नमस्कार करके आहिस्ता से उसे सेवा में रखा तो महाराज जी उठ बैठे और पूछा:– क्या लाया है? भक्त जी ने अर्ज़ की:– "काशीफल की भाजी है।" फरमाने लगे:– "अन्दर तो किसी चीज़ की हाज़त नहीं है, तेरे प्रेम करके ले लेते हैं, गो अन्दर जाकर यह विकार ही करेगी। दो–तीन चमचे ले कर रख दी और फरमाने लगे,:– सड़ने जोगया! मिर्चां न ज़्यादा पाया कर। अपने जैसा मेदा न समझ। नमक मिर्च अन्दर जाकर खाली कलेजे लगती है। उनके बग़ैर तू रह नही सकता? इधर जो चीज़ लानी हो मिर्च के बग़ैर लाया कर। जो दो–चार चमचे ज़रूरत समझी, विचार कर लिया करेंगे। यह भी इस वास्ते लेते हैं, देखा जाता है कि तुम किस कदर मिर्च–मसाला तड़का डालते हो। इस

ग़ार में दो–चार चमचे साग–पात के नवाले डाले न डाले एक बराबर हैं। तुम प्रेमी भाजियों के साथ चावल रोटी शामिल कर लेते हो, इस वास्ते तुम्हारा तो हिसाब पूरा हो जाता है। प्रकृति का जो स्वभाव पड़ चुका है उसे बदलना बेशक मुश्किल है, मगर तुम्हारे लिए इसका बदलना ज़रूरी है। इतने में ही रहो तब भी बड़ी बात है। जब किसी रस भोग यानि किसी चीज़ को लेने का स्वभाव पक्का होता जाता है, तब उसका विकार नहीं आता, न महसूस होता है, न पता लगता है कि गर्म है, ठंडी है या तेज़। तुझे क्या कहा जाए? खाने के मामले में तुझे पता नहीं। न तिल घटे न राई वधे। किस गुरु ने तुझे बनाया, सिखाया है? चीजों में रस–स्वाद पूरा होता है। तुम इनमें मिर्च–मसाला कम करने की कोशिश करो। हो सकता है तू किसी ज़माने में स्त्री का रूप रह चुका हो। स्वभाव की दृढ़ता जन्म–जन्मांतर तक चलती रहती है। खाने–पकाने का शौक बहुत स्त्रियों को रहता है।"

भक्त ही हँसने लगे और अर्ज़ की:– "महाराज जी! अंदाजा अच्छा लगाया है।" और कुछ कहने ही लगे थे कि आपने फरमाया:– "इस किस्से को छोड़ो। जाओ, लंगर का झगड़ा ख़त्म करो और फिर पत्रिकाएं लिखो।" भक्त जी सोचते रहे कि महाराज जी ने क्या फरमाया है? इसका किस तरह निर्णय करवाया जावे और पिछला हाल लिया जावे।

शाम को चार बजे आराम वग़ैरा करके चिट्ठियां वग़ैरा लिखकर ले जाकर श्री महाराज जी की सेवा में हाज़िर हुआ। आप अख़रोट के पेड़ के नीचे लेटे हुए ध्यान मग्न थे। भक्त जी ने जाकर प्रणाम किया और लिखी हुई चिट्ठियां दिखाईं तो आपने खुद ही फरमाया:– "अब क्या करना है?" भक्त जी ख़ामोश रहे। फिर खुद ही फरमाने लगे:

"सोचयां सोच न होवी, जे सोचें लख वार"

"बनारसी! इस जन्म का झगड़ा ख़त्म करो। पिछली सोचें क्या सोचते हो? तुम इस जन्म के शुभ–अशुभ कर्मों पर विचार करो। जन्म लेकर क्या किया है? किधर जाना–आना हुआ? तो एक बड़ा भारी पोथा बन जाए। पिछले जन्मों को भी इसी तरह गुज़रे जान। इसी तरह शारीरिक दशा, खान–पान, बैठने–उठने में ही गुज़रे जान। स्त्री का जामा कई क्रूर कर्मों का नतीजा होता है। मगर शारीरिक अवस्था ख़्वाहे स्त्री जामें में गुज़रे या पुरुष शरीर में, सत–सोझी के बिना सब अकार्थ ही जानो। जब साधना में गहरी तरह स्थित होगे तब अनेक जन्मों का हाल आप ही पा लोगे। उस वक्त साथ ही उन सब जन्मों के कार्य को भूलने का यत्न करोगे। इस शारीरिक अवस्था में जो समय सेवा के बग़ैर गुज़र गया है, सारे हालात को भूल जाओ। कल्याण प्राप्त करने का यत्न करो। अगर मेहनत करोगे, जरूरी लाभ होगा। जो चलते हैं उनके मार्ग में भी कमज़ोरियां आ जाती हैं, जिससे विघन पड़ जाते हैं और बड़े–बड़ों को शारीरिक कैद में आना पड़ता है। इस वक्त मौज़ूद हैं, ग़लतियों से तुझे बचाते हैं, बाद का ईश्वर मालिक है। डर है कि आगे चलकर टेढ़े न चल पड़ो। शरीरों का साथ हमेशा नहीं बना रहता। दरम्यानी रास्ता जो बताया गया है उस पर चलो। बच्चू इस

वक्त को मामूली न समझो। मेहनत करो। मेहनत ज़रूर मदद करती है। शरीर का कुछ पता नहीं। शारीरिक दशा ऐसी मालूम हो रही है, चल जाए तो चल ही जाए। जो समझे हो उसमें ग़र्क होने की कोशिश करो। जिस-जिस ने इस साधन में निष्काम भाव से समय दिया वह उस आनन्द रूप में लीन हो गए।"

इसके बाद श्री महाराज जी उठ खड़े हुए और भक्त जी के सिर पर हाथ रखकर नीचे की तरफ उतर गए। हाथ रखने से भक्त जी के शरीर में बिजली की एक लहर सी दौड़ गई। ऐसी हालत महसूस हुई जो बयान नहीं की जा सकती।

जब श्री महाराज जी बाहर से वापिस तशरीफ़ लाए, तब सूरज पहाड़ के पीछे डूब गया था। राय साहब दीवान रल्ला राम ही भक्त जी को साथ लेकर श्री महाराज जी के चरणों में हाज़िर हो गए। काफ़ी देर बैठे रहे। खामोशी जारी रही। फिर राय साहब ने अर्ज़ की:- महाराज जी! किस तरह सही सत्-अनुराग पैदा हो? इसके मुतालिक आप दयालुता फरमावें।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "ईश्वर चरणों का विश्वास ही अनुराग पैदा करता है। संसार से उपरामता और उपरसता ही वैराग्य लाती है। यह सत्भाव एक दूसरे से सम्बन्ध रखते हैं। जिस समय परमेश्वर को पाने की सही लग्न और तड़प पैदा होती है और बुद्धि विकारों से निर्विकार होकर दृढ़ निश्चय से प्रभु सिमरण में लगती है, तब सिमरण करते-करते ज्यों-त्यों सत् विश्वास की परिपक्वता होती जाती है उसी कदर इच्छा के जाल से निवृत्ति होती है। ईश्वर के सिमरण के वास्ते गुरु की शरण में जाना पड़ता है और जो युक्ति हासिल हो उसमें पूरी लग्न से मुस्तग़र्क (लीन) होना पड़ता है। शारीरिक विकार अथाह हैं। एक सत्नाम का आधार लेने से बुद्धि निर्मल होकर इच्छा, चिंता, मान, मद, लोभ, मोह, भय इत्यादि विकारों से छुटकारा हासिल करती है। इन विकारों के संकल्प-विकल्प में ही तो यह जकड़ी हुई है। इसे किसी ने उससे थोड़ा ही बांध रखा है। जब बंधन स्वरुप का विचार करके संसार को दु:ख रूप समझेगी तब उससे उपरस होने का यत्न करेगी। जब-तक सत् विचार में जज़्ब नहीं होती यह संसार की लीला को सुख रूप मानकर मोह माया में फैलती रहती है। इस झगड़े से निकलने का विचार ही पैदा नहीं होता। पैदा हो भी जाए फिर यत्न करने की तरफ़ यह लगती ही नहीं। अगर यत्न करने लग भी जाए फिर भी राग-द्वेष के फंदे से नही छूटती। राग-द्वेष से मुक्त होने के वास्ते यह सत् साधन महापुरुषों ने प्रगट कर रखे हैं। सात्विक विचार वाली बुद्धि इनको अपनाकर उद्धार कर लेती है। लाखों जीवों ने जिस तरह अपनी कल्याण की, जिस समय उसी तरह डटकर लग जाओगे, सारा हाल जान जाओगे। एक तरफ़ होने से काम बनेगा। लाहौर में छज्जू भक्त हुए हैं। उनका नियम था सुबह चार बजे स्नान के वास्ते रावी नदी पर जाया करते थे। एक दिन किसी गली से गुज़र रहे थे। एक चूहड़ा (भंगी) झाड़ू दे रहा था। उसने कहा:- भक्तो! एक तरफ हो जाओ। छज्जू भक्त खड़े होकर विचार करने लगे कि यह बिलकुल सच कह रहा है एक तरफ हो जाओ। दोनों तरफ प्रीति नहीं चल सकती। एक और मुसलमान फ़कीर हुए हैं।

इस समय वह अपने लड़के को गोद में लेकर प्यार कर रहे थे। बच्चे ने कहा:– क्या "आप मेरे से प्यार करते हैं?" बाप ने कहा:– "हां बेटा।" इतना उस लड़के का कहना था कि उस फ़कीर की आंखें खुल गईं। सोचा यह बच्चा मुझे ज्ञान नहीं दे रहा, यह ख़ुदा मुझे बेहोशी से बाहोश कर रहे हैं। उसी घड़ी बेटे को गोदी से उतार दिया और इबादत-इलाही में मसरूफ़ हो गए। यह जीव चाहता है संसार के सुख भी न छूटें, पलंगों पर बैठे हुए रब्ब भी मिल जाए। अगर कादर को समझना चाहते हो तो कुदरत से मुंह मोड़ लो। बेशक सारी कायनात उस मालिक की बनाई हुई है, उसका प्रतिबिम्ब यानि अक्स है। लेकिन इसकी प्रीति बंधन-दर-बंधन में जकड़ने वाली है। यत्न करते-करते जिस समय अपने अंतर विखे निर्बन्ध अवस्था को अनुभव करोगे, खुद-ब-खुद सारा भ्रम जाता रहेगा। जल-थल में उसके प्रकाश को पाओगे। यह मसले बातों से हल नहीं होते। आजकल बातूनी ज्ञान ने सही पुरुषार्थ ख़त्म कर दिया है। पहले ऋषि-मुनि पागल थे जो सुखों को त्याग कर घोर जंगलों में कई-कई वर्ष जंगली फल-फूल सेवन करके शरीर को सुखा देते थे। तप करते-करते मिट्टी ऊपर जमा हो जाती, मगर उन्हें पता ही नहीं लगता क्या हो रहा है? घोर तपस्या में उम्रें बीत जातीं तब रंग लगते थे। आजकल चूड़ामणि के चार श्लोक याद कर लिए, चार श्लोक शंकराचार्य के याद कर लिए और अपने आपको ब्रह्म-लोक में पहुंचा हुआ बताने लगते हैं। इस कथनी विवेक ने रहा-सहा सदाचार भी नष्ट कर दिया है। रीसां जनक की करते हैं राजा जनक की मिसालें देनी आसान हैं, उस जैसा तप, त्याग कोई करके तो दिखाए। उसके बाद फिर कोई जनक जैसा पैदा नहीं हुआ। सत्विचारों की गहराई में जाना चाहिए। करने योग्य जो बात है उसे दृढ़ता से पकड़ो। इस आख़री अवस्था में जिस कदर ध्यान हो सके, करके अपना उद्धार कर लो। गुरु अमर दास हुए हैं। जिस समय वह गुरु अंगद की सेवा में आए उस समय उनकी उम्र 62 साल की थी। इस उम्र में लोग कई आसरे ढूंढते हैं। मगर कितने जिगर वाले पुरुष थे, उस वृद्ध अवस्था में प्रात: काल उठकर नदी पर जाकर जल लाना और फिर आकर गुरु अंगद को स्नान करवाना। ब्यास नदी गुरु स्थान से तीन कोस के फ़ासले पर थी। जाती दफ़ा उल्टे पांव जाना, वापसी पर सीधे लौटना, ताकि किसी तरह गुरु की तरफ़ पीठ न हो जावे। रसोई के वास्ते लकड़ी इकट्ठी करनी और सिर पर उठाकर लानी। लंगर के बर्तन आप साफ़ करते थे। इस प्रकार सारा-सारा दिन उनकी सेवा में गुज़र जाता था। रात भजन में गुज़ारते। दो बजे उठकर पानी के वास्ते चले जाते। कितना सेवा का भाव था। एक रोज़ पोह के महीने में रात को बड़ी सर्दी थी। हवा भी खूब ज़ोर की चल रही थी। अंधेरी रात में जब आप पानी लेने गए और पानी की गागर लेकर लौट रहे थे रास्ते में एक जुलाहे का कोठा पड़ता था। अँधेरी रात होने के कारण गड्ढे में सीधे गिर गये। भीतर से जुलाही ने जुलाहे से पूछा:– "यह आवाज़ कैसी आई है?" जुलाहा कहने लगा:–"और इस अंधेरी रात में कौन निकलता है? वह अमरू नेहथावां होगा जिसका कोई थांह-ठिकाना नहीं। उसे ही रात-दिन चैन नहीं आता।"

"ऐसा सुनकर भी अमर दास कुछ नहीं बोले। उसी तरह गागर उठाए हुए चल दिये। ऐसे प्रभु सिमरण और सेवा में लीन हो चुके थे। जाकर गुरु जी को स्नान करवाया।"

"जब सुबह सत्संग की समाप्ति हुई तो गुरु अंगद जी ने पूछाः– "अमर दास! रात को जुलाहे ने क्या शब्द उच्चारण किए थे?" अमर दास ने हाथ जोड़कर अर्ज़ कीः– "महाराज जी! आप अंतर्यामी परिपूर्ण हैं।" उस समय की घटना गुरु अंगद ने ख़ुद संगत के सामने रखी और फरमायाः– "अमर दास नेहथावां दी थां, नेहमानयां दा मान, नेहओटियां दी ओट, नेहघरियां दा घर है।" उसे अपना उच्च अधिकारी जानकर आसन उसके हवाले कर दिया था। फ़कीरों के इम्तिहान कई तरह के होते हैं।"

"अकबर चित्तौड़ में लड़ाई लड़ रहा था। किला फ़तेह नहीं हो रहा था। किसी ने अकबर को सलाह दी, "इस समय नानक की गद्दी पर गुरु अमर दास बैठे हैं। उनकी मन्नत मानों।" अकबर बड़ा उस्ताद था। झट ही उसने आंखें बंद करके दुआ मांगी। उसी घड़ी किले का दरवाज़ा टूट गया। फतेह के बाद अकबर भेंट लेकर पंजाब आया। गोयंदवाल साहिब में हाज़िर होकर पांच मोहरें भेंट कीं और खुशी–खुशी वापिस हुआ। दीवान जी उम्र की तरफ नहीं देखना चाहिए। यह शौक और सिदक की बात है। जब भी दृढ़ता होगी बेड़ा पार हो जाता है। विचार तो आपने सुन रखे हैं, प्रेम भी है, शौक भी है, किसी बात की तंगी भी नहीं। जो करना है वह लड़कों ने जिम्मेदारियां संभाल रखी हैं। जब जीव निश्चय करके शुरू हो जावेगा फिर उसे आनन्द आवेगा। आनन्द संसार के मोह चक्कर से परे कर देता है। करने के बिना कोई काम तोड़ नहीं चढ़ता।"

दीवान रल्ला राम जी ने अर्ज़ कीः– "महाराज जी! आपने अति कृपालुता करके चित्त के अन्दर उत्साह भर दिया है। जब–तक इस माहौल में हैं और आपके चरणों में बैठे हैं, चित्त संसार से विरक्त है। हमने खुद झंझट डाल रखे हैं। कुछ कहना बन नहीं सकता। घरेलू मामले भी ऐसे हैं कि रब्ब ही पनाह देवें।"

श्री महाराज जी फरमाने लगेः– "प्रेमी जी! मछली को जाल का हाल ज़्यादा मालूम होता है। इधर से तो उपदेश ही कर सकते हैं। बाकी के मामले तुमने ख़ुद हल करने हैं। पहले संसार के मामले पूरे कर लो, फिर योग भी हो जायेगा। जल्दी क्या है? दोनों तरफ पांव रखने से नुकसान है। दुनिया के सुख ले रहे हो, उनको अच्छी तरह ले लो। साथ धर्म–कर्म भी करते चलो। जिस तरह और दुनिया चल रही है आप भी चल सकते हो। बल्कि चार कदम ज़्यादा चलकर देख लो अपने आप पता लग जायेगा।"

राय साहब ने अर्ज़ कीः– "महाराज जी! यह प्रवृत्ति वाली आपकी बात ठोकर लगाती है और विचार पैदा कर रही है कि हम क्या कर रहे हैं, किधर जा रहे हैं? जो असल काम करना है उसे क्यों नहीं करते? शारीरिक रोग भी साथ लगे हुए हैं। अच्छी तरह रगड़ देते हैं। आप संतों के उपदेश में तो कोई कमी नहीं, न ही आपकी दयालुता में कोई कमी है। कमी सब हमारे अंदर है। आपका हाथ हमारे सिर पर है। दुनिया की तरफ़ से पल्ला छुड़ाने की कोशिश करेंगे। आपके विचार ठोकर लगाते रहेंगे तो जल्दी छुटकारा हो जायेगा। संसार हमारे अपने मानसिक विचारों में ही खड़ा है, ऐसा निश्चय पक्का हो चुका है। मगर बावजूद इसके, दो कदम भी इससे पीछे हटना पसंद नहीं

करते। आजकल के ब्रह्म–ज्ञानी भी बहुत अज्ञानता में डाल रहे हैं। ऐसा बतलाते हैं कि संसार में रहते हुए रंगा–रंग के भोग भोगते हुए भी आत्मा का कुछ नहीं बिगड़ता। त्याग का उपदेश भी ऐसा देते हैं कि जो धन आपके पास है, हमें दे दो। मगर आपका उपदेश ऐसे ब्रह्म–ज्ञानियों से बिलकुल उल्ट है। सहजे–सहजे अभ्यास करके अपनी कल्याण करो। जब संसार से वैराग्य होगा, ईश्वर अनुराग आ जावेगा। दु:खी, अनाथ जीवों की सेवा में धन लगाओ और सेवा में तन, मन, धन निष्काम भाव से लगाओ। सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे।"

इस जगह निवास के दौरान आपने 'सही उन्नति, परम शांति का मार्ग' प्रसंग अपने कर–कमलों से लिख करके भक्त बनारसी दास को दिया कि इसकी नकलें करके प्रेमियों को भेजते जाओ। पहले बाबू अमोलक राम को जगाधरी भेज दो। यह प्रसंग 'समता विलास' में छप चुका है इसलिए यहां नहीं दिया गया है।

कुछ दिनों के बाद गुरदासपुर से पंडित रामजी दास सेवा के लिए हाज़िर हो गए। राय साहब देहरादून आज्ञा लेकर तशरीफ़ ले गए। पंडित रामजी दास की ड्यूटी लगा दी गई कि बार्लूगंज से डाक ले आया करे और डाक डाल आया करे। बार्लूगंज का फ़ासला लगभग पांच मील था।

एक दिन आपने निम्नलिखित शिक्षा लिख करके भक्त बनारसी दास को दी और कहा कि यह भी प्रेमियों को लिख करके डाक में डाल देवे और अम्बाला के प्रेमियों के भी नाम लिखकर हर एक प्रेमी को भेज देवे।

70. सत्–शिक्षा

शरीर रूपी संसार यात्रा में केवल एक सत्–परायणता के बल से ही भयानक विकारों की अग्नि से ठंडक प्राप्त हो सकती है। इस वास्ते यथार्थ बुद्धि को धारण करके इस नाशवान शरीर को सत्–कर्तव्य में दृढ़ करना चाहिए, यानि अधिक स्वार्थ निश्चय को त्याग करके परमार्थवादी होकर नाशवान शरीर के सुखों में मर्यादा धारण करके अपने आपको नित ही निष्काम–सेवा और सत् सिमरण में नेहचल करना चाहिए। यह ही साधन मानसिक दोषों को नाश करके उत्तम साक्षात्कार शांति के देने वाला है। तमाम प्रेमी इस निर्मल विचार द्वारा अपने निश्चय को पवित्र करें और सत् पुरुषार्थ धारण करके इस जीवन का सही लाभ प्राप्त करें। ईश्वर सत् अनुराग दृढ़ करें।

27 मई, 1951 को जब खुली जगह में श्री महाराज जी के लिए आसन लगाया गया और दूध तैयार किया जा रहा था तो एक प्रेमी अच्छी पैंट–कमीज़ पहने हुए, साथ में एक हैंड बैग और थैला भी था, आ गए और भक्त जी से पूछा:– क्या श्री महाराज जी मिल सकते हैं? जवाब में कहा गया कि हर वक्त मिल सकते हैं। थोड़ी देर में श्री महाराज जी बाहर से पधारे और स्नान के बाद आसन पर बैठे। प्रेमी भी प्रणाम करके पास बैठ गया। श्री महाराज जी ने पूछा:– "सुनाओ प्रेमी! किस तरह आना हुआ है?" प्रेमी ने अर्ज़ की:– आया तो आपके दर्शनों के वास्ते ही था। संसारी झमेले कुछ

ऐसे होते हैं जल्दी-जल्दी निकलने नहीं देते। उस रोज़ जब आप देहरादून से चलने लगे थे, दर्शन के वास्ते हाज़िर हुआ था।

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "पहचान तो लिया है। अब तुमने जो विचार करना हो खुली तरह कर लो। झिझकने वाली कोई बात नहीं।"

उसने पूछा:- "महाराज जी! मैंने कई बार देखा है कि जिस प्रकार के वातावरण में बचपन से रह रहा हूँ उससे भिन्न तरह के वातावरण में जाते ही मन घबराकर अशांत और चंचल हो उठता है। इसका आप कोई इलाज कृपा करके बतलायें।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "हां प्रेमी! इलाज अवश्य है। जब तुम्हारा अपने यथार्थ स्वरूप आत्मा का यत्न और अभ्यास खूब बढ़ जावेगा तो कोई भी हालत तुम्हें परेशान और डावांडोल नहीं कर सकेगी। प्रेमी, सबसे पहले मनुष्य को सदाचारी जीवन बनाने में दृढ़ता हासिल करनी चाहिए। आत्म-साक्षात्कार की अवस्था दूर की बात है। जब सदाचारी जीवन धारण कर लोगे, उसके बाद जब आत्म-चिन्तन और अभ्यास में अधिक समय लगाकर दृढ़ता हासिल करोगे, तब ही तुम्हारी वृत्तियां एकाकार स्थिति को प्राप्त कर सकेंगी। इसलिए पहले आत्म-चिन्तन अभ्यास और सिमरण का साधन हासिल करने का यत्न करो। सब आप ही ठीक हो जावेगा।"

उसके बाद प्रेमी ने कई प्रश्न पूछे मगर वह सब रहनुमाए-मार्फ़त में छप चुके हैं, इसलिए यहां दर्ज नहीं किए जा रहे। इसके बाद श्री महाराज जी ने दूध सेवन किया और पूछा:- "प्रेमी! इनकी बोली समझ आ रही है ना? जो कुछ यह कहते हैं ठीक तरह समझ रहे हो ना, क्योंकि तुमने कहा था कि बोली समझ नहीं सका।" यह प्रेमी ओम कपूर था। उसने कहा:- "महाराज जी! जब पहली दफ़ा दीवान रल्ला राम जी के घर पर दर्शन किए थे उस समय से तो अब आप बिल्कुल साफ़-साफ़ सब कुछ फ़रमा रहे हैं। हर विचार आपका अच्छी तरह समझ आ रहा है। उस समय आपके साधारण वस्त्र और शारीरिक कमज़ोर अवस्था देखकर कुछ अच्छा भी न लगा था और उस समय आपकी एक बात भी समझ में नहीं बैठी थी। दिल उचाट हो गया था और उठकर चल दिया था।"

वापिस आकर फिर प्रेमी एक बजे तक प्रश्न करता रहा। प्रश्न व उत्तर सब छप चुके हैं। उसके बाद आज्ञा पाकर भोजन पाया और फिर आज्ञा लेकर विदा हुआ। भक्त बनारसी दास कुछ दूर तक उन्हें छोड़ने गए। जब वापिस आए और श्री चरणों में बैठे तो श्री महाराज जी ने पूछा:- "विदा कर आया है। किस ख़्याल का प्रेमी है? बड़ा एटीकीन सा है।"

भक्त जी ने अर्ज़ की:- महाराज जी! हमें तो अभी तक आपके साथ रहने की भी अक्ल नहीं आई, किस तरह सत्पुरुषों की सेवा में रहना चाहिए।

श्री महाराज जी ने पूछा:- "किस तरह?"

भक्त जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! आपका हर वचन पवित्र मुख से निकला हुआ बग़ैर लिखने के नहीं रहना चाहिए। रोज़ाना सारा विचार लिखा जावे तब ही सेवा का स्वाद है।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "आगे थोड़ा लिखा हुआ है। अमल के वास्ते एक अलफ़ ही दरकार है। 'ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होये'। यह पढ़े-लिखे लोगों के चोंचले हैं। लिखते-लिखते कागज़ भर डालते हैं। प्रेमी अच्छा समझदार तो है, इसकी बुद्धि सही मार्ग पर चलने वाली बन जाए तब ही पढ़ा-लिखा फायदेमंद हो सकता है। आलम-बा-अमल हो तब ही रंग लग सकता है। खाली रोज़गार के वास्ते इल्म पढ़ा हुआ केवल संसारी सुख भोगों की तरफ़ ही ले जाता है। पढ़े-लिखे लोग बड़े चातर-फातर होते हैं। सत्-संगत में आकर ऐसे लोग दृढ़ता से हिस्सा लें तो तन्ज़ीम अच्छी हो सकती है। सिर्फ़ अपनी मान-बड़ाई के वास्ते आगे होने की कोशिश करने वाले अश्रद्धा पैदा कर दिया करते हैं। इसकी उम्र नई है। इस उम्र में ऐसे बुलन्द ख़्याल वाला होना भी स्वतंत्र बुद्धि वाला समझा जाता है। ऐसे ख़्याल वाले आसानी से किसी के आगे सरख़म नहीं कर देते। यह भी बहुत पढ़े-लिखे आदमियों को नहीं चाहते। बहुत से ऐसे लोग तो हुज्जत-बाज़ी में ही वक्त ज़ाया कर देते हैं। अमल ऐसे लोगों से बहुत कम होता है। कई तो सिर्फ़ बातों-बातों से ही दूसरों को ज़ेर करने की हिकमत रखते हैं, जिसका नतीजा पहले अच्छा होता है बाद में इनकी हिकमत नाकाम होने लगती है। आलम जिस कद्र बा-अमल होता जावेगा उस कद्र रोशन-ज़मीरी की तरफ़ जावेगा और सुनने-सुनाने वालों के लिए बेहतरी का मौज़ुब होगा। बाज़ आलम सिर्फ़ दूसरों से अमल करवाना चाहते हैं, आप किसी प्रोग्राम में पुख़्ता नहीं होते। ऐसे कथनी ज्ञानी ज़िन्दगी के निज़ाम को मुकम्मल नहीं कर पाते। अभी तो इसे घर के झमेलों ने ऐसा घेर रखा है कि शायद मुश्किल से इनसे छुटकारा हासिल कर सके। किसी समय इस लकीर के अन्दर आ गया और हद के अन्दर खड़ा हो गया, तो फिर इसे वरग़लाने वाला न हो सकेगा। शायद संगत के वास्ते बेहतरी करने वाला हो जाये। इस तरह के लिखने वाले और भी आ जावें कहां तक लिखेंगे? तुम्हारी सेवा जो लिखने-लिखाने की थी वह करीबन पूरी हो चुकी है। बहुत तेज़ बुद्धि भी ख़तरनाक होती है। इस सत्मार्ग पर सुनकर चल पड़ने वाले और नित सत्-वचनों में मन-चित्त को लगाने वाले किसी ठिकाने पर लग जाते हैं। आलमों के अन्दर भुलेखा बना रहता है। अपने जैसी बुद्धि किसी की नहीं समझते। संसारी इल्म पढ़े हुए बहुत कम ज़िन्दगी की सार समझते हैं। जिन्होंने अपनी ज़िन्दगी यानि जिस्म और जान को जानने की कोशिश की वह आलमों से कई गुणा आगे बढ़ जाते हैं। अनपढ़ होते हुए भी आलमों को इल्म देने वाले हो जाते हैं। दो टूक विचारों को सुनकर बड़े-बड़े आलम दंग रह जाते हैं। मोहम्मद साहेब, नानक, ईसा, कबीर, बुद्ध, गोरख-दत्त, मछन्दर आदि इस कलि-काल में जितने भी बड़े-बड़े परम संत हुए हैं किसी ने क्या कॉलेज की डिग्री हासिल कर रखी थी? अंतर से ही उन्होंने ज्ञान प्रगट किया है। अब बड़े से बड़े आलम भी नहीं समझ रहे। सब महिमा अन्तर्गत होने की है। जीवों को जैसी-जैसी बुद्धि दे रखी है वह उसके मुताबिक चल सकते

हैं। उस मालिक के घर में किसी चीज़ की कमी नहीं। जिस-जिस भावना से उसकी तरफ़ जावेंगे वैसी-वैसी सहायता मिलती जावेगी।"

फिर भक्त जी से पूछा- "क्यों प्रेमी! क्या विचार है?

भक्त जी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! ऐसे प्रेमी सत्संगी बन जावें तो परस्पर प्रेमियों में उत्साह बढ़ जावेगा।

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "प्रेमी! सहारा न ढूँढ़ो, खुद स्वतंत्र बुद्धि बनो। जिस धारा को समझाया गया है उसमें जब-तक ग़र्क नहीं होवोगे तब-तक कुछ नहीं बनेगा। जिस जगह सब इल्म की सार प्रगट होती है उस मम्बा तक पहुंचो। जब-तक अन्तर्गत हालत को नहीं जान जाते तब-तक मौन रहो। खामोशी से साधन किए जाओ। जब-तक बुद्धि स्वयं अपने आपको सत्सरूप नहीं समझने लगती तब-तक कम अक्ल वाला अपने आपको समझो। जब-तक सांसारिक पदार्थों को सुखों के देने वाला समझते रहोगे तब-तक अपने आपको बंधन में समझो। जब-तक भूख, प्यास, निन्द्रा को नहीं जीत लेते, थोड़ा समय अभ्यास साधन में देने के बाद कहने लग जाओ कि मुझे प्राप्ति हो गई है, मुझे हासिल हो गया है, मुझे खुशी मिल गई है, मैं निर्विकार हो गया हूं, प्रभावित करने वाले वचन बोलने शुरू कर दोगे तो तुम्हारा लोक-परलोक दोनों बिगड़ जायेंगे। अगर कोई अग्नि में भी नचावे, वहां भी न उभरो। इनको अभी तक एक समय की हुई गलती नहीं भुलाई जा रही, जब पेशावर में इन्होंने टांग तंदूर में डाल दी थी। बड़ा-बड़ा तप करने पर भी जोश में आकर होश को किनारे रखकर बाज़ दफा तप्त संसारियों पर कृपा करने लग जाते हैं ऐसी कृपा उनके अपने वास्ते हानिकारक हो जाती है जो ज़ाहरन अपने आपको दिखानें लग जाते हैं। सत्पुरुष के चरणों में मन में मनोरथ धार कर जाने वाले के मनोरथ खुद-ब-खुद पूरे हो जाते हैं। जो अपने आपको सर्व समर्पण यानि न्योछावर कर देते हैं, ऐसे गुरमुखों के काम स्वत: सिद्ध हो जाते हैं। थोड़ा पढ़ना और पढ़कर इसे समझने की कोशिश करनी चाहिए और फिर उस पर अमल करना चाहिए।"

71. आश्रम संबंधी विचार

बाबू अमोलक राम जी को आश्रम के मुतालिक एक पत्रिका लिखी गई जो निम्नलिखित है:-

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि तुम्हारी तहरीर के मुताबिक रजिस्ट्री हो चुकी होगी। अब आइंदा का विचार करना है कि सरकारी कागज़ात में इस जमीन का इंतकाल ख़बर नहीं कब होगा और तबादला मुल्हका आश्रम ज़मीन की क्या सूरत होगी? अभी के हालात का पता नहीं है कि उसकी क्या मंशा है या चौधरी के ही सब इख़्तियार है। अगर तुमने ख़रीद की हुई ज़मीन का कब्जा संगत को दे दिया तो आइंदा सम्मलेन के मुतालिक कुछ विचार होवे। आपस में रज़ामंदी से काम हो सकता है और सरकारी काग़ज़ात के इंदराज में मुकम्मल होना और कब्ज़ा हासिल करना शायद

कितनी मियाद गुज़र जावे और सम्मलेन का विचार तब–तक नहीं हो सकता है जब–तक ज़मीन पर कब्ज़ा न हो जावे। अब वक्त सम्मेलन का दिन–ब–दिन नज़दीक आ रहा है और ज़मीन का मामला तो लम्बा हो गया है। अब इसके मुतालिक जल्दी–जल्दी सही फ़ैसला आपस में करके ज़मीन का कब्ज़ा हासिल करें ताकि आइंदा का विचार शुरू होवे और जो ज़मीन खरीद की गई है वह इस ज़मीन से कई गुणा बेहतर है और मिकदार में ज़मीन ड्योढ़ी है। ख़ैर, अपना–अपना नफ़ा हर एक चाहता है। इंसाफ़ की सूरत में तो कुछ न कुछ आश्रम को सहूलियत होनी चाहिए, मगर आजकल का ज़माना क्या समझे? ख़ैर, आश्रम को चूँकि ज़मीन की ज़रूरत है इस वास्ते ज़मीन वालों की हर एक बात माननी पड़ेगी और कोई झगड़े की सूरत बड़ी हो जावे तो निहायत ही तकलीफ़ का कारण होगी, इस वास्ते मिन्नत–समाजत सबके साथ रखें। आश्रम सबकी उन्नति का स्थान है, किसी से तशद्दुद न होने पाए यह ख़ास विचार रखें। ईश्वर आज्ञा से ऐसी जगह आश्रम कायम किया गया है जो निहायत ही तकलीफ़ का मूजब है। पहले इस बात का विचार होना चाहिए था। अब तो तकलीफ़ ही तकलीफ़ दर–पेश हो रही है। ईश्वर सब मजबूरियों को सर–अंजाम देवें। बाकी ख़्वाम–ख़्वाह आश्रम कायम करके मुसीबत खड़ी कर ली है। दुनिया का जो सुधार हुआ वह भी देख रहे हैं और आइंदा भी देखेंगे। तुम प्रेमियों ने निहायत मजबूर करके आश्रम कायम करवाया है और तकलीफ़ का समुन्द्र खड़ा कर लिया है। अब इसको हिकमत अमली से कहीं रास्ते पर ले आवें। अब ख़ास विचार यह ही है कि आश्रम की मुल्हका ज़मीन का जल्दी से जल्दी कब्जा मिले ताकि आइंदा का कोई प्रोग्राम विचार होवे। अगर सरकारी कागज़ात के इन्द्राजात के मुताबिक इन्तकाल होने के बाद तबादले का इंतकाल बनवाया गया और कब्जा भी उसी सूरत में हासिल हुआ तो उम्मीद नहीं है कि इस साल सम्मेलन हो सके, क्योंकि इंतकाल का होना ईश्वर आज्ञा पर मुनहसर है। यह कब होगा इसको विचार करके उनसे मश्वरा करके पता देवें कि आइंदा किस तरह कदम उठावेंगें? माह असाढ़ में ज़मीन का कब्जा मिले तो शुरू सावन में दूर–दराज़ के प्रेमियों को सम्मेलन के मुतालिक मुतला किया जावे। अगर इस मियाद के अंदर कब्ज़ा न मिले तो फिर सम्मेलन का पूर्ण रूप से होना मुश्किल है और तमाम प्रेमियों का एकत्र होना मुश्किल हो जायेगा।

उन्हीं दिनों में कुछ प्रेमियों को सेवा में दर्शनों की ख़ातिर हाज़री की आज्ञा मिली और मलोट मंडी से चौधरी हरजी राम जी व पंडित सीता राम जी और दिल्ली से परमार्थी जी हाज़िर हुए। प्रेमी कश्मीर चंद जी, बहनोई भक्त बनारसी दास जी मसूरी आए हुए थे और श्री सतपाल, चरणजीत लाल जी दामाद प्रेमी कश्मीर चंद जी दर्शनों के लिए भी हाज़िर होते रहे। भक्त जी को श्री महाराज जी हिदायत फरमाते कि रिश्तेदारों से कम सम्बन्ध रखो क्योंकि अब तुम्हारा रास्ता और तरह का है। यह संसारी लोग किसी के नहीं बनते। यह हमेशा अपना उल्लू सीधा करने वाले होते हैं। जब–तक तुम इनके काम आते रहोगे यह हां में हां मिलाते रहेंगे, वरना मुंह फेर लेंगे। असली बेवफ़ा, यह साक–संबंधी ही होते हैं। सांसारिक रिश्तेदारी धन सम्पत्ति हो तो ही अच्छी तरह निभ

सकती है। प्रेमी कश्मीर चंद सत्संगी आदमी है। सेवा के भाव को अच्छी तरह समझता है। उसके प्रेम को यह अच्छी तरह समझते हैं इन सबसे थोड़ा ताल-मेल रखने में ही तुम्हारी बेहतरी है।

भक्त जी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! ज़रा यह प्रेम रखते हैं तब ही इनके नज़दीक जाने का चित्त करता है और किसी सम्बन्धी से हमारा इतना लगाव नहीं है। दूसरे आपके चरणों में भी प्रेम रखते हैं इसलिए भी उनकी नज़दीकी अच्छी समझता हूं।"

72. दौरान एकांत निवास किसी दूसरी जगह न जाना

उन्हीं दिनों में प्रेमी कश्मीर चंद सेवा में हाज़िर हुए। कुछ देर बैठने के बाद अर्ज़ की:- महाराज जी! अगर आप आज्ञा बख़्शें तो मसूरी में सत्संग अपने घर पर रखा जावे ताकि यहां के लोग भी आपके मुखारबिंद से वचन सुनकर लाभ उठायें। यह बड़ी कृपा होगी। श्री महाराज जी ने फरमाया:- "प्रेमी! इनका जिस जगह ठहरने का प्रोग्राम बन जाता है वहां से यह फिर किसी दूसरी जगह नहीं जाते। न ही मसूरी देखने आए हैं। ऐसी नुमायशी जगह पर आने वाले कब सत्संग से रग़बत रखते हैं। ऐसी जगहों पर सत्संग कोई मायने नहीं रखता। इस जगह सब लोग सैलानी आए हुए होते हैं। तुम्हारे पास कई दफ़ा काफ़ी अर्सा ठहर चुके हैं। कभी मौका मिला तुम्हारी रिहायशी जगह पर फिर किसी समय ठहर जायेंगे।"

प्रेमी कश्मीर चंद ने अर्ज़ की:- महाराज जी! आए हुए प्रेमियों को गृह पर पधारने की आज्ञा बख़्शें। वे लंगर वहां ही पायें।

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "प्रेमी! तुम भी इस समय परदेसी हो, क्यों तकलीफ़ करते हो?" मगर प्रेमी कश्मीर चंद के दोबारा प्रार्थना करने पर आपने आज्ञा दे दी और फरमाया:- "तुम्हारे प्रेम को ठुकराया नहीं जाता, और किसी की प्रार्थना यह इस तरह स्वीकार न करते। अच्छा, अपना प्रेम पूरा कर लो। दूसरे दिन 16 जून को आए हुए प्रेमियों ने भी प्रेमी कश्मीर चंद जी के स्थान पर जाकर भोजन ग्रहण किया।

73. प्रसंग 'समवाद विज्ञान'

जब प्रेमी वहां से वापिस आए जो आपने 'समवाद विज्ञान' प्रसंग लिखा हुआ था, प्रेमियों के आगे रखा और भक्त बनारसी दास को फरमाया:- 'इसे पढ़ लो और प्रेमियों को नकल करके भेजते जाओ'। यह तो कर्तापन के भेद का थोड़ा सा ख़ुलासा बयान किया गया है। तत्त्व-ज्ञान को चाहे कितना ही आसान करके लिखा जावे सार भेद को समझने के लिए फिर भी मुश्किल रहेगी। मोटी बात को याद रखो, इस सारे कर्म-जाल को भयानक रूप समझकर इससे छुटकारा हासिल करने की कोशिश करो। ज्ञान-इन्द्रियों द्वारा जितने भी सुख रूप पदार्थ देख रहे हो सबका अंत दु:ख रूप है।

केवल सत्‌नाम की दृढ़ता को बारम्बार दृढ़ करें, जिसकी दृढ़ता से खुद–ब–खुद प्रतीत होने लगता है कि सारा संसार भरम रूप है। अगर और कुछ ज्ञान विचार में बुद्धि नहीं जाती तो सत् निद्धियास में जिस तरह हो सके बुद्धि, मन को ढालते रहो। मन–बुद्धि को एक सत्‌नाम में दृढ़ करने की कोशिश करो। जब ऐसा उत्साह धारण करोगे तब सत् यत्न शब्द सरूप को प्रकाशने वाला होगा, जिसके प्रकाश से सारा सत्–भेद अपने आप खुल जावेगा। बहुत बारीक न कातो, केवल सत्‌नाम के सिमरण में परिपक्व होवो। सूक्ष्म–स्थूल अवस्था सबकी समझ आ जावेगी। इसे पहले जगाधरी में बाबू के पास लिखकर भेज दो ताकि रिकार्ड में ठीक तरह रख ले। कभी वक्त आयेगा बड़े–बड़े फ़िलास्फ़र इन वचनों को कई–कई बार पढ़कर सत्–सूझ प्राप्त करेंगे। तुम अभी बच्चे हो, ज़्यादा गहराई में नहीं जा सकते। जो लोग ग्रन्थों का स्वाध्याय करने वाले होते हैं बहुत पढ़–पढ़ कर उनकी बुद्धि चक्कर में आ जाती है, कोई रास्ता दिखाई नहीं देता, तब ऐसा विचार उन लोगों के वास्ते आसान रास्ता पैदा कर देता है। गुह्य भेद को दर्शाने में ऋषियों–मुनियों ने कोई कसर नहीं छोड़ी। मगर जिस तरह प्रभु विभूति का कोई पारावार नहीं है उसी तरह अगम आत्म–ज्ञान का भी कोई पारावार नहीं है। आइंदा आने वाले संत–जन भी कई तरह से सत्‌भेद को खोलने वाले होंगे। इन विचारों को लेकर कई तरीकों से समझाने वाले समझावेंगे। असली समझ तो अंतर्गत में दृढ़ होने से ही प्राप्त होती है। जिस समय जो गुरमुख कोशिश करेंगे, असली मुराद पावेंगे। तुम इस विचार को लिखकर इधर से संगत सेवा करते रहो।

74. पंडित रामजी दास को सत् शिक्षा

एक दिन शाम के चार बजे का समय था। बारिश के आसार थे। आप कमरे के अंदर बैठे हुए थे। श्री महाराज जी ने पंडित रामजी दास से पूछा:– "रामजी दास! क्या सोच रहे हो?"

प्रेमी रामजी दास ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! आपने 'सम–दर्शन योग' के एक प्रसंग में उच्चारण फरमाया हुआ है:

मार सके न कूकड़ी, सिंह शिकारी मान।
बना सके न झोंपड़ी, मांगे तख़्त शाहान॥

"क्या शेरों का शिकार करने के लिए पहले मुर्गियों को मारने की कोशिश करें। मतलब यह कि कूकड़ियों को मारते–मारते शेरों का शिकार करने वाले बन जायेंगे।"

यह वचन सुनकर महाराज जी ख़ामोश हो गए। खूब हँसे, फिर फरमाने लगे:– "अगर इस तरह शब्दों के अर्थ करने लगेगा तो सब तर जायेंगे। कोई संस्कृत के श्लोक नहीं लिखे हुए जिनका मतलब निकालने में मुश्किल पेश आ रही हो। सीधा साफ़ मतलब निकल रहा है कि छोटे जीव के मारने की तो हिम्मत नहीं रखते अभिमान करते हो कि शेरों का शिकार कर सकते हैं। इन शब्दों में

अहंकार की निन्दा की गई है। करना–धरना कुछ नहीं, वैसे ही लाफ़ें मारते रहना पुरुषार्थ हीन पुरुष के लक्षण हैं। थोड़ी सी सेवा जो रोज़ाना आने–जाने की कर रहे हो, मत समझो कि हम तीस मार खां हो गए हैं। सेवा करके निर्मानिता को धारण करना सही सत् पुरुषार्थ है।"

रामजी दास ने फिर कहा:– सेवा से सिमरण श्रेष्ठ है। श्री महाराज जी ने फरमाया:– "सत् सिमरण के असली अंग सेवा, सत्संग हैं। जिस तरह सारा शरीर बड़ा सुन्दर हो, बुद्धि उसमें मन्द हो, कोई तमीज़, ढंग की बात न कर सकता हो, सब कहेंगे यह पाग़ल है, मूर्ख है। खाली सेवा का उपदेश करते रहो, सेवा करो नहीं तो तुम्हारा भाव–विचार सब थोथे दिखाई देंगे। सत् सिमरण करने वाला ही सही सत् सेवा के मर्म को जानता है। सत् सिमरण की परिपक्वता तब ही होगी जब हर तरह की छोटी से छोटी सेवा करने के वास्ते भी मन के अन्दर ग्लानि न आवे। सिमरण करने वाले से सेवा और सेवा करने वाले से सिमरण बन सकता है। दोनों लाज़म–मल्ज़ूम भाव हैं। सेवा के वक्त तो आलसी बना रहे, खाली एक कोने में बैठ जाने से मार्ग तय न हो सकेगा। अभ्यास के समय अभ्यास और जब सेवा का मौका आए तन, मन से उसमें जुट जाना। आलस, प्रमाद को नज़ दीक तक न फटकने देना, सर्दी–गर्मी का बिलकुल विचार न करना। छोटी–बड़ी सेवाओं को बढ़ –चढ़ कर करने की कोशिश करनी। इन्हें पूर्णता तक पहुंचाने की कोशिश करनी। जिस तरह शूरवीर बिना हथियारों के शोभा नहीं पाता इसी तरह भक्ति, सेवा के बिना थोथी लंगड़ी है। तिनका भर के समान भी किसी के लिए बोझ का कारण न बनो। सेवा करने वाले ही पीर, पैग़म्बर, अवतार, गुरु कहलाये हैं। ज़बानी जमा ख़र्च करने वाले आख़िरकार धोखे में रहते हैं। न संसार के सुखों को हासिल कर सकते हैं, न परमार्थ का आनन्द प्राप्त होता है। चौसठ घड़ी अनाथ जीवों की भलाई के वास्ते सोचते रहो। मन, वचन, कर्म से किसी के वास्ते बुरा न सोचना और सेवा करना ही श्रेष्ठ कर्तव्य है। तुमने आज वह बात की, बाबे की वाणी में एक शब्द आता है, "संत की निन्दा नानका, बोहड़–बोहड़ अवतार"। इसका यह मतलब नहीं कि संतों की निन्दा करने वाले बार–बार अवतार बनेंगे। मतलव तो साफ़ तौर पर यह है कि संतों की निन्दा करने वाले कभी जन्म–मरण के चक्कर से छूट नहीं सकते। मूर्खों ने और ही भाव बना रखा है। बड़ी सोच–समझ से शब्दों का अर्थ करना चाहिए। शब्दों का अर्थ करते समय मसख़री वाले शब्द कभी उच्चारण नहीं करने चाहिए। हर अर्थ में प्रेम और वैराग्य विचार भरा होना चाहिए। किसी पद का मतलब न आता हो तो ख़ामोशी ही बेहतर है।"

प्रेमी दीनानाथ जी महंगी एक दिन दर्शनों को हाज़िर हो गए और चरणों में अर्ज़ की कि जम्मू एक शादी पर आया था। वहां दर्शनों की कशिश हुई और सेवा में हाज़िर हो गया हूं। फिर अर्ज़ की:– महाराज जी! यह जगह नम यानि डेम्प है और जोंके भी बहुत हो जाती हैं। कश्मीर का इलाका ठीक है, वहां तशरीफ़ ले चलें।

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी! जोंक का भी जीवन निर्वाह चलना चाहिए। बरसात के दिनों में कुदरत से यह पैदा हो जाती हैं। संतों का खून पी लेवेंगी तो कोई हर्ज़ नहीं होगा। यह प्रकृति का निज़ाम ऐसे ही चलता है। फिक्र नहीं करना चाहिए।"

75. साबुन तेल के प्रयोग का विचार

चश्में पर एक आर्य समाजी, जो दूसरी तरफ ऊपर एक कोठी में रहता था, और चौधरी हरजी राम वग़ैरा खूब साबुन तेल मलकर स्नान किया करते थे। उनको देखकर और शारीरिक सफ़ाई के वहम से भक्त बनारसी दास भी साबुन इस्तेमाल करते थे। एक दिन जब खाना वग़ैरा पकाकर भक्त जी स्नान करने गए तो खूब साबुन मल रहे थे। ऊपर चश्मे की तरफ़ से श्री महाराज जी आ पहुँचे। भगत जी को साबुन मल-मल कर नहाते देखकर वहाँ से चले गये। उस समय तो कुछ नहीं फरमाया। क्योंकि पिछली दफ़ा साबुन मलने की वजह से खूब झाड़ श्री महाराज जी ने दी थी। भक्त जी को ख़ड़क गई, आज ख़ैर नहीं। खाना वग़ैरा खाकर आराम करके जब उठे तो करीबन तीन बजे थे और आसमान पर बादल गरज रहे थे। श्री महाराज जी का आसन जब अन्दर लाए और भी महाराज जी के पास बैठे तो सत्पुरुष ने पूछा:– "बनारसी! मन की सफाई और शरीर की सफाई में फ़र्क बताओ?"

बनारसी दास ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! मुझे समझ नहीं आ रही। ज़रा साफ करके फरमायें ताकि बुद्धि में बैठे।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "शारीरिक सफ़ाई की तरफ़ ज़्यादा ध्यान देना चाहिए या मन को निर्मल करना चाहिए। मन को पवित्र करने के लिए तुम कई तरह की सेवा कर रहे हो ताकि निर्मानता आए। साथ-साथ शारीरिक पूजा इस कद्र बढ़ा रखी है जिससे देह-मद खूब बढ़ता है। बेईमान, कभी गंदी चीज़ भी साफ हुई है। जिस शरीर पर इतना साबुन वग़ैरा मलते हो क्या वह कायम रहेगा? साबुन की जगह मिट्टी मल कर नहाओ। संसारियों को देखकर तेरी बुद्धि भी भ्रष्ट हो जाती है। थोड़ा खाओ जिससे पसीना कम आए और बदबू पैदा न हो। जिस कद्र मर्यादा से बाहर होकर लीचर-फ़ीचर चीजें सेवन की जाती हैं, चर्बी खूब बनती है। शरीर फैलता है। चलने, फिरने, बैठने, सोने की मर्यादा नहीं रहती। मुख़लिफ (उल्टी) हवा लगने पर चित्त डोलने लगता है। तुम फ़कीरों की सेवा में रह रहे हो। संसारियों के सौ स्यापे होते हैं। इधर इनके पास आकर वानप्रस्थी जीवन धारण करना चाहिए। परहेज़गारी जीवन बनाना लाज़मी है। गृहस्थियों के लिए ऐसी सफ़ाई वग़ैरा लाज़मी ही हो तुम्हें क्या पिटना पड़ा हुआ है? स्वांग मत बनाया करो। अभी तक तुम्हें फ़कीरों के पास रहना नहीं आया। सादगी का मतलब बनावटी जीवन बनाना नहीं है। शुद्ध, सत्, भोले-भाव गुज़रान करनी चाहिए। जो कुछ इधर से कहा जावे अच्छी तरह मग़ज़ में बिठाया करो।" और फिर खूब झाड़ दी। भक्त जी ने हाथ जोड़कर माफ़ी मांगी और शर्मिन्दा हुए।

भक्त बनारसी दास के अंदर यह ख़्याल उठने लगा कि महाराज जी मुझे ही डांटते हैं। यह जो प्रेमी रोज़ाना साबुन तेल मलकर नहाते हैं, उन्हें कुछ नहीं कहते। अन्दर ही अन्दर यह ख़्याल चल रहा था। दो तीन दिन गुज़रने पर आप फरमाने लगे:– "फ़कीरी और अमीरी ज़िन्दगी दो तरह की होती है। हर समय निग़ाह फ़कीरों की तरफ रखो। शारीरिक सुखों को भोगना है तो जाओ संसार में जाकर कमाओ और ठाट-बाट से रहो। कौन मना करता है? यह मत समझो कि यह इन बड़े लोगों

से डरते हैं। तुम फ़कीर के साथ रह रहे हो। तुम्हें अपने जीवन का ख़ास ख़्याल रखना चाहिए। ज्यों-ज्यों शरीर के बनाव-शृंगार में लगोगे राजसी स्वभाव बनता जावेगा। तुझे जब तवे पर चटपटी चीजें तैयार करते देखते हैं, यह इसे बुरा मानते हैं कि ऐसी तामसी ख़ुराक से क्यों इसका चित्त फ़कीरों के साथ रहकर भी विरक्त नहीं होता? बच्चू, यह मत समझो कि यह कुछ समझते नहीं। ज़रा-ज़रा निग़ाह रखी जाती है। जो बनाते खाते हो, सब देखते रहते हैं। बेशक सारा तुम ही नहीं खा जाते, मगर वृत्ति तो चटपटी चीज़ों को बनाने की बनी रहती है, यह विकारों की तरफ बुद्धि को ले जाती है। ज़रा विचार करो, यह हैवान जो घास-फूस, पत्ते खाकर जीवन निर्वाह करते हैं उनके अंदर भी काम-क्रोध पैदा हुए बिना नहीं रहते। जो नित ही शिकार पर चढ़े रहते हैं, मांस, मछली, मदिरा सेवन करते हैं, उनकी राम जाने। दीगर यह गर्म मसाले से जो इश्या वग़ैरा बनती है यह भी खून के अंदर जोश पैदा करती है। जहां तक बन सके सादा और सात्विक आहार ही करो, यह मन-चित्त के अंदर शांति बनाए रखता है। राजसी विचारों से ध्यान हटाकर एकांत में बैठकर विचार किया करो, शरीर और आत्मा का सम्बन्ध किस तरह बन रहा है? शरीर का सम्बन्ध कब-तक सम्बन्धियों के साथ रहता है। यह सब संगी-साथी मरघट तक के साथ होते हैं। बचपन का ज़माना किधर गया? जवानी का समय किस तरह बदल रहा है? जब शरीर पचास-साठ से ऊपर होने लगता है, शरीर की खूबसूरती, कान्ति, चुस्ती कहां चली जाती है? आंखें किस तरह ज्योतिहीन होती जाती हैं। दांत एक-एक करके कैसे गुम होते जाते हैं? बाल किस तरह काले से सफेदी पकड़ लेते हैं? जिस्म के सब जोड़ों में नाताकती आनी शुरू हो जाती है। इन्द्रियां अपना-अपना काम कम करना शुरू कर देती हैं। मगर ईर्ष्या, द्वेष में कमी नहीं होती। इस समय आम खोजी प्रकृति की खोज में लगे हैं। अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी और आकाश, तारा मंडल, सूरज, चांद की खोज करने में लगे हुए हैं, मगर अपनी खोज नहीं करते। जिस शक्ति से शारीरिक स्थिति, यह पहाड़, दरिया, समुन्द्र, ज़मीन व आसमान कायम हैं, अनगिनत युगों से सारी पृथ्वी, आकाश वग़ैरा का निज़ाम जो सत्ता चला रही है, उस खोज को भूलकर हकीकी सार वस्तु जीवन सत्ता नहीं जान रहे। जब-तक बुद्धि, इन्द्रियों के ज़रिये शारीरिक सुख की खोज में ग़लतान रहती है तब-तक उस परम तत्त्व आत्म-सत्ता को जानने का चाव पैदा नहीं हो सकता।"

"तुम प्रेमी संतों की शरण में जो आए हो इसका असली मकसद क्या है?"

भक्त बनारसी दास ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! आए तो आत्म-अनुभवता प्राप्ति के लिए हैं, मगर मन के वश में आ गए हैं। यह किधर का किधर ले जा रहा है। बाज़ दफ़ा ऐसा ख़्याल तो आता है कि शारीरिक अवस्था अन्त की तरफ जा रही है। जिस मकसद के लिए गुरु-चरणों में रहना स्वीकार किया था वह भूल गया था। यद्यपि आला-से-आला वार्तालाप आत्म-ज्ञान के बारे में सुनने में आता है, मगर चित्त दृश्य को देखकर भूल जाता है और काम, क्रोध भी अन्दर प्रगट हो जाते हैं। आपसे अलग होकर दूर जाकर सुखों को लेने के लिए मन छलांगें लगाने लग जाता है। आपकी सेवा में होने के कारण बाज़ दफा पश्चाताप भी होता है। मन, चित्त को लानत भी देता हूं।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "गुरु परायणता धारण करो। यह ही ईश्वर के नज़दीक ले जाने वाली है। मन को मन के द्वारा उपदेश देते रहा करो। मन ही अपना मित्र है। मगर जब भूत सवार होता है तब यह अपना दुश्मन आप ही बन जाता है। बच्चू, इनकी तरफ से हर समय तुम्हारे सुधार के लिए ही वचन निकलेंगे।"

जुलाई के दिन जब शुरु हुए बारिश पड़ने से जोंकें निकलनी शुरू हो गईं। मगर श्री महाराज जी के प्रोग्राम में कोई तबदीली नहीं आई। बारिश होती या तूफ़ान होता, अंधेरी रात होती या चांदनी रात, आप दो बजे के करीब आसन छोड़कर बाहर चले जाते। शारीरिक कष्ट होता, जैसी हालत होती, आप एन वक्त पर उठकर चल देते। न तो पास टार्च होती, न छतरी, न आसन ले जाते। ऊंची–नीची पहाड़ी जगह थी। आप बिना नाग़ा नीचे काफी दूरी पर जाकर नियत जगह पर लोई ऊपर लेकर समाधिस्त हो जाते। सुबह आठ बजे के करीब आप वहां से वापिस आते, घड़ी पास नहीं थी, मगर एन वक्त पर जाते और वक्त पर वापिस आते।

एक दिन जब आप बाहर से तशरीफ़ लाए, कमरे के बाहर आसन लगा हुआ था। आप आकर वहां बैठ गये। चौधरी हरजी राम और अन्य प्रेमी भी वहाँ बैठे थे। उनकी निग़ाह धोती की तरफ गई। देखा पांव से ज़रा ऊपर जोंक चिमटी हुई थी और थोड़ा खून निकाल रखा था। धोती लाल हो रही थी।

चौधरी जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! धोती लाल हो रही है।" भक्त जी ने जोंक को उतार दिया। श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "उसको अपना काम करने देते। कैसी खून पीकर मोटी हो रही है? इनका भी यह ही मौसम है। बड़ी बात यह है कि पता नहीं लगने देती और न दर्द होता है।"

चौधरी जी अर्ज़ करने लगे:– "ऐसी जगहों पर आजकल नहीं ठहरना चाहिए। आपका शरीर आगे ही बड़ा कोमल है। आप सेवन भी कुछ नहीं करते हो, पर शरीर खड़ा है। बड़ी मुश्किल से बूंद–बूंद खून बनता होगा। यह इस तरह चिमटने लगी तो किस तरह समय गुज़रेगा?"

पंडित सीता राम जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! चौधरी जी का विचार चलने का बन रहा है इस रचना को देखकर, आगे ही हमारे शरीर हल्के–फुलके हैं और कमज़ोरी आ जायेगी।" श्री महाराज जी हँस पड़े क्योंकि दोनों साहेबान खूब मोटे–ताज़े थे और फरमाया:– "क्यों चौधरी जी! क्या विचार है?"

चौधरी जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! दोनों पंडित साथ जावेंगे। पंडित सीता राम जी और पंडित रामजी दास जी अम्बाला तक साथ होंगे।" आज्ञा मिल गई और प्रेमी बड़े खुश हुए। जब पंडित रामजी दास जी डाक लेकर आए, उनसे पूछा गया। श्री महाराज जी ने फरमाया:– "अपने आप ही प्रोग्राम बनाते रहते हो। बेशक जाओ, इधर से कोई मनाही नहीं। जिस जगह से जाना होता है पहले उनसे आज्ञा लेनी चाहिए। अब बताओ क्या प्रोग्राम है?" पंडित रामजी दास जी ने जगाधरी, जालंधर वग़ैरा से होकर गुरदासपुर और काहनूवान जाने का प्रोग्राम बनने के तीसरे रोज़ सब विदा हुए।

उनके जाने के बाद परमार्थी जी ने श्री महाराज जी से कुछ विचार शुरू कर दिए। कुछ रूहों के बारे में प्रसंग चल रहा था। परमार्थी जी ने कहा:– शरीर छोड़ने के बाद क्या रूह को उसी समय फिर चोला मिल जाता है या किसी दूसरी जगह और हालत में भी रूहें रह सकती हैं?

श्री महाराज जी फरमाया:– "जब-तक भोग वासनायें चित्त में उत्पन्न होती रहती हैं, जीव चाहे जिस हालत में भी रहे भटकन बनी रहती है, जीव का सफ़र ख़त्म हो जाने से इसकी ख़ुलासी नहीं हो जाती। एक शरीर छोड़ने के बाद दूसरा शरीर धारण करने तक कोई देर नहीं लगती। जिस तरह जोंक चल रही है, (इशारा जोंक की तरफ करते हुए) अगला मुंह जब-तक तिनका पकड़ नही लेती तब-तक पिछला हिस्सा उठाकर आगे नहीं बढ़ती, यह ही हर एक जीव का हाल है। जिस भी शरीर में जीव रहे हर तरह की शारीरिक कैद दुःख का ही स्वरूप है। भोग, वासनाएँ बार-बार जीव को जन्म-मरण के चक्कर में ले जाती हैं। राजा-राणा, अमीर-ग़रीब, भिखारी, पशु-पक्षी या जल में विचरने वाले या आकाश में उड़ने वाले सब भोग, वासना को पूर्ण करने में लगे हुए भटक रहे हैं। किसी भी आकारमयी हालत में हों किसी को आराम नहीं। वग़ैर तत्त्व-ज्ञान के कभी भी जीव इस जीवन संग्राम में शांति नहीं पा सकता। न ही इसका सफ़र पूरा होता है। पशु-पक्षी, ज़मीन के अन्दर रहने वाले कीड़े-मकोड़े, सांप, लाखों किस्म के शरीरधारी जीव जो हैं अपनी-अपनी प्रकृति का ज्ञान सबको है। मगर तत्त्व-ज्ञान इस मनुष्य देह में ही पाकर बन्धन से जीवन निर्बन्धन हो सकता है। दूसरी रूहों को छोड़ो। अपनी रूह की बन्धन अवस्था को पहले जानो और फिर बन्धन से निर्बन्ध होने की सोचो। जितने भी शरीरधारी जीव हैं, जो दृष्टि में आ रहे हैं, सबके शरीर अंत-वंत होने वाले अपूर्ण रूप ही हैं। सब भोग पदार्थ सामग्री भी अपूर्ण हालत में हैं। एक आत्म-सत्ता ही को खेद से रहित जानना चाहिए। हर समय यह ही सत् सोच रहनी चाहिए कि किस तरह महा आनन्द आत्म-रस को पान किया जावे। सारे का सारा यत्न-प्रयत्न आत्म-सत्ता को जानने का होना चाहिए। सब गुणी पुरुषों का आदिकाल से ऐसा ही सत् यत्न रहा है। पहले आत्म-तत् को जानो फिर आज़ाद होकर विचरो। जितने गुरु-अवतार सतपुरुष हो चुके हैं, सबका सिद्धान्त एक जैसा ही है और सबकी शिक्षा यह ही है कि पहले अंतर में शांति को प्राप्त करो। तमाम शारीरिक वासनाओं से निर्वास होना ही श्रेष्ठ कर्तव्य जानो। ईश्वर स्वरुप की प्राप्ति के लिए हर समय सत् सिमरण धारण करो। जब-तक कर्तापन खड़ा है जिससे तमाम विकार प्रगट होते हैं, सत् सिमरण के बल से कर्तापन के बीज को ख़त्म करो। निर्बीज अवस्था को ही प्राप्त करना अपना असली मकसद समझो। ऐसे सतपुरुषों का जीवन ही मान करने योग्य है। नित ही निर्मल उत्साह से तत्त्व-बोध प्राप्त करना चाहिए। तमाम विकारों का निरोध प्रभु चरणों में सत्-विश्वास के बिना नहीं हो सकता। पहले प्रभु को ही कर्ता-हर्ता जानते हुए मैं-तूं अहंकार को ख़त्म करना है। ज्यों-ज्यों पवित्र निश्चय में बुद्धि दृढ़ होती है, जीवन स्वरूप आत्मा की विश्वासी, निद्धियासी होती जाती है। तब जाकर संसार का चक्कर सही रूप में समझ में आता है। जितने सुख नज़र आते हैं दुःख रूप भासने लगते हैं। अपना

बेग़ाना कोई नहीं रहता। मन जो बड़े–बड़े प्लान बना रहा होता है सबको बदलने वाला जानकर अबनाशी सुख की ओर जाने लगता है और समझने लगता है कि यह जितने इन्द्रियों के सुख भोग हैं सब छूट जायेंगे। जब सब कुछ ऐसा परिवर्तनशील समझता है तब सत् की प्राप्ति का साधन जो है उसे सही मायनों में अपनाने लगता है। 'सत् एक आत्मा, बाकी सब झूठ'। ऐसा सत् विश्वास जब दृढ़ होगा तब जाकर स्वतंत्र जीवन यात्रा में प्रवेश होगा। जिसका ऐसा जीवन होगा उसी ने इस मिथ्या संसार में सब कुछ हासिल कर लिया है और परम तृप्त निर्भय अवस्था को प्राप्त हुआ है। इस जीवन का यथार्थ लाभ हासिल करना ही परम उच्चता है। परम आनन्द की स्थिति को प्राप्त करने के वास्ते सारा ज़ोर लगा देना चाहिए। सत् आज्ञा न मानने के कारण ही परम पद बहुत दूर है। अंधे के आगे नाचना और बहरे के आगे गाना व्यर्थ समय गंवाना होता है। सुनने वाला हो तो विचार करना सुन्दर लगता है। प्रेमी भय न माना करो। नज़दीक आकर ज़्यादा से ज़्यादा विचार करो। दूर–दूर होने से दूर होता है। बड़ी अपने पर कृपा की है जो समय निकाल कर यहां आना हुआ है। पास बैठने से प्रेम बढ़ता है, चित्त साफ़ होता है। दु:ख–सुख तपी–तपीश्वरों के साथ भी रहते हैं।

जब–तक शरीर खड़ा है गर्मी के मौसम में गर्मी, सर्दी के मौसम में सर्दी लगेगी ही। खेद स्वरूप और निर्खेद हालत को अच्छी तरह सत्पुरुष जानते हैं तुमने चित्त में यह जो वहम बिठा रखा है कि संतों को दु:ख महसूस नहीं करना चाहिए, इनकी अंदरूनी हालत को तुम क्या जान सकते हो? जिनका चित्त पल में तोला, पल में माशा हो जाता है, ऐसा संशय युक्त चित्त की हालत को जान सकता है जो चौबीस घड़ी अपनी मस्ती में लीन रहते हैं। मामूली संसारी जीव उनके बोध को कई जन्म लगा रहे तो भी शायद न जान सके। कभी इधर से तुम लोगों के लिए खोटा नहीं सोच सकते। तुम्हारा अपना ही मन कई तरह के रूप–करूप घड़ लेता है। हमेशा अपना ही भ्रम जीव को परेशान करता है। बस इस जगह जब आओ अपनी उन्नति के लिए विचार करो। तुम्हारे पास कई–कई दिन लाहौर में रहकर आए हैं। इनके जीवन को तुमने जाना ही नहीं। बड़ा अच्छा किया है जो कि समय निकाल कर चले आए हो। ईश्वर यात्रा सफल करें।"

परमार्थी जी चुप साधे बैठे रहे। आख़िर में कहने लगे:– "महाराज जी! इस चित्त का भी पता नहीं लगता। आपकी बड़ी कृपा दृष्टि रही है। बहुत पढ़ना–लिखना भी संशय युक्त कर देता है। आपके जीवन का हर तरह और अच्छी तरह से विचार किया हुआ है। सारी आयु किसी के आगे नहीं झुके। आपके अमली जीवन को देखकर और सत् वचन सुनकर ही अपने आपको चरणों में भेंट कर दिया था। सेवक पर आपकी बड़ी कृपा दृष्टि रही है। न जाने चित्त क्यों किसी समय हठ पकड़ जाता है, अहंकार वश हो जाता है"?

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी जी! तुमको क्या समझाया जावे? अनेकों ग्रन्थ देख रखे होंगे और उनका अच्छी तरह स्वाध्याय करके लिख भी रखे होंगे। फ़कीरों का मार्ग तो यह है:

''पढ़न पढ़ावन सकला त्याग, सत्नाम में रहो लिवलाग''।।

"शारीरिक यात्रा सबकी तुच्छ समय के लिए होती है। एक रोज़ ज़रूरी इस ढांचे ने बिखरना है। जितना इस शरीर को इन्द्रिय सुखों की तरफ ले जाओगे उतना ही घना कलेश प्रतीत होगा। असली जीवन के राज़ को तुमने अच्छी तरह समझ रखा है। जिस कद्र ज़्यादा से ज़्यादा सत् यत्न में दृढ़ हो सकोगे उतना ही जल्दी मार्ग तय होगा। प्रारब्ध कर्म सबको भोगने पड़ते हैं। कोई लालसा चित्त में हो तो उसे प्रभु आज्ञा में छोड़ दो। यत्न करने पर भी कई चीज़ें जीव को प्राप्त नहीं हो सकती। राजाओं के पास धन सम्पत्ति की कमी नहीं होती। हर चीज़ धन खर्च करके खरीद सकते हैं। मगर कुदरत का भी अजीब खेल है। उनके घरों में औलाद नहीं होती। देखा जाये तो परिवारी और निरपरिवारी सब ही अपनी–अपनी जगह दु:खी हैं। ऐसा जानो और सत् का धन एकत्र करो। किसी घड़ी मन को न भटकाओ। दुनियादारों की बातें न सुना करो। इधर आए हो, खुले दिल से विचार प्रगट कर सकते हो। यह नाराज़ बिलकुल नहीं होते। संगत में शामिल हुआ करें। संगत नारायण का रूप जानें। जिस तरह आपका विचार हो वैसा करें। अगर जाने का विचार हो तो अपना प्रोग्राम बना सकते हो।"

परमार्थी जी ने अर्ज़ की:– "विचार अब यह बन गया है कि दो रोज़ और रह लूं।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "जितने दिन मर्ज़ी हो रहो। इधर से हर तरह से आज़ादी है। गृहस्थी को सौ तरह का विचार करना पड़ता है। जीवन निर्वाह का सिलसिला ठीक चल रहा होगा।"

परमार्थी जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! वह ही रिसाले का काम कर रहे हैं। नामों वाला रजिस्टर तो लाहौर में ही रह गया था। कई पुराने रिसाले इकट्ठे करके पते पूरे कर लिए हैं। पुराने ग्राहक जो थे सबने इधर–उधर से पता लगा लिया था। आपकी कृपा दृष्टि से जीवन–निर्वाह की चिंता नहीं रही। 'जब दांत न थे, तब दूध दिया'। जब दांत निकलने शुरू हो जाते हैं, साथ–साथ हर चीज़ का बन्दोबस्त होता जाता है। जिस समय कोई सूझ संसार की नहीं होती तब माता–पिता में ममता डालकर बचपन का समय गुज़ार देता है। जब होश संभाली यह ऐसा काम मिल गया जिससे सारा–सारा दिन मकान के अन्दर बैठे–बैठे गुज़र जाता है। करीबन चालीस साल से ऊपर का समय हो गया है। सबसे बड़ी चाहना जो योग–मार्ग की थी वह तसल्ली आपने कर दी है। हालांकि कई दफ़ा सत्–शिक्षा को पढ़ा, सुना मगर सत् विचार न बनता था। न कोई चित्त को खींचने वाला मिला। गंगोठियां दरबार में पहुंचने पर जैसा मन में धारण कर रखा था उसी तरह स्वयं आपने कृपा कर दी। पुरुषार्थ हमने ही करना है, अगर पुरुषार्थ हम नहीं करते, गुरु कृपा पर दोष देते हैं, तो यह हमारी नालायकी है।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "प्रेमी जी! आम लोग मिसाल तो कृष्ण, अर्जुन की दे देते हैं। पहले कोई अर्जुन बने तो सही। उस जैसे श्रद्धा, विश्वास वाला और आज्ञाकारी होगा तब कृष्ण भी कोई बनकर स्वयं सामने आ जाएगा। इधर से किसी समय कोई देरी नहीं है। पहले पात्र बनो।

प्रेमी लोग अभी से छोटी–छोटी आज्ञाओं को पालन नहीं कर पाए। सिर पर कपड़ा, टोपी, पगड़ी रखकर वाणी पढ़ने को कह रखा है, इसे भी बोझ रूप जानते हैं और कहते हैं– 'अजी इसमें क्या रखा है? सिर पर कपड़ा रखने से कोई कल्याण हो जाती है'। संगत के वास्ते जो नियम हैं उन्हें पालन करना हर एक प्रेमी का फ़र्ज़ है, ख़्वाहे कोई पढ़ा है या अनपढ़। शराब, भंग, तम्बाकू तो त्यागने लाज़मी हैं ही। मगर बड़े–बड़े विचारवान सिगरेट, बीड़ी नहीं छोड़ सकते। जो भी बुरी आदत जिसको लगी हुई है वह समझता है कि इसने क्या नुक्स करना है? पेट की ख़राबी का बहाना करके या खांसी–ज़ुकाम के लिए तम्बाकू को ठीक समझ कर लगाए रखते हैं। बातें ब्रह्म ज्ञान से कम नहीं करते। साथ ही मन को तसल्ली इस तरह देते जाते हैं कि भंग, चरस शिवजी महाराज भी सेवन करते थे। यह नहीं सोचते कि समय आने पर वह ज़हर को भी पीकर हज़म कर जाने वाले थे। कोई स्त्रियों का संग करता है तो कृष्ण भगवान का नाम ले दिया, 'वह भी रास–लीला करते रहे हैं'। दूसरी तरफ़ उनके महान कर्तव्य की तरफ़ ख़्याल ही नहीं जाता, किस तरह साथ ही शेष नाग पर खड़े होकर दिखा दिया था। सत्पुरुषों की लीला सत्पुरुष बनकर ही समझ सकते हैं। साधारण भोगी जीव, जो उनकी नकल करते हैं, लोक–परलोक बिगाड़ लेते हैं। यह जो 'सर्वम् खल्विदम ब्रह्म, यानि सब ब्रह्म ही है, उपदेश गुरु लोग दे रहे हैं, आजकल यह ही त्रटि–चौड़ हो रही है। जब–तक शम, दम यानि सील, संतोष, इन्द्रियों का दमन वग़ैरा गुण नहीं आते तब–तक यह निश्चय धारण नहीं होता कि सब ब्रह्म ही है। इसमें शक नहीं कि ब्रह्म–ज्ञान के बग़ैर मोक्ष और किसी तरह नहीं हो सकती। विज्ञानवादियों का कहना है कि जब–तक बुद्धि के अन्दर फुरना पैदा हो रहा है तब–तक संसार है। जब यह बुद्धि वैराग्य, अभ्यास द्वारा सत् स्वरूप में स्थित होगी तब वक्त आने पर मोक्ष होगी। ख़ाली ज़बानी ज़मा ख़र्च से ममता माई से छुटकारा नहीं हो जाता। चिरकाल तक अभ्यास करने के बाद स्वरूप में स्थिति होगी। छोटी बुद्धि वाले जीवों को, जो अभी घर से चले ही नहीं, जिनकी न शारीरिक कर्मों की बुद्धि है, न यह पता है कि ईश्वर क्या है, संसार क्या है, आत्म सत्ता जीवन शक्ति और प्रकृति में क्या भेद है? उन नासमझ अज्ञानियों को 'सर्व ब्रह्म ही है' का उपदेश दे देना महान ग़ल्ती है। ऐसे गुरु लोग केवल अपने हलवे–मांडे के लिए यत्न करते रहते हैं। खुद भी भोगों में ग़र्क होते हैं। आम साधारण जीवों को भी भ्रम में डाल देते हैं। कहां वह ऋषियों का ज्ञान जिन महापुरुषों ने यानि पातंजलि, गौतम, व्यास, जैमिनी, कपिल, कणाद आदि ने सैंकड़ों वर्ष तप करके यह सार निकाली थी कि एक ही ब्रह्म का सर्व विस्तार है? इस सत् भाव को, केवल सर्व ब्रह्म ही है, बार–बार कहने से निर्वाण अवस्था प्राप्त नहीं हो जाती। इसमें गुरु या सत्पुरुषों की कृपा दृष्टि यह ही है कि आत्म–बोध करने के वास्ते ठीक ढंग से अंतरमुख होने वाले साधन में शिष्य को डाल दिया जाए। सादगी, सत्य, सेवा, सत्संग, सत् सिमरण, भजन, ध्यान, समाधि यह ही अष्ठांग योग है जिसके द्वारा मानसिक शुद्धि भी करता जावे और आंतरिक अभ्यास में अति आरूढ़ होने का यत्न करे। शारीरिक दुःख–सुख ही इस जीव को भ्रम में डाले रखते हैं, एकता यानि

समभाव में दृढ़ नहीं होने देते। सब साधन अभ्यास इस मोह माया के जाल से ख़ुलासी पाने के लिए करने पड़ते हैं। इसमें किसी गुरु, अवतार का आशीर्वाद काम नहीं करता। यह कृपा सत्‌गुरुओं की ज़रूर हुआ करती है कि शिष्य को ठीक मार्ग पर लगा देना और सत्‌पुरुषार्थ में प्रवृत्त करना। आजकल और भी मिसाल दी जा रही है रामकृष्ण परमहंस की, जिसने विवेकानन्द को कृपा करके झट दर्शन करवा दिए। ऐसी मिसालें ज़रूर सामने रखनी चाहिए, साथ-साथ विवेकानन्द जैसा जीवन भी बनाना चाहिए, जिस कद्र वह आज्ञाकारी था और कितनी विवेक बुद्धि थी।

गुरु धोबी शिष कापड़ा, साबुन सरजनहार।
सुरत सिला पर धोइए, निकसे रंग अपार।।

"गुरु से भी शिष्य आगे निकल सकता है। चार चांद लगा दिए, गुरु नानक को भाई लहना मिल गया। गुरु की गत कही न जाए। प्रेमी जी, आज्ञाकारी होना बड़ा मुश्किल है। अभी तो प्रेमियों के चित्त का इस तरह का हाल है जिस तरह कंवल के पत्ते पर पानी नहीं ठहरता। वर्षों के बाद भी चित्त धीरज नहीं पकड़ रहा है। जिस कद्र दृढ़ सत्-विश्वास होगा उतना ही उसको फल लगेगा। खुशबूदार जीवन बनाना चाहिए। मैदाने जंग में मरे हुए चित्त कदम नहीं रख सकते। जिन-जिन गुणी-पुरुषों के नाम चले आ रहे हैं, धन तो क्या, तन, मन, भी कुर्बान कर दिए।

भक्ति की ओड़ उपजी, लाए रामानन्द।
प्रगट करी कबीर ने, अष्ट द्वीप नौखंड॥

रामानन्द गुरु थे, कबीर आगे ऐसा शिष्य मिल गया जिसकी मिसाल नहीं मिलती। तुम्हें रात-दिन भक्तों की गाथा, चरित्र पढ़ने में लगते हैं, किस-किस तरह शिष्य गुरु-परायणता में बलिदान हुए। जितनी कोई कुर्बानी, त्याग करता जाता है उसका नज़ारा आप ही देखता है, 'भरया उन्हां दा जानिये, जिन्हाँ तोड़ चढ़े।' मेहनत करके भी पूरा होना बड़े भागों (भाग्यों) की बात है। ज़रा सा सम्मान, प्रतिष्ठा में कोई हानि कर दे बस, ''तू कौन मैं कौन।''

'गुरु तो बनना सहज है, पर शिष होना कठिन अपार'।

"फिर उन्हां कद मंज़िल तय करनी, जिन्हां दा दिल धड़के। यह बड़े दिल वाले शूरवीरों का काम है। प्रेमी जी, उस भगवान की माया से छुटकारा पाना कोई सहज नहीं है। बस यही जिस तरह प्रेम भाव से मालिक के चरणों में अपने आपको परायण कर रखा है उसमें कमी न आने पावे। कभी-कभी पत्र द्वारा विचारों से पता दे दिया करो। इधर से आशीर्वाद अंग-संग जानें।"

जीतन वाले हार गए, हारे चले हैं जीत।
गरभ प्रहारी सो परमेश्वर, राखो मन में परतीत।
विच गरीबी जो रहे, त्यागे मन का मान।
सुरति जाए करतार में, कभी न पावे हान।
इस दुर्गम संसार में, किसे न पाई शांत।
'मंगत' जिन प्रभ पायो, मिटे तिनके भरांत॥

दोपहर का समय था, प्रेमी दीनानाथ जी महंगी, श्री महाराज जी के चरणों में दरख़्त (पेड़) के नीचे बैठे विचार कर रहे थे। "महाराज जी, ऐसे-ऐसे विचारवानों के चित्त डावांडोल हो जाते हैं। परमार्थी जी को कितने दिनों से चुपचाप बैठे हुए देखा जा रहा है। जाने से दो दिन पहले बोले हैं। दिल्ली में जब आपको तकलीफ़ थी, उन दिनों उनको वहां नहीं देखा था। क्या यह इन ग्रन्थों का स्वाध्याय नहीं करते, काफ़ी दिनों से यह लोग आपके चरणों में आए हुए हैं?

श्री महाराज जी ने फरमायाः- "प्रेमी! बाज़ प्रेमी चाहते हैं कि गुरु महाराज हमारे स्वार्थ और परमार्थ दोनों मार्ग पूरे कर दें। हमें मेहनत न करनी पड़े। दूसरे, गुरु अपना दुःख दूर नहीं कर सकते, हमारी कल्याण क्या करेंगे? अन्तर्गत कल्पनाएं जीवों को भ्रम में डाल देती हैं। शह-सवार ही गिरते आए हैं। इस ग्रन्थ की वाणी को इतनी महानता नहीं देते जितना पुरातन ग्रन्थों को चाहते हैं। किसी समय बड़ा प्रेम था। इन दो तीन सालों में पता नहीं क्यों मन को भटका लिया है? कृपा दृष्टि अर्जुन, विवेकानन्द जैसी चाहते हैं, मगर यह नहीं विचार करते कि उन जैसा चित्त के अन्दर अनुराग, विरह, प्रेम, पुरुषार्थ भी है या नहीं। कितने वह आज्ञाकारी थे। हैरान हैं यहां आ किस तरह गए हैं। घर के पास थे तो आये नहीं। यहां से भी कोई पत्र वग़ैरा डाला नहीं गया, खुद ही प्रभु ने प्रेरणा कर दी है। पूछा था- "आने का किस तरह बड़ा दिल किया है?" कहने लगे- "मुझे भी समझ नहीं आई। बैठे-बैठे विचार हुआ, चलो महाराज जी के दर्शन कर आयें। चंद दिनों से कुछ बेचैनी सी हो रही थी। कुछ मनमुखता ने चिन्तित कर रखा है। आप दया व मेहर के भण्डार हैं।" बस इतना कह कर चुप हो गए। बड़ा नेक सात्विकी-वृत्ति का प्रेमी है; ज़्यादा पढ़ा हुआ भी नहीं, मगर मुताला और अच्छी समझ रखता है। अपने प्रारब्ध कर्मों को कोई नहीं देखता, गिला गुरु, पीरों, ईश्वर पर करने लग जाते हैं। प्रभु आज्ञा में सदा दृढ़ रहना कोई आसान बात नहीं है। उसके भाने में फ़कीर मरें, संसारियों के स्वार्थ पूरे हो जावें। बड़ा पठन-पाठन, त्याग, वैराग्य, अभ्यास हो तब चित्त संकल्प रहित होता है अगर चित्त के किसी हिस्से में कोई संकल्प खड़ा है तो राई का पहाड़ बना देता है। मानुष की बुद्धि काम नहीं करती कि क्या करे, कैसे करे? वासना को पूरा करने के वास्ते लाख किस्म में यत्न करने पर भी और आवाहन करने पर भी वह बात नहीं बनती।

''धुर दरगाहों लिख्या, दोडे उते थोम''।

"किसी के कर्म तबदील करने कोई आसान बात नहीं है। कोई आए या न आए, अपना ही संवारे बिगाड़ेगा। थोड़े लिखे-पढ़े लोग ज़्यादा श्रद्धावान और सत्-विश्वासी होते हैं। ऐसे पढ़े-लिखे विचारवानों को अपना अभिमान होता है कि मैंने बड़े ग्रन्थ पढ़ रखे हैं। बातों द्वारा सिद्ध बनना बड़ा आसान है। किताबों के जो कीड़े होते हैं उनको अपनी चालाकी, चतुराई कभी एक चित्त होकर बैठने नहीं देती, न ही अच्छी तरह वह अभ्यास में वक्त दे सकते हैं। जब-तक पढ़ा-लिखा सब कुछ पानी में नहीं डुबो देता तब-तक, मुर्शिद की आज्ञा में दृढ़ नहीं हो सकता। पढ़े-लिखे लोगों के अन्दर

पालिसी वाला विचार ख़त्म नहीं होता। दूसरों को ज़रूर प्रभावित कर सकते हैं, मगर आप अपने अंदर शुभ गुण नहीं रखते। किसी न किसी विकार में वृत्ति फंसी रहती है और न भी कोई विकार हो तो भी अहंकार से बचना ही मुश्किल है। इस वास्ते साधारण रूप में रहते हुए जो गुरमुख सेवा और सिमरण में समय देते हैं वह निर्मानता को प्राप्त होकर जीवन में ही कल्याण कर लेते हैं और दूसरे कई जीवों का भी आधार बनते हैं।"

महंगी जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! हमने भी अनेक ग्रन्थ हिन्दी, उर्दू, संस्कृत के पढ़ रखे हैं। इस ग्रन्थ का रोज़ाना स्वाध्याय रखा हुआ है। नित नया आनन्द विचार इससे मिलता है। बड़ा सादा शब्दों में गुह्य मार्ग विज्ञान को बयान किया हुआ है। अपने आप मतलब समझ आता जाता है, किसी से जाकर पूछने की ज़रूरत नहीं पड़ती। बड़ी सरल वाणी है। विद्वता नहीं दिखाई गई मगर विद्या का सार निचोड़ निकाल कर रख दिया है। हर परमार्थी प्रेमी को विचार प्रिय लग रहे हैं। किसी मत-मतांतर पर कोई खुल्लम-खुल्ला हमला नहीं किया गया। जो-जो ग़लती किसी सम्प्रदाय में आ गई है, बड़ी सफ़ाई से उसे बयान किया गया है ताकि अपनी ग़लती को समझ कर उसे दूर करने की कोशिश करें।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! ग़लतियाँ हर मत, मज़हब में आ जाती हैं, जब स्वार्थी लोग मनमानी करने वाले आ जाते हैं। सारी धरती पर से कांटे कोई नहीं दूर कर सकता। अपने पांव में जूता डाल लेने से कांटे होते हुए भी फिर नहीं चुभते और न ही महसूस होते हैं। अपनी महसूसात तब ही दूर हो सकती है जब नेहचल स्वभाव बन जावेगा। छल-कपट रहित होने के ही सब साधन और अभ्यास हैं। ख़ाली पाठ कर लेने से लकीर की फ़कीरी ही आ जाती है। किसी सतपुरुष ने अपनी तरफ से कसर नहीं छोड़ी। हर समय, हर ज़माने में जिसने मेहनत की है उसके अन्दर ज़रूर रंग लग कर रहता है। ईश्वर प्रेरणा से जो कुछ प्रगट हुआ है, सब कुछ संगतों के लिए ही है। मनुष्य वही है जिसने अपनी आकबत का विचार सोचा है। हर समय अपने जीवन को गुरमुखों वाला बनाना चाहिए। आम संसारी जीवों जैसा नहीं बनाना चाहिए। हर समय निग़ाह सत्पुरुष के जीवन पर रखकर अमली जीवन बनाएँ। ख़लक को अपने तराज़ू पर मत तोलो तब अपनी कल्याण नज़र आएगी। हर समय कमी को दूर करने का यत्न करना चाहिए। एक दिन का काम यह नहीं है। जब तक शरीर खड़ा है इससे परम लाभ प्राप्त करने के वास्ते यत्न-प्रयत्न में लगे रहना ही शूरवीरता है। अपनी इच्छा और विचार को स्वाध्याय और अभ्यास से सद्भाव बनाए रखें। संगत हमेशा अच्छे पुरुषों की करें, तब जाकर सत्पुरुषों की महिमा का पता लगता है, कितना समय उसने अंतर ही अंतर गुढ़ने में बिता दिया है। अब पता नहीं किस तरह अक्ल आई है? इधर पहुंच कर गुबार निकाल दिया है। क्या कभी गुरुओं के साथ मन में द्वेष बनाए रखने से कभी चित्त शांत हो सकता है? चलो सुबह का भूला शाम को घर आ जाए तो ठीक है।"

भक्त जी ने पूछा:– "हमारे खिलाफ़ अगर कोई बात कहता है या दुश्मनी रखता है, उसके साथ कैसा सलूक करना चाहिए?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "अगर कोई शख़्स बिना वज़ह तेरे साथ ईर्ष्या बनाए रखता है, तो तू उसका भला ही सोच, फिर भी अगर वह शख़्स तेरे ख़िलाफ़ कोई बात करता है और तू भी मुद्दत तक उसके साथ कपट बनाए रखता है या उसका कत्ल करने की कोशिश करता है, तो गुरमुख और मनमुख में क्या फ़र्क हुआ? जब किसी की झूठी और नाजायज़ बातों का इस कद्र असर तेरे मन या चित्त पर होता है, तो ज़रूरी है कि सच्ची और सुच्ची तेरी भावनाओं का असर भी उसके मन पर ज़रूर होगा, बल्कि बढ़ कर होगा। तू अपने मन–चित्त को साफ रख। जीवन कई तरह की ग़लतियाँ ख़्वाम–ख़्वाह करने लग जाता है। अड़ोसी–पड़ोसी नचाने वाले होते हैं। अपनी अक्ल को बेच नहीं देना चाहिए। इससे काम लेना ही विवेक वाली बुद्धि कहलाती है। बाकी ऐसी जगह को त्याग देना चाहिए जिनके अंदर प्रभु–चरणों से प्रीति नहीं। ऐसे रिश्तेदारों को छोड़ देना चाहिए जिनका जीवन हर वक्त भोगमई और संसारी हो। ऐसे लोगों से हर वक्त परहेज़ करना चाहिए, क्योंकि उनकी वज़ह से हमेशा धोखे में रहोगे। दूसरे मूर्ख यानि अहमक से– क्योंकि वह जानता ही नहीं किसी का नफ़ा या नुकसान क्या है?"

'मूर्ख किस बिध खोटा, न लाह जाने न तरोटा।' पंजाबी विच मुहावरा है। तीसरा–तेरे वचन ख़्वाम–ख़्वाह अपनी बड़ाई जताने वाले और दूसरों की ऐबजोई करने वाले नहीं होने चाहिए। किसी का कसूर न होने पर भी बेमतलब तोहमतें लगाते रहने वाले से डरना चाहिए, क्योंकि वह अपने समय को और दूसरों के वक्त को भी बर्बाद करेंगे। चौथे डरपोक से– क्योंकि ऐसा शख़्स ज़रूरत के वक्त तबाही में ही डालेगा। पांचवां लालची जीवों से–जो शख़्स कहता है मैं गुरमुख हूं, ईमानदार हूं, वह कभी पवित्र, नेक–भाव वाला नहीं हो सकता। उसकी मीठी बातों में कभी नहीं आना चाहिए। गुरमुख को चाहिए कि तप, अभ्यास जो भी करना हो तनहाई में करे। ऐसे समय में जितनी भी प्रभु की महिमा बन सके, करे। यह भी ख़्याल रखो कि जो शख़्स दूसरे लोगों की बातें तेरे आगे करता है, वह तेरी बातें दूसरों तक ज़रूर पहुंचाएगा। अक्लमंद, बाहोश, वही है जो संसार को दु:ख स्वरूप और नाशवान समझते हुए अपनी बेहतरी करता हुआ अपने अंत को ठीक कर रहा हो। जिसका मन बिगड़ा हुआ है, वह पागल और हैवान है। संसार में इन्द्रियों से सरकश कोई दरिन्दा भी नहीं है। इन्द्रियों के सुधार में तेरा सुधार है। जो संसार और संसारियों की नज़दीकी अच्छी समझता है ऐसों से फ़कीर थोड़ा प्रेम करते हैं। प्रभु की कृपा के पात्र ऐसे जीव नहीं हो सकते। ईश्वर भी उनके हृदय में सत्भाव नहीं आने देते। किसी फ़कीर से एक समझदार गुरमुख ने पूछा:– 'कैसा हाल है?' फ़कीर ने जवाब दिया:– "प्रेमी! ऐसे शख़्स का क्या हाल होगा जिसकी आयु हर घड़ी हर लम्ह कमी की तरफ़ जा रही है और ऐब–गुनाह दिन–ब–दिन बढ़ रहे हैं?"

"शरीर यानि जिस्म की सफ़ाई से ज़्यादा दिल की सफ़ाई कर। चित्त को पवित्र करना ज़्यादा बेहतर है। गुरमुख मन को पवित्र करने में लगे रहते हैं। मनमुखी काग़जों को काला करते रहते हैं। दो विचार याद रखो। एक चीज़ तेरे वास्ते है और एक चीज़ तेरे वास्ते नहीं है। जो चीज़ तेरे भाग्य

में है वह अवश्य खिंची हुई तेरे पास चली आवेगी। जो चीज़ दूसरों के वास्ते बनी हुई है, ख़्वाम-ख़्वाह उस पर दावा जमाने यानि अपना बनाने की कोशिश कितनी भी करोगे वह चीज़ तुझे प्राप्त नहीं हो सकती, क्योंकि वह तेरे भाग्य में नहीं है। "कर्महीन नर पावत नाहीं।" इस वास्ते सदा अपने मन, बुद्धि को पवित्र बनाओ। बनारसी, जितने विचार सुनते जाओ, बहुत सुनने से बेहतर है अपना मन शीशे की तरह साफ़ रखो। अपनी तरफ़ से किसी का बुरा न सोचो। हर समय अपने आपको प्रभु आज्ञा में दृढ़ करते रहो। अच्छाई-बुराई उस मालिक की आज्ञा में समझो।"

"बच्चू, किसी समय तुम पर भूत सवार हो जाता है। जब रिश्तेदारों के नज़दीक जाते हो, अपनी अक्ल बेच डालते हो। हर समय सत् सिमरण और सत् सेवा में लगे रहने का यत्न करो।"

एक दिन प्रेमी दीनानाथ जी महंगी ने पूछा:- "महाराज जी! एक जगह 'समदर्शन-योग' में आया हुआ है:

सार तत् परकासना, संतन की ये कार।
'मंगत' हर दरसावना, संतन का उपकार

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "तुम्हारा मतलब असल में क्या है? वैसे तो मतलब साफ़ ज़ाहिर है। बनारसी, सारा शब्द पढ़कर सुना।" बनारसी ने शब्द 232 पृष्ठ 116 सारा शब्द पढ़ा। शब्द सम्पूर्ण होने पर श्री महाराज जी ने आंखे खोलकर फरमाया:- "क्या समझा है? संत ही तो प्रभु की महिमा को जता सकते हैं। क्या कोई ज़मींदार या संसारी धंधे में फंसे हुए जीव ज्ञान की सार को समझा सकते हैं? पर-उपकारी असली संत ही होते आए हैं। साध की महिमा गाते हुए नानक जी ने फरमाया है- (अष्टपदी में)

साध कै संग मुख ऊजल होत, साध संग मल सगली खोत॥
साध कै संग मिटै अभिमान, साध कै संग प्रगटै सुज्ञान॥
साध कै संग बूझै प्रभ नेरा, साध संग सब होत निबेरा॥
साध कै संग पाए नाम रतन, साध कै संग एक ऊपर जतन॥
साध की महिमा बरनै कौन प्राणी, 'नानक' साध की शोभा प्रभ माहें समानी॥

महंगी जी कहने लगे:- "महाराज जी! आपके श्री मुख वाक्यों से यह अमृत-वाणी भी हू-ब-हू मिलती है। हमने कभी इन वचनों की तरफ़ ध्यान नहीं दिया। न ज़्यादा रिवाज़ जम्मू व कश्मीर के उस तरफ़ के हिस्से में है। कई इसे पुट्ठा पन्थ कह देते हैं। बड़े सादा वचनों में उन्होंने भी चिताया है।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "प्रेमी! हर दरसाने का मतलब यह है कि दृश्य-मान संसार की सार को समझना। तत्त्व-ज्ञान यानि आत्म-तत् को प्रकाशने वाला जो विचार है उसे बार-बार कई तरीकों से बयान करना, जिससे बुद्धि के अन्दर अज्ञानता का जो पर्दा है वह साफ़ हो जावे। यह

ही संतों का सबसे बड़ा काम है। साधु की शरण में जाकर अगोचर वाणी का पता लगता है। मनुष्य से देवता बन सकता है। पशु भी अपना स्वभाव बदल लेते हैं। मनुष्य के वास्ते ही सब ज्ञान विचार है, और जीव तो घोर तमोगुणी कर्मों की वज़ह से अंधकारमई अवस्था में विचरते हैं, न प्रभु का पता है, न देह और संसार का। केवल भूख-प्यास की पूर्ति के वास्ते जो मिल गया उसी से समय व्यतीत करके जन्मते-मरते रहते हैं। जीव भाग्य से मनुष्य देह पाकर अपने स्वरूप को जानने का मौका पाता है, वह भी किसी सत्पुरुष की शरण मिल जावे और अच्छे संस्कार हों, वरना इस का कोई ठिकाना नहीं। संत शरण में आकर कुछ देव वृत्तियां जागृत होती हैं। खाना, पीना, बोलना और इन्द्रियों के व्यौहार मर्यादा में होने लगते हैं। मन की सात्विक स्थिति बनने लगती है। माया से अतीत होने लगता है।

ब्रह्म गियानी सगल की रीना, आत्म रस ब्रह्म गियानी चीना।।
ब्रह्म गियानी की सब अपर मईया, ब्रह्म गियानी ते कुछ बुरा न भैआ।।
ब्रह्म गियानी सदा समदरसी, ब्रह्म गियानी की दरिष्ट सदा अमृत बरसी।।
ब्रह्म गियानी बंधन ते मुक्ता, ब्रह्म गियानी की निर्मल जुगता।।
ब्रह्म गियानी का भोजन गिआन, 'नानक' ब्रह्म गियानी का ब्रह्म धिआन।।

सत्पुरुषों ने बड़े आसान तरीके से समय-समय पर अच्छी तरह समझाया हुआ है। उस वक्त जो कोई सुनने वाला पास हुआ वचन लिख लिए, जो युगों तक संसारियों के काम आते रहते हैं। इन संतों के सत्-वचन ही प्रभु-विश्वास बना सकते हैं। सत्-विश्वास के दृढ़ होने में देर नहीं लगती है। संतजन ही माया-जाल से निकालकर अकाल-पुरख के रास्ते पर लगाते हैं और बतलाते हैं कि इस तरीके से परम शक्ति का बोध करो। कोई पकड़ कर दिखाने वाली चीज़ नहीं है। बड़े यत्न-प्रयत्न, त्याग, वैराग्य द्वारा चिरकाल के बाद निर्वाण-पद तक जा पहुंचता है। नानक, कबीर, पलटू, दादू, चरणदास, गोरख, भर्तृहरि, राम, कृष्ण, बुद्ध जैसे तपस्वी, अवतार, ऋषि, मुनि, मोहम्मद, ईसा, मूसा ज़रोदश्त जो गिनती शुमार में नहीं आ सकते ऊंची स्टेज के मालिक हुए हैं। संसारियों को जिस तरीके से राह पर लगाना होता था, तप त्याग द्वारा जीवन बख़्शते रहे। गीता की महानता कृष्ण ही जान सकता है। जिन्होंने अपने आपको उनके वचनों में न्योछावर किया ऐसे भक्त-जन रंचक मात्र भी भेद पाकर महान से महान हो गए। जिस स्थिति में उन सत्पुरुषों ने वचन उच्चारण किए उस मौज को कौन समझे? ऐसे संतों के वचनों से जुगा-जुग अमृत बरसता है, चाहे उस स्थिति को कोई न पहुंचे। यहां भी जो जीव कल्याणकारी वचनों का स्वाध्याय करके अमल करेगा, ज़रूर चित्त को ठंडक मिलेगी। समय के मुताबिक आसान से आसान भाव प्रगट हुए हैं। प्रभु आप ही उनके हृदय में बैठा बोलता रहता है। कलमे, शब्द, मंत्र बनते चले जाते हैं। प्रेमी, अपना जीवन निर्मल से निर्मल

बनाओ। तुमने बहुत कुछ पढ़ सुन लिया है। जब–तक अमल न करोगे विचार ज्ञान की तह का पता नहीं लग सकता। ब्रह्म–ज्ञानी सदा जागता रहता है, भोगी सदा सोया रहता है। ब्रह्म–ज्ञानी को न भूख लगती है न प्यास लगती है। भूख, प्यास, निद्रा तीन महारोगों में सब संसार के जीव जकड़े हुए हैं। रात–दिन इनको पूरा करने के लिए नाना प्रकार के कर्म कर–कर के सुख–दुःख पाते रहते हैं। जो इस बीमारी को जान लेता है और इससे मुक्ति पाने की कोशिश करता है, असल में वह ही जागता है। जितना मर्ज़ी हो चन्द्र, सूरज, मंगल भी नाप लें, कुछ नहीं बनेगा। अनन्त सृष्टि मंडलों का विष्णु, ब्रह्मा, शिव प्रगट व लीन कर रहे हैं। इस साढ़े तीन हाथ शरीर रूपी संसार के मोह से छुटकारा पाने वाला ही परम विवेकी गुरमुख है। उसने ही समझा है कि सारा संसार मन के संकल्प में खड़ा है। बग़ैर आत्म–सत्ता के सब आकारमयी सृष्टि मिथ्या है। जब ऐसी वृत्ति बनती है तब जाकर प्रभु परायणता में दृढ़ता होती है। ज्यों–ज्यों दृढ़ता होती है त्यों–त्यों ईश्वर भक्ति का चाव बढ़ता है। साथ–साथ निर्मानता हासिल करके अमृत–रस पान करता है। शरीर का कोई भरोसा नहीं, पता नहीं किस समय मुख़ालिफ हवा इसे गिरा दे। फिर जीव भोग क्रीड़ा को अच्छा समझ कर रात–दिन कूड़ कुसत में डूबे रहते हैं। असली जीवन साध–शरण में मिलता है। समता–आनन्द, तप, त्याग और सत् की धारणा से मिलता है।

जिन्हां दे घर लाल ते हीरे। तिन्हां नूं खा गए कीड़े।
माटी का यह पुतला बनिया, अंत माटी माही समाईं।
'मंगत' चार दिनां दा जीवना, यह जान लियो मन माईं।।

मंहगी जी ने जाने की आज्ञा ली हुई थी। बिस्तरा बग़ैरा बांध कर रवाना हो गए।

प्रेमी ने श्री महाराज जी से पूछाः– "महाराज जी! सब जीवों के स्वभाव अलहेदा–अलहेदा हैं, न शक्ल मिलती है, न अक्ल। प्रभु की माया बड़ी अश्चर्ज है क्या यही कारण है कि मनुष्य धर्म–धारा पर नहीं चलते?"

श्री महाराज जी ने फरमायाः– "प्रेमी! यह ही मेरे मालिक की विचित्र माया है। जुगा–जुग से नदी के प्रवाह की तरह अनन्त प्रकार की सूरतें धर कर मनुष्य चोले में जीव आ रहे हैं, फिर उनके शरीर नष्ट हो जाते हैं। अरबों–ख़रबों जीवों के न आने का पता लगता है न जाने का, मगर उन जीवों की याद बनी रहती है। जो संसार में आकर महान कर्म कर जाते हैं और उस परम शक्ति से एक हो जाते हैं, उन्हें ही संत, गुरु, पीर, पैग़म्बर, ऋषि, मुनि, अवतार कहते हैं। उनकी भी कोई गिनती, शुमार नहीं। उनके नक्शे–कदम पर चल कर कई कल्याण कर पाते हैं। इसलिए तुम भी उनसे सबक लो, अब बैठो और विचार करते रहा करो।"

यह विचार हो ही रहा था कि श्री कश्मीर चंद जी कई मसूरी निवासियों को साथ लिए हुए आ गए और सबने नमस्कार किया। श्री महाराज जी ने बारी–बारी सब प्रेमियों से कुशलता पूछी।

प्रेमी कश्मीर चंद ने सबका परिचय करवाया और बतलाया कि ये साहेब द्वारका नाथ जी के भाई हैं। दूसरे मनोहर लाल जी की ऊपर माल रोड पर दुकान है। बाकियों के भी नाम बतलाये और अर्ज़ की:- सब आपके ही दर्शन के लिए हाज़िर हुए हैं।

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "प्रेमियों! ऐसी नुमायशी, अय्याशी की जगह में रहकर ऐसा विचार बन जाना बड़े भाग्य समझो। अब विचार करो कि महात्मा लोगों के दर्शन करने का क्या लाभ है और क्यों इनके पास आए हो?"

प्रेमी द्वारका नाथ जी बोले:- "महाराज जी! हमें तो सवाल करने की बुद्धि नहीं है। इतना ज़रूर अर्ज़ करूंगा कि आपके दर्शन करके मेरे मन को बड़ी शांति मिली है, बड़ी प्रसन्नता हुई है और कुछ पता नहीं। हम कभी मन्दिर, गुरुद्वारे नहीं गए हैं। ऐसी ही ख़्वाहिश बनी रहती है कि अच्छा खायें अच्छा पहनें। रंग-तमाशे देखें, क्लबों में जायें। ऐसे ही विचार हम सबके हर जगह बने रहते हैं। रब्ब वाला मसला हम जानते ही नहीं। यह हमारे भाई कश्मीर चंद जी धर्मात्मा पुरुष हैं इनकी कृपा से आपके चरणों में आ गए हैं। आप ही कुछ कृपा करें। परमेश्वर वाली बात अन्दर बिठावें।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "खूब प्रेमी! तुमने तो सब साफ़-साफ़ बयान कर दिया है। लेकिन यह बताओ कि क्या इस नुमायशी जीवन से शांति मिल गई है?"

प्रेमी कहने लगा:- "महाराज जी! इस जीवन में सुख तो ज़रूर मिलता है। मगर शांति वाली कोई बात नहीं, न ही शांति रूपी बला को जानते हैं। वैसे दिन रात चिंता, फ़िक्र लगा रहता है। कल्पनायें उठती रहती हैं। ईर्ष्या-द्वेष उठते रहते हैं। इसलिए शांति कहां? सुथरे लिबास और चिकने चुपड़े चेहरे ज़रूर हैं। जब अंदर बहुत बेकरारी होती है, दारू थोड़ा पी लिया। ग़म कम हो जाता है, दूसरी दुनिया में चले जाते हैं, सब सुध-बुध ग़ायब हो जाती है। जब ग़फ़लत थोड़ी दूर होती है अक्ल-शक्ल सब बिगड़ी हुई देखते हैं। महाराज जी, सही-सही बातें अर्ज़ कर रहा हूं। यह ज़रूर स्वभाव रखता हूं जो कुछ कहना होता है, साफ़-साफ़ कह दिया जाता है, ख़्वाहे घर पर भी होऊँ। अब आप कृपा करें और बतला देवें ताकि छुटकारा हो जावे। अपने स्वाद पूरे करने के वास्ते कई जीवों को भी दु:ख दिया है। बाज़ार से भी लाकर भून-भून कर खाया है। कई तरह की मदिराएँ भी इस्तेमाल की हैं, मगर वहां के वहां ही हैं। महाराज जी, आपका जीवन देखकर बड़ी शांति हो रही है। आपकी थोड़ी सी ख़ुराक के मुतालिक सुनकर हैरानी हो रही है। किस तरह शरीर हवा पर खड़ा है। अगर ऐसी ख़ुराक हम एक-दो दिन खायें तो बोलने की ताकत न रहे। ज़िन्दगी में आप जैसे महात्मा के दर्शन नहीं हुए। पिछले किसी जन्म के अच्छे कर्म इस जगह ले आए हैं। इस जन्म की तो 'अल्लाह अल्लाह खैर सल्ला' है। ऐसा महसूस हो रहा है कि बिलकुल ही कोरे हैं।

श्री महाराज जी ने फरमाया:-

बीत गई थोड़ी रही, थोड़ी भी रहनी नाहीं।
एह कथा विचार के, करो होश मन माहीं।।

कहां से आया कहां जावना, किस ठौर को जीव पधारी।
मरना मूल विसार के, नित ही पाप वरतारी।।

"प्रेमी, इधर आकर क्या महसूस किया है? जहां रह रहे हो वहां बड़े-बड़े सुख के सामान हैं, वहां शांति है। यहां जंगल बियाबान में यह कैसे हो सकती है?"

"महाराज जी, आपने जो पूछा है उसके मुतालिक अर्ज़ यह है कि असल में संसार की ज़ाहरी चीज़ें खुशनुमा देखकर बेशक हमारे समेत सब ज़रूर खुश होते हैं लेकिन ईर्ष्या, जलन अंदर बनी रहती है। ग़रीब, अमीर को देखकर तड़प रहा है। थोड़े पैसे वाले सरमायेदार को देखकर, बड़ी-बड़ी कोठियों वालों को देखकर, दूसरों को अच्छा खाता देखकर, अच्छा पहनता देखकर जल रहे हैं। गो अच्छा खाने वाले और अच्छा पहनने वाले अपनी जगह लाचार हैं। यहां तक कि किसी का कारोबार अच्छा है तो दूसरे देखकर जलते रहते हैं। मेरी समझ में तो संसार में रहने वाले सभी मनुष्यों का ये ही हाल है। इधर आकर बड़े सादा रूप में आपके दर्शन पाकर और कोई ठाठ-बाट न देखकर बड़ी खुशी होती है। यह भी अज़ीब ही लगा है। आजकल आश्रमों में जाते हैं तो वहां पर गृहस्थियों से भी ज़्यादा नुमायश देखने में आती है। खुद इस जगह के संत, महात्मा, सन्यासी बड़ी शान से रेशमी कपड़े पहने, घड़ियां बांधे शान से रहते हैं। बाज़ जगह रेडियो भी रखे हुए हैं और गाने सुन रहे हैं। सोफ़ा सैट भी रखे हुए हैं। जो चीज़ गृहस्थियों को उपलब्ध नहीं वहां मौज़ूद हैं। इसलिए मन कहीं नहीं लगा। उनका कहना है कि शांति प्राप्त करो। क्या ऐसे आनन्द हासिल होता है, कोई असर नहीं होता? हमें खाने-पीने में जो थोड़ा सुख मिल जाता है उसको आनन्द का कारण जानकर हर समय उसकी प्राप्ति की कोशिश करते रहते हैं। संत-महात्माओं को हमसे ज़्यादा धन की ज़रूरत है और उनके पास होता भी है। इन सब बातों को जब विचारते हैं तब हमें कोई, रास्ता नहीं नज़र आता। सोचते हैं: संसार क्या है? क्यों, किसने बना दिया है? अभी आपसे न कोई ज़्यादा विचार हुआ है, न उपदेश सुना है, न इससे पहले आपके दर्शन किए हैं।"

"भाई साहब कश्मीर चंद जी आपका ज़िक्र करते रहते हैं। हमने आजकल के संतों जैसा ही मामला समझ रखा था। यहां आने पर वाकई शांति और आनन्द महसूस हो रहा है, वह भी आपके यहां होने से। वैसे कई दफ़ा इधर घूम गए हैं इसको कपास घाट, पुराना धोबी घाट कहते हैं। किताब घर से पगडंडी वाला रास्ता जो इधर आता है, उसे चमर-खड्ड भी कहते हैं। कभी कोई फ़र्क महसूस नहीं हुआ। आज मेरा मन बहुत प्रसन्न हुआ है। वाकई असली तपस्वी संतों के नज़दीक जाने से ही सच्ची राहत मिलती है। भूले हुओं को रास्ते पर डाल देना आप जैसे ऋषियों का ही काम है। जो लोग बाहर से मसूरी आते हैं, इसे देखकर बहुत खुश होते हैं। मसूरी बड़ी अच्छी सुन्दर जगह है। हम कई वर्षों से हर साल आते हैं और गर्मी का सारा मौसम रहकर चले जाते हैं। और हिल स्टेशनों से अच्छी साफ़-सुथरी जगह ज़रूर है। मगर यह सब साज़ो-सामान हमें तो अन्दर दु:खदाई लगता है। बाहर से बेशक चमकते चेहरे नज़र आयें, मगर अंदर सबके बीमारी एक जैसी लगी होती

है। महाराज जी, आपके कहने पर हम आपसे कुछ सबक लेना ही भूल गए। अपना लेक्चर देना शुरू कर दिया है और आपका बड़ा समय ले लिया है।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "प्रेमी जी! तुमने अच्छी तरह संसार की हालत को समझ रखा है। इधर से और क्या कहा जाए? तुम्हारे जैसे प्रेमियों के अन्दर धर्म का विश्वास कैसे आ सकता है, जहां साधु-संत संसारियों से बढ़-चढ़ कर नुमायशी दृश्य बनाकर रखते हों? संसारी तो आगे ही मोह, माया में जकड़े होते हैं।

'मैं जानां मेरे घर लगी अग,
कोठे चढ़के देखया लगी सारे जग' ॥

"जब-तक तप, त्याग, सादा आहार-व्यौहार साधु का न हो तब-तक धर्म, प्रकाश रूप में दिखाई नहीं दे सकता। बाकी तृष्णा रूपी रोग सबको लगा हुआ है। इंसान, हैवान, पशु सब जीव मोह-माया के जाल में फंसे हुए हैं। मनुष्य ज़्यादा से ज़्यादा धन परिवार बढ़ाकर और साज़ व सामान अच्छी तरह एकत्र करके खुशी हासिल करना चाहता है। यह चीज़ें जब बढ़ जाती हैं तब भी कोई सुख की सांस नहीं ले सकता, बल्कि दु:ख और अशांति ही होती है। ऐसा कोई संसार में नहीं दिखाई देता जो मोह-माया को बढ़ा लेने से शांति को प्राप्त हुआ हो। जुगा-जुग से सृष्टि चली आ रही है। बड़े-बड़े राजे-राने वली हुए हैं। जब संसार को अच्छी तरह भोग चुके तब चित्त में विचार आया कि संसार झूठ और दु:ख रूप है। आजकल तो भोगवाद बढ़ रहा है। यह अक्ल-शक्ल सबकी कमज़ोर कर देगा। कोई कुदरती चीज़ न रहने देगा। भोगों को अधिक से अधिक भोगकर आज-तक कोई तृप्त नहीं हुआ। वह मूर्ख लोग हैं जो बड़े-बड़े भोग देखकर खुश होते हैं और ज़्यादा से ज़्यादा प्लान बनाये जा रहे हैं। किसी वक्त जाकर यह कैसी हालत पैदा करते हैं यह तब पता लगेगा? दूसरे मुल्कों की नक्ल तो कर ली है मगर अक्ल नहीं ली। वह कैसे वक्त के पाबन्द थे, किस तरीके से राजनीति कायम कर रखी थी, क्या-क्या औसाफ़ थे? उनकी कोई अच्छी बात ली नहीं, जो ख़राब विचार थे सब ग्रहण कर लिए। उनके मुल्क के रिवाज़ और हैं। मांस, शराब, नाच-रंग का रिवाज़ है। इस देश का रिवाज़ और है। यह देव भूमि है। मगर अब यह भी राक्षसपना इख़्तियार कर रही है। आपके बुज़ुर्गों, ऋषियों-मुनियों ने बहुत उच्च शिक्षा दे रखी है। उधर के लोगों को अपने जीवन स्वरूप का न बोध है और न वह भोगों को तुच्छ मानते हैं। उनके अन्दर तृष्णा बढ़ती चली जाती है। वह लोग तृष्णा को बढ़ाकर शांति चाहते हैं। इस भारत भूमि में आला सत्-बुद्धि रखने वाली हस्तियां साथ ही ज्ञान रखती हैं कि संजोग-वियोग, प्राप्ति-अप्राप्ति, लाभ-हानि, दु:ख-सुख, द्वंद्व में किस तरह सम-अवस्था में रहा जा सकता है, जिससे बुद्धि का तवाज़न (संतुलन) न बिगड़े, समभाव सदा बना रहे? ऐसा उच्च ज्ञान उन देशों में कहां? उन्होंने केवल इन्द्रियों द्वारा भोगों को ज़्यादा से ज़्यादा एकत्र करके उनके द्वारा सुख लेना असली जीवन

समझ रखा है। इन भोग पदार्थों को अधिक से अधिक किस तरह जमा किया जावे, वह इसे अच्छी तरह समझते हैं। यहां के लोगों का अब न आहार पवित्र रहा है न व्यौहार आम तौर पर पवित्र रहा है। सब शिकार चढ़े रहते हैं। इसलिए प्रेमी, आहार, व्यौहार, विचार और संगत पवित्र करनी होगी। चाहे जिस जगह मर्ज़ी हो रहकर जीवन का सुधार करो। गुरु–पीर उसको धारण करो जिसके अंदर त्याग और वैराग्य पूर्ण रुप से विराजमान हों। जो नित अपने जीवन को उच्चता की तरफ़ ले जा रहा हो। लोक–सेवा में प्रवृत्त हो। फिर ठंडी जगह हो या गर्म जगह रिहाईश का मौका मिले, यह जीव प्रभु आज्ञा में विचर कर समां व्यतीत कर सकता है। जब इस तरह के सुधार के जीवन बन जाते हैं, खुद–ब–खुद जीव खुशी महसूस करने लगता है। वैसे जब–तक चित्त के अंदर वासनायें मौजूद हैं तब–तक जीव शांति को हासिल नहीं कर सकता, बल्कि अनेक तरह के दुःखों को ही प्राप्त होगा। परिवारी हो या निरपरिवारी, चाहे गृहस्थी हो या विरक्ती, राजा हो या रंक, सबके वास्ते आदिकाल से नीति प्रभु आज्ञा से बनी हुई है। जब जीव संकल्प–विकल्प को नाश करके निर्वास होने का यत्न और पुरुषार्थ शुरू करता है तब ही उसकी कल्याण होती है। जब–तक वासना की ख़ातिर लगा हुआ है तब–तक सुख–दुःख से छूट नहीं सकता। शुभ कर्मों यानि सत्संग, सत्‌विचार, सत् सेवा, पर–उपकार से सुख बढ़ते हैं। कपट, छल, धोखा, चोरी, डाका, कत्ल, अमानत में ख़्यानत करने वाले अति–अत दुःखों को प्राप्त होते हैं। ज़ाहरी चमक–दमक में मत भूलो। ख़्वाहे कोई काले रंग का है या गोरे रंग का जैसा स्वभाव लेकर जीव कर्म करता है उनके मुताबिक जन्म–जन्मान्तर तक दुःखों–सुखों को प्राप्त होता रहता है। अच्छे पवित्र शुभ कर्म करेगा तो सुखी होगा और लोग महात्मा कहने लग जावेंगे। खोटे कर्म करने वाला दुःखी होगा और सब ही दुष्ट कहकर पुकारेंगे। ऐसे लोगों के नज़दीक कोई आने की कोशिश नहीं करता। वक्त की हकूमत भी ऐसे जीव को दंड देने के वास्ते तैयार रहती है। उनके वास्ते ही पुलिस वग़ैरा बना रखी है। वह समय था जब इस देश में पहले कौन घरों को ताले लगाता था? कोई भी किसी के वास्ते बुरा नहीं सोचता था। अपने–अपने सत्–भावों में रहते हुए स्त्री–पुरुष मर्यादा का जीवन व्यतीत करते थे। आजकल कोई मर्यादा न रहने से सब जीव अधीर रहते हैं। हालात यह बन गए हैं: 'तवे दी तेरी, चूल्हे दी मेरी'। 'या दग़ा तेरा आसरा' ऐसा जीवन हैरानगी व परेशानी के देने वाला बन जाता है। इसलिए अपनी भी निबेड़ो और दूसरों के वास्ते भी भला सोचो। अपना पवित्र जीवन बनाओ। किसी भाई पंडित के आसरे मत रहो कि वह पाठ करेगा और तुम्हारी गति होगी। अपनी सत्–गति के वास्ते भी खुद सोचो।"

भक्त बनारसी दास को ग्रन्थ से शब्द पढ़ने की आज्ञा हुई। उन्होंने 'सम दर्शन योग' (शब्द न० 169) मीठे स्वर से पढ़ा। जिसका शुरू था:

गुनी मुनी सब चल बसे, परम पुरख के पास।
'मंगत' मनमुख मर मिटे, रख झूठ जीवन की आस।।

और आख़री शब्द था:

माया कूड़ पसार है, जो सेवे सो रोए।
'मंगत' हरखत साध जन, जो निर्भय धाम बसोए।।

सतपुरुष ने आंखें मूंदी हुई थीं। जब शब्द समाप्त हुआ तो आंखें खोलकर फरमाया:– "प्रेमी! और कोई विचार करना हो तो करो।"

प्रेमी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! यह सारा शब्द ही हमारे ऊपर घटता है। कोई कल्याण का रास्ता बतलायें। जीवन तो खाने–पीने, भोग–विलास में जा रहा है।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! यह थोड़े दिन इस जगह और हैं, दो चार दफ़ा आओ। आज तो फ़िरते–फ़िराते आ गए हो। जब पूरा भाव लेकर ज्ञान प्राप्ति के लिए पहुंचोगे तब देखा जावेगा। ज्ञान कोई मामूली चीज़ नहीं। गो आजकल संतों ने बड़ा सस्ता ज्ञान कर रखा है। नाम–दान देने के लिए बड़े अखाड़े खुले पड़े हैं। कुना मुना कुर्, तूं चेला ते मैं गुर्। ईश्वर आपको धर्म–मार्ग में श्रद्धा–विश्वास बख़्शें। सही पारखी बनो। खूब ठोक बजाकर दो पैसे की हांडी खरीदी जाती है। अगर इस मार्ग का शौक जागे तो बहुत अच्छी बात है और फिर अच्छी तरह परख लो।"

इस पर प्रेमी द्वारका नाथ पूछने लगा:– "महाराज जी! आपने फरमाया है थोड़े दिन ही इस जगह हैं, फिर किधर का प्रोग्राम है?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! पहले तो इधर से देहरादून जाना होगा, वहां से जगाधरी। उधर से सितम्बर के महीने के मध्य तक चलने का विचार है।"

प्रेमी जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! इस बार जाते वक्त की सेवा इस गुलाम को बख़्शी जाये। देहरादून से जगाधरी तक छोड़ने का जो प्रोग्राम होगा फिर आ कर पता कर लेंगे। सेवक भी एक डेढ़ माह के वास्ते बाहर जा रहा है, इसलिए इस सेवा की ज़रूर कृपा करें।"

शाम का समय हो रहा था, श्री महाराज जी ने फरमाया:– "अभी से यह कुछ नहीं कह सकते, समय पर देखा जावेगा।"

अंगूरों का प्रशाद जो प्रेमी लाए थे श्री महाराज जी ने खुद उठाकर अपने कर–कमलों से सबको दिया। प्रणाम करके सब प्रेमी विदा हुए। भक्त जी उन्हें विदा करने गए। जब छोड़कर वापिस आए तो आपने पूछा:– "प्रेमी नाराज़ तो नहीं हो गए?" भक्त जी ने अर्ज़ की:– "नाराज़गी किस बात की करनी थी? कहते थे– महाराज जी का शरीर तो बहुत कमज़ोर है, आवाज़ बड़ी करारी है। बड़ा तपस्वी जीवन है इनके नज़दीक आकर शांति महसूस हुई है। मगर हम लोग ऐसे संसार में ग्रस्त हैं कि नुमायशी जीवन को बिलकुल छोड़ नहीं सकते। श्री महाराज जी का सारा उपदेश सादगी, सेवा पर खड़ा है। लिबास, विचार और खुराक की सादगी हो जावे फिर बाकी क्या रहता है? सत्संग और सत सिमरण सब ही बड़े अच्छे असूल बनाए हैं। यहां कोई ढोंग नज़र नहीं

आता, ईश्वर भक्ति ही बतलाते हैं। मुझे महाराज जी के वचन बड़े पसन्द आए हैं। मगर अमली जीवन धारण करना मुश्किल है। जब–तक अमली जीवन नहीं होता कल्याण, मुक्ति कहां?"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "देर काफ़ी हो गई है, दूर उन्होंने जाना है।" भक्त जी ने अर्ज़ की:– अपनी कार पर आए हुए थे। दस मिनट में किताब घर पहुंचकर घर चले जावेंगे।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "इसी वास्ते कहते थे देहरादून, जगाधरी तक ले जाने की सेवा बख़्शी जावे। अमीरों के नज़दीक ज़्यादा नहीं जाना चाहिए। यह समझने लगेंगे यह भी मांगने वाले संत ही हैं। देखा किस कद्र यह लोग संतों पर निग़ाह रखते हैं। वह जानते हैं कि त्यागी–गृहस्थी में क्या फ़र्क है? कैसी रहनी–सहनी होनी चाहिए? बड़े बारीक–बीन समझदार आदमी हैं। यह अपनी रहनी ठीक नहीं करना चाहते। मगर संतो–असंतों के फ़र्क पर खूब निग़ाह रखते हैं। इनका कहना भी ठीक है। गृहस्थी–विरक्ती में कोई फ़र्क न हुआ तो फिर दोनों बराबर ही हुए। गृहस्थी के लिए ज्ञान विचार इतने मायने नहीं रखता जितना त्याग रूप का असर होता है। आम गृहस्थी तो भोले–भाले होते हैं, जिधर कोई लगाता है लग जाते हैं। मगर यह अच्छे चंट लोग हैं, होता भी ऐसा ही रहा है। ऐसा ही आदमी जब धर्म–परायण हो जाता है तब ही धर्म प्रकाश बढ़ता है।"

श्री महाराज जी रात को दस बजे तक बैठे रहते। फिर प्रेमियों को, जो पास होते, आराम करने की आज्ञा फरमाते और फिर जब प्रेमी लेट जाते तो आप भी लेट जाते। उस दिन भी लेट गए, भक्त जी भी लेट गए। थोड़ी देर लेटने के बाद फिर उठकर बैठ गए और फरमाने लगे:– "तू समझता है इनका चित्त सोने को करता है। प्रेमी, दूध जो लिया जाता है इस वास्ते नहीं कि इनको भूख लगती है। प्यास के बारे में जानता ही है, सालों–साल गुज़र जाता है क्या कभी तुमसे घूंट पानी की मांग की है? कौन ऐसी बूटी ले रखी है जिससे तीनों रोगों से मुक्त हैं? तुम लोग खा–खा कर भी नहीं रजते। सो–सो कर फिर सोते हो। अनेक तरह के खट्टे–मीठे रस ग्रहण करते हो। इनका मन कोई पत्थर का बना हुआ है जो किसी चीज़ के वास्ते प्रेरणा नहीं करता। कभी तुमने सोचा है और इन बातों पर ध्यान दिया है कि ऐसा क्यों है? कैसे मस्ती में यह रहते हैं? चौके–चूल्हे की भक्ति कोई इतना कल्याण नहीं देती। यह तो इस वास्ते सेवा दे रखी है किसी बात का अहंकार न आए, मन कर्म में लगा रहे।"

भक्त जी ने हाथ जोड़कर अर्ज़ की:– "महाराज जी! आप इस नादान पर कृपा तो बहुत करते हैं। मालिक की मौज में जाने के वास्ते ही चरणों की शरण धारण कर रखी है। दूसरी और कोई गर्ज़ आप से पूरी नहीं करवाना चाहता, न किसी समय प्रार्थना करेगा। बारम्बार चरणों में यह ही प्रार्थना है कि रंचक भर उस मालिक की मौज का नज़ारा दिखा दें जिससे यह चित्त दौड़–दौड़ कर उस तरफ जाए और इन्द्रियाँ और मन उसमें लय हो जाएँ। यह नहीं कि दास आपकी आनन्दमयी अवस्था देख नहीं रहा, देखता ज़रूर है। जिस वज़ह से भूख, प्यास, निन्द्रा तीनों से आप पाक साफ़ हैं। थोड़ी दुनियादारी रख ली है। बिलकुल बनावट का नाम व निशान नहीं। दास ख़ुद दूध सेवन

करवाता है। ख़्याल भी करता है कि इतने दूध से क्या बनता होगा? और कोई ठोस चीज़ आप ग्रहण नहीं करते। कभी कभार पपीता, एक आधा माल्टा, संतरा लेने से भी क्या होता है? यह चीज़ें मौसम पर ही मिलती हैं। किस चीज़ के आधार पर शरीर खड़ा है। आपके शरीर का आधार खाली ज़्यादा से ज़्यादा हवा पर ही है। अंतर विखे उस मालिक की मौज में रहकर भूख, प्यास, निन्द्रा से ख़ुलासी पा रखी है।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "प्रेमी! तुम्हारे सब अन्दरूनी हालात ये अच्छी तरह से जान रहे हैं। प्रेमी, यत्न-प्रयत्न करके उस मालिक की मौज को हासिल करो। गो यह सब प्रारब्ध संस्कारों के असर और हाज़रा सत्-असत् कर्मों के असर पर भी मुन्हसर (निर्भर) है। खाली शरीर द्वारा कर्म करने को कर्म नहीं कहते। मन ही मन में शुभ-अशुभ ख़्याल व विचार, वासनायें, संकल्प-विकल्प जो बनते-बिगड़ते रहते हैं, जिनको दूसरा देख नहीं सकता, उनका प्रभाव भी बुद्धि सुरति पर पड़ता रहता है। उनका असर गो मालूम नहीं भी होता, मगर चिरकाल के बाद असर ज़रूर होता है और उनका फल सुख-दुःख मिलकर रहता है। सत्-पुरुषार्थ यह है कि सुरति को इन सबसे हटाकर बारम्बार अंतरमुख गुरु-वाक्य में लगाए रखना, जब-तक निर्वास नहीं होते। प्रेमी, यह कुछ नहीं कर सकते, न ही ब्रह्मा, विष्णु, शंकर और साक्षात परमात्मा कुछ करेगा, क्योंकि ऐसा विधान ही नहीं। राम, कृष्ण, विवेकानन्द वाली जो मिसाल हैं वे ऐसे हैं कि विवेकानन्द का चित्त इस कद्र निर्मल हो चुका था, गुरु-परायणता और ईश्वर-परायणता भी इस कद्र थी कि खुद-ब-खुद उसको अन्दर जीवन सत्ता अनुभव होने लगी। गुरु-कृपा से उसके अन्दर लग्न तड़प बड़ी थी, और पिछले संस्कार भी प्रबल थे। जिसके अंदर आनन्दमयी हालत जब प्रगट होती है, जानी नहीं जाती। अति वैराग्य व अभ्यास की दृढ़ता मालिक की मौज की तरफ़ ले जाती है। तुम इस बात पर आगे भी कई दफ़ा ज़िद कर चुके हो। अपनी हालत का आप विचार करो कितना समय सत् सिमरण में देते हो। बार-बार समझाया जाता है कि सेवा और अभ्यास दोनों लाज़मी हैं। जिस तरह सेवा की तरफ़ ध्यान देते हो उसी तरह अभ्यास में जुट जाया करो, फिर बेड़ा पार है। जब भी ऐसा करोगे तब ही जाकर पहले रंचक भर खुशी मिलेगी फिर आहिस्ता-आहिस्ता मेहनत करने पर बढ़ती जावेगी। तब इस वासना युक्त पिंजरे से ख़ुलासी मिलेगी।"

ऐसा जन कोई हो मस्ताना रे, ऐसा जन कोई हो दीवाना रे ॥
भाने लोकां पूरा पागल। बन रहियो अंजाना रे।।
रैन दिवस प्रभ सिमर-सिमर के। पायो पद निरवाना रे।।
हाड़ मांस की देही बनाई। भरयो बीच प्राणा रे।।
बिन मद्य पिये रहे मतवारा। बिन पंखा उड़ जाना रे।।
भूख प्यास की दुबधा नासी। निन्द्रा गई दुःखदाई रे।।

जिन खोजियो तिन ही प्रभ पायो। ध्यायो सार निधाना रे।।
'मंगत' मन की गत नित जानी। पायो भेद वेद पुराना रे।।
ऐसा जन कोई, होवे दाना रे।।
भाने लोकां पूरा पागल, बन रहियो अंजाना रे।।

इसके बाद आप चादर लेकर लेट गए। थोड़ी देर बाद एक–दम किसी नर्म चीज़ के गिरने की आवाज आई। टार्च जला कर देखा। सत्पुरुष ने पूछाः– "बनारसी! क्या गिरा है?" उठकर बाहर जाकर बरामदे में देखा, जहां श्री महाराज जी लेट रहे थे, उनकी दरी के एक कोने पर एक बड़ा लम्बा सांप पड़ा था। जो सफ़ेद रंग का था और बड़ा भयानक था। श्री महाराज जी ने फिर पूछाः– "क्या है?" अर्ज़ की गईः– "महाराज जी! सांप है, हिल नही रहा।" उठकर बैठ गए और फरमायाः– "लैम्प जलाओ।" लैम्प जलाया गया। सांप देखकर फरमायाः– "सोटी से इसे हिलाओ।" भक्त जी ने सहमे हुए आज्ञा का पालन किया। दो–तीन दफ़ा हिलाया, न हिला, न सरका। श्री महाराज जी ने फरमायाः– "इसे लम्बी लकड़ी से उठाकर बाहर फैंक दो।" लम्बी लकड़ी लाकर डरते–डरते दरम्यान से उठाकर दरवाज़ा खोलकर बाहर खड्ड में उसे फैंक दिया, अच्छा लम्बा सांप था। उसके बाद श्री महाराज जी उठकर बाहर चले गए। उस रोज़ आवाज़ भी नहीं लगाई और बाहर से कुंडा लगा गए। उसी दिन देहरादून से राय साहब दीवान रल्ला राम जी सेवा में हाज़िर हो गए। हाज़िर होकर चरणों में प्रणाम किया और अर्ज़ कीः– अब पंद्रह–बीस दिन ठहरेंगे।

प्रश्न – राय साहब ने कुछ देर चरणों में बैठने के बाद पूछाः– "महाराज जी! प्रभु ने कैसी सृष्टि की रचना कर रखी है, एक का स्वभाव दूसरे जीव से नहीं मिलता। भाई–भाई के, पिता–पुत्र के, पति–पत्नी के जो बड़े नज़दीक के रिश्ते हैं, उनके एक दूसरे से विचार नहीं मिलते। कोई सात्विक स्वभाव का है, कोई राजसी और तामसी का। ऐसे जीव कैसे मुक्ति को प्राप्त हो सकते हैं? देखा जाए तो जीवों की पैदाईश व फ़ना का भी कोई ठिकाना नहीं। लाखों जीव मरते हैं और इस से कई गुणा ज़्यादा पैदा हो रहे हैं। बाकी योनियों को छोड़िये, मनुष्यों का भी कोई शुमार नहीं है। ऐसे विचार चक्कर में डाल देते हैं। ख़्याल पैदा होता है हमारी गिनती किस तरह और किसमें हो सकेगी? गृहस्थ में रहते हुए इस संसार–बन्धन से निकलना बहुत ही मुश्किल है। कृपा करके कोई सहज उपाय बतायें ताकि इस चक्कर से निकल सकें?"

उत्तर – श्री महाराज जी ने फरमायाः– "प्रेमी जी! जीवों का शुमार कौन कर सकता है? जीव वासना रूपी रस्सी में बंधे हुए ऊपर–नीचे होते रहते हैं। न वासना को ख़त्म करने की कोशिश कोई करता है, न जन्म–मरण का सिलसिला ख़त्म होता है। जीवों की कई तरह की पैदाईश होती है। कोई बादलों के ज़रिये योनियों में आ रहे हैं, कोई फलों के ज़रिये। कई का ठिकाना अनाजों में बन जाता है। जब जीव इन चीज़ों को ग्रहण करते हैं, वीर्य रूप में स्थापित होकर फिर संयोग होने पर

शरीर धारण करते हैं। कोई मनुष्य की योनि धारण करते हैं, कोई पशु–पक्षी की, कोई जड़ योनि धारण करते हैं बेअंत प्रभु की माया है। वीर्य में अनगिनत तदाद में जीव जमा रहते हैं। कई तरह से जीव, जीवों के अन्दर प्रवेश करते हैं। स्थावर रूप में सुषुप्ति–अवस्था जड़ जोनियों की तरफ़ ले जाती है। जागृति–अवस्था वाले मनुष्य देही में आते हैं। स्वप्न–अवस्था वाले पशु–पक्षी जोनियों में जाते हैं। उन्हें ही तामस, सात्वक, राजस कहा जाता है। इन तीन अवस्था से पैदाईश होती है और इनके मुताबिक ही स्वभाव बनते हैं। बाज़ मिले–जुले भी स्वभाव होते हैं, मसलन सात्विकी, राजसी, तामसी वग़ैरा। जितने भी शरीरधारी जीव देखने में आते हैं। सबके सब सत् स्वरूप को भूलकर भटक रहे हैं। शाज़–नादर (कोई–कोई) ही ऐसे जीव होते हैं, जिनके अंदर सत्संग, सेवा, सिमरण करने और आत्म–दर्शन का चाव होता है। इनमें भी कोई ख़ास जीव होते हैं जिनको अपने स्वरूप का ज्ञान होता है। वह संसार में आते ही प्रभु भक्ति में लग जाते हैं। मसलन–नानक, कबीर, राम, कृष्ण जैसे संसार में आकर ऊंची स्थिति को हासिल करते हैं। कई जन्म से ही राक्षस बुद्धि वाले होते हैं। कई सात्विक जीव शुभ गुणों से सम्पन्न होते हैं और पैदा होते ही प्रभु–परायण होकर विचरते हैं। सत्संग, अच्छे पुरुषों की संगत मिल जाए तो उनको रंग लग जाता है। जिनको अपने स्वरूप का बोध करने का शौक होता है वे हमेशा अच्छे रास्ते पर चलते हैं, जिस रास्ते पर सत्पुरुष चलते आए हैं। कई राज भी भोगते हैं और अपने स्वरूप में स्थित भी रहते हैं। राम, कृष्ण, जनक, ध्रुव, प्रहलाद, इक्ष्वाकु वग़ैरा ब्रह्म–पद को प्राप्त कर विचर चुके हैं। कई जीव अच्छी संगत में रहकर मोह माया के चक्कर से निकलने की कोशिश करते रहते हैं। आत्म–सत्ता का अनुभव करने के लिए दिन–रात अच्छे विचारों में लगे रहते हैं। शुभ, निष्काम कर्म, आत्म–अनुभवता के लिए यत्न करते हैं। उनकी सत्–भावना ही उन्हें परम फल देती है। सत् भावना यह ही है कि मैं क्या हूँ? यह जग क्या है? ईश्वर क्या है? आत्मा और जिस्म में क्या भेद है? यह ही गुरमुखों का मार्ग है। ऐसे जीव मौत को किसी समय नहीं भूलते। जो अपनी आख़रियत को भूल जाते हैं और भोग पदार्थों को प्राप्त करने की चिंता में मग्न रहते हैं, वह ही कुंए के टिंडों की तरह कर्म चक्कर में घूमते रहते हैं। जब–तक ऐसी तड़प अंदर न हो, जैसे मोर को बादलों की, चकोर को चंद्र की, तब– तक आत्म–बोध नहीं होता और जीव वासना रूपी गड्ढे में पड़ा रहता है। वैसे शरीर और आत्मा, आकाश और महा–आकाश में कोई भेद नहीं। इसे सत्पुरुष ही जानते हैं। जैसे लकड़ी में आग, दूध में घी और फूल में सुगन्धी है वैसे ही वह सत् संसार में मौज़ूद है। आम संसारियों की ऐसी स्थिति नहीं होती। आत्म–सत्ता, मनुष्य, पशु–पक्षी, जड़–पदार्थ सब में मौजूद है। मगर इसे अनुभव करने के वास्ते अति त्याग–वैराग्य की ज़रूरत है। ऐसा करने से शोक रहित अवस्था को प्राप्त होकर निर्मल, सम, शांत अवस्था को अनुभव किया जा सकता है। संसार में बड़े धीरज से विचरने वाले सात्विकी जीव सत्–बुद्धि द्वारा परम आनन्द को पाते हैं। परम–पद की इच्छा रखने वाले अधिकारी बहुत कम होते हैं। आम जीव संसार की चहल–पहल देखकर मोह वश होकर मरते–खपते रहते हैं। ऐसे जीवों की भी कोई शुमार नहीं। वृत्ति को अंतरमुख करना ही महान सतकर्म है। जिस तरह सूरज के उदय

होने पर सब प्रकार के संसार का दृश्य नज़र आने लगता है, उसी तरह आत्म-निद्धियास से अंतर विखे यथार्थ ज्ञान जब प्रगट हो जाता है, उसे भी सारे खेल का पता लग जाता है। हर समय सत्संग और विवेक द्वारा गुरु वचनों और सत्पुरुषों के वाक्यों का विचार करें। नफ़रत और तास्सुब वग़ैरा को बिल्कुल नज़दीक न आने दें और ऐसी दृढ़ता धारण करने से कि उस आनन्द को प्राप्त करना है जीव इस अवस्था को प्राप्त कर सकता है। सत् श्रद्धा, सत् विश्वास और निर्मल वैराग्य द्वारा आवागवन के चक्कर से छूट पाई जा सकती है। साधन कोई भले ही जानता हो, अगर चित्त में त्याग, वैराग्य की कमी है तो कभी भी सत् मार्ग में कदम आगे नहीं बढ़ सकता, भले ही चतुराई द्वारा बातों से दूसरों को मोहित करे, मगर अपना चित्त परम स्थिति से खाली रहता है। एक रोज़ असलियत सामने आ जाती है। सच्चे जिज्ञासु को किसी समय ठोकरें खाने पर प्रभु आप ही सत्पुरुष से मिला देते हैं।"

यह विचार चल ही रहे थे कि हल्द्वानी से प्रेमी नंद लाल जी बिन्द्रा और प्रेमी मुंशी राम जी ने पहुंचकर प्रणाम किया। श्री महाराज जी ने करोबार के मुतालिक पूछा। श्री नन्द लाल जी ने अर्ज़ की:- "आपकी कृपा दृष्टि अंग-संग है। कदम जम जायें। नया इलाका और नया काम है। भाई साहेब प्रेमी मालिक राम का दिल अभी जमा नहीं। ज्यों-ज्यों काम बढ़ेगा आप ही दिल लग जाएगा।"

फिर श्री महाराज जी ने पूछा:- "कितने दिन के बाद घी बाहर से लाते हो?" प्रेमी नंद लाल जी ने अर्ज़ की:- पन्द्रह दिन के बाद। फिर आपने फरमाया:- महीने के बाद लाया करो। "प्रेमी, तुम्हारे भाग्य तुम्हारे साथ हैं। यह तो फिर कस्बा है, अगर किसी पहाड़ की कन्द्रा में भी जाकर बैठो वहां भी रिज़क मिल जाएगा। सब जीवों के भाग्य साथ होते हैं। जिस धरती पर पांव रखे जाते हैं वहां ही उसके लिए दाना-पानी होता है। प्रभु में मन जमाये रखो। प्रभु भली करेंगे।"

फिर प्रेमी मुंशी राम से पूछा:- "प्रेमी! तुम सुनाओ।" मुंशी राम जी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! संसारी काम जिस जगह किए जावें वहां ही कुछ बन निकलता है। बड़ा काम तो यह है कि मन किस तरह अंतरमुख हो? आप ही कृपा दृष्टि करें। अंतर मन ऐसा मौन हो जाए कि किसी समय स्वांस और नाम न विसरे।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "प्रेमी जी! मन की अवस्था हर घड़ी, हर लम्ह बदलती रहती है। वह ही शूरवीर है जो इस शत्रु को काबू करता है। जब-तक यह बाहरमुखी है, बेचैनी बनी रहती है। इसे नाम, रूप से हटाकर सतनाम में दृढ़ करना गुरमुखों का फ़र्ज़ है।"

प्रश्न – प्रेमी मुंशी राम ने अर्ज़ की– "मौन व्रत रखने का क्या तरीका है?"

उत्तर – "प्रेमी, मौन व्रत क्यों रखना चाहते हो?"

प्रेमी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! अभ्यास में लाभ हो।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "जहां से संकल्प उठ रहा है जब-तक उसे काबू नहीं कर सकते तब-तक मौन बन नहीं सकता। जिस तरह लकड़ी का स्वभाव है जब-तक ऐसा स्वभाव नहीं बनाओगे तब-तक मौन वृत्ति नहीं हो सकेगी। इसे ही काष्ठ-मौन कहते हैं। जब अभ्यास करते हो, मन को भटकने न दो। यह ही मौन हो जाएगा। अगर इस दौरान मन में संकल्प-विकल्प चलते रहे तो यह ही पाखंड का रूप है। फ़िज़ूल बोलना बंद करो। मतलब की बात हुई कर ली। ज़्यादा से ज़्यादा समय अंतरमुख होने में लगाओ, सहज भाव ही मौन बना रहेगा। ज़ाहरी मौन व्रत की कोई ज़रूरत नहीं। अगर मौन रखना चाहते हो तो झूठ बोलना बंद कर दो, यानि झूठ न बोलने का व्रत रखो। ऐसा कदम उठाना चाहिए जिससे लाभ हो। ऐसा नियम धारण करना चाहिए जो सारी ज़िन्दगी निभाया जा सके। कोई प्रोग्राम निश्चित करके उसको छोड़ देना ठीक नहीं। इससे बेहतर यह ही है कि ऐसा प्रोग्राम बनाया ही न जावे।"

"मनुष्य जामे में जीव मानसिक शुद्धि के वास्ते संसार में आता है। मगर भूल में पड़ कर शारीरिक सफ़ाई व बनावट-सजावट में लगा रहता है। शारीरिक यानि तन की सफ़ाई की हद मुकर्रर (निश्चित) होनी चाहिए और मन की सफ़ाई में भी वक्त देना चाहिए। जिस काम के करने से ज़मीर रोके वह नहीं करना चाहिए, वरना नुकसान होता है और दु:ख होता है। कर्म शुद्ध करो। जो कर्म करना हो, सोच विचार कर करो। मज़हबी झगड़ों से बचो। हिन्दू-मुस्लिम में भेद मत जानो। महामंत्र का उच्चारण करना ज़रूरी है। मन, पवन और नाम का बंध यानि जब स्वांस और नाम में ध्यान लगाकर साधन करोगे, खुद-ब-खुद सब ठीक हो जावेगा।"

26 जुलाई, 1951 को फिर जब प्रेमी चाय वग़ैरा से फ़ारिग होकर चरणों में पधारे तो प्रेमी मुंशी राम जी ने फिर प्रश्न शुरू कर दिये और पूछा:

प्रश्न - "महाराज जी, जीव का माया की तरफ लगाव ज़्यादा रहता है। इसके मोह को किस तरह कम किया जाए?"

उत्तर - "प्रेमी जी, सब चीज़े पराई जानो। अपना कुछ न समझो सिर्फ सत्गुरु को अपना जानो। क्योंकि सब परिवार के मैम्बर अपने-अपने मतलब के हैं जो कि जीव को हर समय अंधेरे की तरफ ले जाने का कारण बनते हैं।

2. तृष्णा रूपी थर्मामीटर ही जीव को जांचने का साधन है। जैसे-जैसे तृष्णा घटती है जीव का यत्न सत्मार्ग की तरफ बढ़ता है।

3. सत्-सेवा और सत्-सिमरण ही जीव की कल्याण के साधन हैं। सेवा दो किस्म की है, भय सेवा और प्रेम सेवा। प्रेम सेवा ही निर्मल सेवा है जो कि सत्नाम की तरफ़ लगाती है। भय सेवा गर्ज़ की सेवा है जिसका कोई अच्छा फल नहीं बल्कि उल्टा बंधन का कारण है।

4. क्रोध का त्याग करो, यह बड़ा ज़रूरी है।

5. बुद्धि सारे शरीर में फैली हुई है, इसका ताल्लुक शारीरिक संस्कारों के साथ होने के कारण असली तत्त्व को नहीं समझ सकती। इसलिए शरीर से नाता तोड़कर बुद्धि को सत्-मार्ग में दृढ़ करना चाहिए। यह ही सत्पुरुषों के जीवन का सार है।

6. इख़्लाकी जीवन सुधारने से ही लाभदायक अभ्यास बन सकता है।

7. शारीरिक कर्मो के फल के त्याग करने से ईश्वरी प्रेम बनता है।

8. पांच तत्त्वों के ढांचे में आत्मा की मौज़ूदगी से बुद्धि, बुद्धि करके मन और मन-पवन करके तन हरकत करता है।

9. वासनाएँ ही माया रूपी अंधकार है।

10. मन, वचन, कर्म करके दूसरों का भला चाहने से अंतरविखे प्रेम पैदा होता है।"

प्रेमी नन्दलाल जी, मुंशी राम जी खाना वग़ैरा खाने के बाद मसूरी की तरफ़ गए। दोपहर बाद राय साहब श्री महाराज जी के चरणों में जब बैठे तो पूछा:

प्रश्न – "महाराज जी, शरीर से अलग आत्मा को कैसे जाना जा सकता है? शरीर को सदा सत् समझ रखा है, आत्मा को नहीं। सांसारिक पदार्थ, सब संबंधी, परिवार वग़ैरा को सत् समझ कर इससे चिपटे रहे। रात-दिन शारीरिक सुखों की प्राप्ति में लगे रहते हैं। इस सांसारिक यात्रा को कैसे समझा जावे? बड़ा ही अश्चर्ज मामला है। बड़ा यत्न करने पर भी मन बुद्धि माया में ग़र्क हो जाते हैं आपके वचनों को अच्छी तरह सुनते हैं, मगर फिर भी न मालूम कहां-कहां के विचार सामने आकर खड़े हो जाते हैं। मन खूब चक्कर में पड़ जाता है। ऐसा उपाय बताएं जिससे अभ्यास के समय मन न दौड़े। जब अभ्यास में बैठते हैं तब यह ज़्यादा ही खपखाना डालता है। संसार के कामों में लगे रहने से इसको पता ही नहीं रहता?"

उत्तर – "प्रेमी जी! जब-तक अंतर से संसार को सत् और सुखदाई समझ रहे हो तब-तक स्थिरता कहां बन सकती है? जब यह जीव गुज़रे हुए सुखों को याद करता है तब अति बेचैन हो जाता है। वास्तव में जिस धन, स्त्री, पुत्र, कलत्र में यह सुख मान रहा है, यह कहां सुख देने वाले हैं? इन सबके बढ़ जाने पर भी शान्ति नहीं मिलती। नहीं होते तब भी बेचैन रहता है और होते हैं तब भी बेचैन रहता है। आज-तक कोई ऐसा व्यक्ति दुनिया में नहीं हुआ जिसने धन-परिवार को पाकर सुख पाया हो।

'एक लख पूत बारह लख नाती। तिस रावण घर दिया न बाती'।।

राम को दुनिया क्यों याद करती है? वह कितने बड़े परिवारी थे। विचार करके देखो, कैसे ईश्वर-परायण और सत्-धारणा को धारण करने वाले पुरुष सुख-दुःख में सम-चित्त रहते हैं? राजगृह और जंगल में रहकर दिखा दिया। दोनों हालतों में कैसे सम चित्त रहे? मूर्ख जीव संसार की

चहल–पहल भोग पदार्थों को देख कर खुश होते हैं। मोह माया को बढ़ा कर कभी सच्ची खुशी शांति नहीं मिल सकती। बुद्धिमान गुरमुख जीव हमेशा संसारी पदार्थों को असत् दुःख रूप जानकर इनकी ख़्वाहिशात उठने नहीं देते। ज़रूरियाते ज़िन्दगी के पूरा होने और न होने पर दोनों हालतों में एकसा रह कर संसार में विचरो। प्रारब्ध वश जो प्राप्त हो उसमें संतोष रखो, जो न प्राप्त हो उसकी इच्छा न करो। इच्छाएँ बंधन में डालती हैं। राम, कृष्ण आदि राज्य में रहते हुए भी निर–इच्छुक थे।

दूसरा विचार यह है कि संसार में सब कुछ आत्म रूप ही जानो और इच्छा या ख़्वाहिश रहित होकर विचरो व राग–द्वेष से रहित हो जाओ। संसार में कर्म करते रहो मगर निर्लेप रहो। ज़रा अवतारी पुरुषों के जीवन पर विचार करो, कैसे राग–द्वेष से रहित उनका जीवन था? ऐसे जीव सदा ही मुक्त होते हैं। वह नित ही आनन्द में रहते हैं। सर्व सांसारिक होने पर भी उनके अन्दर अहंकार नहीं होता। बनवास हो जाए तब दुःख नहीं, राज्य मिल जाए तब खुशी नहीं। बुज़ुर्गों के आदर्श सामने रखो। खाली राम–राम कर लेने से ख़ुलासी नहीं हो सकती जब–तक उनके त्याग, वैराग्य से सबक न लिया जाए। जिस कृष्ण को बार–बार पुकारते हो ऊँचे स्वरों से, वह सारी आयु शाही–तख़्त पर नहीं बैठे। किनारे रहकर राज्य का सारा कार्य भी चलाया और संसार में भी विचरे। इसी वास्ते कृष्ण को महायोगी माना जाता है। संसार में रहते हुए हर घड़ी उससे अलग रहे। और भी कितने महापुरुष हुए हैं। महावीर, बुद्ध, भर्तृहरि वग़ैरा, बड़े–बड़े तपस्वी, ऋषि, मुनि वशिष्ठ, व्यास, अगस्त, भृगु, अंगिरा वग़ैरा भी हो गुज़रे हैं। वह भी संसार में रहते हुए अंतर से अति उदासीन रहे। ऐसी हस्तियां हमेशा ज़िन्दा हैं। उन्होंने असली शांति प्राप्त की जिनकी ग्रहण–त्याग में बुद्धि सम रही है।

प्रेमी जी, जो उपदेश आपको इधर से मिला है उसकी कद्र तुम क्या जानो? कुछ किया कराया नहीं मणि हाथ में आ गई। इस उपदेश को नानक के बाद गुरुओं ने समझा और हज़ूरी में रहकर किस कद्र सेवा, त्याग, सिमरण, भजन में लीन रहे। उन जैसी कमाई करनी पड़ेगी तब जाकर रंग लगेगा। मिट्टी बनना पड़ता है, खाली ज्ञान चर्चा सुनने से कभी काम नहीं बनता। करनी करो। अगर उस उपदेश में ग़र्क होने का यत्न न करोगे कामयाबी नहीं हो सकती। बल्कि जीव विश्वास–हीन हो जाता है। खाली धर्म के नाम लेवा बन जाओगे जिसका कुछ लाभ नहीं। अज्ञानता ही दुःख का कारण है। आत्म–बोध से ही परम पद प्राप्त होता है और शांति व शीतलता आती है और सब टेकों को छोड़कर केवल एक प्रभु को कर्ता–हर्ता जानकर अंतरमुख होने में ही एकाग्रता है और असली ठंडक है।"

रात को सत्संग हुआ। प्रेमी नन्द लाल जी ने 'समता विज्ञान योग' से दोहे पढ़े जो इस तरह शुरू होते थे।

मारग प्रेम अत कठिन है, जीवित तजें शरीर।
निस दिन भाव प्रेम में, रंचक पायें न पीड़।।

श्री महाराज जी अपनी आनन्दित अवस्था में लीन हो गए। जब वाणी ख़त्म हुई तो आपने आंखें खोल कर जो अमृत वर्षा फरमाई उसका सार निम्नलिखित है:–

सत् उपदेश–अमृत

जगत की प्रकाशक शक्ति ज़र्रे–जर्रे में प्रकाश कर रही है। अपने शरीर को ही लो, विचार करके देखो किस तरह ज्ञान इन्द्रियां और कर्म इन्द्रियां काम कर रही हैं? प्राण, अपान को कौन चला रहा है? शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध विषयों को कौन ग्रहण करता है? शरीर के अंदर किस तरह खून, पीप, रज, वीर्य, पेशाब, पसीना, कफ़ वग़ैरा बन बिगड़ रहे हैं। हवा, पानी, रोशनी, सर्दी, गर्मी, बादल, बर्फ़ सबको कैसा रंग, रूप, रस बग़ैरा मिला हुआ है। सारे संसार का चक्कर आदिकाल से स्वत: चलता हुआ कैसे चला आ रहा है? जीवन शक्ति निकल जाने पर शरीर की क्या हालत होती है? इसके बग़ैर यह गलने–सड़ने लग जाता है, विचार करें। इस डेढ़ दो मन के मिट्टी के ढेर को दूसरे लफ़्ज़ों में इस नाशवान को कौन उठाए हुए है? जब गहरी ग़ौर से विचार करोगे तो पता लगेगा कि इस दृश्यमान संसार को सरजीवित करने वाली शक्ति सम–भाव से हर वस्तु के अंदर संचार कर रही है। इसकी खोज ऋषि, मुनियों, संतजनों ने की। वह निकम्मे नहीं थे। सबसे महाकारज आत्म–अनुभवता ही है। उन्होंने ऐसा जान कर कठिन जप–तप करके पहले खुद अमृत पान किया और फिर उस निराकार, अविनाशी, सर्वव्यापक शक्ति की महिमा ग्रन्थों द्वारा प्रगट की। असल वस्तु को खुद प्राप्त किया। माखन को संतों ने खुद ग्रहण किया और छाछ जगत में वरताई। उनके अमृत वचनों को पढ़कर जुगा–जुग तक जीव राहे–रास्त पर आने का यत्न करते रहते हैं। यह बड़ा गम्भीर विषय है। जीवन में ही शरीर मद से निकलने के लिए मिट्टी में मिलना है। इस पांच तत्त्व के ढांचे में अश्चर्ज जोत प्रकाशवान है। मगर कोई विरला ही इसे अनुभव करता है। कोटां में कोई एक राम भक्त इसे पाता है। शरीर के आराम भी बने रहें, हर तरह के लवाज़मात भी सेवन करते रहें, कोई सुख दुनियावी छूटे भी नहीं और सत् शब्द की भी प्राप्ति हो जावे, यह कैसे हो सकता है? यह ऐसा सस्ता सौदा नहीं है जैसा कि आम लोग समझ रहे हैं। सत्युग में बड़ी मेहनत, मुशक्कत करके उस परम तत्त्व को जाना जाता था। आज भी उनकी तरह ही बड़ी मेहनत करनी पड़ेगी। कोई माई का लाल ही मान, मद, रिश्ते–नाते के चक्कर से निकल कर निष्काम सेवा, सत् सिमरण द्वारा उस परम तत्त्व को अनुभव कर सकता है। सब साक–सम्बन्ध के मोह को मन से त्याग करके दु:ख और सुख को ईश्वर आज्ञा में अर्पण करके सत्–साधन में लग जाना होगा, तब उस मंज़िल को हासिल किया जा सकेगा। ईश्वर सत् बुद्धि प्रदान करें।"

इसके बाद आरती व समता मंगल उच्चारण किए गए। प्रसाद बांटा गया और सत्संग समाप्त हुआ। समाप्ति पर सत्पुरुष ने पूछा:– "कोई विचार हो तो करो।"

इस पर प्रेमी मुंशी राम ने अर्ज़ की:– महाराज जी! अभ्यास के बारे में कोई ख़ास हिदायत फरमावें।

श्री महाराज ने फरमाया:– "प्रेमी जी! समझा तो सब कुछ रखा है और क्या पूछते हो? अभ्यास करते चलो। ज्यों-ज्यों प्राण, पवन सूक्ष्म होती जावेगी, जब प्राण की बाहरी गति काफ़ी कम हो जावेगी तब बुद्धि या सुरति पाताल में शब्द अनुभव करेगी।"

"शब्द की टंकोर रग-रग में हो रही है। इसे सुरति ही अनुभव कर सकती है। बड़ी रग सुखमन नाड़ी है। स्वांस उसको जब खोलगा तब अभ्यास दुरुस्त होगा। ज्यों-ज्यों सुरति शब्द को अनुभव करेगी, सरूर और खुमारी महसूस होगी।"

"सब कुछ तसव्वर में ही है। सिर्फ़ मन को नाम में दृढ़ करना है। जब सिमरण करो सुरति को पाताल में स्थिर करो। कर्तापन से निश्चय शक्ति यानि बुद्धि प्रगट हो रही है। फुरने या मनन करने का नाम मन है। मूल द्वार यानि नाभि में जब सुरति एकाग्र होगी, वासना का नाश होगा। प्रेमी जी, वासना के विकार को दूर करना है। इसके लिए ही यह साधन है। बग़ैर साधन के सुख नहीं हो सकता। साधन से सब रोग नाश होते हैं, आधि, व्याधि, उपाधि रोग दूर होते हैं।"

रात को बारिश हुई। आप रात के दो बजे बाहर तशरीफ़ ले गए। जब सुबह वापिस आए तो देखा कि पांव से खून निकल रहा था। जोंक खून चूस कर उतर गई थी। मिट्टी लगा दी गई, खून बंद हो गया। प्रेमी नंद लाल जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! बेअदबी माफ़ हो, दास की बिनती यह है कि आजकल मौसम बरसात की वज़ह से जोंकें वग़ैरा आम हो रही हैं। रास्ता भी घास वग़ैरा की वज़ह से ख़राब हो रहा है। बारिश, आंधी वग़ैरा भी चलते रहते हैं। आप रात को इधर ही ठहरे रहा करें। यह जगह भी एकांत है और यहाँ ही ठहरने में क्या हर्ज़ है?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी, तुम्हारा कहना ठीक है। यह जगह भी एकान्त है। फ़कीरों का यह बाहर जाने का प्रोग्राम किस लिए है? यह इसलिए है कि तुम प्रेमियों को शिक्षा मिले। कुछ इससे सीखो, सबक लो। जब तुम भी इस तरह का प्रोग्राम बनाओगे तब ही इस निन्द्रा से छुट्टी पाकर एकान्त में समय दे सकोगे। इनके वास्ते हर जगह ठीक है, हर समय ठीक है। अगर यह थोड़ा सा भी आलस करेंगे तुम ज़्यादा करोगे। ख़्याल करोगे, महाराज जी बाहर नहीं जाते थे, अपने रहने वाले जगह ही बैठे रहते थे। ऐसा विचार करके खुद चित्त को ढाँढ़स दे लिया करोगे। तुमको चेतावनी देने के लिए ऐसा कड़ा प्रोग्राम बना रखा है। गद्दियों पर बैठकर या चारपाइयों पर ही घरों में ऐसे साधन नहीं हो सकता। बाहर खुली हवा होती है। वहाँ बैठने से आलस निंद्रा से निज़ात मिलती है। घरेलू आराम, आलस देने वाले होते हैं। ऋषि, मुनि, जंगलों, गुफ़ाओं, कन्द्राओं में ही ज़्यादा रहना पसन्द करते थे। जिन्होंने संसारियों में विचरना होता है वह किसी प्रोग्राम को बना कर चलते हैं। इनका स्वभाव रात को बाहर जाने का आज से नहीं है। यह तो सात वर्ष की उम्र से ऐसा शुरू कर दिया था। पहले-पहल ज़रा पौ फूटने से पहले जब माता जी जागती थीं, और काफ़ी

रात होती थी वे झाड़ू लगाना शुरू करतीं, यह आहिस्ता से बाहर निकल जाते। जब अच्छी तरह सूरज निकल आता तब डेरे पर लौटते। यह भी रज़ाइयों में बैठकर तप करते तो तुम प्रेमियों पर इनके जीवन से क्या असर पड़ेगा? इन्होंने बेशक सफ़र तय कर लिया है, मगर जिस तरह का प्रोग्राम शुरू हुआ है वैसा ही आख़िर तक चलेगा। चाहे आंधी हो या बारिश, सख़्त सर्दी हो या सख़्त गर्मी, जब–तक इस खलड़े में शक्ति है इसे ढील नहीं दी जावेगी। किसी समय शरीर में नर्मी–गर्मी के कारण प्रोग्राम में फ़र्क नहीं आने दिया। अलबत्ता रावलपिंडी में कश्मीर चंद के घर जाकर बहुत ज़्यादा तकलीफ़ हो गई, तब शरीर ने बाहर जाने से आरी कर दिया था, तब कहीं नहीं गए।"

बातें हो रही थीं। मसूरी से ज्ञान सिंह नौकर के हाथ सामान आटा दालें वग़ैरा कश्मीर चंद ने भेज दिया और कहा कि वहां जाकर दे आओ। ज्ञान सिंह सामान रखकर प्रणाम करके श्री महाराज जी के पास बैठ गया। आपने फरमायाः– "पहले इसे चाय वग़ैरा पिलाओ।" जब चाय वग़ैरा पीकर प्रेमी सेवा में हाज़िर हुए तो आपने भक्त बनारसी दास से पूछाः– "कश्मीर चंद के आदमी ने क्या लाकर रखा है?" भक्त जी ने अर्ज़ कीः– वह आगरे की तरफ जा रहे हैं, जो सामान बचा है उन्होंने इधर भेज दिया है।

श्री महाराज जी ने फरमायाः– "क्या तुमने सब सामान रख लिया है?" भक्त जी खामोश हो गए। इस पर आपने फरमायाः– "प्रेमी! यह ठाकुर द्वारा नहीं है। जिस तरह किसी ने कुछ रवाना किया रख लिया। बेशक वह श्रद्धावान प्रेमी है और विचार भी अच्छे हैं, और कह दिया होगा कि जाओ जाकर लंगर में दे आओ, मगर यह तरीका ठीक नहीं है। ख़ुद सामान लेकर उठवाकर लाते और आकर इधर से पूछते और बतलाते कि इस तरह यह सामान बच गया है, कृपा करके लंगर में खर्च करने की इजाज़त देवें, तब ठीक होता। यह दान सेवा न हराम की, न हलाल की। तुमने इस लंगर को क्या समझ रखा है? इस तरह से लाई हुई चीज़ों को कभी लंगर में दाख़िल मत करो। इस समय, श्रद्धा, अश्रद्धा देखनी पड़ती है। हर समय एक जैसा पवित्र चित्त नहीं होता, लापरवाही से और ऐसी–वैसी भावना से भेजा हुआ अन्न लाभकारी नहीं हो सकता, उलटा बुद्धियों को मलीन करता है। तुमको भी खुली छुट्टी नहीं होनी चाहिए, बग़ैर इजाज़त ले आया लेकर रख लिया। यह ख़ास ख़्याल रखो। अब तो जैसा हो गया रख लो, आइंदा इन्हें समझा देना कि सेवा करनी हो, खुद आकर करें। तुम्हारी वज़ह से यह सामान आया है। अब तो रख लिया है, आइंदा के वास्ते ख़्याल रखो।"

प्रेमी नन्द लाल जी व मुंशी राम जी ने जाने की आज्ञा ली हुई थी। जब लंगर सेवन कर चुके और श्री महाराज जी की सेवा में हाज़िर हुए तो आपने उनको जाने की आज्ञा दी और फरमायाः– प्रेमियों! जाओ देर न हो जाए। प्रेमी रवाना हुए, भक्त जी उन्हें छोड़ने गए।

76. भक्त बनारसी दास को शिक्षा

"प्रेमी, होना न होना प्रभु आज्ञा में विचार करते हुए विचरो। नित सर्व आत्म-भाव का निश्चय रखो। अपनी तरफ़ से जिस कद्र संगत सेवा बन सके, करो। यत्न करके अन्तर्मुख होकर अपने आप में रमण करो ताकि न किसी से हर्ष रहे न शोक। संसार में जितने भी संबंध हैं, सबसे एक तरफ हो जाओ। यह रहते हैं या नहीं रहते, इसकी चिंता मत करो। सांसारिक वस्तुओं, रिश्तेदारों सम्बन्धियों वग़ैरा से अति लगाव मत रखो, इससे मोह रूपी रोग बढ़ता है। अगर हर किसी से स्नेह बढ़ाते जाओगे तो आख़िर दु:ख-सुख प्राप्त होगा ही। संसार और संसारियों से किनाराकश होकर उदासीन हो जाओ। शुभ-भावना बनाओ। प्रभु प्रेम पैदा करो और सबसे आरज़ सम्बन्ध रखो, न किसी से राग बनाओ न द्वेष। सदा द्वंद्व-भाव से रहित होने का यत्न करो। ऐसा करना ही परम श्रेष्ठता है। जब-तक स्नेह रूपी बंधन में बंधे रहोगे तब-तक ज्ञान-विज्ञान की तह तक नहीं पहुंच सकोगे। जब इन फ़कीरों के वचनों पर अमल करोगे तब ही आनन्द मिलेगा। अभी तुम्हारी बुद्धि में यह विचार न बैठ सकेंगे, समय खुद सबक देगा। ऐसा विचार करो कि यह सब सम्बन्ध शरीर की कायमी तक ही हैं और सबने छूटना है। अंतरविखे परम शीतलता निर्विकार और निर्लेप अवस्था को दृढ़ करो। यह ही उपदेश गुरु-पीरों का है। तुम्हें इस वास्ते समझाया जाता है कि तुम्हारा इनसे नज़दीकी सम्बन्ध हो गया है। प्रेमी, इस माटी के पिंजरे में सरजनहार को पहचानो। प्रभु की माया अश्चर्ज है, इस करके जीव मौज़ूद शक्ति को ना-मौज़ूद समझ रहा है।"

'ज्ञान अंजन गुरु दिया, अज्ञान अंधेर विनाश'।

"गुरु मंत्र को दिल की तख़्ती पर कुंदा करो। तब राख से सोना हो जाओगे। ईश्वर सुमति देवें।" इतनी देर में राय साहेब ने चरणों में हाज़िर होकर प्रणाम किया। उनके सामने भक्त जी से पूछा:- "क्यों प्रेमी! कोई बात दिल में बैठी है या नहीं?"

फिर राय साहेब ने अर्ज़ की:- महाराज जी! माया का बंधन बड़ा अश्चर्ज है। इस नामुराद से किस तरह निकला जा सकता है?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "माया का असली रूप कनक और कामनी है। जब-तक इन दोनों से सही मायनों में चित्त उपराम नहीं होता तब-तक जिज्ञासु सत्मार्ग में दृढ़ नहीं हो सकता। दुनिया के सब साज़ व सामान इसी मोहिनी माया से सम्बन्ध रखते हैं। जब-तक इनसे लगाव कम न होगा, वैराग्य न होगा, जब-तक वैराग्य न होगा तब-तक अनुराग या असली प्रेम न होगा। यह अवस्था सिमरण, अभ्यास से प्राप्त हो सकती है। जब-तक यह मन नाम रूप की तरफ़ लगा रहेगा तब-तक यह प्रीतम के निकट नहीं जा सकता। दो तरह के विकार चित्त के अंदर हैं चंचलता और मलीनता। जब-तक यह मौजूद हैं, अभ्यास में दृढ़ता नहीं आ सकती। बारम्बार इस मन की त्रुटियों पर ध्यान देना चाहिए। जब ग़लती को अच्छी तरह समझोगे तब किसी समय अपने आप पर फ़तह पा लोगे। दवा और परहेज़ दोनों लाज़मी हैं।

प्रश्न– दीवान साहेब ने फिर पूछाः– "महाराज जी! यह धोती–नेती वग़ैरा इनके मुतालिक कृपा करके बतला देवें कि इनकी तरफ़ ध्यान देना चाहिए या नहीं?

उत्तर– श्री महाराज जी ने फरमायाः– "यह छः प्रकार के हठ योग के साधन हैं, जो उनके करने वालों ने बयान किए हुए हैं, धोती, नेती, बस्ती, कुंजु कर्म, न्योली कर्म और त्राटक कर्म। इनके द्वारा शरीर शुद्धि और बुद्धि की पवित्रता मानते हैं। इनको करके शारीरिक रोगों से ख़ुलासी पाने और बुद्धि को निर्मल करने की कोशिश की जाती है। नेती कर्म के लिए सूत की डोरी बनाकर उस पर मोम लगाते हैं। सुबह सवेरे उठकर, हाजित से फ़ारिग होने के बाद, नासिका द्वारा अंदर बाहर चलाते हैं। दोनों नथनों से बारी–बारी मथानी मथने की तरह चलाते हैं। गला, आंख, नाक साफ़ करते हैं। धोती कर्म के लिए सोलह हाथ लंबी बारीक मलमल की पट्टी चार उंगल चौड़ी लेकर उसे जल में भिगोकर निचोड़ लेते हैं, फिर उसे आहिस्ता–आहिस्ता निगल जाते हैं, फिर बाहर निकालते हैं, जिससे पित्त–कफ़ का ठीक होना मानते हैं। हठ योगी इन साधनों में लगे रहते हैं। बस्ती कर्म के लिए गुदा द्वारा जल को ऊपर चढ़ाते हैं। पेट को पानी से भरकर फिर बैठकर बाहर निकालते हैं। इन क्रियाओं को किसी अच्छे माहिर यानि इन कर्मों के करने वालों के पास रह कर करे तब भी पार नहीं हो सकता। कुंजु कर्म भी खूब पानी पी लिया और फिर निकाल दिया। न्योली कर्म में पदम आसन लगाकर दोनों हथेलियों को जमीन पर टिकाकर वज़न बराबर करके पेट को दायें–बायें चलाते हैं। इससे पेट के रोगों से ख़ुलासी मानते हैं। रोगों को दूर करते–करते और रोगों को ख़रीद लेते हैं। आख़िर में त्राटक कर्म थोड़ा साधन में मदद देता है। नज़र को किसी चीज़ पर या नुक्ते पर टिकाये रखते हैं। इसी तरह दृष्टि को स्थिर करने का यत्न किया जाता है। उलटी आंख करके भी दृष्टि को स्थिर करने का यत्न करते हैं। मगर प्रेमी जी, आज–तक इन क्रियाओं द्वारा पूर्ण सिद्धि किसी ने हासिल नहीं की। यह सब कर्म शारीरिक शुद्धि वग़ैरा के ज़रूर हैं। मन, पवन की साधना से ही मच्छन्द्र, गोरख ने सिद्ध गति पाई। आख़िरकार वहां आकर ही सिद्धता मिलती है। यानि सतगुरुओं का ज्ञान तो आदिकाल से अन्तर्मुख होने का पवन योग ही चला आया है। और कई तरह की मुद्राएँ भी योगियों ने बयान की हैं जिनके द्वारा मन को स्थिर किया जाता है।"

प्रश्न – प्रेमी रल्ला राम जी ने अर्ज़ कीः– "महाराज जी! थोड़ी रोशनी मुद्राओं पर भी डालिए?"

उत्तर – "प्रेमी जी, यह जितने भी साधन बताए हैं इनमें से शायद ही कोई तुम से बन सके। पहली मुद्रा खेचरी, फिर भोचरी, चाचरी, अगोचरी, उनमनी और शनमुखी हैं। आजकल प्रधान शनमुखी मुद्रा बतलाई जा रही है। आंख, कान, नाक उंगलियों से दबाकर अंतरविखे हो रही आवाज़ को सुनकर और आंख दबाने से जो रोशनियां पैदा होती हैं उनको जोत मानकर हज़ारों जीवों को भ्रम में डाला जा रहा है। न नाद का पता है न ज्योति का। इन मुद्राओं को एकांत जंगल में जाकर वर्षों तक साधना करने पर भी ठौर–ठिकाने का पता नहीं लगता।"

प्रश्न – फिर दिवान जी ने पूछाः– "महाराज जी! महाबन्ध, मूल बंध वग़ैरा कैसे साधन हैं?

उत्तर – श्री महाराज जी ने फ़रमायाः– "आज ही सारे योग का पता करना चाहते हो। यह चार, पांच तरह के बन्ध नाथों ने और कई गुरु लोगों ने बयान किए हैं। उन्होंने ही प्राण–अपान को कई साधनों के ज़रिए साधने की कोशिश की है। यह चार तरह के बंध हैः महाबंध, मूलबंध, जालन्धर बंध, उड्यान बंध। मूल द्वार को एड़ी से बंद करके प्राण वायु को हृदय में स्थिर करके बार–बार रोकना। लेकिन बिना गुरु के इन साधनों के करने वाले रोगों को खरीद लेते हैं। यह ख़ास हिदायत गुरुओं ने दे रखी है। करने वालों ने ही यह सब साधन बयान कर रखे हैं। मुद्रा और बंध इकट्ठे किए जाते हैं। पवन स्थिति से ध्यान कंठ, हृदय, त्रिकुटी वग़ैरा में किए जाते हैं। साथ–साथ रेचक और पूरक भी होता रहे। मानसिक और शारीरिक रोग नष्ट होते हैं। कहते हैं इनको करने वाले की आयु दीर्घ हो जाती है। दूसरी अपान वायु को वश करने के वास्ते मूल बंध का आसरा लिया जाता है। अपान वायु का गुदा में वास होता है। बायीं एड़ी से गुदा को दबाया और वायु को ऊपर की ओर खींचा। अगर एड़ी से न काम चले तो कपड़े की गेंद बनाकर मूल बंध पूरा किया जाता है। इस तरह प्राण–अपान सहज में मिल जाता है। इस साधन से बूढ़े भी जवान हो जाते हैं। इस साधन से जठराग्नि तेज़ हो जाती है। जो खाओ सब हज़म। ऐसा साधन बहुत साधु करते हैं। लेकिन बग़ैर अच्छे गुरु के इन साधनों में कदम न रखें। तीसरा जालंधर बन्ध कंठ में वायु को रोकना। हृदय में प्राण को स्थिर करना। इर्द–उर्ध में पवन से विचर कर उदर के दरम्यान चलाते हैं, फिर ब्रह्मरन्ध्र में पहुंचाते हैं। इस तरह की साधना भी योगी को आनन्दित करती है, पर ज़्यादा इन बंधों द्वारा अजर–अमर होने की आशा बनी रहती है। उड्यान और शनमुखी मुद्रा मिली–जुली हैं। जीभा को उलट कर तालू के साथ लगा कर साथ ही कान, आंख और नाक सबके सब बंद कर देते हैं। बज्र किवाड़ लगाकर सातों द्वारों को बंद करके प्राण–अपान को साधा जाता है। प्राण–अपान को किसी हालत में त्यागा नहीं गया है। सच्चे सत्गुरु कबीर, नानक, दादू, चरणदास, बुद्ध आदि ने सहज योग, राज योग को ही प्रधान माना है। जिसे गृहस्थ में रहते हुए भी त्याग रूप में किया जा सकता है। इसके द्वारा कोई व्याधि नहीं उपजती। प्रभु परायण रहकर जिस कद्र इस सत्–युक्ति में समय दिया जावे उतनी ही कल्याण है। सब साधन वग़ैरा बग़ैर सत्गुरु की कृपा के नही बन सकते। इस वास्ते तुम्हारी तसल्ली तो सहज में हो गई थी। पहाड़ों, जंगलों में खोज गुरु की नहीं करनी पड़ी। भाग्य से गुरमुखों को गुरु मिल जाते हैं, मगर प्रेमी जी, बग़ैर साधना के सिद्धता नहीं मिल सकती।"

भक्त बनारसी दास ने श्री महाराज जी से दूसरी सुबह मसूरी जाकर अपने बहन–बहनोई से मिलने और वहां खाना–खाने की इजाज़त मांगी, क्योंकि उन्होंने आगरा चले जाना था।

श्री महाराज जी ने फरमायाः– "जहां–जहां जीव का मोह बना होता है अवश्य वह वहां जाता है। चार रोज़ हुए मिल गए थे, अब और क्या मिलाप होगा? जैसी तेरी मर्ज़ी है कर, मगर दो

बातें याद रखना, एक यह तेरा मालिक अन्तर्यामी है और दूसरे यह कि जो कुछ तू करता है वह उसे हर घड़ी, हर लम्हे देख रहा है। इधर से जो कहा जाता है उस पर गहरा विचार किया कर। यह रमज़ (गुप्त भेद) की बातें हैं।"

इसके बाद श्री महाराज जी ने दीवान साहेब से फरमाया:– "प्रेमी! अब चलने का प्रोग्राम निश्चित करके जाओ। यहां से 18 सितम्बर को चलने का विचार है। आगे तुम अपना सोच लो, देहरादून जाकर आने का यत्न न करना। उसी जैनी के बाग़ में पाँच बजे तक इंतज़ार करना।"

उसके बाद राय साहेब ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! आपने एक दफ़ा इस सिद्ध खड्ड में आश्रम बनाने के वास्ते विचार फरमाया था। कृपा करके सेवा की आज्ञा देवें।"

इस पर श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! इस जगह रहकर खून जोकों के वास्ते कहां से लावें। आश्रम बनाने को तो बन जाते हैं। आगे रखवाली, सेवा करनी बहुत मुश्किल हो जावेगी। छोड़ो इन विचारों को। जाओ आराम करो। जब जगह बोलेगी अपने आप कोई साधन बनने का हो जावेगा।"

श्री रल्ला राम जी ने अर्ज़ की:– "जिस समय आप फरमायें तब ही सेवक जायेगा।" श्री महाराज जी ने फरमाया:– "कल बनारसी ऊपर जा रहा है, परसों आप चले जावें।"

भक्त जी दूसरे दिन ऊपर मसूरी गए और शाम को देर से वापिस आए। श्री महाराज जी ने फरमाया:– "आने की क्या ज़रूरत थी? उनके साथ ही आगरा चले जाते। 'मूर्ख सेती दोस्ती, कभी न आवे रास'। 'अंधी मां मसीती' वाला हिसाब बना हुआ है। क्या उन्होंने तुझे बांध लिया था? इन फ़कीरों ने रिश्तेदारों से मिलने की इजाज़त पता नहीं क्यों दे रखी है? फ़कीरी में तो सम्बन्धियों से कोसों दूर रहना चाहिए। कई दफ़ा आगे भी समझाया है, जब–तक ऐसे चक्कर में मुस्तग़र्क रहोगे तब–तक पूरे तौर पर आज्ञा मानने में कमज़ोर रहोगे। रिश्तेदारों से मेल–जोल बंधन–दर–बंधन में डालने वाले होते हैं। सब जीया–जन्त मोह के गड्ढे में जन्म–जन्मांतर से पड़े हुए हैं। इस फ़ाही (फंदा) से तो निकलना है। क्या इनके भाई–बहनें संबंधी नहीं? कितना कुछ उनके नज़दीक जाने की कोशिश करते हैं?"

इस दौरान एक पत्र जो बाबू अमोलक राम जी को लिखा गया उसका ख़ास भाग यहां दर्ज किया जा रहा है।

77. आश्रम के मुतालिक एहतयात और अखंड पाठ की बंदिश

अज़ मसूरी 4 अगस्त, 1951 श्री महाराज जी फरमाते हैं कि ज़मीन का फैसला होने के बग़ैर और आश्रम का पूरा–पूरा हिफ़ाज़ती इंतज़ाम करके ही एक दो दिन के वास्ते दिल्ली जा सकते हैं।

किसी प्रेमी को आश्रम की देखभाल के वास्ते मुकर्रर कर देना होगा। हिफ़ाज़ती इंतज़ाम के बग़ैर आश्रम को छोड़ना योग्य नहीं है। इधर से हिफ़ाज़ती मामले के मुतालिक कुछ नहीं लिख सकते हैं। जैसा मुनासिब समझें करें।

नोट:- श्री मान भाई जी ने ग्रन्थ का अखंड पाठ रखना जो तजवीज़ किया था श्री महाराज जी की आज्ञा से बंद कर दिया गया है। आगे कोई भाई ग्रन्थ लेने के वास्ते आवे तो आपने ग्रन्थ नहीं देना।

आज भक्त बनारसी दास ने साग की भाजी बनाई थी और अगर ऐसी भाजी तैयार करता तो श्री महाराज जी को भेंट भी किया करता। सत्पुरुष थोड़ी सी भाजी ग्रहण कर लिया करते थे। आज भी भक्त जी भाजी लेकर चरणों में हाज़िर हुए और दाईं तरफ खड़े-खड़े ही कटोरी आगे करके लेने की अर्ज़ की। झट ही श्री महाराज जी ने फरमाया:- "मूर्ख, किसी के आगे चीज़ भेंट करने का तरीका भी नहीं आता। यह तेरे क्या लगते हैं? कुछ अक्ल सीखो। यह तेरा तरीका बताता है कि तेरे अंदर गुरु के प्रति कोई इज़्ज़त नहीं, न ही विश्वास है। यह राह-गुज़रू तो नहीं बैठे हुए। तेरा हर कदम यह देखते रहते हैं।"

भक्त जी ने अपनी ग़लती को महसूस किया और चरणों में बैठकर सामने आकर साग रखा। मगर श्री महाराज जी ने सेवन नहीं किया और फरमाया:- "गुरमुख के लक्षण पहले पढ़ो ताकि पता लगे कि कैसे फ़कीरों के पास आना चाहिए? तुम अभी बच्चे नहीं हो जो रोज़ाना समझाया जावे। गुरमुखता के बिना तीर्थ, व्रत, जप, तप सब निष्फल जानो। अब फिर गुरमुख के लक्षण सुन लो।"

"गुरु के आगे शिष्य को कभी झूठ नहीं बोलना चाहिए। अपने अंदर जो भी कमी-बेशी हो या कोई भी त्रुटि हो, खोलकर रख देनी चाहिए। भूलकर भी गुरु के शरीर के साथ पांव न लगावे। सच्चे प्रेम और विश्वास से गुरु चरणों में हाज़िर होने वाला ही सच्चा जिज्ञासु है। हर समय आज्ञाकारी भावना रखो। गुरु के नाम को उच्चारण करने वाले को भी प्रणाम करो। गुरु स्वरूप को बारम्बार नमस्कार करो। जितने भी गुरु की आज्ञा या गुरु के वचनों पर मर मिटने वाले शिष्य हैं सबके साथ हित रखो। इन पर अमल करने से खुद अपने अंदर प्रसन्नता पाओगे। गुरु के देश का भी अगर कोई सज्जन मिल जावे उसकी भी बल-बल जाने की कोशिश करो। वाणी बड़ी नम्रता से बोलो। मन-तन से जो सेवा बन सके करके अपने को कृतार्थ करो। जब गुरु के पास जाओ, हाथ जोड़कर दंडवत करो और हाथ जोड़कर खड़े रहो। जब गुरु आज्ञा देवें तब बैठो या जैसी आज्ञा देवें वैसा करो। दर्शन करके अपने आपको गुरु पर न्योछावर करो। गुरु के मुख से जो वचन निकलें उनको अपने हृदय में जगह दो और अपने अवगुणों को दूर करो। ऐसे गुरमुख ही जिज्ञासु-पद के हकदार होते हैं। किसी के सामने गुरु या साधु की कभी निंदा न करो। गुरु और साधु की स्तुति करने

वाला ही प्रभु की महिमा गायन करने वाला है। भगवान के भक्तों की निन्दा करने वाला ही ईश्वर की निंदा करता है। यही भटकना है। प्रेमी, तुमसे ग़लती हो भी जाती है तब भी तुमको इधर से ज्ञान विचार ही मिलेंगे। गुरु हर घड़ी शिष्यों का भला चाहने वाला होता है। शिष्य के अपने कर्तव्य हैं। शिष्य को गुरु के हृदय की बात समझ लेनी चाहिए। उन्हें बताने की ज़रूरत ही न पड़े।" फिर प्रेम से कबीर साहेब के दोहे उच्चारण करने शुरू कर दिये।

सेवक सेवा में रहे, सेवक कहिए सोये।
कहें कबीर सेवा बिना, सेवक कभी न होये।।
सेवक सेवा में रहे, अंत कोऊ मत जाये।
दुःख सुख सर अपने सहे, कहें कबीर समझाये।।
सेवक स्वामी एक मत, जो मत में मत मिल जाए।
चतुराई से रीझे नहीं, रीझे मन के भाए।।
सत्गुरु शब्द उल्लंघन कर, जो सेवक कहीं जाए।
जहां जाए तहां काल है, कहें कबीर समझाए।।
शिष तो ऐसा चाहिए, जो गुरु को सिर दे।
गुरु तो ऐसा चाहिए, जो शिष का कछु न ले।।
कबीर गुरु तो सबको चाहें, गुरु को चाहे न कोए।
जब लग आस शरीर की, तब लग दरस न होए।।
गुरु समरथ सिर पर खड़े, क्या कमी तोए दास।
रिद्ध सिद्ध सेवा करें, मुक्ति न छोड़े पास।।

"प्रेमी बनारसी, यह तुम शिष्यों से प्रेम करते हैं, तुम इनसे प्रेम नहीं करते। इनको गुरु–शिष्य दोनों की सार का पता है। सर्वस्व त्याग कर गुरु की सेवा बन सकती है। मनुष्य कहलाने का हकदार भी वही है तो तन, मन, धन गुरु–परायण कर देता है। बारहों मास भक्ति भाव एक जैसा बना रहे। ऊपर नीचे चित्त को कभी न करे। भक्ति रूपी बीज नष्ट होने वाला नहीं है। सोना कीचड़ में गिर जाए तो उसका मोल कम नहीं होता। पेट तो पशु भी भर लेते हैं। गुरु–भक्ति, ईश्वर–भक्ति से भी कठिन है। तुम्हारे स्वभाव को देखकर इधर से कभी कुछ नहीं कहा जाता। किसी वैरागी गुरु के पास रहना पड़ जाए तब तुम्हें पता लगे। इन्होंने तुमको न तो किसी भेष में डाला है और न किसी नियम में बांधा है, फिर भी साधारण तरीके से तुम नहीं विचर सकते।"

भक्त जी ने अर्ज की:– "महाराज जी! वाकई हमको गुरु का लेश–मात्र भी पता नहीं। अहमदाबाद की तरफ़ देखा था किस तरह शिष्य गुरु का मान–अदब करते हैं। किस कद्र भय मानते हुए प्रेम भाव में दृढ़ हैं। हम प्रेमियों में रंचक भर भी वैसे तौर–तरीके नहीं हैं।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "यह भी बहुत ढोंग नहीं चाहते। अंतर–बाहर से एक जैसे रहो। असली नाता गुरु से रखो। जगत से जिस कद्र लगाव कम कर सको, करो। मन को गुरु शब्द में लगाए रखो। चित्त एक है, चाहे गुरु भक्ति में लगाओ, चाहे विषय कमाओ। एक समय में एक ही काम हो सकता है। भक्ति बीज बोओगे, यह ज़रूर उगेगा और फल देगा। संसार में बारिश न हो बीज नहीं उगता। यह ऐसा बीज है जिसे श्रद्धा–विश्वास रूपी जल द्वारा फल लगता है। भक्ति भेष बनाना नहीं सिखाती। भेष बनाकर भक्ति स्वरूप दिखाने वाला पाखंडी है। भेष बनाना आसान है। भक्ति कठिन है। आम लोग भेष ले लेने में सिद्धि समझते हैं। गुरु अंजान नहीं, जब मौका मिले तब शिष्य की अच्छी तरह से सार लेते हैं। शिष्यों के लिए सख़्त हैं और आम के वास्ते प्रेम स्वरूप रहते हैं। तू और किस ईश्वर को देखना चाहता है। पहले गुरु को ईश्वर स्वरूप जानो। उनके जीवन को समझो। आज राम, कृष्ण, कबीर, नानक, बुद्ध जैसे संत हों वे समझा सकते हैं। पूर्ण भाग्य समझो जो नज़दीक तुम्हें जगह दे रखी है। हर वक्त पास रहने वाले की कद्र कम होती है। सच्चे हृदय से प्रेमी बनो।"

प्रेम प्याला सो पीये, सीस दक्षिणा दे।
लोभी सीस न दे सके, नाम प्रेम का ले।।
प्रेम–प्रेम सब कोई कहे, प्रेम न जाने कोए।
आठ पहर भजता रहे, प्रेम कमावे सोए।।
प्रेमी ढूंढत मैं फिरा, प्रेमी मिला न कोए।
प्रेमी को प्रेमी मिले, गुरु भक्ति दृढ़ होए।।

"पल में तोला पल में माशा होने वाला भाव नहीं होना चाहिए। भले ही चाव भक्ति का चित्त में हो, मगर जब–तक घाव नहीं हुआ कुछ नही बना। 'घायल की गत घायल ही जाने'।

जहां प्रेम तहां नियम नहीं, तां न बिध व्यौहार।
प्रेम मगन जब मन भया, तब कौन गिने तिथि वार।।

"लाखों भेष बना लो ये स्वांग छुड़ाने वाले (मुक्ति दिलाने वाले) नहीं। मन को प्रेम के रंग में रंगने की ज़रूरत है, बनावट की नहीं। यह ऐसे वचन कहना नहीं चाहते थे, तुझे खुद हर बात की सूझ होनी चाहिए थी। हर काम सेवक भाव और प्रेम से करो। ऐसा करना चित्त को ऊंचा करना है। लापरवाही तुम्हारा ही नुकसान करेगी। पीछे खड़े होकर कहते हो– ले लो'। ऐसा तरीका दिखाता है चट्टी–पट्टी सेवा कर रहे हो, जिसका नतीजा तुम्हारे वास्ते ख़राब है।"

इसके बाद आपने दो–तीन चम्मच साग के ग्रहण किए, बाकी वापिस कर दिया।

ऐसे वाक्यात देखने व तजुर्बा में आए कि सत्पुरुष ख़ास शिष्यों के हर कदम पर निगाह रखते थे। जब पाकिस्तान बना और तबादला आबादी हुआ, बाबू अमोलक राम को अपने गृह पर जाने की 27 जुलाई, 1947 को श्रीनगर से आज्ञा हुई और वह काला गुजरां पहली अगस्त को पहुंचे। हालात बहुत ख़राब हो गए। छुरे–बाज़ी होने लगी, लूट–मार व कत्ल व ग़ारत होती देखी। उस वक्त फिर सिगरेट पीने की आदत शुरू हो गई। पाकिस्तान से निकलने पर 11 अक्तूबर 1947 को धर्मशाला पहुँचे। ये आदत चल रही थी यद्यपि कम थी। जब पहली दफ़ा सत्पुरुष मसूरी इसी जगह विराजमान थे तो बाबू जी किसी वक्त बाहर जाते हुए इस्तेमाल कर लेते थे। सत्पुरुष ने एक दिन खूब उन्हें झाड़ दी। यह नहीं बताया कि वह उनकी बुरी आदत को दिव्य–दृष्टि से देख रहे थे। सत्पुरुष ने अमृत वाणी में फरमाया हुआ है।

जिसके मन में भय भया, सो ही पावे भाओ।
भाव से भक्ति मिले, दुस्तर जग तर जाओ।।

ऐसा करने का मकसद गुरु भय का पैदा करना था और बाद में भी फिर ऐसे तजुर्बे हुए। फ़रमान अनुसार अगर फ़कीर हज़ारों मील के फ़ासले पर भी हों वह अपने ख़ास शिष्यों पर वहां भी निगाह रखते हैं और देखा गया है कि जब कोई कसूर हुआ पत्रिका द्वारा झाड़ आ जाती थी। उनकी इस कृपा–दृष्टि का नतीजा था कि अंदर से बाबू जी को लान–तान शुरू हो गई और सिगरेट नोशी की बद–आदत, गो खुफ़िया यह विकार किया जाता था, फिर दूर हो गई।

प्रोग्राम रवानगी का बन चुका था। श्री महाराज जी ने भक्त बनारसी दास को आज्ञा दी कि सब प्रेमियों को पत्र द्वारा सूचित कर देवें और सबसे पहले जगाधरी में बाबू अमोलक राम को सूचना देवें और साथ ही सम्मेलन के मुतालिक भी लिख देवें कि यह 19, 20, 21 अक्तूबर 1951 के लिए निश्चित किया गया है।

भक्त जी ने निम्नलिखित पत्रिका बाबू अमोलक राम को लिखी।

सत् आज्ञा श्री सतगुरुदेव श्री महाराज जी सिद्ध खड्ड मसूरी से 18 सितम्बर, 1951 को चलकर देहरादून जावेंगे। 30 सितम्बर तक वहां ठहरा जावेगा, फिर श्री महाराज जी जगाधरी पधारेंगे। इस दफ़ा श्री महाराज जी की कृपा दृष्टि से सालाना सम्मेलन जगाधरी में 19, 20, 21 अक्तूबर, 1951 को निश्चित हो चुका है। सब जगाधरी संगत को मुतलाह कर देवें। जो–जो सामान खुरदनी पिछले साल की तरह लिस्ट देखकर ले रखें। आहिस्ता–आहिस्ता दालें वग़ैरा साफ करवा छोड़ें और जो विचार पूछना हो पत्र द्वारा पूछ सकते हो। श्री महाराज जी की सेहत शारीरिक बहुत ठीक है। फ़िक्र न करें। दास की तरफ़ से सब संगत को ब्रह्म सत्यम् फरमावें। पंडित माया राम जी को भी ब्रह्म सत्यम् कहना।

जब प्रेमी बनवारी लाल को पता लगा तो वह दर्शनों के लिए हाज़िर हुए। सत्पुरुष ने उससे कहा:– प्रेमी कोई विचार करो। प्रेमी बनवारी लाल ने पूछा:–

प्रश्न – "महाराज जी, हमको आहार किस कद्र करना चाहिए। कोई इसके मुतालिक सरल तरीका बतला देवें ताकि अभ्यास में तरक्की हो?"

उत्तर – "प्रेमी, तुम खुद ही आहार–व्यौहार का प्रोग्राम बना सकते हो। जितना कम करना चाहो, कर सकते हो। जितना इसे बढ़ाना चाहो, बढ़ जाएगा। अगर अभ्यास करना है तो सूक्ष्म और युक्ति का आहार–व्यौहार करना पड़ेगा। भोजन उतना करो जिससे भूख की निवृत्ति हो जाए। थोड़ी भूख रखकर खाओ, ऐसा करने से प्राण सही चलते हैं। शारीरिक रोग भी कम होते हैं। प्रारब्ध कर्मों का फल तो भोगना ही पड़ता है। ऐसे कष्ट तो आ ही जाते हैं। बाकी दिन–रात के साथ घड़ी के चार भाग कर लो। सुबह–शाम चार–चार घड़ी या डेढ़ घंटा या दो घंटे का सुबह–शाम का प्रोग्राम बना लो। रात को अगर समय मिले तो आधी रात के बाद समय निकाल लो। गो गृहस्थी से इतना साधन नहीं बन सकता और न ही भूख पर काबू पाया जा सकता है, मगर अभ्यास के लिए यह बहुत ज़रूरी है कि रात को तो बहुत सूक्ष्म और शुद्ध आहार, जो बने ले लिया जावे। फल वग़ैरा आजकल उपलब्ध होने मुश्किल हैं। सादा आहार का मतलब यह है कि सस्ता भी हो और पूर्ति भी हो जाए और इतना हो कि आलस्य और निन्द्रा भी न सतायें और स्वांस भी हल्के चलें। एक वक्त पुख़्ता नियम बनाओ। सुबह का समय सबसे ज़्यादा अच्छा रहता है। घर में या बाहर किसी पत्थर की ओट में जा बैठो और समय अभ्यास में लगा दो, मगर दृढ़ नियम होना चाहिए। पक्का व्रत होना चाहिए। व्रत का मतलब है जो धारणा बनाओ वह टूटने न पावे।"

प्रश्न – फिर श्री महाराज जी से पूछा, "महाराज जी, रेचक, पूरक कुंभक के मुतालिक कहा जाता है, ऐसी पवन यानि स्वांस को कितनी–कितनी देर तक रोकना चाहिए।"

उत्तर – श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! इस झमेले में न पड़ो। जिस तरह सहज में स्वांस आवे–जावे, नाम के साथ जितना समय लगे, वैसे ही ठीक है। अगर ज़ोर देकर स्वांस रोकोगे तो अगले स्वांसों की गति तेज़ हो जावेगी और फिर मन चंचल हो जावेगा। स्वांसों को नाम के साथ जितना आराम से चलने दोगे वह ही ठीक रहेगा। तब ही मन, पवन और नाम एक धारा में चल सकेंगे। सहज योग में ख़ुराक अगर मिकदार की खाओगे तो बहुत बेहतर रहता है। प्राणायाम में ख़ुराक जितनी सूक्ष्म और शुद्ध ग्रहण करोगे और एकांत में रहोगे, उतना ही लाभदायक है। तुमको सौ टंटे और लगे हुए हैं, इस वास्ते ऐसा प्रोग्राम बनाओ जो कि निभ सके। ऐसा न हो 'आगे दौड़ पीछे चौड़'। आहिस्ता–आहिस्ता साधन बढ़ाओ। जब एक वक्त दृढ़ता से साधन करने लग जाओगे, फिर समय भी बढ़ा सकोगे। जितना अभ्यास करोगे उतना ही विश्वास बढ़ेगा, संशय दूर होंगे।"

मसूरी से श्री द्वारका नाथ जी और एक और प्रेमी मनोहर लाल जी चरणों में हाज़िर हुए और प्रणाम करके बैठ गए। श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी, क्यों तकलीफ़ की है? कल तो मिल ही जाना था।" प्रेमी ने प्रार्थना की:– वह कार में बिठाकर आपको देहरादून पहुंचा देगा। और उसे आज्ञा मिल गई थी।

प्रेमी द्वारका नाथ ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! यह हमारी गुस्ताख़ी समझी जानी थी, सेवक हाज़िर नहीं हो सका। बाहर चला गया था। अब सेवा में हाज़िर होकर आज्ञा लेकर चलने में हमारी बेहतरी है। मामूली अफ़सरों के वास्ते चक्कर लगाने पड़ जाते हैं। आप तो हमारे सिर के साहेब हैं। सिर के बल चलकर आयें तो भी थोड़ा है। आपका जो हुक्म हो, फरमावें।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! तुम्हारे प्रेम की वज़ह से समय दिया जा रहा है। मोटरों से फ़कीरों का क्या संबंध?" और फिर पूछा:– "यह साथ आने वाले साहेब कौन हैं?"

प्रेमी द्वारका नाथ जी कहने लगे:– "महाराज जी! ऊपर मसूरी बाज़ार में इनकी जनरल मर्चेंट की दुकान है। यह हमारे भक्त रूप सज्जन हैं।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "सुनाओ प्रेमी! तुमको किस तरह आने का मौका मिल गया है?"

प्रेमी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! भाग्यहीन जीव हैं। पास रहते हुए भी आपके दर्शन नहीं कर पाए। आज खुश किस्मती थी द्वारका नाथ जी साथ ले आए और दर्शन हो गए। अब प्रार्थना है कि ऐसा उपदेश दीजिये जिससे मन ठहर जाए। किसी बात की कमी नहीं, मगर अंदर बेचैनी बनी रहती है। पूजा–पाठ भी करते हैं। कभी–कभी मंदिर भी चले जाते हैं। कोई संत, महात्मा आ गए, गर्मियों में उनके उपदेश सुनने चले जाते हैं, मगर मन पर कोई असर नहीं पड़ता। इसी जगह चरणों में बैठ कर मन शांत हो रहा है। पता नहीं क्या वज़ह है? मुझे तो आपके दर्शन करके अजीब असर हो रहा है। आपके न तो संतों वाले चमकीले वस्त्र हैं और न ....।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी जी! जैसे तुम लोग खाने व पहनने के शौकीन हो वैसे ही तुम्हारे उपदेश देने वाले गुरु–महात्मा भी होंगे। वैसा ही असर तुम्हारे जीवन पर भी पड़ेगा। तुम्हारे अंदर त्याग कैसे आ सकता है? कुछ कविता या संतों की वाणियां सुना देते हैं या कुछ संस्कृत के श्लोक सुना देते हैं, उनमें तुम लोग भूल जाते हो। दरअसल साधु–संतों का आदर्शमयी त्यागी जीवन ही जीवों के चित्त को बदल सकता है। उनके वचन व शिक्षा सिर्फ़ सुन लेने का कोई लाभ नहीं। जिन्होंने अपने आपको उनके वचनों पर न्यौछावर किया और अमली जीवन धारण किया वह ही अपना सुधार कर सके। मगर ऐसे सही संतों का मिलना मुश्किल है जो कि अपनी कल्याण कर चुके हों। अगर भाग्य से मिलाप हो जाए और उनके वचनों पर विश्वास आ जाए, तो उनको धारण करने से ही मन की धारा बदल सकती है और उसकी चंचलता दूर हो सकती है। जब उन जैसा त्यागी जीवन होगा तब ही बुद्धि उपरस होकर आत्म–रस का पान कर सकेगी।

मन के मारे मर गए, बड़े राजा और रंक।
भेद किसे न पाया, बिन भेंटे भगवंत।।
पाइए भेद अगम का, जब मेल भया गुरमंत।
पिछली सकल विसार के, तब पाइये अचिंत।।

जब लग देह की आस है, प्रेम ना पाइये जीत।
मन ममता को त्याग के, पावें जग से जीत॥
सुन्दर काया मन भरमाया, बिसरा जग का सरजनहार॥
'मंगत' इस संसार में जो आया, सो ही भूलनहार॥

"प्रेमी जी, मन की भूल गंवाने के वास्ते बुद्ध जैसे ने राजपाठ छोड़कर जंगल की राह ली। गोपी चंद, भर्तृहरि जैसे राजाओं ने देह का मोह त्याग कर गले मे कफ़नी धारण की ली। उनको क्या किसी बात की कमी थी? हर किस्म के भोग-पदार्थ मौज़ूद थे। मगर मानसिक शांति की ख़ातिर सर्वस्व त्याग कर राख सिर में डाल ली। उन दिनों में नाथ सम्प्रदाय का ज़ोर था। उनके गुरुओं की शरण में जाकर अपने आपको समर्पण कर दिया और पीछे मुड़कर नहीं देखा। जब अंतर रंग लग गया तब जाकर एक-एक दफ़ा महलों में अलख जगाई। प्रेमी, आजकल भक्ति तो पलंगों पर बैठकर करना चाहते हैं। मगर इस तरह उस परम पद को नहीं पाया जा सकता। जिसने मुक्ति निर्वास पद पाया है, उसने मरकर पाया है। आजकल सब यह चाहते हैं, सुख भोग भी न छोड़ें, यानि सुख भोगों को भोगते हुए ही निर्वाण पद मिल जाए। प्रेमी, तुम लोग ज़्यादा त्याग नहीं कर सकते, ज़रा खान-पान, रहन-सहन तो सादा करो। आम कारोबार में मर्यादा धारण करो। व्यौहार की पवित्रता बहुत ज़रूरी है, और शुद्ध कमाई को सेवा में लगाओ। अपने आप मन के अंदर धीरज आना शुरू हो जायेगा। यह थोड़ा सा ईश्वर भक्ति का स्वरूप बतलाया गया है। यह सबक पक्का कर लो, फिर दूसरी पोहड़ी चढ़ना।"

78. देहरादून में अमृत वर्षा

इसके बाद प्रेमी प्रणाम करके वापिस गए। श्री महाराज जी ने उन्हें खुद प्रशाद दिया।

18 सितम्बर, 1951 को एक बजे चलकर कार द्वारा 3:30 बजे दीप चंद के बाग़ में पहुंच गए। श्री महाराज जी के लिए बाग़ में नीचे बरामदे में आसन लगाया गया।

इस जगह देखा गया कि मच्छर बहुत था। श्री महाराज जी अपनी आनन्दित अवस्था में सरशार हो गए और प्रेमी मच्छरों हो हटाने का यत्न करने लगे। लगभग बीस मिनट के बाद आपने, जब प्रेमी रूमाल से मच्छरों को हटा रहे थे, ऐसा करने से मना कर दिया और फरमायाः- "इनको अपना काम करने दो।"

दूसरे दिन सुबह से प्रेमी दर्शनों के लिए आने लगे और सत् विचारों द्वारा लाभ उठाते रहे। शाम को निश्चित वक्त पर सत्संग हुआ। प्रेमी ओम कपूर ने काफ़ी प्रश्न किए।

एक दिन एक प्रेमी ने पूछा, "महाराज जी, भंवर गुफा किसे कहते हैं?"

श्री महाराज जी ने फरमायाः- "प्रेमी! इसके जान लेने से घर-घाट के नहीं रहोगे और फिर

भंवर–गुफा की खोज करने वाले तुम्हारे जैसा रूप नहीं बनाकर रखते हैं। किसी पुट्ठे पासे न चल पड़ना। खाली भंवर–गुफा का नाम ही सुन रखा है या कुछ साधन भी करते हो?

श्री महाराज जी ने फिर फरमाया:– "प्रेमी! पहले लिबास, ख़ुराक और संगत ठीक करो। किसी ऐसे संत की तलाश करो जो इस योग विद्या को अच्छी तरह जानने वाला हो। उसके पास बैठने से तुझे आप ही सूझ आने लगेगी। पढ़कर योग साधन नहीं हो सकता। कहीं अपना स्वास्थ न ख़राब कर लेना। ऐसा न हो शरीर रोगी हो जाए। यह जल्दी का काम नहीं। जैसी शिक्षा लेनी हो वैसा पाठ रोज़ाना पढ़ो, तुम्हारे अंदर तब लग्न पैदा होगी। आहिस्ता–आहिस्ता सब उस सूरत में पता लग जावेगा।

मिट्टी मुसलमान की पेडै पई कुमिआर।
घड़ भांडे इट्टां कीआ, जलदी करे पुकार॥
जल–जल रोवै बुपड़ी, झड़ झड़ पवहि अंगआर।
'नानक' जिन करते कारण कीआ, सो जाणै करतार॥
बिन सतिगुर किनै न पाइआ, सतिगुर विच आप रखिओन।
कर प्रगट आख सुणाइआ!
सतिगुर मिलिओ सदा मुक्त है, जिन विचहूं मोह चुकाइआ।
उत्तम एह बीचार है, जिन सच्चे सिओं चित्त लाइआ॥
जग जीवन दाता पाइआ।

फिर फरमाया:– "यह वैराग्य वाणी में फरमाया है। यह वाणी का समुन्द्र चाहे क्षीर–सागर बन जाए, स्वर्ण का पहाड़ बन जाए, मन की तृप्ति नहीं होगी।"

पांच तत्त्व का पुतला, पवन करे परकाश।
पवन को सोधे देह दीप में, कल्प कल्पना भई नास।।
जीवन में जीवन मिले, भेद भाओ सब नाश।
'मंगत' अलख की सेव से, पाया पद अबनाश।।

"प्रेमी, सुन–सुन अंधे पैंदे राह," सत्संग का शौक अच्छी चीज़ है। इसी तरह एक रोज़ ठीक राह भी मिल जाती है। सत्संग में आया करो। चंद रोज़ इसी जगह हैं। जाओ, आराम करो," प्रेमी प्रणाम करके चले गए।

लगातार लम्बे अर्से तक बैठे रहने से थकावट के मुतालिक वार्तालाप चल रहा था। आपने फरमाया:– "यह दिन भर बैठे रहते हैं, मगर नहीं थकते। इनकी थकावट कौन दूर कर सकता है? जब ग़ैबी हालत में जाना होता है, सब थकावटें दूर हो जाती हैं।"

कीर्तन के मुतालिक जब प्रश्न किया तो आपने जो उत्तर दिया वह रहनुमाये मार्फ़त में छप चुका है। इसके मुतालिक आपने फरमाया:– एक दफ़ा ऊड़ी में यह ठहरे हुए थे। वहां एक कीर्तन वाले का स्वांग देखा था। उसने रेशमी कपड़े पहन रखे थे, सुरमा लगाया हुआ था। नई–नई सुर के गाने–बाजे के संग गा–गा कर सुना रहा था। आख़िर ऐसी करतूत की जो बयान नहीं कर सकते। आज का राग–रंग कीर्तन कोई धर्म–ईमान की तरफ़ ले जाने वाला नहीं। चंद प्रभु के प्यारों, प्रेमियों ने उस राग–रंग द्वारा लाभ उठाया है। मगर आम संतों का मार्ग अंतर्मुख होने का उपदेश दे रहा है। इस हा–हा कार से क्यों दुनिया एकत्र हो जाती है? किसी समय ये लाभकारी रहा है। अब यह सुर–ताल आम जीवों के मुंह पर चढ़ गया है। गो यह चीज़ फ़कीरों की है, ताकि मन लीन हो। देख लो कितने लोग इससे लाभ ले रहे हैं। आज से सैंकड़ों वर्ष पहले मोहम्मद ने मस्जिद में बाजा वग़ैरा बंद कर दिया था। मजाल है कि मस्जिद के आगे से भी कोई बाजा बजाते हुए गुज़र जाए। भजन–बंदगी शून्यता में ही रह कर होती आयी है। यह कोई रोकते नहीं, पहले अच्छी तरह समझ लो, फिर जैसा मुनासिब हो करो। गाने–बजाने वाले बड़े–बड़े ढोल, खड़ताल, झांजरें बजाते हैं। बाजे की स्वर ताल में ही सब दो घड़ी के वास्ते मग्न हो जाते होंगे। बग़ैर बाजे, ढोलकी, छैणें के कीर्तन वैसा कर ही नहीं सकते। समझने वाली बात सुर–ताल में ही ख़त्म हो जाती है। पंजाब में रब्बी वाणी को सुर ताल में गुरु अर्जुन देव के समय आरम्भ किया था। उस वक्त और इस समय में बहुत फ़र्क है। अब तो कीर्तन ज़रिया मुआश (रोज़गार) ही बन गया है। और बाकी रही सही रेडियो और सिनेमा वालों ने कृपा कर दी है। जब कोई तरीका निष्काम प्रेम–प्रीत से चलता है, वह लाभकारी रहता है। जब ज़रिया मुआश बना लिया जाता है, बस फिर उसमें असर नहीं रहता। शाहपुर कंडी रावी के किनारे कस्बे में ठहरे हुए थे। वह रागियों का ही कस्बा समझो। दो रागी दर्शन के वास्ते आए। बनारसी शब्द पढ़ रहा था। वे कहने लगे:– "महाराज जी! इन वचनों में बड़ा सुर है। फरमावें तो राग में इसे कर दें।" चंद दोहे लिखवा कर ले गए। तीसरे–चौथे रोज़ बाजा, तबला लेकर आ गए। पांच दोहों को गाते–गाते एक घंटा लगा दिया। विचार आया, सार तत्त्व को कोई–कोई समझेगा, सुर–ताल में सारा समय लग जावेगा। समय की हालत का विचार करके यह तरीका पसन्द नहीं आया। गायन–विद्या ख़राब नहीं। इन्होंने कुछ नुक्स देखे हैं इस वास्ते पाबंदी लगा दी है। रब्बी–वाणी को सुर–ताल के बग़ैर श्रद्धा से जिस कद्र पढ़ा जावेगा उतना ही अच्छा रहेगा। जिनको अच्छा लगे बेशक साज़ इस्तेमाल करें। खुली छुट्टी नहीं दे सकते।"

प्रेमी ओम कहने लगा:– "महाराज जी! हालत तो आजकल ऐसी ही चल रही है। हमें भी कीर्तन करने का बड़ा शौक है। करीबन सब साज़ रखे हुए हैं। अब आपके फरमाने के मुताबिक कुछ ठीक समझ आ गई है। कृपा करके सिमरण का स्वरूप क्या है इस पर ज़रा रोशनी डालें?"

जवाब छप चुका है, और भी कई प्रश्न पूछे जो छप चुके हैं। फिर ओम जी ने कहा– "अब समय बहुत हो चुका है और काफी समय आपका ले लिया है। अब फिर किसी समय चरणों में हाज़िर हूँगा।"

"शायद आज शाम के सत्संग में हाज़िर न हो सकूं। कोशिश ज़रूर करूंगा। ज़्यादा से ज़्यादा नज़दीकी आपके चरणों की चाहता हूं।"

दीवान रल्ला राम जी ने कहाः– "कपूर जी, तुम बड़ा अच्छा कर रहे हो जो वचन नोट कर रहे हो। देहरादून की यादगारी बनी रहेगी।

ओम जी ने कहाः– "आपकी प्रेरणा खूब रही। कुछ ऐसी ग़लती लग गई थी जिसने श्री चरणों से वंचित रखा। जब समय आता है तब ही सतपुरुषों की संगत मिलती है। फिर हाथ जोड़ कर प्रणाम करके प्रेमी विदा हुए।"

79. देहरादून में अमृत वर्षा – पहला सत् उपदेश

जब से संसार की रचना हुई है उसी काल से जीव शरीर धारण करते चले आ रहे हैं और उसमें रह–रह कर आख़िर संसार त्याग कर चले जाते हैं। चौरासी लाख जिया–जन्त में इस मनुष्य योनि में ही कल्याण–अकल्याण के बारे में सोचा जा सकता है। कोई ख़ास–ख़ास व्यक्ति उनमें से ऐसे होते हैं। जिन्होंने इस बात की ख़ोज की–कि जिस्म और जान क्या चीज़ हैं? और उनके मुतालिक जानकर फिर जिन्होंने जीवन शक्ति यानि ज़िन्दगी की खोज की–कि यह क्या वस्तु है? ऐसे महापुरुष ही ऋषि, मुनि, गुरु, अवतार, पीर, पैग़म्बर कहलाए। उन्होंने ही इन्सानी ज़िन्दगी को बड़ी उच्चता दी है और उन्होंने सही रूप में संसार का नक्शा पेश किया है। उन्होंने ही बतलाया कि जीव कहां से आया है और आकर क्या करता है और किन तरीकों को धारण करके इस चक्कर से निकल कर मंज़िले–मक्सूद यानि ठौर–ठिकाने तक पहुंच सकता है? आम जीव और ख़ासकर मानुष जाति जिसमें छोटे–बड़े, स्त्री–पुरुष सब आ जाते हैं, रात–दिन सुख–शांति के वास्ते धाओं–धा (कोशिश) कर रहे हैं। मगर जिस सुख को वह चाह रहे हैं, उसके बजाए उन्हें दुःख प्राप्त हो रहा है। जो भी काम सुख की ख़ातिर और शरीर के निर्वाह के वास्ते शुरू कर रखे हैं, सबके–सब यत्न–प्रयत्न जो किए जा रहे हैं उनका मकसद है कि किसी तरह इन्द्रियों की भूख निवृत्त हो जावे, मगर यह भूख दूर नहीं होती बल्कि शारीरिक भक्ति दिन–ब–दिन बढ़ती ही जाती है। उसके ख़िलाफ जिन्होंने शारीरिक सुखों के यत्न–प्रयत्न व उसकी सजावट को दुःख रूप समझ कर ज़िन्दगी की पहचान के लिए कोशिश की, जप–तप करके सच्ची शांति और सुख जिस वस्तु में देखा उसे उन्होंने सबके लाभ के लिए बयान किया और बतलाया कि बग़ैर सही यत्न के स्वार्थ और परमार्थ दोनों मार्ग में सफलता नहीं हो सकती। उन्होंने बतलाया कि आदिकाल से स्वार्थ की भक्ति ज़ोरों पर रही है, लेकिन सत्यवादी जीवों का रास्ता इसके उल्ट है। ज़रा देखें कि ज़माने हाल में इन्द्रियों के सुख भोगों की कोई कमी नहीं, मगर जिसे भी देखोगे अंतरविखे परेशान, उदास, दुःखी और अशांत ही पाओगे। इन्द्रियों के सुख भोगों की ज़्यादती ही अहंकार के बढ़ाने वाली है। ज्यों–ज्यों अहंकार बढ़ता जावेगा त्यों–त्यों शांति आनन्द देने वाले सत्–भाव निर्मानता, आजज़ी, यानि दीन भाव अलोप होते जायेंगे। कभी सही सोच पैदा ही नहीं होगी कि मैं क्या हूं, कहां से आया हूं, कहां जाना है,

ईश्वर क्या है, आत्मा क्या है, संसार क्या है? असत् नाम, रूप, गुण, कर्म का सिमरण करने में जीव हर समय ऐसा अंधा हो रहा है कि सत्नाम सिमरण करने का पता ही नहीं। यहां तक कि उसे पता ही नहीं कि किस कर्म के करने से अशांति बढ़ रही है और किस कर्म के करने से सुख मिलेगा। इस समय सत्संगों की कमी नहीं, बड़े–बड़े कीर्तन हो रहे हैं। पाठों पर बड़ा ज़ोर दिया जा रहा है। गुरु, संत सादा ज़िन्दगी बसर करने के वास्ते कहते हैं। दुनिया तेज़ी से नुमायशी ज़िन्दगी की तरफ़ जा रही है। सुन्दर–सुन्दर कपड़े, हार, श्रृंगार किए जा रहे हैं। चाहिए तो यह था कि जीव इससे बचकर सतोगुणी ख़ुराक की तरफ़ ज़्यादा ध्यान देता ताकि कुछ बेहतरी होती। ऐसा उपदेश देने वाले संत भी पैदा हो गए हैं जो कह रहे हैं– जो मर्ज़ी है खाओ–पीओ, खूब हँसो, खेलो, मौजें करते हुए जीवन मुक्ति हो सकती है। ऐसा ज्ञान कहां तक कल्याणकारी हो सकेगा, इसके मुतालिक विचार करो? सत्पुरुषों ने हमेशा दास भाव में जीवन ढालने का उपदेश दिया है।

रोड़ा हो रहो बाट का, तज आपा अभिमान ।
लोभ मोह तृष्णा तजे, ताहे मिले निज नाम ।
रोड़ा हुआ तो क्या हुआ, पंथी को दुःख दे ।
साधु ऐसा चाहिए, जैसे पड़ी खेह ।
खेह हुआ तो क्या हुआ, उड़–उड़ लागे अंग ।
साधु ऐसा चाहिए, जैसे नीर नसंग ।
नीर हुआ तो क्या हुआ, ताता शीरा होए ।
साधु ऐसा चाहिए, हरि ही जैसा होए ।
हरि हुआ तो क्या हुआ, करता धरता होए ।
साधु ऐसा चाहिए, हरि भज निर्मल होए ।
निर्मल हुआ तो क्या हुआ निर्मल मांगे ठौर ।
मल निर्मल से रहित है, वह साधु कोई और ॥

आम गृहस्थी जीवन वालों को छोड़ो, आज साधु किस तरफ़ जा रहे हैं? जब–तक सादा जीवन धारण नहीं करोगे तब–तक सत् आचरण ख़ुराक, लिबास, बोल–चाल में नहीं हो सकता। स्त्री–पुरुष धर्मवान हो सकते हैं जब सादा जीवन इख़्तियार (धारण) करेंगे। सच्चे धर्म का आसरा ही सुख रूप है। मगर हर जीव जानता हुआ फिर अंधकार की तरफ़ जा रहा है। सदाचारी जीवन में जिस कद्र सुख है, नुमायशी जीवन में कभी नहीं हो सकता। जिन सत्पुरुषों के नाम लेकर अंतःकरण पवित्र करना चाहते हो उनके जीवन पर निग़ाह डालो। उनके आदर्श जीवन से शिक्षा लो। ऋषि, मुनि, देवी–देवताओं, गुरुजनों को मानने का मतलब यह ही है कि मनुष्य जीवन को ज़्यादा से ज़्यादा पवित्र बनाया जावे। जैसे बड़े बुज़ुर्ग चलेंगे, उनको देखकर ही छोटे चलेंगे। ख़ासकर माताओं के हाथ में बच्चों का जीवन होता है। जिस तरह वह चलेंगी वैसे ही उनके बच्चों का जीवन बनेगा।

आजकल शुरू से ही बच्चों को खूबसूरत बनाने का यत्न किया जा रहा है। आगे चलकर ऐसे देश का क्या बनेगा? सफ़ाई केवल शरीर और कपड़ों की ही नहीं होनी चाहिए, बल्कि मानसिक पवित्रता के लिए अच्छी आदतें उन्हें डालनी चाहिए ताकि बुद्धि बलवान, शीलवंत हो। अच्छी तालीम से बच्चे बड़े होकर अपने वास्ते, माता-पिता के लिए और देश के लिए लाभदायक हो सकते हैं। किस्से कहानियां पढ़ने के बजाए आला इतिहास पढ़ने चाहिए। पैसा कमाने के वास्ते ही तालीम पर ज़ोर नहीं देना चाहिए। पढ़ाई ऐसी होनी चाहिए जो देश, धर्म के वास्ते लाभदायक हो। जीवन निर्वाह की भी उस सूरत में कमी नहीं रहती। बच्चों को गिरावट की तरफ़ ले जाने वाला सबक कभी नहीं देना चाहिए। साथ-साथ प्रकाशक-शक्ति को भी जानने का सबक देते रहना चाहिए, जिससे अपने आपकी भी कल्याण हो और देश की भी कल्याण हो। हर एक चीज़ पलक-पलक विखे रूप बदल रही है और आख़िरकार एक रोज़ बिलकुल तबदील होकर परिवर्तन हो जाएगा। नाश से पहले-पहले किसी तरह अपने आपको जान लो। सत्पुरुषों की सच्ची सिख्या यह ही है- बग़ैर प्रभु सिमरण के सार ठिकाना यानि सही ठौर का पता नहीं लग सकता। "गौत निकसे आब से, मौला मिले किताब से" ऐसा कभी नहीं हो सकता। मेहनत मुशक्कत करनी पड़ेगी। ईश्वर सबको सत् बुद्धि बख़्शें। मार्ग धर्म में पहले जीवन ख़त्म करना पड़ता है फिर आला जीवन होता है।

पहले मरन कबूल कर, जीवन की तज आस ।
हो जगत की रैनका, तब आओ हमारे पास ॥

सत्संग की समाप्ति के बाद एक प्रेमी ने विचार रखा कि महाराज जी, परम तत्त की पहचान के वास्ते कौन सा रास्ता इख़्तियार करना चाहिए?

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "जब कोशिश करोगे रास्ता मिल ही जायेगा। जिस तरह सांसारिक पदार्थों के पाने के लिए यत्न-प्रयत्न करते हो, उससे कहीं अधिक तुम्हारी ख़्वाहिश आत्म-तत् को जानने की हो जावेगी। वग़ैर उसकी परायणता के जीवन मरा समझोगे तो फिर रास्ता बताने वाला भी मिल जावेगा।

वस्तु कहीं ढूंढे कहीं, कह विध आवे हाथ।
कहें कबीर तब पाइए, जब भेदी लीजे साथ।।

इस चाम के शरीर से बोलने वाला जो राम है उसकी पहचान करनी है। जब-तक वृत्ति बाहरमुखी है तब-तक अन्तर्मुखता, बातों से थोड़ी हो जावेगी।"

फिर एक प्रेमी ने पूछा, "दशरथ के पुत्र राम जी हुए हैं। क्या उनका सिमरण करने से भी कल्याण हो सकता है?

श्री महाराज जी ने फरमाया:

"एक राम घट-घट बोले, एक राम दशरथ घर डोले।
एक राम का सकल पसारा, एक राम सब ही से न्यारा।।

बताओ प्रेमी, कौन से राम की भक्ति करना चाहते हो? पहले माया के चक्कर से छूटने की राह विचार करो।"

प्रश्न–उत्तरों के बाद प्रेमी कहने लगा– "बाकी कल सेवा में हाज़िर होकर कुछ विचार रखना चाहता हूं। अब मेरा मन आपके विचारों को बार–बार श्रवण करने और तसल्ली करने के लिए उकसा रहा है। आशा है और प्रेमी भी श्रवण करने के इच्छुक होंगे।" इस पर प्रेमियों ने कहा:– प्रेमी! तेरे विचार अच्छे होते हैं, सबको अच्छी तरह समझ आ रहे हैं।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! दस बारह रोज़ और इस जगह ठहरना है। अच्छी तरह संशय निवृत्त कर लेना, इनकी थकावट की तरफ़ ख़्याल न करना।"

इस पर प्रेमी कहने लगे:– "महाराज जी! बीते हुए समय को पछता रहे हैं।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "बीतों का अफ़सोस न करो। आगे के लिए होश करो।" जाओ, अब आराम करो। खुद उठ खड़े हुए। प्रेमी प्रणाम करके विदा हुए।

प्रेमी आपस में विचार करते रहे कि कैसी कठिन बात को सत्पुरुष ने कितने सरल लफ्ज़ों में बयान फरमाया है और राय साहब से गिला करने लगे कि उन्होंने ऐसी हस्ती के आने की सूचना उन्हें पहले क्यों नहीं दी।

सत्पुरुष बरामदे में लगाए हुए आसन पर जाकर विराजमान हो गए। कुछ प्रेमी भी सेवा में जा बैठे और अपनी शंकाएं निवारण करने लगे। एक प्रेमी ने प्रश्न किया:

प्रश्न – महाराज जी, कैसे यकीन किया जाए कि आत्म–शक्ति सब जगह मौज़ूद है? शरीर में वह शक्ति काम करती हुई आंखों से नज़र नहीं आती। कृपा करके इसे ऐसे तरीके से समझायें कि यह समझ में आ जाए?

उत्तर – "प्रेमी, रोज़ाना तुम्हारे तज़ुर्बा में यह बात आ रही है कि यह दूध जिसे तुम देखते हो क्या उसमें घी दिखाई देता है? दूसरे मेंहदी के पत्ते शायद तुमने सूखे या हरे देखे होंगे, क्या उनमें लाली नज़र आती है? चकमक एक किस्म का पत्थर होता है, उसमें या माचिस में क्या आग दिखाई देती है? गन्ना तुमने देखा होगा क्या उसमें मिठास यानि गुड़ दिखाई देता है, चीनी भी इसमें से निकलती है? अनुभव द्वारा समझने वाली इन सब चीज़ों में घी, लाली, अग्नि, मिठास इन आंखों से नहीं देखी जा सकती है लेकिन अंतरविखे बुद्धि ज्ञान–इन्द्रियों द्वारा हर घड़ी इन कोटों चीज़ों में विचार कर रही है। कभी भी ग़लती नहीं लग सकती। इसी तरह ज्ञानी संसार में हर समय ईश्वर को ज्ञान–नेत्रों द्वारा अनुभव कर रहा है। अज्ञानी को जहां पत्थर दिखाई दे रहा है भक्त को उसमें भगवान नज़र आता है। पंडित ने धन्ना भक्त से मख़ौल किया, तोलने वाला पत्थर दे दिया कि इसकी पूजा किया कर। धन्ने ने उसमें भगवान को पा लिया। मतलब यह कि जिस कद्र दृढ़ विश्वास हो जाए तो हर चीज़ में वह उस परम शक्ति का विचार करते हुए चलेगा। ऐसा समझ कर कि वह जीवन–शक्ति उसी तरह हर शरीर के अंदर रोम–रोम को शक्ति दे रही है, वह उसे अनुभव करेगा।

जिन्होंने इस शरीर के अन्दर उस परम सत्ता को अनुभव किया। उनको ही भक्त, ऋषि, मुनि, गुरु कहा जाता है। जिस तरह साधन द्वारा घी, अग्नि, लाली, मिठास प्राप्त होती है उसी तरह शरीर के अंदर भी वैसे ही साधन द्वारा उस परम ज्योति का साक्षात्कार होता है। तुम जिस समय सही कोशिश करोगे अपने अंतर विखे आत्म-सत्ता को अनुभव कर सकोगे।

प्रश्न - महाराज जी, इसके वास्ते एक अनजान जिज्ञासु को क्या कदम उठाना चाहिए, संसारी जीवन में तो ईश्वर की याद नहीं हो सकती?

उत्तर - "परमेश्वर ते भुलयां, व्यापन सभै रोग" मूल वस्तु को भूल जाना एक महान भूल है। अगर कोई साहूकार मूलधन को भूल जाए तो सूद या ब्याज उसे कोई क्या देगा? परमात्मा उसकी मदद करता है जो उसका ध्यान करता है। जब तुमको मूल का ही पता नहीं, ईश्वर की याद कैसे बन सकती है? प्रेमी, जीवन में सबके साथ मिलजुल कर रहना, खाना, पीना, उठना, बैठना और धन वग़ैरा कमाकर शारीरिक भोगों को भोगना ही महाकार्य नहीं है। जीवन के लक्ष्य का विचार करना चाहिए। इसका विचार करके परम-पदार्थ की प्राप्ति का पूर्ण यत्न करना चाहिए। सत्संग में आया करो। जो श्रवण करो उस पर अच्छी तरह विचार करो और उसे धारण करो। अब जाओ, बहुत देर हो गई है।" प्रेमी प्रणाम करके चले गए।

"श्री महाराज जी ने एक प्रेमी से पूछा:- "जीव को सुख शांति की प्यास क्यों बनी रहती है? क्या समझा सकते हो?"

प्रेमी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! यह मसला आप ही समझा सकते हैं। यह तुच्छ बुद्धि जीव क्या जवाब दे सकता है? सब जीव इस माया के चक्कर में हैरान हैं। सही मार्ग किसी को भाग्य द्वारा मिल सकता है। और वह भाग्यशाली जीव है जो सत्पुरुषों के वचन अमृत में दृढ़ होता है। 'प्यास क्यों बनी रहती है', कृपा करके यह आप ही बतायें?"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:- "सब जीव इस चौरासी के ऐसे चक्कर में फंसे हुए हैं कि मूल ज्ञान की सूझ प्राप्त करने की होश ही किसी को नहीं। अगर किसी के अंदर सही रास्ता जानने का शौक है भी, उसे रास्ता दिखाने वाला कोई नहीं मिलता। अगर किसी के अंदर तड़प ज़बरदस्त हो जाती है तो उनको रास्ता मिल भी जाता है। मगर माया का चक्कर ऐसा है कि इससे निकल ही नहीं सकते। जब-तक जीव वासना रूपी चक्कर में फंसा हुआ है, कर्मफल ज़रूरी शारीरिक कैद में फंसाये रखेंगे। धीरे-धीरे प्रभु-परायण होकर ही कर्तापन से छुटकारा मिल सकता है। 'तू कर्ता, तू कर्ता' सत्-भावना में दृढ़ता ही परम कल्याण के देने वाली है। किसी को प्रेरणा न करना। अपनी बुद्धि से जो आए ख़ैर पड़ ही जावेगी। ईश्वर जिसके अंदर प्रेरणा करेगा, आप ही पहुंच जावेगा।"

प्रेमी ओम कपूर ने फिर आकर प्रश्न किए जो छप चुके हैं। आख़िरकार श्री महाराज जी ने पूछा:- "प्रेमी! अच्छी तरह विचार समझ आ रहे हैं ना।" प्रेमी कहने लगा:- "खूब समझ आ रहे हैं। लम्बे-चौड़े व्याख्यान आपके नहीं हैं। आप थोड़े से ही में सब समझा देते हैं। उत्तर फ़ौरन मिल

रहे हैं। जी करता है विचार पर विचार करता ही जाऊं। फिर जाने की आज्ञा मांगी और बैग संभाल कर यह कहकर, "अच्छा दीवान जी फिर दर्शन होंगे," प्रेमी चला गया।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "अच्छी समझ वाला प्रेमी है। ऐसी कुदरती समझ पिछले संस्कारों से संबंध रखती है। बड़े–बड़े पढ़े–लिखे मिल जावेंगे, मगर परमार्थिक भावों वाला विरला ही मिलेगा। अगर साथ ही अमली जीवन बने तो रंग लग जाए।"

दीवान जी कहने लगे:– "नौजवान बड़ा होशियार है। उसकी समझ को पता नहीं क्या हो गया है, न आते समय नमस्कार करता है, न जाते समय"?

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "इधर इन बातों से कोई फ़र्क नहीं पड़ता। आजकल की सभ्यता पता नहीं किस तरफ़ ले जावेगी? नौजवान ऐसे विचारवान फ़कीरों का भी इम्तिहान लेते रहते हैं। सज्जनों की फेरी देखो क्या रंग लाती है? इतना पढ़ा–लिख्या ढना विच न रोड़ देवे (गड्ढे में डाल देना)।"

प्रेमी हँसने लगे। मेहता अमरनाथ जी कहने लगे:– "महाराज जी! इस पर आप कृपा करें। ज़रुर कुछ न कुछ आपकी सिख्या पर अमल करेगा।"

श्री महाराज जी फरमाने लगे:– "इधर से कृपा सब पर एक जैसी हो रही है। परवानों को रोशनी बुलाने नहीं ज़ाती। बाकी सब समय की बात है।"

80. दूसरा सत् उपदेश

(ब) संसार रूपी सागर में अनंत प्रकार के जीव शरीर धारण करके विचर रहे हैं। और योनियों को छोड़कर जिस कदर प्राणी नज़र आते हैं, उनमें बहुत सी संख्या संसार के परायण होकर दौड़ लगाती रहती है। कोई जीव सत्–परायण होकर जीवन व्यतीत करता है। ऐसा सत्वादी पुरुष कर्मों को करते–करते सत्–संयम धारण करके पूर्ण दृढ़ता से, पूर्ण निश्चय से सत् शान्ति की खोज यानि परमात्मा की अनुभवता के वास्ते यत्न करता है। जीवन यात्रा तो अमीर–ग़रीब छोटे–बड़े सबकी गुज़र जाती है, चाहे कोई छल–फ़रेब भी कर रहा है या सत्मार्ग पर चल रहा है। पहला अपनी तबाही आप करता है और दूसरा अपना जीवन सफल करके खुशी प्राप्त करता है। ज़िन्दगी उन गुरमुखों की ही ठीक रहती है जो इस शारीरिक यात्रा में अपना भला करते हैं। लोक–परलोक दोनों सुधर जाते हैं। सत्संग में आने का लाभ यही है कि प्रेमी महाप्रभु का सत्–विश्वास और सत्–निद्धियास प्राप्त करें और उन्हें धारण करके सर्व कल्याण प्राप्त करें। इसलिए हर समय अपने सुखों को दूसरों में तक्सीम करके दूसरों के दु:खों को निवारण किए जावें। इसी जीवन संग्राम में कायरता को छोड़ अपनी कल्याण के मार्ग में लग जाना चाहिए। कर्तापन यानि अहंकार का पर्दा सहज में दूर नहीं हो सकता। इसलिए संतों ने सहल मार्ग यह बतलाया है कि ईश्वर को कर्ता–हर्ता हर समय

मानो। संसार में जो कुछ भी हो रहा है सब उस महाशक्ति की लीला जानो। अपने को हर घड़ी अकर्ता समझने वाला शरीर के होते हुए ही सब बंधनों से छूट जाता है और शोक और भय से आज़ाद हो जाता है। इसलिए अपने आपको निमित्त–मात्र समझते हुए बारम्बार ईश्वर को कर्ता–हर्ता जानकर ऐसी सत् भावना में दृढ़ता से जो चलता है वह इस संसार चक्कर से छूट जाता है। ऐसा जीव अपने घर–परिवार, महल, अटारियां वग़ैरा सबको प्रभु की दात जानता है और दास भाव में रहता हुआ अपने अहंकार को ख़त्म करके मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

जीव मैं–पने में बंधा हुआ है। यह इससे तब ही छूट पाता है जब बंधन में डालने वाली 'मैं' भावना यानि मैं–मेरे के चक्कर को कि यह मेरा घर, मेरा भाई, मेरी पत्नी वग़ैरा की असत् भावनाओं को, जो बंधन में डालने वाली हैं, 'तू कर्ता, तू हर्ता, सर्व तेरी आज्ञा' यानि सत्–परायणता से दूर करता है तब अहंकार का पर्दा दूर होता है। अंहकार को ख़त्म करना कोई आसान नहीं है।

'जीवंदियां मरो तजना ओ यार'।

संसार में मुनीम या बैंक खजांची की तरह विचरो। जैसे एक मुनीम लाखों, करोड़ों का साहूकार का हिसाब अपने पास रखता है। सब लेन–देन करता है, साहूकार के धन की रक्षा करता है, मगर लगाव नहीं रखता। देने वाले को देकर दुःखी नहीं होता, लेने वाले से लेकर खुश नहीं होता। हर घड़ी इसे यह ध्यान रहता है कि मैं इसका मालिक नहीं, इसका स्वामी और है और उस धन को पास रखते हुए भी उस धन का लोभ, मोह उसे नहीं होता और न उसे लाभ से मतलब है और न हानि से शोक होता है। ऐसे बे–लगाव होकर जब जीव जीवन व्यतीत करता है तो अहंकार की मलिन से छूट जाता है। इसके ख़िलाफ साहूकार या धनी को, चाहे कहीं भी हो, हर घड़ी अपने धन की चिंता बनी रहती है। जब लाभ की ख़बर मिलती है तो खुश होता है, फूला नही समाता। जब किसी नुकसान का पता लगता है तब अति दुःखी होता है। वैसे ही जो जीव इस संसार को अपना मानते हैं वह ही हर्ष–शोक को प्राप्त होते हैं। अज्ञानता में जीव हर चीज़ को अपनी मानकर दुःखी–सुखी होता है। ऐसे जीवों के अंदर ऐसा भाव कभी नहीं आता कि इस संसार की रचना करने वाला परम पिता परमात्मा है। अर्जुन को भगवान कृष्ण ने मोह के बंधन से छुड़ाने के वास्ते बार–बार कहा है– कि 'तू मुझ में अपने मन को लगा। बुद्धि को भी मुझ में अर्पण कर। इससे तू निश्चित होकर मुझ में ही निवास करके मेरे धाम को प्राप्त होगा'। मुझ से का मतलब मुझ आत्मा से है।

ऐसा समर्पण भाव ही परम भक्ति है। मनुष्य जीवन को सफल करने के लिए संसार में रहते हुए या एक तरफ़ होकर निष्काम भाव से तप करना और 'मैं ही ब्रह्म हूं' ऐसी सत्भावना बनाना ही परम कल्याणकारी है। 'मैं ब्रह्म हूं' की सत्भावना बिना सत्–तत् की अनुभवता के बन भी नहीं सकती। बग़ैर आत्म–अनुभवता के अहं–ब्रह्मास्मि कहना अहंकार की तरफ़ ले जाता है। इसलिए सत्–यत्न करके आत्म–अनुभवता प्राप्त करना है। जब कोई सत्पुरुष ऐसी स्थिति को प्राप्त कर लेता

है तो उसके अंदर निर्मानता, उदारता, क्षमा इत्यादि गुण आ जाते हैं। जैसे जब भृगु ने विष्णु की छाती में लात मारी तो भगवान विष्णु ने उनके चरण पकड़ कर कहा था– "हे प्रभु जी, आपके कोमल चरणों को इस कठोर छाती से तकलीफ़ तो नहीं हुई है।" इतना सुनकर भृगु पानी–पानी हो गए और क्षमा मांगी।

इस प्रसंग से क्या शिक्षा मिलती है? एक दफ़ा भक्त एकनाथ गोदावरी से स्नान करके वापिस लौट रहे थे, तो उनसे ज़िद रखने वाले एक सज्जन ने उन पर थूक दिया। एकनाथ जी ख़ामोशी से स्नान के लिए लौट गए। स्नान करके फिर उसी रास्ते लौटे। दोबारा जब उस सज्जन के पास पहुंचे तो उसने फिर थूक दिया, तो उन्होंने फिर वापिस जाकर स्नान किया। इस तरह ऐसा कहा जाता है कि एकनाथ जी पर उस राक्षस–वृत्ति जीव ने एक सौ बार थूका और एकनाथ जी एक सौ बार ही जाकर स्नान कर आए। आख़िरकार उनकी निर्मानता व आजज़ी का असर उस थूकने वाले पर ऐसा पड़ा कि उसका हृदय पिघल गया और आख़री दफ़ा जब वे वापिस आ रहे थे तो रास्ते में खड़े होकर उसने माफ़ी मांगी। आगे से एकनाथ ने कहाः– "भाई, तुमने मुझ पर बड़ा उपकार किया है। आगे सिर्फ़ एक बार गंगा स्नान करता था, आज तुम्हारी कृपा से सौ बार गंगा मैया के दर्शन हो गए हैं।" यह भक्ति का स्वरूप है। क्षमा का स्वरूप संत ही पेश कर सकते हैं।

एक दफा संत तुकाराम गन्ने बेचने के वास्ते घर से चले, तो रास्ते में कीर्तन करने वाली मंडली मिल गई। उन्होंने सारे गन्ने भक्तों में बांट दिए। एक गन्ना बच गया, वह लेकर घर पहुंचे। सारा किस्सा जब उनकी पत्नी को पता लगा तो क्रोध में आकर उस गन्ने को भक्त जी की पीठ पर इतने ज़ोर से मारा कि उसके दो टुकड़े हो गए। इस पर भक्त जी बोले– "मेरे से भूल हो गई है। मुझे अपने लिए और तुम्हारे लिए दो टुकड़े करके लाने चाहिए थे। एक टुकड़ा तुम ले लो, एक मुझे दे दो।"

भक्तों का जीवन सबक देने वाला होता है। इस सांसारिक जीवन में भगवान से अगर जीव सम्बन्ध रखेगा तब ही सुख उसको मिल सकेगा। जैसे दुनिया के काम वक्त पर करते हो उसी तरह निश्चित समय पर सत्–परायण होकर सत्मार्ग पर चलना चाहिए। आम तौर पर जीव दुनियावी कारोबार ज़रूरी समझते हुए उन्हें वक्त पर करते हैं, लेकिन जब सिमरण पाठ का समय आता है तो उसे टालकर दूसरे काम करने लग जाते हैं। वह उसे ग़ैर–ज़रूरी समझते हैं। ऐसा विचार करना चाहिए कि सत् नियमों में दृढ़ता ही परम आनन्द की तरफ ले जाने वाली है। सबके साथ मिलकर बैठना और वंड के खाना यानि सबसे प्रेम रखना और बांट करके खाने से प्रेम बढ़ता है। क्योंकि दूसरों का माल लूटने से एकता भाव कभी भी नहीं बन सकता। इसलिए संसार में विचरते हुए धर्म–परायण होकर चलने से लोक–परलोक सुधर जाते हैं। बुद्धि को संसार की तरफ से हटाकर उस बनाने वाले मालिक में लगाओ। ईश्वर सबको सत्–बुद्धि देवें। शरीर रूपी संसार को धारण करके उसमें आने का मकसद यह है कि अज्ञानता को दूर किया जावे और अपने वास्तविक स्वरूप की

सोझी प्राप्त की जावे। संतों के सत्संग में जाने का मतलब यह है कि सत् सोझी हासिल हो। इसलिए जो संशय हो उसका विचार किया करो। खाली सत् वचन कहने से काम नहीं बनता। शरीर, मन-इन्द्रियों की गुलामी में नही, बल्कि मन पर सवारी जब करोगे तब इसका सुधार होगा। भक्ति से, योग से, निष्काम कर्म से, निष्काम सेवा से जिस तरह मन को ठहराव मिले इसे काबू करो। सही तरीका व सही ढंग से सच्ची शांति प्राप्त करें।

'उलटा नाम जपत जग जाना–वाल्मीकि भये ब्रह्म समाना'।

जिन पदार्थों को आनन्द देने वाले समझते हैं वह ही परम दु:खदाई हो जाते हैं, जब इनसे अलग होना पड़ता है। ईश्वर, यात्रा में पवित्र बुद्धि बख़्शें। फिर एक प्रेमी ने प्रश्न किया।

प्रश्न – महाराज जी, सादगी, सत्य, सेवा, सत्संग, सत् सिमरण के साधन आपने बतलाये हैं। सेवा कैसे करनी चाहिए? आजकल तो पता ही नहीं कि किसकी सेवा की जावे, किसकी न की जावे? इस पर रोशनी डालने की कृपा करें।

उत्तर – यह सब साधन जीव के कल्याण के वास्ते हैं। सेवा का साधन ही एक ऐसा साधन है जो सब प्रकार के विकारों से छुटकारा दिलाता है। इस मोह माया के घोर अंधकार से निकलने के लिए सेवा रूपी दीपक ही एक मात्र सहारा है। पहले सेवा के बारे में समझो कि सेवा क्यों करनी ज़रूरी है? केवल किसी अंधे मोहताज को दो पैसे दे देने से सेवा नहीं होती। सेवा पर विचार दो घड़ी में नहीं हो सकता। जीव को हर समय तीन प्रकार की वासना यानि कामना बनी रहती है। शारीरिक भोगों में जीव हर घड़ी गिरफ़्तार रहता है। सेवा, पर-उपकार से धनी धन ख़र्च करके लोभ वृत्ति को कम कर सकता है। श्रद्धा, प्रेम से निष्काम सेवा करके ही परम शांति मिल सकती है, चाहे किसी ग़रीब, यतीम, अनाथ की करे, चाहे किसी समाज, देश, संसार की सेवा तन, मन, धन द्वारा करे। इस नियम को धारण करने वाला ही सर्व विजय हो सकता है। जीव अपने परिवार के स्वार्थ में बंधा हुआ दिन-रात मज़दूरों की तरह उनकी सेवा में लगा रहता है। आख़िरकार जब आख़िरी समय आता है तब पता चलता है कि क्या खोया, क्या पाया? जो सत् सेवा के नियम में नहीं विचरता वह कामना युक्त होकर हर समय लोभ, मोह, मान, मद, ईर्ष्या आदि अवगुणों में तपायमान होता रहता है। कुदरत की जितनी भी चीज़ें सूरज, चांद, धरती, पानी, आग इत्यादि दिखाई दे रही हैं, सबकी सब निष्काम रूप से सेवा कर रही हैं। एक मानुष ही ऐसा है जो रात दिन अपने स्वार्थ को पूरा करने के वास्ते लगा रहता है। ऐसे नरकी जीव किसी शुमार में नहीं होते। नाम उनका ही चलता है जिन्होंने संसार में आकर ईश्वर का भजन किया और जैसी हो सकी तन, मन, धन से संसारियों की सेवा करते रहे। अपने दिल को टटोल कर देखो कहां तक किसी दु:खी, दीन, अनाथ या किसी भूखे पड़ोसी की सेवा की गई है? अगर किसी सत्संग समाज में दान देते हो तो खूब बोलकर सुनाते हो कि मेरा भी यह लिख लेना। पहले सेवा का स्वरूप समझो, फिर सेवा करके देखो किस कद्र मानसिक शांति पवित्रता प्राप्त होती है। प्रेमी, कुछ करने से ही लाभ होता है। ख़ाली

इस तरह पूछने में उमर गुज़ार देने से कहां खुशी मिल सकेगी? शरीर सेवा करने से पवित्र होता है। धन को अच्छे कर्मों में लगाने से उसकी सफलता होती है। सिमरण, भजन, ध्यान ईश्वर का करने से अच्छे कोई भी दूसरे साधन न मिल सकेंगे। सेवा ही एक ऐसा साधन है जिसके लिए तन, मन, धन अर्पण करना पड़ता है। मन, वचन, कर्म से प्रभु–परायणता में दृढ़ होने से ही सेवा धर्म पूरी तरह बन सकता है। जिस कद्र इस मार्ग में चला जावे पूर्ण लग्न से तन्मय हो जाना चाहिए।

दीवान रल्लाराम जी ने एक दिन अर्ज़ की:– "महाराज जी! आपको किसी समय कोई पुस्तक ग्रंथ पढ़ते नहीं देखा। यह संतों के वचन, वाणियां कब की याद की हुई हैं?"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी जी! बचपन में ही स्मरण शक्ति ऐसी तेज़ थी कि एक दफ़ा सबक देख लिया दूसरी दफ़ा उसे याद करने की ज़रूरत नहीं पड़ती थी। एक दफ़ा सबक नज़र से गुज़र जाता यह याद हो जाता था। गृह पर आकर अपना निजी प्रोग्राम चलता था। अब तो लेखा ही आपे से बाहर है। चौदहां–लोक में ऐसी कोई वस्तु नहीं जो योगी के चित्त में भ्रम डाल सके। अंतर बिखे वह शोभा प्रगट हुई है कि बयान नहीं हो सकती। अनिवर्चनीय के भेद को कैसे खोलकर दिखाया जावे? जब जानोगे तब मानोगे हमारे वास्ते यह ही उपदेश है।

कुछ प्रश्न पूछने के बाद प्रेमी ओम के मुँह से निकला कि महाराज जी, आपके अंदर से जो खटा–खट विचार निकल रहे हैं, यह ही हमें अचम्भे में डाल रहे हैं। अब फिर सेवा में हाज़िर होऊंगा और विदा हुआ। इसके बाद दीवान रल्ला राम जी ने अर्ज़ की:– उस प्रेमी की महिमा भी अपार है। कैसे विचार निकाल कर रख रहा है?

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "यह सब पिछले संस्कार होते हैं। कोई कमी रह जाती है उसे पूरा करने के लिए जीव को श्रेष्ठ घरानों में आकर जन्म लेना पड़ता है, फिर लाग लग जाने पर उस रास्ते पर चल पड़ता है। प्रभु की माया बड़ी विचित्र है। कर्म–गति अति गहन है। अच्छे–अच्छे बुद्धिमानों की समझ में भी प्रभु भावी का चक्कर नहीं आता। प्रेमी, जन्म–जन्मांतर से यह सिलसिले चले आ रहे हैं। कमी ही जन्म का कारण होती है। अगर किसी समय धन ज़्यादा बढ़ जाता है या परिवार अधिक बढ़ जाता है या नाना प्रकार के सामान मिल जाते हैं, महल, अटारियां, बंगले बन जाते हैं, मान–इकबाल की कोई कमी नहीं रहती तो जीव अपने आपको बड़े से बड़ा मान लेता है। यह ही सबसे बड़ी भूल और अज्ञानता है, जिसमें फंसकर जीव अति क्लेश को प्राप्त होते हैं।"

दीवान जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! बहुत दफ़ा देखा गया है कि आप बड़ी उदासी में बैठे हुए हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि आप नाराज़ या नाखुश हैं।"

श्री महाराज जी झट बोल उठे:– "प्रेमी! तुमने अच्छा अंदाज़ा लगाया है। वाकई यह हर समय संसार की अधोगति का विचार सामने रखते हुए उदास रहते हैं। इन्हें कुछ अच्छा नहीं लगता। जिसे संसारी सुख, आनन्द रूप समझते हैं इनको सब दु:ख और अशांत रूप नज़र आते हैं। संसार

की कोई चीज़ सुख सम्पत्ति इनको मोहित करने वाली नहीं है। इन्होंने किसी से नाराज़ होकर क्या लेना है? कोई इन्हें रोगी कहते हैं, कोई कुछ। इधर किसी प्रकार का दु:ख, रोग, चिंता नहीं है। इनका दु:ख बहुत ही निराला और अश्चर्ज है। जैसी उदासी इनके अन्दर आई हुई है ऐसी उदासी वाले विरले ही जीव हुए हैं। जिन्होंने इस उदास रूपी रोग से निवृत्ति पाई है और परम-तृप्त होकर संसार से गए। हज़ारों प्राणी उनकी शिक्षा द्वारा सत् विचारों को पाकर निर्मोह हो गए। वह परम-पद के अधिकारी थे। दुनिया वाले उनको पागल, दीवाना, जादूगर नाम देकर पुकारते रहे हैं। यह सबकी सुनते रहते थे। किसी की बातों में नहीं आते। संसारी और फ़कीरों के रास्ते में बहुत भेद है। संसारी किसी घड़ी एक चित्त होकर विचार नहीं करते कि यह स्त्री, पुत्र, नौकर-चाकर, मान, इकबाल, सम्पत्ति आख़िर है क्या चीज़? अच्छी तरह विचार की आंखों से देखा जावे तो यह सब विनाश रूप हैं। जीव इन सबके वास्ते किस तरह दिन-रात ज़ाया कर रहा है। शरीर सहित किसी वस्तु ने इस जीवड़े के साथ नहीं जाना। अच्छी तरह विचारोगे तो इनका सार कुछ नहीं पाओगे।"

एक दिन जब ओम कपूर सेवा में हाज़िर हुए और बैठ गए तो आपने पूछा:- "कोई विचार सुनाओ। क्या देखा, सुना और समझा है? तुम भी बड़े पारखी हो।"

इस पर ओम कपूर ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! कई रातों को रोज़ाना आकर देखता रहा हूं, आप क्या खाते-पीते हैं, किस तरह उठते-बैठते हैं? फिर सोने के बाद बाहर जंगल में जाकर क्या करते हैं, और किस समय वापिस आते हैं? जब रात के ग्यारह बजे आपके पास से उठने के बाद आज्ञा पाकर बाहर जाता, सड़क पर एक पुलिया के नीचे साइकिल रखकर अपना काला सूट पहनकर एक घंटे के बाद फिर इस मकान के पास आ जाता। बरामदे के सामने यह जो बड़ा पेड़ है इसके पीछे खड़े होकर देखता रहता था। अंधेरी रातें थीं, टार्च पास रखता। भक्त जी आसन ठीक करके, पानी रखकर, अंदर चले जाते। आप बरामदे में एक तरफ करवट लेट कर आराम करते थे फिर आप पौने घंटे के बाद एकदम उठते और पगड़ी सिर पर रखकर, सोटी हाथ में लेकर, जूती पहनकर एक तरफ़ चल देते थे। अमरूदों वाले बाग़ से निकलकर सूखी नदी में उतरते थे और कंकर पत्थरों वाली एक एकांत जगह जाकर बैठ जाते थे। एक दफ़ा भक्त जी आपके साथ लोटा लेकर गए थे और आपने फिर वापिस कर दिया था। आप एक तरफ़ चादर पर बैठकर आसन लगाकर समाधि में चले जाते थे। लगातार तीन रोज़ पेड़ों की ओट में खड़े या बैठकर सारी रात देखता रहा था। मुझे साधुओं के पाखंड मालूम थे। चेलों से कहते कि हम कुछ नहीं खाते, न ही सोते हैं। मगर रात को छुप-छुप कर खाने के हालात मालूम थे। इन हालात की वज़ह ने आपकी परीक्षा लेने के लिए मजबूर कर दिया था। साधु बदमाश होते हैं, दिन को और हालात और रात को और हालात में रहते हैं। जब सुबह मुंह अंधेरा ही हुआ करता था, आप वहां पर पगड़ी, चादर रखकर, लोटा लेकर आगे रफ़ा-हाज़त के वास्ते चले जाते थे। जब फ़ारिग़ होकर आते, पगड़ी सिर पर रखकर, चादर लेकर टहलना शुरू कर देते। करीबन दो सौ गज़ तक जाना, फिर वापिस आना बार-बार लगा रहता था।

फिर जब अच्छा दिन निकल आता तब तालाब के पास जाकर स्नान करके जल्दी–जल्दी आसन पर आ जाते थे। फिर हम साइकिल लेकर वापिस घर चले जाते थे। तीनों रोज़ हालात एक जैसे पाए तब जाकर हमें तसल्ली हुई कि यह फ़कीर बनावट करने वाला नहीं है, इसके जीवन में जो बात है वह ही इसकी ज़बान पर है।"

श्री महाराज जी मुस्कराये और फरमायाः– "प्रेमी! और अच्छी तरह परख लो, कसर न रह जाए, हर मामले में बड़े होशियार हो। दो पैसे की हांडी लेने वाला खूब ठोक–बजाकर उसे देखता है और फिर लेता है। जिज्ञासु को भी अच्छी तरह ठोक–बजाकर देख लेना चाहिए। अच्छा, अब जाओ और जाकर भोजन पाओ, फिर सोच लो कहीं धोखा न लग जाए।"

दूसरे दिन फिर ओम कपूर आए और बिना नमस्कार किए बैठ गए। मगर श्री महाराज जी ने बड़े प्रेम से कहाः– "प्रेमी, आओ बैठो।" उसके बाद श्री महाराज जी साधुओं के पाखंड के मुतालिक कहने लगे। तब प्रेमी ओम कपूर ने कह दियाः– "आप कौन से अफ़लातून के बच्चे हैं, और सारी दुनिया ख़राब है जो इस तरह कुछ का कुछ सबके मुतालिक (बारे में) कह रहे हैं?"

81. विचित्र आदर्श

इस पर श्री महाराज जी ने दोनों हाथ जोड़कर बड़े नम्र भाव से कहाः– "प्रेमी! गुस्से को शांत करो। प्रेमी जी, यह तो दासों के दास हैं। केवल सत् का निर्णय करने के लिए ऐसा कह रहे हैं। अगर तुम्हें बुरा लगा है और तुम्हारा दिल दुखा है, यह तुम्हारे से क्षमा चाहते हैं।"

क्षमा का शब्द सुनते ही ओम कपूर कुछ न बोल सका और हाथ जोड़कार माफ़ी मांगने लगा और कहाः– "महाराज जी! जो लफ़्ज़ निकल गए हैं उनके लिए क्षमा करें।"

श्री महाराज जी ने फरमायाः– "प्रेमी! कोई बात नहीं। यह तो पहले ही जानते थे।"

82. जगाधरी में आगमन

एक अक्तूबर, 1951 को श्री महाराज जी जगाधरी पधारे। महाराज जी बाबू जी की सेवा देखकर बड़े खुश हुए। "भक्त जी को हुक्म हुआ कि जाकर अपनी रसोई देख आओ।" बाबू जी साथ गए। भण्डारे की जगह देख कर भगत जी बहुत खुश हुए। मगर जब रसोई देखी चित्त भटक गया। रसोई बहुत छोटी थी। साथ वाला कमरा और बरामदा भी अच्छा था। जब चरणों में आकर बैठे भगत जी का चेहरा देख कर श्री महाराज जी फरमाने लगेः– "क्यों मुंह बनाया हुआ है?" भगत जी ने अर्ज़ कीः– महाराज जी! रसोई बहुत छोटी है। कितना बड़ा आश्रम, इस कदर संगत का लंगर जिस जगह पकना हो खूब जगह होनी चाहिए।

श्री महाराज जी ने फरमाया, "इस दफ़ा समय काटो। फिर बड़ी कर लेना। बाबू पर गुस्सा करने की ज़रूरत नहीं। प्रेमी ने किस कदर मेहनत से काम करवाया है। उसकी सराहना करनी याद नहीं रही। अब जगह भी बहुत हो गई है और बढ़ा लेना। पिछली दफ़ा से तो अच्छा रहेगा जैसा समय आए गुज़ार लेना चाहिए। दिल तंग न करो।"

सत्पुरुष इस जगह भी हमेशा की तरह रात को बाहर जंगल में चले जाते और समाधिस्त रहते। दूसरी रात आप ग्यारह बजे ही उठकर सड़क पर रवाना हो लिये। भगत जी थोड़ी दूर तक लोटा लिए साथ गए। रास्ते में आपने भगत जी से फरमाया:– सेवा खुद करने की कोशिश किया करो। इसे अपना फर्ज़ समझो, बेशक माया राम सेवादार है मगर अभी उसे अच्छी तरह देखना है कि फसली बटेरा तो नहीं। वह आगे होकर हाथों पर पानी डाले और तुम मुंह देखते रहो। कुछ होश होनी चाहिए।

पहले भी एक दफ़ा श्रीनगर में तुम्हें समझाया था। लापरवाही नहीं करनी चाहिए। अगर सबसे छोटी सेवा को नज़र–अन्दाज़ करने लग जाओगे किसी समय बड़ी सेवा का बोझ उठाने से भी परहेज़ करने लगोगे और इससे कतराने लग जाओगे। अगर मौके पर हाज़िर न हो तो और बात है। फिलहाल सिर्फ़ ऊपर–ऊपर की सेवा में उसे लगाओ बाकी लंगर का सब इंतज़ाम अपने हाथ में रखो, इशारा समझा करो। बिना कहे ही सेवा किया करो। अब वापस जाओ, आराम करो। रोज़ाना न समझाना पड़े।

83. भगत बनारसी दास का फिर छुट्टी मांगना

इस जगह पहुंचने पर भगत बनारसी दास ने राग अलापना शुरू कर दिया कि महाराज जी मेरा कुछ नहीं बना, मुझे छुट्टी दो। महाराज जी ने प्रेमियों को फरमाया:– "इसे समझाओ, अगर फ़कीरों के पास रह कर कुछ नहीं बना तो इनसे जुदा होकर सांसारिक चक्कर में फंस कर ख़राब होगा।" आप भी भगत जी को समझाते रहे और प्रेमी भी समझाते रहे।

जब श्री महाराज जी बाहर से वापस आते स्नान आश्रम के अहाता से बाहर लगती ज़मीन में किया करते थे। अहाता आश्रम में स्नान की पाबन्दी लगा दी थी इसके अतिरिक्त मल–मूत्र त्याग करना, माताओं का नंगे सिर आना वग़ैरा पर भी पाबन्दी लगा दी थी और नियम बना दिए थे कि आश्रम किस मकसद के लिए कायम किया गया है। आश्रम की पवित्रता की तरफ ख़ास ख़्याल रखने की हिदायत दे दी थी। गन्दा ख़ाद तक पौधों व जमीन में डालने की पाबन्दी लगा दी थी।

जो रुपया अबोहर की तरफ से बाबू अमोलक राम जी के पास पहुँच चुका था और अहाता आश्रम के शिमाली तरफ की ज़मीन चौधरी नैन सिंह वाली ले लेने के बाद काफी रुपया बच गया था, आज्ञानुसार बाबू जी ने लंगर की पिछली तरफ वाली ज़मीन, जो चौधरी इन्द्र सिंह की थी, का सौदा करके उसे भी खरीद लिया था। जब दूध गर्म करके लाया गया और आप पी चुके तो उसके

कुछ देर बाद आप उठ कर रसोई की तरफ पधारे। बड़ा कमरा देख कर बहुत प्रसन्न हुए। रसोई देख कर फरमाने लगे:– एक तो टेढ़ी है और दूसरे लंगर के काम के लिये छोटी है। अब तो साथ वाली ज़मीन मिल गई है, जिस कदर चाहो बढ़ा लो। इस दफ़ा जिस तरह हो सके गुज़र करो। जब यह बनी तो उस वक्त जमीन ही टेढ़ी थी। ज़मीन के मुताबिक रसोई बनानी पड़ी थी। साथ वाली ज़मीन बाद में खरीदी गई थी।

84. विचित्र आदर्श

आश्रम के अहाते में माल्टे के पौधे लगाए गए थे जो कि गुरदासपुर के प्रेमियों ने भिजवाए थे। इनमें से बहुत से पौधे कलम के नीचे से फूट आए थे। कुछ प्रेमियों ने जिनमें हकीम ख़िदमतराय यानी जज साहेब भी थे, जब इन्हें नीचे से फूटे हुए देखा तो बाबू अमोलक राम को कहा कि इन्हें कटवा दिये जावें क्योंकि यह पौधों को खराब कर देंगे। बाबू जी ने उन्हें कटवा दिया और अभी यह फूटी हुई टहनियाँ सड़क पर ही पड़ी थीं कि श्री महाराज जी बाहर से आ गए और इन्हें सड़क पर पड़े देखकर बाबू जी से पूछा:– यह किसने कटवाई हैं? बाबू जी ने अर्ज़ की:– मैंने कटवाई हैं क्योंकि यह पौधों को खराब कर देती हैं। इसके बारे में जज साहेब और दूसरे प्रेमियों ने भी बतलाया है।

श्री महाराज जी ने बाबू जी को खूब झाड़ दी कि तुमने पौधों को तबाह कर दिया है और जज साहेब वग़ैरा को भी बुलाया और उनसे पूछा मगर वे सब मुनकर हो गए कि उन्होंने ऐसा नहीं कहा।

कुछ दिन बाद जब श्री महाराज जी को पता लगा कि वाकई कलम से नीचे की फूटी हुई टहनियां पौधों को खराब कर देती हैं तो एक दिन जब बाबू जी के साथ बाग में जा रहे थे तो आपने फरमाया:– "बाबू माफ़ कर देना, उस दिन तुम्हें टहनियां काटने पर झाड़ दी थी। फ़कीरों की ग़लती थी, तुम ठीक थे।"

जब देखा कि यह ज़मीन माल्टों के पौधों के लिए ठीक नहीं हैं तो आपने आज्ञा फरमाई:– बाग में आम के पौधे ही लगवा दिये जाएं और साथ ही यह भी आज्ञा फरमाई कि इनको गन्दा ख़ाद न दिया जावे बल्कि गोबर की ख़ाद ही दी जावे। इस जगह की पवित्रता को ध्यान में रखते हुए यह आज्ञा फरमाई। बाहर ज़मीन में भी गन्दी ख़ाद की पाबन्दी लगा दी और फरमाया कि प्रेमियों ने इस जगह ज़मीन पर ही लेटना है इसलिए गन्दा मल–मूत्र का ख़ाद न डाला जावे।

85. एक पीड़ित को पत्र द्वारा सत् उपदेश

ईश्वर नित्य ही समता मार्ग में निश्चय देवे, और मुसीबत को बर्दाश्त करने की शक्ति देवें। हर वक्त सच्चाई और प्रेम से विचरो। ज़िन्दगी का मयार देखो। आख़रत को मद्दे–नज़र रखकर सत् परायण होवो। पिछली लापरवाहियों को छोड़ कर आइन्दा सत् विश्वासी बनो। नई जिन्दगी के आगाज़ को पवित्र भावना से आरम्भ करो। कोई चीज़ इम्तिहान के वक्त साथ देने वाली नहीं है

मासीवात (सिवाय) अपने कर्म के। समता के असूलों को हृदय करके अपनाओ। सच्ची श्रद्धा करके गुरु दरबार से सहायता चाहो, यहां बनावट काम नहीं करेगी। आइंदा ज़माने में सत्–आचरण वाले ख़ास शोभा पावेंगे। किसी चीज़ की बनावट अक्सर दुःख के देने वाली होगी। प्रभु कृपा की हर वक्त मन में आराधना करो। अभ्यास ज़रूरी किया करो। पिछले वाक्यात को एक इम्तिहान जानो और आइन्दा के वास्ते जीवन उन्नति और दुःख से छुटकारा हासिल करने की ख़ातिर सही समतावादी बनो। ईश्वर, गुरु वचन का विश्वास देवें।

प्रेमियों को सम्मेलन की सूचना दे दी गई थी। जब दिन नज़दीक आए, प्रेमी भी आने शुरू हो गए। प्रेमी ओम कपूर भी आ गए और जब श्री महाराज जी की सेवा में हाज़िर हुए तो अर्ज़ की:– 12 अक्तूबर के पेपर में आया है कि श्री विनोबा भावे जी ने गांधी–जयन्ती पर सर्वोदय सम्मेलन का आयोजन करते हुए सागर मुकाम पर अपने विचार दिए। जो–जो पसन्द आए हैं वह अर्ज़ करता हूँ। वह इस प्रकार हैं–

"आज के पवित्र दिन मैं उससे (प्रभु) प्रार्थना करता हूं कि ज़मीन तो मुझे लोग दें या न दें, जैसी तेरी इच्छा हो वैसे होने दें लेकिन मेरी तुझसे इतनी ही मांग है कि मैं तेरा दास हूं मेरी हस्ती मेरा नाम मिटा, तेरा ही नाम दुनिया में चले, तेरा ही नाम रहे और जो भी राग–द्वेष आदि विकार मेरे मन में रहे हों उन सबसे तू मुझे मुक्त करना, इसके सिवा अगर और कोई चाह भी अपने मन में रखता हूं तो तेरी कसम मैं तुलसी दास की भाषा नहीं बोल रहा हूं बल्कि वह मेरी आत्मा बोल रही है। 'चाहूँ न सुगती सुमति सम्पत्ति कुद रिद्ध सिद्ध वेल टराई' मुझे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं, तेरे चरणों में स्नेह और प्रेम बढ़े।

"लोग पूछते हैं आप दिल्ली कब पहुंचोगे। मैं कहता हूँ मुझे मालूम नहीं। सब उसकी मर्ज़ी पर निर्भर है। मेरी उमर भी काफी हो चुकी है, शरीर भी कुछ थक गया है लेकिन अन्तर यह वृत्ति रहती है कि नित उसका अनुभव करता रहूं। ज़रा पांच मिनट भी विश्राम मिलता है या थोड़ा भी एकान्त मिलता है तो मन में यह वासना उठती है कि मेरा सारा अहंकार ख़त्म हो जावे, इसके सिवा कुछ भी विचार मन में नहीं आता।" बाकी हिस्सा भी ओम ने पढ़कर सुनाया। सत्पुरुष आंखें बन्द किये हुए सुनते रहे। जब ओम जी ने ख़त्म किया आपने आंखें खोली और फरमाया:– कामिल गुरु या पूर्ण रहबर के बग़ैर अहंकार तीन काल भी नहीं मिट सकता। यह तो बड़ी अच्छी बात है कि विनोबा भावे को अपनी बीमारी का पता चल गया है। मगर बग़ैर कामिल हकीम के यह रोग ठीक होने में कैसे आ सकता है? गो गांधी को वह गुरु मानता है, मगर वह भी तो अहंकार के चंगुल में फँसा रहा। गो उसे ईश्वर पर विश्वास था मगर वह तो कहता था कि अभी अन्धेरा ही अन्धेरा नज़र आता है, उसने खुद रोशनी नहीं देखी थी। प्रेमी, सूरज से चाहो वह अपनी तपिश छोड़ दे तो क्या वह इसे छोड़ देगा? तमोगुण की तपिश को दूर किए बग़ैर ऐसा सोचना कि राम–राज्य हो जाएगा। बिल्कुल ग़लत है। यह दुनिया रज–तमात्मक है और अनादि काल से इसी तरह चली आई है। इसका सुधार कभी भी नहीं हुआ। अनेकों सत्पुरुष इस ज़मीन पर आए और अपनी ज़िन्दगी पेश करके चले गये। बड़े–बड़े पीर पैग़म्बर, वली, ऋषि, अवतार भी आए लेकिन सबने अपने आपको

इस दुनिया के सामने पेश किया। जब-तक अपना सही आदर्श जीवन न पेश किया जावे कैसे दुनिया का सुधार हो सकता है? अगर यह लोग अपना आदर्श जीवन पेश करें तो बाहोश जीव जो खुशबू लेना चाहेंगे वे ले लेवेंगे, तुम इस दुनिया से उसके स्वभाव से छुड़ाने वाले कौन हो? यह राम-राज्य का दावा तो नास्तिकपन है। विनोबा भावे को चाहिए कि अगर कुछ करना चाहता है तो अपने गुरु भाइयों यानि कि गांधी जी के चेलों को सुधारे। उनको ठीक करने का व्रत लेवे। तब विनोबा भावे ठीक चल सकता है। अहंकार के बीज सिर्फ प्रार्थना से थोड़ा ही नाश हो सकते हैं। इसके लिए जब-तक पूर्ण सत्गुरु द्वारा सही मुकम्मल रास्ता प्राप्त न हो, वह इसकी कमाई न करे, अहंकार दूर नहीं कर सकता। 21 अक्तूबर, 1951 को विशाल सत्संग हुआ। आख़िर में श्री महाराज जी ने एक घंटा भर अमृत वर्षा फरमाई लेकिन वह शुभ वचन नोट न किए जा सके। प्रेमी दर्शन के लिए आते रहते थे और प्रश्न भी पूछते रहते थे। एक प्रेमी ने सत्पुरुष से प्रश्न किया:

प्रश्न – महाराज जी, जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं में जीव किस स्थिति में रहता है?

उत्तर – प्रेमी, जाग्रत अवस्था में कर्ता, कर्म और कर्मफल तीनों को बुद्धि जानती है। स्वप्न अवस्था में कर्ता और कर्म को जानती है, नतीजा इसमें नहीं होता। किस्म-किस्म की लहरें उठ रही होती हैं, मगर नतीजा कुछ हासिल नहीं होता। सुषुप्ति अवस्था में सिर्फ़ कर्ता भाव ही बुद्धि में रहता है। और बाकी कर्म और कर्मफल का अभाव हो जाता है यानि मैं हूँ मात्र रह जाता है।

प्रश्न – महाराज जी, शास्त्रों में गंगा-मैया की बड़ी महिमा बयान की हुई है। कृपा करके इसके बारे में रोशनी डालें।

उत्तर – प्रेमी, जिन पुरातन ऋषियों ने जिस बात को बयान किया है वह तो ख़त्म हो गई हैं। अब पेट के स्वार्थी लोगों ने मन-घड़ंत कहानियां घड़-घड़ कर अपना धन्धा बना रखा है। फिर सुनो, कपाल रूपी आकाश से उतर कर सुषुम्ना नाड़ी द्वारा सारे शरीर को प्रकाश करने वाली शक्ति को ज्ञान रूपी बुद्धि जब भागीरथी स्वरूप अनुभव करती है तब वासना रूपी तपन से शान्त होकर अविनाशी खुशी को प्राप्त हो जाती है, यह ही उत्तम शब्द की धारा गंगा का स्वरूप है। इसमें स्नान करने से मुक्ति प्राप्त होती है, कर सकते हो तो करो।

प्रश्न – राक्षसों और देवताओं ने समुन्द्र मंथन करके रत्न निकाले थे, इस बारे में आपका क्या फरमान है?

उत्तर – प्रेमी, यह भी वह ही बात है, पेट रूपी समुन्द्र को प्राण-अपान रूपी मथानी से मथ कर ज्ञान रूपी रतन निकालते हैं। मनुष्य के अन्दर देवमयी और असुरमयी दोनों प्रकार की वृत्तियां हैं। उनके ही द्वारा समुन्द्र मथा जाता है।

एक देवी का प्रश्न – महाराज जी, आप को प्यास लगती ही नहीं, सुना है आप पानी पीते ही नहीं।

उत्तर – देवी, तुम जानती हो कि शिवजी महाराज की जटा से गंगा निकलती दिखाई गई है जो कई-कई जीवों को तृप्त करती रहती है, क्या इनके वास्ते अन्दर बह रही गंगा प्यास नहीं बुझा सकती?

श्री ओम कपूर द्वारा सत्पुरुष के विचारों को लिखे जाने पर भगत बनारसी दास ने भी श्री महाराज जी से अर्ज़ की:– महाराज जी! हमें तो अक्ल नहीं आई, यह हर समय के वचनों को लिखता रहता है। हम भी इस तरह लिखते रहते तो काफी मसाला जमा हो जाता। इस पर आपने फरमाया:– "तुम्हारे द्वारा जो ठोस काम हो चुका है क्या थोड़ा है? (समता प्रकाश ग्रन्थ की तहरीर) ज़्यादा लिख कर क्या करोगे? लिखो–पढ़ो थोड़ा, गुढ़ो ज़्यादा। अगर बहुत ज़्यादा पढ़ते ही चले जाओगे कमाई नहीं हो सकेगी। लिखने की भी आदत होती है, अगर इसके साथ अमल भी हो तो रंग लग सकता है। मगर मजबूरियां जीव को इस दुस्तर जाल से निकलने नहीं देतीं। बेशक बहुत ज़ीरक बुद्धि है, मजबूरी भी बहुत है, कुछ कर गुज़रे तो अच्छा है वरना सब थोथी बात रह जावेगी। यह वचन केवल उसके वास्ते नहीं, और भी अनेकों प्रेमी इनके द्वारा लाभ उठा सकते हैं। वास्तव में अमल ज़्यादा होना चाहिए, सब सवाल अपने आप हल हो जावेंगे। 23 अक्तूबर, 1951 को सत्संग के बाद समाप्ति पर जब आरती और समता मंगल उच्चारण किये जा चुके तो पंडित लक्ष्मण पोस्ट मास्टर जी ने झट अरदास उच्चारण करनी शुरू कर दी। जब उसे ख़त्म कर चुके तो आपने फरमाया:– "प्रेमी जी! अरदास अपनी जगह अलग बैठ कर पढ़ा करो। सत्संग की समाप्ति पर आरती और समता मंगल ही पढ़ने चाहिये। आरती और इस अरदास का एक ही मतलब है। ज़्यादा लम्बी करने से दुनिया तंग हो जाती है। यह अरदास कोहाला की तरफ से कई प्रेमियों की ज़िद्द पर उच्चारण हो गई थी। अब आइन्दा प्रोग्राम न लाना, इस तरह स्वांग खड़ा हो जाता है। वैसे जिस वक्त मर्ज़ी हो इसको पढ़ो, प्रोग्राम में महामंत्र व मंगलाचरण और आख़िरी दोहों के बाद आरती और समता मंगल पढ़ना ही सत्संग की सम्पूर्णता जानो।

प्रश्न – महाराज जी, पहले ज़माने में अश्वमेध और गोमेध यज्ञ किए जाते थे और शास्त्रों में इनकी बड़ी महिमा बयान की हुई है, राजाओं के सिवा इन यज्ञों को दूसरा कौन कर सकता है?

उत्तर – यह सब पाखंड है। ऋषियों का जो असली मतलब था उसके अर्थ का अनर्थ हो रहा है। यज्ञ का असली मतलब त्याग का है, अश्व का अर्थ है प्राण, मेध का अर्थ है दमन करना। इसलिए अश्वमेध का अर्थ है प्राणों का दमन करना। इसी तरह गो का अर्थ है इन्द्रियाँ और मेध का अर्थ है दमन करना, इसलिए गोमेध का अर्थ है इन्द्रियों का दमन करना।

प्रश्न – महाराज जी, सत्संग के बारे में ज़रा और रोशनी डालें। आजकल बड़े–बड़े सत्संग हो रहे हैं, लोगों ने इसे व्यापार बना लिया है और सत्संग करने वालों में कोई विशेष बात तो नज़र आती नहीं ज़्यादातर भोली जनता को उल्लू बनाया जा रहा है।

उत्तर – प्रेमी, इन्होंने सत्संग के करने में चौदह असूल (ग्रंथ 'समता विलास' में) बनाए हुए हैं, सत्संग उनके मुताबिक तबादला ख़्यालात होना चाहिए। इसके अलावा जो सत्संग का स्वरूप देखा जा रहा है वह सत्संग नहीं है। सत् का यत्न करना भी सत्संग है, इसके बारे में विचार करना भी सत्संग है। प्रेमी, संसार को देखा सबने है, समझा किसी–किसी ने है। ईश्वर का निश्चय जब–तक

पुख़्ता नहीं होता तब-तक फ़कीरों और आशिकों की सोहबत बहुत ज़रूरी है। तुम्हारा निश्चय जो इस समय परमात्मा में है सिर्फ़ ख़्याली ही है। जब-तक इसे पूरी तहकीकात करके समझ न लिया जावे परमात्मा वाला निश्चय बैठता नहीं। आम लोगों का परमात्मा वाला निश्चय महज़ सुना-सुनाया है।

उस दिन सत्संग में जो अमृत वर्षा फरमाई उसका ख़ाका दर्ज़ किया जा रहा है:

86. सत् उपदेश-अमृत

बुद्धि शरीर रूपी संसार को धारण करके इसके अन्दर खड़ी नित ही चलायमान हो रही है। इसकी हमेशा चाहना होती है कि यह शरीर हमेशा कायम रहे, सारी दुनिया के ऐश्वर्य मुझे मिल जावें और सदा कायम रहें, दुनिया के सब बन्दे मेरी ताबेदारी करें। इस बुद्धि ने बड़ा घूम फिर कर देखा, जो रास्ता इसके ज़रिये धारण किया हुआ है यह कायम रहने का नहीं है और इससे परेशान है। शरीर जो पांच तत्त्वों और तीन गुणों से बना है नाश की तरफ जा रहा है जब यह शरीर नहीं रहेगा तो जो यह यत्न कर रही है और जो इसकी चाहना है वह भी सब नाश को प्राप्त हो जावेगी। बुद्धि इस बात पर भयभीत होकर जब अपने मरकज़ स्थान की तरफ चलती है तब बुद्धि निर्वास स्वरूप हो जाती है, तब ही वह ईश्वर को पहचानती है। जिसका ईश्वर से प्रेम हो जाता है या उसमें यकीन हो जाता है उसे घाटे-वाधे में परेशान नहीं होना पड़ता है, वह सदा एक भाव में ही रहता है। उसका यह विश्वास पक्का हो जाता है कि यह सब कुछ उसका है, उसके हुक्म के अन्दर है और उसकी रज़ा में सब कुछ हो रहा है हमें उसकी फ़िक्र नहीं करनी चाहिए। यह सारे संसार का तमाशा एक भूल-भुलैयां और झमेला है। इस संसार के अन्दर ईश्वर-चिन्तन और लोक-सेवा ही कल्याण के देने वाले हैं। कमी का नाम ही जन्म है और पूर्णता का नाम ही मुक्ति है। अगर किसी तरह की कमी बुद्धि में रहती है तो जन्म लेना ही पड़ेगा। बुद्धि का यह निश्चय प्रधान रहता है कि सुखों की बहुतायत (अधिकता) मुझे चारों तरफ से प्राप्त होती रहे। यह ही बीमारी जीव को लगी हुई है, इस बीमारी के ज़ेर-असर होकर हर समय नातसल्ली हालत को साथ लिए हुए अन्तकाल तक पछताना ही पड़ता है। इससे छुटकारा पाने के लिए महापुरुषों ने फरमाया है:-

'जीव दया और आतम पूजा, तिस समान धर्म नहीं दूजा'॥

मुनासिब सुख ही तू इस शरीर को दे। इसको सदाचार और गुज़रान वाली ज़िन्दगी कहते हैं। जब तू ज़्यादा सुख इस शरीर को देने लगेगा तो रोग और तृष्णा रूपी तपिश से जलने-तपने लगेगा। यह फ़कीर तुमसे कुछ नहीं मांगते, सही ज़िन्दगी का मुतालया (हासिल) करने और करवाने वाले हैं। इनकी अगर कोई मांग तुमसे है तो यही है कि अगर तुम्हारे अन्दर कोई नुक्स है या कोई बात तुम्हें तपा रही है तो वह इनको दे दो और अपने आपको ठन्डा कर लो। यह कोई महात्मा या सन्त नहीं हैं, सही ज़िन्दगी की खोज करने वाले अदना इंसान हैं। तुम लोगों की सेवा में कुछ विचार रखते हैं, इन्होंने यह पहले अपने जीवन में घटाए हैं फिर आपके सामने रखे हैं। सुनी-सुनाई बात तुम इनसे

कभी न सुनोगे। जो काम तुम करना चाहते हो उसका इन्तहा तक विचार करो कि वह कहां तक तुम्हारा कल्याण करने वाला है। शकूक वाली ज़िन्दगी मत बसर करो। घबराओ मत, गिरते–पड़ते तुम कामयाब ज़रूर हो जावोगे और समय आने पर अपने आपको पहचान लोगे। जो तुम्हारी सेवा कबूल करे उसका अहसान–मन्द तुम्हें होना चाहिए। उसके कदमों को जाकर चूमों क्योंकि उसने तेरे गुनाहों का बोझ अपने ऊपर ले लिया है। दस गांव जलाने का इतना पाप नहीं होता है जितना कि अनाधिकारी को चेला बनाने का होता है। हर जीव को अपनी आख़रियत (अन्त) का बहुत विचार करना चाहिए। ग़म खाना और सबर करना ही जिज्ञासु पुरुषों का धर्म है। तू अपने आपको ईश्वर के हवाले कर दे, तेरी फ़िकर वह आप करने वाला है। हर समय ऐसा विश्वास दृढ़ करने से बड़ी प्रसन्नता होती है। अपने आपको जो प्रभु–परायण कर देता है और हर आने वाले दुःख-सुख, हानि–लाभ, संजोग–वंजोग को उस मालिक के हुक्म के अन्दर विचार करता है तब वह मालिक उस भक्त का सारा बोझ अपने ऊपर ले लेता है। संसार में यह जितनी चीज़ें देखने में आ रही हैं मसलन सूरज, चन्द्रमा, तारे, जल, अग्नि, वायु, सागर, पुरियां और चारखानी के जीव–जन्तु, अन्डज–पिण्डज, स्वेदज, उद्भिज और चराचर सारे संसार का विस्तार जितना भी दिखाई दे रहा है सब का सब मजबूरी में चक्कर काट रहा है। इस मजबूरी से ख़ुलासी पाने का जो यत्न करने वाला है वह ही खोजी जिज्ञासु है। उसे चाहिए कि हर समय उस मजबूरी का इलाज करे। जिस खुशी को पाने की दौड़ लग रही है वह सबके अन्दर मौज़ूद है। जिसने अपने अन्दर खोज शुरू कर रखी है वह एक न एक दिन ज़रूर मंज़िलें–मकसूद को पा लेगा। चलने वाले के वास्ते कोई साहिल, दूर नहीं रहता।

'उन्हां मंज़िल कब तय करनी, जिन्हां दा दिल धड़के'।

इसके बाद आपने फरमाया:– "कोई विचार करो।" एक प्रेमी ने पूछा:–

प्रश्न – अभ्यास करते समय मन इधर–उधर भागने लगता है किस तरह इसको रोक कर अभ्यास में लगावें?

उत्तर – लाल जी, इसे बड़ी पुरानी आदत भागने की पड़ी हुई है, आहिस्ता–आहिस्ता काबू आवेगा। तुम्हारा मन जब अभ्यास के समय इधर–उधर भागने लगे तो मालिक की रज़ा रूपी खाण्डे से इसे बार–बार घायल करो और अभ्यास में लगाओ। यही क्रिया जीवित–मरना है। इसको बुद्धिमान लोग ज्ञान–अग्नि कहते हैं। मन की आदत है जिस काम में इसको लगाया जावे और इसकी मर्ज़ी के मुताबिक सामान न मिले तो इधर–उधर भागने लगता है। इस वास्ते उस समय यह कहकर अन्तर्विखे पकड़ो कि यह सब कुछ परमात्मा की मर्ज़ी से हो रहा है। जैसी उसकी मर्ज़ी होगी वैसा ही होगा, तू क्यों उधेड़पन में लगा हुआ परेशान हो रहा है? तू परेशानी को छोड़कर उस मालिक का सिमरण कर।

'चंचल मन संसार है, निश्चल मन करतार'।

दुनिया में अगर कोई परम दुःख है तो इस मन का डोलना ही है। एक बात तुम्हें और बताते हैं, वह यह कि तू इस शरीर को चौबीस घन्टे ज़िन्दा जानना छोड़ दे, इसको मुर्दा समझ। इसके

अन्दर जो ज़िन्दगी है वह ही सत् स्वरूप है। जब तू शरीर को मुर्दा समझने लगेगा तो मन शरीर की हरकतों में नहीं लगेगा। प्रेमी, हेरा-फेरी छोड़।

प्रश्न – महाराज जी, हेरा-फेरी किसे कहते हैं?

उत्तर – प्रेमी जी, ज्ञान इन्द्रियों द्वारा जो रस इसको प्राप्त होते हैं बुद्धि उसको भोगती है। आंख, नाक, कान, जीभ वग़ैरा शरीर के भोगों के चक्कर में अगर बुद्धि आ जावे यानि अपने आपको इन ही भोगों में मुस्तग़र्क कर दे, यह सब हेरा-फेरी है। जिसका व्यौहार शुद्ध है, जो हेरा-फेरी से परे है वह महान तपस्वी है। बियाबान जंगलों में तपस्या करने वाले साधुओं से भी वह बहुत ऊंचा है।

प्रश्न – महाराज जी, आप बार-बार ईश्वर का नाम लेते हैं और उसके बारे में आपके बयान भी और ही तरह के नज़र आते हैं। कृपा करके ईश्वर वाला मसला साफ करें।

उत्तर – बहुत थोड़े में इसे साफ कर देते हैं। तसल्ली और न तसल्ली हालत से अबूर (छुटकारा) पाकर अपने आपको निज स्वरूप में स्थित होना ही ईश्वर है। दूसरे, बुद्धि की निश्चल हालत ही ईश्वर है।

प्रश्न – परमेश्वर का क्या लाभ है?

उत्तर – परमेश्वर की दिव्य शक्तियां जिस तरह दूसरों की ख़ातिर अपने आपको ख़त्म कर रही हैं उसी तरह तू भी अपने आपको ख़त्म कर, यह परमेश्वर का लाभ है।

प्रश्न – महाराज जी! रोशनी या प्रकाश क्या है?

उत्तर – रोशनी यह है कि जब ईश्वर को अनुभव किया तो तृष्णा का अन्धेरा दूर हो गया, शान्ति प्राप्त हो गई। यह ही वह लाईट है जो मन का अन्धेरा दूर कर गई।

दिल्ली के प्रेमियों ने श्री महाराज जी से दिल्ली पधार कर दर्शन देने की प्रार्थना की:- महाराज जी! पिछली दफा कान दर्द की तकलीफ़ की वज़ह से दिल्ली निवासी आपके सत् उपदेशों से लाभ नहीं उठा सके थे इसलिए कृपा करके इन्हें इस दफ़ा ज़रूर दर्शन देवें। बार-बार ज़ोर देने पर श्री महाराज जी ने फरमाया:- बार-बार एक जगह जाना ठीक नहीं होता। दुनियादार लोगों के अन्दर कई किस्म के संशय आ जाते हैं। होडल, हल्द्वानी निवासी प्रेमियों ने भी उनको दर्शन देने और कृपा करने के लिए प्रार्थनाएं कीं। मगर सत्पुरुष ने किसी को निश्चित प्रोग्राम नहीं दिया। इसके बाद सत्पुरुष ने दिल्ली का प्रोग्राम निश्चित करके सबको प्रोग्राम से सूचित करना शुरू कर दिया।

इसके बाद भगत जी ने सेवा में अर्ज़ की:- महाराज जी! आज्ञा देवें तो दो-चार दिन के वास्ते बहन-बहनोई को मिल आवे।

श्री महाराज जी ने फरमाया:- "अभी तो चार रोज़ ही हुए हैं कि इन्हें मिल कर आए हो, अब वहां जाकर क्या लेना है? बेशक तुम्हारा मोह उनसे बहुत ज़्यादा है; अच्छा, जैसा मुनासिब समझो कर लो।"

27 अक्तूबर, 1951 को भगत जी आज्ञा लेकर सहारनपुर गए। तीसरे दिन आने का वायदा कर गए थे मगर वापस नहीं आए। चौथे दिन बस द्वारा वापस हुए तो बस वाले ने यमुना पुल की

हद पर उतार दिया और कहा कि इधर की बस आगे जाने नहीं देते। यमुना नगर वहां से छः मील था। उन दिनों में बसें वक्त पर नहीं चला करती थीं और कोई ज़रिया सफ़र करने का नहीं था। एक घन्टा इन्तज़ार करके पुल पार किया। दिन का एक बज गया था। गाड़ी चलने का समय पांच बजे था इसलिए पैदल ही चल पड़े। जूती नई थी जिसने काटना शुरू कर दिया। जूती उतार कर हाथ में लेकर सफ़र तय करना शुरू कर दिया। साढ़े तीन घन्टे में छः मील सफ़र तय किया। यमुना नगर पहुंच कर तांगे में सवार होकर डेढ़ घन्टे में जगाधरी पहुंचे। वहां से आश्रम पहुंचे, उस वक्त शाम हो गई थी।

श्री महाराज जी बरामदे में बैठे थे। भगत जी ने चरणों में प्रणाम किया और बैठ गए। श्री महाराज जी ख़ामोश रहे। थोड़ी देर बाद फरमायाः– "क्यों प्रेमी! बहन की रोटियां खा आया, कैसी थीं? हाल क्या बनाकर आया है? बेईमान, कल का कह कर गया था, तेरी राह देख रहे थे। खत्रियों (क्षत्रियों) वाली हेरा–फेरी छोड़ता नहीं। न अपनी मत है न किसी की लेता है।" और काफी झाड़ दी। भगत जी के चेहरे का रंग बदला हुआ देखा तो फरमायाः– "जाकर कुछ खा पी ले। इधर से जो कहा जाता है तेरी बेहतरी के वास्ते ही कहते हैं। कोई तेरा साथी नहीं। संसारी हमेशा अपने समान बनाना चाहते हैं और संत अपने समान। सीधे होकर चलो। कई दफ़ा समझाया है, बहन, बहनोई, भांजे सब इन्होंने देखे हुए हैं। इन जैसी सेवा तुम सम्बन्धियों की नहीं कर सकोगे। आख़िर जो इनाम इन्होंने उनसे लिया यह जानते हैं। (एक दफ़ा भांजे ने आपको गंगोठियां पत्रिका लिखी थी जिसमें बहुत ऊट–पटांग अलफ़ाज़ श्री महाराज जी की शान के खिलाफ़ तहरीर किये गये थे, वो पत्रिका सत्पुरुष ने बाबू अमोलक राम को पढ़ाई थी।) संगत को आगे–पीछे देखकर अब उनके होश ठिकाने आए हैं। अच्छी तरह सबका रिश्ता देख रखा है। फिर दुनिया में सिवाय ईश्वर और गुरु के दूसरा तेरा कोई हमदर्द नहीं है। आज समझ ले चाहे दस बरस बाद। जाओ, जाकर प्रशाद पाकर प्रोग्राम निश्चित करो। तीस अक्तूबर हो चुकी है, चार रोज़ को चलना है, तेरी सैर ही नहीं ख़त्म होती।"

जब भगत जी नमस्कार करके लंगर की तरफ जाने लगे और जूता नहीं पहना तो श्री महाराज जी ने पूछाः– "जूता क्यों नही पहना? और बीमारी वहां से खरीद लाया है। नए जूते पहन कर भी लम्बा सफर नहीं करना चाहिए। जब गाड़ी आती तब आ जाता।" जब भगत जी लंगर में पहुंचे तो बतलाया गया कि कल सुबह से श्री महाराज जी तुम्हारे बारे में पूछ रहे हैं, 'बनारसी आज आने को कह कर गया था क्यों नहीं आया? और कहा कि श्री महाराज जी तुम्हारा बड़ा ध्यान रखते हैं, कितना उनका प्रेम है। जब यह वचन प्रेमी के सुने भगत जी कहने लगेः– "श्री महाराज जी की अपार कृपा दृष्टि है। कई बार कोशिश भी की है और जाने की आज्ञा भी मांगी है ताकि अपना कोई काम करके जीवन बसर करूँ, मगर यह तरीका ठीक नहीं। महाराज जी में कोई ऐसी कशिश है, जाता हूं तो वह भी वहां टिकने नहीं देती। कोई ठौर–ठिकाना भी दिखाई नहीं देता। शारीरिक विकारों ने अलग अन्धेरे में धकेल रखा है। श्री महाराज जी की दया–दृष्टि से शारीरिक अवस्था का समय व्यतीत हो रहा है। बाज़–औकात धर्म–कर्म से चित्त उपरस हो जाता है फिर इनकी दया से

सेवा में लग जाता हूँ। फिर जब भगत जी चरणों में हाज़िर हुए तो श्री महाराज जी ने फरमाया:– "तरिडा फाता औखी जाई"। क्यों बनारसी, मतलब समझे हो? भगत जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! जब–तक पूर्ण कृपा दृष्टि नहीं करते तब–तक मन की रचना शांत नहीं हो सकती, यह बनती बिगड़ती रहेगी। आप ही का फरमान है जब–तक पूरी तरह आत्म–लखना (दर्शन) नहीं हो जाते तब–तक सब बालक के समान चित्त चंचल रखने वाले हैं। ठौर–ठिकाने आपने ही पहुंचाना है। आप सर्वज्ञ हैं, हम अल्पज्ञ हैं। आप दाता हो, हम भिखारी, जब मर्ज़ी हो भीख डालो।" श्री महाराज जी ने फरमाया:– "ओखली में सिर दिया तो धमकियों का क्या डर? सही श्रद्धा, सत विश्वास, पवित्र हृदय और उत्साह से पूरी कोशिश करके जैसी आज्ञा की हुई है उसका पालन करो। चतुर बुद्धि को मीन–मेख न निकालने दो। अपने मालिक को खुश करना कोई मामूली बात नहीं। 'प्रीतम प्रेम में जन्म गंवाओ, प्रभु की जाने प्रभु बेपरवाहो'–चाहते हो निर्वाण, निर्वास अवस्था लेकिन व्रत और पर सेवा से घबराते हो। लेकिन तुमको जैसा मौका फ़कीरों ने दे रखा है और किसी को यह नज़दीक नहीं आने देते। जैसे कहते हो, जब मर्ज़ी है भीख डालो, ज़ोर भी नहीं तो सब्र करो। अन्धेरी रात में सफ़र कर रहे हो। बच्चों की तरह उंगली पकड़ कर चलाना पड़ता है। अभी तो तुम पर कोई ख़ास जिम्मेवारी नहीं छोड़ी। जो बात है जब पूछो तुम्हें हर घड़ी समझाने वाले हैं। यह गोल बनाओ कि सफ़र तय करके छोड़ना है चाहे लाखों ठोकरें खानी पड़ें। मुस्तकिल इरादे वाले बनो। यह आहिस्ता–आहिस्ता ही हो सकेगा, जल्दी की बात नहीं। जो कुछ कहा जाता है उससे कई गुणा ज़्यादा मानने से बेहतरी होगी। जाओ आराम करो, सुबह अपना पूरा फैसला सुनाओ तब कदम उठाया जावेगा।" प्रेमी माया राम को फरमाया:– "तुम्हारी शिकायतें पहुंचती रहती हैं। सेवा के वास्ते तुमने आज्ञा ले रखी है, मेहनत भी कर रहे हो। तुमने इनकी आज्ञा पालन करनी है, बाबू अपनी तरफ से कुछ नहीं कह सकता। मिलकर चलने में ठीक रहता है। अभी जगह बन रही है, हर किस्म का ख़्याल रखना पड़ेगा। तुम अपने आपको नौकर न समझो, हित–चिन्तक मालिक बनकर रहो। बाकी जो काम जिसका होता है उसके करने में ही कल्याण है। बाबू लिखने–पढ़ने और इन्तज़ामी मामले में लगा हुआ है। वह भी सेवा समझकर कर रहा है। हकूमत गुरु–आश्रम में कोई नहीं कर सकता। न सेवा कोई छोटी है न बड़ी। सेवादारी में सब अपने आपको दास भाव में रखें। अगर बाबू तेरी सेवा हिकारत (तुच्छ) की निग़ाह से देखता है तो ग़लती करता है। तुम तनख़्वाहदार नहीं हो, उसी की तरह तुम भी गुरु सेवक हो। जब ऐसा द्वन्द्व भाव खड़ा हो जाता है तब ही दुविधा बढ़ती है। उन्हें भी अच्छी तरह समझा दिया जावेगा। तुम भी आश्रम के पूरे हकदार हो जिस तरह बाबू ख़ैर–ख़्वाह है। बाहर से तेजी कर देता है मगर अन्दर से खोटा नहीं है। अच्छी तरह जानो, अगर तुम्हें कोई खाने–पीने में किसी किस्म की रुकावट हो तो बताओ। उसके काम में दख़ल मत दो। जैसा वह मुनासिब समझेगा करेगा। जो बतावे, कर सकते हो तो कर दिया करो, न समझ आए तो पूछ लेना कोई जुर्म थोड़ा है। तुम कश्मीरी ब्राह्मण हो वह पंजाबी ब्राह्मण है। 'सर्प, सर्प को लड़े विष किसको चढ़े', इस वास्ते परस्पर प्रेम बनाए रखो। आइन्दा कोई शिकायत तो नहीं आवेगी?"

पंडित माया राम ने पूरी तसल्ली दी। श्री महाराज जी ने खुश होकर फरमायाः– "अब आराम करो।" और पंडित माया राम प्रणाम करके लंगर की तरफ जाकर आराम करने लगा।

3 नवम्बर, 1951 को जब श्री महाराज जी बाहर से तशरीफ़ लाए और आसन पर आकर दूध पी रहे थे तो एक सरदार साहब आ गए और विचार रखा– "महाराज जी, बड़ा पाठ वाणी का करते हैं मगर मन के अन्दर खुत–खुती बनी रहती है। भांग के कुल्ले चाहे हज़ार भी कर डालें उसका असर भी नहीं होता। असली मन की शान्ति वाली बात क्या है?

श्री महाराज जी ने फरमायाः– "प्रेमी! रोज विनती पढ़ते हो 'जां का हृदय शुद्ध है खोज शबद में ले' इस का क्या मतलब है? बाकी का पाठ करते–करते उमर गुज़र गई इस बात का पता न लगा। 'गुरु लोभी शिष्य लालची, खेडन दोनों दाओ' बाबे की वाणी ग़लत नहीं कहती, तुम आगे की खोज करना नहीं चाहते। शब्द स्वरूप परमेश्वर घर–घर में प्रकाश कर रहा है। गुरुओं का कहना था नाम रूपी मदिरा पिओ, तुम ठूठे चढ़ाने लग गए हो।

'नाम खुमारी नानका, चढ़ी रहे दिन रात।' बार–बार सारे ग्रन्थ में नाम की महिमा आई हुई है, उस सत्नाम को जब–तक लगातार मनन–चिन्तन न करोगे प्रेमी, शब्द का पार नहीं पा सकते। तुमने झटका परवान कर रखा है, मुसलमानों ने हलाल करके खाना जायज़ मान रखा है। हिन्दू वैसे ही शिकार पर चढ़े रहते हैं। कौन सी बात गुरुओं की मान रखी है? किस सत्पुरुष ने भक्ष–अभक्ष खाने की इजाज़त दे रखी है? क्या खाली कच्छा कड़ा धारण करने से बुद्धि निर्मल हो जाती है? सत् विश्वास रूपी केश धारण करो, ज्ञान रूपी कंघी से अज्ञानता को दूर करो, प्रेम रूपी पुंगी सिर पर बांधो। महापुरुषों ने परोपकार रूपी कड़ा पहनाया था ताकि यह सत्–भाव कभी न भूले। लज्या, पत (शर्म) का कच्छा धारण करे, जत का खंडा हाथ में ले, तब वह सच्चा गुरु का शिष्य कहलाने का हकदार है। धर्म मार्ग में अहिंसा मार्ग रूपी तप बहुत ज़रूरी है। मन वचन द्वारा भी सख़्त अक्षर बोलने पर जहां सत्पुरुष पाबन्दी लगाते हैं वहां वह बेज़ुबान जीवों का गला काटने की तालीम क्या दे सकते हैं? ऐसे आहार करके आम लोगों की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। जन्म–जन्मान्तर की भरमना गुरु कृपा से दूर होती है। सच्चा सिख वही है जो सब पाखंड वग़ैरा को छोड़ कर गुरु की कहनी में भेंट हो जावे। जब–तक कर्म निर्मल नहीं होते, बोल स्वच्छ नहीं होता और मन चित्त का साधन युक्ति अनुकूल नहीं बनता तब–तक कैसे उस अलख पुरुष को पा सकते हो? जब कमाई करके सत् शब्द को प्रगट करोगे तब असली गुरु के द्वारे की समझ आ जावेगी। कीर्तन तो सब जगह हो रहा है पर क्या 'झूठ जगत सत् करतार' को दृढ़ता से माना है? इस झूठ संसार में सत्नाम सिमरण और संगत सेवा साथ रख दी गई है और यह ही आज्ञा दी है हर समय प्रभु भाना मानते हुए विचरो ताकि कमाई करते हुए अहंकार न आ जाए। निर्वैर–भाव चित्त में बना रहे। बाद–मुबाद को दूर रखे। सब जीव–जन्तु में वाहेगुरु की ज्योति का विचार कर परम हित सब में रखे। पखवाद (बाद–मुबाद) चित्त में किसी घड़ी न आवे। सत्पुरुषों के जीवन इतिहास और उनके वचनों पर विचार करने की कोशिश करे। हर तरह पोथी, पाषाण पूजा, भेंट श्रृंगार से परहेज़ करे। प्रेमी, सब ग्रन्थों की सार यह है कि परम सत्ता की खोज करो। सतगुरु चरणों में ही रहकर जुगा–जुग से धर्म मार्ग पर चलने की प्रथा

परम्परा से चली आ रही है। गुरु, ऋषियों के मार्ग पर ही चल कर गुरमुखों ने सचखंड में निवास पाया है। कुंए के मेढक बनने में कल्याण नहीं, न तास्सुब (धर्मांधता) मन में बनाए रखने से मन निर्मल होता है। सब वेद, ग्रन्थ, शास्त्र अंजील आदि सत् की खोज करने की हिदायत कर रहे हैं। राजनीति और चीज़ है, धर्म नीति और फ़राख (विशाल) हृदय करने से ही अज्ञानता दूर होती है। जब ग़ौर से ग्रन्थ का अध्ययन और विचार करोगे तब तुम्हारा मन ही तुम्हें नेक रास्ते पर ले जावेगा। इस संसार में अनेक तरह के जीव विचर रहे हैं, कोई मन्दा सोचते और मन्दा ही करते हैं। कई ऐसे होते हैं, सोच भी उनकी दुरुस्त होती है और उस सोच के अनुसार कर्म भी ठीक करते हैं मगर गर्ज़ हर कर्म के अन्दर खड़ी होती है। इनसे आला वह जीव हैं जिनकी सोच और करनी बिलकुल सही होती है और निष्काम चित्त से करनी करते हैं चाहे उस कर्म से लाभ हो या हानि। ऐसे जीवों का चित्त हर समय आनन्द में रहता है। ऐसे प्राणी सबके वास्ते हितकारी होते हैं। अब तुम बताओ क्या करोगे?"

प्रेमी कहने लगे:– "महाराज जी! आपने तो आंखें खोल दी हैं। हम तो सत् का सौदा लेने आए हैं, किसी से द्वेष नहीं रखते हैं हर जगह चले जाते हैं। जिस जगह प्रेम बढ़ाने वाला सौदा मिल जावे बड़ी प्रसन्नता होती है। आप जी दीयां वडियां मेहरा हन।"

87. सत् उपदेश अमृत

सत्संग महामंत्र व मंगलाचरण से शुरू हुआ फिर वाणी पढ़ी गई। उसके बाद सत्पुरुष ने फरमाया:–

"इस शरीर रूपी संसार के अन्दर हर जीव की बुद्धि चंचल है। ज़रा ग़ौर करने पर पता लग जाता है कि किसी भी प्राणी की बुद्धि स्थिर नहीं बल्कि नित ही चलायमान हो रही है। हर एक जीव का दिन-रात यत्न-प्रयत्न यह ही हो रहा है और यह ही उसकी सोच है कि मेरा शरीर हमेशा कायम रहे, इसको कोई रोग व्याधि न लगे। संसार के सुख भोग पदार्थ उसे बिना किसी परिश्रम के प्राप्त होते रहें। आम जीव ऐसे ख़्याल लेकर दौड़ रहे हैं। कई एक तो बड़ी-बड़ी सोचें सोचते हैं। सोचते रहते है कि किसी तरह जीव और इन्सानों पर मेरी हकूमत हो जाए, सब लोग मेरी ग़ुलामी करें। बड़े-बड़े सुख भोगों के लिए नाना प्रकार की परेशानियां खुद ही खड़ी कर रखी हैं। यह पांच तत्त्व का पुतला (शरीर) जो खड़ा दिखाई दे रहा है नाश की तरफ जा रहा है। सबके शरीर नाश की तरफ जा रहे हैं। इसने कभी विचार नहीं किया कि जब शरीर ही रहने वाली चीज़ नहीं है तब इसके सुख भोग पदार्थ कहां तक कायम रहने वाले हो सकते हैं? इसकी सब स्कीमें धरी-धराई ही रह जावेंगी। जो बुद्धि इस तरह के हालात विचार करके विचरती है वह बुद्धि अपने असली ठौर-ठिकाने का पता लगा सकती है। ऐसी बुद्धि निर्वाण स्वरूप प्रभु को पहचानने की शक्ति रखती है, उसके अन्दर प्रभु प्रेम जाग्रत हो जाता है। वह ही सत् विश्वास द्वारा सुख-दुःख, लाभ-हानि संजोग-वियोग द्वन्द्वों में एक भाव में रहकर विचरण कर सकती है। उसके ऐसे सत् भाव दृढ़ हो जाते हैं कि जो

कुछ संसार के अन्दर हो रहा है सब उस मालिक के हुक्म के अन्दर हो रहा है यानि उसके भाने में हो रहा है। सारे संसार का खेल एक तमाशे के रूप में बन बिगड़ रहा है जो कि हर एक को नित भी भुलेखे में डाले रखता है। ईश्वर का सिमरण और लोक सेवा ही इसमें कल्याण के देने वाले सत् यत्न हैं।" सत्संग समाप्ति के बाद सत्पुरुष ने पूछा:– "कोई विचार है तो करो।" एक प्रेमी ने पूछा–

प्रश्न – यह तृष्णा कैसे शान्त होती है?

उत्तर – प्रेमी, सत्संगों में तृष्णा रूपी रोग से ख़ुलासी पाने के साधन बतलाए जाते हैं, इनमें ही बतलाया जाता है कि जीव को क्या रोग लगा हुआ है और उसकी दवा–दारू क्या है? यह ही बतलाया जाता है कि तृष्णा रूपी रोग ही सब जीवों को लगा हुआ है, राजा–राणा, अमीर–ग़रीब सबको यह रोग सता रहा है। जितने संसार में सुख नज़र आते हैं यह सब दुःख रूप समझो। जन्म से लेकर इस समय तक जीव ने जो खाया–पिया है वह कहां गया? इस तरह आइन्दा जो जीवन में सुख मिलेंगे वह भी स्वप्न समान हो जावेंगे। इस रोग को समझ कर गोपी चन्द, भर्तृहरि जैसे राजाओं ने राज त्याग कर जंगल की राह ली। उनके पास सांसारिक सुखों की कोई कमी न थी। इन्द्रलोक के सब सुख क्यों न प्राप्त हो जाएं, तेरा शरीर भोगों को चार युग क्यों न भोगता रहे तो भी इस जीव को ठंडक नहीं मिल सकेगी? प्रेमी, ईश्वर नाम सिमरण करो तब तृष्णा रूपी रोग से मुख़लसी (मुक्ति) मिलेगी, और इसका कोई इलाज नहीं।

कामना रूपी अगन में, जीव जले दिन रात।
'मंगत' मारग धरम में, जीव शीतल हो जात॥

अभिमान को छोड़कर दीनता को धारण करके सत् विश्वास से प्रभु के नाम का सिमरण करो। यह दवाई ही तृष्णा रूपी रोग से निज़ात पाने की है। आत्म–तत् को अनुभव करने की कोशिश करो। अपने सही रक्षक बनो। संसार में वही मूर्ख जीव है जो हर समय हर घड़ी शारीरिक बनाव–श्रृंगार और खान–पान में लगा रहता है। बड़े लोगों की तरफ मत देखो। हर वक्त पुरातन सत्पुरुषों के जीवन का विचार करो कि किस तरह वह संसार में विचरे। जिस तरह उन्होंने सद्गति को प्राप्त किया उसी तरह तुम भी चलने की कोशिश करो, तब जाकर तुम्हारा कुछ बन सकेगा। खाली पूछ–ताछ में समय मत ज़ाया (बर्बाद) करो। किसी रहबर को पकड़ो। जैसे वह तुम्हें राह पर लगाए उस पर चल पड़ो और उनके फरमाए हुए तरीके से जीवन व्यतीत करो। इस ख़्याल को निकाल दो कि यह शरीर हमेशा इसी रंग में रहेगा। यह हर घड़ी हर लम्ह बदल रहा है। चार रोज़ा जीवन में सत् खोज कर लो। यह ही इस चाम देही का लाभ समझो।

88. दिल्ली के रवानगी

संगत के जाने के बाद श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! तैयारी करो। बिस्तरा बांधो और खा–पीकर तैयार हो जाओ।" बाबू अमोलक राम जी ने भी दिल्ली साथ चलने की आज्ञा ले ली। प्रेमियों की तांगे लाने की ड्यूटी लग गई। दो बजे तांगे आ गए और सब सवार होकर स्टेशन के

लिए रवाना हो पड़े। स्टेशन प्लेटफार्म पर प्रेमियों ने पहले जाकर दरी बिछाई हुई थी, उस पर आसन लगा दिया गया। जब श्री महाराज जी आसन पर विराजमान हुए तो एक प्रेमी ने अर्ज़ की:– महाराज जी! जिस जगह सत्पुरुष विराजते हैं जंगल में मंगल हो जाता है। जब आश्रम को छोड़ा वहां उदासी छा रही थी, ऐसा क्यों होता है?

उत्तर – श्री महाराज जी ने फरमाया:– "जहां प्रकाश होता है पतंगे खुद–ब–खुद खिंचे चले आते हैं, जब अन्धकार होता है कोई भी वहां ठहरना पसन्द नहीं करता। ऐसी समझ हर जीव को है। हर चीज़ में जीवन शक्ति काम कर रही है, ख़्वाहे मनुष्य योनी है या पशु–पंछी या जड़ योनी में, महसूसात हर जीव के अन्दर हैं। बुद्ध जब राज–पाट छोड़कर स्त्री बच्चे को देखकर महल से निकले, जिस घोड़े पर सवारी करते थे उसका नाम कथक था उस पर सवार हो गए। साथी छंदक को साथ लिया। वह दूसरे घोड़े पर सवार होकर साथ हो लिया। दोनों वहां से रवाना हो पड़े। रातों–रात रास्ता तय करते हुए जब एक नदी के तट पर पहुंचे, घोड़े को खड़ा करके उस पर से उतर पड़े। मणियों की माला उतारकर छंदक के हवाले करके कहने लगे, 'तूने बड़ी सेवा की है, यह ले लो।' बाकी शाही लिबास उतार दिया, फ़कीरों वाली कफ़नी पहन ली। अपने बाल तलवार से काट कर नीचे फैंक दिए। छंदक यह सब चुपचाप देखकर रोने लगा और अर्ज़ की:– 'स्वामी! यह क्या कर रहे हो?' आपने फरमाया:– प्रेमी! जाकर कह देना जब–तक सच्ची शान्ति नहीं मिल जाती वापस आना मुश्किल है। घोड़ा भी ले जाओ।' कथक की पीठ पर हाथ फेरा और चल दिए। जब नज़रों से ओझल हो गए तब छन्दक घोड़ों को ले चला। बड़ी मुश्किल से चार फर्लांग भी न चले होंगे कि कथक नाम का घोड़ा खड़ा हो गया, एक दम गिरा और जान निकल गई। जुदाई का सदमा एक जानवर भी बर्दाश्त न कर सका, किस कदर प्रेम उसका प्रीतम से था। इस वक्त के इन्सानों के हृदय हैवानों से भी गए गुज़रे हैं और चाहते हैं कोई एकदम प्रकाश कर दे।"

प्रेमी बराबर आ रहे थे, नमस्कार करके बैठते जा रहे थे। एक प्रेमी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! अब फिर साल के बाद कृपा होगी, कम से कम दो दफ़ा पधार कर संगत को निहाल किया करें तो बड़ी कृपा होगी। इस पर आपने फरमाया:– "इनको किसी जगह जाने का शौक नहीं। जिधर प्रभु आज्ञा होती है बुलावा आ जाता है, उधर जाना पड़ता है। पीछे सारा सिलसिला तुम प्रेमियों के हवाले है। मिलकर बैठा करो और विचार किया करो। और भी नए–नए प्रेमी आ जाया करेंगे और उत्साह बढ़ेगा।"

गाड़ी का समय होने पर दूसरे प्लेटफार्म पर आ गए। रात के बारह बजे थे, थोड़ी देर में गाड़ी आ गई। प्रेमी प्रणाम करके वापस लौट गए। गाड़ी में श्री महाराज जी अपने आसन पर विराजमान हो गए। बाबू जी बैठे–बैठे सो गए, भगत जी को भी झोंके आने लगे, फिर नीचे बिस्तरा बिछाकर सो गए।

सुबह साढ़े छः बजे महाराज जी ने फरमाया:– "बनारसी! उठ, होशियार हो। इतनी नेस्ती क्यों छा रही है?" भगत जी उठे और बिस्तरा बांधा। साढ़े सात बजे गाड़ी दिल्ली स्टेशन पर पहुंची। प्रेमी स्टेशन पर आए हुए थे, सब रवाना होकर ठाकुर मुक्त राम के बाग में पहुंचे। इस

जगह पर पहले भी कई दफ़ा श्री महाराज जी ठहर चुके थे। फिर एक दरी पर आसन बिछा दिया गया और श्री महाराज जी उस पर विराजमान हो गए।

89. दिल्ली में अमृत वर्षा

डाक्टर भगत राम जी ने पूछाः– महाराज जी! यह जगह ज़्यादा पेड़ों की वजह से ठंडी है। पिछली दफा आपको बहुत तकलीफ़ उठानी पड़ी थी। उस समय कोशिश बिल्कुल नाकाम रही, कोई दवाई कारगर नहीं हुई। अब आज्ञा हो तो अंगीठी भेज दी जावे।

श्री महाराज जी ने फरमायाः– "सुख–दुःख आने जाने वाले होते हैं। समय होता है, आपने अपनी तरफ से पूरी कोशिश की, खर्च भी किया, कोई कसर नहीं रखी। कुदरत ने आपके अन्दर ऐसा हठ पैदा कर दिया कि बादाम–रोग़न के लिए हां न निकल सकी। शिमला में जैतून के तेल से ही तुमने कान का दर्द ठीक कर दिया था, वह ही तेल व रोग़न तुम्हारी समझ से बाहर हो गए। सबब ऐसा बनना था, कुदरत ने डाक्टरों–हकीमों का इम्तिहान लेना था, किसी की धनंतरी ने काम नहीं किया। उधर बाबू का हठ कायम रहा। ताजेवाले के डाक्टर ने आख़िर सहमत होकर कहा, 'बादाम–रोग़न ऐसी चीज़ नहीं जो नुकसान दे सके, ज़्यादा से ज़्यादा जुलाब लगा सकता है। एक बार कोशिश करके देख लो, कोई हर्ज़ नहीं।' एक बार सुबह के समय इसे ले लिया गया सारा दिन तकलीफ़ न उठी। रात को थोड़ा दर्द महसूस हुआ। दो रोज़ बाहर नहीं गए, तीसरे रोज़ मल आने पर तबियत ठीक होती गई। अब जिस समय ज़रा भी तकलीफ़ देखते हैं एक चम्मच ले लेते हैं। तकलीफ़ दूर हो जाती है। जगह–ब–जगह हवा पानी का असर होता है। प्रकृति आश्चर्यजनक बनी हुई है। सब समय–समय की बात है।"

सर्दियों के दिन थे, श्री महाराज जी को सारा दिन आराम करने का मौका नहीं मिला। चार बजे प्रेमी सत्संग के लिए आने शुरू हो गए। सत्संग समाप्ति पर एक प्रेमी ने पूछाः–

प्रश्न – महाराज जी, दान करते समय किस तरह देखा जाए कि जिसको दान दिया जा रहा है वह पात्र है या कुपात्र?

उत्तर – जिस तरह तुमने बड़ी मेहनत से धन प्राप्त किया है उसे सत् श्रद्धा से और प्रेम से मुस्तहक (अधिकारी) जीवों तक ही पहुंचाना ठीक है। बीज अच्छा हो और खेत भी अच्छा मिल जाए, उसकी जुताई भी ठीक की जाए फिर बीज डालने से ज़रूर अच्छा नतीजा निकलता है। दान करते वक्त जांच कर लेनी चाहिए कि लेने वाला कुपात्र है या पात्र। कोशिश करने पर पात्र मिल ही जाता है, मगर दान करते वक्त मन में किसी प्रकार की आशा नहीं रखनी चाहिए। निष्काम दान–पुण्य करना ठीक रहता है। दान ऐसी जगह करो जहां तुम्हारे दिए हुए का कोई बदला न चुका सके। मन में ऐसा कभी भी विचार पैदा न होने दो कि मैं बड़ा दानी हूं, सेवादार हूं, यह लेने वाला है। दान देकर प्रभु समर्पण कर दो–ईश्वर तेरी आज्ञा पूर्ण हुई। जो दान मान–बड़ाई की ख़ातिर दिया

जाता है, भाटों, नाचने-गाने वालों को दिया जाता है यह फ़ज़ूल खर्ची है। ऐसा दान सात्विक नहीं होता। श्रेष्ठ दान सतोगुणी, सदाचारी सत्गुरु आचार्य की सेवा में सर्फ़ (खर्च) किया होता है। अगर किसी लंगड़े-लूल्हे को दो पैसे दे दिये, उसकी कोई ख़ास महानता नहीं। भूखे, प्यासे, नंगे और कई तरह के तंग-व-दस्त (बहुत ग़रीब) सफेद-पोश जीवों की तन, मन, धन से सेवा बहुत कल्याणकारी है। अगर पैसा नकद नहीं देना चाहते तो उसे रोटी, कपड़ा लेकर दे दो। दूसरे का चित्त प्रसन्न करना ही परम भक्ति है।

प्रश्न – महाराज जी, सत्-असत् का किस तरह विचार किया जावे?

उत्तर – दृष्टा-दृश्य जिस कदर भास रहा है इस सारे प्रपंच को क्षणभंगुर विचार करो, क्योंकि यह नाना प्रकार का नाम रूप जगत जो देखने में आ रहा है हर घड़ी हर लम्ह बदल रहा है। यह सब असत् है। वक्त पाकर यह सब नाश को प्राप्त हो जाता है। जो चीज़ें दूसरे के आधार पर हैं सब असत् हैं। जो चीज़ स्वभाव सहित है वह असत है। यह पांच-तत्त्व की प्रकृति जो गुण सहित है, यह ही माया का रूप है, सदा बदलती रहती है इस वास्ते यह सब असत् हैं। यह दृश्यमान संसार तृखावंत और अशान्त स्वरूप है। अज्ञानता के कारण जीव असत् को सत् मान रहा है और दिन-रात भटक रहा है। इसे कोई तसल्ली का रास्ता दिखाई नहीं देता। प्रेमी, तुम्हें सत् की खोज की क्या पड़ी है? तुम्हारी सेहत अच्छी है, धन-दौलत में कमी दिखाई नहीं देती। स्त्री, बच्चे और भी सुख भोग मौजूद हों तो वह सत् की तलाश नहीं कर सकता। पहले सबको तिलांजली दो तब सत् का पता लगेगा। सत् को ईसा ने समझा, मंसूर ने जाना, मोहम्मद ने पाया, मोरध्वज, राम, हरीशचन्द्र, गुरु गोबिन्द सिंह, मीरा आदि सत्पुरुषों, गुरु अवतारों ने समझा। इस देश में अनगिनत सत् के मुतलाशी (जिज्ञासु) हुए हैं। यह जितने वेद, शास्त्र, ग्रंथ आदि आज के भंडार देखते हो सब सतवादी पुरुषों की रचना है।

सत् का मंडन पाखंड खंडन, सत् पुरुष जग आए।
पाप विखाद का नाश करन ते, केते दु:ख उठाए।।

सत् की खोज करने वालों के संबंध में जितना कुछ सुना, समझा जावे उतना ही थोड़ा है। उद्यम धारण करो। सत् को सिमरो तो सत् को पा सकोगे। आम जीवों की तरह पच-पच कर मत मरो। संसारी सुखों की प्राप्ति के लिए जीव चिरकाल से यत्न करते चले आ रहे हैं, किसी को आज तक तसल्ली नहीं हुई। हाय-हाय करके ख़त्म हो गए, उनके नामो-निशान मिट गए। जिन्होंने सच्चाई का रास्ता धारण किया वह ख़ुद अमर हो गए और आने वालों के लिए रास्ता बना गए। आपको चाहिए कि गुणी पुरुषों का जीवन विचार करके अपने आपको सच्चाई के मार्ग पर दृढ़ करो। शारीरिक सुखों से ऊपर उठो। इस समय तुमको मौका मिला है इस का लाभ उठाओ, फिर शायद आने वाले समय में तेरे रास्ते में कई रुकावटें आ जाएं। आज बहुत सुखी है कल दु:ख भी आ सकते हैं, कभी एक जैसा समय नहीं रहता। मन के मते मत चलो। सतपुरुषों की मत लेकर चलने में परम सुख रहता है।

धर्म के मार्ग पर चलने वालों को बड़े–बड़े कष्टों को बर्दाश्त करना पड़ता है। आजकल के जीवन में ज़रा भी मुख़ालिफ़ (उल्टी) हवा बर्दाश्त नहीं हो सकती। समय निकाला करो, इधर कुछ दिन सत्संग होता रहेगा, अच्छी तरह से सत् के बारे में सुनकर समझ लिया करो। एक दिन सारा पता लग जावेगा।

प्रश्न – महाराज जी, आजकल की संसारी चहल–पहल किसी तरफ चलने नहीं दे रही, अनेक तरह के रंग–तमाशे, सजावट–बनावट बढ़ती जा रही है।

उत्तर – अभी तो तुम लोग सब कुछ लुटा–पुटा कर आए हो। इस तबदीली से कुछ सबक सीखो, न कि अपने आपको इस घोर अन्धकार में ले जाओ। रोज़ाना इधर से यह ही कहा जा रहा है अपना जीवन सादा और सरल बनाओ। कुदरती जीवन वाले बड़े सुखी रहते हैं। अनेक तरह के फ़िज़ूल नशे वग़ैरा खान–पान जो लगा रखे हैं, उनसे अति परहेज़ करो। सिनेमा, थिएटर, राग–रंगों की तरफ मत जाओ। जब–तक इन चीज़ों से परहेज़ नहीं करोगे तब–तक कभी भी बुद्धि शुद्ध नहीं हो सकती। अपने मन को दुनिया वाले खुद चंचल कर रहे हैं। उधर पाकिस्तान की तरफ लोगों के स्वभाव कुछ अच्छे बने हुए थे अब वह सब बदलते हुए दिखाई दे रहे हैं। हया शर्म कोई नहीं रही। किसी की बुद्धि में सादगी वाले विचार नहीं रहे, बाकी तप–जप तो बड़े दूर की बात है। अच्छे बड़े बुजुर्गों के पास जाकर बैठो। उनसे कुछ न कुछ शिक्षा प्राप्त करो। जब महापुरुषों के विचार सुनने वाले बनोगे तब फिर किसी समय अमल भी करने लगोगे। जब किसी बाग में जाते हो तो तुम चाहो न चाहो सुगन्ध आएगी ही। मन को सेवा, सत्संग में लगाने से तेरे अन्दर से कपट, छल, फ़रेब, झूठ अपने आप दूर होने लगेंगे और इस तरह अनेक तरह के कष्ट और मुसीबतों से बच जावेगा। हर एक अपना मित्र और दुश्मन आप है। जो मनमानी दिन–रात कर रहा है, जिसके अन्दर सत् विश्वास नहीं और न ही ईश्वर प्रेम है, वह ग़लत काम करेगा ही। यही अपना स्वयं दुश्मन बनना है। तुम्हारी कल्याण कोई दूसरा करने वाला नहीं। तुमने अपनी कल्याण आप करनी है। अपनी ही खराब आदतें दु:ख का रूप धारण करती हैं। सत्संग और सत् सिमरण से जीव मजबूत और पक्के इरादे वाला बन सकता है और अपनी बड़ी–बड़ी आदतों पर काबू पा सकता है, जिससे अपनी ग़लती को ग़लती समझने की बुद्धि आ जावेगी। तब ही उनसे नफ़रत भी करोगे। ईश्वर ही इस समय सत् भाव पैदा करे तब ही कल्याण वाला रास्ता समझ में आ सकेगा।

एक रोज महन्त रतनदास जी का पत्र आया जिसमें उन्होंने पूछा कि प्याज लहसुन के इस्तेमाल से हिन्दुस्तान के लोग और कुछ पंजाब के रहने वाले भी बहुत परहेज़ करते हैं और कई महापुरुषों ने ग्रन्थों में भी इसका सेवन बन्द किया हुआ है। क्या आप इसके गुण–दोषों पर रोशनी डालेंगे और क्या इनका इस्तेमाल ठीक है या नहीं? अर्से से इसे छोड़ रखा था, फिर इधर आकर शुरू हो गया है मगर मन के अन्दर संशय बना रहता है।

श्री महाराज जी ने आंखें बन्द कर लीं और अन्तर्ध्यान हो गए। कुछ देर बाद फरमाया:– यह जवाब दे दो, "जिन देशों में प्याज, लहसुन नहीं होता या कई सम्प्रदाय मसलन जैन धर्म वाले

या धर्म–मर्यादा वाले जो इसका इस्तेमाल नहीं करते क्या उनके अन्दर तमोगुण नहीं होता, क्या उनकी विषय–वासना कम हो चुकी है? ज़रा विचार करने पर पता लगेगा कि इस ख़ुराक से मन के अशुद्ध होने का कोई संबंध नहीं है। मन की चंचलता शब्द की अनुभवता से मिट सकती है। लहसुन, प्याज खाओ इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। किसी भी ख़ुराक या चीज़ की दीर्घ वासना मन को चंचल करती है। दूध, घी का ज़्यादा इस्तेमाल भी रजोगुण, तमोगुण को बढ़ाने वाला है, हालांकि यह सात्विक ख़ुराक मानी गई है। मर्यादा के अन्दर अगर किसी वस्तु को ग्रहण करोगे चित्त के अन्दर धीरज आवेगा। स्वाद–वश कोई चीज़ ग्रहण करोगे तो वह अपना उल्टा असर करेगी। मुनश्यात (नशे वाली वस्तु) चाहे थोड़ी मात्रा में भी ली जावेगी वह अपना रजोगुणी, तमोगुणी असर पैदा करेगी। थोड़ा सा विचार लिखा जाता है अच्छी तरह समझ लें।

इसके बाद भगत जी कुछ नोट करने लगे। श्री महाराज जी ने देख लिया और फरमायाः– प्रेमी! इस तरह कहाँ तक लिखते जाओगे? ज़्यादा लिखना–पढ़ना कुछ फ़ायदा नहीं देता। अमल दो अक्षरों पर करना ही मुश्किल है। प्रेमियों की जो मर्ज़ी है लिखें। समता प्रकाश व समता विलास जिन्हें तुमने तहरीर (लिखा) किया है, दुनियादार इन्हें ही पढ़ें और विचार करें, यह ही काफी है। बहुत किताबें अमल की तरफ नहीं जाने देंगी।

"पढ़ना अक्षर एक का और सब झक्खड़ छाड।' इस तरह का लिखा–पढ़ा कोई मायने नहीं रखता। कृष्ण की गीता के सात सौ श्लोक जो महत्त्व रखते हैं उनके लाखों और वचन जो लिखने वालों ने लिखे हैं वह वज़न नहीं रखते। देखो, जो महानता मोहम्मद के कुरान की है वह उनके यारों की तहरीरात (लेखों) की नहीं हो सकती। उनके बाद फ़कीर, वली–अल्लाह लोग इस्लाम में हो चुके हैं उन्होंने भी श्रेष्ठता कुरान को ही दी है। जो कौम या जमात अपने गुरु के वचनों में मुकहम (श्रद्धा) रखती है उसकी ज़्यादा इज़्ज़त होती है। गुरु वचनों के मुकाबले में वचन घड़ने वाले कुछ मायने नहीं रखते। फ़कीरों की आवाज़ ही आवाज़ होती है उसके अन्दर ज्ञान, विचार, विवेक, वैराग्य अनुराग, योग प्रगट करने वाले वचन बिना सोचे–समझे बोले हुए होते हैं। लाख बार भी एक वचन को पढ़ो चित्त उकताएगा नहीं। सुखमनी साहिब का रोज़ाना वे लोग पाठ करते हैं, नए से नए मतलब पाते हैं। गीता का भी यही हाल है। और भी सत्पुरुषों की उच्चारण की हुई वाणियां चित्त के कपाट खोलने वाली होती हैं। नसर (गद्य) जो लिखी जाती है उसमें कई अक्षर मिलाए जा सकते हैं मगर वाणी में कोई अक्षर नहीं मिल सकता। हर बुद्धिमान अपनी सात्विक बुद्धि से इसको आला से आला तरीके से बख़ान कर सकता है। कई लोग इस वाणी की तरह शेयर यानि वाणी बनाएंगे मगर उसमें वह बात नहीं होगी जो फ़कीरों की वाणी में है। गीता के लाखों मतलब अपने–अपने ढंग से लोगों ने निकाल रखे हैं मगर वह कृष्ण नहीं बन सकते। समतावादियों को चाहिए इन दो ग्रंथों का पढ़ना– पढ़ाना मुख्य रखें और विचार करें और साथ ही अमली ज़िन्दगी पेश करें चाहे वह संसारी हों या विरक्ति। जब किसी को रंग लगेगा आप ही नज़र आ जावेगा। यह ग्रन्थ ऐसे हैं किसी बनावट– दिखावट भेषाचार को चलने नहीं देंगे। यह अपने आप में सम्पूर्ण हैं। कोई ऐसा विचार नहीं रह गया जिस पर

हर पहलू से रोशनी डाली न गई हो। यह मन–घड़ंत नहीं जो इस मेरे मालिक ने बुलवाया है वह तुम्हारे सामने रख दिया गया। यह वाक्य ही आने वाली जनता को अच्छी तरह जता सकेंगे कि सत्–असत् क्या है? सब मज़हबों को मिलाने वाले वचन हैं। तुम केवल प्रेम से पढ़कर सुनाते जाओ दुनिया वाले निर्णय खुद करते फिरेंगे।"

सत्संग चार बजे से पांच बजे तक हुआ। प्रेमी काफी बैठे हुए थे। श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमियों! बार–बार आने से बाग वाले मुक्त राम यह न समझ ले कि पंजाबी कब्ज़ा ही न कर लें। उसने ठाकुर याद राम सिंह की वज़ह से यह जगह दी है, वैसे उसे इनकी वाक्फ़ियत नहीं है। इस तरह बार–बार आना शक पैदा करता है।" बाद में ठाकुर जी द्वारा पता लगा कि वाकई उसके अन्दर ऐसा शक पैदा हो गया था। पिछली दफ़ा महाराज जी की सेहत खराब थी, उसके अन्दर ऐसा शक पैदा हो गया था कि ढाई माह से आप बाग में ठहरे हुए हैं कहीं कब्जा न कर लें।

दूसरी सुबह वह यह कहने के लिए कमरा खाली करो घर से चल पड़ा। जब बाग में पहुंचा तो देखा कि कमरा खाली पड़ा हुआ है। सत्पुरुष अन्तर्यामी होते हैं, इन्होंने उसके विचार को भाँपकर पहले ही रवानगी की आज्ञा दे दी और चल पड़े थे। ठाकुर जी ने उस वक्त, जब सत्पुरुष ने शक पैदा होने के बारे में फरमाया, तो अर्ज़ की:– "वाकई ऐसा शक ठाकुर मुक्त राम के अन्दर पैदा हो गया था। महाराज जी, आप अन्तर्यामी हैं। जब उसने हमारे साथ इन वाक्यात का ज़िक्र किया तो हमने उसे तसल्ली दी, अब उनको पूरी तसल्ली है।"

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "संसारियों का चित्त पत्ते पर पानी की तरह होता है। दुनिया शक का सागर है, उनका कसूर नहीं। इधर भी स्वाभाविक मुख से वचन निकल गया।"

इस जगह प्रेमी मुकन्द लाल ने हाज़िर होकर अर्ज़ की:– मुझ पर भी कृपा करें और होडल तशरीफ़ ले चलें। जगह का प्रबन्ध कर लिया गया है। कस्बा से बाहर थोड़ी दूरी पर अमरूदों का बाग है, बड़ी एकान्त जगह है।

श्री महाराज जी ने फरमाया:– "प्रेमी! अभी क्या कहा जाए, हल्द्वानी, बरेली के प्रेमी इन्तज़ार कर रहे हैं वापसी पर देखा जावेगा। घबराओ नहीं, अभी इधर ही हैं। अगले हफ़्ते पुख़्ता प्रोग्राम के मुतालिक पता लगेगा। चिंता मत करो, तुम्हारी वज़ह से ही नई से नई जगह आना–जाना बन रहा है। बड़ी अच्छी बात है कोई प्यासा अपनी प्यास बुझा ले। फिर एक प्रेमी ने पूछा:–

प्रश्न – महाराज जी, निर्वाण अवस्था कितने अर्से में प्राप्त हो सकती है?

उत्तर – प्रेमी, यह अवस्था धरती के किसी कोने में नहीं पड़ी हुई, न आसमान पर लटक रही है। जिस समय बुद्धि को निर्विकार कर लोगे यानि जिस वक्त इन्द्रियों के भोगों और संकल्पों से रहित हो जावोगे निर्वाण अवस्था प्राप्त हो जावेगी। जब बुद्धि निष्काम चित्त से सत् स्वरूप की अनुभवता के लिए अन्तर्मुखी अभ्यास करते–करते शरीर को बिल्कुल भूल जावेगी, शरीर के नाम रूप की याद तीनों अवस्थाओं में न रहेगी, तब बुद्धि अपने आपको विकारों से निर्विकार करके निराधार होकर स्वयं निर्वाण स्वरूप हो जाती है।

जैसा था तैसा था, सरब अन्दर अंहकार भयो नास।
सल्ले सललसल समाया, नित सरूप भयो परगास।।
पूरन जुगती योग से, प्रगटयो सत सरूप निर्वान।
'मंगत' कृपा साध से, भयो रूप भगवान।।

प्रेमी जी, अमल बड़ी चीज़ है, अनपढ़ भी आलिमों से आगे बढ़ जाते हैं। जितने भी सत्पुरुष संसार में हुए हैं कोई लम्बे-चौड़े पढ़े हुए न थे। करतार का इल्म भी पढ़ लिया जावे और संसारी इल्म भी साथ हो तो फिर सोने पर सुहागा समझो। विवेकानन्द, राम तीर्थ की तरह धर्म का स्वरूप दुनिया के दूसरे कोनों तक पहुंचा सकते हो। जिन सत्पुरुषों ने वेद-शास्त्र प्रगट किये हैं कौन से कालेज के विद्यार्थी थे? सब सत् स्वरूप की महिमा है। इस वक्त दुनिया में बड़े-बड़े फ़िलासफ़र पढ़े-लिखे मौजूद हैं लेकिन विवेकानन्द कोई न बन सका। गहरे से गहरा मसला सत्पुरुष एक लम्ह में हल कर देते हैं चार लफ़्ज़ों में ऐसी सार निकाल कर रख देते हैं कि जिसके आगे कोई दलील नहीं ठहर सकती। फ़क़ीरों का जीवन निर्वाण स्वरूप होता है। उन्हें न भूख है, न प्यास है, न नींद, चौसठ घड़ी आनन्द में मख़मूर रहते हैं। तुम लोग खुशनसीब हो नज़दीक बैठने का मौका मिला है। चालाकी चतुराई छोड़कर निर्मान होकर चलो, किसी समय ख़ैर पड़ जाएगी। प्रभु आज्ञा अटल है। समता सन्देश सामने है, अभी तत्त्व को जानने की कोशिश करो। साथ-साथ परस्पर प्रेम बढ़ाकर सेवा, सत्संग, सत् सिमरण महागुणों को धारण करो। ज्यों-ज्यों सत्संग की शक्ति बढ़ती है होनहार प्रभावशाली शक्तियां पैदा होती रहती हैं। मौज़ूदा ज़माना घोर नास्तिकवाद की तरफ बढ़ रहा है। नुमायशी जीवन आस्तिकवादियों की राह में मुश्कलात पैदा कर देता है, इस वास्ते तुम प्रेमियों को चाहिए कि सत् विश्वास को दृढ़ करो। जो सतयुगी जीव अपने आपको गुरु परायण होकर सतवादी बनाता है वह ही सत् स्वरूप को अनुभव कर सकता है। ऐसा सत् का अनुयाई हज़ारों में एक ही, लाखों जीवों का आसरा बन जाता है। प्रशाद लो और जाओ, कुछ अमल भी करो।

प्रेमी नमस्कार करके विदा हुए। फिर एक प्रेमी ने पूछा:

प्रश्न – महाराज जी, निर्वाण अवस्था आसानी से किस तरह प्राप्त हो सकती है?

उत्तर – जिस तरह बुद्ध ने मन से युद्ध किया था वैसे ही त्याग, वैराग्य सहित जब यत्न करोगे तब मंज़िले मकसूद दूर नहीं रहेगी। शौक और सिदक पैदा करो, डावांडोल चित्त खान्डे की धार पर कैसे चल सकता है? बुद्ध की कुर्बानी देखो। आज का जीव चार रोज़ फाका नहीं कर सकता। कितनी कठिन तपस्या की। फाकों से मूर्छित होकर जब शरीर गिर पड़ा तो होश न रही। जब ज़रा होश आई तो विचारा, अभी शान्ति नहीं आई। फिर थोड़ी ख़ुराक ग्रहण करके पक्का इरादा करके बड़ पेड़ के नीचे दृढ़ आसन लगाकर ऐसा प्रण किया कि जब-तक सच्ची शान्ति नहीं मिलती यहां से नहीं हिलूंगा। तप करके चित्त निर्मल हो चुका था, इस दृढ़ता ने चन्द दिनों में काम पूरा कर दिया। देश और भेष जिज्ञासु को ले बैठते हैं। प्रभु-परायणता में मर मिटो। सिवाए ईश्वर के किसी पर भी

उम्मीद न रखो और सिवाए प्रभु के किसी से न डरो। जो प्रेमी तन्हाई से भागता है और संसारियों से नाता जोड़ लेता है उसका ख़ैरियत से रहना मुश्किल है। प्रभु के प्यारों पर नाना प्रकार की तकलीफ़ें आईं, सबको उसकी रज़ा में देखा। दो आदतें बहुत खराब करती हैं एक बहुत और बेहूदा खाना, दूसरा बहुत सोना। दो स्वभाव भी मूर्खताई के हैं और शर्मिन्दा करने वाले हैं, एक बग़ैर किसी अश्चर्ज बात देखने, सुनने के हँस पड़ना और दूसरे लोगों को नसीहत करना और खुद आमिल न होना। इन्हीं कारणों से कामयाबी दूर रहती है।

करीब दो बजे प्रेमी ओम शिंगारी दो अंग्रेज अफ़सरों सहित सेवा में हाज़िर हुए। नमस्कार करके बैठ गए। प्रेमी देवराज गुप्ता भी मौज़ूद थे। प्रेमी शिंगारी जी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! यह मेरे अफ़सर हैं। धार्मिक विचार के हैं, दर्शनों का शौक हुआ है इसलिए मैं इन्हें साथ लाया हूं।" श्री महाराज जी ने फरमाया:- "कोई विचार हो तो करें। रूह के बारे में कुछ विचार देवराज जी के माध्यम से पूछे गये, जिनका जवाब महाराज जी ने दिया। उसे देवराज जी ने उन्हें समझा दिया। फिर उन्होंने पूछा:- क्या ईसा मसीह हिन्दुस्तान में आया था? श्री महाराज जी ने फरमाया:- "हाँ, वह हिमालय के रास्ते से आया था। राज़-हकीकत पाकर इन जंगलों में तप उसने किया।" फिर उन्हें प्रशाद दिया गया और वह चले गए। फिर एक प्रेमी ने अर्ज़ की:-

प्रश्न – अंग्रेज लोग मांसाहारी होते हैं, वे ऐसे प्रश्नों को पूछकर क्या कर लेते हैं?

उत्तर – प्रेमी, तुम लोगों से इनकी बुद्धि तीव्र है। जब कोई बात इनकी समझ में बैठ जाती है उसकी तह तक पहुंचते हैं। मांसाहारी लोगों की क्या हिन्दुस्तान में कमी है? संत, फ़कीर, अवतार कह-कह कर थक गए मगर दिन व दिन राक्षसी स्वभाव बढ़ता जा रहा है। यह तमोगुणी वृत्ति समय आने पर जो विलक्षण कर्म कराएगी वह सामने आ जाएगा। यह लोग ऐश व इशरत से तंग आ रहे हैं, तुम लोग इनकी नकल कर रहे हो और इन्हें धारण कर रहे हो। गो इस वक्त ग़रीबी का रोला डाल रहे हो मगर फिर भी रंग-ढंग बदलता जा रहा है। जब अमीरी आई फिर देखना क्या रंग बदलता है। प्रेमी, दूसरों के नुक्स निकालने वाली वृत्ति छोड़ो। अब यह लोग इस जगह की हकूमत छोड़ चुके हैं मगर फिर भी शान उसी तरह रखी हुई है। कुछ असूल वाले लोग हैं, कैसे खामोशी से हिन्दुस्तान छोड़ दिया है? जैसी हालत होनी चाहिए थी वैसी नहीं करवाई। अब मिलकर रहेंगे फ़ायदा उठाते रहेंगे।

प्रश्न – महाराज जी, अहिंसा का क्या स्वरूप है?

उत्तर – सब जीवों के साथ प्रेम रखना अहिंसा है। अपने अन्दर भिन्न भेद न रखना, ऐसा विचार करना कि जैसा दुःख-सुख मुझे महसूस होता है वैसा ही दुःख-सुख सब जीवों को भी महसूस होता है इसलिए मैं किसी को दुःखी न करूं, ऐसा भाव रखने वाला अहिंसावादी है। राग-द्वेष, लोभ, मोह, अंहकार इन सब पर निग़ाह रखनी और इन्हें दूर करने वाला अहिंसावादी है।

प्रश्न – अहिंसावादी वृत्ति कैसे बनाई जावे?

उत्तर – अन्तर्विखे जो-जो दोष हैं उन पर हर समय दृष्टि रखो और उन्हें कभी उठने न दो और मर्यादा सहित जीवन बनाओ; ऐसे संयमी जीवन वाला ही अहिंसावादी बन जाता है। खोटी वृत्तियों

से दूर रहकर सत् भावों में मन को लगाओ। मीठे वचन बोलो, शरीर को सेवा, सत्संग में लगाओ, खुद–ब–खुद अहिंसावादी वृत्ति बन जावेगी।

प्रश्न – महाराज जी, साधना का क्या स्वरूप है?

उत्तर – पहले अपने रोज़ाना जीवन पर निग़ाह डालो। घर का सामान, शरीर पर धारण करने वाले कपड़े, बिस्तरा और भी तरह–तरह के जी बहलाने वाले सामान, रहने की जगह कितनी प्रकार की और कैसी हैं और यह सब कैसे बना रखे हैं इन सबके होते हुए संयम वाली ज़िन्दगी गुज़ारनी, साधना करनी यानि सत्नाम सिमरण करना कैसे बन सकता है? जब सब तरफ से मुंह मोड़कर सत् मार्ग में समय दोगे तब तपस्वी बन सकोगे। मन में यह दृढ़ता धारण कर लो कि चित्त की शुद्धि करके छोड़नी है। मन, तन, वचन का साधन करते–करते जो भी दुःख सहन करने पड़ें सहते जाना ही तप और साधना ही है। जो–जो बुरी आदतें पड़ी हुई हैं उनको दूर करना ही साधना है। मन, बुद्धि दीर्घ वासनाओं में फंसे हुए हैं। मन की वृत्तियों को संकुचित करना और आदतों को ठीक करते जाना, इन्हें बढ़ने न देना, यह इन्द्रियों की रसना, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध जो दुःख का मूल हैं इनको रोकना भी तप और साधना है। साधना के अनेक स्वरूप हैं। कहां तक इन्हें बयान किया जावे।

इलमो बस करें ओ यार, इलमो बस करें ओ यार
इको अलिफ़ तेरे दरकार।

प्रेमी, प्रभु परायण हो जाओ। सादगी, सत, सेवा, सत्संग और सत् सिमरण नियम धारण करो। निष्कामता, निर्मानता, उदासीनता और पर उपकार सब ही शुभ गुण विकारों से निर्विकार करने वाले हैं। पूछते नहीं रहना चाहिए, चलने की कोशिश करो। जीवन में जीव अपने पुत्र, स्त्री वग़ैरा का भार बड़ी खुशी–खुशी उठाए रखता है, मगर सत्पुरुषों व महात्माओं की सेवा निष्काम रूप में नहीं कर पाता। संगत किसकी करनी है इसका ख़ास ख़्याल रखो। अज्ञानियों की संगत का त्याग करके ज्ञानियों की संगत में समय दिया करो। सत्पुरुषों की संगत परम सुख की खान है। जब–तक सांसारिक जीवन में लगे हुए हो माता–पिता की सेवा, स्त्री, पुत्र आदि परिवार की संभाल करनी तुम्हारा फ़र्ज़ है। अपने फ़र्ज़ को ठीक तरह निभाना खुशी और सुख के देने वाले हैं। इससे बेचैनी नहीं बढ़ती। अच्छे उत्तम कर्मों की तरफ ले जाने वाली भावना बनाओ। दान–पुण्य करते रहो, धर्म परायण होने की कोशिश करो। अच्छे संकल्प बनाए रखना साधना में सहायक होते हैं। जब–तक संसार में शरीर चल रहा है इन बातों का ख़ास ख़्याल रखना चाहिए। ऐसा करने से गुरमुख जीव कल्याण को प्राप्त होते हैं। अगर कोई दुःखी जीव दिखाई दे पहले प्रेम से उसका हाल दरयाफ्त करो (पूछो), फिर उसकी दिलजोई करो। फिर तन–मन से जैसी भी सेवा हो सके करके उसका दुःख निवृत्त करो। यह हर एक जीव का फ़र्ज़ है। अगर किसी दुःखी का दुःख देखकर नज़र–अन्दाज कर जाते हो तो तुमने अहिंसावाद को समझा ही नहीं। सिर्फ़ बातों से दिल बहलाने वाले मत बनो असली अहिंसावादी बनो।

90. होडल में अमृत वर्षा

चूंकि विभिन्न स्थानों जैसे कि होडल, बरेली, हल्द्वानी के प्रेमी सेवा में दर्शन देने की प्रार्थना कर गए थे। इसलिए श्री महाराज जी ने पहले प्रोग्राम होडल जाने का बनाया और प्रेमी मुकन्द लाल को सूचित करने की आज्ञा फरमाई कि 14 दिसम्बर, 1951 को आप होडल पहुंचेंगे। सूचना मिलने पर प्रेमी मुकन्द लाल ने श्री महाराज जी के निवास का प्रबन्ध शहर से बाहर एक अमरूदों वाले बाग में किया हुआ था वहां ले जाकर ठहराया। यह जगह होडल कस्बे से करीब पांच मील की दूरी पर एक एकान्त जगह पर 'काजी का बागीचा' के नाम से प्रसिद्ध थी। सत्संग का समय शाम को मुकर्रर किया गया। होडल और इर्द–गिर्द से लोग चरणों में हाज़िर होकर सत्संग का लाभ उठाने और अपनी शंकायें निवारण करने लगे। इस इलाके में मुसलमान भी आबाद थे, वह भी ख़िदमत में हाज़िर होकर अपने शकूक (संशय) रफ़ा करते। इस जगह निवास के दौरान प्रेमी देवराज गुप्ता और हकीम राजा राम जी दत्त भी दिल्ली से दर्शनों के लिए हाज़िर हुए और सत्पुरुष से अपनी शंकाएं निवारण कीं। प्रेमी गुप्ता जी ने अर्ज़ की:– "महाराज जी! जिस तरह स्वामी राम कृष्ण परमहंस ने स्वामी विवेकानन्द के सिर पर हाथ रखकर दर्शन करवा दिये थे उस तरह आप भी दास पर कृपा करें।" श्री महाराज जी ने फरमाया:– "लाल जी! विवेकानन्द वाली श्रद्धा और विश्वास पैदा करो। तुमने क्या सस्ता सौदा समझ रखा है? असली राज़े– हकीकत समझा दिया गया है। मेहनत करो फल ज़रूर मिलेगा। फ़कीर भी देखते रहते हैं कौन कितना और कैसा चल रहा है"? जो असर सत्पुरुष के अमृत वचनों का उन पर हुआ वह गुप्ता जी ने इस तरह जाहिर किया हुआ है:

"दौरान क्याम दिल्ली 1948 और 1949 की सर्दियों में जब भी श्री महाराज जी दिल्ली तशरीफ़ लाते थे उनके चरणों में हाज़िर होता रहा। इस बार उनसे बहुत प्रभावित हुआ और चरणों में जगह हासिल करने की प्रार्थना की मगर गुरुदेव ने उसको मुलतवी करने की आज्ञा दी। फिर 1951 में दशहरा के मौके पर हकीम राजा राम जी ने जगाधरी जाकर गुरुदेव के दर्शन करने की तलकीन की मगर उस वक्त मेरा मन कुछ बेईमान हो रहा था क्योंकि दो साल पहले गुरुदेव ने मेरी प्रार्थना को टाल दिया था इससे मैं कुछ बिदक सा गया था। तो भी अपने दोस्त के इसरार पर जगाधरी पहुंचा। सुबह–सवेरे जब गुरुदेव बाहर से तशरीफ़ लाए मैंने नमस्कार किया तो उन्होंने कुछ ऐसे तरीके से मेरी तरफ देखा कि मेरे सारे शकूक रफ़ा हो गए। अब तो मैं उनके कदमों में था। मुझे जहां चाहते लगाते, चुनाँचे दूसरे रोज़ मुझे दीक्षा मिल गई।

"दीक्षा लेने के बाद उस रोज जगाधरी से दिल्ली वापस लौटना था। जब मैं जगाधरी रेलवे स्टेशन पर पहुंचा तो मैंने अपने आपमें एक अजीब कैफ़ियत (हालत) देखी। न जाने कौन सी ताकत बड़ी जबरदस्ती के साथ मुझे अपनी तरफ खींच रही थी। सांस की रफ़्तार मेरी मर्ज़ी के बग़ैर किसी और ही तरफ ले जा रही थी। गाड़ी में लेटा हुआ बहुत देर तक बेख़ुदी की हालत में गुम रहा। दिल्ली पहुंचने पर अपने नित्य कर्म में दो चार बार कुछ ऐसा तज़ुर्बा हुआ जो कि सिर्फ़ गुरु उपदेश का ही पोशीदा (गुप्त) राज़ है। बस फिर क्या था अब तो मुझे गुरुदेव की अज़मत (बड़ाई) और

रूहानी पहुंच पर ज़रा भी शक न रहा, मेरे मन पर एक अज़ीब शान्ति और सकून का तसल्लुत था।

"गुरुदेव इसके बाद जब तीसरी बार दिल्ली तशरीफ़ लाए तब तो अक्सर सत्संग का मौका मिलने लगा। उनके प्यार और शफ़कत (कृपा) ने मुझ पर पूरा-पूरा कब्जा जमा लिया। जब मैं अपने साथियों के साथ होडल मन्डी ज़िला गुड़गांव में उनके दर्शन के लिए गया वहां तो साकी ने सागर ही उढ़ेल दिए। उस मुलाकात का ज़िक्र तो बिलकुल अलहदा होना चाहिए। यहां मैंने गुरुदेव को माता-पिता की शक्ल में देखा। ऐसा मालूम होता था वह मुझे उंगली पकड़कर रूहानियत के मार्ग पर चलाना चाहते हैं। जिस शक्स ने कई वर्ष से अनाज का त्याग कर दिया हो, जो सिर्फ़ एक वक्त थोड़ा सा दूध पीकर ज़िन्दगी बसर कर रहा हो, जो पिछली चौथाई सदी से कभी गहरी नींद न सोया हो, जिसने ज़िन्दगी के सब लवाज़मात को ज़हर समझ कर उनसे मुंह मोड़ लिया हो; ऐसा तारक (त्यागी) योगी अपने शिष्यों के खान-पान में सिर्फ़ दिलचस्पी ही न ले बल्कि इसरार (ज़िद) करके उन्हें प्रेम से और मोहब्बत से खिलाए, इसका मुझे अनुमान भी न था। मेरी आंखों में मोहब्बत के आंसू आ गए। गुरुदेव की रात अपनी होती है मगर दिन संगत का होता है। वह थोड़े से दूध के सहारे सूरज उदय होने से शाम तक संगत में बैठे वार्तालाप करते हैं। उन्हें मैंने कभी थकावट या परेशानी की हालत में नहीं देखा। वह हमेशा एकरस और अचल रहते हैं। सुख और दुःख इनको छू तक नहीं सकते। उनका कुछ अपना निजि जीवन नहीं है। लोगों के सामने वह अपना आसन जमाए हर वक्त उनके इम्तिहान में पूरे उतरते हैं। उनके दिनभर का प्रोग्राम वाकई हैरान कर देने वाला है। आम इन्सानों की कमज़ोरियां उनके पास फटक नहीं सकतीं। उनको कोई दुनिया का लालच मरग़ूब (खींचना) नहीं कर सकता। वह हिमालय की तरह खड़े हैं। उनकी वाणी उनकी अज़मत की शाहद (गवाह) है उनके वचन उनके तज़ुर्बे के गवाह हैं।

"ऐसे महापुरुष का धरती पर आना धरती के लिए बाइसे फ़खर है। वह भारत की आत्मा हैं। ऐसे सत्गुरु को बार-बार नमस्कार है।"

91. श्री मुखवाक अमृत

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि दृष्यमान संसार की विनाश का निश्चय होना यह एक अधिक उत्तम जीवन की अवस्था है मगर इससे ज़्यादा उत्तम अपने शरीर की विनाश को दृढ़ प्रतीत करना है। अपने शरीर की दृढ़ विनाश को निश्चय करके बुद्धि सत् परायण होने का यत्न करती है। तमाम नाम रूप संसार जो प्रतीत हो रहा है उसकी विनाश को निश्चय करके तमाम दुःखदाई और सुखदाई पदार्थों की प्राप्ति के ग्रहण और त्याग की कामना से पवित्र होना यानि असंग होना ही परम स्थिति है। इस वास्ते हर वक्त शरीर की विनाश का निश्चय करके तमाम शारीरिक भोगों से निर्बन्ध होकर मन, बुद्धि का निश्चल ध्यान एक नाम में दृढ़ करना चाहिए। ऐसी दृढ़ता से ही निःसंकल्प स्थिति प्राप्त होती है यानि बुद्धि कर्ता, कर्म और कर्मफल द्वन्द्व से निर्मल हो करके केवल सत् सरूप में निश्चल होती है। शरीर की कामना का अधिक भयानक रोग इस बुद्धि को लगा हुआ है। संसार की

विनाश को प्रतीत करने पर भी शारीरिक भोगों की आसक्ति से निर्बन्धन नहीं हो सकती है यानि शरीर की विनाश को निश्चय नहीं करती है और न ही भोग वासना से असंग होने का यत्न करती है। यह मोह रूपी जाल बड़ा दुस्तर है, इस वास्ते हर वक्त शरीर की विनाश को निश्चय करके तमाम इन्द्रियों के भोगों की आसक्ति से निर्बन्धन होकर एक नाम के परायण अचल ध्यान से होना ही इस दुर्मत जाल से छुटकारा देने वाला और जीवन सरूप परम तत्त्व में नेहचलता की प्राप्ति के देने वाला सत् यत्न है यानि तमाम शारीरिक सुखों से उपरस होकर केवल नाम चिन्तन में बुद्धि को बार-बार एकाग्र करके तमाम शारीरिक कर्मों के द्वन्द्व रूपी फल दुःख-सुख को प्रभु आज्ञा में समर्पण करके होना न होना से अचिन्त हो करके नित आनन्द अवनाशी शब्द में अन्तर में निहचल होना ही सत् स्थिति है और यही योग आरूढ़ अवस्था है। सो प्रेमी जी, इस भयानक सृष्टि के जाल से छुटकारा हासिल करने की ख़ातिर केवल एक नाम का चिन्तन करना और तमाम शारीरिक सुख-दुःख को प्रभु आज्ञा में समर्पण करते हुए अपने कर्तापन को त्याग करके अपने आपको निर्मान, निष्काम और निर्मोह अवस्था में दृढ़ करके निहचल होना ही परम स्थिति है। इस वास्ते तवज्जो को ज़्यादा मुन्तशर करने की बजाए अधिक से अधिक सत् यत्न करके नाम में दृढ़ करना चाहिए क्योंकि नाम की दृढ़ता से सत् विश्वास और सत् अनुराग की दृढ़ता होती है जो इस विनाशी शरीर की कामना से पवित्रता देने वाला है। जिस वक्त मानसिक धारा गहरे विचारों की तरफ जाए तो सर्व मिथ्या निश्चय दृढ़ करके सत्नाम में अखंड तवज्जो लगाना चाहिए। ऐसी अखंड जाप की दृढ़ता से बुद्धि नेहचलता को प्राप्त करके सत् शब्द अवनाशी तत्त्व को आन्तरिक में बोध करती है जो इसका अपना निज सरूप है। ज़्यादा सोचने और विचारने से ज़्यादा नाम में सुरति को दृढ़ करना परम कल्याणकारी है।

इस वास्ते अभ्यास और वैराग्य की दृढ़ता को धारण करके तमाम मिथ्याकार संसार से असोच और अबोध होने का यत्न करें। अपने सत् यत्न से तमाम मानसिक वृत्तियों का निरोध सहज हो जाता है और बुद्धि शारीरिक कामना से पवित्र हो करके यानि दस इन्द्रियों की आसक्ति से निर्बन्धन हो करके नाम परायणता में निश्चल होती है और जब आत्मा को कर्ता-हर्ता जान करके बुद्धि तमाम कर्मों के फल दुःख व सुख से असंग होती है यानि लमह-ब-लमह तमाम शारीरिक कर्म प्रभु आज्ञा में समर्पण करती है तब राग-द्वेष से निर्मल हो करके अवनाशी शब्द सम-पद में स्थित होती है। इसी भावना को ही कर्म योग कहते हैं यानि कर्मों के द्वन्द्व फल का त्याग करना प्रभु आज्ञा में। जब बुद्धि आत्मा को अन्तर में बोध करके तमाम शारीरिक वासना से निर्मल हो जाती है तब अपने आपको साक्षी सरूप आत्मा में अकर्ता, अकर्म, अखंड, निर्वास समझ करके स्थित होती है, इसी स्थिति को ज्ञान योग कहते हैं। कर्मयोग और ज्ञान योग का सरूप एक ही है। जब-तक देह अभिमान और देह कामना में बुद्धि लीन रहती है तब-तक कर्म योग में प्रभु आज्ञा में सर्व कर्मफल का निश्चय ही कल्याण के देने वाला है।

इसी को भक्ति योग भी कहते है।, अच्छी तरह विचार कर लेवें और नित सत् यत्न से अपने मानसिक दोषों से पवित्र होकर अपने अखंड शान्तमयी निज सरूप को बोध करें। प्रेमी जी, संसार

की नापायदारी (नश्वरता) को समझने से केवल सत शान्ति नहीं प्राप्त होती है, कुछ समय के बाद यह भावना संसारी मोह की अधिकता से नष्ट हो जाती है। इस वास्ते संसार की नापायदारी को समझते हुए निज सरूप की प्राप्ति का अधिक यत्न करना असली कल्याण के देने वाला है यानि नाम सिमरण करके अभ्यास में दृढ़ता होनी चाहिए और अपने आपको बैठने का आदी बनावें। बैठने से ज़्यादा एकाग्रता और निहचलता प्राप्त होती है, इस वास्ते आसन की दृढ़ता अधिक जरूरी है। वैसे हर हालत में चिन्तन करना कल्याणकारी है मगर विशेष रूप में बैठक से ही अभ्यास में ख़ास दृढ़ता प्राप्त होती है इस वास्ते सत् नियम अनुकूल ही यत्न करें तब ही निर्मल सफलता प्राप्त हो सकती है। ईश्वर सत् बुद्धि और गुरु वचन में सत् विश्वास देवें।

इस इलाके में मुसलमान भी आबाद हैं वह भी दर्शनों के लिए आते रहे और अपनी तसल्ली करते रहे। प्रेमी इब्राहीम ने सवालात पूछ कर अपनी तसल्ली करके सत् मार्ग यानी राहे–हक हासिल किया।

92. प्रेमी इब्राहीम के प्रश्न

प्रश्न – मेरे आका, पीर, मुर्शद, ख़िदमत में अर्ज़ है मेहरबानी फरमाकर यह बतलाकर तसल्ली देवें कि रूह तालब (इच्छुक) है वजूद की या वजूद (शरीर) तालब है रूह का?

उत्तर – प्रेमी जी, सवाल तुम्हारा बज़ा है। रूह खुद मुतलाशी शरीर है क्योंकि रूह के बग़ैर शरीर या वजूद का रहना नामुमकिन है शायद यह जवाब तुम्हारी समझ में न आया हो।

प्रश्न – स्वामी जी, आवागमन या तनासख का मसला समझ में नहीं आ रहा। आप इसे प्रेक्टीकल तमसील (उदाहरण) देकर समझावें।

उत्तर – तुम्हें इसे समझने की कोशिश नहीं करनी चाहिए, यह तुम्हारे अकीदे (विश्वास) के खिलाफ़ है।

प्रश्न – स्वामी जी, तख़्त–उल–सराए का क्या मतलब है?

उत्तर – पाताल लोक को कहते हैं।

प्रश्न – मुर्शद पाक, सुल्तान–उल–ज़कार क्या है? मौलवियों से पूछता रहता हूं वह अच्छी तरह से समझा नहीं सकते। यह सब कवाइद का ज़िक्र मुतबर्रिक किताबों में पढ़ा है।

उत्तर – प्रेमी, तुम समझ तो सब रखते हो मगर ऐसी बातें एक दम नहीं बतलाई जा सकतीं। अकेले में इस मसले पर किसी समय तसल्ली कर लेना, तुम्हारे पास ही हैं। राज़ की बातें आराम से समझनी चाहिएं ताकि तुम्हारे कल्ब (दिल) के अन्दर कोई शक–शुबा न रहने पाए, तभी किसी बात पर अमल कर सकोगे।

प्रश्न – मेरे मालिक, इजाज़त हो तो एक अर्ज़ करूं।

गुरुदेव – कहो।

प्रेमी - हुक्म हो तो सुबह ज़रा गांव हो आऊं ताकि पीछे का तकाज़ा बार-बार न याद आता रहे। दुनियादारी बुरी चीज़ है, घर से आए काफी दिन हो गए हैं। संगत ने इस टैन्ट की सफाई की ड्यूटी लगा रखी थी। जल्दी से जल्दी ख़िदमत में हाज़िर होकर राहते-अबदी हासिल करूंगा।

गुरुदेव - प्रेमी, जिस वक्त मर्ज़ी हो आ-जा सकते हो।

उसके जाने के बाद एक प्रेमी ने अर्ज़ की:- "महाराज जी! बड़ा विचारवान प्रेमी है।"

गुरुदेव - प्रेमियों की कशिश से खिंचे हुए इस जगह आना हुआ है, यहां कोई व्यौहार करने थोड़े आए हैं। इस जगह नातेदारी नहीं, जिसको ख़ुदा ने राह पर लाना होता है उसके वास्ते वह कई सबब बना देता है। यह दूसरा थट्टा ज़िला कैम्बलपुर का है इस तरफ की यह धरती भांग सरदयाई (ठंडाई) पीने वालों की है। मथुरा के इर्द-गिर्द चौरासी मील तक के प्रेमी अनोखी किस्म के लोग हैं। वैसे तो यह भगवान कृष्ण की जन्म भूमि है, साथ ही कंस बुद्धि रखने वाले भी बहुत हैं। इन बन्दों का ईश्वर ही मालिक है, कई तरह के मन घड़ंत ईश्वर बना रखे हैं। कृष्ण का उपदेश कोई नहीं मानता, रास-लीलाओं में ही वीरान हो रहे हैं। कैसी अन्धकार परस्ती छाई है? गीता के ज्ञान में ख़ालिस ख़ुदा परस्ती बयान की हुई है। जिस्म और जान का मसला ऐसे तरीके से बयान कर रखा है जिसकी मिसाल दुनिया की किसी मुतबर्रिक (धार्मिक) किताब में नहीं मिलती।

प्रश्न - महाराज जी, कृष्ण ने अपने आपको ख़ुदा करके मुख़ातब किया है, बार-बार ऐसा कहकर अर्जुन को समझाते रहे हैं।

उत्तर - प्रेमी जी, उसने अपने जिस्म को खुदा नहीं कहा बल्कि उसने ज़िन्दगी यानि जिस्म के अन्दर जो वाहद-ज़ात है उसे जान लिया हुआ था। वैसे किसी सत्पुरुष ने ठोक बजाकर अपने आपको ब्रह्म सरुप नहीं कहा। बार-बार आत्मा की तरफ़ उनका इशारा हुआ करता था। कृष्ण की हस्ती को कृष्ण बनकर ही जाना जा सकता है। आम संसारी जीव उनके मखफ़ी-इल्म (गुप्त-ज्ञान) को नहीं समझ सकते। कुफ़र से बालातर उनका कलाम था। वह परम राज योगी था। नाचने वाले रासधारियों ने और रूप दे रखा है। उसके हकीकी ज्ञान की तरफ निग़ाह डालो, ऐसा ज्ञान विचार संसार में गृहस्थी जीव तीन काल नहीं दे सकता।

प्रश्न - महाराज जी, कई और किस्म की पूजा, जन्तर-मन्तर, आराधना बन गई हैं।

उत्तर - यह तोहमात-परस्ती पीछे शुरू हो जाती है उन्होंने किसी जगह किसी देवी-देवता की पूजा आराधना नहीं दरसाई। पित्री पूजा, देवी पूजा, देवताओं को खुश करना, जादू, जन्तर-मन्तर, तावीज़ सब खाने के मसले पंडित, मौलवियों ने बना रखे हैं। गणपती, दुर्गा चण्डी, जिन्न-भूत आदि अनेक तरह के कामनावादी जीवों ने अपने-अपने देवी-देवता घड़ रखे हैं। यह अन्धेरा आज का नहीं। मोहम्मद से पहले मक्का में अलग-अलग कौमों और बिरादरी वालों ने अपने-अपने देवते थाप रखे हैं। कोई सही राह बतलाने वाला नहीं था और न कोई चलाने वाला था। जब मोहम्मद ने खुदाई पैग़ाम बताने की कोशिश की उसकी बिरादरी वालों ने उसकी एक न सुनी। उसे बड़ी मुसीबतें उठानी पड़ीं, मारें खाईं, अपने बाप-दादा का घर छोड़कर मक्का से मदीना जाना पड़ा। सच्चाई

चलाने वालों ने बाज जगह बहुत तकलीफ़ें उठाई हैं। बार-बार आपस में लड़ाई-झगड़ा होता रहा, जिसकी वज़ह यह थी कि मोहम्मद साहेब का दीनी-इस्लाम उन पर न छा जाए। मगर हमेशा सच्चाई की कामयाबी होती आई है। उस समय बदले की भावना को छोड़कर अपने कबीले वालों और दूसरों को यकीन दिलाया कि उन्हें नुक्सान नहीं पहुंचाया जावेगा, कोई मुकाबला करने की कोशिश न करे, आराम से अपने-अपने घरों में बैठे रहें। असल मकसद जो था पूरा हो गया है। पहले काबे के चारों तरफ मोहम्मद इब्राहीम के वक्त से जो 360 मूर्तियां अलग-अलग कबीले वालों की रखी चली आ रही थीं उनको मोहम्मद साहेब एक लकड़ी से, जो उनके हाथ में थी, एक-एक बुत को गिराते जाते और कहते जाते कि अब सच्चाई का ज़हूर हुआ है। फिर खाना काबा के अन्दर जब पहुंचे वहां दीवारों पर जो तस्वीरें बनी हुई थीं उन्हें हटवा दिया, जो बुत रखे थे उन्हें निकलवा दिया। यह हालत देखकर मक्का वालों के दिल धड़कने लगे कि मालूम नहीं मोहम्मद साहेब क्या सज़ा हमारे गुनाहों की देते हैं। फिर मक्के वालों के दरमियान बैठकर कहने लगे कि आप लोग हमसे क्या उम्मीद रखते हैं? उन सबने एक ज़बान होकर कहा कि आप हमारे श़रीफ़ भाई और शरीफ़ के बेटे हैं। तब सब कफ़्फ़ार (नास्तिक) लोग कदमों में गिर पड़े और उसी समय सब मुसलमान हो गए। डन्डा पीर शुरू से चला आता है, जहां प्यार और विचार काम नहीं करते वहां तलवार और मार से काम लेना पड़ता है। देवता, दैत्यों के युद्ध चले आ रहे हैं। सब सच्चाई चलाने वालों को दु:ख पहले सहने पड़ते हैं।

जिस प्रेमी ने उपरोक्त सवाल किया था उसको समझाने और मोहम्मद साहेब की महानता बतलाने के लिए आपने फरमाया:- "प्रेमी! रात को तुम्हें कुछ नहीं कहा गया। तुम्हें होश से सवाल करना चाहिए था। बात करने का ढंग होता है, अपने पीर, पैग़म्बर की बाबत ग़लत तरीका की गुफ़्तगू यह लोग सुनना पसन्द नहीं करते। शादियां करनी या न करनी वह ख़ुद विचार कर सकते थे, वह ख़ुद ख़ालिस, ख़ुदा-परस्त थे। न मालूम वे अन्दर से किस कदर त्यागी थे, बाहर से मर्यादा रखनी ज़रूरी समझते थे। उन्होंने कमोबेश उम्र औरत व मर्द का और विधवा वाला बंधन भी उड़ा दिया। प्रेमी जी, इस किस्म की बुनियाद रखने वाले महापुरुष त्यागी होते हैं। क्या बाबे नानक ने शादी नहीं की? सबका विचार ज्ञान पूजने योग्य है। जिस इलाके में मर्यादा ही नहीं थी उस जगह उन्हें तरकीब से चलना था। आख़िर दो-चार तक मुकर्रर करनी पड़ीं, इससे ज़्यादा कोई शादी नहीं कर सकता, और भी बहुत से कायदे बनाए गए। उस ज़माने में उस जगह वह बहुत ही नीतिवान पुरुष हुआ है। ऐसी सब ही बुज़ुर्ग हस्तियां काबिले इज़्ज़त होती हैं।

प्रश्न - महाराज जी, क्या उनकी तालीम औरतों बच्चों के कत्ल करने की इजाज़त देती है? कोई ऐसा ज़ुल्म नहीं जो मुसलमान न करते हों? क्या मोहम्मद साहेब ने ऐसी जमात खड़ी की थी?

उत्तर - प्रेमी, मोहम्मद साहेब ने तो एक दफा जब लश्कर श्याम मुल्क की तरफ भेजा, ताकि उनसे लड़ाई करें तो रवाना होने से पहले लश्कर के सिपाह-सालार को समझाया कि -

1. मुल्क श्याम में तुम कुछ लोगों को गिरजाघरों में पाओगे जो गोशानसीन होंगे उनसे न उलझना।

2. किसी औरत को कत्ल न करना।

3. किसी बच्चे पर हाथ न उठाना।

4. किसी दरख़्त (पेड़) को न काटना।

यह हिदायतें लिखकर उनको समझाई थीं। जो अच्छे सिपाह–सालार होते हैं वह उन पर अमल करते हैं। प्रेमी जी, मोहम्मद ने ऐसी खोटी तालीम नहीं दी। आगे अमल करने वाले उल्टे दिमाग़ों के हो जाएं तो वह क्या कर सकते हैं? ऐसे असूलों पर उन्होंने बड़ी तरक्की की है। जवाल (संकट) उसके उल्ट चलने वालों पर अपने आप आता रहता है। बेशक तुम लोगों ने 1947 में बड़ा कुछ देखा है मगर आपस में भी यह लोग लड़ते रहते हैं।

मज़हबी जनून पागल कर देता है। तुम ही सोचो जिसने दरख़्त न काटने की हिदायत की वह अन्दर से कितना अहिंसावादी होगा। सारी उम्र लहसुन, प्याज नहीं खाया। मोहम्मद साहेब का अपना जीवन कमाल का जीवन हुआ है, और भी उसके बाद बड़े–बड़े फ़कीर हुए हैं मगर किसी को पैग़म्बर का दर्ज़ा नहीं दिया गया। अब कई तरह की उलटी तालीम देने वाली और भी कई कौमें हो गई हैं। जो कुछ अब प्रेमियों को समझाया जा रहा है क्या सब उस पर ठीक तरह से अमल कर रहे हैं? इस तरह कमी–बेशी होती चली जाती है। धर्म के नाम पर मज़हब, कौमें, मुल्क शहर बन जाते हैं, फिर वह लोग अपने आपको श्रेष्ठ यानि आला दूसरों से समझने लग जाते हैं। दूसरों के असूल अपने पर हावी नहीं होने देते। फ़िक्र न करो राम भली करेंगे। अपने धर्म व असूलों पर दृढ़ता धारण करने वाले बनोगे तो सब दुनिया वाले तुम्हारे आगे झुकेंगे। प्रेम से मिलकर बैठो, सत्संग करो। देश भक्ति, ईश्वर भक्ति के मुतालिक विचार करते रहा करो। ऐसा अमली जीवन बनाओ जिससे सबका भला या कल्याण हो।

प्रश्न – ख़िदमत में गुजारिश है कि अगर मैं नेक–एमाल अख़्तियार कर लूं और अपनी ज़िन्दगी बाअसूल बना लूं तो क्या फिर भी इबादत की ज़रूरत है?

उत्तर – प्रेमी जी, बग़ैर इबादत के तुम अपनी ज़िन्दगी बाअसूल बना ही नहीं सकते और न ही नेक–एमाल बन सकते हो। अगर बग़ैर इबादत या रियाज़त के नेक–एमाल वाले बन जाओ तो फिर क्या कहना?

प्रश्न – स्वामी जी, क्या खुदा है या यूं ही ढकोसलाबाजी है, अगर है तो कहां है?

उत्तर – प्रेमी जी, खुदा ज़रूर है। अल्ला, राम, ईश्वर ज़रूर है, कहीं भूल कर भी ऐसा ख़्याल न करना कि वह नहीं है। ज़रा ग़ौर से सुन, तेरे वज़ूद के अन्दर लावज़ूद क्या शै है? तेरे इस मकान के अन्दर ला–मकान कौन ताकत है?

प्रश्न – स्वामी जी, मैं बहुत खुशनसीब हूं कि मुझे आप जैसे मुर्शिद की कदमबोसी हासिल हुई है। अब आप मेरे लिए दुआ फरमाएं कि मुझे रोशन–ज़मीरी हासिल हो।

उत्तर – प्रेमी, जो तुम्हें कलाम (मंत्र) बतलाया गया है यह ही इस्मे–आज़म (सर्वश्रेष्ठ नाम) है,

उसको छुपा कर रखना। इसी इस्मे-आज़म से बड़े-बड़े पीर, वली, ग़ौस, कुतुब के मरतबे (स्थिति) तक पहुंचे हैं। इसी के विरद (सिमरण) से बड़े-बड़े रोशन-ज़मीरी अलहाम, आसमानी बांग, कलबी ज़िकर, कशफ़ वग़ैरा खुद-ब-खुद हासिल हो जाएँगे। दुआओं के भरोसे मत रहो, खुद रियाज़त करो।

प्रश्न – स्वामी जी, गुस्ताखी माफ़ फरमाएं, मुझे आपसे ग़ैर मामूली मोहब्बत होती जा रही है, हालांकि आप हिन्दू हैं और मैं मुसलमान हूं। कोई जादू मिसमैरिज़म का अमल तो नहीं है, आजकल शुद्धि करने का बहुत ज़ोर हो रहा है?

उत्तर – (थोड़ा मुस्कराकर) प्रेमी, यह तुम्हारी खुशकिस्मती है और यह तुम्हारे इस ख़्याल से नाराज़ नहीं हैं बल्कि खुश हुए हैं। वाकई आजकल बड़े पाखन्डी फ़कीर साधु फिर रहे हैं, तुम इन्हें खूब परखो।

प्रश्न – स्वामी जी, मेरा मुस्तकबिल (भविष्य) क्या होगा क्योंकि मुझे अपना मुकद्दर खराब मालूम हो रहा है और सुना है कि फ़कीरों की दुआ से आफ़ात (बलाएं) टल जाती हैं। बराए मेहरबानी मुझ जैसे बदनसीब और गुनाहगार पर रहम फरमाएं।

उत्तर – तुम्हारा मुस्तकबिल (भविष्य) तुम्हारे एमाल (कर्म) पर मुनहसर (निर्भर) है। यह ख़ुदाई हुक्म में दख़ल नहीं देते, हमेशा सबका भला ही चाहते हैं। हिम्मत और हौंसले से काम लो। घबराने की कोई ज़रूरत नहीं। राजी-बा-रज़ा के मसले पर शाकर (संतोष) रहो और आकबत (अंत) का फिक्र करो। दुनियावी ज़िन्दगी चन्द रोज़ा है। यह तो दुःख व सुख से गुज़र जावेगी। जो तुम्हें कलाम बख़्शा गया है उस पर यकीन रखते हुए अपनी ज़िन्दगी का सुधार करो। हिम्मत बिल्कुल न हारना।

प्रश्न – हज़ूर असली गिज़ा (ख़ुराक) खुदा के बन्दे की क्या होनी चाहिए?

उत्तर – ख़ुदा के बन्दे की गिज़ा ख़ुदा का जिक्र ही हो। हर समय उसकी तारीफ़ में रहना, यह ही शराब समझो।उसे हाज़र व नाज़र समझ कर ग़लत फ़ेलों (कर्मों) से शर्म करो। शर्म उसको कहते हैं जिसमें भय यानी दहशत व खौफ़ हो उन बद-फेलों, बुराइयों, करतूतों से जो तुझसे किसी तरह भी हो गई हैं ग़म कर यानि पछतावा कर।

अन्दर यानि बातन से अपने आपको ख़ुदा के हवाले कर दे और ज़ाहरा (बाहर) संगत यानि ख़लक की ख़िदमत के सुपुर्द कर दे। दिन-ब-दिन खुदा यानि प्रभु का प्यारा होता जा। अच्छे नेक लोगों की सोहबत, नेक काम से भी अच्छी है और बुरे आदमियों की सोहबत बुरे काम से बदतर है। जिस बन्दे को ख़ुदा की नज़दीकी हासिल हो जाती है सारी चीज़ें उसकी हो जाती हैं। ज़रा दिलोजान से अपने आपको उस परवरदिगार के सुपुर्द करके देख, मालिक का नूर हर जगह है। हर नज़र आने वाली चीज़ उस मालिक की समझो। ऐसा ख़्याल हमेशा बना रहे।

प्रश्न – सरकार। बन्दा, कमाल को कब-तक पहुंच जाता है?

उत्तर – प्रेमी, जब बन्दा अपने ऐबों को, गलतियों को अच्छी तरह पहचान लेता है, अपना रूख

हर तरफ से हटाकर सिर्फ़ ज़ाते-आला की तरफ कर देता है। दुनिया की तरफ से तवज्ज़ो को हटाना ही खुदा के प्यारों का काम है, उसके बग़ैर सच्चाई के रास्ते पर अपने आपको चलाना मुश्किल रहेगा।

93. हल्द्वानी में चन्द दिन निवास

श्री महाराज जी की सेवा में हल्द्वानी से प्रेमी नन्दलाल जी बिन्द्रा और बख़्शी कुन्दन लाल जी प्रार्थना कर रहे थे कि श्री महाराज जी हल्द्वानी तशरीफ़ लाकर उनको भी सत् उपदेश अमृत से कृतार्थ करें। आपने उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और प्रोग्राम बनाकर उनको सूचित कर दिया। आप 6 फरवरी, 1952 को होडल से चलकर 7 फरवरी को हल्द्वानी पधारे। हल्द्वानी निवासी प्रेमियों ने आपके निवास का प्रबन्ध आबादी हल्द्वानी से एक मील के फासले पर एक मकान में किया हुआ था, वहां ठहराया। इस जगह भी सत्संग का प्रबन्ध शाम को किया गया और प्रेमी हल्द्वानी से हाज़िर होकर सत्संग का लाभ उठाने लगे।

94. पत्र के द्वारा सत् उपदेश

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि प्रश्न-उत्तर जो कुछ हुए वह ठीक ही हैं मगर जो प्रेमी ने आत्म-साक्षात्कार समाधि के बाद कहा, यह महज़ ढोंग ही समझें। आत्म-साक्षात्कार के बाद समाधि का होना नामुमकिन है। संसार मिथ्या देह को मिथ्या समझने से प्रतीत होता है। अपने आप पर कृपा करने का निर्णय यह है कि अपने आपको सत् मार्ग में सावधान करे और अपने आपका गुरु बनने का यत्न प्राप्त हो। अभी वह प्रेमी नई-नई साधना में लगा हुआ है और संसार का जमघट घेरा डाल रहा है, देखिए कहां तक दौड़ होवेगी। इस किस्म के कई ज्ञानी बातों तक ही रहकर अपनी ज़िन्दगी को खो बैठते हैं। कुछ समय तक अक्सर ऐसी साधना में दिलचस्पी बनी रहती है मगर अंज़ाम लोक-यश और कीर्ति को प्राप्त होकर बिल्कुल अधूरा ही रह जाता है। ख़ैर अपना यत्न-प्रयत्न करना हर एक के वास्ते लाज़मी है, मगर पूर्णताई को विरला ही प्राप्त हो सकता है। उसके असबाब और ही रंग के होते हैं। जब सिद्धि को प्राप्त होगा तब ही जानेगा। यह माया त्रैगुणी बड़ी दुस्तर है, ऐसे ही सब सिद्धों ने बयान किया है कि चलते करोड़ों हैं, मगर पहुंचता कोई विरला ही है। मगर प्रकृत नियम के मुताबिक अपना-अपना यत्न सब कर रहे हैं, जितना-जितना किसी को कुव्वते-इरादी (निश्चय शक्ति) इजाज़त देती है। बाकी के प्रश्नों के उत्तर की ज़रूरत नहीं, उसको वैसे ही कई दफ़ा समझाया गया है। इन विचारों के मुतालिक और अगर उसने पूछना है तो पत्रिका द्वारा ख़ुद पूछ सकता है। ऐसे निकम्मे लोगों से कुछ नहीं बन सकता महज़ बातें ही बातें बनाते हैं। समता की तालीम में कौन सा विचार कलम-बन्द नहीं हुआ? शौक से मुतालया करे तब समझ पूर्ण आवे।

अब ख़ास विचार यह है कि जितना समता की तालीम को खुले विचार की सूरत में हर एक के सामने रखा गया है इस हालत के मुताबिक ऐसे ही निकम्मे लोग इस तालीम में दाखिल हो रहे हैं

जो कि महज़ बातूनी और इस तालीम को बिगाड़ने वाले हैं। इन वजूहात के मुताबिक आइन्दा खुले विचार का प्रोग्राम बन्द ही करना पड़ेगा जैसा कि एक साल से विचार हो रहा है तमाम समय तपस्या में गुज़रे, अगर कोई ख़ास जिज्ञासु होवे तो अपनी उन्नति के मुतालक समय ले लेवे। अब समता की तालीम में ख़ास कुर्बानी वाले प्रेमियों की ज़रूरत है जो कि आइन्दा देश के वास्ते सफलता की सूरत बन सकें।

95. श्री मुखवाक अमृत

1. मानुष जन्म के वास्ते केवल सत् परायणता ही सब मानसिक दोषों से पवित्र करने वाली है क्योंकि बुद्धि अंहकार की जड़ता माहीं अन्धी हुई नित ही विलखन (विलक्षण) कर्म करती है और अपने आपके वास्ते भयानक दुःख का जाल फैलाती है। इस वास्ते इस मानुष जीवन यात्रा को सही समझ करके नित ही अपने आपको सत्‌ग्रही बनाना परम उच्च निश्चय है। ऐसे पवित्र निश्चय से ही प्रभु भक्ति, त्याग, सेवा आदि महागुण धारण करके इस कठिन संसार से विजय प्राप्त हो सकती है। सब प्रेमी अपने आपको सत्‌ग्रही बनाकर अपनी जीवन यात्रा को परम पवित्रता के मार्ग में निश्चल करें और सही जीवन की सफलता प्राप्त करें। यह ही जीवन की सार है, ईश्वर सत् अनुराग देवें।

2. इस जीवन यात्रा में केवल सत् अनुराग ही परम शान्ति के देने वाला है और तृष्णा रूप जो भयानक दुःख है उससे छुटकारा दिलाने वाला है। इस वास्ते परम यत्न से सत् परायण होकर असत् शरीर के मान, मोह को त्याग करके नम्रता, प्रेम और पर-उपकार आदि गुण धारण करके आत्म-साक्षात्कार पद को प्राप्त करना ही परम कल्याण है। क्योंकि जब-तक सत् सरूप का बोध नहीं होता है तब-तक वासना रूपी परम दुःख से छुटकारा प्राप्त नहीं हो सकता और शरीर ख़त्म हो जाता है। ऐसे ही फिर कई शरीर धारण करके वासना के फैलाव में विचरता है, यह ही आवागवन का चक्कर है। वह ही परम बुद्धिमान पुरुष है जिसने हाज़िर जन्म में सत्-तत् को बोध करके तमाम भ्रम वासना से छुटकारा हासिल कर लिया है और परम-आनन्द निज सरूप में विश्राम पाया है, उसका जीवन अधिक दुर्लभ है। ऐसे ही सब मानुषों का कल्याण करना ही परम अधिकार है, नित ही सत्-यतन को धारण करना चाहिए। क्योंकि शरीर तबदीली की तरफ जा रहा है, इसकी तबदीली से पहले सत् ठौर प्राप्त कर लेना ही परम शूरवीरता है और परम खोज है। ईश्वर सुमति देवें।

3. संसार के जो अश्चर्ज तुरंग जीवन में पलक-पलक विखे नाना प्रकार से भासते हैं और बुद्धि उसमें दृढ़ निश्चित हुई अखंड शान्ति की तलाश करती है मगर हर एक वस्तु तबदील होने के कारण बजाए शान्ति के अशान्ति देने वाली होती है, ऐसा समझना ही परम विवेक है। ऐसे द्वन्द्व रूपी असगाह सागर संसार से निर्बन्धन होना केवल एक अखंड अविनाशी तत्त्व के परायण होने से ही हो सकता है, यानि तमाम संसार की गर्दिश को केवल प्रभु आधार पर ही देखते हुए अपने आपको सत् के परायण दृढ़ करना ही मानसिक शान्ति के देने वाला यथार्थ साधन है और तमाम सत्पुरुषों का

जीवन आदर्श है। ऐसा ही निश्चय धारण करके प्रेमी अपने आपकी कल्याण करते हैं। ईश्वर सुमति देवें।

96. श्री मुखवाक अमृत

इस कठिन जीवन यात्रा में अधिक सत् विश्वास के बल से ही अपने तमाम मानसिक दोषों से पवित्रता हासिल हो सकती है। इस वास्ते सत् अनुराग और निर्मल वैराग्य की दृढ़ता से अपने आपको सतनाम में दृढ़ करें तब निज सरूप की अनुभव गति को प्राप्त कर सकेंगे जो परम पवित्रता सरूप स्थिति है। ईश्वर नित ही निर्मल बोध की दृढ़ता बख़्शें।

97. पत्र द्वारा सत् उपदेश

अनुभव के बग़ैर कथनी ज्ञान ऐसा है जैसे प्यासा आदमी जल की तारीफ़ करके प्यास बुझाना चाहे। ऐसे कथनी ज्ञान से अन्तःकरण में सत् शान्ति नहीं हो सकती है जब–तक सही आमिल हो करके सत् यत्न द्वारा विकारों से पवित्रता न हासिल हो।

विद्या द्वारा समझना फिर बार–बार निद्धियासन करना ही दृढ़ निश्चय के देने वाला यत्न है। सत् विश्वास, सत् अनुराग, दृढ़ वैराग्य और दृढ़ अभ्यास के धारण करने से मानसिक दोषों से पवित्रता प्राप्त होती है। तब ही सत् पदार्थ सरूप आनन्द बोध होता है जो परम शान्ति है। ऐसे सत् असूलों को धारण करने वाला होवे, वह ही सही साधक है।

दुनिया में रहना हो तो कंवल के पत्ते के समान रहना चाहिए। मगर भ्रांति के बन्धन में हर एक आदमी अपने स्वभाव के मुताबिक विचरता है और दुनियादारों से अपना लगाव कायम रखता है। परमार्थी पुरुषों के वास्ते रास्ता उलटा है। परमार्थी पुरुषों का लगाव परमार्थी सज्जनों से होना चाहिए और दुनियादारों से अन्तर से अलहदगी होनी चाहिए। इस अवस्था का कोई शुमार नहीं है। अपनी मंज़िल को तय करने का हर वक्त यत्न करना चाहिए। दीन व दुनिया हर एक मानुष अपने स्वभाव के मुताबिक ही बनाता है। अपने स्वभाव से ही उसको तबदील कर सकता है, मगर बाहर के संग–दोष का भी असर लाज़मी है, इस वास्ते परमार्थ में सत्पुरुषों का संग दृढ़ता के देने वाला है।

मन की एकाग्रता तब होती है जब तमाम शारीरिक सुख व दुःख प्रभु आज्ञा में समर्पण कर दिए जावें और होना न होना प्रभु आज्ञा में देखा जावे। अखंड वृत्ति से बार–बार प्रभु नाम का ही चिन्तन करे, ऐसे दृढ़ अभ्यास से तमाम विरुद्ध कामना का नाश होता है और अधिक प्रभु प्रेम को धारण करके बुद्धि अपने आप में अचल होती है और सत् प्रकाश अखंड शब्द को अनुभव करती है, यह ही असली एकाग्रता है। वैराग्य तमाम संसार से और अधिक प्रेम परमेश्वर के ज्ञान सरूप में और अधिक श्रद्धा सत्पुरुषों के वचनों पर जिसकी होती है और जो अभ्यास में पूर्ण दृढ़ता को धारण करता है वह ही सत्पुरुष तमाम वासना के अन्धकार से निर्मल होकर अपने सत् सरूप में एकाग्रता को प्राप्त होता है।

अच्छी तरह विचार करके सत् निद्धियासन को दृढ़ करें। ईश्वर सुमति देवे।

(हल्द्वानी 23 फरवरी, 1952)

98. बरेली में चन्द दिन निवास

बरेली से हकीम भीमसैन जी ओबराय चरणों में प्रार्थना कर रहे थे कि श्री महाराज जी चन्द दिन बरेली तशरीफ़ लाकर अमृत वर्षा से उन्हें भी कृतार्थ करें।

आपने उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और 29 फरवरी, 1952 को बरेली का प्रोग्राम बना दिया। आपने 28 फरवरी तक हल्द्वानी में निवास किया। हकीम भीमसैन जी बरेली से 28 फरवरी को चरणों में हाज़िर हो गए और गाड़ी द्वारा बरेली ले आए। हकीम भीमसैन जी ने श्री महाराज जी के निवास के लिए माडल टाउन में मन्दिर के पास एक अलेहदा कमरे का प्रबन्ध करके ठहरने का इन्तज़ाम किया हुआ था, वहाँ ले जाकर आपको ठहराया गया। सत्संग का प्रबंध शाम को किया गया मगर इस जगह श्री महाराज जी ने थोड़े दिन ही निवास किया। प्रेमी जम्मू, श्रीनगर से प्रार्थना कर रहे थे कि आप गर्मी का मौसम उस तरफ व्यतीत करें इसलिए आपने 9 मार्च, 1952 को बरेली से अम्बाला जाने का प्रोग्राम बना लिया और बरेली निवासी प्रेमी आपको स्टेशन पर गाड़ी में सवार करवाकर प्रणाम करके वापस गए। 10 मार्च को आप अम्बाला पहुंचे। अम्बाला निवासी प्रेमी स्टेशन पर आपको लेने के लिए हाज़िर थे।

99. एक प्रेमी को पत्र द्वारा सत् उपदेश

जीवन का सत् आदर्श प्राप्त करना ही परम उच्चता है, इस वास्ते अधिक दृढ़ विश्वास से सत्-तत् अवनाशी सरूप का निद्धियासन धारण करते हुए शारीरिक ममता का नाश करना ही परम तप है यानि हर वक्त एक परम तत्त्व की दृढ़ परायणता में तमाम शारीरिक कर्मों के फल की आसक्ति का समर्पण करना और लगातार अखंड वृत्ति से नाम का चिन्तन करना चाहिए। ऐसे निर्मल सहज स्वभाव अभ्यास के बल से बुद्धि अहंग भाव का त्याग करके निज सरूप में समता को प्राप्त होती है। यह ही सत् यत्न जीवन का महाकारज है। ईश्वर नित ही सत् अनुराग का बल देवें और गुरु वचन का दृढ़ विश्वास प्राप्त होवे।

(बरेली 2 मार्च, 1952)

100. अम्बाला में निवास

प्रेमियों ने पुरानी जगह जोहड़ी पर ही निवास का प्रबन्ध किया हुआ था। श्री महाराज जी को वहां ले जाकर ठहराया गया। इस जगह भी आपने थोड़ा अर्सा ही निवास किया। सत्संग का प्रबन्ध किया गया और अम्बाला निवासी प्रेमी अमृत वर्षा से तृप्त होते रहे।

101. ख़ास शिक्षा जो आपने 25 मार्च, 1952 को देने की कृपा फरमाई

1. किसी मज़हब के बुज़ुर्ग की तौहीन नहीं करनी चाहिए बल्कि उनके श्रेष्ठ गुण धारण करने चाहिए।

2. जो भी सत्संग में आए उसकी श्रद्धा बढ़ानी चाहिए, किसी किस्म का उसका अपमान नहीं होना चाहिए।

3. जितना भी कोई अधिक सेवादार बने उतना ही उसको निर्मान होना चाहिए। कितना भी कोई पाप वृत्ति वाला क्यों न होवे उसके साथ पवित्र भाव और आदर से पेश आना चाहिए। किसी किस्म का मलीन भाव रखना अपनी पवित्रता के नाश करने वाला है।

4. समता के अनुयाई अपने आपको सही सेवक बनाने का यत्न करें। इससे ही अपना जीवन उन्नत होता है और धर्म की भी जागृति होती है।

5. संगत में कोई बड़ा बनने का यत्न न करे बल्कि अधिक से अधिक सेवादार बनने की कोशिश करे इससे ही प्रेम बढ़ता है।

6. किसी किस्म की मसख़री और हँसी संगत में करनी एक निहायत ज़हालत की निशानी है। इस वास्ते इस विघ्न से पवित्र रहने का यत्न करें।

7. आपस में अधिक प्रेम और एक दूसरे का अधिक आदर करना चाहिए। इससे समता भाव प्रकाशता है और दूसरे सज्जन भी निर्मल आदर्श देखकर श्रद्धा युक्त होते हैं।

8. अधिक पवित्र जीवन बनाएं। बातों से कल्याण नहीं हो सकती, बल्कि बाद-मुबाद बढ़ता है। अच्छी तरह से इन नियमों का विचार करके हर वक्त अपने आपको बाहोश रखें। आइन्दा कोई नुक्स प्रेमी में देखने में न आवे। ईश्वर सत् बुद्धि और गुरु वचनों में विश्वास देवें।

102. श्री मुखवाक अमृत

गुरु-तत् या गुरु-वचन में लीनताई का सरूप यह ही है कि तन, मन, धन आदि सम्बन्ध से गुरु शिक्षा का सम्बन्ध अधिक विशेष सरूप में जानते हुए मन, वचन, कर्म द्वारा सत् सिख्या के अपनाने का परम यत्न धारण करे। जब ऐसी दृढ़ता प्राप्त होती है तब बुद्धि शारीरिक सुखों के राग से निर्मल होकर सत् स्वरूप के अनन्य सिमरण में अन्तर में निश्चल होती है और परम सुख अवनाशी आत्म-तत् को बोध करती है, जो निःखेद स्थिति है। ईश्वर नित ही निश्चय निर्भय स्थिति प्राप्ति का बख़्शें।

इस जगह निवास के दौरान एक प्रेमी ने आपसे पूछा–

प्रश्न – महाराज जी, अनेक वेद शास्त्रों में उनके रचेताओं ने कहीं अपना नाम नहीं दिया। गीता उपनिषद में भी व्यास ने अपना नाम न देकर भगवान कृष्ण को सामने रखा। फिर समता प्रकाश में हर पद के आख़िर में आपके नाम की क्यों ज़रूरत पड़ी?

उत्तर – प्रेमी, एक मोअल्लिफ़ (वक्ता) होता है एक मुसन्निफ़। मोअल्लिफ़ किसी के कहे को बयान करता है मुसन्निफ़ अपने अनुभव को। व्यास एक मोअल्लिफ़ है। जब-तक किसी तालीम पर मुसन्निफ़ की मुहर नहीं उसका कोई नाम नहीं। गाँधी की सादगी के साथ उसकी तालीम का असर है, इसके बिना बिल्कुल ऐसे है जैसे बारूद बिना धमक। समता की तालीम किसी किताब का तर्जमा नहीं। बिना अमल और नाम के यह अकर्मी विद्वान इस तालीम का सत्यानाश कर देंगे। जैसे राम तीर्थ की कमाई का कर रहे हैं। कमाई कुछ न होगी और वितंडावाद फैलाएंगे कि वह पूरे सिद्ध हैं। शरीर और प्रकृति द्वारा ही ज्ञान का वज़न होता है। इसलिए नाम तो इसके साथ आएगा ही लेकिन यह नाम साक्षात् प्रभु आराधना की मोहर है।

प्रश्न – महाराज जी, तो क्या यह एक नए पंथ की शक्ल अख़्तियार (धारण) न कर लेगा?

उत्तर – प्रेमी जी, यह तो कुदरत का नियम है। सिख का मतलब शिष्य था पर यह बजाए तालीम फैलाने के एक भेषधारी फिरका बन गया है। बुद्ध एक आत्म-ज्ञानी की उपाधि थी पर लोकाचार में यह एक मत बन गया। तुम्हें सर्वदा असलियत ढूंढनी चाहिए।

एक दिन सत्पुरुष ने प्रेमियों से प्रश्न किया–

प्रश्न – प्रेमियों, अगर अब यह शरीर लोप हो जाए तुमसे लोग बाद में पूछें कि गुरु का क्या सरूप था तो क्या बताओगे? तुमने गुरु के अन्दर क्या देखा और कौन सी चीज़ तुम्हें बार-बार खींच कर लाती थी?

किसी प्रेमी ने जवाब न दिया। उत्तर न पाकर आपने कहा:- "कोई तो गुरु बड़े-बड़े मठाधारी हैं, हाथियों की सवारी करने वाले, सोने की पालकियों में बैठकर उपदेश करने वाले और कई तरह के रंग रूप में होते हैं, इनके पास तो कोई सांगोपांग नहीं, तुम सिफ़त करोगे तो किस बात की, दुनिया वाले बड़े गुरु होते हैं तुमको छोड़ेंगे नहीं।"

प्रेमी – महाराज जी, हम अपनी स्थिति के मुताबिक कह सकते हैं। महापुरुषों की स्थिति को भोगवादी किस तरह बयान कर सकते हैं? आप ही कृपा करके बतलाने की दयालुता करें।

उत्तर – फ़कीर लोग तुमसे कभी कुछ पूछते ही नहीं। कुछ अपनी बुद्धि से भी काम लिया करो। ईश्वर के रूप को कोई पूछे तो महामंत्र पढ़कर सुना दिया करो। गुरु के रूप का वर्णन करना हो तो उन महागुणों का वर्णन करना चाहिए जिस पर कोई एतराज़ न कर सके। शारीरिक स्थिति तो हर ज़माने में हर गुरु, पीर, अवतार की अलग-अलग तरह की रही है मगर सबके अन्दर एक जैसे महान गुण निष्कामता, निर्मानता, उदासीनता, नेहचलता और पर-उपकार आदि प्रकाश करते हुए पाए जाते हैं। यह महागुण ही अवतारी पुरुष के अन्दर हुआ करते हैं। बाकी प्रारब्ध अनुसार कोई योगी

राजा के घर आकर इस प्रकृति को लेकर संसार में विचरते हैं, कोई ग़रीबों के घर पैदा होकर ईश्वर आज्ञा में समय व्यतीत करते हैं। बाद में विचरने पर अपने आप ही लोगों के अन्दर इन महापुरुषों का असर होता चला जाता है। और भी राम, कृष्ण से पहले कई राजे-महाराजे संसार में हो गुजरे हैं उनका नाम क्यों नहीं लेते? उनके अन्दर यह महागुण अधिक रूप से प्रकाश हो रहे थे। राम का त्याग उदासीनता के रूप में दिखाई पड़ता है। जब लंका को फ़तह करके राज तिलक विभीषण को देकर एवज (बदला) में कोई नज़राना नहीं लिया, केवल फूल की माला द्वारा ही पूजा करवाई। आजकल की तरह नहीं कि चूल्हे की तेरी, तवे की मेरी। आज-तक ऐसा त्याग किसी ने नहीं दिखाया। इसी तरह कृष्ण थे सारी उम्र राज-तख़्त पर नहीं बैठे। गद्‌दी पर अग्रसैन नाना ही बैठे रहे। कई राजाओं को ऊपर नीचे किया लेकिन किसी का तख़्त नहीं संभाला। क्या यह काफ़ी नहीं? निर्मानता इतनी कि दुर्वासा गुरु को रथ में बिठाकर रुकमणी और कृष्ण ने ख़ुद उसे खींचकर सारी द्वारका की सैर कराई, फिर हाथ जोड़कर खड़े हो गए, "महाराज, और सेवा के वास्ते कृपा करें। यह तो थी निर्मानता। फिर उदासीनता इतनी थी कि दिन में संसारियों की सेवा और रात को जंगल में रहना, अन्तर से किसी चीज़ में प्रीति नहीं थी। मूर्ख लोग महायोगी को महाभोगी के रूप में दिखाते हैं। नेहचलता, जैसे राज में खुश हैं वैसे ही शेषनाग पर चढ़े और खड़े बंसरी बजाकर दिखा रहे हैं। हर वक्त अपने सरूप में स्थित रहना, सब कुछ प्राप्त होने पर मान नहीं। सुदामा जैसे भक्तों के चरण धोकर पी रहे हैं। पांडवों को सब कुछ फतह करके दिलवाया, उनसे कोई गर्ज़ पूरी नहीं की। प्रेम-प्यार से, विचार से जो नहीं समझा उसे तलवार से समझाया। नहीं समझा तो उसे ख़त्म करके फिर अलेप हैं। महापुरुष, सत्पुरुष कपड़े पहनकर नहीं बनते, यह तो श्रद्धालु लोग पीछे बैठकर ऐसा करते आए हैं। तुम भी कल मूर्ति बनाकर ऐसा करने लग जाओ मना कोई थोड़ा करता है। हमेशा उन गुणों का विचार सामने रखना चाहिए और अपने अन्दर भी यह गुण लाने चाहिएँ। जब-जब जिसके अन्दर यह गुण प्रकाशमान हुए वह ही गुरु, पीर, अवतार कहलाये चाहे जिस देश- विदेश में हों। ऐसी शुभ भावना वाले गुणी पुरुष ही संसार में अन्धकार को दूर करते आए हैं। जब-जब धर्म की हानि होने लगती है कोई न कोई प्रभु आज्ञा से हस्ती आ जाती है। प्रकृति का रूप सदा एक जैसा किसी का नहीं हुआ न कायम रहा। सब ग्रन्थों में महापुरुषों की महिमा भरी पड़ ी है, इन गुणों को दिखा रही है। उनके जीवन को देख-देख कर फिर सब जीव सत् धर्म को प्राप्त होने की ख़्वाईश करते हैं और प्रेम सरूप में मिल-जुल कर समय व्यतीत करते हैं, फर्ज़ जानते हैं। ख़रबूज़े को देखकर ख़रबूज़ा रंग पकड़ता है। बार-बार ईश्वर आज्ञा में दृढ़ होना, अच्छे विचारों में लगे रहने से ही निष्काम भाव को प्राप्त होते हैं। केवल एक प्रभु सरूप को नित प्रकाश जानना और हर समय शरीर को नाशवान तसव्वर करना यह ही निर्मानता का रूप है। ज्यों-ज्यों अभ्यास में दृढ़ होता जाता है त्यों-त्यों आत्म-विश्वास में दृढ़ता बढ़ती है और आत्म-विश्वास ही संसार की असारता यानि उदासीनता की तरफ ले जाता है। हर समय शरीर और संसार मिथ्या भासना और अनुराग, विरह, प्रेम, सत् सरूप के वास्ते पैदा होना ही असली उदासीनता है।

103. श्री मुखवाक अमृत

संसार के जो अश्चर्ज तुरंग जीवन यात्रा में पलक-पलक विखे नाना प्रकार से भासते हैं और बुद्धि उसमें दृढ़ निश्चित हुई अखंड शान्ति की तलाश करती है मगर हर एक वस्तु तबदील होने के कारण बजाए शान्ति के अशान्ति के देने वाली है। ऐसा समझना ही परम विवेक है। ऐसे द्वन्द्व रूपी असगाह सागर से निर्बन्धन होना केवल एक अखंड अवनाशी परम तत्त्व के परायण होने से ही हो सकता है, यानि तमाम संसार की गर्दिश को केवल प्रभु आधार पर ही देखते हुए अपने आपको सत् परायण दृढ़ करना ही मानसिक शान्ति के देने वाला यथार्थ साधन है और तमाम सत्पुरुषों का जीवन आदर्श है। ऐसा निश्चय धारण करके प्रेमी अपने आपकी कल्याण करते हैं।

104. श्री मुखवाक अमृत

इस जीवन यात्रा से केवल सत् अनुराग ही परम शान्ति के देने वाला है और तृष्णा रूप जो भयानक दुःख है इससे छुटकारा दिलाने वाला है। इस वास्ते परम यत्न से सत् परायण होकर असत् शरीर के मान, मोह को त्याग करके नम्रता, प्रेम और उपकार आदि महागुण धारण करके आत्म-साक्षात्कार पद को प्राप्त करना ही परम कल्याण है क्योंकि जब-तक सत् सरूप आत्मा का बोध नहीं होता है तब-तक वासना रूप परम दुःख से छुटकारा प्राप्त नहीं हो सकता है और शरीर ख़त्म हो जाता है। ऐसे ही फिर कई शरीरों को धारण करके वासना के फंसाव में परम दुःख में विचरता है। यह ही आवागवन का चक्कर है। वह ही परम बुद्धिमान पुरुष है जिसने हाज़िर जन्म में ही सत्-तत् को बोध करके तमाम भ्रम वासना से छुटकारा हासिल कर लिया है और परमानन्द सरूप में विश्राम पाया है। उसका जीवन अधिक दुर्लभ है। ऐसे ही सब महापुरुषों का अपने जीवन का कल्याण करना ही परम अधिकार है। नित ही सत् यत्न धारण करना चाहिए क्योंकि शरीर तबदीली की तरफ जा रहा है। इसकी तबदीली से पहले सत् ठौर प्राप्त कर लेना ही शूरवीरता और परम खोज है। ईश्वर सुमति देवें।

105. मलोट मन्डी में चन्द दिन अमृत वर्षा

मलोट मन्डी से चौधरी हरजी राम जी चरणों में प्रार्थना कर रहे थे कि श्री महाराज जी चन्द दिन अमृत वर्षा द्वारा उनको भी निहाल करें। आपने उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और 30 मार्च, 1952 मलोट पहुंचने की तारीख निश्चित करके सूचना दे दी। चौधरी जी मलोट से आ गए और श्री महाराज जी को साथ लेकर मलोट के लिए रवाना हो पड़े।

चौधरी जी ने श्री महाराज जी के निवास के लिए स्टेशन से दूसरी तरफ सामने अपनी जमीन में जहां एक कमरा बना हुआ था वहां प्रबन्ध किया हुआ था। स्टेशन से सीधा लाईन पार करके इन्हें वहां ले जाकर ठहराया। इस जगह भी शाम को सत्संग का समय मुकर्रर कर दिया गया। मलोट

निवासी प्रेमी सत्संग अमृत वर्षा का लाभ उठाते रहे। चूँकि गर्मी का मौसम आ गया था और श्रीनगर निवासी प्रेमी पत्र द्वारा सेवा में प्रार्थना कर रहे थे कि श्री महाराज जी इस दफ़ा फिर श्रीनगर में एकान्त निवास करें। श्री महाराज जी ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और प्रोग्राम बनाकर श्रीनगर और जम्मू प्रेमियों को सूचना दे दी। आपने 21 अप्रैल, 1952 तक मलोट मन्डी में निवास किया।

106. श्रीनगर में एकान्त निवास और कठिन तप

22 अप्रैल को मलोट निवासी प्रेमी श्री महाराज जी के साथ स्टेशन पर पहुँचे। आप रेल द्वारा लुधियाना होते हुए पठानकोट पहुंचे और वहां से बस में सवार होकर 23 अप्रैल को जम्मू पहुंचे। जम्मू निवासी प्रेमियों ने आपके ठहरने का एक एकांत जगह में प्रबन्ध किया हुआ था और आपके श्रीनगर पहुंचाने का प्रबन्ध हवाई जहाज द्वारा किया गया। एक मई को आप हवाई जहाज में सवार होकर श्रीनगर पहुंचे। वहां शहर से बाहर एक एकान्त जगह जैलानी मंज़िल में आपके निवास का प्रबन्ध किया गया था। श्रीनगर निवासी प्रेमियों ने जो आपके स्वागत के लिए हवाई अड्डे पर आए हुए थे आपको ले जाकर उस एकान्त जगह में ठहराया। सत्संग का वक्त इस जगह शाम के 4 बजे मुकर्रर किया गया।

107. आश्रम में मच्छरदानी लगाने की मनाही

श्री परम प्यारे भाई रामजी दास जी को प्रेम पूर्वक ब्रह्म सत्यम्। श्री महाराज जी फरमाते हैं कि रामजी दास को वाज़्या होवे कि आश्रम में मच्छरों की तकलीफ़ बर्दाश्त ही करें, अगर मच्छरदानी लगानी होवे तो जल्दी काम से फ़रागत हासिल करके सलामपुर जा करके करें। बाहोशी से पत्र लिखा करें। तुम जैसे नाज़ुक अन्दाम (मिज़ाज़) क्या समता के मार्ग में चल सकेंगे? ईश्वर सुमति देवें।

108. आश्रम की स्वतंत्रता

श्रीनगर से नोटः मौज़ूदा कुल हालात आश्रम के अब के साल उन सबसे स्वतंत्र हो जावें। आइन्दा किसी किस्म का भी आश्रम के मुतालिक ग़ौर करने का या कोई नया प्रोग्राम निश्चित करने की ज़रूरत न रहे। सिर्फ़ ज़मीन की पैदावार आश्रम की ख़ास ज़रूरत पूरी कर दे और प्रेमियों की तरफ से किसी किस्म की सेवा की ज़रूरत न महसूस होवे और तुम स्वतंत्र होकर अपने अभ्यास में दृढ़ होवें। ऐसे झंझट मुख्तसिर (संक्षिप्त) रूप में ही रहने चाहिए। अच्छी तरह से ग़ौर कर लेवें। और ज़मीन का मामला निपटाने की कोशिश करें ताकि आश्रम की मुश्कलात सब हल हो जावें।

109. सत् उपदेश-अमृत (3 अगस्त, 1952)

शरीर रूपी संसार को धारण करके यह जीव इस शरीर की कामनाओं में दौड़ रहा है और अपनी तसल्ली चाह रहा है। शारीरिक सुखों के लिए वक्त बेताब रहता है, आख़िर शरीर ख़त्म हो जाता है और सुख भी ख़त्म हो जाते हैं और वैसे ही रोता हुआ चला जाता है जैसे कि यह रोता हुआ आया था। सत्संग में इस बात को सोचना है कि यह शरीर क्या है?

शरीर एक ढांचा प्रतीत हो रहा है लेकिन यह पच्चीस विकारों पर खड़ा है। शोक, मोह, भय, लज्जा और कीर्ति यह आकाश के अंश हैं। जहां बाकी मादों (भौतिक) की साईंस का मुतालया आपने किया है वहां इस साईंस को भी देखें। दौड़ना, धारणा, अकड़ना, सुकड़ना, और फैलना यह पवन के पांच विकार हैं। भूख, प्यास, निद्रा, आलस और कान्ति अग्नि के विकार हैं। खून, वीर्य, थूक, पेशाब और पसीना यह जल के विकार हैं। चाम, मज्जा, नाड़ी, हड्डी और बाल यह धरती के विकार हैं, यह पच्चीस किस्म के विकार हैं। बुद्धि इनमें जकड़ी हुई है। इन ही पच्चीस विकारों के अनुकूल और प्रतिकूल पहलू में मानुष हर वक्त दौड़ते रहते हैं। दिन-रात इनको ही पूरा करने की कोशिश में लगे रहते हैं।

भक्ति का मतलब है कि बार-बार किसी को याद करना। देखना यह है कि आजकल लोग किसकी भक्ति कर रहे हैं।

वास्तव में यह जीव इस शरीर की भक्ति कर रहा है। यह इस शरीर से कभी गाफ़िल नहीं होता और इसको किसी देवी-देवता पर निश्चय भी है तो वह महज़ शरीर के सुखों को पूरा करने की ख़ातिर है। मतलब यह है कि ईश्वर को भी यह जीव अपने सुखों के लिए ढूंढता है। इस किस्म के अन्ध-विश्वास को धारण करके शरीर की भक्ति जीव कर रहे हैं, मगर-

आए प्यासे गए निरासे, बड़े भूप संसार।
इस मन को तृप्ती न होई, कित गुन कियो विचार।।

यह सदी (शताब्दी) शरीर की भक्ति की है। छोटे लोगों को छोड़ दो, बड़े-बड़े लोगों का यह हाल है कि पांच वासनाओं को पूरा करने में हर वक्त लगे रहते हैं। कभी मोह की चिन्ता में हैं, सोचते हैं कि पुत्रों का क्या बनेगा? चाहे लड़कों को ख़्याल हो या न हो लेकिन बूढ़ों को हर वक्त यह ख़्याल रहता है। किसी वक्त किसी दुश्मन को मारने का ख़्याल आ जाता है। कोई बही-खाता लिखते रहते हैं। गरज़े की यह जीव पांच विकारों की पूजा करता रहता है। इसलिए इसको धर्म का निश्चय नहीं आता। जीव को हर वक्त पांच विकारों की चिन्ता लगी रहती है। इसी तरह वक्त गुज़र जाता है मगर बनता कुछ नहीं है ख़्वाहे कोई आसमान पर है ख़्वाहे कोई जमीन पर है वासना ख़त्म नहीं होती है। महापुरुषों ने सोचा कि दुनिया कहां जा रही है? कोई जानता नहीं कि खुशी कैसे प्राप्त होगी? कोई कहता है मैं इबादत ख़ुदा की करूं ताकि मुझे पुत्र मिले जो खुशनसीब हो। कोई डाकाजनी से खुशी चाह रहा है, कोई नम्बरदारी कायम करना चाहता है मगर कोई भी अपने मुद्दे में कायम नहीं होता है। इसको पता ही नहीं कि उसका मुद्दा या मकसद कैसे हासिल हो सकता है?

यह ही मूर्खताई है। चूंकि नतीजे से नावाकिफ़ है। सही तौर पर यह नहीं समझता है इसलिए नादान माना गया है। जब नतीजा ज़ाहिर होता है तब फ़कीरों को ढूंढता है। उस वक्त उसको कौन बचाए? महापुरुषों ने कहा है कि जिस भी काम को करना हो पहले उसके नतीजे को सोचना चाहिए। क्योंकि संसार बहुत बड़ा है, अगर ग़लती की तो ठीक न होगा। जो विवेकी पुरुष हुए हैं उन्होंने सोचा कि शरीर क्या है और शरीर के अन्दर रोशनी किस चीज़ की है जिससे यह शरीर चल रहा है?

बुद्धि हर वक्त शारीरिक सुखों की ख़ातिर दौड़ रही है, आख़िर शरीर ख़त्म हो जावेगा। जब शरीर से जीव निकल गया उस वक्त हैरान हो गया। उस वक्त उसे मालूम हुआ कि उसने जैसी दुनिया देखी थी और जैसी समझी थी वैसी नहीं है। जिस शरीर के लिए जीव हर वक्त कोशां (लगा हुआ) है आख़िर यह भी ख़त्म हो जाएगा। आख़िर इन्सान कैसे और किस बुनियाद पर सुखी होगा? उस वक्त महापुरुषों ने सोचा कि यह एक बड़ा धन्धा है। जब यह शरीर को प्राप्त होगा चिन्ता खड़ी होगी। हाकिम और महकूम (प्रजा) दोनों चिन्ता में हैं। जब सब नक्शे को देखा तो समझा कि तसल्ली तो नहीं है। फिर महापुरुषों ने सोचा और ग़ौर किया कि दुनिया बहुत भारी झगड़ा है। जब एक चीज़ को हासिल करते हैं तो दूसरी का फिक्र सामने खड़ा हो जाता है। जब उन्होंने शारीरिक जीवन को समझा तो कहा कि इंसान का यह तरीका ठीक नहीं। उन्होंने सोचा कि क्या कोई ऐसी हालत है कि जिससे इस शरीर की प्यास बूझे? उस वक्त उन्होंने मर्ज़ का इलाज मालूम करने की कोशिश की। उस वक्त उनको विचार आया कि इस शरीर की बनावट से प्रतीत होता है कि इसे किसी महाशक्ति ने बनाया है और यह किसी नियम पर खड़ा है। हम खुद तो इसके किसी बिगड़े हुए या काटे हुए आज़ा (अंग) को ठीक नहीं कर सकते हैं। फिर दो धाराएं खड़ी हुई, एक शरीर की और दूसरी जिसके सहारे यह शरीर खड़ा है। यह जो हमारा सांस अन्दर-बाहर आ-जा रहा है इसको अन्दर खींचने वाला कौन है? सांस के जुदा होने पर फ़ौरन ही इन्सान ख़त्म हो जाता है।

जीवत माटी मोइयां भी माटी, नहीं सार किया विचारी।
निकले प्राण माटी विच जाना, लम्बे पांव पसारी।।

मूर्ख, यह जीवन किसी और चीज़ के सहारे खड़ा है। जब महापुरुषों ने गोता लगाया तो उन्होंने एक शक्ति का अनुभव किया जिससे यह शरीर रोशन है। जो निर्गुण है, पूर्ण है और सत् है, जिसकी शक्ति से सब अन्सर खड़े हैं। जिस वक्त सत् को अनुभव किया, शांत हो गया। पहले तो तृण-तृण में भयवान था, लेकिन बाद में ....

आसा तृष्णा मन रही न कोए, जब नाम पदारथ खाई।
अंतर बाहर भया परकाशा, दुर्मत अन्धकार गंवाई।।

जितनी भी तकलीफ़ात पहले थीं, वह सारी गायब हो गईं। उस स्वरूप में अचिन्त और प्रवीण हो गया। उसको अन्दर क्या मिला? जिन्होंने परमेश्वर को जाना उन्होंने समझाया कि यह जीव स्वभाव से ही कैद में है। परमेश्वर के परायण हो जाओ। और कहा कि जब-तक परमेश्वर के परायण न होगे तब-तक शांति नहीं मिलेगी। जिसकी वज़ह से यह शरीर जीवित है उसकी

तहकीकात (खोज) करो। शरीर के कायम रखने में ऐ मानुष तू दिन-रात लगा है, लेकिन जिस शक्ति पर शरीर चल रहा है वह क्या चीज़ है? उसको जानो। ऐसा विचार करके महापुरुषों ने कहा कि शरीर के अंदर एक सत् शक्ति है, जिसकी वज़ह से यह असत् शरीर खड़ा है। वह शक्ति विलक्षण है। जब ऐसा विश्वास हो तो अच्छे पुरुषों के पास जायें। तब भयानक विकारों की आग ग़ायब होगी। उस वक्त मनुष्य को पता चलेगा कि जो काम वह कर रहा है, ठीक नहीं है। फिर वह आज्ञा मानकर अपने आपको दुरुस्त करता है। जब सत् विश्वास अंदर आया तो शांत हो गया।

मनुष्य दो किस्म के हैं, एक मोहवादी और दूसरे सतवादी। मोहवादी शरीर के विकारों को पूरा करने में लगे रहते हैं। और शरीर के भोगों और विकारों से जिसको घृणा हुई है वह सतवादी हैं ऐसा सतवादी जानता है कि दुनिया का असर बेशक बहुत बुरा है इसलिए वह निर्मल कर्म का यत्न करता है। और कुबुद्धि को तर्क करना (त्यागना) चाहता है। ऐसा आदमी इन्सानों की कतार में असली मनुष्य है। इस जीवन का बेहतर पहलू यह है कि सत् विश्वास अंदर आए। जब सत् विश्वास आएगा, परमेश्वर को देखेगा। बुद्धि जाग्रत होगी। शारीरिक मोह ऐसा कम किया जाएगा कि परमेश्वर के निकट पहुंच जायें ताकि खुद भी ठीक हों और दूसरों को भी ठीक करें। ज्यों-ज्यों परमेश्वर के निकट पहुंचेंगे उसी कदर त्याग, आनन्द को अनुभव करेंगे। वह इन चीज़ों का समुन्द्र है और यह चीज़ें उससे प्रगट होती हैं। जितने भी अवतार हुए हैं दुनिया उनके आगे इसलिए झुकी। बिजली के बल्ब में जैसे बिजली आ जाती है और कमरे को रोशन करती है, उसी तरह परमेश्वर को अनुभव करने से क्रूर-कर्मी भी देव-कर्मी हो जाते हैं। इस शरीर में जब परमेश्वर की रोशनी आती है तो उसकी ऐसी हालत होती है।

पहले था मन काग यह, करता जीवन घात।
फिर यह मन हंसा भया, चुन-चुन मोती खात।।

यानि पहले इसकी काग वृत्ति थी और हर अच्छी बुरी शै को खा जाता था। मगर जब हंस वृत्ति आई तो शुद्ध गिज़ा ही खाता है और गुण ही ग्रहण करता है। ऐसा जब निश्चय दृढ़ हुआ उस वक्त उससे खौफ़ ग़ायब हो गया। महापुरुषों और आम लोगों की बुद्धि में क्या फर्क है? महापुरुषों की बुद्धि ने अभिमान पर अबूर (काबू) पाया है। भृगु ने जब ब्रह्मा, विष्णु और शिव का इम्तिहान लिया तो उन्होंने विष्णु की छाती पर लात मारी, तो बजाए नाराज़ होने के विष्णु ने कहा कि ऋषि जी, मेरी छाती सख़्त है आपके पांव को तकलीफ तो नहीं हुई। जब भृगु ने यह बात सुनी तो उसने कहा कि वर मांगो। तब विष्णु ने कहा:- 'आपके पांव का चिन्ह मेरी छाती पर लगा रहे।' ईश्वर परायण मनुष्यों की कठोरता ख़त्म हो जाती है। लेकिन मायावादी पुरुष लाचार हैं। महापुरुषों ने चेतावनी दी है कि परमेश्वर और जीव को न मिलने देने वाला अहंकार है। इसलिए महापुरुषों ने इसको दूर करने के लिए कहा है। इस अहंकार के नाश करने की कोशिश करें। ज्यों-ज्यों अहंकार ख़त्म होता है त्यों-त्यों मनुष्य ईश्वर के नज़ दीक पहुंचता जाता है।

देवी का रूप आपने देखा होगा। हाथ में हथियार हैं। सिरों का हार पहना हुआ है। शेर की सवारी है। यह शेर नहीं अहंकार है। अहंकार से रहित देवी के लक्षण हैं। सर्वाजीत पुरुष के यह लक्षण हैं। कबीर साहब ने कहा है-

कंचन तजना सहज है, सहज नारी का नेह।
मान बड़ाई ईर्खा, दुर्लभ तजना एह।।

अहंकार को छोड़ना मुश्किल है। जिन्होंने सही समझा है वह बर्फ की तरह ख़त्म होकर पानी बन जाते हैं। मनुष्य में त्याग होना चाहिए। ईसा की तरफ ध्यान दें। उसका असली त्याग था। प्रेम होना चाहिए। असली प्रेम तब ही होता है जब जहरीली चीज़ों से भी प्रेम बना रहे। यह ईश्वर–वादियों के लक्षण हैं। शरीर की ही पूजा ठीक नहीं, पहले उस चीज़ की परस्तिश ज़रूरी है जिसके सहारे यह शरीर चल रहा है। दुनिया में इस वक्त जितने भी सामान पैदा किए जा रहे हैं, वह अंधकार ही फैला रहे हैं। बेशक यह कहा जाता है कि यह रक्षा के सामान हैं। अच्छा जीवन अगर कोई बनाये तो सुख है। अपने आपको ईश्वर परायण बनायें और ग़लत वासनाओं को न उठने दें। जितना भी परमेश्वर का निश्चय बढ़ता जायेगा उतना ही मनुष्य निर्मान हो जाएगा और प्रेम और शान्ति की तरफ जायेगा। प्रधान नुक्स जीवों में यह है कि हर शख़्स अपनी त्वचा के शृंगार में लगा रहता है। इस पिंजरे यानि शरीर का जितना शृंगार करता है उतना ही अहंकार बढ़ता है और बेग़ैरत और लज्जा पर पानी फेर देता है। स्त्री जो शृंगारी है वह कलंकित है। अगर घरेलू आराम की इच्छाएं हैं तो अपने जीवन को सादगी की तरफ ले आओ। सिनेमा मत जाओ, इससे कुछ हासिल न होगा। नशे का त्याग करो, क्योंकि नशा भी ख़राब करता है। बुद्धि को ख़राब करता है। वक्त को आवारागर्दी में जाया न करो। अपने बुज़ुर्गों के जीवन का मुतालया (अध्ययन) करें। अगर ईश्वर पर निश्चय आये तो दो घड़ी उसे याद करो। ईश्वर की शक्ति पूरी तरह समझा रही है लेकिन तू नहीं समझ रहा है। ऐसा जो परम दयालु ईश्वर हैं उसको याद करो। ऐसे रास्ते पर चलो जिससे खुशी मिले। यह रास्ता ही कल्याणकारी है।

संसार को देखने से पता चलता है कि अय्याश लोग हमेशा दु:खी रहते हैं। चक्रवर्ती भी तसल्ली की तालाश में हैं, ग़रीब भी आराम की तलाश में हैं। मूर्ख और आलम भी तसल्ली चाह रहे हैं। लेकिन सिवाये प्रभु प्रेमी के किसी को तसल्ली नहीं है। बाकी सब शरीर के सुखों में हर–दम मर रहे हैं।

जब लग ज़रा रोग नहीं आया। जब लग काल नहीं गरसे काया।।
तब लग सिमरो सारंग बानी। निर्मल जीवन की कथा सिरानी।।

जब–तक शरीर ठीक है आपको मौका है कि अपना कुछ सुधार लो। बिजली तो इस वक्त बहुत पैदा की जा चुकी है, लेकिन इस वक्त जो अक्ल इंसान में है वह रोशन नहीं। जुगनू में शायद ज़्यादा रोशनी है, लेकिन इंसान में रोशनी नहीं। लोग हर वक्त दूसरे का खून पीने की ख़्वाईश में लगे हैं। आपको चाहिए कि शरीर से सुगन्धित कर्म करो ताकि अपने आपको तसल्ली हो और लोगों को भी आपसे फायदा पहुंचे। सत्य, सेवा, सादगी, सत्संग, सत् सिमरण इन पांच असूलों को धारण कीजिए। कामिल पुरुष वह ही है जिसने इन असूलों पर अपने जीवन को ढाला है। शरीर आख़िर मिट्टी में मिल जाना है। शरीर की भक्ति ठीक नहीं। कंजरों की तरह हर वक्त बनाव–शृंगार में ही नहीं लगे रहना चाहिए। गांधी की क्या शक्ल थी और वह क्या शृंगार किया करता था?

शरीर की पूजा नहीं करनी चाहिए। कर्तव्य की पूजा की जाए। कर्म सुन्दर करो जिससे सारा ख़ानदान खुश हो। अपने पिछलों से गति करवाने का ख़्याल मत रखें। अगर आप इन पांच असूलों की वृद्धि करोगे तो असली खुशी पाओगे। ईश्वर सबको सुमति देवें ताकि अपने आपको समझते हुए उत्तम जीवन पेश करें, वरना जीवन तो अवश्य ही ख़त्म हो जाना है।

110. पत्रिका द्वारा प्रश्नों के उत्तर

श्रीनगर 16 अगस्त, 1952

श्री महाराज जी फरमाते हैं अपने प्रश्नों के उत्तर विचार करें।

(1) आत्मा सर्वज्ञ व्याप रहा है। गुरु ने आत्मा का बोध प्राप्त किया है और शिष्य, बोध प्राप्त करने के यत्न में लगा हुआ है। सही गुरु और शिष्य में यही फ़र्क है। गुरु की अवस्था में शिष्य कोई दूर नहीं, बल्कि उसके अपने पास ही है। जब-तक सही गुरु के तत् को शिष्य जान न लेवे, तब-तक शिष्य, गुरु से काफी दूर है।

(2) सुपुर्दगी यानि समर्पणता और यत्न का यह फल है कि समर्पणता के बल से यथार्थ यत्न ही हृदय से उत्पन्न होता है जो कि जीवन उन्नति में सहायक है और मलीन वासनाओं का अभाव हो जाता है। समर्पण बुद्धि के बग़ैर जो भी यत्न किया जाता है वह बंधन-दर-बंधन और वास्तविक अशांति के देने वाला होता है। यानि समर्पण बुद्धि से निर्मल संकल्प और निर्मल यत्न प्रगट होता है और उसके उलट हिंसावादी बुद्धि से बंधन रूप यत्न प्रगट होता है जो कि परम दुःख स्वरूप है। समर्पण बुद्धि की दृढ़ता शुद्ध यत्न को प्रकाशने वाली है और नित स्वरूप आत्मा के आनन्द में स्थिति के देने वाली है। सत्पुरुषों का प्रथम सार साधन समर्पण बुद्धि की दृढ़ता ही है।

(3) खूबसूरती का निर्णय यह है कि संसारी विचरित हालत में वासना की गिरफ़्तारी में जिन-जिन पदार्थों में मन अति मोहित होता है, उसके वास्ते वह ही खूबसूरत है ख़्वाहे बदसूरत और दुर्गन्धी सहित क्यों न हो। असली खूबसूरत वह ही है जो न बदलने वाला हो और जिस करके तमाम बदसूरत सूरतमंद प्रतीत होवें। वह एक परम तत् आत्मा ही है जिसके प्रकाश से तमाम जड़ प्रकृति प्रकाशवान हो रही है। वह ही सूरत परम प्रकाश और परम प्रसन्नता का भंडार है। ऐसा निश्चय होना चाहिए। अच्छी तरह विचार कर लेवें। ईश्वर सत् बुद्धि देवें।

111. पत्रिका द्वारा सत् उपदेश

श्रीनगर 24 अगस्त, 1952

परमार्थ मार्ग में दृढ़ निश्चय होवे। सतनाम की धारणा को दृढ़ करते रहना चाहिए यानि कर्ता-हर्ता सर्व एक अखंड आत्मा को जान करके अधिक श्रद्धायुक्त हो करके सिमरण में दृढ़ होना चाहिए। चूंकि अंतःकरण में कई जन्मों के विकार भरे होते हैं। इस वास्ते दृढ़ सिमरण उपासना के बल से बुद्धि अहंकार की मलिन को त्यागकर शुद्ध सरूप के बोध को प्राप्त होती है। इस वास्ते

अभ्यास का प्रोग्राम दृढ़ रखना चाहिए। प्रेमी जी, ऐसी साधना में तुच्छ मात्र भी समय लगता जावे तो भी अंतःकरण की शुद्धि होती जाती है और मानसिक तपिश से ठंडक प्राप्त होती है। अधिक से अधिक कोशिश करके नाम सिमरण में दृढ़ता धारण करनी चाहिए और तमाम शकूक तोहमात को त्याग करके एक गुरु वचन के परायण होना चाहिए। पिछले तमाम क्रूर-कर्म निश्चय करके गुरु चरणों में त्याग कर जो आइंदा निर्मल कर्तव्य पालन करने का यत्न दृढ़ करते हैं वह जल्द ही सत् शांति को अनुभव करने लगते हैं। ऐसा ही सत्पुरुषों का सिद्धांत है। जिज्ञासु का निश्चय गुरु-वचनों में अटल होना चाहिए तब ही मन तमाम कल्पना को त्याग करके एक नाम के परायण हो सकता है, जो परम शुद्धि और शांति का मूल है। परम पवित्र निश्चय से अभ्यास में मन लगाए रखें। आगे कल्याण प्रभु ख़ुद करने वाले हैं। ईश्वर सत् बुद्धि अनुराग देवें। तमाम परिवार, तमाम संगत को आशीर्वाद पहुंचे।

112. सत् उपदेश अमृत

शरीर रूपी संसार को धार कर हर एक जीव अपने-अपने शरीर विखे प्यासा है। हर एक के अंदर तृष्णा की प्यास बनी हुई है। ज्यों-ज्यों शरीर बढ़ता है, तृष्णा फैलती है। तृष्णा को पूरा करने की हर मुमकिन कोशिश की जाती है। बड़े-बड़े यत्न किए जाते हैं और यह ही करते हुए मानुष दुनिया में फैलता है और तृष्णा को पूरा करते-करते ही शरीर ख़त्म हो जाता है। लेकिन उसकी प्यास नहीं बुझती है, वह वैसे की वैसी ही बनी रहती है। सत्संग और गुरुद्वारों में जाकर इस बात को समझना है कि यह जीव क्या है? यह जीव पांच तत्त्वों का पुतला है और असली खुशी की तलाश में है। इसकी ख़ातिर शरीर के सुखों को एकत्र करता है, ख़्वाह वह मिलें या न मिलें। लेकिन यह हर वक्त उनको इकट्ठा करने में लगा रहता है और हर वक्त ख़्वाहिशात बनी रहती हैं। बचपन और जवानी गुज़र गई, बुढ़ापा आ गया, लेकिन अंदर पता न लगा कि दिल पर इन सुखों का क्या असर है?

अति तिरखा रहे दिन राती, जो भोगे अत ही भोग।
सुख संपत न हृदय जानी, उल्टा लागे व्याधी रोग।।

ऐ मानुष, तू अपने दिल को देख। तेरा दिल ही तेरी दुनिया है। अपने दिल को टटोलो और देखो वहां से तुम्हें क्या जवाब मिल रहा है? तुमने बहुत-बहुत सुख हासिल किए। लेकिन सुख प्राप्त होने के बाद भी दुःख खड़ा है। जब विचारवानों ने यह बात देखी तो कहा-

इस मन की तृप्ति कारने, राज तेज अत पाई।
पर पलक मिले न शांति, दिन-दिन दुःख अधिकाई।।

यानि अगर सुख इकट्ठे कर भी लिए हैं तो मन की शांति का यत्न कर, लेकिन कोई किसी चाल में है, कोई किसी चाल में। हर एक जल रहा है और मन को तृप्ति नहीं हो रही है।

ज़रा परापत एह तन होई, तृष्णा वेग दु:ख देवे।
जो संपत सो छाड़नी साजन, काल यह देही हर लेवे।।

जो कुछ इकट्ठा किया था वह छोड़ने का वक्त आ गया, लेकिन अभी भी भूखा वैसा ही है, जैसे पैदा हुआ था वैसा ही जा रहा है।

परम दु:ख रूप संसार से, अंधला जीवन नहीं सूझे।
सत् विसार भरम दु:ख पावे, नित अंधकार में डूबे।।

यह संसार जो देखने में सुख रूप प्रतीत होता है, उसके अंदर दु:ख है। इसकी अभी तो समझ नहीं आती। मगर जब शरीर जवाब देगा तब समझ आयेगी। इंसान बूढ़ा हो जाता है लेकिन कोशिश करता है कि और भी कुछ अर्सा जीता रहे। ज्योतिषियों के गिर्द घूमता है कि वह ही कहीं उसकी उमर लंबी कर दें। यह नहीं समझता कि पहले भी जी कर क्या बनाया है और अब ज़्यादा जी कर और क्या बनायेगा? विचारवानों ने तो यह समझा है:

छिन भंगुर यह भोग क्रीड़ा, मनवां तापे नित।

जो भी शारीरिक भोग हैं नाश होने वाले हैं। यह छिन में आते हैं, छिन में चले जाते हैं। हर वक्त नई से नई उम्मीद बनी रहती है। आदमी सोचता है कि अगर अब सुख नहीं है तो फलां चीज़ मिलने पर सुख होगा, लेकिन जब वह चीज़ मिल जाती है तो सुखी नहीं होता बल्कि तृष्णा बढ़ती जाती है। यह ही भूल है। असल बात को नहीं समझता है कि असल में सुख इन चीज़ों में नहीं है-

राजा दुखिया दु:ख में तापे, और तापे कुल संसार।
तृष्णा अग्नि ठंडी न होवे, कित गुण करें विचार।।

छोटे लोगों की बात ही क्या है? बड़े-बड़े राजे भी तप रहे हैं। दूसरे लोग समझते हैं कि राजे-महाराजे आराम में हैं, लेकिन वह तो बड़े बीमार हैं। वह अपनी तृष्णा को पूर्ण करने में लगे हैं और मजबूर हैं। लोग यह ही कहते हैं कि वह राजे-महाराजे मोटर, कारों में सैर करते हैं और बाकी अय्याशियां भी करते हैं। अगर वह मोटर, कारें उनको भी मिलती तो उनको भी पता चलता कि उनको आराम नहीं है।

देखना चाहिए कि असली आराम का स्वरूप क्या है? वह असली शांति जब तेरे अंदर आएगी तो तू चक्रवर्ती राजा को भी कुत्ते की तरह समझेगा, क्योंकि वह भी तृष्णा से ही मजबूर है।

आख़िर कलगियों वाले भी मिट्टी में मिल जाते हैं। जो भी संसार में पैदा हुआ है या जिसको भी यह चमड़े की आंखें देख रही हैं, वह अपने अंदर प्यासा है और हर वक्त तृष्णा की आग को पूर्ण करने में लगा हुआ है। तृष्णा की आग इस तरह फैलती है जैसे आग में घी डालने से आग फैलती है।

वैद्य धनंतर मर गया, और लुकमान हकीम।
हाज़ी ग़ाजी न बचे, खा गया काल ग़नीम।।

तृष्णा की प्यास को कौन बुझाये? बड़े–बड़े इसको पूर्ण करते–करते ही ख़त्म हो गए। यह कभी भी पूर्ण न हुई। ऐ मानुष, तू कैसे पूर्ण करेगा? जितना जी लिया, काफी है। ज़्यादा जीने की ख़्वाईश न कर।

आये निराशे गए प्यासे, बड़े भूप संसार।
इस मन की तृष्णा न मिटी, जो कोटक किए विचार।।

सभी छोटे–बड़े इस संसार से प्यासे ही गए। महापुरुषों ने जब यह बात समझी तो कहा–

अरब खरब धन होवे प्रापत, घना पायो परिवार।
इस मन को धीरज न मिली, दिन–दिन दुःख अपार।।

ख़्वाह अरबों रुपयों हों, घना परिवार हो वह धीरज नहीं दे सकते हैं। ऐ मानुष, तू हर वक्त परिवार के बारे में ही सोचता रहता है, मगर तेरा तो ज़रा भी दर्द किसी को नहीं है। यह ही संसार का मेला है। हर एक के साथ ऐसा ही होता है। इसलिए शरीर के शुरू और ख़ात्मे का ख़्याल हर वक्त रहना चाहिए। क्योंकि जिसको यह ख़्याल है कि वह हमेशा जीता रहेगा, वह अच्छे कामों को आइंदा के वास्ते टालता रहता है वह बहुत पाप करता है।

और का मरना देखता, अपना मरन भुलाये।
यह ही गफ़लत धार के, बेहद पाप कमाए।।

इंसान औरों को मरता देखता है। शमशान में जाकर मुर्दों को जलाते और दफ़नाते देखता है लेकिन अपना मरना भूल चुका है। यह नहीं समझता कि उसका भी यही हाल होगा। गुणी लोग हर वक्त मौत को याद रखते हैं। मूर्ख और गुणी में यही फ़र्क है। मूर्ख मौत को भूल कर दूसरों का खून चूसता है। लेकिन आख़िर उसने भी ख़त्म हो जाना है और बाद में पछताने से कुछ हासिल न होगा। इसलिए सत्संग में इस बात का विचार करना है कि जीवन असल में क्या चाह रहा है? और जीवन का असल ध्येय क्या है? इंसान चाहता है कि वह खुशी मुझे प्राप्त हो जो कभी ख़त्म न हो। लेकिन तेरा शरीर जिसकी ख़ातिर यू यत्न–प्रयत्न कर रहा है, ख़त्म हो जावेगा और तेरी चाह पूर्ण नहीं होगी।

जो देखन में आवे साजन, सो ही रूप वटाए।
जो आज थिया सो कल न होवे, काल ग्रसत को पाए।।

जो चीज़ आज नज़र आ रही है कल न होगी। तुमको पता नहीं एक दिन तुम भी बदल जाओगे। जो चीज़ बदलने वाली है तुम उससे हमेशा सुख कैसे पा सकते हो? विचारवानों ने कहा–

एह तन स्थिर न रहे, न यह सुख और भोग।
मिथिया लागी दूषणा, नित–नित घना रोग।।

आप बेशक कोशिश करें कि यह शरीर हमेशा के लिए बना रहे, मगर यह ज़रूर ख़त्म होगा और इसमें सुख भी नहीं मिलेगा। राजा जनक को जब ज्ञान दिया गया तो कहा गया कि हे राजन, जो तू कहे कि मैं सुखी हूं या दूसरे सुखी हैं, यह ग़लत है। जब कोई लाला दूसरे लाला से मिलता है तो एक के पूछने पर कि लालाजी क्या हाल है? वह जवाब में कहता है– कि बहुत अच्छा है।

लेकिन थोड़ी देर बाद ही अपना बहीखाता खोल देता है और कहता है कि क्या अच्छा है? गुज़ारा नहीं होता है। बच्चा बीमार है। मुक़दमेबाजी की मुसीबत पड़ी है या मकान गिर रहा है, वग़ैरा–वग़ैरा। बेईमान, पहले कहता था राज़ी–खुशी हूं, आराम से हूं, लेकिन फौरन ही बाद बहीखाता खोल देता है। असलियत यह है कि असल में कोई सुखी नहीं है बल्कि सुख की तलाश में हर एक घूम रहा है। सबने अपनी–अपनी चौसर–बाजी लगाई हुई है। कोई सिनेमा में खुश है, कोई शराब में सुख महसूस करता है और कोई गृहस्थ में। लेकिन सब ही अंधेरे में फंसे हुए हैं। सभी लोग शारीरिक सुखों की तलाश में लगे हुए हैं। शारीरिक सुखों की आस में ही ख़त्म हो जायेंगे। विचारवानों ने सोचा कि यह ग़ल्त तरीका है। दुनिया की वस्तुओं में सुख मुकम्मिल नहीं है। महापुरुषों के सत्संग से पता चलता है कि सुख क्या चीज़ है? असली सुख उस वस्तु में है जो हमेशा दायम–कायम रहने वाली है, जो सत् है।

नित प्रापत नित परिपूर्ण, घाट वाध नहीं पाये।
तां के संग मन होये तृप्ती, सो परम सुख अधिकाये।।

जो हमेशा मौज़ूद है और परिपूर्ण है, ऐसी जो चीज़ है वह ही हमेशा का सुख है। जिसमें तबदीली नहीं है वह परमेश्वर, जीवन शक्ति है, जिसकी वज़ह से यह शरीर चल रहा है। ऐसा विचार जब महापुरुषों को आया तो उन्होंने समझा कि शरीर नामुकम्मल है। इसके सुख नामुकम्मल हैं और इसके पीछे दौड़ने का लाभ नहीं। यह जानकर उन्होंने अपनी ज़िन्दगी में मर्यादा धारण की। नुमायशी जीवन को छोड़ा, सादगी में आए। उस वक्त उनकी बुद्धि में परमेश्वर का तसव्वर (ध्यान) आया। अंदर से हर एक जीव खुशी चाह रहा है क्या जवान, क्या बूढ़ा, क्या रोगी, क्या योगी? सभी खुशी की तलाश में परेशान हैं। लेकिन खुशी को नहीं जानते। लोग समझते हैं कि अगर अब शान्ति नहीं तो पुत्र होने पर शान्ति नसीब होगी। पुत्र पैदा हो जाने के बाद भी जब शान्ति नहीं होती तो समझते हैं अब पौत्र होगा तब शायद शान्ति मिलेगी। पौत्र भी पैदा जो जाता है, लेकिन फिर भी शान्ति नहीं मिलती। इसलिए देखना यह है कि शान्ति है कहां?

सत्पुरुषों ने बतलाया कि शान्ति तो इन चीज़ों में है ही नहीं। शान्ति तो परमेश्वर के अनुभव होने पर होगी। जिस शान्ति के सहारे तेरा पिंजरा चल रहा है उसमें असली सुख है। उसकी खोज कर। पहले बुद्धि मादावाद में फंसी हुई थी और शरीर के सुखों को ही जीवन की सार समझ बैठी थी। लेकिन जब मादावाद को छोड़ा तो परमेश्वर के निश्चय को प्राप्त हुआ।

सत् परतीत पाई जब अंतर, नाम जपा अबनाशी।
मन की अगन ठंडी हुई, नासी भरम चौरासी।।

मन की अग्नि तो चक्रवर्ती राज से भी ठंडी नहीं होती। लेकिन परमेश्वर की प्राप्ति से ठंडी हो जाती है, यानी मन तृप्त हो जाता है। तृप्ति का स्वरूप क्या है? ज्यों–ज्यों परमेश्वर की प्राप्ति होती है त्यों–त्यों मन को शान्ति प्राप्त होती है।

अगन लागी संसार को, आसा मंसा मीत।
ठंड पावे सो साजन जग में, जो नाम जपे सुख रीत।।

विचारवानों ने समझा कि सभी रो रहे हैं, ख़्वाह कोई अमीर है, ख़्वाहे ग़रीब, कोई बच्चे वाला है या बांझ, कोई बूढ़ा है या जवान। जब ग़हरे ख़्याल से दुनिया को देखा तो उनको प्रतीत हुआ कि किसी को भी आराम नहीं। तब उनको भी समझ आया कि संतों की बात ठीक है–

सत् सरूप जब चिन्तन किया, गहरी प्रीत लगाए।
तब इस मन को तृप्ती हुई, मूल रोग दुःख जाए॥

जब विचारवानों ने समझा कि इस दुनिया में आराम नहीं तो प्रेम से परमेश्वर की खोज में लग गए।

ज्यों-ज्यों प्रेम पाया प्रभ माहीं, मनुआ भया अचिन्त।
टांका लागा प्रेम का, जप-जप नाम अनन्त।।

फिर उन्होंने देखा–

अमृत धारा अंतर जारी, अंधा बाहर उठ धावे।
बिख को खावे ते बक-बक मरे, अमृत को नहीं पावे॥

देखिए मन तो हर वक्त बाग़ी है, बग़ावत कर रहा है। महापुरुषों ने कहा कि क्यों दुःखों को इस तरह फैला रहे हो? इस पिंजरे में जो पंछी है उसको पाने की कोशिश करो।

घट विच वस्त अगोचर बासे, जो काल कर्म से भिन्न।
'मंगत' परसया रूप अगाही, जहां रूप वरण नहीं चिन्न॥

ऐसे अगाही रब्ब को जिसने जाना उसने ही सही जाना है। फिर उसके लिए सोना और माटी में कोई फ़र्क नहीं रहता। दुःख-सुख एक ही जैसे महसूस होते हैं–

कंचन माटी एक समाना, दुःख-सुख एक बख़ाना।
अंतर लागा प्रभ नाम में, जीव पाए कल्याना॥

उस शख़्स को ही आप बाहोश कह सकते हैं। वह शख़्स वैसे आराम में है, जहां उसको न ही सुख है और न ही दुःख महसूस होता है। बल्कि वह इन महसूसात से ऊपर होता है। उसकी इस आनन्दमयी हालत को देखकर राजे, महाराजे, चक्रवर्ती भी उसके पास जाकर पूछते हैं कि हमारे पास बहुत से दुनियावी सुख और जाहो (सम्पत्ति) व जलाल (सम्मान) होने पर भी हमें सुख नहीं, आपने यह सुख कैसे पाया है? तो वह विवेकी जवाब में कहते है– कि ऐ मूर्ख! तू जो ग़ैर मौज़ूद चीज़ है उसकी प्राप्ति की कोशिश में लगा है। वह ख़त्म हो जायेगी। प्रभु तो किसी वक्त भी तुमसे जुदा न था। उसके पाने की क्यों कोशिश नहीं करता? जो चीज़ पहले नहीं थी वह बाद में भी नहीं रहेगी। इसलिए जो चीज़ हमेशा रहने वाली है और पूर्ण आनन्द है, उसकी खोज कर। आख़िर इस विचार की सार यह है कि इस वक्त दुनिया अंधेरे में दौड़ रही है और हर वक्त शारीरिक सुख ही एकत्र कर रही है। जितने-जितने शरीर के सुख प्राप्त किए जा रहे हैं उतनी ही जल्दी यह पिंजरा नाश को प्राप्त हो रहा है। अगर सुख

के सामान बहुत एकत्र करेगा तो दुःख भी बाद में बहुत होगा। बेहतर यह ही है कि सादगी को पकड़ो। नुमायशी ज़िन्दगी को छोड़ो। इस शरीर के बनाव शृंगार को तर्क (त्याग) करो। इस शरीर के अंदर जो चीज़ है उसको जानने की कोशिश करो। शरीर को मर्यादा में रखकर अपना निश्चय परमेश्वर में लगाओ। तब तेरी बुद्धि सही समझेगी और तेरा कल्याण होगा। वरना इस वक्त न तो खाने की तमीज़ है न पीने की। इस तरह तुम्हारा कुछ न बनेगा।

असली जीवन की सार यह है कि जीवन को मर्यादा में रखो। यह अंत में दुःख रुप है। इसको सादा बनाओ। सादी गिज़ा खाओ। व्यापार में भी ईमानदारी वरतो। ब्लैक मार्किट मत करो। जितने भी दुनिया में महापुरुष हुए हैं उनके जन्म तो तुम्हारी तरह के ही हुए हैं, मगर उनके उच्च कर्म उन्हें महापुरुष बनाने वाले थे। जो इस शरीर की सजावट–बनावट में हर वक्त लगे रहते हैं वह दूसरे की बेहतरी कब कर सकते हैं? शरीर के पिंजरे की पूजा मत करो। पूजा उसकी करो जो अपने शरीर के अंदर मौज़ूद है, जो इसको चला रहा है। जब मौत नज़दीक आती है तो बहुत तकलीफ़ होती है, और जब जान नहीं निकलती है तो तंग होकर कहता है– 'मुझे ज़हर दो ताकि मेरी जल्दी ख़ुलासी हो जावे।' पहले वह समझाने पर भी सही रास्ते पर नहीं चलता था। हियूंग–सांग एक चीनी यात्री चन्द्रगुप्त के वक्त हिन्द में आया। जब वह चन्द्रगुप्त के दरबार में पहुंचा वहां उसने एक काला कलूटा आदमी लंगोट बांधे हुए देखा। सब ही उसके हुक्म की पूरी तामील करते थे। वह चाणक्य ऋषि था। उसने अपने सफ़रनामे में लिखा है कि वह चाणक्य का घर देखने गया। वहां पर उसने देखा कि मामूली सी झोंपड़ी है और उस पर उपले पड़े हुए हैं। यानी उसकी सादगी से बड़ा प्रभावित हुआ। चन्द्रगुप्त एक बक्रवाल (बकरियाँ चराने वाला) था और चाणक्य ने उसका राज्य यूनान तक पहुंचाया। गांधी को निम्न ज़ात ही देखें किस कदर सादा था? हियूंग–सांग टैक्सला गया। वहां उसने बौद्धों की यूनिवर्सिटी देखी। यूनिवर्सिटी के चांसलर को देखा कि दो पैसे का कपड़ा जिस्म पर लगाए हुए है और उसकी रिहाईश भी आजकल के बड़े आदमियों की तरह न थी, बल्कि निहायत सादा थी। और इस देश का जो राजा था वह उस चांसलर पर छत्र किया करता था। मतलब यह है कि आजकल की आदात से अंदर जो ताकत बे–ख़्वाहिशी है, वह ज़ाया हो रही है। शरीर को जितना सादा बनायेंगे उतना ही अच्छा रहेगा। आजकल शरीर की पूजा ही सबको तबाह कर रही है। ऋषियों, देवताओं का जो जीवन है उसका मतलब है कि शरीर द्वारा जो कर्म करो उससे आम लोगों को आराम मिले। जिस्म को खूबसूरत बनाने से कुछ हासिल नहीं होगा। बल्कि कर्म खूबसूरत करने चाहिए। अगर दूसरे की सेवा करोगे तो तुम खूबसूरत हो और अगर अच्छे कपड़े पहनकर दुनिया को तंग करोगे तो खूबसूरत नहीं कहला सकते। महापुरुषों ने कहा है–

जननी जने तो भक्त जन, या दाता या सूर।
नहीं तो जननी बांझ रहे, काहे गंवावे नूर।।

जननी अगर जने तो भक्त जने या दाता जने या सूरमा जने और अगर ऐसा न कर सके तो मत जने। ऐसे पुरुषों की माताएँ धन्य हैं जो अपने आपको मर्यादा में रखते हुए दूसरों की भलाई में धन सर्फ़ (खर्च) करते हैं और दूसरों के दुःखों को दूर करना ही अपना काम जानते हैं। वह पिंजर ही

प्रकाश वाला है जो दूसरों की सेवा करता है। आजकल कंघी–पट्टी में चार घंटे लगा देते हैं, लेकिन बीमारों को पानी नहीं पिला सकते हैं। मतलब यह है कि जब–तक कोई शरीर के बनाव–शृंगार से ख़ुलासी न पाये, दूसरों की क्या भलाई कर सकता है? आप मग़रिब (पश्चिम) की नकल न करें बल्कि अपने बुज़ुर्गों की नकल करें। वह ही त्यागी हुए हैं। यह इतिहास आपके मुल्क का है। परीक्षित जब नौ माह का बच्चा था तो उसे पांडवों ने राज दिया और ख़ुद जंगल में चले गए। धन को इक्ट्ठा करने का विचार ख़राब करता है। वह जिस तरह आता है उसी तरह चला जाता है। बुनियादी असूल यह है कि अपने आपको सादा बनाओ। इससे खर्च कम होगा। चिंता भी थोड़ी होगी और थोड़ी रकम में गुज़ारा हो जावेगा। नुमायशी ज़िन्दगी से खर्च पूरा न होगा। आजकल बाप अगर बेटे को सिनेमा के लिए पैसे नहीं देता तो वह घर में कुहराम मचा देता है। जिस रास्ते पर आज दुनिया चल रही है उसमें शांति नहीं है। जो अच्छे पुरुष दुनिया में हुए हैं वह कौन हुए- जिन्होंने दूसरों के मांगने पर अपना चमड़ा भी उधेड़कर दे दिया। आजकल कहा जाता है कि यह रोशनी का ज़माना है। यह रोशनी का नहीं बल्कि दुराचारी जीवन का ज़माना है। देवताओं का जीवन ख़त्म हो रहा है। इस जीवन में निहायत ही बड़े उपद्रव हो रहे हैं। जीवन तो इसलिए मिला था कि इसको सामान्य हालत में रखकर इससे फ़ायदा उठाया जाए और अच्छे कर्म किए जाएं, मसलन दान–पुण्य, नाम–सिमरण इत्यादि।

देवन को अन्न दान है, लेवन को सत्नाम।
तरने को है दीनता, डूबन को अभिमान।।

देने को अन्न दान श्रेष्ठ है और लेने को सत्नाम। तरने के लिए दीनता की ज़रूरत है और नीचे गिराने वाली चीज़ अभिमान है। आप बड़े काम करने से बड़े बन सकते हैं। अगर आज किसी पर उपकार करते हैं तो यकीनन बड़े हैं। अगर ज़्यादा न कर सको तो भी इन चार–पांच बातों को याद रखें।

(1) सादगी (2) सेवा भाव–हर मुमकिन कोशिश करके तन, मन और धन दूसरों की सेवा में लगाओ। (3) छल–कपट से परहेज़ करो और सच्चाई को अपनाओ (4) नित ही महापुरुषों के जीवन व चरित्रों का स्वाध्याय करें। सत्संग से प्रीत रखें। (5) दो घड़ी वक्त निकालकर हर रोज़ परमेश्वर को याद करें। यह ही बुनियादी उसूल हैं। इनमें से आप अगर एक भी धारण कर सकेंगे तो खुद–ब–खुद सारे असूल आ जायेंगे। संसार में जब आप आए हैं, ऐसी करनी कर चलें जिससे आप खुद भी प्रसन्न रहें और दुनिया भी प्रसन्न हो जाए। ऐसा काम मत कर जाओ जिससे ख़ुद को भी शर्मिन्दा होना पड़े और लोगों को भी नुकसान पहुंचे।

साजन ऐसी करनी नित ही कीजो, जो मन देवे प्रसन्नता।
हर की सेव मन ध्याइयो, नासे रोग अनन्ता।।
ज्यों–ज्यों पर की सेव कमावे, इस मन की तपन होए दूर।
'मंगत' मिले अभय पद, जग जीवन सत् सरूर।।

यह ही असली खुशी है। और अगर सुख चाहते हो तो अपने सुखों को दूसरों के दु:खों पर न्यौछावर कर दें। अगर अपने सुख त्याग न करोगे तो सुख नहीं मिलेगा। वैर का त्याग करो। बड़ा

बनने का यही तरीका है। अपने ख़ानदान और परिवार को अगर आराम में रखना चाहते हो तो इन असूलों को याद रखें और अमली जीवन बनायें जिससे आप तरक्की कर सकें। ईश्वर सबको सुमति देवें।

113. समता योग आश्रम की प्रबन्धक नीति

(1) श्री सतगुरु महाराज जी की आज्ञा अनुसार अपनी आध्यात्मिक उन्नति के वास्ते 'समता योग आश्रम' जगाधरी में संगत ने कायम किया है। जो कि संगत का ही पूज्य स्थान है और इसके प्रबन्ध के वास्ते संगत ही जिम्मेवार है।

(2) आइंदा ज़माने में आश्रम की बाएहतमामी (प्रबन्ध) एक शख़्स के नाम दुबिधा का कारण है और आश्रम के प्रबंध के वास्ते भी हानिकारक है, इस वास्ते आश्रम के प्रबंध के वास्ते ट्रस्ट होनी चाहिए।

(3) ट्रस्ट में ऐसे प्रेमी शामिल होने चाहिए जिन्होंने अपना तमाम जीवन संगत सेवा में अर्पण किया हो या जो अपनी कमाई का दसबंध गुरु आज्ञानुसार संगत सेवा या आश्रम सेवा में भेंट करते चले आए हैं या आइंदा अपनी कमाई का दसवंध आश्रम सेवा में भेंट करना चाहते हों और आश्रम को निश्चय पूर्वक पूज्य स्थान समझते हों और समता के नियमों के पूर्ण अनुयाई हों। तो ऐसे श्रद्धावान चंद प्रेमियों के नाम आश्रम ट्रस्ट में होने चाहिए। और इस तरह जब किसी मेम्बर की तबदीली की जाए तो ऐसे ही श्रद्धावान चंद प्रेमियों को ट्रस्ट में शामिल करना चाहिए। और संगत के वास्ते ऐसे मेम्बरों का उत्साह आश्रम प्रबंध में बढ़ाना अधिक लाज़मी है। तब ही आश्रम का प्रबंध समता के नियमों अनुकूल शुद्ध रीति से चलता रहेगा।

(4) संगत जिस वक्त चाहे ट्रस्ट कायम करवा सकती है। सतगुरु महाराज की पूर्ण आज्ञा संगत के वास्ते है। सब संगत को इस प्रबन्धक प्रोग्राम का बोध होना चाहिए।

(5) यह नीति बतौर चेतावनी आइंदा ज़माने में आश्रम प्रबंध के मुतालिक तहरीर कर दी जाती है जिस पर तमाम प्रेमी कारबंद रहें।

दस्तख़त – मंगत राम

अज़ श्रीनगर 30 असाढ़, सं 2000

यह नीति सत्पुरुष ने श्रीनगर से तहरीर फरमाकर बाबू अमोलक राम जी को जगाधरी भिजवा दी और साथ ही आज्ञा दी कि बमौका सम्मेलन इसे पढ़कर सब संगत को सुना दिया जावे। बाबू जी ने इसे संभाल कर रिकार्ड में रख लिया।

114. सत् उपदेश–अमृत

शरीर रूपी संसार को धार के इस मानुष जूनी में धर्म का विचार सुनने की बहुत कोशिश करें। पक्षियों के लिए तो कालेज खुले नहीं हैं लेकिन मानुषों के लिए तो बहुत अदारे खुले हैं।

धर्म क्या है? धर्म के मायने हैं धारणा या निश्चय में लाना। बुद्धि में एक धर्म खूब मचा हुआ है यानी शारीरिक सुखों की पूर्ति। ख़्वाह अमीर है या ग़रीब, ख़्वाह बूढ़ा है या जवान, हर एक में शरीर के सुखों की चाहना बनी है। इससे आगे अपनी बुद्धि के मुताबिक जो भी यत्न करता है, किसी को ज़्यादा सुख मिलता है और किसी को कम सुख प्राप्त होता है। यह बात किसी ने सिखाई नहीं है, बल्कि शुरू से ही चली आ रही है। ज्यों-ज्यों सुख मिलता है त्यों-त्यों खून भी अंदर बढ़ रहा है। इस वास्ते संसार का जो स्वरूप है वह शरीर के सुखों की पूर्ति ही है। इसके लिए बाज़ लोग खुद यत्न करते हैं, बाज़ देवी-देवताओं से सुखों की पूर्ति चाहते हैं। बाज़ तीर्थों से यानी काशी, गंगा और काबा वग़ैरा जाकर शारीरिक सुख चाहते हैं। यह सब कुछ शरीर के सुखों के लिए किया जाता है, परमेश्वर को हासिल करने के लिए नहीं। मन्दिरों में भी लोग शारीरिक सुखों के लिए जाते हैं। इस प्रकृति का क्या चक्कर है? किसी वक्त भी शारीरिक सुखों का ख़्याल मानुष से नहीं छूटता है। यह शारीरिक सुख भी पूरे नहीं होवेंगे। देखें! जो लाला ज़्यादा पैसे वाला है उसको भी तसल्ली नहीं है, यानी ज़्यादा कमाई और थोड़ी कमाई वाले सभी रो रहे हैं। इन हालात को जानकर विवेकी पुरुषों ने निर्णय किया-

अरब खरब धन होवे प्रापत, इन्द्रलोक का राज भी पाई।
इस मन की न अग्नि विनाशी, दिन-दिन बढ़ती जाई।।

बेशक इन्द्र का राज्य मिल जाए, आग ठंडी न होगी। आम संसारी जीव इसी तरह चल रहे हैं और उनकी बुद्धि ने एक काम किया है, पहले अपने शारीरिक सुख चाहते हैं, फिर कहते हैं कि हमारे बेटे-पोते हमें सुख देंगे। संतों ने ठीक कहा है कि संसारी ग़रीब हैं। जिस वक्त लाला ज़्यादा उमर वाला हो जाता है उस वक्त बेटे सोचते हैं कि लाला कहीं मरे। कई लोग मर रहे हैं मगर लाला के लिए मौत भी नहीं, यानी वह लाला के मरने की घड़ी की तलाश में होते हैं। और लाला किसी और ग़लत ख़्याल में है कि वह मरने के बाद उसकी गति करवायेंगे। विवेकी पुरुष जो मुआलिज़ जीवन थे, जिन्होंने देखा कि दुनिया में आने वाले की जलन ठंडी नहीं होती, उन्होंने सोचा कि बहुत अर्सा बिता दिया है, एक दिन गुज़रा दूसरे दिन फिर वही यत्न करता है और फिर देखा कि वह वहीं का वहीं है जहां पहले था। जब यह सोचा तो उन्हें पश्चाताप हुआ और उन्होंने जीवन का यह निर्णय निकाला कि जीव के सुख किस तरह पूरे हों। वह किसी मुआलिज़ से पूछने गए। बड़े सम्राट के पास गए। तलाशे-हक करने वाले फनियर सांप के पास गए। लेकिन उन्होंने देखा कि सम्राट भी बावज़ूद ताज के बे-आराम है। फनियर सांप भी बग़ैर तसल्ली के है। उस वक्त उन्होंने कहा कि यह सब कैदखाने में बंद हैं। तब वह दूसरी जगह गए। देखा कि एक मुनि बैठे हैं। स्वामी विवेकानन्द की तरह उनके पास गए और वहां जाकर पूछा- कि क्या उनको सही आराम हासिल है? फिर पूछा- कि क्या आपने ईश्वर को देखा है? तो उन्होंने जवाब दिया- हां, ईश्वर को ऐसे ही देखा है जैसे तुमको देखा है। उस बीमार ने जब मुनि को देखा तो यह हालत थी-

सत टुकड़े कौपीन के, मन में सदा निसंग।
राम रतन माथे चढ़ा, गए अन्दर को अंग।।

राज प्राप्त करके मन प्रसन्न नहीं होता है। उसने मुनि से पूछा- कि आपको इतनी शांति कैसे आई? मेरे पास सब कुछ है पर आराम नहीं है और आप हैं कि कुछ भी नहीं और निहायत आराम महसूस कर रहे हैं। तब मुनि ने पूछा:- तुम क्या चाहते हो? तो उसने कहा:- आराम चाहता हूं। फिर मुनि ने पूछा:- आराम की तफ़्सील करो। जवाब न पाकर मुनि ने कहा:- मैं वह आराम देख रहा हूं जो इस शरीर के बिगड़ने पर भी कायम रहता है। मंसूर को जब सूली पर चढ़ाया गया तो उसने अपने खून को गालों पर मला ताकि लोग यह न समझें कि फांसी के डर से ग़म महसूस कर रहा है और डर से मुंह पीला हो गया है, बल्कि खुशी से लाली आ गई है। जिस तरह दुर्वासा के पास कृष्ण जी गए, वशिष्ठ के पास राम जी गए और आराम पाया। मुनि ने समझाया कि अपने अंदर ग़ौर करो तो पता चलेगा कि सुखों का पूरा होना ही दु:ख है। जब-तक ख़्वाहिशात पूरी न हों, तो दु:ख है। उस वक्त मुनि ने समझाया कि क्या सुख किसी के भी पूर्ण हुए हैं? जो चीज़ वास्तव में अपूर्ण है आप उसे कैसे मुकम्मल कर सकते हैं? उस वक्त इंसान का पर्दा दूर हुआ और दूसरी थ्योरी को समझा। पहले उसने समझा था कि शरीर के सुख ही पूरे करता रहूं। लेकिन दूसरी थ्योरी से समझा कि शारीरिक सुख अपूर्ण हैं। यह कभी पूर्ण न होंगे। उसने सोचा वह सुखों को कैसे छोड़े? क्योंकि वह सुखों में लिप्त है, खाने-पीने में लिप्त है, किस तरह सुखों का त्याग करे? मुनि ने कहा- कि एक दम बात न बनेगी। उन्होंने कहा:- पहले लिबास सादा पहनो। खाने के मुतालिक उन्होंने कहा- कि शरीर को चलाने के लिए खाओ, सादा खाओ। जिस तरह कड़छी हांडी, में लाखों मन घी तड़के की शक्ल में सड़ा देती है मगर उस पर कोई असर नहीं, वह साफ की साफ है। उसी तरह आप ख़्वाह किस कद्र स्वाद की चीज़ें खायें, जीभ के नीचे उतरने के बाद उसका असर जायल (समाप्त) हो जाता है। इसलिए स्वादों को छोड़ दो, क्योंकि यह स्वाद खराब करेंगे। जिस वक्त सन्यासी ने समझाया तो उस वक्त बुद्धि, जो विकारों में खड़ी थी, ठीक हो गई। बुद्धि ठीक होते ही समझ आ गई कि अपने आपको जानना ही सुघड़पना है। जिस वक्त अंधेरा दूर हुआ तो समझा-

छिन आवे छिन नाश को पावे, ताको अंधला दु:ख बुझाई।
सुख सो ही जान गुनी मुनि दाने, जो तीन काल रहाई।।

जो तीन काल रहने वाला सुख है वह ही असली सुख है। जिस वक्त ऐसा समझा उस वक्त ईश्वर का निश्चय पैदा हुआ। शरीर के सुखों की परवाह न रही। श्रेष्ठ आचरण करने लगा। उसके अन्दर ईश्वर प्राप्ति का शौक पैदा हुआ। प्रेम और सुख को जानने के लिए कोशिश करने लगा। पहले तो सबके सुख लपेटने की कोशिश कर रहा था लेकिन जब परमेश्वर का निश्चय हुआ तो अपने सुखों को भी फेंकने लगा। पहले उसके दिल में अज्ञान था, अब ज्ञानमयी हो चुका है-

अपना सुख नित ही बरताए, पर दु:ख सीस धराई।
मन में धरे निर्मानता, तब परम सुख को पाई।।

सदा अपने सुख दूसरों को देकर खुश हो। जितना-जितना अपने सुखों का परित्याग करोगे

उतना–उतना ही ईश्वर के नज़दीक पहुंचोगे। ज्यों ही मानसिक कल्पना ख़त्म होगी तो शान्ति और आनन्द को अनुभव करेगा। सेवा से दुःख ख़त्म होता जाता है। धर्म वालों ने बताया है कि अपने शारीरिक सुखों को दूसरों को दें। दूसरों को आराम देकर खुद प्रसन्न हों। अपने चित्त में कभी भी बोझ न रखें और हर वक्त हर एक को सुख पहुंचायें। जब सही तौर पर दयावान होगे तो असली सुख को पाओगे। परमार्थी तर गए और स्वार्थी अपने सुखों को हासिल करते–करते मर गए। सेवा वह ही कर सकता है जो अपनी आन त्याग करे। सेवा जो आजकल की जाती है, वह ठीक नहीं। आजकल तरीका यह है कि ख़ुद दान किया और लड़कियों के घर भेज दिया। यह तरीका ग़लत है। जो ऐसा दान लोग करते हैं उससे कुछ फायदा हासिल नहीं होता। सेवा कैसे होनी चाहिए? सेवा उस जगह की जानी चाहिए जहां कोई लगाव न हो। ऐसा करना हर एक का काम नहीं। ख़ास लोग ही ऐसा करते हैं। ईश्वर परायण होकर अपने शारीरिक सुखों को दूसरे के दुःखों को दूर करने के लिए समर्पण करना ही असली धर्म है। और इसके अलावा देवी–देवताओं को जो पूजते हैं या पूजने वाले हैं, वह सही रास्ता नहीं। असली महादेव इधर अंदर ही हैं। उनको छोड़कर बाहरी देवी–देवताओं की पूजा ग़लती है। यह ढोंगबाजी है। जिस तरह तुम अन्न चाहते हो वैसा ही दूसरों को दें। खुद के लिए बड़े अच्छे कपड़े लाए जाते हैं लेकिन दूसरों को आमतौर पर रद्दी कपड़ा ही दिया जाता है। ऐसा करने से लोग अपने आपसे ठगी कर रहे हैं। जिन्होंने असली धर्म आनन्द जाना है उन्होंने समझा कि जो भी चीज़ देखने और सुनने में आती है वह नाशवान है। इसलिए उन्होंने इन तमाम चीज़ों से वक्त पड़ने पर लगाव छोड़ दिया। मिसाल के तौर पर राजा हरीशचन्द्र, मोरध्वज वग़ैरा इस श्रेणी में आते हैं। असली बड़ा आदमी कौन है? वह समझता है कि सुख मेरे लिए नहीं हैं, बल्कि दूसरों को आराम पहुंचाने के लिए हैं। जो पुरुष इस निश्चय को प्राप्त होते हैं उनमें हातमताई जो बगदाद में हुआ, हरीशचन्द्र हिन्दुस्तान में हुआ और बहुत ऐसे आदमी हुए हैं जो काबले ज़िक्र हैं। हातमताई के मुतालिक मशहूर है कि वह एक दफ़ा जंगल में जा रहा था। एक बघयाड़ को उसने भागते देखा। वह जानवरों की बोली जानता था। उसने पूछा:– 'आप कहां जा रहे हैं?' बघयाड़ ने कहा:– मैं शिकार के लिए जा रहा हूं। हातम ने कहा:– आज तुम शिकार मत करो। बघयाड़ ने जवाब दिया कि– अगर तुम मुझे अपना गौश्त दे दो तो मैं अपना शिकार न करूंगा। चुनांचे हातम ने अपना गौश्त काट कर दे दिया और एक दरख़्त के नीचे बैठ गया। होते–होते शाम का वक्त हो गया। एक गीदड़ी वहां से गुज़री। उसने हातम को देखा तो पूछा–क्या बात है? हातम ने बताया– कि मैंने इस तरह अपना गौश्त बघयाड़ को दिया है। यह सुनते ही गीदड़ी ने समझा कि उसके इम्तिहान का वक्त है। वह भागकर जंगल में गई और एक बूटी उखाड़ लाई और हातम को दी। चुनांचे बूटी को लगाते ही हातम ठीक हो गया।

जो लोग ईश्वर परायण होते हैं जानवर उनकी ख़िदमत करते हैं। सारी सृष्टि उनकी गुलाम होती है। यानी जो भी ऐसे महापुरुष दुनिया में होते हैं, लोग उनके गुलाम होते हैं। राजा शिवी हुआ है। वह बैठा हुआ था तो उसने देखा कि एक बाज एक पंछी के पीछे लगा हुआ है। पंछी ने राजा के पास आकर कहा:– मुझे बचाओ, और राजा की झोली में बैठ गया। इतनी देर में बाज भी पहुंच

गया। उसने राजा से कहा कि– मेरा शिकार मुझे दे दो। उस वक्त पंछी ने कहा कि राजा, मैं तेरी पनाह में हूं। मेरी रक्षा करो। राजा ने बाज से पूछा– 'अगर पंछी तुझे न मिले तो तू क्या चाहता है?' बाज ने कहा– 'मुझे पंछी के बराबर गोश्त मिलना चाहिए।' चुनांचे राजा ने उसे अपना गोश्त उतना ही दिया, फिर वह बाज चला गया और पंछी बच गया।

इतिहास अब तक ज़िन्दा है, उस वक्त उस पर फूलों की वर्षा हुई। हज़रत मोहम्मद ने कहा है कि– ऐ बन्दे, जो तेरी सेवा को कबूल करे तू उसकी सेवा कर। क्योंकि ऐसा करने से वह तेरी बुराइयों का भी हकदार बनेगा। रब्ब जंगलों में नहीं मिलता। रब्ब तो कर्तव्य पूरे करने से मिलता है। तमाम वेद, शास्त्र कर्तव्य करने की तलकीन (प्रेरणा) करते हैं। सत्य के परायण हो जाओ और प्रार्थना करो कि ऐ ईश्वर! मेरे में ताकत दे जिससे तेरी आज्ञाओं को मैं पूरा कर सकूं। यह रास्ता असली है। सियासत कोई चीज़ नहीं। सियासत अंधी है और उसके आगे धर्म सुजाखा (आंखों वाला) खड़ा है। दुनिया ने उन महापुरुषों की अहकाम (आज्ञाएं) मानीं। वह भी मर गए, मगर अभी तक उनका नाम ज़िन्दा है। धर्म के मायने यह हैं कि अपने सुखों को दूसरों के लिए समर्पण करना। ऐसे लोग दुनिया के लिए सूर्य हैं। हर एक अपना सुख चाहता है। लेकिन ऐसे लोग हर एक के लिए सुख चाहते हैं। जो ईश्वर के प्यारे हैं वह कृतघ्नता को दूर करें। कमाई नेक नीयती से करें। थोड़ा अपने लिए रखें और बाकी लोगों की सेवा में लगायें। सुनने से कुछ नहीं बनता, अमल से ज़िन्दगी बनती है। जो समझते हैं कि अब वक्त नहीं फिर कर लेंगे, वह ग़लत रास्ते पर हैं। उनको समझ लेना चाहिए कि वह शायद वृद्ध अवस्था में भी कुछ नहीं कर सकते हैं। जो बात करो, शाम को उस पर विचार करो। मुंह से बात विचार करके करो। अगर आप बारह साल ऐसा करते रहें तो देखें आप बहुत अच्छे आदमी बन जायेंगे। जो असली संत हैं वह हमेशा कहते हैं कि सुनें कम अमल ज़्यादा करें। इस तरह मानुष की ज़्यादा तरक्की होती है। शरीर के सुखों में मुनास्बत पैदा करो। जिस शरीर की प्राप्ति हुई है सिर्फ़ उसके सुखों की ख़ातिर ही हर वक्त न लगे रहो। बल्कि असली धर्म यह है कि ईश्वर निश्चय को धारण करें। और अपने सुखों को दूसरे लोगों में वरतायें।

मीठा बोलें जग गुनी, हथ्थीं भी कुछ दे।
रब्ब तेरी बुकली ते, जंगल रैन दे॥

बुराइयों को अपने अन्दर से त्याग करें। अपने सुखों से दूसरे के दुःखों को ज़्यादा समझो।

अपना सुख बांछे नहीं, पर को सुख नित देत।
दुर्लभ आये ऐसे साजन, हरियो काल कर्म विखेप॥

ऐसे पुरुष जब संसार में आते हैं, जो अपने सुखों के बजाये दूसरों के दुःख ज़्यादा समझते हैं और उन्हें दूर करने की कोशिश करते हैं, वह बहुत अच्छे हैं। आपको पंडितों ने बताया है कि पिंड दान से गति हो जावेगी। कोई किसी की गति नहीं कर सकता, अपनी गति ख़ुद करें। ज़िन्दगी में ही अपनी तमाम कमी को पूरा कर लें। हिन्दू समाज को बाहरी मुल्कों के लोगों ने ख़राब किया। पंडितों ने भी बताया कि गोदावरी जाने से गति होगी। अब भी समय है। पाप वृत्ति फैल रही है।

यह अन्धेरे में ले जा रही है। आप ख़ुद ही अपनी दीन-दुनिया को बना सकते हैं। ईश्वर सुमति देवें ताकि असली निश्चय को धारण करके देश और जाति की उन्नति कर सकें।

115. पत्रिका द्वारा प्रेमी इब्राहीम को सत् उपदेश

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि- चूंकि तुमको खुदा की तरफ से ऐसा सदमा पहुंचा है इस वास्ते ज़्यादा बारीक मसलों में इसका हल शायद तुम समझ न सकोगे। फिलहाल राज़ी व रज़ा के मसले को ही तसव्वर में जगह दें। गो तमाम सवालों का जवाब मुख़्तसिर (संक्षिप्त) सा लिखा जाता है।

बुद्धि यानी रूह ख़ुदी के ज़ेरअसर होकर महसूसात, ख़्वाहिशात और लज्ज़ात की कैद में आकर अच्छे या बुरे कर्म धारण करती है, जिसका नतीजा खुशी या ग़मी देखती है। इन्हीं हालातों के मजमुए फेल के आज़ार में हर वक्त रंज व खौफ़ में बेचैन रहती है। वज़ूदों का नाश, छोटा या बड़ा होना, नेक या बद होना, सब इन तीन हालतों की कैद का नतीजा है। इसके मुताबिक ही ख़्वाहिशात और लज्ज़ात की कैद में आ करके मजबूरी से ऐसे फेल वज़ूद से कराती है जो खुशी और ग़मी, ज़िन्दगी और मौत की शक्ल इख़्तियार (धारण) कर लेते हैं। यह ही निज़ामें दुनिया है। इसमें न कोई बाप है न बेटा है, न अपना है न कोई बेगाना है। सिर्फ़ रूह अपनी खुदी के ज़ेर-असर होकर महसूसात, ख़्वाहिशात व लज्ज़ात की तमन्नाओं को पूरी करने की ख़ातिर अपने-अपने बज़ूदों का ग़लत या सही इस्तेमाल करती हुई जद्दो-जहद कर रही है। यह ही तमाशा गाह-आलम (जग जाहिर) है। जब-तक ख़ुदी से बालातर होकर ज़ाते-अबदी की पहचान नहीं कर लेती तब-तक रूह को क्याम नसीब नहीं होता, क्योंकि यह सब तबदीली पज़ीर (परिवर्तनशील) है और इनकी कैद भी तबदीली के देने वाली है। इन्हीं तीन हालतों का जो अमल है, आख़रियत में मलिकुल (यमदूत) मौत की शक्ल में दिखाई देता है और इन तीनों हालतों की कैद रंज के देने वाली होती है। इन्हीं तीन हालतों की कैद में रूह गोते खाती रहती है। इनसे छूटने का उपाय ही धर्म या ईमान का रास्ता है। वज़ूद का नापायेदारी समझने से लज्जतों (भोग-सुख) से अबूरी हासिल होती है। तमाम वज़ूदों के फेलों का नतीजा मालिके-कुल की रज़ा में देखना, और मालिक के नाम की विर्द (अभ्यास) करनी ख़्वाहिशात से अबूरी हासिल करने का इलाज है और बिल्कुल फना-फिल्लाह की हालत को हासिल करके मालके-कुल की ज़ात को ग़ैर-तसव्वुर हो करके मुशायदा अपने बातन (अन्तर्गत) में करना महसूसात से आजादी हासिल करना है। इसी हालत को राहते-अबदी, निज़ात, वसले-हक और निर्वाण-शांति कह कर आरिफ़ों ने बयान किया है। यह हालत ही असली करार है और रंज व ग़म से बालातर अपने आप में मुकम्मल है। इस जावेद ज़िन्दगी की तहकीकात ही इंसानी ज़िन्दगी का आला मकसद है। अच्छी तरह से विचार कर लेवें।

(8 अगस्त, 1952)

116. एक और प्रेमी के प्रश्न और उनके उत्तर

प्रश्न – महाराज जी, क्या गंगा नहाने से मुक्ति हो जाती है?

उत्तर – प्रेमी, गंगा नहाने से मुक्ति नहीं मिलती। मुक्ति कर्मों से मिलती है। जहां बैठे हो वहां ही गंगा बन सकती है। यह सिर्फ़ आचार्यों ने खाने के तरीके बनाये हैं। पंडितों के कहने से जान नहीं छूटेगी। करनी भरनी पड़ेगी। प्रेमी, जब पांडव गंगा स्नान करने जा रहे थे तो कृष्ण ने उनको एक तुम्बी दी थी और कहा था इसको भी गंगा स्नान करवा लाना। पांडवों ने ऐसा ही किया। जब वापिस आए तो कृष्ण ने उनसे पूछा- 'क्यों भई इस तुम्बी को भी स्नान करवा लाये हो? उन्होंने जवाब दिया- 'हां महाराज जी, बहुत ज़्यादा।'

जब गंगा हवन करने के बाद सब लोग खाने को बैठे तो श्री कृष्ण ने तुम्बी का एक-एक टुकड़ा काटकर सबको दिया और जब खाना ख़त्म हुआ तो सबसे पूछा, 'क्यों जी, इस तुम्बी का स्वाद कैसा था, कड़वा या मीठा? तो सबके सब कहने लगे- 'कड़वा'। उस वक्त कृष्ण ने उनसे पूछा:- 'क्या आपने इसे नहलाया नहीं?' यदि अच्छी तरह नहलाया होता तो ज़रूर इसका स्वाद बदल गया होता। इसका मतलब यह है कि जब-तक अंत:करण शुद्ध नहीं होता पाप-वृत्ति कायम रहती है। अपने लाभ के लिए दूसरे की हानि का भाव मौज़ूद रहता है। ज़बान में मिठास नहीं, दूसरों से प्रेम नहीं, तब-तक एक नहीं ख़्वाहे लाख गंगा स्नान कर लिए जायें, बड़े-बड़े तीर्थों की यात्रा कर ली जावे, सब बे-फ़ायदा ही हैं। इस वास्ते सही कल्याण को प्राप्त करने के लिए अपने आचार-विचार शुद्ध करने चाहियें। सत्पुरुषों से सत् मार्ग प्राप्त करके उनके बताये हुए असूलों और साधनों को अपनाकर ही मुक्ति हो सकती है।

प्रश्न – महाराज जी व्रत क्या है? और इसका क्या लाभ है?

उत्तर – प्रेमी, व्रत के साथ दो प्रकार की शारीरिक और मानसिक शुद्धि प्राप्त होती है। इसका यह मतलब है कि व्रत के दिन ज़्यादा स्वाध्याय किया जाए, थोड़ा काम किया जाए और अभ्यास में ज़्यादा समय दिया जाए। व्रत शारीरिक और मानसिक शुद्धि को बरकरार रखने का एक कुदरती इलाज है।

117. पत्रिका द्वारा सत् उपदेश

(श्रीनगर 14 अगस्त, 1952) परमार्थ मार्ग में दृढ़ निश्चय से सत्नाम की धारणा करते रहना चाहिए। यानि कर्ता-हर्ता सर्व जीवन रूप एक अखंड आत्मा को जान करके अधिक श्रद्धायुक्त हो करके सिमरण में दृढ़ होना चाहिए। चूंकि अंत:करण में कई जन्मों के विकार भरे हुए हैं इसलिए दृढ़ सिमरण उपासना के बल से बुद्धि अहंकार की मलिन को त्यागकर शुद्ध सरूप के बोध को प्राप्त होती है। इस वास्ते अभ्यास का प्रोग्राम दृढ़ रखना चाहिए। प्रेमी जी, इस साधना में तुच्छ मात्र भी

समय लगता जावे तो भी अंतःकरण की शुद्धि होती जाती है और मानसिक तपिश से ठंडक प्राप्त होती है। अधिक से अधिक कोशिश करके नाम सिमरण में दृढ़ता धारण करनी चाहिए और तमाम शकूक, तोहमात का त्याग करके एक गुरु वचन के परायण होना चाहिए। पिछले तमाम कर्म निश्चय करके गुरु चरणों में त्याग करके जो आइंदा निर्मल कर्तव्य पालन करने का यत्न दृढ़ करते हैं वह जल्द ही सत् शांति को अनुभव करने लगते हैं। ऐसा ही सत्पुरुषों का सिद्धान्त है।

जिज्ञासु का निश्चय गुरु वचनों में अटल होना चाहिए तब ही मन तमाम कल्पना को त्याग करके एक नाम के परायण हो सकता है, जो परम सिद्धि और शांति का मूल है। अपने पवित्र निश्चय से अभ्यास में मन को लगाते रहें। आगे कल्याण प्रभु ख़ुद करने वाले हैं ईश्वर सत् अनुराग देवें।

118. सत् उपदेश, (जीलानी मंज़िल, श्रीनगर)

(श्रीनगर, 17 अगस्त, 1952) शरीर रूपी संसार को धारण करके यह जो बुद्धि या जीव है इस शरीर के फैलाव को ही अपने विचार और निश्चय में फैलाती है। वैसे तमाम पशु, मानुष, अस्थावर, जंगम जीवों के शरीर पांच तत्त्वों के ही बने हैं, मगर शरीर की क्रिया भिन्न-भिन्न और यत्न भी भिन्न-भिन्न हैं। इसका क्या कारण है?

यह जो बुद्धि है यह बे-ठिकाना होती हुई इस शरीर के सुखों को प्राप्त करने के लिए दौड़ रही है। इस बात की इसे समझ ही नहीं आती है कि इस शरीर के सुख नामुकम्मल हैं या इनसे शांति मिल सकती है कि नहीं। इस अज्ञानमयी जीवन का कारण संशय युक्त बुद्धि है। जिस तरह कि किसी बीमार को न तो बीमारी और न ही सेहत की समझ आती है, उस वक्त वह ख़ात्मे की ओर जा रहा होता है। यह ही हालत उस बुद्धि की होती है जो संशय युक्त है। उस वक्त यह न तो बीमारी और न ही सेहत को जानती है। और ऐसे ही आगे बढ़ रही होती है। इस दौड़ से उसे तसल्ली तो मिलती नहीं और न यह सीधे रास्ते पर चलती है। बल्कि शरीर ख़त्म हो जाता है और यह जीव जैसा प्यासा आया था वैसा ही प्यासा चला जाता है। केवल सत्संग में आकर ही इस बात का निर्णय समझा जाता है कि बीमारी क्या है और सेहत क्या है? इस बात को जानने के लिए जिस वक्त गहरे ग़ौर से विचार किया जाएगा तो मालूम हो जाएगा कि बीमारी क्या है?

तृष्णा अगनी लागी मीता, पल-पल करे अंगार।
सत सील होवे नहीं, कोटक करे विचार।।

तृष्णा की आग की तपिश पल-पल उठ रही है और शीतलताई यानि शांति नहीं मिल रही है। जन्म से लेकर मरण तक सब ही इस वहम में बहे जा रहे हैं और एक दूसरे के पीछे जा रहे हैं, लेकिन यह ठीक नहीं। इसलिए महापुरुषों ने कहा कि सही समझोगे तो आपको इस संसार में

तसल्ली मिल जायेगी। शरीर का यह जो पिंजर है इसने बहुत कुछ खाया–पिया लेकिन तृष्णा ख़त्म न हुई। बहुत कमाया लेकिन तृप्ति नहीं मिली। महापुरुषों ने कहा है–

अधिक धन प्रापत कियो, अधिक पाया परिवार।
मान मद पाई बहु कीरत, पर मिटे न मन अंधकार।।

बड़े–बड़े यत्न–प्रयत्न किए राजा, महाराजा, चक्रवर्ती भी बन गए, लेकिन आख़िर को वह भी प्यासे ही गए और उनका कुछ न बना। सौ, पचास वर्ष गुज़र गए लेकिन अन्धेरा वैसे का वैसा रहा। विवेकी पुरुषों ने सोचा कि पहले तो मूर्खताई की वज़ह से यह नासमझ था, मगर जब विचार किया तो पता लगा कि यह जीवन नहीं बल्कि मूर्खताई है। जब यत्न करके सूझ प्राप्त की तो पता लगा कि खेल क्या हो रहा है? और सत् स्थिति प्राप्त होने पर यह हालत हुई कि अगर कोई चीज़ मिल गई तो खुशी नहीं और अगर बिगड़ गई तो ग़म नहीं।

जिस वक्त एक बच्चा पैदा होता है तो कई खुशियां मनाई जाती हैं। लेकिन काल वश होकर वह मर जाता है तो उसके पैदा होने की इतनी खुशी नहीं की होगी जितना कि मरने का ग़म होगा। यह ही संसार का रूप है। गो हर एक जीव रोज़ाना यत्न–प्रयत्न करके दुःखी हो रहा है, लेकिन फिर भी बुद्धि इस उम्मीद में उस तरफ दौड़ रही है कि आज नहीं तो कल शायद आराम हो जाए। विवेकी पुरुषों ने कहा–

नाशवान शरीर में, सुख नित मांगे।
धार दुर्मत अंधकार को, कोट चले हैं नांगे।।

जीव नाशवान शरीर में सुख चाह रहा है। मगर ऐसा कभी नहीं हुआ कि नाशवान शरीर के सुख पूरे हों। इस अंधेरे की तरफ सब लोग चले जा रहे हैं मगर शांति किसी को प्राप्त नहीं हुई। शांति कहीं बाहर से नहीं आती। जब मानुष समझने की कोशिश करेगा तो खुद–ब–खुद उसे पता लग जावेगा कि यह तो उसके पास ही है। विचार करने पर उसे पता लग जावेगा कि पहले जब यह बच्चा था तो यह मां–बाप के पास रहा। अठारह वर्ष तक मनमानियां कीं, उसके बाद जब जवानी आई तो जवानी के मद में किसी को कुछ न समझा और जब बुढ़ापा आया, साठ वर्ष की उमर हुई, शरीर जर–जर हो गया, मगर तसल्ली नहीं मिली। जब–तक यह जीव बीमारी से गाफ़िल है, वह कभी सेहतयाब नहीं हो सकता। जब–तक बुद्धि अंधेरे में फंसी हुई है, उस वक्त तक आराम नहीं हो सकता। महापुरुषों ने कहा है–

जो देखन में आए साजन, सो ही नित तपताए।
राजे राने भूप भिखारी, सभी काल चक्कर भरमाए।।

इस समय सब लोग बे–आराम नज़र आ रहे हैं। जितना भी सांगो–पांग हैं उसमें आनन्द चाह रहे हैं और इसलिए यत्न–प्रयत्न कर रहे हैं, मगर आनन्द किसी को नहीं मिला। विवेकी पुरुषों ने कहा है–

जो छिन में बिगड़े छिन में बिनसे, सो कहां सुख दिखलाए।
अंधमति को धार के, क्यों हीरा जन्म गंवाए।।

यह जीवन रेत का टीला है। इसमें क्या हासिल हो सकता है? अब विचार करना है कि इस जीव की वास्तविक चाहना क्या है?

जीव की वास्तविक चाहना अखंड शान्ति की है। मगर जो यत्न-प्रयत्न कर रहा है इससे अशांति ही प्राप्त हो रही है। इसको अपने कर्म ही दु:ख दे रहे हैं। यह जीव देवी-देवताओं के पीछे भाग रहा है। मगर मूर्ख को पता नहीं कि उसके कर्म ही ठीक नहीं हैं। देवी-देवता उसको कैसे बचा सकते हैं? महापुरुषों ने सोचा कि इसकी इसलाह (ठीक) कैसे की जाए? जब बीमार ही अपने आपको तंदरुस्त समझ रहा है और बीमारी को ही तंदरुस्ती समझ रहा है, उसे कैसे राहे-रास्ते पर लाया जा सकता है? उन्होंने सोचा कि तृष्णा ही बीमारी है। यह ही पूरी नहीं हो रही। शाह व गदा (भिखारी) एक ही हाल में हैं। कलगी वाला भी प्यासा है, गदागर भी प्यासा है। हर एक शख़्स तसल्ली के लिए सांगों-पांग कर रहा है। इस बात को विचार कर उन्होंने कहा:

राजा राना भूप भिखारी, सब ही नित भरमाए।
मन की अगन न शीतल होवे, कोटक करे उपाय।।

उन्होंने समझा कि आग किसी की भी ठंडी नहीं हो रही है। धनी लोग वासना से बचने के लिए कोशिश करते हैं लेकिन वह उसे मिटा नहीं सकते। दूसरे लोग समझते हैं कि धनी लोग सुखी हैं। वे समझते हैं कि खाने-पीने के लिए उनके पास काफी सामान है। पहनने के लिए उमदा, चमकीले-भड़कीले वस्त्र हैं। सोने के लिए मसहरी का इंतज़ाम है। यानि हर किस्म के सुख के सामान उपलब्ध हैं। इसलिए आम लोग यही समझते हैं कि वह लोग सुखी हैं। मगर ऐसा समझना मूर्खता है। वह लोग हरगिज़ सुखी नहीं हैं। जो भी अमीर-कुबेर लोग हैं सब ही धोखा करने वाले हैं। एक-एक बात को सोचते हुए उनकी रातें बीत जाती हैं। नींद हराम हो जाती है। विचार करने पर पता लगेगा कि वह बहुत अंधेरे में हैं और उन्हें आराम बिलकुल नहीं है। विचारवानों ने सोचा।

रोगी सोगी सब दिखलाए, विपदा में जो देखन में आए।
दुर्लभ भागवान सो जग में, जो सत्गुरु मेल मिलाए।।

सब ही बीमार हैं और जो ज़्यादा सांगो-पांग करने वाले लोग हैं वह मासूम हैं। जिस तरह बच्चे को अंज़ाम की ख़बर नहीं होती, उसी प्रकार ऐशो-इशरत करने वाले लोग नाकस अक्ल वाले हैं और हर वक्त इस पिंजर को संवारने में लगे रहते हैं। अपनी हकीकत का पता नहीं।

जीवत माटी मोइयां भी माटी, ऐसा ज्ञान विचारी।
निकले प्राण मिट्टी विच वासा, ते लीने पांव पसारी।।

आंखें खोलें तो सही रास्ते का पता चलता है। जब कोई बूढ़ा लाला मरने लगता है तो उसके रिश्तेदार कहते हैं कि लाला जी कहो- 'हरे राम'। सारी उमर तो लाला उनके लिए अंधेरा ढोता रहा, ग़लत काम करता रहा, और अब कहते हैं लाला जी राम-राम कहो। अब कहने से क्या बनता है? यह संसार एक मेला है। जो बाहोश लोग हैं उन्होंने समझा कि यह पिंजर यानी शरीर एक दिन

छोड़ना है, इसके साथ हर वक्त का लगाव न रखें। उन्होंने लगाव को कम करना ही अपना धर्म बनाये रखा। अगर किसी की सौ वर्ष की आयु हो भी गई है तो नजूमियों (ज्योतिषियों) के पीछे भाग रहा है कि वह उसकी उमर और बढ़ाएँ। लेकिन बकरे की मां कब तक ख़ैर मनायेगी। जब मानुष एक छिन के लिए भी इस शरीर के सुखों से गाफ़िल नहीं। जब वह उसे छोड़ेगा उस वक्त उसका क्या बनेगा? रोटी खाते समय अगर एक चटनी ही कम हो तो वह बहुत तंग होता है, लेकिन जब शरीर छोड़ेगा तो कितना दु:ख होगा। कितनी मुश्किल उस समय आएगी। महापुरुषों ने कहा है–

जीव सत त्याग मिरतक को पूजे, देखो अन्धला जिया।

यह कभी न सोचा कि इस पिंजर का जीवन किसके सहारे है? सब मिट्टी की पूजा कर रहे हैं। सभी अंधेरे में पैदा हुए, उसी में मर जायेंगे। भगवान कृष्ण ने अर्जुन को यह ही कहा कि जो सत् वस्तु है उसको जानने की कोशिश करो। सत्संग में सच और झूठ का निर्णय ही होता है। निर्णय यह ही है कि हर एक जीव अपनी शारीरिक कल्पनाओं में जकड़ा हुआ है, और उन कामनाओं को पूर्ण करते–करते यह शरीर ख़त्म हो जाता है। विवेकी पुरुषों ने सोचा कि शरीर के परे भी कोई चीज़ है। जब उसकी खोज की तो उस वक्त उसका मादावाद यानी अहंकार नाश हुआ और उस चीज़ का निश्चय बैठा। उस वक्त उन्होंने उस प्रकाश को अनुभव किया जिससे यह शरीर प्रकाशवान हो रहा है। जब–तक जीव शरीर के अंजाम से नावाकिफ़ है तब–तक मादावादी है और जब शरीर के आख़िरी अंजाम को समझता है उसी वक्त सत्यवादी होता है। आजकल के लोगों में सत् का अभाव हो गया है। जितना–जितना सत् का विश्वास होगा उतना–उतना असत् का वेग नष्ट होगा। सत् क्या है? जिस वक्त यह निश्चय त्रैकाल बना रहेगा कि आत्मा के सहारे शरीर खड़ा है और वास्तविक शरीर की कोई हस्ती नहीं है और आत्मा ही सत् है। जब ऐसा निश्चय हो जाता है तो मानुष परमेश्वर की भक्ति की तलाश में लगता है। उस वक्त उसे समझ आती है कि शरीर की पूजा कल्याणकारी नहीं और शरीर को छोड़कर जब रूह की तलाश उसने की तब उसकी कामनाएं आहिस्ता–आहिस्ता ग़ायब हो जाती हैं। उसमें सत्य, शील, उदासीनता, निहचलता वग़ैरा देवगुण उत्पन्न हो जाते हैं। उस जीव के अन्दर जीवन शक्ति का अनुराग होता है। जैसे पहले वह शारीरिक सुखों के पीछे भाग रहा था अब वैसे ही परमेश्वर की तलाश में लग जाता है। महापुरुषों ने कहा है–

तन मन वारे नित ही जो मीता, सत सरूप सोझी में आवे।
मिथ्या देह समर्पण करके, सत् आत्म कथा लखावे।।

इस मिथ्या शरीर को देकर अगर प्रभु मिल जायें तो इससे और क्या अच्छा है? एक व्यक्ति संत कबीर के पास गया और कहा कि मुझे रास्ता बताओ। उन्होंने कहा:– इतवार को आना। जब वह इतवार को आया तो कबीर साहेब एक छुरी पत्थर पर तेज करने बैठ गए। उसने पूछा:– छुरी तेज करके क्या करोगे? कबीर साहेब ने कहा:– तुम्हारा सर इससे काटना है, तब तुझे रब्ब का रास्ता मालूम होगा। उस शख़्स ने कहा:– अगर सर देकर रास्ता पता चलता है तो हमारा दूर से सलाम है। मुझे ऐसे रास्ते की ज़रूरत नहीं और भाग गया। संतों ने कहा है–

यह तन बिख की बेलड़ी, 'हर' हीरों की खान ।
तन दीजे जो हरि मिले, तो भी सौदा सस्ता जान॥

ऐ मूर्ख! यह शरीर बिख की बेल है। अगर यह बिख की बेल देकर हरि मिल जायें तो सौदा सस्ता जान। कबीर साहेब ने कहा है–

कबीर तू ही कबीर है, नाम तेरो कबीर।
नाम रतन तब मिले, जब पहले तजें शरीर।।

किसी कामिल पुरुष ने कहा है–

मरते–मरते मर गए, राजे राने मीर।
जीवत मरना जो होवे, सो कोई कामिल फ़कीर।।

यानी ईश्वर के सिमरण से ही बड़ा सुख मिला, जो बयान नहीं किया जा सकता। इससे तमाम ख़्वाहिशात ख़त्म हो गईं और अखंड शान्ति प्राप्त हुई। एक आंख के झपकने में सुरति ईश्वर में मग्न होती है तो बहुत आनन्द प्राप्त होता है। महापुरुषों ने कहा है कि बुद्धि उस वक्त अक्षय सुख को प्राप्त होती है। जीवन शक्ति की अनुभवता में ही सुख है। ऐसा विचार करके महापुरुषों ने कहा है कि अंधेरे की तरफ मत दौड़ो और इस संसार में जीव रूपी ईश्वर की तलाश करो। ज्यों–ज्यों उसकी तलाश करोगे त्यों–त्यों ही आनन्द पाओगे।

कबीर साहेब ने कहा है–

कबीर सोया क्या करे, सोये हुए अकाज।
जिसके संग से बिछड़ा, तिसके संग लाग।।

एक और जगह कहा है–

नींद निशानी मौत की, उठ कबीरा जाग।
और रसायन छाड़ के, नाम रसायन लाग।।

ऐ मूर्ख, तेरा सफ़र अभी ख़त्म नहीं हुआ कभी सिनेमा जा रहा है, कभी थियेटर में। इस जीवन की कद्र कर। यह बहुत मुश्किल से प्राप्त हुआ है। इसको जाया न कर। सतपुरुषों ने उस आनन्दित अवस्था, उत्तम अनुभवता की शहादत दी है और इस माया के मुतालिक फरमाया है– कि बड़े–बड़े अमीर–कुबेर जो लोग हैं, उनको कभी तसल्ली प्राप्त नहीं हुई और वह अति कष्ट में रहे। जिन्होंने सत् को प्राप्त किया वह लोग सूली पर चढ़े। गुरु अर्जुन देव पर जब रेत के कड़छे पड़ रहे थे तो मियां मीर वहां पर आया। उसने कहा– कि अगर आप कहें तो लाहौर और दिल्ली की ईंट से ईंट बजा दूं। उस समय गुरु अर्जुन देव ने कहा–

'तेरा भाना मीठा लागे, नाम पदारथ नानक मांगे'।

जब परमेश्वर को यही मंज़ूर है तो मुझे भी यही मंज़ूर है। वाह–वाह ऐसे लोगों की कुर्बानी कितनी ऊँची है। जिनको परमेश्वर का निश्चय है वह यही समझते हैं कि ईश्वर परम आनन्द है। और वे अत्याधिक तकलीफ़ में भी आनन्द महसूस करते हैं। देखो, राजा मोरध्वज ने अपने पुत्र को अपने हाथ से काटकर अतिथियों को दिया और उस परम आनन्द का सबूत दिया।

दधीची ऋषि, राजा हरीश चन्द्र वग़ैरा ने भी उस परम आनन्द का सबूत दिया। उन्होंने रब्ब की कीमत डाली है। इधर क्या हालत है? परमेश्वर के नाम पर एक जूं भी मारकर नहीं दे सकते और चाहते हैं कि रब्ब मिल जाए। रब्ब का मिलना आसान बात नहीं है। दुनिया परम दु:ख है। लेकिन वक्त गुज़र जाने के बाद समझ आई तो बेफ़ायदा होगा। ईश्वर ही परम सुख है। विवेकी पुरुषों ने सर-धड़ की बाज़ी लगाई और उस तरफ चले। उन्होंने सब प्यारी चीज़ें ईश्वर के लिए त्याग दीं।

तन मन धन अरपन करे, मान मद त्यागे।
गुप्त आत्मा प्रगट होवे, चित्त भक्ती में उठ जागे।।

दादू दयाल ने कहा है-

दादू दावे दूर कर, बिन दावे दिन कट ।
केते सौदा कर गए, इस पंसारी दे हट ।
पूरा किसे न तोलया, जिस तोलया तिस घट ॥

जब भी दुनिया में आए पूरा नहीं तोला। अब लोग दावे करते हैं कुरान-गीता को फौरन उठा लेते हैं। मगर उनकी कद्र तो उनको है जो निर-दावे हुए हैं। इसका मकसद यह है कि रब्ब की चीज़ रब्ब के हवाले करो। यह समझो कि अगर रब्ब की भक्ति नहीं कर सकते हो तो शरीर की भक्ति भी मत करो। इस पिंजर यानी शरीर की भक्ति से बहुत से रोग प्राप्त होंगे। अगर रब्ब की भक्ति नहीं की जाएगी तो शरीर की पूजा से कुछ हासिल नहीं होगा। आपको चाहिए कि थोड़ी पूजा शरीर की करो और वक्त निकाल कर जीवन शक्ति की पूजा करो। गुरमुखों का यह ही रास्ता है। मर्यादा से खाओ, मर्यादा से पहनो। ऐसा करने से जीवन शक्ति का कुछ पता लगेगा। रब्ब का निश्चय पैदा होगा। इस रास्ते पर चलो ताकि इस जीवन यात्रा को मुकम्मल कर सको। यह ही जीवन की सार है। तमाम लोग शरीर के विकारों में लगे हुए हैं। विकारों से दूर रहकर जीवन को पवित्र करो। बाहर की कोई चीज़ इसे तंग नहीं करती। इसे मन के विकार ही तंग करते हैं। जो भी प्रभु आज्ञा का पालन करेगा, आनन्द पायेगा। ऐसी सुमति सबको धारण करनी चाहिए। ईश्वर सबको सुमति देवें।

119. सम्मेलन की तारीख मुकर्रर

दौरान क्याम (निवास) श्रीनगर। चूंकि माह सितम्बर आने वाला था इसलिए श्री महाराज जी ने सम्मेलन की तारीख 26 अक्तूबर, 1952 मुकर्रर करके भक्त बनारसी दास को आज्ञा फरमाई कि सबसे पहले बाबू अमोलक राम को जगाधरी आश्रम में सूचना दे देवें और लिख कर देवें कि ज़रूरी सामान वग़ैरा एकत्र करना शुरू कर देवे और फिर बाकी प्रेमियों को भी पत्रिका द्वारा सूचित करता जावे और साथ ही लिख देवे कि सेवादार प्रेमी अपना बिस्तरा और पानी के लिए एक बर्तन साथ लावें। सत्पुरुष ने कार्तिक का पहला इतवार सम्मेलन के लिए मुकर्रर कर दिया था। मगर साथ ही हिदायत फरमाई थी कि अगर पहले इतवार के साथ दिवाली आ जावे तो दूसरा इतवार मुकर्रर कर लिया जावे ताकि प्रेमियों को सम्मेलन में सहूलियत के लिए कोई रुकावट न हो।

120. सत्संग अमृत वर्षा

शरीर रूपी संसार को धार कर यह जीव जब-तक इस शरीर की दुनिया को अच्छी तरह नहीं समझ लेता तब-तक किसी धर्म व परमेश्वर पर निश्चय नहीं ठहरता। यह जीव हर वक्त अपने-अपने शरीर की फ़िल्म को देख रहा है। सत्संग में जाकर यह देखना है कि शरीर की फ़िल्म क्या है?

वैसे तो यह हाड-मांस का पिंजरा है जिसके नौ दरवाज़े हैं। यह सबको नज़र आ रहा है। इसमें पांच ज्ञान-इन्द्रियां और पांच कर्म-इन्द्रियां हैं। इनके अलावा मन और बुद्धि भी इस शरीर में मौज़ूद हैं। बुद्धि ही इसकी असली चीज़ है। बुद्धि ही शरीर को समझ रही है। जो चीज़ यह कह रही है कि यह मेरा है और यह तेरा है, वह बुद्धि है। बुद्धि के आधार पर ही शरीर चल रहा है। बुद्धि की वज़ह से ही यह शरीर संसार में फैला हुआ है। यह बुद्धि शान्ति की ख़ातिर ही कर्म और दूसरी इन्द्रियों के भोगों में लगी हुई है। हर वक्त इन्द्रियों के भोग ही इकट्ठे करने में लगी रहती है। वक्त पर यह शरीर ख़त्म हो जाता है और भोग यहां ही पड़े रह जाते हैं। इस संसार के मेले को समझना है।

सुनना, देखना, चखना और महसूस करना यह ज्ञान-इन्द्रियों के काम हैं। हाथ, पैर, लिंग व गुदा वग़ैरा कर्म-इन्द्रियां हैं। बुद्धि का प्रधान निश्चय हर वक्त इन्द्रियों में ही रहता है। जब इन्द्रियां थक जाती हैं तो निन्द्रा (नींद) आ जाती है और जब ज़्यादा ज़ोर होता है तो गहरी निद्रा, जिसको सुषुप्ति कहते हैं, वह हालत आ जाती है। यह बुद्धि ही शरीर की फ़िल्म को समझ रही है और शरीर के प्रतिबिम्ब संसार को देख रही है। ज़बान स्वाद चखती है, नासिका सूंघती है, आंखें देखती हैं, त्वचा महसूस करती है और कान सुनते हैं। यह बुद्धि शरीर विखे कैद में है और इन्द्रियों के सुखों में ही अपनी तसल्ली चाह रही है। जो ज़बान का चस्का रखता है उसको हर वक्त खाने की चीज़ों की याद आती रहती है। हलवाई की दुकान पर शायद कम चीज़ें हों, लेकिन वह अपने अंदर के बड़े-बड़े ख़्याली हाट बनाता रहता है। जिसको पहनने का चस्का है वह अपने अंदर कई किस्म के कपड़ों के हाट तैयार करता रहता है। जहां कोई नया कपड़ा उसकी नज़र से गुज़रता है वह हर मुमकिन और नामुमकिन कोशिश से हासिल करना चाहता है। वाजिदअली शाह इत्र में ही नहाया करता था। फूल ही हर वक्त उसके इर्द-गिर्द रहते थे। और ज़िस्म को भी इत्र से तर रखता था लेकिन बाद में वह भी आम लोगों की तरह दुनिया से चला गया और इत्र सब यहां ही रह गए। कानों की इन्द्री जिसकी बलवान है वह चौबीस घंटे ही अच्छे-अच्छे गाने सुनने का ख़्वाहिशमंद रहता है। अगर उसे अपनी बातें नहीं सुनानी तो वह दूसरे लोगों की बातें ही सुनता रहता है। हर इन्द्री अपने-अपने व्यौहार में विचर रही है। इन इन्द्रियों में मर्यादा नहीं है। कई लोग चंद पैसों में गुज़ारा कर लेते हैं और कई लोग तो दो लाख रुपया खर्च करके भी भूखे रहते हैं। इसलिए यह शरीर भव दुस्तर है, मायावादी है। जिसको यह निश्चय है कि इन्द्रियों के भोग भोगना ही सुख है, उसकी बुद्धि अभिमानी है। जब से वह ज़्यादा भोग रहा है उसे आराम का नाम तक नहीं है, जैसे कि

पुराने मरीज़ को होश तक नहीं होती है कि उसे क्या मर्ज़ है। लोग उससे पूछते हैं- कि क्या सर में दर्द है तो वह कहता है कि सर में दर्द है। जब लोग पूछते हैं- कि क्या पेट में दर्द है तो वह कहता है कि पेट में दर्द है। जो लोग सिगरेट, तम्बाकू, चरस, सिनेमा और थियेटर वग़ैरा से आराम चाहते हैं या दीगर (अन्य) नशों से आराम महसूस करते हैं, वे मासूम लोग हैं। उनको कुछ समझ नहीं है। इस त्वचा का क्या स्वांग है? इंसान इसको बड़े कर्रोफ़र से कपड़े पहनाता है। कपड़े में अगर ज़रा भी शिकन पड़ जाए तो भी तकलीफ़ महसूस करता है। ज़रा काज ही टेढ़ा बन जाए तो दरजी को तंग करता है कि उसने ऐसा क्यों किया? आख़िर इस कर्रोफ़र में रहने के बाद क्या निकला?

मुट्ठी बांधे आए जगत में, हाथ पसारे जाते हैं।
राजे राने गुनी स्याने, अंत समय पछताते हैं॥

राजाओं ने अपनी फ़िल्म को ज़्यादा सजाया और ग़रीबों को सजाने का कम मौका मिला। बुद्धि भी फ़िल्म है और इन्द्रियों से सुख चाह रही है। यह ख़त्म हो जायेगी और सुख यहां ही रह जायेंगे।

दो भेद हैं अहंकारवादी कहते हैं कि शारीरिक भोगों में सुख है, लेकिन कमी रह गई है इसलिए वह उनके पीछे दौड़ता है और सोचता है कि ऐसा करने से शायद आराम मिले। इतनी उसको समझ नहीं कि यह इन्द्रियों के भोग सुख नहीं हैं। मग़रिब (पश्चिम) की नकल के लिए लोग बेताब हो रहे हैं। ऐसे लोगों की अक्ल यह ही कहती है कि जितने भी शारीरिक सुख हों, उतना ही आराम है। वह एक-एक इन्द्री के लिए कई किस्म के भोग एकत्र करते हैं जिनका शुमार भी मुश्किल है। इन लोगों के भोगों की कोई सीमा नहीं है। पहले ज़माने में लोगों के पास एक वस्त्र होता था और उसके फटने के बाद दूसरे की फ़िक्र होती थी। लेकिन आजकल अगर तमाम साल के लिए कपड़े मौज़ूद हों तो भी और कपड़े बनवाने की ख़्वाहिश बनी रहती है। हर शख़्स इस शरीर के भोगों को फैलाकर आराम चाह रहा है। जो भी शरीर धार कर आया है, उसी कैद में आया और गया। महापुरुषों ने निर्णय निकाला:-

खाए खाए भूख समाई, पहने पहने अंत नांगा जाई।
जैसे-जैसे ओड़क मरना, उठ ओ गुनिया आख़िर चलना॥

मरने के बाद मीठे दलाल कहते हैं कि खाता-पीता मरा है। वह भी निज़ूमी (ज्योतिषी) पास बिठाए रखता था कि मेरी उम्र बढ़ाने की कोशिश करो। महापुरुषों ने कहा है:-

जिस दे संग प्रीत लगाई, बहु रंग भोग भोगाई।
देखत में ज़रा परापत, अंत राख हो जाई॥

उम्र गुज़र रही है। हाड़, मांस ढीला पड़ रहा है। देखते-देखते ही मोतियाबिंद हो गया है। लेकिन फिर भी शारीरिक सुखों की चाहना बनी हुई है। यह नहीं समझ है कि यह सुख हमेशा नहीं रहेंगे।

न सुख स्थिर जग में कोई, न स्थिर शरीर।
यही कथा विचार के, मन होया दिलगीर॥

देखिए, पहले मानुष शरीर बड़ा कमज़ोर होता है। बच्चा होता है। चल फिर भी नहीं सकता। देखते-देखते जवान हो जाता है। और शरीर मोटा ताजा हो जाता है और फिर बुढ़ापा आ जाता है। जिस्म उठाया नहीं जाता। बूढ़ा कहता है कि मुझे रास्ता दिखाओ। मगर बच्चे उसे देखकर हँसते हैं। वह बच्चों को मारने की कोशिश करता है तो वह भाग जाते हैं। फिर बूढ़ा अफ़सोस करता है कि हाय कभी मैं भी जवान था। जब इस फ़िल्म का विचार किया तो समझ आई कि –

सुख के यतन अनेक किए, कोट करी तदबीर।
इस मन को धीरज आए न साजन, अंत जाए दिलगीर॥

बेशक कितने यत्न करो, सुखों की कमी ही रहती है और अंत प्यासे ही जाना पड़ता है।

आसा माहीं जग आए, गए निरासे अंत।
इस मन को शांत न मिली, जिन पर छत्र झुलंत॥

जैसे एक राजा मर जाता है वैसे ही एक भिखारी मर जाता है। महापुरुषों ने कहा है –

तृष्णा रूपी लागा रोग, यह अत रहे तप्ताई।
एक पलक न शांति आवे, इन्दर राज भी पाई॥

तृष्णा की वजह से न राजा के घर में आराम है और न ही ग़रीब के घर आराम है। जब मानुष बूढ़ा होता है। आंखों से पानी बहने लगता है, कोई बात नहीं मानता, शरीर का हर अंग कमज़ोर हो जाता है तो अफ़सोस करता है। लेकिन जो विवेकी लोग हैं उनको वह वक्त पहले ही याद होता है। हर चीज़ के दोनों पहलू समझने वाला आदमी ही अच्छा है। शरीर के ख़ात्मे से जो इंकारी है वह ही दुःख है। लेकिन बुद्धिमान पुरुष दुःख ख़ात्मे को पहले देखते हैं।

पूंजी जां की स्वांस है, सुखिया सो ही चीन।
स्वांस-स्वांस चल जात है, अवध घटे दिन रैन॥

स्वांस ही असली पूंजी है। जीवन के सफ़र में जब तृष्णा पूरी नहीं हो रही है तो कोई ऐसा उपाय किया जाए जिससे आसानी से सफ़र तय हो जाए।

अब दूसरा पहलू आया। वह ऐसी हालत है कि

सुख साजन कहां है, जहां दुःख सुख न परतीत।
जन्म मरन जाए आसा सकली, दिन रैन पुनीत॥

जिन्होंने खुशी-ग़मी को एक जैसा समझा वह संतों के पास गए, क्योंकि मन के हाकिम संत लोग हैं। संतों ने बताया कि दुनिया की चीज़ों में शान्ति कहीं नहीं है।

जो देखन में आया, सो ही बिपत लखाई।
इस मन की अगन ठंडी न हुई, दिन–दिन बढ़ती जाई॥

आपकी भटकना दिन–ब–दिन बढ़ रही है, और तुम क्या चाहते हो? तो उसने कहा–

मन तृप्ती में वास करे, नासे तृष्णा रोग।
आठ पहर रहवे प्रसन्नता, यह मांगूं लगन अरोग॥

जब संतों ने यह बात सुनी तो उन्होंने समझा कि जिज्ञासु अच्छा है। लेकिन बीमारी दूर करना बड़ा मुश्किल है। संतों ने कहा– बैरूनी बीमारियों को छोड़ो।

उस सुख के माथे सिल पड़े, जो साहेब नाम विसराए।
बलहारी उस दु:ख की, जो साहेब नाम रटाए॥

जिज्ञासु ने कहा की शरीर बेशक जाए मगर शान्ति मिले। उस वक्त संतों ने बतलाया कि सुख बाहर नहीं, वह तेरे अंदर ही मौज़ूद है। तू अपने ख़्याली सुखों को अंदर से निकाल फैंक। संसारी सुख तेरे अंदर नहीं हैं। यह तेरा महज़ ख़्याल है और ईश्वरी सुख तो पहले ही तेरे अंदर मौज़ूद है। जब परमेश्वर का निश्चय आया तो अपने सुख दूसरों को देने लगा। दूसरे के सुख लूटने वाला डाकू बना हुआ था, लेकिन परमेश्वर के निश्चय के बाद सुखों को बाहर फैंकने लगा। फिर उसकी यह हालत हो गई।

अपना सुख नित वरतावे, पर सुख सीस धराई।
आज्ञा माने साहेब की, तब आतम सुख लख पाई॥

पहले उसकी काग वृत्ति थी, लेकिन अब हंस वृत्ति हो चुकी है। आजकल यह तरीका है कि जो भी गली–सड़ी चीज़ हो वह ही परमेश्वर के नाम पर दी जाती है। लेकिन संतों का तरीका यह है कि जो भी अच्छी चीज़ है वह परमेश्वर के अर्पण करते हैं।

जीवन के सुख निश्चय से त्यागे, तब ही आतम सुख पाई।
बिछड़ा जन्म अनेक का, कृपा से परम धाम समाई॥

कई शक्लें धार के हज़ारों सुख भोगे। अब प्रतीत हुई कि तत्त्वों में सुख नहीं बल्कि परमेश्वर में सुख है। जितना असली सुख की तरफ जा रहा है उतना ही प्रसन्न हो रहा है।

आत्म सुख घर अनुभव होया, तृष्णा मिटी तरंग।
राग द्वेष ठंडा हुआ, मन रंगयो प्रेम के रंग॥

जिसको आत्म सुख प्राप्त हो जाता है वह फिर और किसी चीज़ की ख़्वाहिश नहीं रखता।

आठ पहर मन लगन समाई, नाम की रसना खाई।
एक पलक न व्यापे व्याधि, ऐसी शांत लखाई॥

उसको हर वक्त सुख महसूस होता है और कभी भी रंज़ नहीं होता है।

जिस सुख को सनकादिक खोजें, शिव नित ध्यान लगाई।
सो सुख मन में प्रगट पायो, मिल साध संगत रंग लाई॥

बाबा नानक ने फरमाया है:–

तीनों बन्ध लगाए के, सुन अनहद की तान।
बजे नकारा घना सुन्न समाध में, लाल खड़े मैदान॥

इस तरह श्री कृष्ण ने अर्जुन को कहा कि जब मोह, कीचड़ से आज़ाद होगा तो अनदेखा और अनसुना आनन्द प्राप्त होगा। अगर कोई मुश्किल बात है तो वह अपने स्वभाव को सुधारना है। आदत को दुरुस्त करना ही मुश्किल है। इस शरीर यात्रा में किस तरह विचरना है? देखिए, जितनी शरीर की ज़रूरतें बढ़ेंगी उतना ही दुःख ज़्यादा होगा और जितनी कम होंगी उतना ही सुख प्रतीत होगा और शान्ति मिलेगी। मर्यादा के मुताबिक शरीर यात्रा करो। आप जब कोई काम करें, ख़्वाह ब्याह–शादी करें, तो प्रधान अवश्य ईश्वर निश्चय ही बना रहे।

अपनी आदत पर किस तरह ग़ालिब आ सकते हैं? संसार में बेकरारी बहुत है। अच्छे लोगों के लक्ष्य हर वक्त अपने सामने रखो। अपने जीवन को ठिकाने लगाने के लिए सत्पुरुषों के आचरण का ध्यान रखें। अपना निश्चय ऐसा ही बनायें। ऐसे निश्चय के बाद बुद्धि बलवान हो जाती है। इस वक्त ज़माने की हवा यह है कि अय्याशी और नुमायशी ज़िन्दगी बन चुकी है। प्रेम, सेवा और अच्छे गुणों को छोड़ दिया है। आजज़ी और नम्रता ख़त्म हो चुकी है। लोग आजकल राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए हैं और दुःखी हो रहे हैं। असली खुशी को अगर चाहते हो तो अपने आपको सादा बनाओ। नशीली चीज़ों से परहेज़ करो। यह चीज़ें बुद्धि को नाश कर देती हैं। व्यापार ठीक तरह से करो। दूसरों की सेवा करो। सिर्फ़ शारीरिक उन्नति की ख़ातिर ही कोशिश मत करो बल्कि बुद्धि को बलवान करो। बुद्धि की ख़ुराक हासिल करने की कोशिश करो। वह ख़ुराक आपको सत्संग से मिलेगी। जिस ज्ञान को संतों ने बयान किया है उसको धारण करो। इसके अलावा जिन लोगों ने अपने अंदर मानसिक विकार रखे और देवी–देवताओं से कल्याण चाहते हैं, उनका कोई कल्याण नहीं कर सकता। वह अपनी कल्याण ख़ुद कर सकते हैं। ऐ मानुष, जब तेरी बुद्धि ही कह रही है कि तूने फलां ग़लती की है या ग़लती कर रहे हो, तो तुमको कोई बचाने वाला नहीं है। जो पंडित कहते हैं कि आप बेशक चंगा–मंदा काम करें और गंगा जी स्नान कर आयें, पाप खुद–ब–खुद दूर हो जायेंगे, वह ग़लत कहते हैं। मन के पाप नहाने से ख़त्म नहीं होते हैं। मन की मैल श्रेष्ठ कर्तव्य और आचरण से दूर होती है। अगर ऐसा नहीं करेंगे तो अपने आपको ख़त्म करेंगे। अगर कोई जीव बावज़ूद समझने के ग़लती करता है तो उसको माफ़ी नहीं हो सकती है। जैसा समझा है वैसा ही काम करो। विवेकी पुरुषों के पास जाओ और अपनी विचार धारा को पक्की करो। यह ही ठीक

रास्ता है। आपके निश्चित कर्म भी हैं। आप जब अच्छी और बुरी बात से वाकिफ़ हो तो अपनी बिगड़ी को सुधारो। पाप कर्म, पुण्य कर्मों से ख़त्म हो जाते हैं। आप क्यों हर वक्त संसारी उलझनों में ख़त्म हो रहे हो? दो घड़ी रोज महापुरुषों के पास जाओ और बुराइयों का त्याग करो तो आप 'बिगड़ा हुआ' बहुत कुछ सुधार सकते हो। आजकल के व्यापारी बेकरार हैं। सोसाइटी हमेशा अंधी रही है। लेकिन उस वक्त साधु लोग, जो धर्म के रहनुमा थे, वह भी अंधे हो चुके हैं।

गुरु और शिष्य लालची, दोनों दु:ख को पायें।
डूबे लहर समुन्द्र में, बैठ पत्थर की नायें॥

गुरु शिष्य का सुधार नहीं चाहता है और चेला भी समझता है कि यह रिश्ता यूं ही एक दूसरे को ठगने का है। इसलिए सुधार हो नहीं सकता। अगर चोरी का माल गुरु के पास भी होगा तो दोनों गुरु और चेला खराब होंगे। चेला गुरु से पूछता है कि गुरु जी, शराब को दवा की जगह इस्तेमाल किया जावे तो क्या बुराई है? इस पर गुरु कह देता है कि हां अगर दवाई की ख़ातिर शराब पी जावे तो कोई हर्ज़ नहीं। इस तरह बुराइयों के मुतालिक गुरुओं से चेले छूट करवाते हैं और फिर वह गुरु मिसालें भी दे देते हैं कि देखिये कृष्ण ने भी वक्त पड़ने पर झूठ मार दिया था। युधिष्ठिर ने भी वक्त पड़ने पर झूठ मारा वग़ैरा-वग़ैरा और फिर कहते हैं कि आप बेशक किसी वक्त झूठ मारो। चेले भी यही चाहते हैं कि इस किस्म की छूटें मिलनी चाहियें। ज़बान पर गुरु और धर्म की बातें करते हैं और अंदर कपट है। यह मुल्क इसी वजह से दबा हुआ है। गुरु भी कहता है, **'राम नाम जपना, पराया माल अपना'।** अगर दोनों गुरु और चेला सही रास्ते पर चलें तो सब कुछ ठीक हो जाए। आप देखिए कि बाली ने कृष्ण जन्म में रामचंद्र जी का बदला लिया। इससे यह साबित होता है कि अपने कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है। जब अवतारों को भी फल भुगतना पड़ा तो आपको कौन बचा सकता है? कर्मों के फल से छुटकारा नहीं होगा। गुरुओं की नसीहत पर चलकर अपनी कल्याण करें। कोई देवी-देवता तुमको तुम्हारे कर्मफल से नहीं छुड़ा सकता। आप उनके नेक जीवन को समझें और उनके आदर्श को धारण करें। राम, कृष्ण, बुद्ध, कबीर, ईसा व नानक वग़ैरा के जीवन आदर्श को अच्छी तरह समझें और उनकी राह पर चलकर उन्नति करें। जो देव शक्ति तेरे अंदर है वह ही तेरी सहायता करेगी। यह ही संसार का असली रूप है। इस जीवन यात्रा में तबीयत को सुधारो। तबीयत के गुलाम मत बनो बल्कि मालिक बनो। जब ईश्वर का विश्वास होगा तो आपकी बुद्धि सावधान हो जावेगी। अगर मत्था टेकने से ही कल्याण हो जाता तो कृष्ण को अठारह अध्याय गीता के सुनाने की क्या ज़रूरत थी? सिर्फ़ इतना ही कह देता कि मुझे ही मत्था टेको तेरा सब कुछ ठीक हो जावेगा। कर्म की सज़ा से कोई भी नहीं बचा सकता। कृष्ण ने अर्जुन को कहा:- निष्काम कर्म कर और तमाम कर्म मेरे सुपुर्द कर। इस तरह तू कर्मों की सज़ा से बच जायेगा। दुनिया की चीज़ें आपको हर वक्त मजबूर कर रही हैं। आप लोग अपनी ज़िन्दगी का नाश कर रहे हैं। हमेशा एक असूल वाला जीवन बनाना चाहिए। ज़िन्दगी को सादा

बनाओ। कोशिश करो और ख़ुराक सादा बनाओ। लिबास सादा रखो। और लोगों की सेवा करो। अपने आपको सेवादार बनाओ। कुछ न कुछ समय निकालकर सत्पुरुषों का विचार सुनो तो खुद ही अपने जीवन के सही रक्षक बनोगे। ईश्वर सुमति देवें जिससे सही रास्ते पर चलते हुए आप अपनी और दूसरों की कल्याण कर सकें।

121. जम्मू में चंद रोज़ निवास

श्री महाराज जी ने 9 सितम्बर तक श्रीनगर में एकांत निवास और कठिन तप किया और 10 सितम्बर, 1952 को वहां से रवानगी का प्रोग्राम बनाया। श्रीनगर निवासी प्रेमियों ने सत्पुरुष की सेहत का ख़्याल रखते हुए श्री महाराज जी को हवाई ज़हाज द्वारा जम्मू रवाना किया। जम्मू निवासी प्रेमी आपके स्वागत के लिए हवाई अड्डे पर हाज़िर थे।

सत्पुरुष को नहर की तरफ एक कोठी में ठहराया गया। श्री महाराज जी ने एक हफ्ता जम्मू में निवास किया।

122. पठानकोट और गुरदासपुर में निवास और अमृत वर्षा

16 सितम्बर, 1952 तक जम्मू में श्री महाराज जी ने निवास किया। 18 सितम्बर को सुबह आप बस में सवार होकर पठानकोट पधारे। बाहर बाग में श्री महाराज जी को ठहराया गया। चंद दिन इस जगह निवास करके गुरदासपुर निवासी प्रेमियों की प्रार्थना पर आप गुरदासपुर तशरीफ़ ले गए और चंद दिन वहां ठहरे।

123. जगाधरी में एकांत निवास

चूंकि सम्मेलन का समय नज़दीक आ रहा था इसलिए पठानकोट निवासी और गुरदासपुर निवासी प्रेमियों को सम्मेलन से काफी अर्सा पहले सेवा के लिए और सत्संग सम्मेलन से लाभान्वित होने की आज्ञा फरमाकर आप 28 सितम्बर को गुरदासपुर से गाड़ी द्वारा रवाना होकर 29 सितम्बर को जगाधरी पधारे।

आश्रम की दीवार के साथ वाली ज़मीन को चौधरी नैन सिंह जी से ली जा चुकी थी उसके साथ ही शुमाल की तरफ उसके भाई चौधरी गोवर्धन सिंह की भी जमीन थी, वह भी खरीद ली गई थी। और लंगर का कमरा वग़ैरा भी बन चुका था और उस अहाते के इर्द–गिर्द दीवार भी बन चुकी थी। सत्पुरुष पहुंचे तो बाबू अमोलक राम जी को साथ लेकर सारी जगह देखी और तमाम चारदीवारी वग़ैरा को देखकर आपने सब कार्य को पसंद किया। चौधरी गोवर्धन की ज़मीन से आगे

उत्तर की तरफ उसकी ताई की ज़मीन का टुकड़ा था, जो बंटवारे में उसके हिस्से में आया हुआ था, उसे देखकर श्री महाराज जी ने बाबू अमोलक राम जी को फरमायाः– कोशिश करके वह ज़मीन भी खरीद ली जावे ताकि आश्रम की ज़मीन चौड़ी हो जावे। क्योंकि चौधरी इंद्र सिंह वाली ज़मीन उस ज़मीन के पूर्व की तरफ लगती थी और अगर वह ज़मीन शामिल न की जाती तो यह टुकड़ा न मिलने से ज़मीन कटी हुई रहती और भद्दी मालूम होती थी।

सत्पुरुष के आने की सूचना मिलने पर प्रेमी सत्संग अमृत वर्षा से लाभान्वित होने के लिए चरणों में हाज़िर होने शुरू हो गए और अपनी शंकाएँ निवारण करने लगे। सत्संग का समय मुकर्रर कर दिया गया। सत्संग के बाद एक प्रेमी ने पूछना शुरू कर दियाः–

प्रश्नः– महाराज जी, अहंकार का क्या स्वरूप है?

उत्तरः– प्रेमी, द्वन्द्व को महसूस करने वाली चीज़ अहंकार है।

प्रश्नः– महाराज जी, बुद्धि के आगे परदे कौन–कौन से हैं?

उत्तरः– प्रेमी, बुद्धि के आगे परदे हैं कर्ममई–सृष्टि, वासनामई–सृष्टि, गुणमई–सृष्टि। इनको आधिभौतिक–सृष्टि, आधिदैविक–सृष्टि और आध्यात्मिक–सृष्टि भी कहते हैं। यह ही त्रिलोक है। इन परदों को दूर करने वाला ही त्रिलोकी नाथ है। गुण से वासना प्रगट होती है, वासना से कर्म और कर्मफल। शरीर, मन, बुद्धि यह ही तीन लोक हैं।

प्रश्नः– महाराज जी, बुद्धि वासना रहित कैसे होती है?

उत्तरः– शरीर वासना का समुन्द्र है। आत्मा वासना व कर्म से न्यारी है। बुद्धि शरीर को समझ रही है और इसकी वासना को भी समझ रही है। जब–तक आत्मा को नहीं समझती वासना रहित नहीं होती। जो साधन सत्पुरुषों ने आत्म–अनुभवता को प्राप्त करने के बतलाये हैं, उन्हें धारण करो। तब बुद्धि वासना रहित हो जावेगी।

प्रश्नः– महाराज जी, ध्यान किसे कहते हैं?

उत्तरः– प्रेमी, ध्याने वाली चीज़ में ग़र्क हो जाना ध्यान है। ध्याने वाली चीज़ में जब बुद्धि लय होती है तब ध्यान अवस्था आती है।

प्रश्नः– महाराज जी, सहज अवस्था किसे कहते हैं?

उत्तरः– लाल जी, सुरति जब ऐसी अवस्था में दृढ़ होती है जिससे सोते–जागते गुण व दोष का असर न हो, इसी स्वरूप में जब बुद्धि दृढ़ होवे, यह सहज अवस्था है। ब्रह्म–ज्ञानी या तत्त्व ज्ञानी की इसी अवस्था को ही सहज अवस्था कहते हैं।

प्रश्नः– महाराज जी, तीन ताप क्या हैं?

उत्तरः– प्रेमी, तीन ताप हैं शारीरिक, मानसिक व प्राकृतिक। सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण, यह गुण तीन तापों के कारण हैं। स्वरूप बुद्धि में जब–तक ''मैं'' खड़ी है गुण सहित है। जब अहंभाव त्याग करती है तब गुण रहित होती है और तापों से छुटकारा मिलता है।

प्रश्नः– संसार का असली स्वरूप क्या है?

उत्तरः– संसार का असली स्वरूप सुख की तलाश है।

प्रश्नः– संसार कैसे ख़त्म होता है?

उत्तरः– जब मन में शान्ति आ जाती है संसार ख़त्म हो जाता है। मन की चंचलता में संसार है। जब-तक मन शक में है, यह खड़ा नहीं होता। पूर्ण विश्वास होगा तब मन खड़ा होगा। मन ने जो पैदा किया है उसमें नहीं टिक सकता। मन उसमें टिकेगा जिससे यह पैदा हुआ है। मन तब टिकता है जब यह शरीर की खुशी-ग़मी को भूल जाए।

प्रश्नः– महाराज जी, मन का आकार क्या है?

उत्तरः– प्रेमी, मन का आकार कोई नहीं। मन और बुद्धि अंहकार का स्वरूप है। ग़लत और सही का भेद करने वाली चीज़ बुद्धि है। इन्द्रियों की चेष्टा को याद करने वाली चीज़ मन है। जागते वक्त मन का स्थान नेत्रों में है। सोते वक्त कंठ में होता है। इस समय यह सारे संसार में व्यापा हुआ होता है। मन की याद को तमीज़ करने वाली शक्ति बुद्धि है। मन जो-जो चीज़ देखेगा चलायेमान होगा। बुद्धि उसकी याद को समझ कर चलायेमान होगी। मन मुतालबा (मांग) करता है, बुद्धि फैसला करती है। बुद्धि विशाल होवे तब मन को स्तंभित कर सकती है। समर्पण भावना पैदा करके शरीर के अंहकार को तोड़ो। शरीर का आसरा बुद्धि को है इसलिये उसके परायण हुई है। इस वास्ते शरीर का संग नहीं छोड़ती। शरीर आकारमई है।

प्रश्नः– क्या मन को रोका जाता है या यह खुद-ब-खुद रुक जाता है?

उत्तरः– प्रेमी, मन स्वभाव करके चंचल है। पहले इसके बहाव को रोका जाता है। जब यह रुकने लग जाता है तो फिर खुद-ब-खुद रुक जाता है। मन इन्द्रियों के भोगों की वज़ह से चलायेमान हो रहा है और बुद्धि के आसरे दौड़ रहा है। इन्द्रियां भोगों में दौड़ रही हैं। मन साक्षी होकर भोगों को ग्रहण करता है। मन बाल-बाल में व्यापा हुआ है। बुद्धि जिस कद्र पवित्र होती है उतना ही मन और इन्द्रियां पवित्र काम करते हैं। जितनी बुद्धि खोटी होती है मन और इन्द्रियां उतने ही खोटे काम करते हैं। इन्सानी शरीर में बुद्धि बलवान है। मज़बूरी और मुख़्तारी को समझती है। दूसरी योनियों में महदूद है। नौ द्वार की वासना को छोड़े तो दसवां द्वार खुलता है। जब-तक अमल और कर्म दुरुस्त न हों निज़ात नहीं हासिल हो सकती।

प्रश्नः– महाराज जी, मन सत्-परायण कैसे होता है?

उत्तरः– प्रेमी, भय से मन सत्-परायण होता है। इस वास्ते मौत का भय या गुरु का भय या ईश्वर का भय मानुष के वास्ते होना लाज़मी है। ऐसे भय की दृढ़ता से भाव पैदा होता है। यानि अपनी जीवन उन्नति का विचार प्रगट होता है और भाव से भक्ति और भक्ति से निर्मल प्रेम प्राप्त होता है। यह ही दृढ़ता मानसिक शान्ति के देने वाली है।

प्रश्नः– महाराज जी, मन को वश करने का साधन ज़रा खोलकर बतलाने की कृपा करें?

उत्तरः– प्रेमी, पहले ग़लत और सही हालात को समझो। जीवन के हालात को हर एक समझ रहा है, मगर सही नहीं समझ रहा है और सही न समझने के कारण ग़लत हालात को पकड़ रहा है। मन

एक ऐसी चीज़ है कि जब-तक ग़लत और सही का निर्णय न समझे सही की तरफ नहीं जाएगा। मन को पकड़ने का तरीका ईश्वर-परायण होना और नाम सिमरण है। इस तरीके को किसी महात्मा से प्राप्त करो और प्राप्त करके हृदय से धारण करो। सही निश्चय से इसे पकड़ो। उस तरीके को धारण करते-करते मन वश में हो जावेगा। मन को एक मिनट रोकने वाला पूर्ण अभ्यासी है, साधक है। ईश्वर को अनुभव कर लेता है। पांच मिनट रोकने वाला पूर्ण सिद्ध है।

प्रश्नः- महाराज जी, अंतर्मुखी वृत्ति किसे कहते हैं?

उत्तरः- प्रेमी, इन्द्रियों की चेष्टा से मन को असंग करना ही अंतर्मुखी वृत्ति है। जब-तक चेष्टा में खड़ा है, अंतर्मुखी वृत्ति नहीं हो सकती। साधना करने से मन इन्द्रियों से असंग होता है। तब वह अंतर्मुखी होता है। अंतर सत् स्वरूप आत्मा प्रकाश कर रहा है। उसको अनुभव करने का साधन करे तब मन इन्द्रियों की चेष्टा से असंग होकर अंतर्मुखी होता है।

124. विचित्र आदर्श

एक दिन एक प्रेमी बहुत अच्छे अंगूर इस भावना से लाया कि उन्हें प्रार्थना करके श्री महाराज जी को खिलायेगा। जब उसने लाकर चरणों में रखे और प्रार्थना कीः- महाराज जी! इन्हें स्वीकार करें। तो आपने आज्ञा फरमाई कि संगत में बांट दो। बांटने वाले प्रेमी ने इन्हें ले जाकर प्रेमियों में बांट दिये।

दूसरे दिन इस ख़्याल से वह नाकिस और सस्ते अंगूर लाया कि यह संगत में बांटे जाते हैं। जब उसने वह अंगूर चरणों में रखे तो, सत्पुरुष ने उनमें से ज़्यादातर खा लिए। प्रेमी बड़ा शर्मिंदा हुआ।

इससे सबक मिलता है कि कैसे सत्पुरुष सबमें उस महान शक्ति परमात्मा को व्यापा हुआ देखते थे या सबको अपना ही रूप जानते थे। दूसरे, शुभ स्थान पर शिक्षा पहले ही दी जा चुकी थी कि संगत को शुद्ध चीज़ें खिलाओ और आप नाकिस चीज़ें इस्तेमाल करो, और तीसरे, अपनी नीयत शुद्ध रखें। यह शिक्षा उस वक्त दी थी जब नई दालें लाई गई थीं और एक प्रेमी ने तजवीज़ की थी कि पुरानी दाल उनमें मिला दी जावे और नई दाल निकालकर रख ली जावे।

125. पत्र द्वारा उपदेश

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि सत्संग में उन्हीं असूलों पर विचार करना चाहिए जो ''समता विलास'' में सत्संग निर्णय प्रसंग में आ चुके हैं। सत्संग में किसी किस्म का बाद-मुबाद नहीं होना चाहिए। सत्संग के बाद खुला विचार होना चाहिए। ख़ास अगर कोई शब्द उच्चारण करना चाहे तो सिर्फ़ सिद्ध संतों की वाणी का शब्द उच्चारण करना चाहिए, नहीं तो सत्संग के बाद सुने हुए प्रसंगों पर ग़ौर करना काफ़ी है। जब समता का लिट्रेचर (साहित्य) इतना काफी मौज़ूद है और बिल्कुल

सरल भी है, तो फिर और विचारों को सत्संग में लाने से ख़ास उन्नति न होगी। बल्कि सत्संग का सुना हुआ रस भी अंत:करण में न रहेगा। इस वास्ते अच्छी तरह से सत्संग की नीति को समझें और किसी किस्म के बे–असूली कार्य न करें। सब प्रेमियों को पूर्ण दृढ़ता इन विचारों की होनी चाहिए। ईश्वर सुमति देवें।

126. पत्र द्वारा सत् उपदेश

श्री महाराज जी फरमाते है कि संगत आपस में प्रणाम या ब्रह्म सत्यम् कह कर बैठ जाया करे। पुस्तक को बिल्कुल मत्था टेकना मना है। सिर्फ पुस्तकों को थोड़ी ऊँची जगह रखकर पाठक साधारण जगह ही बैठकर विचार करें। और किसी किस्म की नुमाईश गद्दी लगाने की ज़रूरत नहीं है। इससे कमज़ोर बुद्धि वालों के अंदर अभिमान आ जाया करता है। इस वास्ते निर्मान भाव से ही पाठक बैठ करके पाठ या विचार किया करें। यह सबको वाज्या (पता) होवे।

अगर आसन लगाना होवे तो सिर्फ पाठक के वास्ते कुशा या ऊन का आसन लगाना चाहिए। हर एक काम में सादगी और सरलता होनी अधिक ज़रूरी है। नुमायश से परहेज़ करना चाहिए। इससे अंत:करण की शुद्धि प्राप्त नहीं होती है बल्कि ईर्ष्या और अभिमान हो जाता है। ऊँच–नीच का भेद सत्संग में नहीं होना चाहिए। बल्कि हर एक प्रेमी छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा सेवा का कारज सर–अंजाम देते हुए अपने आपको एक अदना सेवक ही जानकर सेवा करे तो ही समता के अनुयाई होने का अधिकारी हो सकता है। तब ही सही धर्म की जागृति अपने आपमें और दूसरों में हो सकती है। इस वास्ते आइंदा से इस आज्ञा के अनुकूल सब कारज करें। ईश्वर सुमति देवें।

एक दिन सत्संग के बाद एक प्रेमी ने शब्द के बारे में कुछ प्रश्न किये।

प्रश्नः– महाराज जी, शब्द का ख़ुलासा करने की कृपा करें।

उत्तरः– प्रेमी, शब्द ही जीवन शक्ति है। उसी को आत्मा, ब्रह्म, नाद इत्यादि नाम करके बयान किया गया है। शब्द आत्मा का स्वरूप है। वह अगोचर है।

प्रश्नः– महाराज जी, परमेश्वर से क्या लाभ है?

उत्तरः– प्रेमी, परमेश्वर की दिव्य शक्तियां जिस तरह दूसरे की ख़ातिर अपने आपको ख़त्म कर रही हैं, उसी तरह तू भी अपने आपको दूसरों की ख़ातिर ख़त्म कर। यह परमेश्वर से लाभ है।

प्रश्नः– ज़रा ईश्वर वाला मसला और साफ करने की कृपा करें?

उत्तरः– ईश्वर एक अवस्था है जिसको प्राप्त करके बुद्धि मुकम्मिल (पूर्ण) हो जाती है।

प्रश्नः– रोशनी या प्रकाश क्या चीज़ है?

उत्तरः– रोशनी यह है कि जब ईश्वर को अनुभव किया तृष्णा का अंधेरा दूर हो गया, शान्ति प्राप्त हो गई। प्रकाश वह ही है जिससे मन का अंधेरा दूर हो जाए।

प्रश्नः– महाराज जी, अवतारी पुरुष क्या फरमाते हैं?

उत्तरः– प्रेमी, अवतारी सत्पुरुष कहते हैं कि यह शरीर सेवा के वास्ते आया है। फ़कीर रोशनी देने आए हैं।

प्रश्नः– समर्थ्य महापुरुष और संसारियों में क्या अंतर है?

उत्तरः– प्रेमी जी, समर्थ पुरुष वृत्तियों को सुकेड़ने व फैलाने की समर्थ्य रखता है। बाकी संसारी वृत्तियों को फैलाना ही जानते हैं, सुकेड़ना नहीं जानते। यह ही दोनों में अंतर है।

प्रश्नः– महाराज जी, कृपा करके सर्गुण और निर्गुण वाले मसले पर और रोशनी डालें?

उत्तरः– प्रेमी, सर्गुण और निर्गुण वृत्ति की दो हालते हैं। सर्गुण वृत्ति अर्थात सबको आत्मा के आधार पर देखना, इस मसले को न समझने के कारण मूर्ति पूजा शुरू हुई। निर्गुण वृत्ति, सबसे आत्मा को असंग देखना।

प्रश्नः– महाराज जी, बतलाया जाता है कि प्रलय कई हैं। इस पर रोशनी डालें?

उत्तरः– हाँ प्रेमी, लो सुनो! प्रलय कई हैं, नित प्रलय, निमित्त प्रलय, प्रबोध प्रलय, विज्ञान प्रलय और अत्यंत प्रलय।

1. **नित प्रलयः–** रोज़ाना तबदीली यानि सुबह होती है, शाम होती है, सूरज आ रहा है, जा रहा है, चांद घट रहा है, बढ़ रहा है।
2. **निमित्त प्रलयः–** बाप मर गया, दादा मर गया, माँ मर गई, वग़ैरा–वग़ैरा।
3. **प्रबोध प्रलयः–** संसार को नाशवान जानना और ईश्वर को सत् करके जानना।
4. **विज्ञान प्रलयः–** अपने आपको सबमें मुहित (व्यापक) देखना और अंदर से असंग रहना।
5. **अत्यंत प्रलयः–** अपने स्वरूप का बोध हो गया और सब संसार ख़त्म हो गया और निसंकल्प हालत हो गई, यह अत्यंत प्रलय है।

प्रश्नः– महाराज जी, निष्काम कर्मयोग के मसले पर कुछ और रोशनी डालें?

उत्तरः– प्रेमी, गीता में निष्काम कर्मयोग और सांख्य योग का बयान है। बग़ैर निष्काम कर्मयोग, यानी रज़ा में फ़ना होने के सर्व आत्म–स्थिति प्राप्त नहीं होती। पहले सतकर्म, फिर निष्काम कर्म यानी होना न होना प्रभु आज्ञा में देखना, फिर बुद्धि को हालते–महवियत (ध्यान अवस्था) हासिल होती है। रज़ा के मसले में फ़ना होने से बका (ज़िन्दगी) हासिल होती है। आम लोग सांख्य योग के मुतालिक जो बयान करते हैं लेकिन उसे समझ नहीं सकते। इस मसले को वह ही समझ सकता है जिसकी बुद्धि को आत्म–आनन्द प्राप्त हो चुका हो। हज़रत–मोहम्मद, गुरु नानक और महात्मा बुद्ध तीनों ने ही निष्काम कर्मयोग यानि रज़ा के मसले का ही बयान किया है।

प्रश्नः– महाराज जी, चौदह लोक क्या हैं?

उत्तरः– पांच कर्म इन्द्रियां, पांच ज्ञान इन्द्रियां और चार अंतःकरण यह चौदह लोक हैं।

प्रश्नः– महाराज जी, कृपा करके यह भी बतला दें सोलह कला क्या हैं?

उत्तरः– प्रेमी, पांच कर्म इन्द्रियां, पांच ज्ञान इन्द्रियां, पांच प्राण यानि प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान, और मन यह सोलह कलाएं हैं।

प्रश्नः– महाराज जी, बतलाया जाता है कि भारतवर्ष में बड़े–बड़े यज्ञ किये जाते थे जिसमें घोड़े इत्यादि की बलियां दी जाती थीं, मसलन अश्वमेध, गोमेध, वग़ैरा। इनके मुतालिक आपका क्या विचार है?

उत्तरः– प्रेमी! स्वार्थी लोगों ने असलियत को बिगाड़ा है। लो सुनो! अश्व के मायने हैं प्राण और मेध के मायने हैं दमन करना। गो के मायने हैं इन्द्रियां और मेध के मायने हैं दमन करना। अब तुम देख लो असलियत क्या है?

प्रश्नः– भक्ति के रास्ते में बाधक क्या वस्तु हैं?

उत्तरः– प्रेमी, सूक्ष्म वासना ही भक्ति में बाधक है। तत्तवेता महापुरुषों की बुद्धि इतनी तेज़ होती है कि वह वासना को उठने नहीं देते। अगर एक लम्ह भी वासना उनके अंदर उठती है तो भूचाल आ जाता है। वह होने न होने को ईश्वर आज्ञा में समर्पण करते हैं। निर्दावा होकर विचरते हैं।

127. समतावादियों के वास्ते सत् उपदेश

(1) समतावाद का हर एक मैम्बर समता के लिट्रेचर से वाकफ़ियत हासिल करने की बड़ी से बड़ी कोशिश करे और समता के असूलों पर हर वक्त कारबंद रहे।

(2) किसी समतावाद को किसी दूसरी समतावाद से दान मांगने का हक नहीं है। अगर कोई समतावादी मेम्बर अपनी खुशी से किसी दूसरी समतावाद को दान देवे तो दे सकता है।

(3) अगर कोई समतावाद रिसाला या अखबार या ट्रेक्ट समता के प्रचार की ख़ातिर छपवाना चाहे तो वह अपनी सोसायटी के खर्च पर छपवा सकता है। दूसरी समतावाद से आग्रह कोई नहीं कर सकता।

(4) जो प्रचार की ख़ातिर पर्चा होवे वह कीमतन दूसरी समतावाद को दे सकता है मगर मुफ़्त न देवे।

(5) पहले तो हर एक मैम्बर समतावाद का हक (फ़र्ज़) है कि निष्काम भाव से सेवा करनी। अगर समर्थ्य से बाहर हो तो कीमत जायज़ वसूल कर सकता है, अपनी मेहनत की।

(6) जो समता अनुकूल ट्रेक्ट या रिसाला होवे तो हर एक समतावादी लेकर मुतालह कर सकता है। अगर बर–ख़िलाफ होवे तो फिर किसी को मुतालह करने या खरीदने का कोई हक नहीं।

(7) अगर किसी ख़ास मौके पर किसी समतावादी को समता की उन्नति के ख़ातिर ख़ास ज़रूरत पड़े तो उस वक्त समतावाद में अपील कर सकता है। और हर एक समतावादी मैम्बर अपनी हसव–मन्शा (समर्थ्य अनुसार) ज़रूरी सेवा करे।

(8) अगर वह समतावादी मैम्बर उस उगाही के अनुकूल समता की कार्यवाही न करे तो उसका असर उसकी अपनी ज़िन्दगी पर है न कि किसी समतावाद पर। ऐसे हालात को मद्देनज़र रखना ज़रूरी है।

(9) हर एक समतावादी मैम्बर अपने आपको हर एक समतावाद का मैम्बर बना सकता है यानी तमाम समतावाद का दायरा एक ही है।

(10) सोसायटी की सेवा निष्काम भाव से करनी हर एक मैम्बर का फर्ज़ है। समता की रोशनी निष्काम सेवा ही है।

(11) हर एक समतावादी मैम्बर दूसरी समतावाद के मैम्बरान से सत्संग विचार ज़रूरी किया करे। हाज़िर संगत होकर या बज़रिया पत्र द्वारा।

(12) जिस समतावादी मैम्बर को ईश्वर ने समर्थ्य दी होवे वह अपनी सच्ची अकीदत (श्रद्धा) से हर एक समतावाद और दूसरे अधिकारियों की सेवा करना अपना ख़ास फर्ज़ समझे।

(13) हर एक समतावाद के रिकार्ड में तमाम जगह की समतावाद के मैम्बरान की फहरिस्त (सूची) होनी लाज़मी है।

(14) अपनी श्रद्धा से समता धर्म की ख़ातिर ख़्वाह बड़ी से बड़ी तन, मन, धन से सेवा करे, कोई मुमानियत नहीं बल्कि फर्ज़ है। मगर सामाजिक कार्यवाही उन असूलों के मुताबिक होनी लाज़मी है। इससे खुद्दारी और खुदगर्ज़ी पैदा नहीं होती बल्कि हर एक को अपना फर्ज़ याद रहता है।

128. दान के ऐलान की मनाही

प्रेमी इक्ट्ठे बैठकर आश्रम सम्बन्धी ख़ास कार्य के मुताबिक विचार कर रहे थे कि एक प्रेमी ने उठकर ऐलान कर दिया कि वह इसके लिए पांच सौ रुपया देगा। सत्पुरुष ने फ़ौरन उसे बुलाकर झाड़ डाली कि क्यों उसने ऐसा ऐलान किया है। अपनी बड़ाई जतलाना चाहते हो इसलिए ऐसा कर रहे हो और आइंदा के लिए सबको चेतावनी दी कि दान इस तरीके से दें कि दायां हाथ दे, बायें हाथ को पता न लगे।

एक और प्रेमी ने अर्ज़ की:– वह अपनी ज़िन्दगी का बीमा भेंट करना चाहता है, बाकी किस्तें संगत अदा करे, और उसके मरने पर रुपया आश्रम ले लेवे।

सत्पुरुष ने फरमाया:– मुर्दों का रुपया आश्रम के लिए नहीं लिया जाता। बीमा नहीं लिया जावेगा।

दूसरे दिन सत्संग के बाद फिर प्रश्न व उत्तर का सिलसिला शुरू हो गया।

प्रश्नः– महाराज जी, भव–सागर क्या है?

उत्तरः– प्रेमी, शरीर के भोग ही भव–सागर हैं।

प्रश्नः– शरीर कैसे संसार हो सकता है?

उत्तरः– प्रेमी, संसार अनेक जीवों का मजमुआ है। जैसे अनेक तंदों का कपड़ा बना है वैसे ही अनेक जीवों करके संसार बना है।

प्रश्नः– महाराज जी, बैकुंठ किसे कहते हैं?

उत्तरः– प्रेमी, बैकुंठ मन की अवस्था है। जितनी मन में वासनाएँ है उतना ही नरकी मन है। जितनी मर्यादा है उतना ही स्वर्गी मन है। निर्वास मन बैकुंठ मन है।

प्रश्नः– महाराज जी, दु:ख-सुख का क्या स्वरूप है?

उत्तरः– प्रेमी, इच्छा का होना परम दु:ख है। इच्छा ख़्वाहे अच्छी है या बुरी, दु:ख का ही मूजिब (कारण) है। सुख का रूप ही अतलब (इच्छा रहित होना) होता है। जब-तक अंदर कर्तापन मौज़ूद है तब-तक वासना अंदर खड़ी है। जब-तक अंदर वासना खड़ी है तब-तक मलीनता ही मलीनता है और दु:ख ही दु:ख है। सत्पुरुषों ने शांति देने वाली चीज़ की तलाश की। शांति हकूमत और दौलत में नहीं है। इनमें तो हैरानगी और परेशानी है। शरीर के सुख नामुकम्मल हैं क्योंकि शरीर बनने और बिगड़ने वाली चीज़ है। इसमें इसलिए कैसे सुख हासिल हो सकता है?

प्रश्नः– माया का क्या स्वरूप है?

उत्तरः– हर एक का शरीर ही माया है। आकारमयी चीज़ें माया का स्वरूप हैं। माया ही भ्रम है।

प्रश्नः– महाराज जी, सर्व-शक्तिमान किसे कहते हैं?

उत्तरः– प्रेमी, सर्व-शक्तिमान के मायने ला-ज़रूरत है। जो अपने आपमें पूर्ण है। मिलना-बिछुड़ना भी ज़रूरत है। वह इससे भी परे है।

प्रश्नः– महाराज जी, अविद्या क्या है?

उत्तरः– प्रेमी, जो चीज़ वास्तव में नहीं है और निश्चय में उसे मान रहा है, वह अविद्या है।

प्रश्नः– विद्या का क्या स्वरूप है?

उत्तरः– जो चीज़ जैसी है वैसा उसको जानना विद्या है।

प्रश्नः– ज्ञान का क्या स्वरूप है?

उत्तरः– ज्ञान बज़ाते ख़ुद कोई चीज़ नहीं है। वह एक हालत या असलियत का बयान है। जब असलियत मालूम हो गई ज्ञान ग़ायब हो गया। केवल वहां तेरा स्वरूप ही रहेगा। दूसरी चीज़ वहां नहीं रहती है। वहां कहने वाला कौन, सुनने वाला कौन?

प्रश्नः– महाराज जी, आस्तिक का क्या स्वरूप है?

उत्तरः– प्रेमी, जिस वक्त जीव यह समझता है कि शरीर नामुकम्मल है, शरीर के सुख भी नामुकम्मल हैं इस वास्ते ऐसी चीज़ प्राप्त की जावे जो मुकम्मल हो, उस वक्त वह आस्तिक है।

प्रश्नः– महाराज जी, दलिद्री कौन है?

उत्तरः– जो यह कोशिश करता है कि सारी जिम्मेदारियों को पूरा करते हुए मैं संसार में विचर सकूं, वह दलिद्री है।

प्रश्नः– क्या आप बतायेंगे कि बुत-परस्ती के मुतालिक आपका क्या ख़्याल है? (कप्तान यूसूफ खां बक्करवाल का सवाल है)

उत्तरः– कप्तान साहब! आप इस ज़िस्म के बनाव-श्रृंगार में लगे रहते हैं न। क्या यह बुत-परस्ती

नहीं? अगर कोई इंसान जिस बुत या मूर्ति को मानने वाला है उसकी तालीम पर अमल करता है, तो ठीक है। वह वहदत-परस्त है, वरना सब बुत-परस्ती ही है।

129. एक प्रेमी का मान निवारण करना

प्रिन्सिपल देवराज, जिनका ज़िक्र पहले भी आ चुका है, फ़िलास्फ़ी में एम.ए थे। उन्हें अपनी काबलियत पर बड़ा मान था। पिछले साल सम्मेलन पर उन्होंने अपनी काबलियत का मान लिए हुए श्री महाराज जी से स्टेज पर सत्संग का भाषण देने की आज्ञा मांगी। सत्पुरुष ने उनकी मानसिक अवस्था को देखते हुए मुस्कराते हुए आज्ञा दे दी। मगर जब प्रेमी स्टेज पर बोलने के लिए खड़ा हुआ तो उस समय उसकी ऐसी हालत थी कि सारी काबलियत ग़ायब हो गई। गला रुक रहा था। मुंह सूख रहा था। बोलना कठिन हो रहा था। समझ नहीं आ रही थी कि क्या बोले? पानी मंगवाया, उसे पिया भी मगर खुश्की दूर नहीं हुई। बड़ा यत्न किया, मगर व्यर्थ गया। बड़ी मुश्किल से थोड़ा बहुत बोलकर ख़त्म किया और निराश होकर बैठ गये। अंदर से बेहद परेशान थे कि यह क्या हो गया? आज सारी काबलियत ख़त्म हो गई। मान टूट गया।

इस साल भी प्रेमी सम्मेलन में हाज़िर हुए। मगर पिछले तजुर्बे से यह विचार लिए हुए थे कि अब स्टेज पर जाकर बोलना ही नहीं। सुबह के समय सत्पुरुष की सेवा में बैठे हुए थे, सम्मेलन शुरू हो रहा था। सत्पुरुष ने फरमाया:- ''लाल जी! जाओ संगत के सामने अपने विचार रखो।'' प्रेमी ने पिछले साल के तज़ुर्बे के आधार पर नम्रता से अर्ज़ की:- महाराज जी! ''बोला नहीं जाता।''

आपने फरमाया:- ''नहीं लाल जी, जाओ। सब ठीक हो जाएगा। जाओ, जा के अपने विचार संगत के सामने रखो।''

सत्पुरुष के इस फ़रमान पर प्रेमी सम्मेलन में जाकर सत्संग में शामिल हुआ और स्टेज पर जाकर जब भाषण दिया तो हैरान रह गया कि विचारों का प्रवाह कैसे अंदर से जारी हो रहा है? और जान लिया कि सत्पुरुष क्या कुछ कर सकते हैं? कितनी शक्ति के मालिक होते हैं।

130. सम्मेलन में आदेश

आने वाले सालों में अगर शरीर रहा तो शिष्यों की कड़ी परीक्षा होगी। यह ऐसे ही मीठी-मीठी बातें नहीं करते। बड़े कड़े और सख़्त हैं। इनके पंजे में फंसा हुआ छूट नहीं सकता। कितने समय के पाबंद हैं। आप लोगों के लिए सुबह से कीली की तरह एक आसन पर गढ़कर बैठे रहते हैं। किसी भी प्रेमी को आज-तक जो कुछ भी उसने इनसे पूछा, हमेशा ठीक जवाब इन्होंने दिया। यह हर बशर को अपने से ऊंचा समझते हैं। यानी उच्च भाव करके उसका ख़्याल करते हैं। आप लोगों का भला करने के लिए यह अपने बाल भी नुचवाने के लिए तैयार हैं। किसी से आज

तक नाराज़ नहीं हुए। फिर भी फ़ायदा न उठाओ तो किसकी ग़लती? जब–तक इनका इस नश्वर शरीर में वास है तब–तक कुछ परवाह नहीं है। इनके शरीर छोड़ने के बाद जब तुम उलट–पलट कर इनकी वाणी और विचार देखोगे तो रोओगे और पछताओगे कि हमने क्या किया? इनकी तो बस यही सेवा है कि तुम अपना जीवन निर्मल बनाओ और कुछ सतनाम की कमाई कमाओ। अपनी तपिश बुझा लो और अपने आपको ठंडा कर लो। यह तो तुम सब लोगों को जीव स्वरूप समझते हैं और सहज भाव यह चाहते हैं कि आप लोग इस तपिश से छुटकारा पा जाओ। अपनी गाढ़ी कमाई कोई नालियों में थोड़ी ही डालता है। कुछ बनो तो सही, श्रद्धावान ही बनो। इस समय सब प्राणी यहां संशय और शकूकों को प्राप्त हो रहे हैं। तब ही उनका यह हाल है कि वह कभी भी शान्ति प्राप्त नहीं कर सकेंगे। होश करो और कुछ अपने आपको संभालो।

131. भक्त बनारसी दास का फिर छुट्टी मांगना

अब की बार भक्त बनारसी दास ने फिर छुट्टी मांगनी शुरू की–कि मेरा कुछ नहीं बना। सत्पुरुष फिर उसे समझाते रहे कि मेहनत करो, सब कुछ बन जावेगा। प्रेमियों को भी समझाने के लिए फरमाया और प्रेमी भी उसे समझाते रहे।

132. कुछ सट्टेबाजों को झाड़

एक दिन कुछ सट्टेबाज यमुना नगर से नंबर पूछने के लिए साइकिलों पर चले और रास्ते में स्कीम बनाते आए कि साइकिल फ़लां जगह रख चलें। सट्टे का नंबर पूछकर वापिस आकर साइकिलों पर सवार होकर सिनेमा देखेंगे। जब आश्रम में श्री महाराज जी के कमरे में पहुंचे तो महाराज जी लेटे हुए थे। जब वह कमरे में दाखिल हुए तो आप फ़ौरन उठ बैठे और उन्हें झाड़ डालनी शुरू कर दी कि शैतान, फ़कीरों के पास सट्टे का नम्बर पूछने आते हैं और रास्ते में स्कीमें बनाते आते हैं कि फलां जगह साइकिल रख चलेंगे और वापसी पर साइकिल पर सवार होकर सिनेमा देखेंगे। वह लोग इतने घबराए कि यह हस्ती तो दिलों के हालात और राज़ जानती है। पूछना तो एक तरफ रह गया, चन्द मिनट बैठकर भाग निकले।

133. विचित्र आकर्षण शक्ति व दया दृष्टि का भंडार

सम्मेलन में जब सत्संग की कार्यवाही शुरू हुई तो महामंत्र और मंगलाचरण सब प्रेमियों ने मिलकर पढ़ा। सत्पुरुष की आज्ञानुसार सबसे पहले ट्रस्ट के मुतालिक जो आज्ञा आपने लिखी थी उसे बाबू अमोलक राम ने सब संगत को पढ़कर सुनाया। उसके बाद प्रेमियों ने अपने–अपने विचार संगत के सामने रखे।

सत्पुरुष आख़िर में सत्संग की समाप्ति से एक घंटा से कुछ पहले तशरीफ़ लाए और अपने अमृत-वचनों से संगत को निहाल किया।

सत्पुरुष की जगाधरी आश्रम में मौज़ूदगी का शहर में पता लगना ज़रूरी था। ज्यूं-ज्यूं लोगों को पता लगता रहा लोग दर्शनों के लिए हाज़िर होते रहे। सत्पुरुष की कशिश आम जीवों को खींचने लगी। एक प्रेमी भी खिंचा हुआ चला आया। जब आश्रम में पहुंचा और उस कमरे में जिसमें सत्पुरुष विराजमान हुआ करते थे, उसमें दाखिल हुआ तो देखा सत्पुरुष बाहर से तशरीफ़ ला रहे हैं। दर्शन करने पर ऐसी कशिश हुई कि श्री चरणों में सिर रखकर प्रेमी रोने लगा। सत्पुरुष ने उठाकर उसे साथ ले लिया और कमरे में जाकर अपने आसन पर विराजमान हो गए। सत्पुरुष की आमद को देखकर और प्रेमी भी चरणों में हाज़िर होने लगे। दंडवत प्रणाम करके चरणों में बैठकर अपनी शंकाएँ निवारण करने लगे।

सत्पुरुष ने उस प्रेमी से भी फरमाया:- प्रेमी! कोई विचार करो। मगर वह खामोश रहा। प्रेमी रोज़ाना चरणों में हाज़िर होता और प्रेमी जो विचार रखते उनके निर्णय को सुनकर प्रभावित होता और इसके अलावा सत्पुरुष उसे फिर फरमाते कि कोई विचार करे। मगर वह खामोश रहता।

एक दिन जब वह शहर से आ रहा था और आश्रम के गेट के पास पहुंचा तो ख़्याल आया कि वह तब सत्पुरुष को मानेगा अगर आज चरणों में पहुंचते ही उसका नाम पूछें और दो दफ़ा नाम पूछें और दीक्षा के लिए फरमावें।

जब वह चरणों में पहुंचा तो सत्पुरुष ने फरमाया:- "शैतान! फ़कीरों का इम्तेहान लेते हैं। कहते हैं खुद-ब-खुद नाम पूछें। बता फिर तेरा क्या नाम है?" जब उसने नाम बताया तो फरमाया:- "यह ही कहा था कि दो दफा नाम पूछें। बता दोबारा क्या नाम है"? फिर उसने अपना नाम बताया। इसके बाद फरमाया:- "यह ही विचार किया था कि दीक्षा के लिए खुद-ब-खुद बुलावें, तब मानूंगा। अच्छा, कल सुबह ही आ जाना।" प्रेमी बड़ा प्रभावित हुआ।

सत्पुरुष विचित्र आकर्षण शक्ति के मालिक और दया-दृष्टि में लाजवाब थे। हर किसी के दिल की हालत उन्हें मालूम रहती थी। वह दिलों में उतरकर दिल की बात करके सबको प्रभावित कर देते थे। यही कारण था कि लोग खुद-ब-खुद उनके चरणों में खिंचे चले आते थे और उनकी अपार दया और प्यार का आनन्द सा महसूस करते थे।

134. लंगर बांटने में परिवर्तन

पिछले साल सत्संग सम्मेलन के बाद लंगर तक्सीम करने के लिए उस ज़मीन पर प्रबंध किया गया था जो चौधरी नैन सिंह से ली गई थी। जब सत्संग समाप्त हो गया और संगत लंगर पाने के लिए उस ज़मीन पर पहुंची तो सेवादारों ने सबको लाइनों में बैठने के लिए कहा। लंगर पाने के लिए शहर से बहुत से प्रेमी मय औरतों व बच्चों के साथ आए थे। लाइनों में बैठ तो गये मगर जब लंगर

तक्सीम होने लगा तो औरतें और बच्चे सब उठकर प्रशाद बांटने वाले प्रेमियों के इर्द–गिर्द जमा हो जाते। बावज़ूद मना करने के, न मानते और प्रशाद बांटना मुश्किल हो जाता।

आपने फिर इस अफ़रा–तफ़री को देखकर आज्ञा फरमाई:– माजरी की तरफ सड़क पर जो गेट है वहीं सब लंगर का प्रशाद ले जाओ और लोगों, औरतों और बच्चों को प्रशाद, रोटी–दाल वग़ैरा देकर बाहर निकालते जाओ।

वहां भी गड़बड़ हो गई। मगर लंगर का प्रशाद बांटा गया। इन हालात को मद्दे नज़र रखते हुए इस बार चूंकि अहाता लंगर के इर्द–गिर्द चारदीवारी बन चुकी थी इसलिए आपने बाबू अमोलक राम को आज्ञा दी– कि वह प्रेमियों को, जिन्होंने लंगर पाने के लिए जाना हो, टिकट जारी कर देवें। और यह भी फरमा दिया कि एक घर के किन–किन सदस्यों को टिकट देने हैं। दरवाज़ों पर प्रेमी खड़े हो गए, जिन्हें हिदायत दी गई कि टिकट दिखाने वालों को अंदर जाने दें। इस तरह लंगर बांटने का प्रबन्ध ठीक प्रकार से हुआ। चूंकि दिल्ली, आगरा वग़ैरा के प्रेमी चरणों में प्रार्थना कर रहे थे, श्री महाराज जी कुछ समय उन्हें देकर कृतार्थ करें और पत्र द्वारा भी प्रार्थना कर रहे थे। श्री महाराज जी ने 14 नवम्बर, 1952 को दिल्ली पहुंचने का प्रोग्राम बनाकर दिल्ली निवासी प्रेमियों को सूचित करने के लिए भक्त बनारसी दास को आज्ञा दी।

भक्त जी ने फिर आज्ञा मांगी कि वह सहारनपुर जाकर अपनी बहन को मिल आए। आपने उसे आज्ञा दे दी। भक्त जी सहारनपुर गए। मगर जिस दिन वापसी का वायदा कर गए थे उस दिन वापिस नहीं आए। सत्पुरुष इस पर नाराज़ होते रहे कि मूर्ख ने फ़क़ीरों के साथ रहकर सत्मार्ग पर चलना तो दरकिनार वक्त की पाबंदी भी नहीं सीखी। भक्त जी आ तो गए मगर एक दिन देरी से आए।

135. सत्पुरुष का दिल्ली में निवास

श्री महाराज जी ने 13 नवम्बर, 1952 तक जगाधरी में निवास किया। फिर दिल्ली तशरीफ़ ले गए जहां आपको ठाकुर मुक्त राम के बाग में ही ठहराया गया, जहां सत्संग के दिनों में यानी शनिवार और इतवार को ख़ासकर सच्चाई के जिज्ञासु काफी तहदाद में हाज़िर होकर लाभान्वित होते रहे। वैसे प्रेमी–जन सुबह आठ बजे से रात के दस बजे तक दर्शन करने की ख़ातिर लगातार आते रहे और अपने संशय निवारण करते रहे।

136. संक्षिप्त नोट– सत् उपदेश अमृत (23 नवम्बर, 1952)

शरीर रूपी संसार को धारण करके हर एक जीव शान्ति की तलाश कर रहा है। सांसारिक भोग पदार्थों में जीव इसकी तलाश कर रहा है। गो यह इसे प्राप्त नहीं हो रही बल्कि यह उलटा लाचार हो रहा है। ऐसे ही इसे तलाश करते–करते शरीर ख़त्म हो जाता है और जीव को दूसरा शरीर धारण करना पड़ता है और कई जन्म, कई योनियों में जाना पड़ता है। यह मानुष शरीर दुर्लभ

है। इसमें ही यह शांति प्राप्त कर सकता है। सत्पुरुषों ने फरमायाः– ऐ जीव! तृप्ति या शान्ति जहां तू तलाश कर रहा है तुझे यह वहां नहीं मिल सकती। यह तो तेरे पास है। तू इसको इस शरीर में ही तलाश कर। इसे तलाश करने के उन्होंने साधन बतलाए। जब कोई जीव उन साधनों को धारण करता है तब उसकी बुद्धि बलवान होती है, तो वह देखता है कि नाना प्रकार के शरीर विचर रहे हैं और किसी वस्तु की तलाश कर रहे हैं। वस्तु की तलाश करते–करते शरीर ख़ात्मे पर पहुंच रहे हैं। यह भी देखा कि इस संसार रूपी फुलवाड़ी में भिन्न–भिन्न प्रकार के शरीर चक्कर काट रहे हैं। शरीर पांच तत्त्वों के ही हैं। लेकिन विचारधारा हर शरीर की मुख्तलिफ (अलग) है। इसलिए हर शरीर अपने ही मुख्तलिफ (अलग) माहौल में घूम रहा है और दूसरे शरीरों के परिणाम से न तो सबक ले रहा है और न ही लेने के लिए तैयार है। यह ही असली जहालत है।

वास्तव में शरीर रूपी रथ को बुद्धि रूपी सारथी चला रही है। शरीर चाहे डाकू का है, चाहे देवता का पांच तत्त्वों का ही है। फ़र्क सिर्फ़ बुद्धि का है। और शारीरिक सुखों की पूर्ति के यत्न–प्रयत्न में लगा है।

एक किस्म वे वह लोग हैं जिनकी बुद्धि शरीर के सुखों के लिए नित कपट–छल कर रही है, अपने से भी और दूसरों से भी। यह ही राक्षस बुद्धि है। इसे ही नास्तिक बुद्धि कहते हैं। ऐसी बुद्धि दूसरों के हक छीनकर खुश होती है। दूसरे के सुख लूटकर खुशी मनाती है और जायज़–नाजायज़ करना अपना हक समझती है। इसलिए इसका दंड राज दंड है।

दूसरी किस्म वे लोग हैं जो अपने–अपने ख़्याली देवते बनाकर उनकी पूजा करते हैं। ग्रहों की पूजा, जंतर–मंतर आदि करते हैं। गंगा स्नान धर्म समझते हैं, लेकिन ऐसी पूजा व स्नान से पाप तो घटता नहीं बल्कि स्वार्थ अंधकार और बढ़ जाता है। जिस कारण जैसा प्यासा और निराशा आया था वैसा ही निराशा और प्यासा चला जाता है।

तीसरी किस्म के वे लोग हैं जो शरीर के सुख नित रहने वाले नहीं, बदलने वाले हैं, ऐसा समझकर छल–कपट को छोड़कर सतवादी बनने का यत्न करते हैं। इस मानुष चोले में उसकी भावना उत्थान की है। उसके लिए वह रब्ब को याद करता है। चूंकि उसे अंतर में स्वार्थ के बिगड़ जाने का भी डर रहता है, इसलिए कभी स्वार्थ की तरफ कदम बढ़ाता है कभी संतों के डेरे की तरफ जाता है, तो कभी सिनेमा घर की तरफ। उसके लिए परमेश्वर का मसला ही अलग है।

चौथी किस्म के वे लोग हैं जिनकी बुद्धि में शरीर के सुखों का लालच तो लगा हुआ है और अपने सुखों की ख़ातिर यत्न भी कर रहा है, लेकिन दूसरों को न तो नुकसान पहुंचाता है और न उनको दुःख देता है, बल्कि सुखों की ख़ातिर संतों के पास जाता है और पुण्य–दान भी करता है। ऐसी बुद्धि पलटी जा सकती है। जिसकी बुद्धि यह भांप रही है कि शरीर कुछ नहीं और सुख आरज़ी हैं। वह जीवन कर्तव्य को समझता है, उसकी बुद्धि निर्मल है। वह ही अपना सुख दूसरों के लिए त्याग करता है।

आख़िरी श्रेणी उन लोगों की है जिनकी बुद्धि शीशे की तरह साफ है उनकी बुद्धि दुनिया के सुखों को छोड़कर परमेश्वर–परायण होती है। उस वक्त उसके अंदर सही अनुराग पैदा होता है और ईश्वर प्राप्ति की सही श्रद्धा पैदा होती है।

अनंक को सरजीवत किया, तुमसा दाता न कोये।
पल–पल जस तेरी गावां, तब जीवन सफल होये॥
जन्म से पहले तू संग साथी, अंत संग तू ही जासी।
इस जीवन की तू रक्षा कीनी, नित तू है संग बिलासी॥
तुम ही संगी तुम ही साथी, तू पल–पल होत सहाई।
'मंगत' परम प्रीत से, प्रभ तेरी कीरत गाई॥

जब जीव को यह निश्चय हो जाए कि ईश्वर के सिवाय और कौन इसका मित्र है तो ग़फ़लत का पर्दा टूट जाता है? ऐसा भक्त जब ईश्वर की भक्ति करता है तो–

ज्यों–ज्यों प्रभ नाम चित बासे, तृष्णा रोग विनासे।
गरभ ग़ुबार का बंधन टूटे, धारे सहज उपासे॥
तृष्णा नासी मन तृप्त समाया, सकल दोष हुए दूरे।
'मंगत' परम प्रीत से, पाए दरस हज़ूरे॥

जब ईश्वर का रंग लगा तो ठंडक प्राप्त हो गई और संसार ग़ायब हो गया। सब महापुरुषों ने ऐसा ही समझाया है।

ऊँच शिखर देख के दाने, नित प्यासे रहायें।
नीवें थाईं नीर से, नित निर्मल शांत समायें॥
तज अभिमान ग़रीबी पाओ, करो जीवन सुखकारी।
'मंगत' विच ग़रीबी पूजिए, पावे बड़ जागीरी॥

इसलिए अभिमान की गर्दन तोड़ो। नम्रता धारण करो। फिर धीरे–धीरे परम शांति का तेरे अंदर बोध हो जाएगा। अभिमान तुझे ईश्वर से विमुख करेगा। कबीर साहेब फरमाते हैं:–

देवन को अन्न दान है, लेवन को सत्नाम।
तरने को है दीनता, डूबन को अभिमान॥

सत्संग द्वारा इस शरीर को सुगंधित करो ताकि बुरे विचार की बदबू दूर होवे।

दीन गंवायो दुनी संग, दुनी न चाली साथ।
पैर कुल्हाड़ा मारया, गाफ़िल अपने हाथ॥
अपना सुख नित ही वरताओ, पर दुःख सीस धराओ।
साची आज्ञा प्रभ की जानो, ते लाभ जीवन का पाओ॥

सदा प्रभु विश्वासी होकर शुद्ध आचार को धारण करो और अपने आपको निर्मल बनाओ।

सोना मनों विसार के, तू मारग धर्म में जाग।
साहेब दा फरमान सुन, लख लेखा वडभाग॥
सोना मनों विसार के, निर्गुण की कर चौंप।
यह दम हीरा लाल है, तू गिन–गिन हर को सौंप॥

कर्म के चक्कर में फंसा हुआ ही तू शरीर ले कर आया है। कर्म अच्छे न हुए तो राजा के घर पैदा होकर भी रोटी से महरूम रहेगा और कर्म ही यम बन जायेंगे। दुःख जब आता है अपनी जगह बना लेता है। इसलिए ये शरीर, जो ''जीवत भी माटी मोयां भी माटी'' के समान है, के सुखों से तू पहले ही किनाराकशी कर ले। एक सच्चे असूल पर डट जा और शुभ कर्मों की जाग लगाकर तू फिर परवाह न कर कि दुनिया क्या कहती है? शुद्ध आचरण वाला जीवन बसर करता हुआ दायमी सुख को प्राप्त करने का यत्न कर। इससे तेरे जन्म–जन्म के बंधन टूट जावेंगे। फ़क़ीरों की यही प्रार्थना है कि ज्यूं–ज्यूं इस मार्ग पर चलने वाले होवोगे, यह सदा आशीर्वाद बन जायेगा और इनके शरीर अंत होने पर भी तेरी रहबरी (मार्ग–दर्शन) करेगा।

सत्संग समाप्ति के बाद सत्पुरुष ने फरमाया:– प्रेमियों! कोई विचार करो तो एक प्रेमी ने पूछा:–

प्रश्नः– महाराज जी, जब ईश्वर की शक्ति के बग़ैर एक पत्ता भी नहीं हिल सकता तो फिर अच्छे–बुरे कर्मों की जिम्मेदारी इंसान पर क्यों?

उत्तरः– प्रेमी, यह सुनी–सुनाई बात है, निश्चय में नहीं है। क्योंकि जब ईश्वर को कर्ता मान लिया तब अपना आप नहीं रह सकता।

137. सत् उपदेश अमृत (20 दिसम्बर, 1952)

यह जीव शरीर रूपी संसार को धारण करके नाना प्रकार के सुख प्रतीत करता हुआ सारे ब्राह्मण्ड में विचर रहा है। लेकिन संसार का स्वरूप यह है कि जैसा निराशा और प्यासा आया था वैसा ही निराशा और प्यासा यहां से वापिस जाता है। जितनी देर यह जीव इस संसार में विचरता है, यह समझता है कि दूसरे मेरे से अधिक सुखी हैं। यह ही पागलपन मूर्खताई है। यह निश्चय ग़लत है। यह सत्संग द्वारा ही पता लगता है कि ग़ैर–तसल्ली की हालत सबके अंदर मौज़ूद है। इस ग़ैर तसल्ली हालत को दूर करने के लिए नित नए तज़ुर्बे करता हुआ और ख़्याली पुलाव पकाता हुआ चला जाता है। समझदार वह ही है जिसने पहले इस बात को जान लिया है कि जो चीज़ प्राप्त है वह ग़ैर–तसल्ली बख़्श है और जो चीज़ मन से निकल रही है वह भी ग़ैर–तसल्ली बख़्श है। वास्तव में जो जहाँ खड़ा है हिल रहा (बेचैन) है और वह बीमारी लम्ह–ब–लम्ह बढ़ रही है। यह बीमारी तृष्णा है। ज्यूं–ज्यूं यह जीव नए तज़ुर्बे करता है तृष्णा की अग्नि और प्रचंड होती जाती है।

मानुष जन्म की उच्चता इस वास्ते है कि इसमें यह सही तहकीकात (खोज) करके जीवन का सही निर्णय कर सकता है।

जो देखन में आए साजन, सो ही त्रिखत समाए।
राजे राने गुनी स्याने, नित ही ताप तपाए॥
आसा लेके जग आए, चले निरासे अंत।
अस्चर्ज रचना जगत की, करे जीव तिरखंत॥

पहले भी तू नहीं था आख़िर में भी तू नहीं रहेगा। दरम्यान में तू है। इसलिए तू इस सफ़र को ख़त्म कर। सत्पुरुष ने मानुष को बुद्धि के लिहाज़ से इसे चार हिस्सों में बांटा है।

(1) **बेहोश बुद्धि –** जिसे अपना कुछ पता नहीं।

(2) **मदहोश बुद्धि** – जो जानकर भी गाफ़िल है।

(3) **बाहोश बुद्धि** – जो समझता है और समझ के मुताबिक चलने की कोशिश करता है।

(4) **कुल होश बुद्धि** – जो अपने आपको समझ लेता है और अपना सफ़र जल्द ख़त्म करके दूसरों को सफ़र तय करने में मदद करता है।

पहली हालत में शरीर धारण करके अनेकों मलकियत (सम्पत्ति) बनाता है लेकिन:

माटी कहे कुम्हार से, तू क्यों रौंदे मोहे।
इक दिन ऐसा आयेगा, मैं रौंदूगी तोहे॥
जो जन्मे सो निश्चय विनासे, यह काल चक्कर भरमाए।
मूरख गफ़लत धार के, नित ही नित दुःख पाए॥
जो वस्तु देखन में आवे, सो ही नाश सरूप।
जिसके संग बहु सुख बांछे, सो ही मन्द मन्द रूप॥
जाग गुनी उठ जाग तूं, जीवन कर विचार।
अंतरयामी बोध कर, जो घट-घट करे पसार॥

पिंजरे की पूजा में मत ग़लतान हो। पिंजरे के बनाने वाले की सोच कर। कुमतवादी न बन। सत्वादी होकर सत् परायण होकर सत् की खोज कर। महापुरुष इस पिंजरे और संसार की सही तस्वीर को हर वक्त याद रखते हैं। कबीर साहब ने कहा है:-

1. **उपजै निपजै निपज समाई, नैन देखत एह जग जाई।**
2. **हाड जले जैसे लकरी का तूला, केस जले जैसे घास का पूला।**
   कह कबीर तब ही नर जागे, जम का डंड मूंड महि लागै।
3. **आवत संग न जात संगाती, कहा भेओ दर बांधे हाथी।**
   लंका गढ़ सोने का भेआ, मूरख रावन किआ ले गेआ।
   कह कबीर किछ गुन बीचार, चले जुआरी दोए हथ झार॥

एक दिन यह पिंजरा भी अज़ाब देने वाला हो जायेगा और फिर कुछ न बन सकेगा। इस पिंजरे में से क्या निकलेगा? सारे सुख घड़ी में दुःख रूप हो जायेंगे। समझ ले कि शरीर के सुखों करके सुख नहीं है।

अरब खरब धन होए प्रापत, तो भी तिरखावंत।
इस मन को नहीं धीरज प्रापत, बिन सिमरे भगवंत॥
तन के सुखिया बहु मिले, मन का मिला न कोये।
मन का सुखिया जो मिले, तो पार उतारा होये॥

मन की खोज ज़रूरी है। लेकिन मादावाद, प्रकृतवाद, भोगवाद से ऊंचा होकर ही बुद्धि सही सोच सकती है।

(1) मायावादी और भोगवादी सब शरीर के पुजारी हैं।
(2) ईश्वर पुजारी बाहोश बुद्धि वाले लोग हैं।

इस तन को सुख अधिक दिए, पर मन न पाए परतीत।
नित-नित तिरखा दूनी होए, रहे आठ पहर भयभीत॥
मुट्ठी बांधे आए जगत में, हाथ पसारे जाते हैं।
राजे राने गुनी सयाने, अंत समय पछताते हैं॥

जब शरीर के सुखों को एकत्र करते-करते जीव थक गया तो जीवन का तज़ुर्बा ग़लत साबित हुआ और पता चला कि शरीर के सुख, सुख नहीं। जब ऐसा पता लगा तब जाकर सत् की खोज में लगा। और जब सत् को अनुभव किया तो शरीर असत् रूप प्रतीत हुआ।

चित्त रूप जग देखा सार, मनवां सांग बनाई।
बिन सिमरे मन धीर न आवे, रहे तिरखा अधिकाई॥

जब शारीरिक सुखों का निश्चय टूटा तब ईश्वर विखे श्रद्धा पैदा हुई। यानि ज्यूं-ज्यूं अभिमान नष्ट होता जाता है इसे ठंडक मिलने लग जाती है, यानी जब शरीर का निश्चय टूटा इसकी काया पलटी, इसके मन में पर-सेवा प्रीति पैदा होने लगी और वह अपने सुख दूसरों के अर्पण करने लगा।

अब इसे सत् की पहचान शुरू हुई और अब इस शरीर के अंदर इसका मन ठंडक महसूस करने लगा। न जीने की ख़्वाहिश रही न मरने का भय रहा। अब पूर्ण परमेश्वर को समझकर पूर्ण हो गया। यानी पैदा तो प्यासा हुआ था लेकिन अब तृप्ति आ गई। इसलिए आप गुणी पुरुषों की सेवा में निवेदन है कि मानुष जन्म पाकर तुम्हारी बुद्धि ऐसी बन जाए कि तुम दूसरों के सुख हरण करने वाले न बनो बल्कि अपनी सही रक्षा करो ताकि इंसान कहला सको। अगर तुझे सुखों की परवाह न रहे और दूसरों को सुख देने वाले बन जाओ तो सच्चे ईश्वरवादी हो जाओगे। जो अपने सुखों की ख़ातिर दूसरों के सुख हरण करने वाला होता है वह ही राक्षस कहलाता है। दरम्यानी स्थिति में भी जो बुद्धि को कायम रखते हैं उनके अंदर शान्ति आने लग जाती है। अच्छा काम करते-करते शायद तू खुद अच्छा हो जाए। सत्पुरुषों के वचनों पर चलकर तेरा जीवन सही हो जाए, नहीं तो ''मन रोगी और तन सोगी'' होगा।

दूसरा ठंडक प्राप्ति का तरीका ईश्वर को कर्ता–हर्ता मानना और अपने आपको अकर्ता मानना है। जिस वक्त बुद्धि अकर्त भावना पर खड़ी होगी तो उस वक्त अनुभव होगा कि ईश्वर शुद्ध हैं। जब–तक कर्म–द्वन्द्व तुम्हारे अंदर है उस वक्त तक अकर्ता नहीं बन सकता। जितने सत्पुरुष हुए हैं उन्होंने पहले भक्ति को अपनाया और कर्तापन अंधकार से निवृत्ति पाई।

विद्या द्वारा जो चीज़ हासिल होती है उसको निद्धियासन द्वारा कमाओ। तब जाकर अनुभवता होगी। असत् चीज़ का मोह त्यागने से सत् का निश्चय पक्का होगा। अपने कर्तापन को तोड़ने की ख़ातिर ईश्वर को कर्ता मान। सन्यास का मतलब है कर्म–द्वन्द्व के नीचे से निकल जाना यानी जिस अवस्था को पहचान कर शरीर के खेदों से मुख़लसी मिले और बुद्धि स्वतंत्र हो। जब–तक अंतःकरण विखे अनुभव न हो, आप जो कुछ कहेंगे शक में कहेंगे। जब–तक साक्षात्कार हालत नहीं आती तब–तक बुद्धि कर्म अभिमान में चलायमान रहती है।

जीव मद में गिरफ्तार होकर दुःख–सुख के चक्कर में घूम रहा है। कोई ही विवेकी पुरुष इससे छुटकारे का यत्न करता है। पहला मद इस जीव को शरीर का है। दूसरा मद बुद्धि का। यह विचार आपकी सेवा में प्रभु आज्ञा से रखे गए हैं। ईश्वर आपको सुमति देवें ताकि आप गुरमुख सज्जन इन विचारों को अपनाकर जीवन में असली ठंडक हासिल कर सकें और अपने सही मुकाम को प्राप्त कर सकें।

138. सत्गुरु आदेश (20 दिसम्बर, 1952)

प्रेमियों, यह दुनिया अंदर–बाहर हर वक्त हर जीव की हरकत देख रही है। जो विश्वास वाले हैं वह अपने सत् की सत्ता पर दृढ़ता से कायम रहते हैं। और वह बाहरी दुनिया की परवाह न करके अपनी अदंरूनी सत्ता से गाफ़िल नहीं होते और न ही कोई ग़लती करते हैं जिससे अंदरूनी सत्ता में फ़र्क आवे।

जैसा जिसके अंदर विश्वास होता है। वैसा ही सृष्टि को रचता है। जैसा जिसके अंदर असत् खड़ा है वैसी ही असत् सृष्टि वह अंदर रच लेता है। इसलिए हमारे अंदर की सृष्टि हमारे विश्वास के अनुकूल रची गई है। और हमारे विचार उसी तरह सत् और असत् को अपनाये हुए हैं।

गो, तुम प्रेमी सज्जनों के दिलों में यह विचार शायद न बैठे क्योंकि तुमने किसी और विचार में अपने रूप को ढाल लिया है। अपने आपको हमेशा सत्ग्रही और सत् विश्वासी बनाओ क्योंकि इस जीवन का पता नहीं। इस ज़माने का कोई पता नहीं। बाहरी जो चीज़ें बनी हैं, हो सकता है तुम्हारे अचानक नाश का कारण बन जायें। अब तुम एक ज़िन्दगी के नज़दीक आए हो। इसलिए इस ज़िन्दगी का ध्यान करो और बाहोश होकर सत् विचारों को अपनाओ। इन्होंने असली खुशी हासिल की है। तुम्हारा अंतःकरण इसको समझे या न समझे। यह तो चाहते हैं चूंकि तुम इनके नज़दीक आए हो इसलिए थोड़ा बहुत विचार निश्चय करके अपना लो। अगर यह यकीन दिन–रात दृढ़ हो जाए तो

शांति तुम्हारे अंग–अंग में समा जायेगी, नहीं तो यह समझ लो कि सागर के पास आकर प्यासे ही चले गए।

इस ज़माने विखे, जबकि नास्तिकवाद फैला हुआ है, हर एक की वृत्ति बाहर की तरफ दौड़ रही है जो अशांति का कारण है। इसलिए कुछ न कुछ अपने आपको सही अनुयाई बनाओ जिस करके अपने मक्सद में कामयाब हो जाओ।

जिस तरह दिल्ली सेन्ट्रल जगह है, इस जगह अदारे ही अदारे हैं। तुम्हारा जीवन सही होगा तो बाकी अदारे धरे–धराये रह जायेंगे। दुनिया आकर तुम्हारे जीवन को देखेगी और सुख शांति का अहसास करेगी। दुनिया खुद–ब–खुद तुम्हारे पास खिंची चली आवेगी। इसलिए तुम अगर अपनी खुश–नसीबी समझो तो ऐसा होना चाहिए। यह ऐसा ही चाहते हैं ताकि तुम्हारे सम्पर्क में आए तुम्हारे नज़दीक आने वाले तुम्हारा जीवन देखकर, तुम्हारा तप–त्याग देखकर, तुम्हारी कुर्बानी देखकर कुबार्नी पर अमादा हो जावें। कुर्बानी को देखकर लोग कुर्बानी करके दिखायेंगे। श्रद्धा बड़ी अनमोल वस्तु है। इनके जीवन को देखकर तुमने श्रद्धा की, दूसरे तुम्हारे जीवन को देखकर तुम पर श्रद्धा करेंगे। फिर देखना यह संगत कहां से कहां जायेगी? तुम मानो या न मानो।

139. रिसाला समता दर्पण के प्रकाशन की आज्ञा

दिल्ली में निवास के समय सत्पुरुष ने रिसाला के जारी करने की आज्ञा फरमाई और रिसाले का नाम ''समता दर्पण'' रखा गया। दिल्ली में आपने चालीस दिन निवास किया।

140. आगरा में अमृत वर्षा

श्री महाराज जी 22 दिसम्बर, 1952 को शनिवार के दिन सुबह दस बजे की गाड़ी से आगरा तशरीफ़ ले गए। बहुत से प्रेमी सज्जन आपको विदा करने के लिए स्टेशन पर आपके साथ गए। विदाई का दृश्य भी अनोखा दृश्य था। प्रेमी सज्जनों पर सकते का सा आलम तारी था और सब ऐसे मायूस नज़र आते थे जैसे उनसे कोई प्रिय चीज़ छिन रही है। शायद यही कारण था कि तमाम भाइयों की आंखों से आँसुओं के सागर छलक रहे थे, और चेहरों पर उदासी छाई हुई थी। लेकिन महाप्रभु अपनी आकर्षण और आत्मिक शक्ति से अंतर में तसल्ली दे रहे थे। इधर साक्षात् करुणा दृष्टि बेपनाह प्रेम बरसा रही थी।

आगरा स्टेशन पर आगरा निवासी प्रेमी स्वागत के लिए हाज़िर थे। गाड़ी पहुंचने पर सब गाड़ी के डिब्बे के सामने पहुंच गए, चरणों में प्रणाम किया और फूलों के हार पहनाये। आपको ले जाकर मन्दिर बाज़ार से आगे जहां अब आश्रम कायम किया गया है वहां ठहराया। इस जगह भी सत्संग का सिलसिला जारी हुआ और आगरा निवासी प्रेमी सत्संग अमृत–वर्षा से तृप्ति और संशय निवारण करते रहे।

141. श्री मुख वाक् अमृत

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि समतावाद जो असली कल्याण मार्ग है और मानुष जन्म की उच्चता है इसको निश्चय से अपनाना परम सिद्धि के देने वाला है। इस वास्ते तमाम प्रेमी केवल इस सिद्धान्त में दृढ़ता रखते हुए गुरु आज्ञा का सही पालन करते हुए अपनी जीवन यात्रा को मुकम्मल करें तब ही सर्व कल्याण प्राप्त कर सकेंगे। और इस समय जो मानुषों में अशांति छाई हुई है उसका केवल उपाय सत्–आचार, सत्–विचार और सत् निद्धियास ही है। जिनके धारण करने से ही हर एक मानुष पवित्र जज़्बात को प्राप्त करके अपने सही कर्तव्य का पालन कर सकता है और देश धर्म की उन्नति का निर्मल आदर्श स्वरूप हो सकता है। ईश्वर सत् पुरुषार्थ देवें।

142. श्री मुख वाक् अमृत

मोह की अधिक अग्नि को सत् विचार और वैराग्य के बल से नित ही सींचना चाहिए। तब ही मनोवृत्ति अंतरमुखी होकर सत्नाम में दृढ़ हो सकती है। इस संसार की नाशवान यात्रा को दृढ़ निश्चय से अनुभव करके हर वक्त सत् परायणता में निश्चल रहना चाहिए। यह ही निश्चय अखंड भक्ति के देने वाला है। ईश्वर आज्ञा में अपने जीवन कर्तव्य को पूर्ण निश्चय से समर्पण करना मानसिक कल्पनाओं के नाश करने का साधन है। इस वास्ते हर वक्त प्रभु नाम और प्रभु आज्ञा में निहचल होना चाहिए। ऐसे यत्न–प्रयत्न से ही सत् अनुराग को प्राप्त करके बुद्धि परम–तत्त को निहचल होती है। हर वक्त मनोवृत्ति को ऐसे शुद्ध विचारों से निर्मल करना चाहिए। तब ही अभ्यास में कामयाबी हो सकती है। ईश्वर निर्मल भावना देवें ताकि अपने सत–यत्न में दृढ़ रहते हुए इस संसार की भयानक अग्नि से ठंडक प्राप्त कर सकें। ईश्वर सत् विश्वास देवें।

143. पत्र द्वारा सत् शिक्षा

प्रेमी जी, इस संसार सागर में कई प्रकार के तरंग उठते रहते हैं। बुद्धिमान पुरुष का निर्मल कर्तव्य यह ही है कि सत् परायण होकर अपने जीवन को सत् कार्य में प्रवृत्त करता रहे और सही मुनासबत यानी सत् नियम और सत् संयम में पूर्ण दृढ़ता धारण करे। ऐसे पवित्र निश्चय से ही सत् शान्ति प्राप्त होती है। प्रेमी जी, वैसे तो ज़िन्दगी हर हालत में गुज़र जाती है, ख़्वाहे कल्याणकारी मार्ग में चलकर गुज़ार देवें, ख़्वाहे अपनी तबाही आप पैदा करे। मगर सफल जीवन वह ही माना गया है जिसका आख़िरत शांतमयी होवे। सो वाज्या होवे कि एक सत् स्वरूप परमेश्वर का विश्वासी और अभ्यासी होकर अपने जीवन कर्तव्य का पालन करना चाहिए। इसमें सर्व कल्याण है। अपने सुख को नित ही पर–दुःख में त्याग करना चाहिए। श्रेष्ठ से श्रेष्ठ आचरण को धारण करने की अधिक दृढ़ता होनी चाहिए। प्रभु विश्वास अधिक होना चाहिए, जिससे दुःख व सुख में संतोष प्राप्त होवे। प्रेमी जी, यह जीव तृष्णा रूपी अंधकार में प्रगट हुआ और तृष्णा रूपी अंधकार में ही

ग़ायब हो गया। ब्रगैर निर्मल सत् यत्न के यानी एक सत्-तत्त अबनाशी के सिमरण ध्यान के इस घोर- अंधकार से छुटकारा न मिल सका। इस वास्ते इस जीवन यात्रा को निर्मल बोध करके विचार करना और सत्-पुरुषों की सत् शिक्षा द्वारा अपने आपको नित ही सत् परायण बनाना ही परम निर्मल पुरुषार्थ और गुरुवचन का निद्धियासन है। ऐसे अनुराग से ही यह जीव माया के असगाह सागर से अबूर (छुटकारा) पाकर सर्वात्म स्वरूप आनंद में लीन हो जाता है। इस मानुष जन्म की निर्मल कीर्ति इस धाम की प्राप्ति है। ईश्वर सत् बुद्धि अनुराग देवें जिससे अपना जीवन सत् परायण बनाकर अपने खानदान, जाति व देश के वास्ते परम गुणकारी हो सकें। हर वक्त गुरु आशीर्वाद को अंग-संग जानें।

प्रेमी जी, समता की तालीम को अनुभव करके असली मानुष जीवन के गौरव को प्राप्त करें। अभ्यास और स्वाध्याय में भी समय लगाया करें और सत्संग प्रोग्राम भी बनाए रखें। इससे दूसरे सज्जनों का भी कल्याण हो सकता है और इस अनुभवी वाणी का उच्चारण करना हर प्रकार की पवित्रता के देने वाला है। ईश्वर सत् विश्वास देवें। गुरु-वचन में सत् अनुराग प्राप्त होवे।

श्री महाराज जी ने सवा माह आगरा में निवास करके आगरा निवासी सत्-जिज्ञासुओं को अमृत प्रशाद व शंकायें निवारण करके निहाल किया। बरेली से प्रेमी प्रार्थना कर गए थे और पत्र द्वारा भी प्रार्थना कर रहे थे इसलिए वहां का प्रोग्राम बनाकर सूचना भेज दी गई।

144. बरेली में एकांत निवास और सत् उपदेश अमृत

31 जनवरी, 1953 को रात की गाड़ी से सवार होकर आप बरेली के लिए रवाना हुए। गाड़ी सुबह सात बजे बरेली जंक्शन पहुंची। आगे हकीम भीमसैन जी व अन्य प्रेमी स्वागत के लिए स्टेशन पर मौज़ूद थे। गाड़ी जब स्टेशन पर पहुंची सबने चरणों में प्रणाम किया। दरअसल सत्पुरुष फूलों के हार पहनना पसन्द नहीं करते थे, मगर प्रेमी श्रद्धा से हार ले आते और गले में डालते।

गाड़ी से उतरकर तांगा द्वारा आपको सिटी इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट पार्क में, जहां आपके निवास का प्रबंध किया गया था, प्रेमियों ने आपको ले जाकर ठहराया। थोड़ी देर विश्राम के बाद आपने प्रेमी भीमसैन को फरमाया:- प्रेमी! तू इन्हें सैरगाह में ले आया है। फ़कीरों को तो जंगल में ठहरना पसन्द आता है।

हकीम जी ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! इससे ज़्यादा एकांत जगह भी मिल सकती है, मगर वह ज़्यादा दूर है और माताओं को वहां पहुंचने में कष्ट होगा।'' इस पर आपने वहीं ठहरना स्वीकार कर लिया।

इस जगह निवास के दौरान सारा दिन प्रेमी दर्शनों के लिए आते और अपनी शंकाएँ निवारण करते। रात का समय जब आता आप एक बजे उठकर जंगल में तशरीफ़ ले जाते और बाहर जाकर समाधिस्त रहते। सुबह सात बजे वहां से वापिस आते। सत्संग का समय भी शाम को मुकर्रर किया गया। जिज्ञासु सत्संग में शामिल होकर अमृत उपदेशों का लाभ उठाते।

145. एक प्रेमी को पत्र द्वारा सत् उपदेश

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि जीवन का सत् आदर्श प्राप्त करना ही परम उच्चता है। इस वास्ते अधिक दृढ़ विश्वास से सत्–तत्त्व अवनाशी स्वरूप का निद्धियासन धारण करते हुए शारीरिक ममता का नाश करना ही परम तप है। यानी हर वक्त एक परम–तत्त्व की दृढ़ परायणता में तमाम शारीरिक कर्मों के फल की आसक्ति का समर्पण करना और लगातार अखंड वृत्ति से नाम का चिंतन करना चाहिए। ऐसे निर्मल सहज भाव अभ्यास के बल से बुद्धि हंग–भाव का त्याग करके निज स्वरूप समता को प्राप्त होती है। यह ही सत् यत्न जीवन का महाकारज है। ईश्वर नित ही सत् अनुराग का बल देवें और गुरुवचन का दृढ़ विश्वास प्राप्त होवे।

श्री महाराज जी ने एक माह बरेली में निवास किया।

146. हल्द्वानी में एकांत निवास और अमृत वर्षा

हल्द्वानी प्रेमियों की प्रार्थना पर आप प्रेमी नंदलाल जी बिन्द्रा के साथ, जो आपको साथ ले चलने के लिए बरेली हाज़िर हो गए थे, 2 मार्च को हल्द्वानी पहुंचे। सोमवार का दिन था। आपके निवास के लिए शहर से एक मील से कुछ अधिक फ़ासले पर बरेली रोड पर एक मकान बना हुआ था, उसमें आपको ठहराया गया। अब यह जगह चुंगी से थोड़े फ़ासले पर है। प्रेमी यहां भी सारा दिन चरणों में हाज़िर होते रहे। सत्संग का प्रोग्राम शाम को रखा गया था। प्रतिदिन हल्द्वानी निवासी प्रेमी अमृत वर्षा का लाभ उठाते रहे। रात को सत्पुरुष बाहर जंगल में चले जाते। उन दिनों में इस इलाके में शेर भी थे। मगर सत्पुरुष रात को जंगल में समाधिस्त रहते।

147. पत्र द्वारा सत् उपदेश

(11 मार्च 1953, हल्द्वानी)

जब–तक इस जीवन यात्रा के सही भेद को न जाना जाए तब–तक सही कल्याण के मार्ग को समझना और उस पर चलना अधिक कठिन है। अज्ञानमयी जीवन या भोगमयी जीवन की तो सिर्फ़ ऐसी स्थिति जन्म से लेकर शरीर के विनाश होने तक बनी रहती है कि बड़े–बड़े ऐश्वर्य भोग प्राप्त करूं और नित ही जीवन बना रहे। ऐसे भोग विकारों की चेष्टा जैसी भी जिसके अंदर अधिक दृढ़ होती है, मसलन अधिक लोभ या अधिक मोह या अधिक क्रोध या अधिक अंहकार या अधिक काम प्रबल रूप में एक न एक अवगुण हर एक के अंदर मौज़ूद रहता है। अगर मन की कैद में बुद्धि अपना संसार कायम करती है, यानी अधिक लोभ मौज़ूद हो, तो धन–माल को एकत्र करने में अधिक चतुर होती है। अधिक मोह हो तो वह मानुष अधिक परिवार की वृद्धि में लवलीन रहता है। अधिक क्रोध जिसके अंदर हो तो वह नाना प्रकार की तजवीज़ें दूसरों की हानि की सोचता है। बहुत फ़रेबी और जल्लाद तबियत का होता है। अधिक अंहकार मौज़ूद हो तो वह मानुष अपनी सरदारी

कायम करने की ख़ातिर अधिक यत्न करता है। वैसे ही अधिक काम चेष्टा जिसके अन्दर बलवान होती है तो वह मानुष अधिक भ्रष्टाचारी और स्त्रियों का मुरीद होता है। ऐसे ही पशु भी इन विकारों की अग्नि में जलते रहते हैं। यह ही मादावाद या प्रकृतवाद का जीवन चक्कर है। ऐसे ही भोगमई जीवन को धारण करके जो यह कहे कि मैं दूसरों की कल्याण करूंगा, वह महज़ एक पशु ही है क्योंकि उसने कल्याण तो अपनी पहले की नहीं है और मानसिक विकारों के ज़ेर–असर होकर अपनी ख़्वाईशों को पूरा करना चाहता है। उससे दूसरों की कल्याण होनी महज़ एक ढोंग है। जैसा कि आजकल कई प्रकार के लीडर बनकर अपनी ख़्वाईशों को पूरा करने की ख़ातिर दूसरों को सब्ज़ बाग दिखाकर अनर्थ कर रहे हैं। यह ही जीवन असुरमयी है। इस किस्म के विकारमयी जीवन में कभी भी संसार में शांति नहीं हो सकती। यह तो अपने–अपने कपट को एक दूसरे पर ठूंसने का यत्न करते हुए अपने आंतरिक दोषों में अधिक जल रहे हैं। शांति कहां है, और किस तरह हो सकती है? अच्छी तरह से विचार करें। इस भयानक खेदमयी जीवन के उल्ट आस्तिकवाद और सत्वाद का मार्ग है। जिस तरफ यत्न करने से प्रथम अपनी कल्याण होती है फिर दूसरों की भी। उसी कल्याण का स्वरूप यह है कि जो बड़े हुए विकार अंतर–बाहर जल (ख़त्म) रहे हैं उनसे संतोष प्राप्त होता है और बुद्धि बलवान होकर अपने अंदर निष्काम त्याग को हासिल करती है जो सर्व कल्याण का स्वरूप है। ऐसे विकारमयी जीवन से जाग्रत हो करके आत्ममयी जीवन की दृढ़ता धारण करनी चाहिए। ज्यों–ज्यों बुद्धि देह मद का त्याग करके आत्म–सत्ता के परायण होती है त्यों–त्यों आंतरिक सब दोष नाश को प्राप्त होते हैं। तब बुद्धि निर्दोष और निर्वास हो करके अपने सत् स्वरूप में स्थिर होती है। फिर निष्काम रूप में सर्व जगत की कल्याण करने वाली होती है। यह ही देव मार्ग शान्ति के प्रकाशने वाला है। पहले अपनी कमज़ोरियों और अपनी कामनाओं से पवित्र होना चाहिए। तब दूसरों की कमजोरियाँ और कामनाएँ पूर्ण करने में वह धीर पुरुष बलवान हो सकता है। यह थोड़ा सा विचार लिखा जाता है। अच्छी तरह से समझ करके अपने आपको सही उन्नत करने का यत्न इख़्तियार करें। यानी भोगवाद और नास्तिकवाद से पवित्र हो करके सत्वाद और आत्मवाद के परायण होवें, जो सरब–कल्याण स्वरूप है। अच्छी तरह से पुस्तकों का मुतालया करें। तुम्हारे जैसे नौजवानों का जीवन बुनियादी देश व धर्म की उन्नति के वास्ते होना चाहिए, जो कि आइन्दा और हाज़िर अंधेरे में एक रोशनी का काम देवें। ईश्वर सत् बुद्धि अनुराग देवें।

श्री महाराज जी ने एक माह से कुछ ज़्यादा हल्द्वानी में निवास किया और उसके बाद देहरादून तशरीफ़ ले गए।

148. देहरादून में चंद दिन निवास

आप 6 अप्रैल, 1953 को हल्द्वानी से रेल द्वारा रवाना होकर बरेली से गाड़ी तबदील करके 7 अप्रैल को देहरादून पहुंचे जहां आपको पुरानी जगह जैनी के बाग में ही ठहराया गया। 7 अप्रैल को आप देहरादून पहुंचे। मौसम गर्मी का आ रहा था इसलिए आपने एकांत निवास का प्रोग्राम बनाया।

149. सूचना

श्री सत्गुरु देव जी महाराज मंगतराम जी आख़िर अप्रैल तक किसी एकांत जगह तपस्या के लिए चले जावेंगे और ढाई माह तक न ही किसी प्रेमी को पत्र लिखा जावेगा और न ही दर्शन हाज़िरी के वास्ते इजाज़त ही होगी। अलबत्ता कोई विचार अगर श्री महाराज जी ने फरमाया तो रिसाला ''समता दर्पण'' द्वारा प्रेमियों तक पहुंच जावेगा। इस मियाद के बाद ही अनुकूल हालात के मुताबिक श्री महाराज जी दर्शन हाज़री की इजाज़त देवेंगे। सब प्रेमियों को ऐसा पता होना चाहिए और साथ ही श्री महाराज जी ने फरमाया है कि तमाम प्रेमी सज्जन हालते ज़माना को मद्देनज़र रखते हुए ज्यादा से ज़्यादा अभ्यास में तरक्की करें ताकि मानसिक शांति प्राप्त होवे। ऐसे ही लगातार अभ्यास की दृढ़ता से कोई न कोई प्रेमी अनुभव अवस्था तक पहुंचेगा। यत्न करें ताकि इस भयानक प्रकृतवाद के ज़माने में समता की रोशनी अधिक कल्याणकारी स्वरूप बन जाए।

सत् आज्ञा श्री महाराज जी

इस जगह भी निवास के दौरान सत्संग का समय मुकर्रर कर दिया गया और देहरादून निवासी प्रेमी चरणों में हाज़िर होकर अपनी शंकाएँ भी निवारण करते रहे। आपका रात का प्रोग्राम यथावत ही चलता रहा। यानी एक बजे के करीब आप जंगल में तशरीफ़ ले जाकर समाधिस्त रहते और दिन निकलने पर वापिस तशरीफ़ लाते। देहरादून में 27 अप्रैल तक निवास किया गया। इस दौरान यह सूचना दी गई:–

150. सूचना

श्री महाराज जी 30 अप्रैल, 1953 से केलाघाट राजपुर में एकांत निवास करेंगे। उस जगह पर प्रेमियों ने टेंट लगवा दिए हैं। इर्द–गिर्द तार लगवा दी और आपको निश्चित तारीख़ पर उस जगह पहुंचा दिया गया।

151. केलाघाट में एकांत निवास

यह जगह राजपुर से पश्चिम की तरफ एक रास्ता नीचे जाता है। उससे नीचे एक नदी के किनारे स्थित है। दो बावली पास थीं और थोड़े फ़ासले पर फिर ग़ैर–आबाद मन्दिर है। इसे तुलतुलिया भी कहते हैं। जगह बहुत एकांत है। नदी के दूसरी तरफ शहर भी है। और आगे फिर पहाड़ हैं। इस जगह भी सत्पुरुष रात को जंगल में नदी की दूसरी तरफ चले जाते और समाधिस्त हो जाते। सत्संग का प्रोग्राम इतवार को रखा गया। प्रेमी देहरादून से सेवा में हाज़िर होकर लाभ उठाते। वैसे कई एक प्रेमी दर्शनों के लिए हाज़िर होते और अपनी शंकाएँ निवारण करते।

केलाघाट राजपुर में निवास के दौरान कुछ प्रेमी चरणों में दर्शनों के लिए हाज़िर हुए। उनमें से एक ने अपने तज़ुर्बात इस तरह बयान किए हैं। तहरीर करता है कि मैं महाराज जी के दर्शनों के लिए गया। मेरे साथ मेरे बुज़ुर्ग वालिद भी थे और चार-पांच आदमी और भी थे। जिनमें एक पुलिस अफ़सर भी थे। वहां जाकर बैठ गए और श्री महाराज जी से ज्ञान-गोष्ठी हुई। तो उस वक्त श्री महाराज जी ने फरमाया:- हर एक आदमी को अपना-अपना सच्चा असूल बनाना चाहिए। जिस आदमी का असूल नहीं है वह किसी काम का नहीं है।

हमारे साथ जो पुलिस अफ़सर थे उन्होंने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! आप ठीक फरमाते हैं। अगर कहीं हमने अपना कोई उसूल बनाया है तो दुनिया हमें उस उसूल पर चलने नहीं देती, क्या करें? मैं बहुत तंग आ गया हूं।'' इस पर श्री महाराज जी ने फरमाया:- ''बताइये, कैसे दुनिया उसूल बनाने नहीं देती''? पुलिस अफ़सर ने अर्ज़ की:- ''महाराज जी! मैं पुलिस अफ़्सर हूं और जब से पुलिस सर्विस में आया हूं तब से लेकर आज-तक मैंने किसी से रिश्वत नहीं खाई और न ही खाऊँगा। चूंकि मैं किसी से रिश्वत नहीं लेता इसलिए किसी को देता भी नहीं। जो जायज़ काम है करता हूं। जो नाजायज़ होता है वह नहीं करता। अपना तो यह असूल रखा हुआ है। लेकिन महाराज जी अफ़्सर लोग तंग करते हैं। वह कहते हैं लोगों से माल लो और हमें दो और जो पुलिस वाले रिश्वत लेते हैं वह अफ़्सरों को खिलाते हैं। उनकी दिन दुगनी और रात चौगुनी तरक्की होती है। हम रिश्वत नहीं लेते, दयानतदारी से काम करते हैं, इसलिए हमारी तरक्की नहीं होती। हम धक्के खाते हैं। महाराज जी भगवान से डरता हूं और किसी से नहीं डरता।''

श्री महाराज जी ने फरमाया:- आप पुलिस में होते हुए भी इतने अच्छे असूल के मालिक हैं। इस पुलिस की नौकरी में कोई आदमी रिश्वत लेने के बग़ैर कम मिलेगा। फिर फरमाया:- ''फ़कीर तुम पर बहुत खुश हैं। आपका असूल अच्छा है। आपको हर जगह कामयाबी होगी। आप अपना असूल पक्का रखें। कोई अफ़्सर ऐसे भी हैं जैसे आप हैं उनकी निग़ाह आपके ऊपर होगी, आपको मालूम नहीं चलेगा। कोई वक्त आएगा आपको खुद-व-खुद मालूम हो जाएगा। आख़िर जीत सच्चाई की होती है। भगवान तो देख रहा है। आप हिम्मत न हारना। जीत आपकी होगी। यह बात याद रखें।''

कुछ अर्सा के बाद वही अफ़्सर वहां से बदल गया और दूसरी जगह चला गया। बदलने के करीबन नौ माह बाद उस शहर में सबसे बड़ा अफ़्सर जो था वह बहुत नेक था, वह बदल कर आ गया। उसने बाहर से सब अच्छे-अच्छे अफ़्सर बुला लिए। उस बड़े अफ़्सर ने कहा:- मैं इस शहर में अच्छे-अच्छे अफ़सर देखना चाहता हूं जो लोगों का भला करें। तो उस वक्त उस अफ़सर को भी बुलाया गया जो श्री महाराज जी के चरणों में हाज़िर हुआ था। उसने जवाब दिया:- मैं नहीं आता, क्योंकि इस ज़माने में जिसका असूल है सच्चाई, उस आदमी को कोई नहीं पूछता। इस पर बड़े अफ़सर साहब ने कहा:- आप यहाँ आ जावें, आपकी बड़ी कद्र होगी। उस वक्त मुझे सत्गुरु साहेब की बात याद आ गई कि इंसान को पक्के असूल का होना चाहिए। सच्चाई की हमेशा कद्र होती है। गो, वह अफ़्सर वहां नहीं गए, मगर उनकी बड़ी कद्र हुई। इस वास्ते हर एक इंसान को अपना-अपना असूल बनाना चाहिए।

एक दिन प्रातःकाल आपने फरमायाः– ''इस जगह की यादगारी के वास्ते क्या प्रसंग लिखा जावे?''

प्रेमी ने अर्ज़ कीः– ''महाराज जी! ''योग मार्ग'' को अच्छी तरह समझाने के लिए कुछ विचार प्रगट फरमायें जिससे जिज्ञासु आसानी से समझ सकें, और सहज भाव ही प्रेमी चलकर अपनी कल्याण कर सकें।''

श्री महाराज जी ने फरमायाः– ''प्रेमी! गो, इस भेद को खुली तरह खोला नहीं जा सकता, सौदा बहुत सस्ता न करो। वाणी में कई तरीके से इसका भेद बयान हो चुका है। समझने वाले आप ही ढूंढते रहेंगे। अच्छा, कलम–दवात रख दो। तुम अपने खाने–पीने का सिलसिला करो। जो कुदरते कामला की तरफ से आज्ञा होगी वैसा हो जावेगा। आगे विचार कर लेना और इस जगह का संदेश लिख–लिख कर भेजने की सेवा करते रहना।'' ऐसे कहने के बाद आप चादर ओढ़कर लेट गए। थोड़ी देर के बाद उठे और अपने कर–कमलों से ''योग मार्ग बोध'' लिखकर रख दिया।

जब प्रेमी फ़ारिग होकर सेवा में हाज़िर हुए तो कापी आगे रख दी और फरमायाः– ''यह लो, इसको एक बार पढ़ लो, फिर सुनाना, क्या समझा है''? फिर पूछाः– ''यह नाम ठीक है?''

प्रेमीः– महाराज जी! इससे और अच्छा क्या नाम हो सकता है?

152. बनारसी दास को चेतावनी

प्रेमी ने जब पढ़ना शुरू किया तो पढ़ते–पढ़ते ऊंघने लग गया। सत्पुरुष ने एकदम आंखें खोलीं और फरमायाः– ''शरीर को दुःख न दे। थोड़ा आराम कर ले। फिर अच्छी तरह विचार कर लेना। नींद पर काबू अर्जुन ने पाया था, इसी वास्ते गुडाकेश करके कृष्ण ने उसे पुकारा था, या संतों ने इसे जीता है। भूख, प्यास और नींद तीनों बड़े दुश्मन हैं।''

जब प्रेमी नींद पूरी कर चुका और चरणों में हाज़िर हुआ तो फरमायाः– ''इस तरह तुम कब इसे पूरा करोगे? आलस्य छोड़ना पड़ेगा। पहले ज़माने में कब प्रेस होते थे। इसी तरह हाथों से विचारों को लिखा जाता था।'' फिर चेतावनी दी–

153. चेतावनी

प्रेमी! शरीरों का कोई भरोसा नहीं, आज खड़े हैं, कल बदल जायें। यह भी मालूम नहीं इनका शरीर पहले चल देता है या तेरा ही गिर जाता है। क्षणभंगुर तात्त्विक शरीर का क्या भरोसा? जो काम हो जाए, वह ही बेहतर है। सामग्री इकट्ठी काफी मिकदार (मात्रा) में हो चुकी है। तेल, घी, लकड़ियां रूपी विचार कई तरह के इकट्ठे करके धूनी तुमने लगा दी है। आहिस्ता–आहिस्ता धधकती रहेगी। खुश्बू लेने वाले, यानी सार विचार करने वाले, इस पर मरने वाले परवाने आप ही एकत्र होते रहेंगे। कई प्रेमी जो नज़दीक आ चुके हैं उनके सामने सब कुछ निकाल के रख दिया है।

चलना तुम्हारा प्रेमियों का काम है। इस ज़माने में तालीम फैलाने के साधन बहुत हैं। अब कुछ समझदार प्रेमी आने शुरू हो गए हैं। ये फ़ारिग हो गए हैं। इनके पास जो सरमाया है। हवाले कर दिया है। सारी उम्र कोई साथ नहीं निभा सकता। संजोग के बाद वियोग होते आए हैं। कौन पहले कौन पीछे? समय पर कुदरत ने आप ही लिखने वाले, छपवाने वाले भेज दिए। जो भी लिखा है उसमें ग़र्क होवो। एक दफ़ा महात्मा बुद्ध बीमार हो गए। आख़री समय नज़दीक था। अंत समय जो प्रेमी पास बैठे थे सब सोच रहे थे। आनन्द को मुख़ातिब करके कहने लगे– 'आनन्द! होश से सुनो। अब तुम आप ही अपने मार्ग पर चलने वाले बनो। किसी दूसरे का सहारा ढूंढने का यत्न मत करना। सत् ही तुम्हारा सहारा रक्षक है।''

इतना फरमाने के बाद आपने आंखें बंद कर लीं। ऐसा प्रतीत होता था कि प्रेमी को संदेश दे रहे हैं और थोड़ी देर बाद फरमाया:– ''बनारसी! इनके शरीर की हालत तुमको मालूम ही है। किसी समय सोच पड़ ही जाती है कि यह चले गए तो फिर क्या होगा? प्रेमी जुदाई हर समय पास खड़ी है। अच्छा विश्वास रखो, वियोग लाज़मी है। शरीर नित ही अंत–वंत होने वाला है। जो कुछ भी प्रभु आज्ञा से तहरीर में नियम और सिद्धांत आ गया है, इनको ही अपना रहबर, आचार्य, गुरु समझें। जब एकांत में अकेले बैठकर याद करोगे, रोना पड़ेगा। फ़कीरों का ज्ञान–विचार, उपदेश जुगा–जुग तक ज़िन्दा रहता है। जो भी प्रेमी विश्वास से अपनाते हैं, वे ही सरजीवत रहते हैं। शरीर छोड़ने से पहले अपनी कल्याण आप करो, वरना इस जन्म–मरण के चक्कर में पड़े रहोगे। मानुष शरीर प्राप्ति का लाभ आत्म–आनन्द ही है। किसी चक्कर में पड़ गए तो रास्ता लंबा हो जाएगा। ईश्वर और गुरु कृपा यह ही समझो जो कि फ़कीरों के पास बैठने का मौका मिला है। थोड़ा–थोड़ा समय निकालकर इसे लिखकर बाबू को भेज देना। कुछ लगे रहा करो। इस तरह पीछे ख़्याल नहीं जाता। पिछलों का मोह तंग करे तो अपनी आख़रियत का विचार कर लिया करो। आज से पैंतीस–चालीस साल पहले तेरा सम्बंधी कौन–कौन था? अब कौन–सा तुझे रिश्तेदारों ने उठा रखा है। ''जीवन्दिया दे सौ साक'', सब जिया–जन्त को अपना सम्बंधी जानो। सब जीवों की सेवा करो। ईश्वर को याद करो। मन, वचन, कर्म से किसी को दु:ख अपनी तरफ से न दो। यह ही बड़ा ज्ञान विचार है। अभी तो ईश्वर के पास बैठे हो। हाज़िर देखो। पिछलों को भूल जाओ, आगे की सोचो नहीं। यह बताओ तुम्हारा पिता कहां है? दादा, पड़दादा, लकड़दादा किधर चले गए? किसने किसका साथ दिया है? तेरे पिता का क्या नाम था?''

154. श्री मुख वाक् अमृत

नास्तिकवाद की अग्नि अति प्रचंड होने से तमाम संसार में अधिक अशांति के अस्बाब पैदा हो रहे हैं और आम मानुष तमोगुणी वासना के ज़ेर–असर होकर ही विकराल कर्म करके अपने आपके घातक बन रहे हैं। यानी जीवन रूप जो अंत:करण की पवित्रता है उसको नाश करके हर वक्त अपवित्र भाव को ग्रहण करके अपने आपको अधिक संकट के सागर की तरफ ले जा रहे हैं।

ऐसे भयानक समय में जबकि पूर्ण निश्चय ही छल–कपट, ईर्ष्या, द्वेष के अंधकार में दृढ़ हो रहा है, तो सत्वाद की दृढ़ता होनी अधिक दुर्लभ है। सो इस वास्ते पूर्ण सत् विश्वास से सत् नियमों, यानी सादगी, सत्य, सेवा, सत्संग और सत् सिमरण को अपनाते हुए अपने आपके सही रक्षक बनें और तमाम दोषों से पवित्र होकर निर्भय शान्ति को प्राप्त करें जो इस मानुष जन्म की सार है। हर एक प्रेमी अपने आपको बा–अमल जीवन बनाने का यत्न करें ताकि नास्तिकवाद का अभाव होकर समता आनन्द परम शांति को प्राप्त होवे। ईश्वर सत्पुरुषार्थ देवें।

155. निर्मल उपदेश

इस द्वन्द्व रूपी खेद युक्त संसार में सत् परायण होना ही परम कल्याण के देने वाला साधन है और सत् परायण होने से ही क्षमा, दया, धीरज, त्याग और प्रेम आदि महागुण प्राप्त होते हैं, जो इस जीवन यात्रा में शान्ति रूपी परम पदार्थ के देने वाले हैं। इस वास्ते गुणी पुरुषों का अधिक श्रेष्ठ कर्तव्य यह ही होना चाहिए कि मिथ्या मान, मोह, ईर्ष्या, द्वेष से अपने आपको हर वक्त सत् आधार के बल से निर्मल करते रहें। ऐसा यत्न ही निर्मल भक्ति और निर्भय पद के देने वाला है। इस वास्ते हर वक्त स्वतंत्र होकर केवल प्रभु आज्ञा में अपने आपको दृढ़ निश्चित करना और जीवन कल्याण की ख़ातिर पवित्र उद्यम को धारण करके सत् आचरण में अपने आपको दृढ़ करना ही यथार्थ जीवन है। इस धारणा से ही इस संसार की भयानक विकारी अग्नि से कुशलता को प्राप्त हो सकता है। जीवन में असली खुशी केवल मन की पवित्रता से ही जानना असली जानना है और मन की पवित्रता सत् परायणता के बल से प्राप्त हो सकती है।

अधिक से अधिक निर्मल यत्न यह ही है कि देह मद की गिरफ़्तारी से निर्मल होकर सत् परायणता में जीवन को दृढ़ किया जावे। तब ही अंतःकरण के तमाम विकारों से निर्मल होकर निर्मल कर्तव्य के पालन करने वाला हो सकता है और वह ही पुरुष अधिक इस पवित्र अनुराग के बल से निर्मल भक्ति यानी सत्नाम निद्धियासन को प्राप्त करके ज्ञान स्वरूप आत्मा में सावधान होकर परम अखंड शान्ति को प्राप्त होता है। उसका जीवन संसार में दुर्लभ है। ईश्वर सब प्रेमियों को सत् अनुराग देवें।

156. विचित्र दृश्य

दिल्ली का एक प्रेमी छुट्टियों में कश्मीर की सैर को गया हुआ था। वहां ख़्याल आया कि क्यों न सत्पुरुष के दर्शन करे? प्रोग्राम तबदील करके श्री महाराज जी के चरणों में केला घाट पहुंचा। जब प्रणाम करके बैठा, आपने मुस्कराते हुए धीरे से पूछाः– ''प्रेमी! इतने दिन कहां रहे हो? यह तम्बू तो तुम्हारे लिए ही लगाकर रखा है।''

यह प्रेम भरा स्वागत सुनकर प्रेमी के अंदर ख़्यालात का प्रवाह ठाठें मारने लगा। अपनी ग़लती को महसूस करते हुआ सोचा कि कितनी भूल हुई और ऐसा प्रतीत हुआ कि तम्बू वाकई

उसका इंतजार कर रहा था। राज़े–ज़िन्दगी तो वहीं छिपा था। भरा सागर तो वहीं ठाठें मार रहा था। शांति वहीं निवास करती हुई मालूम हुई। उस प्रेमी को अंदर से आवाज़ आई कि कितनी उससे भूल हुई। कितना नादान था वह जो मग़रिब की दिल फ़रेबियों में उलझने लगा था। शान्ति को पैसों से मोल लेना चाहा। ऐ अज्ञानी! तूने राहत को शाल–दोशालों की तह में ढूंढने का यत्न किया। ऐसे ख़्यालात अंदर उठते रहे। प्रेमी ने बाकी छुट्टियाँ वहीं व्यतीत करने का फैसला करके तम्बू में निवास किया। एक और प्रेमी भी आ गया।

कुछ दिन रहते हुए हो गए। एक दिन दोनों प्रेमी चरणों में बैठे थे कि सत्पुरुष के जिस्म से रोशनी छन–छन कर आ रही थी, जिससे सारा तम्बू जगमगा उठा। थोड़ी देर बाद वह रोशनी ग़ायब हो गई। उस वक्त प्रेमियों ने पूछाः– महाराज जी! "यह क्या दृश्य था?"

आपने फरमायाः– यह रोशनी फ़कीरों के अंदर से अक्सर निकलती रहती है, इसलिए फ़कीर अक्सर जंगलों में रहते हैं।

157. श्री मुख वाक् अमृत

इस कठिन जीवन यात्रा में अधिक सत् विश्वास के बल से ही तमाम मानसिक दोषों से पवित्रता हासिल हो सकती है। इस वास्ते सत् अनुराग और निर्मल वैराग्य की दृढ़ता से अपने आपको सत्नाम में दृढ़ करें। तब ही निज स्वरूप की अनुभव गति को प्राप्त कर सकेंगे जो परम पवित्र तत्त स्वरूप स्थिति है। ईश्वर नित निर्मल बोध की दृढ़ता बख़्शें।

158. तपोभूमि की ज़मीन की खरीद के बारे में

तपोभूमि की जमीन के मुतालिक एक पत्र में श्री अमोलक राम जी को लिखा गया। श्री महाराज जी आशीर्वाद फरमाते हैं। आपके प्रेम पत्र द्वारा दर्शन हुए। सेवा में अर्ज़ है कि इस जगह के प्रेमी भाई साहेबान तपोभूमि स्थान बनाने के वास्ते तजवीज़ कर रहे हैं। एक जगह देखी गई है जो कि सबको पसन्द आ गई है। उसको हासिल करने के वास्ते कोशिश कर रहे हैं। इधर मालिकान से मुकम्मल जवाब मिलने पर सूचित किया जावेगा। आपको दो दिन के वास्ते श्री गुरु चरणों में पधारना पड़ेगा। जगह भी देख जावें, और हालात भी विचार में आवेंगे। पता दिया जावेगा।

159. तपोभूमि स्थान की जमीन की खरीद

उसके बाद बाबू अमोलक राम को राजपुर बुलाया गया। वह सेवा में हाज़िर हुए तो उनको गुरुदेव साथ ले गए और वह जगह दिखलाई जहां तपोभूमि स्थान कायम करना था। उसका सौदा हो चुका था और आज्ञा फरमाई कि रुपया जगाधरी से देहरादून भेज देवे और उसके बाद इसे खरीद लिया गया। जगह गो राजपुर से अगले पहाड़ की तह में थी मगर नदी का किनारा था और पानी का चश्मा बीच में था और जगह बहुत सुन्दर थी।

रुपया पहुंचने पर इसे खरीद लिया गया। इस जगह गर्मी मौसम में साधना मास का नियम कायम किया गया ताकि प्रेमी समय निकालकर एकांत निवास करके साधना करें।

160. पत्र द्वारा सत् उपदेश

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि मानुष जन्म की उच्चता को समझते हुए हर वक्त सत् नियमों का पालन करना चाहिए क्योंकि इस वक्त संसार का चक्कर निहायत उपद्रवों के स्वरूप में विचर रहा है, यानी जो मार्ग सत्–शान्ति का है उसको भूल करके अधिक विकारों की अग्नि् में अपने आपको हर एक जीव भस्म कर रहा है। इस वास्ते अगर कोई अपनी कल्याण चाहता है तो उसके वास्ते लाज़मी है कि समता के सत् असूलों को अपनाने में दृढ़ प्रयत्न धारण करे। हर वक्त इस नाशवान शरीर से उच्च और पवित्र कर्तव्य प्राप्त करने का यत्न करें, जिससे अंतर में सत् शांति प्राप्त होवे। अभ्यास में अधिक प्रेम धारण करना चाहिए, क्योंकि ईश्वर चिंतन से ही बुद्धि बलवान हो करके तमाम विकारों से पवित्रता हासिल कर सकती है। अधिक से अधिक यत्न करके मानसिक दोषों से पवित्रता हासिल करें। इसमें ही परम सुख है। सत्संग के प्रोग्राम को अधिक दृढ़ करके कुछ न कुछ सत् विचारों को अमली जीवन में धारण करें। यानी सादगी आदि सत् नियमों का पालन करेंगे तब ही इस संसार की भयानक दशा में अपने आप ही सत् शांति को प्राप्त कर सकेंगे। ईश्वर सुमति देवें और गुरुवचन विश्वास दृढ़ होवे।

161. देहरादून में एकांत निवास व अमृत वर्षा

श्री महाराज जी ने 31 अगस्त, 1953 तक तुलतुलिया घाट में निवास किया और एक सितम्बर को देहरादून निवासी प्रेमी आपको देहरादून ले आए और मोहनी रोड पर आख़िर में एक मकान था, वहां ठहराया। इससे आगे बरसाती नदी थी और आगे जंगल था। यह जगह भी एकांत थी और देहरादून निवासी प्रेमी सत्संग का लाभ उठाने लगे और अमृत वर्षा के अलावा अपनी शंकाएँ भी निवारण करने लगे।

2 सितम्बर को जो प्रश्न पूछे गए वह नीचे दिए जा रहे हैं।

प्रश्नः– हिन्दू धर्म में गायत्री मंत्र की बहुत महिमा है। कुछ लोग इसके जप करने और कुछ ध्यान करने को बतलाते हैं। इसलिए महाराज जी आप इसका सही निर्णय कृपा करके समझावें?

उत्तरः– प्रेमी जी, सुनो! हिन्दू धर्म में तीन प्रकार के वचन हैं। (1) रोचक, (2) भयानक और (3) यथार्थ। लोगों की रुचि बढ़ाने के लिए, ताकि उनकी रग़बत धर्म में हो, इस किस्म के शब्द और मन्त्र जिनमें प्रलोभन फल वग़ैरा का दिया गया हो, वह रोचक शब्द हैं। इस मकसद को हासिल करने के लिए इस किस्म के मंत्र या शब्द जिनमें डर दिखलाया गया हो, सज़ा–जज़ा, नरक–स्वर्ग आदि मसले वाले सब भयानक शब्द हैं।

जो शब्द सौ फीसदी ख़ालिस सच्चाई, सत् स्वरूप का निर्णय बयान करते हैं, वे यथार्थ हैं। अब जहां तक गायत्री मंत्र का ताल्लुक है, वह एक प्रार्थना का मंत्र है– ऐ ईश्वर त्रिलोकी के स्वामी हमको शुद्ध बुद्धि प्रदान कर। इस मंत्र का जप और ध्यान एवं फल महज़ रोचक हैं। कुछ न करने से इतना ही करना श्रेष्ठ है। क्योंकि गायत्री जपते हुए कभी मंत्र के मायने पर ग़ौर करेगा तो ख़्वाम-ख़्वाह बुद्धि में पवित्रता हासिल हो सकती है। इस सिलसिले में जब ग़ौर करेगा तो आहिस्ता-आहिस्ता पवित्र जीवन हासिल करने के लिए सत् प्रयत्न रूपी सीढ़ी पर कदम रखेगा। मन के दोषों और विकारों पर विजय प्राप्त करने की कोशिश करेगा। अन्त में उसे सच्चे सत्गुरु और कामिल मुर्शिद का मिलाप होकर असली रूहानियत के मार्ग पर पता लगेगा। उस वक्त वह सच्चा ध्यान करने वाला होगा।

आम लोगों ने ईश्वर और धर्म के अर्थों में बड़ी ग़लती की है। आम जनता ईश्वर को न जानती है और न जानने की ज़रूरत महसूस करती है। उन्हें सिर्फ़ दुनिया, धन, दौलत, औलाद और माया के भौतिक सुखों की तलब है, और उन्हीं की ख़ातिर वह सुने सुनाये ईश्वर से दुआएं मांगते हैं। उसके मन्दिर सजाते हैं और उसकी पूजा ठाठ-बाठ से करते हैं। इसके अलावा उन्हें ईश्वर से कोई मतलब नहीं। ऐसे लोगों को चाहिए कि वह रूस, अमरीका की तरफ नज़र करें और देखें कि वहां के लोग धन और दुनियावी सुखों की तलाश में प्रकृति के कानून के मुताबिक खोज करते हैं और बे-अंदाज़ धन और सुख आदि प्राप्त करते हैं। यही कानून है और यही नीति है। इसके अलावा जो लोग हिन्दुस्तानियों की तरह मेहनत नहीं करते, सिर्फ़ ईश्वर से प्रार्थना-याचना करके धन आदि सुख लेना चाहते हैं, वे भूल कर रहे हैं। उन्हें एकदम एक तरफ होकर ईश्वर का पल्ला छोड़कर कानूने-कुदरत के मुताबिक अमल करना चाहिए ताकि संसारी तौर पर सुखी हो सकें।

कानूने-कुदरत में एक ज़रूरी कानून यह भी है कि जो चीज़ आपको बहुत प्यारी है उसे दूसरों की सेवा में अर्पण करें, उसका त्याग करें, उसको तक्सीम करें। उसके बदले में वही चीज़ कई गुणा बढ़कर आपके पास लौटकर वापिस आवेगी। जिन सुखों को आप चाहते हैं वह दूसरों को बांटने का यत्न करें ताकि वह सुख भारी मात्रा में आपके पास आवें। जो-जो दुःख और चीज़ें आप नहीं चाहते। वह दूसरों को भी न दें ताकि आप उनसे बचे रहें। अगर आप अपने असूलों पर चलेंगे तो आप बग़ैर ईश्वर और धर्म का स्वांग रचे सुखी जीवन व्यतीत कर सकेंगे। स्वयं ही आपके जीवन में निष्कामता प्राप्त होगी, जिससे बुद्धि पवित्र होगी। आहार, विचार और व्यौहार की शुद्धि होगी। तब जाकर कहीं अंतरमुखी जीवन की यात्रा का आरम्भ होगा।

अब ईश्वर के मसले पर बहुत कुछ ग़लतफ़हमी फैल चुकी है। हिन्दू धर्म-शास्त्रों में इस मसले पर बहुत तर्कपूर्ण बहस हो गई है। कपिल देव के मुताबिक यह तमाम निज़ाम एक पुरुष और प्रकृति का खेल है। पुरुष अकर्ता, नेहसंग साक्षी है और प्रकृति तमाम रूपों को इख़्तियार करके जगत रूप हो रही है। जैमिनी ने ईश्वर, जीव, प्रकृति तीनों को अनादि और अनन्त पदार्थ माना है। ईश्वर सर्वज्ञ, सर्व शक्तिमान, नियंता है, कर्मफल दाता है। गौतम और कणाद ने अणु-परमाणुओं से

दुनिया का होना बतलाया है। और ईश्वर की ज़रूरत को महसूस नहीं किया। व्यास ने अपने ब्रह्म सूत्रों में सर्व से सर्व ब्रह्म की घोषणा करके अद्वैतवाद, यानी बाकी सब भ्रम है, सिद्ध किया है। इतना कुछ होते हुए यह निर्णय करना मुश्किल हो जाता है कि ईश्वर किस वस्तु का नाम है?

इस चीज़ की संतों ने खोज करके बतलाया कि जीवन की एक दशा या स्थिति का नाम ईश्वर है। मुर्शिद कामिल जिज्ञासु को अधिकारी जानकर अंदर का रास्ता बतलाता है जिस पर चलकर इंसान उस मुकाम पर पहुंचता है जहां दुःख-सुख, हानि-लाभ, जन्म-मरण, भूख-प्यास, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों से ऊपर उठ जाता है। जहां बुद्धि टिक ही नहीं जाती, बल्कि लय को प्राप्त हो जाती है। जहां छाती पर हाथ रखकर कह सकता है कि वहां वह खुशी है जहां आनंद की बाढ़ आ जाती है। द्वैत का कानून-ला-कानून हो जाता है। तमाम हदें जहां टूट जाती हैं। जहां शरीर, शरीर नहीं रहता। सब कुछ ही सत् सरूप हो जाता है। इस मुकाम को या उस हालत को संतों ने ईश्वर, अल्लाह, खुदा, वाहेगुरु, सत्-पद, शिव-पद, निर्वाण, सत्-बोध इत्यादि अनेक नामों से वर्णित किया है। इस मार्ग पर चलने के लिए जीवन की पवित्रता, बुद्धि की निश्चलता, साधनों में तत्परता, सत्गुरु में श्रद्धा और यकीन की ज़रूरत है। सत्गुरु कैसा होना चाहिए? इसके मुतालिक यूं समझो, जिस तरह धोबी तमाम लोगों के मैले-कुचैले कपड़े खूब सजाकर मालिकों को वापिस करता है, उसी तरह सच्चा मुर्शिद जिज्ञासु-जनों को उनके मल आदि दोष-विकार साफ करके उनके अंतःकरण को शीतल करके अपने जैसा तत्त्ववेत्ता बनाकर ही जनता में वापिस करता है। जो ऐसा कर सके वह ही सच्चा गुरु है। वही अज्ञान के अंधकार को नाश करने वाला है और सोई हुई रूहों को जगाने वाला है। लिहाज़ा यह बात ज़हन-नशीन कर लो कि कर्म का चक्र अमिट है। अगर सुख चाहते हो तो नेक काम करो। अगर ईश्वर की तलाश है तो निष्कामता द्वारा बुद्धि पवित्र करके सच्चे मुर्शिद से अंतरमुखी साधन जानो और अमल करो। यह ही जीवन का सार है।

162. 3 सितम्बर 1953 का वार्तालाप

आज ज़्यादा सियासत पर बातचीत हुई। श्री महाराज जी ने फरमाया कि सियासी लोगों को निचले दर्जे के लोगों की गिरी हुई हालत का अहसास होना चाहिए और उन्हें अपनी ज़ात पर कम से कम खर्च करना चाहिए। उन्हें पश्चिम की नकल नहीं करनी चाहिए। ज़िन्दगी के जिन ऊंचे मयारों को तीन-चार सौ साल की आज़ादी के बाद उन्होंने हासिल किया है, हम उसे पांच या दस सालों में हासिल नहीं कर सकते। इस जगह ही जनता की सबसे बड़ी ज़रूरत सही तालीम की है। विनोबा भावे जैसे सन्यासी संतों को भी इस तालीम की तरफ ज़्यादा ध्यान देना चाहिए।

मग़रबी तमद्दुन मेराज़ (पश्चिमी सभ्यता का विकास) की सबसे ऊंची चोटी तक पहुंच चुका है। अगले पचास साल तक यह अपने मादियत (प्रकृति) से पैदा कर्दा (किए हुए) अस्बाब (कारण) से ग़र्क हो जावेगा।

शंकराचार्य और भंगी का मुकाबला किया गया। दोनों धोबी हैं। एक मन का मैल धोता है, दूसरा तन की मैल साफ करने वाला है।

163. सत् उपदेश–अमृत (4 सितम्बर, 1953)

इस संसार में जो जीव शरीर धारण करके आता है, वह अनेक प्रकार की इच्छायें लेकर आता है और सुख के सामान जमा करने के लिए दौड़–धूप शुरू कर देता है। वह उस वक्त यह नहीं जानता कि तमाम सुख, दुःख का रूप हैं, क्योंकि यह सुख आदि–अन्त वाले हैं। हर सुख का अंत दुःख है। वह देखता है कि उससे पहले इस बाग़ो–दुनिया में बहुत लोग आ चुके हैं। और उनको इस दुनिया में अपनी–अपनी उम्र के अनुसार का काफी तज़ुर्बा है और वे सब अपने सुखों को एकत्र करने के लिए बेताब हैं। वे यह विचार नहीं करते कि अपनी जद्दों–जहद (कोशिश) शुरू करने से पहले उन तज़ुर्बाकार लोगों की राय दरयाफ़्त (पूछना) करें और उनके तज़ुर्बा से फ़ायदा उठायें। उन्हें दरयाफ़्त करना चाहिए कि इतनी उम्र तक जो उन्होंने सुखों की तलाश की है, क्या इनसे उनकी तसल्ली हो गई है? अगर नहीं हुई या उन्होंने तमाम सुखों को नामुकम्मल और नातमाम महसूस किया तो इस जीव को शुरू से ही इस शरीर के सुखों से वैराग्य हो जाना चाहिए। ज़रा ग़हरी नज़र से देखें तो मालूम होगा कि सब लोग आख़िर उस दुनिया से हाथ मलते हुए बिना लक्ष्य प्राप्त किए ही चल दिए। उनकी मुरादें इन दुनियावी चीज़ों से नहीं पूर्ण हुईं। आख़िर तमाम जीव क्या अमीर क्या ग़रीब, क्या आलम क्या जाहिल, क्या राजा क्या भिखारी सब ही पछताते हुए गए। सच्ची खुशी किसी को हासिल नहीं हुई। ज्यों ही उम्र पचास से ऊपर होती है, इन्द्रियां जवाब देने लगती हैं। उस वक्त अहसास होता है कि इच्छाएं तो ख़त्म नहीं हुई यह शरीर के ख़ात्मे पर जा पहुंचा है। इस देखा–देखी में सब लोग एक ही रास्ते पर चले जाते हैं। यह ही अज्ञान है, यह ही माया है।

सत्संग में आने का यह फ़ायदा है कि जीव सत्–असत् का विचार करे और सत् विचार द्वारा जीवन के सिद्धांत का निर्णय करे। एक किस्सा है कि एक ज़मींदार बाहर से घर आया, तो उसके सिर पर पगड़ी बंधी हुई न थी, यानी वह सिर से नंगा था। पुराने ज़माने में मौत के मौके पर लोग सिर नंगा करते थे। उसकी बहू ने उसे नंगा सिर देखकर रोना शुरू कर दिया कि शायद उनका कोई मर गया है जो नंगे सिर आ रहे हैं। ज़मींदार ने समझा कि बहू का कोई मर गया है जो नंगे सिर आ रही है। इसलिए वह भी रोने लगा। पड़ोसी रिश्तेदार भी आकर अफ़सोस करने लगे। रोने–धोने के बाद जब लोग दरयाफ़्त कर अफ़सोस करने लगे कि कौन मर गया है? तो मालूम हुआ कि मरा कोई भी नहीं।

बस, यही हाल इस दुनिया का है। जो आता है दूसरों की देखा–देखी अपना प्रोग्राम बनाता है। पहले लोगों से दरयाफ़्त करने की तकलीफ़ नहीं करता और न ही उनके तज़ुर्बे से फ़ायदा उठाता है। विवेक और विचार के बग़ैर अंधाधुंध अपने जीवन की इच्छाओं को फैलाता है और उनकी पूर्ति के लिए दौड़ता फिरता है। कर्म चक्र, काल चक्कर को बिल्कुल समझने की कोशिश नहीं करता।

जितने कर्म करता है, खुदग़र्जी में आकर अनित्य पदार्थों को इक्ट्ठा करने का यत्न करता है और उनमें सुखों की तलाश करता है, मगर हर सुख के बाद दुःख की ठोकर खाता है। मिसाल के तौर पर एक ग़रीब आदमी सड़क पर चलता हुआ किसी धनी आदमी को मोटर में सवार देखता है, तो फ़ौरन वह ख़्याल कर लेता है कि यह धनी कितना सुखी है। अब उस ग़रीब आदमी को बग़ैर दरयाफ़्त किए यह फैसला करने का क्या हक है कि वह धनी को सुखी करार देवे? यही उसकी मूर्खता है। इसी अज्ञान के वश वह ख़्वाहिश करता है कि दिन-रात मेहनत करके मोटर हासिल कर ले। जब उसकी इच्छा पूर्ण हो जाती है तब वह ऐसा अनुभव करता है कि उसको मुकम्मल सुख नहीं मिला क्योंकि और ख़्वाहिश उठ खड़ी होती है। अगर उसने पहले दरयाफ़्त किया होता तो इतनी मुसीबत में गिरफ़्तार ही क्यों होता? इसलिए इस संसार में जो मरा, वह देखा-देखी। कुछ लोग ऐसे पैदा होते हैं, जो शुरू से ही इस संसार के हर पहलू पर विचार करते हैं। उन्हें ही सत्गुरु, पीर, अवतार के नामों से पुकारा जाता है। वह जब प्रकृति की हर शै (वस्तु) को नश्वर और तबदील होने वाला देखते हैं और यकीन करते हैं तो इस तरह विचार करते हैं कि यह शरीर, जो हमारा असली संसार है, क्षणभंगुर है। निमख-निमख में छीज रहा है। इसका अंग तबदील हो रहा है। इसके ऊपर बचपन, जवानी और बुढ़ापा, सेहत, बीमारी, भूख, प्यास वग़ैरा कई हालतें आती हैं। लिहाज़ा यह अनित्य वस्तु है। यह ख़ुद नामुकम्मल है। इसके मुतालिक तमाम साधन और सुख भी नामुकम्मल हैं। इसलिए यह हकीकी तसल्ली नहीं दे सकते। इसलिए जिस चीज़ करके यह शरीर ज़िन्दा है, चैतन्य है, उसकी तलाश करनी चाहिए। इस विचार से वह अंतरमुख हो गए। इन नौ द्वार वाली पुरी के अंदर झांका तो अपनी ज़ात, जो ऐन-नूर (प्रकाश ही प्रकाश) है, उसको वैसा ही अनुभव किया। जहां ज्ञान भी मुकम्मल हुआ और बुद्धि लीन हो गई। ऐसी ठंडक मिली जिससे तमाम ख़्वाहिशें का.फ़ूर हो गईं। उन्होंने फिर छाती ठोक कर कहा कि हम खुश हैं। इन्हीं लोगों ने कहा–

सब जग जलता देखिया, अपनी-अपनी आग।

यानी सब जीवों के हृदय में एक ज्वाला सुलग रही है, जिससे पांच रौ निकल रही हैं। वह काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार की रौएं (किरणें) हैं। हर एक जीव में पांच विकारों में से एक विकार प्रबल रूप से प्रगट होता है। अब जिस जीव की लोभ रूपी अग्नि प्रचंड होती है, उसे दिन-रात कभी चैन नहीं। धन, पदार्थों के लोभ में उनके जमा करने में और जमा किए हुए कि हिफ़ाजत में दिन-रात मशगूल रहता है। इनका सही इस्तेमाल नहीं करता और चिंता में रहता है कि यह कहीं कम न हो जाएँ या गुम न हो जावें। कोई दान वग़ैरा मांगे तो कौड़ी तक देना नहीं जानता। बाल-बच्चों के मोह में अपने तमाम फ़र्ज़ भूल जाता है। उनके लिए मकान, दुकान, सामान वग़ैरा परम धर्म जानता है। लेकिन ज्यों ही जरा अवस्था प्राप्त होती है, वहीं घर वाले पग-पग पर अपमान करते हैं। घर से बाहर तक निकाल देते हैं। अगर ख़ुदा करके मौत हो जावे तो फ़ौरन शमशान में ले जाकर जला देते हैं। तमाम कमाई यहीं रह जाती है। सारी उम्र मोह की आग में जलता रहता है और आख़िरकार अपने चित्त की अग्नि में जल जाता है। यही हाल बाकी विकारों

का भी है। इसलिए संतों ने फरमाया है- दुनिया सफ़र है। जिन्होंने यह मुकाम जाना वही पांच विकारों की अग्नि में गिरफ़्तार रहकर सारी उम्र तकलीफ़ बर्दाश्त करते रहते हैं और अंत में खाली हाथ अफ़सुरदा (ग़म के साथ) दिल यहां से कूच करते हैं। जिन्होंने इसे सफ़र जाना वही सच्चे ज्ञानी संत हैं। वह यहां की किसी चीज़ से दिल नहीं लगाते। बल्कि हमेशा अपने मुकाम पर निग़ाह रखते हैं। अपनी ज़िन्दगी में खुद ही उस मुकाम पर जा पहुंचते हैं और दूसरों को वहां पहुंचने की तलकीन (शिक्षा) करते हैं।

चाहिए तो यह था कि जीव इस भेद को समझते और विचार द्वारा निर्णय करते कि सत् क्या है और असत् क्या है? सादा ज़िन्दगी, सादा खुराक, सादा पोशाक, सत् विचार और सत् प्रयत्न धारण करते। फ़ैशन परस्ती, नुमायशी ज़िन्दगी से परहेज़ किया जाता। निष्काम रूप से दूसरों की सेवा में अपना जीवन अर्पण किया जाता। अपनी अज़ीज़ से अज़ीज़ वस्तु पर-सेवा में लगाई जाती। इस तरह बुद्धि को शुद्ध करते हुए पवित्र जीवन को अपनाते और अपने आपको ईश्वर परायण करते ताकि दुनिया का सफ़र ख़त्म होता और असली मुकाम या हकीकी खुशी हासिल होती। ईश्वर सबको सुमति देवें।

164. सत् उपदेश-अमृत, (6 सितम्बर, 1953)

हर एक जीव इस शरीर रूपी संसार को धारण करके शरीर के सुखों को जमा करने में लगा रहता है और उन सुखों में ही तसल्ली चाह रहा है। उसकी विचारधारा उन्हीं सुखों की तरफ जाती है। ज़माने के हालात अगर अनुकूल हों तो बहुत लंबी दौड़ लगाता है। पदार्थ पर पदार्थ जमा करता जाता है। हर किस्म के सुख की सामग्री जमा करता है। लेकिन अंदर चाहना बनी रहती है। मगर शरीर का ख़ात्मा हो जाता है और इसके दिल की बेकरारी का ख़ात्मा नहीं होता। यह ही इस संसार का रूप है। जो इस खेल को इस तरह नहीं जानते हैं वे अज्ञानी, मूर्ख हैं। वह ही इस संसार में नेक व बद की ठोकरें खाते हैं। गुणी, ज्ञानी लोगों ने इस चक्कर को समझा और कहा:-

बहु सुख सम्पत करी प्रापत, मान तेज अत पाए।
बहु ज़र माल प्रापत किया, पर मन न धीरज आए॥
कोटक यत्न करें दिन राती, कोटक करे तदबीर।
इन मन की बिपता मिटे न मीता, आठ पहर रहे दिलगीर॥

बहुत धन, सम्पत्ति प्राप्त करके भी मन को धीरज नहीं आता और बहुत यत्न, तदबीरें करने पर भी इस मन की बेकरारी दूर नहीं होती। इसको शरीर के साथ ऐसा स्नेह हो गया कि नित ज़िन्दा रहने की आशा करता है और नित भोगों की तरफ दौड़ता है। परमेश्वर की तरफ ज़रा भी रुचि नहीं। यह ही अनर्थ है। सारा समय बेहूदा कार्यवाहियों में खो देता है।

हाड़ मांस का पिंजरा, जर-जर होयो राख।
जीवन कागा उड़ गया, कौड़ी न चाली साथ॥

संसार की यह मुहिम बड़ी दुशवार है। सभी अपना–अपना वक्त बिता कर चले गए। इस लम्बे सफ़र में किसी को क्याम (विश्राम) नहीं मिला। कबीर साहब का फरमान है:–

दीन गंवायो दुनी संग, दुनी न चाली साथ।
पैर कुल्हाड़ा मारया, गाफ़िल अपने हाथ॥

इस संसार का सही चरित्र समझो। यह ही जीवन का मुद्दा और मक्सद है। सिकन्दर जब हिन्दुस्तान में आया उसके मुर्शिद अरस्तू ने कहा– 'वापसी पर एक ब्राह्मण और गीता की पुस्तक लेते आना।' जब उसकी फ़ौजें दरियाए जेहलम के किनारे पहुंची तो उन्होंने आगे जाने से इंकार कर दिया। उस वक्त वापसी का इरादा करने से पहले उसने ब्राह्मणों को बुलवाया और कहा– ''मैं तीन सवाल करूंगा और आठ दिन की मोहलत दूंगा। इसके बाद आप मुझे जवाब दें।''

उन्होंने कहा– ''यहां मोहलत की ज़रूरत नहीं। आप सवाल करते जाइये और जवाब लेते जाइए।'' वह हैरान हो गया। उसने कई सवाल किए और फ़ौरन उनके माकूल (ठीक) जवाब हासिल कर लिए। तब उसे यकीन हो गया कि उसके गुरु अरस्तू ने ठीक ही कहा था।

जब सिकन्दर ने उनसे कहा कि वह एक ब्राह्मण को साथ ले जाना चाहता है, तो उन्होंने साफ इंकार कर दिया और दूर एक झोंपड़े की तरफ इशारा करके कहा कि वहां चले जाओ। जहां एक सन्यासी साधु रहता है, वह शायद आपके साथ जा सकें। सिकन्दर ने अपना ख़ास वज़ीर उस सन्यासी के झोंपड़े की तरफ रवाना किया। संत उस वक्त धूप सेंकने के लिए बाहर ज़मीन पर बैठा था। वज़ीर हाज़िर हुआ और बड़े अहंकार से बोला– 'आपको सुल्तान सिकन्दर बुला रहे हैं।'

उन्होंने दरयाफ़्त किया– 'कौन सुल्तान सिकन्दर?' वज़ीर ने पूछा– 'आपने सुल्तान सिकन्दर के मुतालिक कुछ नहीं सुना।' इस पर उन्होंने जवाब दिया– 'हां, कहते हैं यूनान का एक कुत्ता दर–दर की हांडियां चाटता हुआ यहां आ पहुंचा है और अभी तक उसकी हिर्स (तृष्णा) पूरी नहीं हुई।'

यह सुनकर वज़ीर आग बबूला हो गया और वापस जाकर सिकन्दर को वैसा ही जा कर कहा। सिकन्दर को बहुत गुस्सा आया और तलवार खींच कर उन्हें कत्ल करने की धमकी दी।

तलवार को देखकर संत हँस पड़े। यह देखकर सिकन्दर बहुत हैरान हुआ। संत ने दरयाफ़्त किया– 'ऐ सिकन्दर! जानता है कि सुल्तान की क्या तारीफ़ है? सुल्तान तो उसको कहते हैं जिसकी सारी ज़रूरतें पूरी हो चुकी हों और कोई ख़्वाहिश बाकी न रही हो। बोलो, क्या तुम ऐसे सुल्तान हो?' सुल्तान ने सिर हिलाया। इस पर संत ने कहा:– तुम ज़रूरतों के ग़ुलाम हो, सुल्तान नहीं बल्कि कंगाल हो। असली सुल्तान तो मैं हूं जिसकी तमाम ख़्वाहिशें मिट गई हैं और तमाम प्रकृति जिस की नौकरी में हाज़िर है। ज़रा आगे से हट जाओ ताकि सूरज अपनी गर्मी हमको दे सके।

सिकन्दर की तलवार हाथ से गिर पड़ी। एक तरफ होकर सोच में पड़ गया। अपनी पिछली ज़िन्दगी के हालात को याद करके अफ़सोस करने लगा। थोड़ा निश्चिंत होकर हाथ जोड़कर पूछा– ''जहांपनाह, आप यह बतलायें कि तलवार देखकर आप हँसे क्यों थे?' संत ने जवाब दिया– ''मैं

इसलिए हँसा था कि गुस्सा तो मेरा नौकर है और सिकन्दर एक दम गुस्से का नौकर हो गया। गोया सिकन्दर मेरा चाकर हो गया। चाकर होकर भी रौब दिखा रहा है।'

सिकन्दर वापस चला गया। काबुल जाकर जब सिकन्दर मरने लगा तो उस संत का उपदेश याद आया। हिदायत की– कि जब सिकन्दर का जनाज़ा निकले और इसे ले जाया जाए तो दोनों हाथ कफन के बाहर निकाल दिए जावें ताकि सबको मालूम हो जाए कि सिकन्दर जैसा इंसान, जिसने तमाम आलम को मुती (आधीन) किया, वह भी आख़िर इस दुनिया से खाली हाथ ही चला गया।

इस कहानी से यह सबक मिलता है कि इंसानी ज़िन्दगी बहुत मुख्तिसर (छोटी) है। इस थोड़े अर्से में ख़्वाहिशात का सिलसिला हमेशा बढ़ता जाता है। किसी की वासना इस जीवन में पूरी नहीं होती। शरीर ख़त्म हो जाता है, वासना ख़त्म नहीं होती। लिहाज़ा विचारवान पुरुषों ने कहा है कि जब–तक जीवन है, जीव दो बातें ज़रूर करे, हृदय में नाम सिमरण और शरीर द्वारा दूसरों की सेवा। अपने–पराये दुःख–सुख को एक नज़र से देखे। दूसरों को सुख देवे, किसी को ज़रा भी तकलीफ़ न दे। वग़ैर विचारे कोई काम न करे। अगर ऐसी भावना पैदा हो जाए तो बस ईश्वर का प्यारा हो गया। यह ही भारत का असली चरित्र था। पहले ज़माने के लोग इस देश में इन ही असूलों पर कारबंद थे जिससे यह देश बाकी दुनिया का रूहानी गुरु था। आज–कल देश की दुर्दशा का कोई ठिकाना नहीं। कौड़ी–कौड़ी के लिए झूठ बोला जाता है। दूसरों को दुःख देकर उन्हें दिलासा दिया जाता है। अंदर से दरअसल हर जीव अपनी ख़्वाहिशात के ग़ुलाम होकर उनकी पूर्ति के साधन कर रहे होते हैं और ऊपर से दूसरे लोगों से हमदर्दी का स्वांग भरते हैं। यह ही दुःख देकर दिलासा देना है, क्योंकि कुदरती कानून है कि कोई आदमी दूसरों को ग़रीब किए बग़ैर अमीर नहीं हो सकता और कोई मानुष दूसरे मानुषों के सुखों पर डाका डाले बग़ैर ख़ुद सुखी नहीं हो सकता। इसलिए दुनिया में अमीर और सुखी लोग, जो दूसरों को दुःखी देखकर दिलासा देते हैं, वे सब राक्षस हैं। उनके मुकाबले में वे लोग देवता हैं जिनको अपने सुखों की चाह नहीं और दूसरों को आराम देने का यत्न करते हैं। उनके सुखों की हिफ़ाजत करते हैं। एक दफ़ा का जिक्र है, महात्मा बुद्ध जंगल में जा रहे थे। एक शिकारी को देखा, चिल्ला चढ़ाए एक हिरन को निशाना बना रहा है। इसके पहले कि तीर कमान से निकल जाता बुद्ध शिकारी के ऐन सामने आ गये और आजज़ी से कहा:– 'ओ भले पुरुष, क्या कर रहे हो?' उसने कहा:– ''मैं शिकारी हूं। इस हिरन का शिकार करना चाहता हूं। मारकर इसको खाऊँगा।'

महात्मा बुद्ध ने छाती तान ली और कहा– 'अगर शिकार की हवस पूरी करनी हो तो इस छाती में तीर मारिए। यह शरीर हाज़िर है। मगर इस नन्हीं सी जान का ख़्याल छोड़ दीजिए।'

शिकारी ने पूछा– ''आप कौन हैं?'' महात्मा जी ने फरमाया:– 'मैं बुद्ध हूं। मुझे इस शरीर से जो काम करना था, वह कर चुका हूं। लेकिन यह नाचीज़ हिरन अभी सच्ची ख़ुशी की तलाश में है। इसे तो यह मौका मिला है, उसे आप ज़ाया न करें। मेरे लिए यह शरीर रहे या न रहे, कोई फ़र्क नहीं क्योंकि मैं इससे बे–न्याज़ (निर्लिप्त) हो चुका हूं।'

जो इंसान हिरन के लिए अपनी जान कुर्बान करने से नहीं हिचकिचाता, जो आनन्द स्वरूप है और दूसरों में वह ही आनन्द तक्सीम कर रहा है, वह ज़रूर देवता है, अवतार है। यह ही वजह है कि आज भी तमाम दुनिया उसको शांति का सूरज मानकर इज़्ज़त करती है। उनका नाम लेते ही सर झुक जाता है।

इस तरह जिनको अपने सुखों की चाह नहीं, दूसरों के सुखों की हिफ़ाजत कर रहे हैं, वे ही सच्चे इंसान है। यह ही उनका असली धर्म है। ऐसी निष्कामता से ईश्वर में विश्वास दृढ़ होता है।

दूसरों की भलाई करने से खुशी प्राप्त होती है। सबको अपनी आत्मा जानकर सेवा करने में सुख है। खुदग़र्जी में जीव का नाश और पतन है। इन बातों को सही तरह जहन–नशीन (ग्रहण) करके जिज्ञासु बन और शरीर के होते हुए आख़री इम्तिहान की तैयारी कर। तमाम कदम पर इम्तिहान होता है, गाफ़िल न हो। सबसे बड़ा इम्तिहान मौत का समय है। नेक करनी, दूसरों की सेवा, शरीर के दुःख–सुख से ऊपर उठना, शरीर की ममता और अंहकार का त्याग, मौत से पहले मरना, यह साधन इम्तिहान को पास करने के वास्ते ज़रूरी हैं। यह खूब समझो कि शरीर के सुख नामुकम्मल हैं। शरीर स्वयं आदि–अन्त वाली वस्तु है। इससे सम्बंध रखने वाली चीज़ें भी इसी तरह महदूद (सीमित) हैं। इनसे हासिल होने वाले सुख भी महदूद और कैद के देने वाले हैं। हर एक सुख का अंत दुःख है।

इसलिए योग वशिष्ट में कहा है, यहां जितने प्रतीती वाले सुख हैं, वे सब दुःख रूप हैं और तमाम संपदा आपदा रूप है।

प्रेमी, ख़बरदार, लंबी दौड़ न लगा। मन को रोक, विवेकपूर्ण वैराग्य को धारण कर। धर्म का पहला लक्ष्य सादगी है। ख़ुराक, पोशाक, विचार में सादगी इख़्तियार करो। अपनी ज़रूरतों को कम करो। नुमायशी जीवन का त्याग करो। मानुष चोला ख़ास मक्सद के लिए मिला है, भोग विलास के लिए नहीं। सच्ची रूहानी ज़िन्दगी हासिल करना ही परम धर्म है। नेक करनी करके पवित्र जीवन बनाओ और अपनी सच्ची ख़ुशी के लक्ष्य को हासिल करके दूसरों के लिए मिसाल कायम करो। भगवान कृष्ण का कहना है– मुझे कुछ करना नहीं, तो भी मैं लोगों के कल्याण के लिए कर्म करता हूं। अपनी ज़रूरतों को कम करो, यानी अपनी वासनाओं को कम करो। इच्छाएँ आज–तक किसी की पूरी नहीं हुई हैं। उनका त्याग ही उचित है। मौत का कोई पता नहीं । न जाने किस वक्त आ जाए। वक्त बहुत तंग (कम) है। दूसरों का भला कर लो। नेक कमाई का तोशा जमा कर लो। फ़िजूल आदतों पर काबू पाओ। जायज़ ज़रूरतों पर संतोष करो। करनी वाले बुज़ुर्गों ने कहा है:–

सोना मनों विसार के, जागन की कर चौंप।
एह दम हीरा लाल है, तूं गिन–गिन प्रभु को सौंप॥
जाग फरीदा सुतया, झाडू दे मसीत।
तूं सुत्ता रब्ब जागदा, तेरी डाढे नाल परीत॥

धर्म और सत् व्यौहार के मार्ग पर वही पुरुष चल सकता है जो मर्यादा का आहार, व्यौहार करता

है। वह ही आराम में रहता है। दूसरों को आराम नहीं। महापुरुषों का कहना है कि दुनिया का काम मर्यादा में रह कर करो। तुम काम पर सवार हो, न कि काम तुम पर सवार हो जावे। जो समय ज़िन्दगी का मिले उसे नेक लोगों की संगत में सर्फ़ (खर्च) करो। महापुरुषों और बुज़ुर्गों के नक्शे- कदम पर चलो। उनके वचनों का मुतालया (अध्ययन) करो। नशीली चीज़ों के इस्तेमाल से परहेज़ करो। खाने–पीने में मर्यादा रखो। बाकी तमाम इल्लतों (बुराईयों) को छोड़ो। ज़िन्दगी का नाश करने वाले न बनो बल्कि अपने जीवन के सही रक्षक बनो। तब कहीं दूसरों की ज़िन्दगी के मुहाफ़िज (रक्षक) बन सकोगे। देश और समाज का भला चाहने वाले पहले अपने आपका भला करते हैं। अपनी बुद्धि को पवित्र करके जीवन के राज़ को जानो। वरना अपना आप सुधरे बग़ैर जो देश और समाज का ढोंग रचता है वह धोखा करता है और जानबूझ कर करता है। यह बुरा है। अपनी शुद्ध बुद्धि ही इस बात की साक्षी होगी। अगर अंदर से गवाही मिले कि यह काम नेक है, तभी नेक समझा जाता है। इसलिए सत् निश्चय धारण करो। बद–आदात को छोड़ो। इस देश में आजकल रहनी वाले आमिल लोगों की कमी है। फ़िलास्फ़रों और प्रचारकों की कमी नहीं, मगर देश की क्या हालत हो रही है? इस वास्ते आप आमिल बनो। अपने शरीर पर पूरा–पूरा कब्ज़ा करो। नेक काम करो। इसी में शरीर की खूबसूरती है। सिनेमा, थियेटर, राग–रंग से दूर रहो। यह गिरावट की तरफ ले जाने वाले हैं। सत् विचार और निद्धियास करो। एक वक्त बदी का कमाया हुआ पैसा ही दूसरे समय दुःख का कारण हो जाता है। अपनी करनी ही दुःख रूप होती है और अपनी करनी ही सुख रूप होती है। मुल्क में जो इस वक्त रस्साकशी हो रही है, एक लीडर कुछ कहता है, दूसरा कुछ, यह सब खुदग़र्जी के सौदे हैं। कोई लीडर आकर ग़रीबों से हमदर्दी के भाषण देता है, आंखों में आंसू लाता है ग़रीब उसको अपना हितकारी जानते हैं। लेकिन वही उनका हमदर्द उनसे आला ख़ुराक और वापसी फ़र्स्ट क्लास का किराया लेता है। दरअसल वह लीडर अपनी अंदरूनी ग़रीबी को रोता है। वह खुदग़र्ज है। वह जानता है कि जब–तक जनता को इस तरह के बनावटी आँसू बहाकर अपने साथ नहीं रखेगा, उसकी लीडरी ख़तरे में पड़ जाएगी। सियासत और धर्म के अंदर जो आज इस तरह का ढोंग और पाखंड दाख़िल हो गया है, वह ही नाश कर रहा है। इसलिए आज एक संघर्ष पैदा हो रहा है। इससे छूटने का एक ही उपाय है कि लोग खुदग़र्जी को छोड़कर दूसरों को सुख देने का यत्न करें। जिस तरह सूरज दूसरों को प्रकाश और गर्मी देता है और इसका कोई मुआवज़ा नहीं चाहता, इसी तरह इन्हें भी बिना स्वार्थ दूसरों के साथ परस्पर प्रेम और एकता, मेल–जोल रखना चाहिए। सबके सुख का साधन करना चाहिए। खाली बातों से कुछ नहीं होता। दूसरों का खून–पीने के बजाए अमली तौर पर अपना खून–पसीना पर–सेवा में एक कर दो। जिनके अंदर अपनी तृष्णा और वासना बाकी हैं वह दूसरों की कल्याण नहीं कर सकते। देश की कल्याण चाहने वाले पहले अपना ज़ाती जीवन उत्थान करें। अपना अमली जीवन बनाएं। लेने का नहीं बल्कि देने का अमल अपनायें। अपने जीवन में सर्व जीवों के प्रति प्यार पैदा करें और प्यार की भावना से पर- सेवा में जुट जायें, तो जहां जीवों का कल्याण होगा और समाज का उत्थान होगा, वहां देश भी बहुत बलवान होगा। ईश्वर शक्ति देवें ताकि बुद्धि निर्मल करके उसे देश और समाज के अर्पण कर सकें।

165. सम्मेलन सूचना और प्रोग्राम

प्रभु कृपा और श्री महाराज जी की आज्ञा से अब के साल सत्संग सम्मेलन स्थान जगाधरी में 2 कार्तिक सम्वत 2010 मुताबिक 18 अक्तूबर, 1953 को मुकर्रर हुआ है। सब प्रेमियों से प्रार्थना की जाती है कि ऐसे शुभ अवसर और कल्याणकारी उत्सव में शामिल होने की कृपा करें और सब प्रेमी पहली कार्तिक सुबह तक पहुंच जावें क्योंकि प्रेमियों का आपस में सत्संग विचार और श्री महाराज जी का ख़ास उपदेश पहली कार्तिक शनिवार को होगा और इतवार को आम आस-पास के लोगों की हाज़िरी होगी। सब प्रेमी अपने साथ बिस्तर और एक बर्तन हाथ धोने वाला लायें ताकि सब इंतज़ाम में सहूलियत हो सके। माताओं की हाज़िरी की ख़ास पाबन्दी, सिर्फ सम्मेलन से दो-तीन दिन पहले हाज़िर हो सकती हैं। श्री महाराज जी 22 सितम्बर तक तमाम संगत पर कृपा दृष्टि करते हुए जगाधरी आश्रम पधारेंगे।

166. एक अंग्रेज़ पादरी से वार्तालाप

एक दिन एक अंग्रेज़ पादरी दर्शनों के लिए आया। कुछ देर बैठा, कोई बातचीत नहीं की। थोड़ी देर बाद सत्पुरुष ने पूछा:- ''साहब! क्या सबूत है कि ईसा ख़ुदा का बेटा था?''

पादरी ने जवाब दिया:- बाईबल में लिखा हुआ है कि वह ख़ुदा का बेटा था। इस पर आपने फरमाया:- बाईबल तो बाद-अजां तहरीर (बाद में लिखी) की गई थी। हो सकता है कि लिखने वालों ने ईसा की महानता दर्शाने के लिए इसको तहरीर कर दिया हो। यह तो कोई सबूत नहीं।

इस पर पादरी साहेब खामोश हो गए।

फिर आपने फरमाया:- ''लो, हम तुम्हें बतलाते हैं कि ईसा खुदा का बेटा था- इसका क्या सबूत है? यह बताइये, ईसा ने कहा है कि नहीं कि ख़ुदा नूर है।''

पादरी साहब ने जवाब दिया:- ''हां, कहा है।'' फिर यह पूछा कि ईसा ने यह भी कहा है ना कि वह नूर मेरे अंदर है। साहेब ने माना कि हां ऐसा कहा है।

इस पर आपने फरमाया:- यह सबूत है कि वह खुदा का बेटा है।

167. सत् उपदेश अमृत (12 सितम्बर, 1953)

संसार की मौज़ूदा दशा बहुत बिगड़ी हुई है। आजकल के हालात का मुतालया (अध्ययन) करने से मालूम होता है कि लोग जितने ज़्यादा पढ़े-लिखे हैं उनको उतना ही ज़्यादा मुग़ालता (भ्रम) हो रहा है। हालात का ठीक-ठीक जायज़ा न लेकर और वाक्यात को सही तौर पर न समझने करके आज का इंसान रूहानी ज़िन्दगी से दूर है। उसके सामने एक बड़ी समस्या बनकर खड़ी है। वह सोचता है और जानने की कोशिश करता है कि इस ज़िन्दगी का उद्देश्य क्या है और उसे क्या करना

है? जब वह अपने इर्द-गिर्द नज़र दौड़ाता है तो उसे अपने सवाल के जवाब में मुख़्तलिफ़ (भिन्न) आवाज़ें सुनाई देती हैं। कोई प्रकृतिवाद या भौतिकवाद को श्रेष्ठ बताते हैं, रूहानी ज़िन्दगी को निकम्मापन बताते हैं। उन लोगों का कहना है कि समाजवाद की उन्नति करो। 'पलक में क्रांति फैलाओ और मौज करो', इन लोगों का मकूला (सूत्र) है।

ऐसे लोग ही भ्रष्ट बुद्धि हैं। यह जो समझने वाली चीज़ बुद्धि है यह शरीर में ग्रस्त है। शरीर ही उसका संसार है। शरीर के अन्दर पांच विकार दिन-रात उसे तपा रहे हैं। इन ही पांच विकारों विखे लत-पत हुआ जीव शरीर के भोगों को पूर्ण करने का यत्न-प्रयत्न करता है। लेकिन यह शरीर नामुकम्मल है। इसके तमाम अंग नामुकम्मल हैं। इससे मिलने वाले भोग नामुकम्मल हैं। इसलिए इन नामुकम्मल भोगों से होने वाले सुख भी क्षणभंगुर हैं। इसलिए जीव इन भोगों की प्राप्ति से कभी तृप्त नहीं होता और इसकी वासना नित जवान बनी रहती है। मानुष अपनी वासना को पूर्ण करने के लिए नित अशांत और बेकरार है। आजकल के लोगों का यही संसार है। यह ही दुनिया है। यह ही जीवन का ढांचा है। इसके अंदर चार प्रकार की स्टेज कायम हो रही है। यानी जीव के अंदर जो-जो कामना खड़ी है वह चार दर्ज़ो तक फैलती है।

1. शारीरिक सुखों की चाह।
2. शरीर के सम्बंधी या परिवार के सुखों की चाह।
3. शरीर के परिवार और उनके हम ख़्याल लोगों के सुख की चाह।
4. देश की बेहतरी की चाह।

इसके बाद वे लोग हैं जिनके अंदर थोड़ी मात्रा में त्याग की भावना जाग्रत हुई है। जब-तक इंसान अपने निजि आराम को त्याग नहीं देता, दूसरों को आराम नहीं दे सकता। जो शख़्स शारीरिक सुखों का त्याग न करके परिवार को सुख देना चाहता है वह भूल करता है। वह ऐसा कभी नहीं कर सकता। वह अपने साथ और अपने परिवार के साथ धोखा करता है। जब परिवार नहीं होता, तो खूब मौज उड़ाता है। लेकिन जब परिवार हो जाता है, उसकी मैं और ममता का दायरा उसकी शरीर की सीमा से थोड़ा बड़ा हो जाता है। जिसके अंदर कई एक दूसरे शरीर शामिल हो जाते हैं। इन तमाम शरीरों के दुःख-सुख वह अपने दुःख-सुख मानता है। उस वक्त वह अपने एक सुख की परवाह न करके परिवार के शरीरों को सुख देने का यत्न करता है। ख़ुद भूखा रहकर वह अपने बाल-बच्चों को खिलाता है। सर्दी की कड़ी अंधेरी रातों में जब कोई नन्हा बीमार हो जाता है तो आधी रात को मीलों चल कर डाक्टर को बुला लाता है, दवाई लाता है। सारी-सारी रात जागता है। शरीर के सुख के मुतालिक परवाह नहीं करता। लेकिन इसके बावज़ूद उनके अंदर शरीर का ज़रा सा अभिमान बाकी रहता है, अंदर की कोई कामना छुपी रहती है। वह उस वक्त तक परिवार की सेवा करते हैं जब-तक उसके मान को हानि नहीं पहुंचती। ज्यों ही उनकी मान-मर्यादा भंग हुई, कामना ने डायन का रूप धारण किया और घर में बला का युद्ध होने लगा।

इससे आगे वासना की तीसरी स्टेज पर वे लोग नाटक करते हैं जो समाज सेवा के मैदान में उतर आते हैं। जब-तक इंसान शारीरिक सुखों की चाह और परिवार के सुखों की चाह से ऊपर नहीं

उठ जाता वह समाज की ठीक सेवा नहीं कर पाता। जो लोग अपने अंदर शारीरिक अभिमान रखते हुए वासनाओं को दिल में जगह दिए हुए हैं और साथ ही समाज सेवा का काम कर रहे हैं वे सच्चे समाज सेवक नहीं हो सकते क्योंकि उनकी ख़ुदी और ग़र्ज किसी वक्त उनको एकदम नीचे गिरा देगी। वह समाज को ही नुक्सान पहुँचावेगे। आजकल बावज़ूद इतनी ज़्यादा समाज सुधार संस्थाएं होते हुए समाज का उत्थान नहीं हो रहा, तो इसका यही कारण है कि सच्चे समाज सेवकों की कमी है जिनमें न खुदी हो, न ग़र्ज। समाज सेवा का ढोंग रचकर जीव वहां भी नंबरदारी और लीडरी चाहता है, मान चाहता है, लोभ भी रखता है। जैसे ही उसकी वासनाओं की पूर्ति नहीं होती, वहीं टक्कर व रगड़ हो जाती है। जिसमें से अशांति और दुःख के धुंए उठते हैं। ऐसे सेवकों की इस अंदरूनी बीमारी से सारा समाज बीमार हो जाता है और जीव दुर्गति को प्राप्त होते हैं।

इस चाह की चौथी और रंगीन कोठी में वे लोग भी डेरा डाले हुए हैं जो देश का भला चाहते हैं। जैसे पहले बताया गया है, शरीर के सुखों को त्याग किए बग़ैर समाज का भला नहीं हो सकता और समाज के सुखों को त्याग किए वग़ैर मुल्क का भला नहीं हो सकता। इसलिए ऐसे असूल बनायें कि शरीर के ग़ुलाम अपनी ज़रूरतों पर कब्ज़ा करें। परिवार के ग़ुलाम परिवार के सुखों से ऊपर उठें, तभी समाज की बेहतरी हो सकती है। और समाज सेवक, भद्र पुरुष समाज के सुखों का त्याग करके मुल्क की बेहतरी सोचें। लेकिन आमतौर पर देखा गया है कि चाहे कुछ भी हो, कई स्वांग ही क्यों न बनाने पड़ें, उनका अंहकार मौज़ूद रहे और नंबरदारी भी न जाए। निजि सुखों में ही अकड़ खड़ी पाई जावेगी। परिवार में अपनी नंबरदारी, समाज में चौधरपन और देश वाले मसले में भी अपनी वासना फैलाई हुई पाई जावेगी, यानी ऐसा व्यक्ति लीडर बनना चाहता है और अपना सुख लोगों के दिलों में बिठाना चाहता है। दुनिया के तमाम लोग इन चारों में से एक न एक पर खड़े हैं। इसलिए शान्ति और तसल्ली का दर्शन कैसे हो सकता है? संसार की इस घोर दशा को देखकर महापुरुषों ने विचार किया। उन्होंने बीमारी की खोज की और बताया कि इस बीमारी का नाम अंहकार, मद, ममता, देह अभिमान इत्यादि हैं। जब–तक शरीर में अहं बुद्धि है, शरीर को सत् जानता है, अपने आपको कुछ मानता है, इसकी ख़ुदी कायम है। उसकी ख़्वाहिशात (वासनाएँ) भी इसके साथ बावस्ता (जीवित) हैं और यह ख़ुदी ही उसे कुछ नहीं करने देती। वे लोग कामना के हाथ इस कद्र बिक चुके हैं कि हर जगह सौदेबाज़ी करता है। हर काम में फल पहले निश्चित कर लेता है। सत्ता की अपनी हर सेवा का मुआवज़ा चाहता है और जब फल मन अनुकूल नहीं मिलता, क्रोध की अग्नि उसे जलाती है। वह तो अपनी नंबरदारी की ख़ातिर दौड़ लगाता रहता है। ऐसा देश–सेवक एक दिन बड़े सुख को प्राप्त करता है और दूसरे लम्ह पाताल में जा गिरता है। इसका कारण उसका मान, मद और ईर्ष्या वग़ैरा विकार हैं। आजकल के हिन्दुओं को लान, तान व गालियां भी सुननी पड़ती हैं। इनसे कहना पड़ेगा कि अगर सेवा करनी है तो सच्ची सेवा करो, ढोंग छोड़ो। पहले कहते थे कि जो कुछ करते हैं जनता के लिए करते हैं। जनता यकीन करती थी। जब लीडरी मिल गई तो ख़ुदी जो अंदर छुपी हुई थी वह उसे ऊंचा उठाकर फैली। फिर वह उन लोगों की, जिनकी वोटों पर लीडर बना था, परवाह नहीं करता। नतीजा यह होता है कि जनता बाग़ी हो जाती है।

इस दुनिया में कोई किसी का दुश्मन नहीं। अपना स्वभाव ही दुश्मन है जो दूसरों को भी दुश्मन बनाता है। राजा लोगों की क़ब्रों पर आजकल लोग जूते मारते हैं। क्योंकि वह कामना के वश होकर राज करते रहे और अपना फ़र्ज़ पूरा नहीं करते थे। महापुरुषों का फैसला है कि मादियत या प्रकृतिवाद को लिए हुए कोई भी सच्ची सेवा नहीं कर सकता। याद रखो कि कपट की सेवा का अंज़ाम सर्वनाश हुआ करता है। अमरीका कोई दान नहीं कर रहा। वह अपनी विपदा के साथी बना रहा है। इसमें उसकी ग़र्ज छिपी है। जहां सेवा की तह में शरीर का मान और यश, शरीर की इच्छा और वासना रहती है वह सेवा नहीं माया का छलावा है। चार सौ बीसी है, धोखा है, फ़रेब है। इस मोह के ज़ेर–असर वह अपना–पराये का निर्णय करता है और राग–द्वेष की अग्नि में जलता रहता है। काम महान शत्रु है जिसके सामने जीव आजिज़ है।

जनता एक आइना है। राजा लोगों की राजनीति का आइना है। इसलिए जब इनको गाली दी जाती है, उन्हें अपने अंदर नुक्स देखना चाहिए और अपना सुधार करना चाहिए। जब–तक असली रूप में कोई अपना सुधार नहीं कर लेता तब–तक सच्ची सेवा नामुमकिन है। आजकल के लोगों की ग़लत आदत है और गन्दा स्वभाव है, जो अपना आचरण शुद्ध किए बग़ैर पर सेवा का कार्य करने लगते हैं। इसने पहले भी बहुत बिगाड़ पैदा किया। व्यक्ति के सुधार ही से समाज और देश का सुधार मुमकिन है। पवित्रता में इनकी बेहतरी है। सदाचार यानी आला इख़्लाक व निष्कामता से ही देश की समस्या हल हो सकती है। आजकल वे लोग जो पांचों ऐब वाले हैं, नीयत के चोर, इख़्लाक या आचरण के डाकू हैं, वह सेवा क्या कर सकते हैं और इनसे देश का क्या भला होगा? वह अपना भला नहीं कर सकते, वह दूसरों का भला क्या कर सकते हैं? जिन का अपना जीवन ऊँचा नहीं उनसे दूसरों का कल्याण नहीं हो सकता।

आज व्यक्ति के जीवन को उठाने की ज़रूरत है। जितना व्यक्तिगत जीवन ऊँचा होगा, जितना समाज बलवान होगा, उतना ही देश उठेगा। इससे साबित होता है कि सारे देश या संसार का सुधार व्यक्ति के सुधार पर निर्भर है और व्यक्तिगत जीवन की उच्चता, आहार, व्यौहार, विचार और आचार की शुद्धता पर निर्भर है। प्रकृति का यह अटल नियम है कि जितनी ज़िन्दगी शुद्ध और सादा होगी, उतनी ज़रूरतें कम होंगी। जितना–जितना हम अपनी ज़रूरतों को कम करके अपने सुखों को दूसरों के वास्ते त्याग करते हैं, उतना ही हम जीवन में ऊँचा उठते हैं। और दूसरे लोग तो ख़ुद–ब–ख़ुद सहयोग और मान देते हैं। और ऐसे लोग ही जनता के कुदरती लीडर होते हैं। लेकिन ज्यों ही ख़ुदी और ग़र्ज सिर उठाती है लीडर अपने मयार (लक्ष्य) से गिर जाता है। कुदरत की तरफ से सज़ा मिलती है। सारी सृष्टि खिलाफ़ हो जाती है। रोज़ाना देखने में आता है कि जो कल लोगों के लीडर थे आज जेल की दीवारों में नज़रबंद हैं।

आजकल यह भी कहा जाता है कि लीडरों के जीवन को न देखो, बल्कि उनके सामाजिक जीवन को देखो। यह ही अन्धेर है। उलटी रीत है। यह नाश करने वाली है और करेगी। याद रखो, जब–तक व्यक्तिगत जीवन शुद्ध और सदाचारी नहीं होगा, समाज का भला नहीं होगा। समाज को

अगर तुम अपना खून नहीं दे सकते, अपने आपको कुर्बान नहीं कर सकते, समाज ज़रूर गिरेगा और तुम्हारी हड्डियां, जिन्हें तुम बचाकर रख रहे हो उन्हें ज़रूर चकना-चूर कर देगा।

अब महापुरुषों की हालत को समझो। कानून जो अपने आप पर लागू नहीं करते वे दूसरों पर भी लागू नहीं करते। जिस चीज़ को अपने जीवन पर ढालते हैं उसका उपदेश अपनी ज़बान पर लाते हैं। जब ख़ुद ग़लती से ऊपर उठ जाते हैं तो दूसरों को भी उससे बचने को कहते हैं। संत-जन क्यों पूजे गए? उनकी मज़ार तक की भी पूजा क्यों होती है? इसलिए कि कानून को सबसे पहले उन्होंने अपने ऊपर बरता। राजा हरीशचन्द्र और रामचंद्र जी की मिसालें लो। उन्होंने सत और मर्यादा को अपने जीवन में ढाला और दूसरों के सामने अपना असली जीवन पेश किया। कोई लैक्चरों द्वारा उपदेश या प्रचार नहीं किया। फिर भी ऐसे महापुरुषों की ज़िन्दगियां आज-तक जाति का आदर्श बनी हुई हैं। इस संसार विखे अगर कोई अपनी उन्नति करना चाहता है तो अपना उद्धार करे। शरीर के विकारों-काम, क्रोध, लोभ, मोह वग़ैरा का त्याग करे। अगर अपना उद्धार हो गया तो दुनिया का उद्धार स्वयं हो जावेगा। तेरा शरीर ही तेरी दुनिया है। अगर तेरा मन मैला है, विकारों से नापाक है तो तेरा गन्दा संकल्प सारी दुनिया को गंदा कर देगा।

रेडियो की मिसाल लो- किस तरह आवाज़ एक जगह से चलकर चंद लम्हों में सारे कुर्राह-हवाई के इर्द-गिर्द घूम जाती है और जहां कहीं रेडियो लगे हैं, सुनाई देती है। आज भौतिक दृष्टि से भी सारा संसार एक हो रहा है। किसी एक मुल्क की ग़लती का खम्याज़ा सारी दुनिया को भुगतना पड़ता है। इसी तरह रूहानी दुनिया में लोगों के मैले मन से निकले हुए गंदे संकल्प तमाम दुनिया के वातावरण को ख़राब करते हैं। तुम्हारे खोटे संकल्प दूसरों के खोटे संकल्पों के साथ मैल पैदा करके तुम्हारी गिरावट और नाश का कारण होंगे।

जो-जो परहेज़ महापुरुषों ने बतलाये हैं, आजकल बिल्कुल उनके उलट हो रहा है। स्त्री का परदा दूर हो गया जिसका नतीजा यह हो रहा है कि स्त्री जाति की हया और शर्म जाती रही। जिस तरह ज़मीन के लिए ज़मींदार को बाड़ की ज़रूरत है। जिस खेत की बाड़ मजूबत है और जमींदार चौकस है, उसकी फसल अच्छी है, इसी तरह स्त्री पृथ्वी रूप है। जब-तक यह परदे के अंदर रहती है, यह बलवान होती है। इसकी संतान भी बलवान होती है।

महापुरुषों का कहना है कि स्त्री में ज़ब्त (सहनशक्ति) कम है और कुदरतन चंचल वाक्या हुई है। अगर इस पर खौफ़ रखा जाए तो इसकी ज़्यादा वृद्धि होती है। पुरुष का शरीर अकेला रह सकता है, लेकिन स्त्री अकेली नहीं रह सकती। इसका शरीर ही ऐसा है। इसका यह मतलब नहीं कि स्त्री का मान न किया जाए। महापुरुषों ने बताया है कि देवियों की इज़्ज़त ही जाति की उन्नति का कारण है। पद्मनी की मिसाल देखो। पठान बादशाह उस का मुंह देखना चाहता था। उसने सती होना मंजूर कर लिया। राजपूती आन की ख़ातिर सारी फ़ौज को लड़ाया और खुद भी बहादुराना मौत को स्वीकार किया। बलिहार हैं ऐसी देवियों के।

आज दुराचारी और भ्रष्टाचारी जीवन से अमन की आशा की जाती है और अमन को कायम रखने के लिए एटम बम्ब तैयार किए जा रहे हैं। यू.एन.ओ में तमाम दुनिया के नुमायेंदे अमन को बरकरार रखने के लिए जमा होते हैं। अमन और शान्ति के वास्ते नए-नए रास्ते दरयाफ़्त करते हैं। लेकिन वे लोग ज़रा अपने गिरेबान में मुंह डालकर देखें, क्या उनको इस ओर शांति हासिल हो गई है? अगर वे खुद शान्त हो चुके हैं तो दुनिया को शान्ति दे सकेंगे, वरना नहीं।

इसलिए जीव को चाहिए कि इस दुनिया में आकर ऐसा काम न करे जिससे उसके मानसिक दोषों में वृद्धि हो। तेरा पाप तुझे नाश कर देगा। इसलिए शरीर अथवा मन को सदाचारी जीवन में लगा। सत् यानी ईश्वर की सत्ता में निश्चय रख। उसकी तलाश कर, उसकी सेवा कर, उससे प्यार कर। यह शरीर एक महान कर्तव्य के लिए मिला है। भोग भोगने के वास्ते नहीं मिला। जीवन को कर्तव्यमयी बनाओ। अगर आप अपना फ़र्ज़ पूरी तरह से निभा देंगे तो बाकी सब अपने आप ठीक हो जावेगा।

यह एक मोटी थ्योरी है कि अपना स्वभाव ही सुख रूप है। जीव की सबसे बड़ी चाह सुख की प्राप्ति है। इस वास्ते इसका सबसे पहला कर्तव्य है कि सबको सुख दिया जावे। इंसानी शरीर दूसरों को सुख देने के वास्ते है। इसी में उसकी शोभा है। अपने आपको सुख देने की चेष्टा तो सब भूत प्राणी कर रहे हैं। लेकिन बाकी जीवों से मानुष की क्या उच्चता है? वह यह कि जब जीव श्रेष्ठ कर्तव्य करने लग जावेगा, दूसरों का भला करना उसका स्वभाव बन जाएगा, तब इसके अंदर सच्ची कुर्बानी व सेवा का जज़्बा पैदा होगा और इन्सानियत के मायने सही तौर पर समझने वाला होगा।

गीता के अंदर फ़र्ज़ और गर्ज़ की तालीम का निर्णय किया गया है। श्री कृष्ण का अर्जुन को सारा उपदेश यह ही है कि गर्ज़ को छोड़कर फ़र्ज़ को अपनाओ। अध्यात्मवाद में फ़र्ज़ प्रधान है। प्रकृतवादी लोग अपना हर काम गर्ज़ को मद्देनज़र रखकर करते हैं। इनको क्या लाभ होगा? दूसरों का नुक्सान भले ही होता रहे, इससे सरोकार नहीं। लेकिन अध्यात्मवाद में फ़र्ज़ पहले है। जो लोग सत् मार्ग के गामी हैं और अध्यात्म विद्या के अनुयायी हैं, वे सिर्फ़ अपना फ़र्ज़ देखते हैं, फ़र्ज़ ही अदा करते हैं। कर्ता-भाव को छोड़ कर शुभ और अशुभ कर्म ईश्वर पर छोड़ देते हैं। ऐसा करने से उनके अंदर गर्ज़ लेश-मात्र भी नहीं रह जाती।

मानुष जीवन की यह दो हालतें हैं। आम जीवन अपनी-अपनी गर्ज़ से बंधे हुए हैं। इसके बर-अक्स जो लागर्ज़ होकर महज़ अपना फ़र्ज़ अदा करते हैं वे देवता हैं। फ़र्ज़ की ख़ातिर उन्होंने राज-काज, स्त्री-पुत्र, घर-बार और अपना शरीर तक कुर्बान कर दिया। मिसाल के तौर पर बंदा बहादुर, गुरु गोबिंद सिंह, राजा हरीशचंद्र के इतिहास पढ़ो। आजकल की तरह नहीं, जैसा कि धर्म के ठेकेदारों ने मकोला बना रखा है ''राम नाम जपना, पराया माल अपना।'' ब्राह्मण्ड में जितना गंदा अनसर (वातावरण) इस धरती में पैदा होता है और कहीं नहीं, ना मालूम क्यों? अगर शारीरिक बल है तो शरीर करके दूसरों की कल्याण करो। जब-तक जीव ऐसा करने वाला नहीं होगा इसे सच्चे सुख की प्राप्ति नहीं होगी। न ही पढ़ने, सुनने से कुछ बनता है। अमली जीवन से सच्चा सुख मिलता

है। अपनी ज़रूरतों को काबू करो। इसके बग़ैर किसी की भलाई नहीं हो सकती। हर एक जीव अपनी–अपनी वासनाओं की गर्मी में तप रहा है। जीवन को सादा बनाओ। जरूरतें बिल्कुल कम करो ताकि तुम्हारे अंदर शान्ति आवे। फिर तुम इसे दूसरों में बांटो।

सत्पुरुष ने 15 सितम्बर, 1953 तक देहरादून में निवास किया।

168. जगाधरी के लिए प्रस्थान

चौहड़पुर से प्रेमी मनोहर लाल जी वग़ैरा चरणों में प्रार्थना कर रहे थे कि श्री महाराज जी कुछ समय इन्हें भी देकर कृतार्थ करें।

सत्पुरुष ने उनकी सेवा को स्वीकार करते हुए इस दफ़ा जगाधरी पहुंचने का प्रोग्राम बरास्ता चौहड़पुर बनाया। 16 सितम्बर की सुबह को देहरादून से बस द्वारा आप चौहड़पुर के लिए रवाना हुए और दोपहर से पहले वहां पहुंच गए। प्रेमी चौहड़पुर निवासी इंतज़ार कर रहे थे। जब बस चौहड़पुर पहुंची, आपको बस से उतार कर अपनी दुकान पर आसन बिछाकर बिठाया। उनका गृह भी साथ ही था। फिर आपको मकान के अंदर ले गए और वहां खुली जगह में आपको ठहराया गया। आपने 20 सितम्बर तक इस जगह निवास किया और सत्संग अमृत वर्षा से प्रेमियों को निहाल किया।

21 सितम्बर को आप सुबह बस में सवार होकर सहारनपुर के लिए रवाना हुए। रास्ते में एक पुल टूटा हुआ था, जो बन रहा था। उस जगह इस तरफ की बस, सवारियां उतार देती थी और दूसरी तरफ सहारनपुर से आने वाली बस दूसरी तरफ उतार देती थी। और सवारियों का तबादला होता था।

सहारनपुर से आने वाली बस देर से आई। इस दौरान सत्पुरुष एक तरफ जाकर आनन्दित अवस्था में सरशार हो गए। काफ़ी देर के बाद बस आई। उसमें सवार होकर सहारनपुर पहुंचे और रात उसी जगह प्रेमी कश्मीर चंद के गृह पर निवास किया और उस जगह भी दर्शनों के लिए आने वालों की शंकाएँ निवारण कीं।

169. जगाधरी में निवास, सम्मेलन और अमृत वर्षा

आप प्रोग्राम के अनुसार 22 सितम्बर को रेल द्वारा जगाधरी पधारे। आगे स्टेशन पर जगाधरी निवासी प्रेमी व बाबू अमोलक राम जी आए हुए थे और तांगों के द्वारा आश्रम में पधारे।

इस जगह निवास के दौरान आपने जो–जो हिदायत, सूचना संगत को रहबरी के लिए प्रगट फरमाई वह आगे दर्ज की जा रही हैं।

170. सूचना

अब के साल सम्मेलन के पश्चात् श्री महाराज जी के विचरने और सत्संग के प्रोग्राम के मुतालिक श्री महाराज जी की हिदायत–

1. आम्दा (आने वाले) साल जिस-जिस जगह विचरने का मौका मिलेगा उस जगह सत्संग हफ़्ते में एक बार ही हो सकेगा। अगर किसी जगह ख़ास प्रेमी श्रद्धालुओं की मजबूरी देखी गई तो हफ़्ता में दो दफ़ा ही सत्संग मुकर्रर हो सकेगा। बाकी तमाम समय श्री महाराज जी तपस्या में ही गुजारेंगे।

2. प्रेमियों को भी ख़ास मौके पर रोज़ाना दर्शन का मौका मिल सकेगा।

3. अगर कोई प्रेमी तबादलाए विचार या कुछ शंकाओं की पूर्ति करना चाहेगा तो वह ख़ास समय की आज्ञा लेकर अपनी तसल्ली करवा सकेगा।

4. गुज़रे समय के मुताबिक तो हर वक्त तकरीबन संगत की आमदो-रफ़्त (आना-जाना) और सत्संग का विचार होता रहा है। इस प्रोग्राम को आइन्दा के वास्ते तबदील कर दिया जावेगा। क्योंकि अब इतना समय संगत को नहीं दे सकते हैं।

5. मुकर्रर सत्संग के समय उस जगह के प्रेमी पूरी-पूरी कोशिश करके श्रद्धालुओं को सत्संग में हाज़िर होने की प्रेरणा करें ताकि जो थोड़ा समय सत्संग का मुकर्रर किया गया है उससे आम सज्जन लाभ उठा सकें।

6. चूंकि जनता उद्धार की ख़ातिर आध्यात्मिक विचारों का काफी से ज़्यादा संग्रह हो चुका है और काफी लोग इन सत् विचारों से लाभ उठा रहे हैं, अब सिर्फ ऐसे श्रेष्ठ भिक्षुओं का जीवन देश के सामने आना चाहिए जो कि पूर्ण रूप से सत्ग्रही भावना रखने वाले और सत् में अपने आपको बलिदान करने वाले हों। जबकि इस समय में अध्यात्मवाद एक नुमायशी और बनावटी शक्ल इख़्तियार कर चुका है और भ्रष्टाचार और भोगवाद का अति संघर्ष फैल रहा है और तमाम के तमाम मानुष इस भयानक प्रकृतिवाद के चक्कर में मजबूर हो रहे हैं, उन सबका सुधार केवल सत्ग्रही और अधिक सत्-आचारी पुरुषों के आदर्श जीवन से ही हो सकता है। वैसे बनावटी और नुमायशी धर्म से कुछ कल्याण नहीं हो सकेगी। बल्कि नास्तिकवाद दिन-ब-दिन फैलाव की सूरत इख़्तियार करता जावेगा। इस वास्ते ऐसे श्रेष्ठ गुण आचारी, सत्यवादी और त्यागी सज्जनों के सत् और त्याग का इस समय में इम्तिहान है जो कि सर्व शान्ति को प्रकाशने वाला है।

7. ज़्यादा से ज़्यादा समय भी एक जगह ठहरना नहीं हो सकेगा। क्योंकि बहुत सी जगहों में विचरने का प्रोग्राम अक्सर होता है।

सब प्रेमियों को इन विचारों का बोध होना चाहिए।

171. एक चेतावनी

भक्त बनारसी दास ने जगाधरी पहुंचने पर फिर छुट्टी लेने के लिए ज़ोर देना शुरू कर दिया, यह कहते हुए कि उसका कुछ नहीं बना। सत्पुरुष ख़ुद भी उसे समझाते और रोकने की कोशिश करते, और ख़ास-ख़ास प्रेमियों से भी उसे समझाने के लिए कहलवाया, मगर वह अपनी जिद्द पर अड़ा रहा। सत्पुरुष ने उसे फिर समझाया कि अगर उसका फ़कीरों के पास रहकर कुछ नहीं बना तो

वह यहां से जाकर दुनियावी उलझनों में फंस कर खराब होगा।

172. श्री मुख–वाक् अमृत

इस कठिन संसार में अधिक सत् विश्वास और सत् निद्धियासन के बल से बुद्धि तमाम विकारों से पवित्र होकर सत् शान्ति स्वरूप को अनुभव कर सकती है। इस वास्ते अधिक से अधिक यत्न करके प्रभु आज्ञा में बुद्धि निश्चल करके सत्नाम सिमरण में दृढ़ करना चाहिए। तब ही यथार्थ प्रेम प्राप्त करके मलीन वासनाओं से वैराग्य प्राप्त होता है जो तमाम दु:खों और आसक्ति से छुड़ाने वाला है। ईश्वर सत् अनुराग की दृढ़ता बख़्शें जिससे तमाम अशुद्ध वृत्तियों से पवित्रता हासिल कर सकें। ईश्वर नित सहायक होवें।

173. ट्रस्ट की कायमी

तमाम संगत समतावाद को वाज्या होवे कि आइंदा समता योग आश्रम जगाधरी और समता योग आश्रम राजपुर, देहरादून या और कोई आश्रम अगर कायम होवे, जो ट्रस्ट के मातहत हो, उन सब का इंतज़ाम एक ट्रस्ट के ज़रिये ही होगा। ट्रस्ट के तमाम मेम्बर अपने–अपने फ़र्ज़ को समझते हुए आश्रमों के प्रबंध में पूरा–पूरा यत्न करें। कुछ समय तक प्रेमियों के श्रद्धा भाव का स्वरूप आश्रमों के प्रबंध के मुतालिक देखा जावेगा। तब ट्रस्ट बाकायदा अदालत में रजिस्टर करवा दिया जावेगा। लिहाजा आज से तमाम ट्रस्टी मेम्बरान अपनी जिम्मेदारी संभाल लेवें और अमली सेवा का सबूत देवें:–

ट्रस्ट के मेम्बरान के नाम निम्नलिखित हैं:–

1. बाबू अमोलक राम
2. बनारसी दास
3. डा० भक्त राम
4. दीना नाथ महंगी, जम्मू व कश्मीर
5. हकीम नत्थू राम, जगाधरी
6. फकीर चंद, अम्बाला
7. ओम कपूर, देहरादून

इन प्रेमियों में बाबू अमोलक राम और बनारसी दास ताज़िन्दगी ट्रस्ट के मेम्बर समझने चाहियें। बाकी प्रेमी भी तमाम ज़िन्दगी, अगर इस सेवा में समर्पण करने का निश्चय कर लेवें और सही सेवा का सबूत देवें तो मुस्तकिल मेम्बर ही होंगे। नहीं तो हालात के मुताबिक अगर कोई तबदीली करनी हुई तो कर दी जावेगी। तमाम ट्रस्टी मेम्बरान में अगर कोई मेम्बर समता के असूलों का पाबंद न रहे तो उसकी तबदीली कर दी जावेगी।

अब तमाम ट्रस्टी मेम्बरान अपनी जिम्मेदारी को अनुभव करके इस सेवा के महाकार्य को सरअंजाम देवें और तमाम संगत इन प्रेमियों के साथ पूरा-पूरा सहयोग देवे। यही गुरु आज्ञा सबके वास्ते है। ईश्वर आज्ञाकारी भावना देवें।

दस्तख़त- मंगत राम
हाल जगाधरी
25 सितम्बर, 1953

174. कार्यकर्ता प्रेमियों के स्थान

1. प्रबंधक कार्यों में कार्यकर्ता प्रेमियों के इस तरीके से स्थान कायम करने चाहियें।
   क. अति मुख सेवादार यानी सर्व समर्पण भाव रखने वाला।
   ख. मुख सेवादार यानी समर्पण भाव रखने वाला।
   ग. भावुक सेवादार यानी भावना सहित सेवा करने वाला।
   घ. सेवादार यानी निमित्त-मात्र समय के मुताबिक सेवा करने वाला।
2. चूंकि परमार्थ मार्ग में सेवादारों का ही प्रबन्ध होना कल्याणकारी होता है, इस वास्ते ऊपर के नामों के मुताबिक प्रधान या सेक्रेट्री के नाम होने चाहियें।
3. अक्सर परमार्थ में प्रधानता की ख़ातिर बड़ी-बड़ी धड़ेबंदियां हो जाया करती हैं, इस वास्ते प्रधान लफ़्ज का त्याग करके सेवादारों का लफ़्ज निश्चित कर लेना चाहिए।
4. अति मुख सेवादार भाव वाला प्रेमी न मिले तो मुख सेवादार भाव रखने वाले को ही मुखी कायम कर लेना चाहिए। अगर मुखी सेवादार की भावना रखनेवाला भी न मिले तो भावुक सेवादार को ही मुखी कायम कर लेना चाहिए। अपने प्रबन्ध के कार्यों को इस रीति से पूर्ण करने का यत्न करना चाहिए।
5. जिस-जिस जगह ख़ास मजबूरी से कमेटी बनाई होवे, तो ऐसे ही सेवादारों का लक्षण विचार करके मुखी कायम कर लेने चाहिए।
6. अगर बग़ैर रजिस्टर्ड संगत का काम चल सके तो चलाने चाहियें, नहीं तो हसब ज़रूरत संगत को रजिस्टर्ड करवा लेवें।
7. सत्यवादी, त्यागी, पर-उपकारी तथा मुकम्मल पांच असूलों के सहित सेवादारों का स्वरूप तमाम संगत और तमाम संसार के वास्ते जीवन रूप है। ऐसा निश्चय होना चाहिए।

दस्तख़त- मंगत राम
हाल जगाधरी 25 सितम्बर, 1953

175. प्रबंधक मंडल, संगत समतावाद के नियम

1. ज़िला के तमाम सत्संगों से दो या तीन मेम्बर प्रबन्धक मंडल में शामिल होने चाहियें।

2. आश्रम ट्रस्ट के मेम्बरों की तबदीली श्री सत्गुरु महाराज की अदम (ग़ैर) मौज़ूदगी में प्रबंधक मंडल के जिम्मे ही होगी।

3. मंडल में से समता की तालीम को जाग्रत करने की ख़ातिर सेवादार और भिक्षु मुकर्रर करने चाहियें।

4. तमाम प्रकार की परमार्थिक उन्नति के मुतालिक प्रोग्राम सोचना मंडल का ही काम होगा।

5. मंडल की कायमी जिस वक्त संगत चाहे कर लेवे। मगर बेहतर होगा कि इस साल मुकामी मंडल कायम कर लेवें और अगले साल सम्मेलन पर सेंट्रल मंडल कायम कर लेवें।

6. मंडल के मेम्बर ऐसे होने चाहियें जो समता के सही असूलों पर पूर्ण निश्चय से कारबंद होवें।

दस्तख़त– मंगत राम, हाल जगाधरी

25 सितम्बर, 1963

176. पत्रिका द्वारा सत् उपदेश अमृत

प्रेमी जी, अपने जीवन को अब देव–मार्ग में निश्चित करने का पूरा–पूरा यत्न करें। जो समय गुज़र चुका है उसमें जैसा भी जीवन का तज़ुर्बा हुआ है उस पर गहरी ग़ौर करते हुए और जीवन यात्रा का सही मक्सद समझते हुए अपने आपको जाग्रत करें और गुरु वचन को पूर्ण निश्चय से हृदय में जगह देवें। ऐसी भावना में ही सर्व कल्याण है। मानुष जन्म की उच्चता यह ही है कि सत्पुरुषों के आदर्श को धारण करके अपने आपको सत् परायणता में दृढ़ किया जावे, जो तमाम दोषों से पवित्रता के देने वाली है। प्रेमी जी, गुरु आज्ञा का पालन करते हुए अपने आपको सत् विश्वासी और सत् निद्धियासी बनावें और सत् नियमों को अपने जीवन में शृंगारित करें। तब सहज ही निर्भय शान्ति अविनाशी पद को प्राप्त कर सकेंगे। हर समय गुरु वचन को हृदय में निश्चित करें। सादगी के पूर्ण रूप से अनुयाई बनें। तमाम फ़िज़ूल हरकतों से परहेज़ रखें। समता सत्संग को उन्नत करें। अपने कारोबार में पूर्ण सत्य धारण करें। तमाम प्राणी मात्र से प्रेम रखें। अभ्यास में पूरा–पूरा समय दिया करें। प्रभु कृपा के हर वक्त प्रार्थी होवें। ऐसी नम्रता और सरलता की भावना को धारण करते हुए अपने जीवन को पूर्ण पवित्र करें। यह ही साधना सत्पुरुषों का मार्ग है। ईश्वर दृढ़ विश्वास देवें।

177. श्री मुख वाक् अमृत

सुपुर्दगी यानी समर्पणता और यत्न का यह बल है कि समर्पणता के बल से केवल यथार्थ यत्न हृदय से उत्पन्न होता है जो कि जीवन उन्नति का सहायक है और मलीन वासनाओं का अभाव हो जाता है। समर्पण बुद्धि के बग़ैर जो भी यत्न किया जाता है वह बंधन–दर–बंधन और वास्तविक अशांति के देने वाला होता है। यानी समर्पण बुद्धि से निर्मल संकल्प और निर्मल यत्न प्रगट होता है। इसके उलट अहंगवादी बुद्धि से बंधन रूप यत्न प्रगट होता है जो कि परम दुःख का स्वरूप है। समर्पण बुद्धि की दृढ़ता शुद्ध प्रयत्न को प्रकाशने वाली है और नित स्वरूप आत्मा के आनंद में स्थिति के देने वाली है। सत्पुरुषों का प्रथम साधन समर्पण बुद्धि की दृढ़ता ही है। (कुछ सत्संगों में जो अमृत वर्षा आपने फरमाई उनके नोट, जो उस समय एक प्रेमी ने लिख लिए थे, वह भी नीचे दर्ज किए जा रहे हैं।)

178. अमृत उपदेश, दिनाँक 15 नवम्बर, 1953, (नौ बजे सुबह)

मानुष अपनी कमी पूरा करने के लिए जन्म लेता है। लेकिन ज़िन्दगी के सफ़र को सफ़र न ख़्याल करके अक्सर अपने शारीरिक सुखों की पूर्ति में लग जाता है और बजाए शांति के अशांति और नाश को प्राप्त होता है। हर मनुष्य पांच ज्ञान इन्द्रियों और पांच भोग इन्द्रियों द्वारा अपने सुखों की पूर्ति चाहता है। लेकिन जिस शरीर के सुखों की ख़ातिर इतने यत्न–प्रयत्न करता है, वह शरीर और उसके कर्म लम्ह–ब–लम्ह बदल रहे हैं। इसलिए जहां एक तरफ पूर्ति होती है, वहां दूसरी तरफ ख़ला पैदा होता चला जाता है। मानुष की बुद्धि सुखों की पूर्ति की चाहना करके उसी प्रकार सोचने लगती है और जीवन की असली तड़प को समझने से कासिर (अनजान) रहती है।

जिस तन का सुख जिया लोचे, बारम्बार भरमाई।
सो तन छिन में राख समाया, जीव परम दुःख पाई॥

इसलिए हर मानुष अपनी कामनाओं की चेष्टा की ख़ातिर नित–नित चोले बदलता और चौरासी के घेरे में चक्कर लगाता है। यही संसार का स्वरूप है। इसलिए जीवन के सफ़र को समझना ही हर मानुष का फ़र्ज़ है।

विकारों के ज़ेर–असर होकर आम संसारी लोगों को तो अपनी असली बीमारी का पता ही नहीं लगता। अलबत्ता जीव के अंदर चूंकि भाव बने रहते हैं, इसलिए उनमें से कोई शुभ भाव उसको उसकी नादानी से जगा देता है। यानी जिस शरीर की ख़ातिर वह सुख चाहता था, वह शरीर और उसके सुख क्षणभंगुर ही हैं, इसलिए जो शक्ति इसको प्रकाशित कर रही है केवल वह ही जानने योग्य है, बाकी माया और भ्रम ही है।

सब महापुरुषों के जीवन का सार और संतों का उपदेश यह ही है कि मानुष को चाहिए कि वह अपने सुख–दुःख ईश्वर विखे समर्पण करता चला जावे और अपनी स्वार्थ बुद्धि को कतई त्याग

कर दे। यानी अपने सुखों को दूसरों की सेवा में लगाकर असली शान्ति का अनुभव करे ताकि तेरे अंदर से विकारों की अग्नि ठंडी होकर पूर्ण परमेश्वर का निश्चय दृढ़ हो जावे और तेरे अंदर न जीने की ख़्वाईश रहे, न मरने का भय रहे। यह समझ लेना चाहिए कि जिसने पूर्ण परमेश्वर को समझ लिया वह खुद भी पूर्ण हो गया और जिस कमी को मानुष पूरा करने के लिए इस जन्म में आया था वह पूरी हो गई और जन्म–मरण का रोग भी जाता रहा।

सार निर्णय यह है कि अपने सुखों को दूसरों की सेवा में लगाने और सत्पुरुषों के वचनों पर अमल करने से और अच्छी संगत के मेल–जोल से बुद्धि विवेक को अपनाकर अपने शरीर की पूजा के बजाए, शरीर के सरजनहार को पल–पल विखे चितारने लगती है। इससे विकारों की अग्नि ठंडी होती है और मानुष अपनी ज़िन्दगी के सफ़र को ख़त्म करने का यत्न करता है।

ईश्वर करे कि ऐसे शुभ विचार हर मानुष के अंदर जाग्रत हों ताकि वह अपने कल्याण की राह ढूंढ सके।

179. उपदेश–अमृत, दिनांक 15 नवम्बर, 1953, (4 बजे सांय)

इस संसार में नाना प्रकार के शरीर विचर रहे हैं और किसी अनमोल वस्तु की तलाश में मारे–मारे फिर रहे हैं और इस दौड़–धूप में शरीर खात्मे को पहुंच रहे हैं। दरअसल शरीर के सरजनहार पर विश्वास न लाकर जीव अपनी अहंकार सहित बुद्धि के बल–बूते पर शरीर के सुखों की पूर्ति में लगे रहते हैं और नाश को प्राप्त होते हैं। ऐसी बुद्धि वाले निजि सुखों की आड़ में कपट और छल को भी बुरा नहीं मानते बल्कि दूसरों को लूटकर खुश होते हैं। ऐसी बुद्धि वाले को राक्षस बुद्धि वाला कहते हैं। ऐसे जीव सत् विश्वासी नाम मात्र भी नहीं होते।

दूसरी किस्म के लोग ख़्याली देवते बनाकर ग्रहों, जंतर–मंतर वग़ैरा में लगे रहते हैं और असली शान्ति से बिल्कुल दूर रहते हैं।

तीसरी किस्म के लोग वे हैं जो चाहते हैं कि उनका सुख बना रहे। लेकिन दूसरों को दुःख नहीं देते। अपने सुख की ख़ातिर संतों के पास जाते हैं और कुछ पुण्य–दान भी करते हैं। उनको भी सत्–विश्वासी नहीं कहा जा सकता। हां, ऐसी बुद्धि वाले जीवों को अगर शिक्षा मिल जाए तो बुद्धि पलटी भी जा सकती है।

चौथी श्रेणी वाले वे लोग हैं जिनके ख़्याल में शरीर के सुख अच्छे हैं, मगर बदलने वाले हैं। इसलिए छल–कपट छोड़कर सत्वादी बनने का यत्न करते हैं। चूंकि उनके अंदर खौफ़ बना रहता है इसलिए वह रब्ब की याद करते रहते हैं। लेकिन ऐसे लोग कभी स्वार्थ की तरफ जाते हैं, कभी परमार्थ की तरफ, कभी संतों के पास जाते हैं और कभी सिनेमा घरों में। ये भी सत्यवादी नहीं।

पांचवीं श्रेणी वाले लोग वे हैं जिनकी बुद्धि जीवन यात्रा को समझती है। शरीर के सुखों को क्षणभंगुर जानती है। इसलिए अपने सुखों का त्याग करके दूसरों को सुख देकर खुश होती है। ऐसी बुद्धि निर्मल होती है। अपने कर्तव्य को पहचानती है और जिज्ञासु–बुद्धि कहलाती है। लेकिन बावज़ूद इसके, पूर्ण रूप से सत् विश्वासी नहीं।

आख़िरी श्रेणी वाले वे लोग हैं जिनकी बुद्धि आइने की तरह साफ और शरीर के सुखों की चेष्टा और दुनिया की चाहना छोड़कर परमेश्वर परायण होकर अपने सही कर्तव्य का पालन करती है। ऐसी बुद्धि पूर्ण रूप से सत् विश्वासी होती है और उसमें ही सही अनुराग पैदा होता है। ऐसी बुद्धि वाला जब ईश्वर की भक्ति में लग जाता है तो ईश्वर का रंग लगने से उसके अंदर ख़ास ठंडक पैदा हो जाती है और उस अवस्था में पहुंच कर उसका शरीर रूपी संसार ग़ायब हो जाता है। ऐसे लोगों के अंदर निर्मानिता, निष्कामता, निहचलता उदासीनता और पर-उपकार रूपी गुण प्रकट हो जाते हैं और शरीर के बनने और बिगड़ने से रहित होकर परम शान्ति को प्राप्त होते हैं। ईश्वर सब प्रेमियों में ऐसा ही अनुराग पैदा करें।

180. तीसरा सत् उपदेश-अमृत

सत्संग का असली मतलब है सत् स्वरूप का संग करना। लेकिन ऐसा संग कोई गुणी पुरुष ही कर सकता है और वह नौ द्वारों की रसना से ऊपर हो जाता है। इससे कम दर्ज़े का सत्संग, जिससे आम लोग फ़ायदा उठा सकते हैं, वह है सत्पुरुषों की ज़िन्दगी के हालात का मुतालया (अध्ययन) करना और उनके नक्शे-कदम पर चलने की कोशिश करना। बाकी सब सत्संग घटिया दर्ज़े के हैं।

मानुष का शरीर पांच तत्त्वों का बना है। शरीर के अंदर पांच विकार खड़े हैं। इसलिए शरीर का संग इन विकारों से ही रहता है। या यूं कहिए कि शरीर का संग अपने आपसे ही रहता है या उन रिश्तेदारों या मित्रों से जो उस शरीर या व्यक्ति के संपर्क में आए हुए हैं।

मानुष का शरीर पांच तत्त्वों के हेल-मेल से बना है और पांच विकार इन तत्त्वों का नतीजा हैं। आकाश से अहंकार, वायु से लोभ, अग्नि से क्रोध, जल से काम और पृथ्वी से मोह-उत्पन्न हो रहे हैं। शरीर का संपर्क जब रिश्तेदारों से अधिक होता है, तब मोह प्रबल हो जाता है और दूसरे विकार भी साथ आ जाते हैं। महापुरुषों ने इन विकारों से बचने के लिए गहरी खोज की। उन्होंने जीवन स्वरूप सत्-तत् को शरीर का संचालक जाना, यानी अनुभव किया। क्या यह शरीर प्राण के आधार पर जीवित है और प्राणों को जीवनदान देने वाली, यानी चलाने वाली, शक्ति कोई और है जिसके निकल जाने पर शरीर, इसकी इन्द्रियां और प्राण काम करना बंद कर देते हैं? वह जीवन शक्ति, जिसके आधार पर शरीर चल रहा है, उन्होंने इसको सत्-तत् का नाम दिया और शरीर की समस्त क्रियाओं को उसके आधार पर चलाने का यत्न किया। यानी त्यागवृत्ति धारण करके जीवन को सेवादार बनाया और शुद्ध, सात्विक अमली जीवन अपनाया।

मानुषी उच्चता यही है कि वह निर्विकार होकर विचरे। इसलिए प्राचीन काल के राजे-महाराजे वह ही समझे और चुने जाते थे जो मोह-माया आदि विकारों को त्याग करके इन्साफ करते थे। राजा राम चन्द्र जी को लीजिए। वह सीता को बनवास तो ले गए, लेकिन वापसी पर इन्साफ की तलवार की धार पर तुले और आते ही उसे त्याग दिया। राजा हरीशचन्द्र ने कर्तव्य-पालन करने के

लिए अपने लड़के रोहित की लाश शमशान भूमि में जलाने से पहले अपनी स्त्री से भी पैसे मांगे। यह है महापुरुषों का जीवन चरित्र यानी निर्विकार रह कर हर एक चीज़ का जायज़ा लेना।

आप कहेंगे कि गृहस्थ में रहकर बिना मोह के चला नहीं जाता और क्रोध तो नाजायज़ बात पर आ ही जाता है। यह ही हाल दूसरे विकारों का है। इसके बारे में आप सज्जन पुरुषों के चरणों में विनती है कि मोह वही जायज़ है जिससे बच्चों का पालन–पोषण हो सके और क्रोध वह ही जायज़ है जो उस्ताद शागिर्द को राहे–रास्त पर लाने के लिए करता है। ऐसी दृष्टि बन जावे तो यह विकार तंग नहीं करते और न इनका संग हानिकारक होता है। ज्यों–ज्यों इन विकारों की अग्नि कम होती जावेगी, मन में धीरज आता जावेगा। फिर मन खुद–ब–खुद अंतर की तरफ रजू करेगा और अपने निज स्वरूप के दर्शन करने में एक न एक दिन कामयाब हो जावेगा।

इसलिए इन विकारों से निर्विकार होने वाला कोई गुरमुख ही हो सकता है। सच्चे गुरु का अमली जीवन अपनाने योग्य होता है क्योंकि वह निर्विकार और निर्लेप होता है। और ऐसे गुरु से दीक्षा लेने का मतलब भी यह ही होता है कि अमली जीवन को ही आधार माना जाए ताकि अपना और देश का सुधार हो। इन्होंने अपना अमली जीवन आपके सामने रखा है। यह बतलाना नहीं चाहते कि यह क्या हैं? ये चेतावनी दे रहे हैं कि आप सब सज्जन पुरुष पांच असूलों सादगी, सत्, सेवा, सत्संग और सत् सिमरण पर कारबंद हों, ताकि शरीर का सम्बंध पांच विकारों से हट जाए। लेकिन देखा यह जा रहा है कि इन पांच असूलों पर बहुत कम प्रेमी चल रहे हैं।

सब सज्जनों को ईश्वर सुमति देवें और शक्ति बख़्शें ताकि आप सब इन पांच असूलों को अपनाकर अमली जीवन बनाने में कामयाब हों और अपने और अपने परिवार, देश तथा समाज विखे सच्चे सत्संग को कायम करके अपने धर्म की मर्यादा कायम कर सकें। आख़िर में आप सबका बड़ा धन्यवाद है जो इतना कष्ट करके आप सबने सत्संग में शामिल होने का यत्न किया है।

181. समता योग आश्रम, जगाधरी के सार नियम

यह समता योग आश्रम समता अनुयायी प्रेमियों के वास्ते एकत्र होकर सत–बोध प्राप्त करने और विरक्त प्रेमियों के वास्ते सिमरण, अभ्यास की ख़ातिर एक एकांत स्थान कायम किया गया है। आश्रम की हदूद के अंदर किसी किस्म की मुनशियात सेवन और मांस भक्षण की बिल्कुल बंदिश है और समता के विरूद्ध कोई कार्यवाही आश्रम में नहीं होनी चाहिए।

किसी अजनबी को आश्रम में ठहरने का हुक्म नहीं है। अगर मजबूरी से कोई ठहरना चाहे तो सिर्फ़ एक दिन–रात यानी चौबीस घण्टे ठहर सकता है, पूरी जाँच पड़ताल करने के बाद।

सत्संग, आश्रम में रोज़ाना होना चाहिए। अगर संगत का प्रेम होवे तो साल में दो दफ़ा भी एकत्र हो सकते हैं। समयानुकूल विचार कर लेना चाहिये। अगर हालात अनुकूल न होवें तो सालाना आम सम्मेलन की बजाय छोटा सत्संग कर लेना चाहिये। वैसे प्रेमी हर समय आश्रम में आ जा सकते हैं, अपनी मानसिक शान्ति की ख़ातिर।

सम्मेलन के दौरान आश्रम के अहाते में स्नान की पाबन्दी होनी चाहिये। दूसरी ज़मीन में संगत के नहाने व कपड़े धोने वग़ैरह का प्रबन्ध होना चाहिये।

माताओं को रात के वक्त आश्रम में ठहरने का हुक्म नहीं है। केवल सम्मेलन के लंगर की सेवा की ख़ातिर रात को अगर काम होवे तो आश्रम में काम करते हुए समय व्यतीत कर देवें तो कोई पाबन्दी नहीं है। माताओं के वास्ते दूसरी ज़मीन में टहलने का प्रबंध होना चाहिये।

182. आश्रम में अभ्यासी सज्जनों की स्थिति

जो समय अभ्यास के वास्ते वक्फ़ किया जावे उस समय आश्रम में ठहर कर अपना–अपना खर्च स्वयं बर्दाश्त करें। और ख़ास वज़ह से कोई प्रेमी अगर खर्च बर्दाश्त न कर सके तो उसका प्रबन्ध गुरु लंगर से होवे और अभ्यास के समय के बाद आश्रम से जाना चाहे तो जा सकते हैं, कोई पाबन्दी नहीं है।

ज़्यादा समय यदि आश्रम में कोई ठहरना चाहे तो कमेटी विचार करके श्री सत्गुरु महाराज जी से आज्ञा ले लें, तब रह सकते हैं। बोर्ड पर उर्दू में लिखवा कर ये नियम सत्पुरुष के कमरे के बरामदे में लगवा दिये जावें। निम्नलिखित चेतावनी भी छोटे–छोटे बोर्डों पर लिखवाकर बाग में लटकवा दी जावें।

1. दीवार फांदना सख़्त मना है।
2. माताओं का नंगे सर आना सख़्त मना है।
3. साइकिल वग़ैरा पर सवार होकर आना सख़्त मना है।
4. अहाता आश्रम में मल–मूत्र त्याग करना सख़्त मना है।
5. आश्रम में सिगरेट, बीड़ी व मदिरापान करना सख़्त मना है।

183. आश्रम से सम्बन्धित फरमान

1. ज़मीन को व्यवहारिक रूप न दिया जावे।
2. चूँकि कई किस्म के कानून बनने वाले हैं, इसलिये बैरूनी ज़मीन में भी बाग लगवा दिया जावे। इससे ज़मीन सुरक्षित रहेगी।
3. यहां के खर्च यहीं से निकालना।
4. रुपया जमा न करना।
5. हाल उसी जगह बनवाना जहां सम्मेलन के समय सत्संग किया जाता है। उस जगह के पश्चिमी तरफ उसे बनवाना।
6. नौकरों के रहने के लिए उत्तर–पश्चिमी कोने में कमरे बनवाना।
7. लाइब्रेरी के ऊपर कमरा बनवा देना। ऐसा समय आने वाला है जब फ़क़ीर कहीं आ

जा नहीं सकेंगे। आने–जाने का सिलसिला बन्द हो जावेगा। फ़कीर एक तरफ आसन पर बठैंगे। किसी से मिलेंगे–जुलेंगे नहीं।

बाबू अमोलक राम जी को ख़ास तौर पर हिदायत फरमाई कि वह इस टंटे को जल्दी मुकम्मल करके एक तरफ होकर अपना सफ़र तय करे।

184. सत् उपदेश–अमृत

जीव शरीर रूपी संसार को धारण करके शारीरिक सुखों की पूर्ति के लिये यत्न–प्रयत्न करता है। ज्यों–ज्यों वह यत्न करता है, त्यों–त्यों उसका शरीर नाश की तरफ बढ़ता जाता है। आख़िर शरीर और उसके सुख दोनों ही लोप हो जाते हैं। इसलिये देखना ये है कि जिस सुख की चाहना जीव अन्दर से करता है उसका वास्तविक स्वरूप क्या है और दु:ख, जो उसे प्राप्त हो रहा है वह क्या है?

आम मनुष्य अपने अन्दर दु:ख का ख़्याल न करके दूसरों के सुखों को देखते रहते हैं जिससे उनके अन्दर सुखों की चाहना 24 घण्टे बढ़ती जाती है और अधीरता उसे विचलित करती रहती है।

तृष्णा तुल नहीं कष्ट है मीता, जो पलक न धीरज देई।
राजे राने, गुनी सयाने, नित संकट को लेई॥

तृष्णा को मिटाने के लिये वह बड़े–बड़े आडम्बर रचते हैं। धन–दौलत, माल–मुल्क और परिवार में वृद्धि करते हैं, मगर जीव फिर भी आठ पहर जलता ही रहता है। छोटे लोगों की हालत को छोड़ो, उनकी तो हालत ही ऐसी है। बड़े–बड़े इन्द्रराज पाने वाले भी तपते रहते हैं। ये रोग ऐसा लगा है कि कायर भी पैसा चाह रहा है और सूरा भी। क्या मूर्ख, क्या अक्लमन्द, क्या धनी, क्या दरिद्री–सब प्यासे और निरासे ही नज़र आवेंगे और इसी दौड़–धूप में पिंजर ख़त्म हो रहे हैं। गुणी पुरुषों ने कालचक्र के फेर को देखा तो इन्हें इस बीमारी का पता लगा। इन्होंने गहरी ख़ोज की तो देखा की शारीरिक सुखों की बहुतायत या ऐश्वर्य इस रुख को काट नहीं सकते। ये रोग ऐसा लगा है जैसे विषवासुकि नाग अपने अन्दर जल रहा है। यही हाल हर एक जीव का है। चूँकि तृष्णा की आग सबके अन्दर उठ रही है, वह हर एक जीव को जला रही है। यह रोग दृश्यमान संसार की नाना प्रकार की चीज़ों को घुन की तरह खा रहा है। इस बीमारी के समझ आने पर मनुष्य के अन्दर सोच शुरू हुई। फिर उसने सोचा कि जिस शान्ति के आधार पर यह ब्राह्मण्ड खड़ा है उस सत्ता की खोज करूं। फिर उसने सोचा कि वह कौन सा तत्त्व है जिसको ईश्वर कहते हैं, जिसके अन्दर ख़्वाहिश नहीं है और जिसको परिपूर्ण कहते हैं?

इन भावों को धारण करके ज्यों–ज्यों जीव ने शरीर की चेष्टा से अपने आपको ऊपर उठाने का यत्न किया, त्यों–त्यों बुद्धि इस तत्त्व को अनुभव करने लगी और उसे अपने अंदरूनी रोग का पता लगने लगा। संत कहते हैं, शरीर के सुखों को मर्यादा के अंदर रखो और सावधान रहो और

इसकी तन्दुरुस्ती के कारण ईश्वर की प्रधानता का पता चले, जो सच्ची खुशी है। 'लाल दास गोबिन्द भज' इससे पहले कि शरीर ख़िज़ां को पहुंचे इस दुर्लभ जीवन के अंदर देह अभिमान का नाश हो जावे। जब-तक बुद्धि ईश्वर परायण नहीं होती तब-तक ऐसा होना नामुमकिन है।

जिस सुख को सनकादिक खोजें, और खोजें गुनी ज्ञानी।
सो सुख पावें निज घर भीतर, नित प्रभ की सेव पछानी॥

शारीरिक सुखों का अंजाम है रंज व ग़म। चालीस तोले हीरे-मोती बाबे नानक के सामने बाबर ने रखे, तो नानक ने कहा:-

नानक बोले सुन बाबर मीर, तुम से मांगे अहमक फ़कीर।
नानक मांगे ईश्वर दीदार, जिस दे अनखुट भरे भंडार॥

फरीद भी कहता है:-

फरीदा मन अपना मुंज, निक्का करके कुट।
भरे ख़जाने साहेब दे, जो चाहे सो लुट॥

यह रोग ऐसा लगा हुआ है कि अक्लमंद और मूर्ख, धनी और दलिद्री, कायर और शूरवीर सब ही प्यासे रहते हैं और इंसानी तज़ुर्बे यूं ही ख़त्म हो जाते हैं। गुणी पुरुषों ने काल चक्कर के फेर को देखा तो वे बीमारी भांप गए और समझ गए कि शारीरिक सुखों की ज़्यादती इस रोग को काट नहीं सकती। इसलिए उन्होंने विचार किया कि जिस शक्ति के आधार पर यह ब्राह्मण्ड खड़ा है क्यों न उसकी खोज की जाए ताकि परिपूर्ण ईश्वर स्वरूप निर्लेप शक्ति के बोध से पूर्णताई प्राप्त हो? इसलिए शरीर की चेष्टा से ऊपर उठकर शरीर के प्रेरक तत्त्व को अनुभव करने की कोशिश की और ज्यों बुद्धि उस तत्त्व को अनुभव करने लगी उस समय अंदरूनी रोग का पता लग गया।

रोग का पता चल जाने पर विचारवान बुद्धि ने शरीर के सुखों को मर्यादा के अंदर लाना शुरू कर दिया ताकि शरीर सावधान रहे। क्योंकि इसकी तंदरुस्ती के कारण ही ईश्वर या जीवन शक्ति की प्रधानता का पता चलता है, जो कि सच्ची खुशी है। इससे पहले कि शरीर ख़िज़ां को पहुंच जाए, बेहतर होगा कि इस दुर्लभ जीवन में ही देह अभिमान नाश हो जाए और परम शांति अंतर निवास करने लगे। लेकिन जब-तक बुद्धि ईश्वर परायण नहीं होती तब-तक ऐसा होना नामुमकिन है। इसलिए सब महापुरुषों ने पहले अपने आपको ईश्वर परायण बनाया। उन्होंने जाना कि सुख प्राप्त होने और न होने दोनों हालतों में दु:ख है। तब उन्होंने फैसला किया कि ऐसा दु:ख बेहतर है जो शांति देने वाला हो। कबीर साहब फरमाते हैं:-

उस सुख के माथे सिल पड़े, जो नाम साहेब विसराये।
बलिहारी उस दु:ख के, जो पल-पल नाम रटाये॥

इसलिए असली जागृति, पूर्णता और स्वतंत्रता ईश्वर प्राप्ति होने में ही है। शुरू में कष्ट करना पड़ता है क्योंकि अपने स्वभाव को बदलना कष्टदायक है। आहार और व्यौहार की शुद्धि, तोहमात (अंधविश्वास) का त्याग, मांस इत्यादि नशीली चीज़ों का त्याग ज़रूरी है ताकि शुद्ध और सरल विचार ही मन में जाग्रत हों। देव-वृत्तियां बढ़ें और ईश्वर निश्चय पैदा हो। जो सर्व शांति के देने वाला है। यह ख़्याल रहे कि अपने सुख ही अंत में अपने लिए दुःख रूप होते हैं। इसलिए दूसरों को सुख दोगे तो वह सुख खुद-ब-खुद लौट कर तुम्हारी तरफ आवेगा। कर्मों का तिनका-तिनका संग्रह होकर पहाड़ बन जाता है। इसलिए श्रेष्ठ कर्म करें ताकि कल्याण की राह सरल हो जाए। ईश्वर सुमति देवें।

कूड़ भरोसा छोड़ के, जप लो सरजनहार।
'मंगत' कहे विचार के, यह जीवन सुख सार॥

185. नोट पाँचवे सत् उपदेश–अमृत के

धर्म का यथार्थ रूप जानना है, यानी सत् के जानने को धर्म कहा जाता है। अमली जीवन धारण करके कोई विरला ही सत् को जान सकता है। धर्म का अर्थ है धारणा। सत् की प्राप्ति के लिए शुभ भावों के धारण करने का नाम है धर्म, और उसके ख़िलाफ अशुभ भावों को धारण करने का नाम है अधर्म। इसलिए धर्म का यथार्थ रूप उसने जाना है जिसने शुभ भावों को धारण कर रखा है। यानी जिसने यथार्थ रूप में सात्विक वृत्ति को धारण कर रखा है और हर काम प्रभु-परायण होकर करता है। सत् की धारणा ही कल्याणकारी हो सकती है। शारीरिक या प्राकृतिक सुखों की प्राप्ति का यत्न व फिक्र तो पशु-पंछी भी करते हैं। मगर यह अकल्याणकारी होता है और इस किस्म की धारणा को आम जीवों ने धर्म समझ रखा है और सब शारीरिक सुखों की प्राप्ति में लगे हुए हैं। शारीरिक सुखों की चाह, जन्म और स्वभाव करके पहले ही अंदर मौज़ूद है। यह ही यश-अपयश और खुशी-ग़मी के देने वाली है। इस किस्म की धारणा अंधकार की तरफ ले जाने वाली होती है और उपद्रव कर्म करवाती है। ऐसी धारणा से जो कर्म किए जाते हैं वे अगले जन्म में और भी दुःख का कारण होते हैं। इसलिए सत् को धारण करना ज़रूरी है। जिस सत के आसरे शरीर खड़ा है और सुन्दर प्रतीत हो रहा है उसका सहारा लेकर निर्मल कर्म करने चाहियें ताकि मन में शांति और शीतलता आवे। जब मन में नम्रता आती है और मन पर-सेवा में प्रवीण होता है तो शरीर से लगाव दूर होता है और सत् स्वरूप जीवन शक्ति का अनुभव होता है। इसके ख़िलाफ जो जीव शारीरिक सुखों के लिए ज्यों-ज्यों यत्न-प्रयत्न करते हैं त्यों-त्यों उनकी लालसा बढ़ती जाती है। और उसे पूर्ण करते-करते जीवन काल समाप्त हो जाता है और जब शरीर का अंत समय आता है तो जीव पछताता है और जब चेतन सत्ता निकल जाती है तो इसे जला दिया जाता है या ज़मीन में गाढ़ दिया जाता है। सत्पुरुषों ने बतलाया- कि शरीर नाशवान है। कच्चे घड़े में पानी कब तक ठहर सकता है?

काचे कुंभ में नीर ज्यों, कब लग रहत समाई।
एह फूटा ओ बह गया, रूप रेख मिट जाई॥

नदी की बहती हुई लहरें वापस नहीं आया करतीं। इस तरह उम्र का गुज़रा हुआ समय वापस नहीं आता और जैसे कर्म किए हैं उनका अंजाम अवश्य भोगना पड़ता है।

जैसे करनी कर लई, ले चला मुसाफिर अंत।
'मंगत' छूट न पाइए, बिन सिमरे भगवंत॥

यानी जीव ने जैसे करनी की है वैसे ही संस्कार यहां से लेकर जाता है।

अधिक कठिन यह जगत क्रीड़ा, भोगे–भोग पावे अत पीड़ा।

जब–तक मानुष सत–यत्न को धारण नहीं करता तब–तक कल्पना, जो क्लेश का कारण है, में जकड़ा रहता है। जिसका नतीजा अंत में दु:ख रूप होता है।

जैसी करनी जो करे, ऐसा ही फल पाये।
बीजे पेड़ बबूल का, आम कहां से खाये॥

इसलिए सज्जन पुरुषों को चाहिए कि बाहोश होकर जीवन यात्रा को व्यतीत करें।

मानुष देह को धार के, सुकृत कर्म कमाओ।
बाजी कठिन कराल है मीता, निर्मल खेलो दाओ॥

जिस सत् के आसरे शरीर यानी असत मंदिर बड़ा सुन्दर प्रतीत हो रहा है उसको समझने का यत्न करो और सत की धारणा, धारण करके उसको अनुभव करो। सत्पुरुषों का जीवन भी यह ही सबक देता है, जो जीव का असली धर्म है। नाशवान शरीर की असलियत को जानकर स्वार्थ को समाप्त करना और ईश्वर परायण होकर अपने सुख दूसरों में बांटना, ऐसे करने से उसे सत् पर विश्वास आयेगा और यह असत् शरीर और इसके दु:ख–सुख द्वन्द्व से न्यारा होकर आत्म विश्वास में दृढ़ होगा और उसे धर्म का यथार्थ स्वरूप समझ आता जावेगा। तब एक दिन जीव की यह सूझ, यह समझ सत् विश्वास को धारण करके सत् स्वरूप को अनुभव कर लेगी। फिर यह शरीर रहे, या न रहे, भस्म हो जाए, इसकी चिंता न रहेगी और यह आवागवन के चक्कर से रिहाई पा जायेगा। इस सत् को अपनाने के लिए तुझे चाहिए कि तू नम्रता धारण कर, पर–सेवा कर ताकि तेरे मन को शांति प्राप्त हो।

दीन ग़रीबी बंदगी, तन मन लियो रमाई।
पर सेवा को धार के, जीव शांत चित्त पाई॥

यह ही छूटने का मार्ग है। न यह शरीर रहेगा, न रहेगा इसका यह रंग और रूप। सब समय पाकर बदल जायेंगे और कुछ भी न रहेगा। इसलिए ऐ गुणी पुरुष, भरम की नींद से जाग, जीवन की सार को पहचान। सत्पुरुषों का जीवन इतिहास उठाकर देख, यह बतलाता है कि अपना सुख दूसरों की सेवा में लगा कर ईश्वर–परायण होकर चल। स्वार्थ को अबूर करना ही कल्याणकारी है।

ख़ुदगर्ज़ी, खुदनुमाई, खुदपसंदी, कपट–छल का चक्कर तो चल ही रहा है। इनसे जीव खोटे स्वभाव के ज़ेर–असर होकर अपनी नाश को प्राप्त हो रहे हैं। इसलिए अपने घातक नहीं बनना चाहिए, बल्कि अपने मित्र बनो। यह ही असली धर्म है। इसलिए अपने आपको श्रेष्ठ–आचारी बनाओ। सत् कर्म धारण करो। मौत की याद दिल में रखो। ईश्वर विश्वास की दृढ़ता धारण करो। पुरातन बुज़ुर्गों के आदर्श से सबक लो ताकि मन को निहचलता और शांति प्राप्त हो। याद रखो कि एक व्यक्ति का पवित्र जीवन, पवित्र आचरण समाज और राज्य दोनों को सुधारने वाला हो सकता है। इसके उलट अगर अपना जीवन ठीक नहीं तो दोनों बिगड़ जावेंगे।

इसलिए सब सज्जनां दे चरणाँ विच विनती है कि इन शुभ विचारों को धारण करके सदाचारी जीवन बनाओ। यह धारणा असली धर्म है।

ईश्वर सबको सुमति देवें।

186. नोट छटा सत् उपदेश–अमृत

इस समय आप प्रेमियों का बड़ा धन्यवाद है कि आप सब वक्त निकाल कर जीवन कल्याण की शिक्षा लेने के लिए एकत्र हुए हैं। कुछ विचार आपके चरणों में भेंट किए जाते हैं, ग़ौर से श्रवण करें।

शरीर रूपी संसार को धारण करके सब मानुष, पशु, पंछी, ब्राह्मण्ड में दौड़ रहे हैं और असली खुशी की प्राप्ति के लिए यत्न–प्रयत्न कर रहे हैं। मगर यह उन्हें प्राप्त नहीं हो रही। बल्कि यह सब ख़ात्मे की तरफ जा रहे हैं। जिस जीव ने इस भेद को नहीं समझा, वह मानुष नहीं है। जिस तसल्ली और निर्भयता के लिए यह जीव पांच तात्विक शरीर को धारण करके दौड़ लगा रहा है, वह इसे इस तबदीली युक्त संसार में प्राप्त नहीं हो सकती। ऐसा समझना ही सत् विवेक है, और मानुष जीवन की असली सार है। याद रखो कि जिन सुखों की चेष्टा को लिए हुए उपद्रव करता है वह बदलने वाले हैं और शरीर भी तबदीली युक्त है, वह कैसे तसल्ली दे सकते हैं?

जो देखन में आए साजन, सो अगन वांग तप्ताए।
अनक जतन करे दिन राती, तो भी न तृप्ताए॥

इसलिए परमेश्वर का निश्चय रखकर अपने भोगों की पूर्ति को छोड़कर पर की सेवा करो, वरना यह शरीर अभिमान वश होकर मानसिक विकारों के ज़ेर–असर होकर भोगों की पूर्ति के लिए यत्न–प्रयत्न करेगा और अवश्य नाश को प्राप्त हो जावेगा। इसलिए महापुरुषों ने इस ग़ैर तसल्ली हालत से अबूर पाने के लिए एक नुक्ता समझाया कि इस शरीर के भोगों में मर्यादा धारण करते हुए तू होना न होना प्रभु आज्ञा में देख और दुःख–सुख प्रभु समर्पण कर। जिस तरह अपने सुखों की चाहना करता है उसी तरह दूसरों को सुख पहुंचाने वाला हो। इससे तेरे अंदर ऐसी भावना पैदा होगी कि तू ना तसल्ली–बख़्श हालत से निकल कर तसल्ली की हालत को पा सकेगा। इस वक्त झूठ की सीमा नहीं, छल–कपट की मर्यादा नहीं। ऐसे समय मानुष गहरी नींद में सो रहे हैं। दरअसल आराम व बे–आरामी तेरे कर्तव्य में है। इसलिए तू श्रेष्ठ कर्तव्य को अपनाने वाला हो। खोटा कर्म

करना ही नाश के देने वाला होता है। उससे परमार्थ और स्वार्थ दोनों का नुक्सान होता है। इसलिए तू निजि जीवन को पवित्र करने का यत्न कर। सत्कर्म, शुद्ध आहार, शुद्ध व्यौहार धारण कर ताकि खोटी वासनाओं का अभाव हो जाए।

यह शरीर तुझे इसलिए मिला है कि तू सही रास्ते पर चल कर सफ़र तय करे। इसलिए सतवादी होकर इस सफ़र को तय करने का यत्न करो। दृढ़ता से लग जाओ। साहिल पर पहुंचने का यत्न करो। बीच में इसे छोड़ देना कोई अक्लमंदी नहीं।

पहली विजय जीवन की उच्चता को धारण करके प्राप्त करो। ऐ भाग्यशाली पुरुषों, अपने उच्च जीवन, कर्तव्य द्वारा अपने देश की कल्चर को जगाओ। फ़कीर लोगों ने प्रार्थना ही करनी है, अमल आप लोगों ने करना है। सोशल जीवन बनाने का यत्न करो। गृहस्थी के वास्ते यह ही एक बड़ी तपस्या है। उसके लिए सत्संग का इस्तेमाल है। मौज़ूदा बीमारियों की यह एक औषधि है।

महापुरुषों के आदर्श को धारण करना ही उनकी असली पूजा है। अपने धर्म के असली रूप को जानों। जिस बुज़ुर्ग विखे (प्रति) निश्चय हो उसके आदर्शवादी जीवन का मुतालया (अध्ययन) करो ताकि भविष्य बन जाए।

इस बुद्धि को विवेकमई बनाने की ख़ातिर शुद्ध विचारों को अंतरविखे जगह दो ताकि सारी जीवन की बुनियादें पक्की हों और अंदर से ममता का त्याग होकर कल्याण की राह नज़र आने लगे। ईश्वर सारे सज्जनों को सुमति देवें ताकि अपने समाज, देश और परिवार को असली शांति प्राप्त हो।

सम्मेलन की समाप्ति पर आश्रम से रवानगी से पहले भक्त बनारसी दास ने इजाज़त माँगी कि वह सहारनपुर जाकर अपनी बहन को मिल आए। इजाज़त मिल गई। भक्त जी सहारनपुर चले गए। मगर वापसी में निश्चित दिन वापस नहीं आए। इस पर श्री महाराज जी ने बाबू अमोलक राम को बुलाकर फरमाया:– देखो! मूर्ख फिर जाकर बहन के पास बैठ गया है। गृहस्थी उसे चक्कर में डाल कर खराब करेंगे। जाओ, जाकर उसे ले आओ।

बाबू अमोलक राम उसी वक्त आश्रम से रवाना होकर सहारनपुर भक्त जी के बहनोई के मकान पर पहुंचे और उसे समझा–बुझाकर अपने साथ लेकर आए। उसे कहा कि देख, सत्पुरुष का प्रोग्राम अम्बाला का बना हुआ है। वह हस्ती तुम्हारे बग़ैर और किसी को साथ नहीं रखती। इसलिए चलो, चलकर प्रोग्राम को निभाओ ताकि जगह–ब–जगह की जनता सत्पुरुष के उपदेशों से लाभान्वित हो सके। बाबू जी भक्त जी को साथ लेकर जगाधरी पहुंचे।

187. अम्बाला में अमृत वर्षा, एकांत निवास

अम्बाला संगत की प्रार्थना पर श्री महाराज जी ने अम्बाला का प्रोग्राम बना कर उन्हें सूचना दी हुई थी। पहली नवम्बर को सुबह आप आश्रम से रवाना होकर स्टेशन पर पहुंचे। जगाधरी निवासी प्रेमी आपको स्टेशन पर गाड़ी में सवार करवाने के लिए आए हुए थे। सत्पुरुष की आकर्षण

शक्ति सब पर असर–अंदाज़ हो रही थी। किसी का दिल नहीं चाहता था कि वे चरणों से जुदा हों। जब गाड़ी आई, सवार करवाकर प्रेमी वापिस हुए। आगे अम्बाला स्टेशन पर प्रेमी स्वागत के लिए आए हुए थे। सत्पुरुष के निवास के लिए सब का अंजमन, शमशान भूमि से आगे आपके लिए इंतज़ाम प्रेमियों ने किया हुआ था। वहां ले जाकर ठहराया गया।

इस जगह पहुंचने के जल्दी बाद ही श्री महाराज जी ने भक्त बनारसी दास को नियम लिख करके दिए और शहर जाकर भोजन पाने की पाबंदी लगा दी। अम्बाला निवासी प्रेमियों को आज्ञा दी कि बनारसी दास के लिए खाना वहां ही पहुंचाया करें। मिर्च व खटाई के इस्तेमाल पर भी पाबंदी लगा दी और फरमाया:– प्रेमी! चार आने कृपा तुम पर है। बारह आने कृपा तुमने अपने ऊपर आप करनी है। इन आज्ञाओं का पालन करके देख, तू कामयाब होता है या नहीं। उस दौरान आप खुद जाकर भक्त जी की ख़ुराक का निरीक्षण करते। स्वभाव वश भक्त जी तीखी चीज़ें मंगवा लिया करते। मगर सत्पुरुष उन्हें स्वच्छ भोजन ग्रहण करने की प्रेरणा करते।

सत्संग का वक्त मुकर्रर कर दिया गया। और प्रेमी सत्संग अमृत वर्षा का लाभ उठाते और अपनी शंकाएँ निवारण करते। माताओं की आमद पर पाबंदी थी। सत्संग में उन्हें आने की आज्ञा थी, वैसे नहीं।

एक दिन एक ज़्यादा उम्र की माता दर्शनों के लिए दिन के वक्त आ गई। और जो प्रेमी वहां मौज़ूद थे उनमें से एक के ज़रिए दर्शनों के लिए हाज़िर होने की आज्ञा मांगी।

सत्पुरुष ने इंकार कर दिया। प्रेमी ने अर्ज़ की:– महाराज जी! औरत बूढ़ी है और दूर से दर्शनों के लिए आई है। तो आपने फरमाया कि क्या शेरनी बूढ़ी होकर मांस खाना छोड़ देती है? प्रेमी ने जाकर माता को कहा। उसने फिर प्रार्थना की– कि बहुत दूर से वह आई है। उसे दर्शनों की आज्ञा दी जावे। आइंदा के लिए वह ध्यान रखेगी।

बमुश्किल उसे आज्ञा दी गई। जब आकर उसने प्रणाम किया तो उसे फरमाया:– दर्शन हो गए हैं, अब जाओ और उसे वापस भेज दिया। वहां ठहरने नहीं दिया। और फरमाया:– माताओं को सत्संग के वक्त आने की आज्ञा है, आगे पीछे नहीं।

188. गुरुदेव की आख़िरी चेतावनी

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि आम सत्संगियों के हालात और ख़ासकर दिल्ली संगत के हालात मालूम हो रहे हैं कि आप प्रेमियों की ग़ैरहाज़िरी एक अधिक अश्रद्धापन का सबूत दे रही है। जिससे ऐसा मालूम होता है कि बहुत सा समय प्रेमियों की उन्नति की ख़ातिर सर्फ़ हुआ है जिसका नतीजा कुछ नहीं निकला है। हफ़्ते में एक दफ़ा जब मिलकर बैठना नहीं आया तो और सिद्धि को क्या प्राप्त कर सकेंगे? ख़ैर यह समय का चक्कर है और कुछ इस देश की बदनसीबी है जिससे सिद्ध–पुरुषों के वचनों पर भी एतमाद (भरोसा) नहीं रहा है। और हर किस्म की चालाकी फ़कीरों के दरबार में शुरू कर रखी है।

इन हालात को मद्देनज़र रखते हुए अब ऐसे नाफरमान प्रेमियों से कतह–ताल्लुक (सम्बंध विच्छेद करना) बेहतर रहेगा। जिसका स्वरूप एक साल एकांत सेवन के बाद प्रेमियों तक नमूदार (प्रगट) हो जाएगा। ऐसे संतों के दरबार में अधिक श्रद्धा और पूरी–पूरी कुर्बानी के जज़्बात रखने वाले प्रेमी ही अपनी ज़िन्दगी सही धर्म के रंग में रंग कर दूसरों के वास्ते एक आदर्श स्वरूप बन सकेंगे। अब समय प्रेमियों के इम्तिहान का आ रहा है और यह भी निश्चय कर लेवें कि आइन्दा ऐसे संतों का हमकलाम (बातचीत) होना भी बड़ी श्रद्धा और शुभ भाग्य की निशानी होगी। ऐसी आज़ादी न रहेगी जो आगे तुमको मिली हुई है, जिसका नतीजा कुछ नहीं निकला है। इस वास्ते अपने–अपने फ्राईज़ को समझें और गुरु वचनों को अपनायें। इसमें सबका कल्याण है। यह आख़िरी चेतावनी है। एक देहली के वास्ते ही नहीं बल्कि सब जगह के प्रेमियों के वास्ते है। ईश्वर सुमति देवें।

इस जगह निवास के दौरान एक दिन बाबू अमोलक राम जी दर्शनों के लिए हाज़िर हुए। सतपुरुष इन्हें साथ लेकर बाहर ज़मीनों में से गुज़रते हुए दूर ले गए। उस समय प्रेम का समुन्द्र ठाठें मारता हुआ नज़र आ रहा था। आप उन्हें फरमा रहे थे कि आश्रम के टंटे को जल्दी मुकम्मल करके एक तरफ होकर अपना सफ़र तय करे। जो–जो हिदायत दी हुई हैं उन्हें जल्दी–जल्दी मुकम्मल करे और आज़ाद होकर एक तरफ हो जाए।

189. सत् उपदेश (23 नवम्बर, 1953)

अगर ईश्वर का निश्चय होवे और ज़्यादा कुर्बानी न कर सके तो मांस, सिनेमा आदि चीज़ों को छोड़ें, इतना हुक्म रब्बी मानें तो काफी तरक्की हो सकती है। अगर ऐसे शरीर के विकारों को नहीं छोड़ सकता तो बड़ी भारी ग़लती करता है।

सत्पुरुष का प्रोग्राम हर जगह वैसा ही चलता रहता था जैसे कि बन चुका था। यानी रात जंगल में जाकर समाधिस्त रहते और दिन निकलने पर वापस तशरीफ़ लाते और स्नान वग़ैरा करके आसन पर धूप में विराजमान होते और कई प्रेमी अपनी शंकाएँ निवारण करने के लिए हाज़िर हो जाते और अगर कोई न आता तो आंखे बंद करके फिर आनन्दित अवस्था में चले जाते। नवम्बर के अन्त तक इसी जगह निवास किया। अबोहर से पत्र आ रहे थे कि आप उस जगह भी दर्शन देकर उनको कृतार्थ करें। इसीलिए सत्पुरुष ने 30 नवम्बर को उस जगह जाने का प्रोग्राम मुकर्रर करके प्रेमियों को आगाह कर दिया।

190. अबोहर में एकांत निवास

30 नवम्बर, 1953 को श्री महाराज जी सुबह सात बजे की गाड़ी में अम्बाला से अबोहर के लिए रवाना हुए। आपको कार में सवार करके अम्बाला निवासी प्रेमी स्टेशन पर गाड़ी में सवार करवाने आए। कार आहिस्ता–आहिस्ता चलाई जाती रही। प्रेमी साथ–साथ चलते रहे।

रेलवे स्टेशन पहुंचने पर साथ वाले प्लेटफार्म पर प्रेमियों ने दरियां बिछाकर सत्पुरुष का आसन उन पर लगाकर बिठाया और संगत सामने बैठ गई। और कुछ प्रेमियों ने गुरुदेव पर फूलों की वर्षा की, और एक प्रेमी ने नज़्म भी पढ़ी। कई प्रेमियों की आंखों से आंसू बहने लगे। संगत अम्बाला शहर बलदेव नगर कैम्प स्टेशन पर जमा हुई थी। जब स्टेशन पर गाड़ी आई तो इतनी संगत का जमघट, और दृश्य देखकर गाड़ी की सवारियां हैरान होती रहीं और गाड़ी से उतर–उतर कर दर्शन करती रहीं। इस वजह से गाड़ी पन्द्रह मिनट रुकी रही और लेट हो गई।

स्टेशन मास्टर और स्टाफ भी इस मर्ज़ के मरीज़ हो गए। जब गुरुदेव आसन से उठे तो बेशुमार प्रेमियों ने फूलों की वर्षा की, हालांकि सत्पुरुष मना करते रहे। फिर सबने बारी–बारी चरणों में प्रणाम किया। प्रणाम करने की प्रेमियों को बारी न मिलती थी। प्रेमियों को मुश्किल से हटाकर श्री महाराज जी गाड़ी में बैठे। प्रेमी महामंत्र उच्चारण कर रहे थे। जब–तक गाड़ी रवाना न हुई, तब–तक श्री महाराज जी डिब्बे के सामने खड़े रहे। गाड़ी दोपहर बाद अबोहर स्टेशन पर पहुंची। आगे अबोहर निवासी प्रेमी स्टेशन पर आपके स्वागत के लिए हाज़िर थे। गाड़ी से उतार कर सबने चरणों में प्रणाम किया और सब तांगों में सवार होकर श्री महाराज जी को लेकर जोहड़ी पर पहले वाले कमरे में ही ठहराया।

इस जगह भी सत्संग का प्रोग्राम मुकर्रर हो गया और जनता लाभ उठाने लगी और अपनी शंकाएँ निवारण करतीं।

इस जगह आपने चन्द दिन ही निवास किया। प्रेमी मोगा से प्रार्थना कर रहे थे कि सत्पुरुष वहां भी दर्शन देवें और उन्हें भी कृतार्थ करें।

आपने 21 दिसम्बर, 1953 वहां पहुंचने का प्रोग्राम बनाकर अपनी सूचना दे दी।

191. मोगा में एकांत निवास

21 दिसम्बर, 1953 को गाड़ी में सवार होकर भटिंडा से गाड़ी बदल कर आप फिरोज़पुर पहुंचे और वहां से गाड़ी बदल कर मोगा पहुंचे। मोगा में प्रेमियों ने श्री महाराज जी के निवास का प्रबंध शहर से बाहर रेलवे लाईन से दूसरी तरफ सड़क दोंदा फिरोज़पुर पर एक स्थान पर किया हुआ था। वहां ले जाकर श्री महाराज जी को ठहराया गया। इस जगह भी सत्संग का सिलसिला शुरू हुआ और कई मोगा के साहेबान ने भी चरणों में अपने आपको भेंट किया। इस जगह निवास के दौरान भक्त बनारसी दास ने अर्ज़ की:– महाराज जी! जो पाबन्दियाँ उस पर लगाई हुई हैं उन्हें वह निभा नहीं सकता। इस पर सत्पुरुष ने फरमाया:– "अच्छा, तुम्हें छुट्टी मिल जावेगी।" इस जगह बाबू अमोलक राम भी आज्ञा लेकर चरणों में हाज़िर हुए और दो दिन ठहरकर वापस गए।

7 जनवरी तक सत्पुरुष ने इस जगह निवास किया।

192. पत्र द्वारा सत् उपदेश

मोगा, 24 दिसम्बर, 1953

सत् आज्ञा श्री सत्गुरु देव जी महाराज।

श्री महाराज जी फरमाते हैं कि भय के बारे में जो लिखा है उसका ऐसा विचार समझें। भय से भाव और भाव से भक्ति और भक्ति से प्रेम प्रगट होता है। जिस तरह राज दंड का भय होने से तमाम कुरीतियों का नाश होता है, उसी तरह ईश्वर का भय रखते–रखते तमाम मानसिक विकारों से पूर्ण पवित्रता प्राप्त होती है। सार निर्णय यह है कि गुरु और ईश्वर के भय से ही तमाम मानसिक दोष नाश होते हैं और असली निर्भयता प्राप्त होती है। विकारों के धारण करने से ही भय पैदा होता है। इस वास्ते विकारों के नाश करने के लिए ईश्वर और गुरु का भय रखना चाहिए। जब असली रूप में गुरु और ईश्वर का भय अंतःकरण में प्रगट होता है तब बुद्धि तमाम विकारों से पवित्र हो जाती है और प्रेम स्वरूप को अनुभव करती है। यह असली निर्भयता का स्वरूप है। इस तरह से इस विचार को पढ़ें और समझें।

193. तरनतारन में एकांत निवास

तरनतारन से सत्पुरुष को साथ ले जाने के लिए प्रेमी जगजीत सिंह आया हुआ था। मोगा से 7 जनवरी, 1954 सुबह की गाड़ी से रवाना होकर श्री महाराज जी लुधियाना से गाड़ी तबदील करके जालन्धर छावनी दोपहर को पहुंचे। आगे जालंधर निवासी प्रेमी स्टेशन पर मौज़ूद थे और श्री महाराज जी को पुरानी जगह के कमरे में ही ठहराया गया। दो दिन यहां ठहर करके श्री महाराज जी तरनतारन पहुंचे। वहां पुराने बाग में ही आपके निवास का प्रबंध किया गया था। श्री महाराज को वहां तांगे द्वारा स्टेशन से ले जाया गया। तरनतारन निवासी प्रेमी श्री महाराज जी को लेने के लिए स्टेशन पर मौज़ूद थे। इस जगह आपने 30 जनवरी तक निवास किया। और तरनतारन निवासी प्रेमियों को सत्संग अमृत वर्षा से निहाल किया।

194. अमृतसर में चंद दिन निवास, अंतिम संदेश और शरीर त्याग

31 जनवरी, 1954 को आपको बस द्वारा अमृतसर ले जाया गया। और वहां शहर से बाहर तरनतारन की सड़क पर एक बगीची में ठहराया गया। इस जगह आपने प्रेमी मेहता मेहर सिंह को ख़ास तौर पर फिरोजपुर से बुलाया हुआ था। वह भी चरणों में पहुंच गया। रात को हमेशा की तरह आप नहर के किनारे तशरीफ़ ले जाने लगे। इस जगह सर्दी के कारण कुछ तकलीफ़ शुरू हो गई।

मेहता मेहर सिंह जी को आपने जो अंतिम संदेश दिया वह निम्नलिखित है:–

''इनका मिशन पूर्ण हो चुका है। वाणी प्रगट हो चुकी है। जैसा कोई रोगी होगा अपने रोग का इलाज़ तलाश कर लेगा।''

प्रकृति की प्रतिक्रिया

जिस प्रकृति ने इस महान योगी के शरीर की पचास साल रक्षा की थी, आज 3 फरवरी, 1954 को हार मान बैठी। बड़ी कोशिश करके उसने आंसुओं को पलकों में ही छुपा लिया। लेकिन प्रकृति के चेहरे का रंग ऐसे बदला मानों सारी सृष्टि का ग़म उसके आंचल में आ सिमटा हो। यही कारण था कि भारत का अधिक भाग काली घटाओं की लपेट में आया हुआ था और ऐसा प्रतीत होता था कि प्रकृति माता ने ग़म से अपने बाल बिखेर दिए हों और सारी सृष्टि उसके शोक में शरीक हो। ज्यों-ज्यों रात पड़ने लगी बादलों के घने काले-काले साये चारों तरफ से घिर कर आने लगे और ज्यों ही आधी रात के समय रात ने पहरा बदला गुरुदेव ने अन्तर्दृष्टि की तो समझ गए कि शरीर काल की गोद में जाने के लिए तैयार बैठा है। इन्होंने शरीर की रचनात्मक प्रकृति की मंज़िल तक साथ देने का धन्यवाद किया और झट आसन पर विराजमान हुए।

निर्वाण समाधि

भक्त बनारसी दास और प्रेमी मेहर सिंह मेहता जी पास बैठे थे। श्री महाराज जी को भक्त जी की सेवा का पूरा ख़्याल था। अब अंतिम बार उनकी आंखों में आंसू देखकर उनकी सेवा, कैसे नाकबूल कर सकते थे? आपने समाधि लेने से पहले फरमाया:– ''ला, चाय, कहवा क्या देना चाहता है''? भक्त जी ने कांपते हाथों से काढ़ा तैयार किया। उसमें जब दूध डाला तो दूध फट गया। जब दूसरी बार काढ़ा तैयार किया तो चीनी की जगह नमक डाल बैठे और जब तीसरी बार थिरकते हाथों से काढ़ा पेश किया तो वह हज़म ही नहीं हुआ। गुरुदेव मुस्कराये और बोले:– ''प्रेमी! इन्होंने तो तेरी अंतिम सेवा भी कबूल कर ली थी, लेकिन शरीर तुझसे सेवा करवाकर थक गया है। ख़ैर, जा तेरी सेवा सुर्ख़रू (सफल) हुई।''

भक्त जी को आशीर्वाद देकर आपने अपने आसन पर विराजमान होकर निर्वाण समाधि ले ली। और उसी अवस्था में 4 फरवरी, 1954 को पौ फटने से पहले ही प्राण त्याग दिये।

भक्त जी ने तार द्वारा सब प्रेमियों को जगाधरी पहुंचने का आदेश दिया। और ख़ुद भी कार द्वारा उस महान योगी के पार्थिव शरीर को लेकर जगाधरी आश्रम में पहुंचे और पार्थिव शरीर को उसी कमरे में रखा गया जहां आप आश्रम में ठहरते समय विराजमान हुआ करते थे।

जब कोई महान त्यागी इस संसार से वापस चला जाता है, प्रकृति भी अपने आपको संभाल नहीं पाती। महान योगी के महान तप और त्याग को याद करके प्रकृति भी रो पड़ती है। यही कारण

था कि 4 फरवरी को सारा दिन खूब वर्षा होती रही। और जब-तक अस्थियां जल-प्रवाह नहीं की गईं वर्षा ने रुकने का नाम नहीं लिया।

अंतिम शव यात्रा

महान योगी के अंतिम दर्शनों की अभिलाषा से हज़ारों श्रद्धालु समता योग आश्रम में पहले से ही मौज़ूद थे और सब पर सकते का आलम तारी (ग़म में डूबे हुए) था। गुरुदेव का चेहरा और कोमल शरीर देखकर हैरान थे कि गुरुदेव कहने को तो शरीर त्याग चुके थे परन्तु न उनके चेहरे से मधुर मुस्कान गायब थी, न उनकी शफ़क्त (प्यार) भरी निगाहों से पिदराना (माँ-बाप की) मेहर व उल्फ़त (स्नेह)। स्वर्ण रूप शरीर अपनी किरणें यथावत अब भी बिखेर रहा था। और देखने वालों को तो उनका नूरानी चेहरा एक और ग़ैर मामूली हालाये-नूर की गोल चादर के पीछे से झांकता हुआ नज़र आता था। गर्ज़े कि जितना-जितना प्यार जिसको आपके प्रति था, उतनी-उतनी श्रेणी का इज़हार उनको आपके अंतिम दर्शनों में हो रहा था।

5 फरवरी, 1954 को गुरुदेव का पार्थिव शरीर मर्यादा अनुकूल आश्रम के प्रांगण में आतिश (अग्नि) के नज़र कर दिया गया। और आपकी अस्थियों को अगले रोज़ ताजेवाला हैड वर्क्स के पास हथनी कुंड बंगले से नीचे यमुना की लहरों के सुपुर्द कर दिया गया, जिन्होंने आपके तप और त्याग के सूक्ष्म तत्त्वों को वर्षों से अपने आंचल में समोया हुआ था। क्योंकि गुरुदेव यमुना के इसी किनारे पर कई वर्ष तप कर चुके थे और अब शव यात्रा के अंतिम क्षणों में यमुना की वही लहरें आपकी अस्थियों को क्षीर-सागर के उस पार ले जाने के लिए तैयार थीं।

अस्थियां एक-एक करके लहरों के आंचल में समा गईं और आन की आन में लहरें ऐसे स्थान पर ले गईं जहां इनका पता लगना तो मुश्किल है लेकिन जब कभी भी यमुना के उस पार खड़ा होने का मौका मिलता है और जब कभी चारों तरफ सन्नाटा सा छाया हुआ होता है, लहरों पर तैरता हुआ हवा का झोंका आकर कहता है- ''आपके महबूब मेरे भी महबूब हैं। पहले मैं उनके चरण स्पर्श से ज़िन्दा था, अब वह मेरे प्राणों के प्राण और जीवन के जीवन हैं। जैसे वे हरदम आपके अंग-संग हैं वैसे ही वे मेरे भी अंग-संग हैं और फिर मेरी पूजा का केन्द्र बिन्दु तो वही हैं। ईश्वर आज्ञा हुई तो फिर इन्हें किसी युग में आपके बीच लेकर आऊंगा।''

यह थी गाथा उस महान योगी की जो कुछ ही अर्सा पहले हमारे बीच में थे और अब नज़रों से ओझल होकर भी हमारे अंग-संग हैं।

ओ३म् ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार

भारतवर्ष में, अन्य स्थानों पर भी संगत समतावाद के आश्रम व सत्संग शालाएँ हैं जिनके बारे में जानकारी व अन्य किसी भी प्रकार की जानकारी निम्नलिखित आश्रमों से ली जा सकती हैं।

HEAD OFFICE :
SANGAT SAMTAVAD
SAMTA YOG ASHRAM
CHACHHRAULI ROAD
JAGADHARI - 135003
PH. NO. : 01732-244882

मुख्य ऑफिसः
संगत समतावाद
समता योग आश्रम
छछरौली रोड
जगाधरी–135003
फोन न0–01732–244882

DELHI OFFICE :
SAMTA YOG ASHRAM
ANSAL PALAM VIHAR
FARM NO. 45
VILLAGE SALAH PUR
HUDA, GURGAON
OPP. SECTOR-21
NEW DELHI-110061
PHONE NO. 28061518, 28061519

दिल्ली ऑफिसः
समता योग आश्रम
अंसल पालम विहार
फार्म नं0–45
गाँव सलाह पुर
हुड्डा गुड़गाँव, सेक्टर–21
के सामने
नई दिल्ली–110061
फोन न0–28061518, 28061519

संगत समतावाद द्वारा महाराज जी की शिक्षा पर आधारित ग्रंथ एवं पुस्तकें

क्रम सं०	नाम
1.	ग्रन्थ श्री समता प्रकाश
2.	ग्रन्थ श्री समता विलास
3.	जीवन गाथा भाग–1
4.	जीवन गाथा भाग–2
5.	मेरे गुरूदेव
6.	गुरूदेव ने कहा
7.	ऐसे थे गुरूदेव हमारे
8.	अमर–वाणी
9.	ऐसी करनी कर चलो
10.	अनन्त की खोज
11.	संस्मरण (महाराज जी के जीवन के कुछ संस्मरण)
12.	समता ज्ञान दीपक
13.	समता आध्यात्मिक पत्र (हिन्दी–उर्दू) (महाराज जी द्वारा प्रेमियों को लिखे हुए कुछ पत्र)
14.	समता ज्ञान पुष्पमाला
15.	समता नीति
16.	अनन्त शान्ति की ओर
17.	संक्षिप्त जीवन परिचय
18.	प्रार्थना एवं वैराग्य वाणी
19.	जीवन परिचय (समतावाद)